अष्टदशी

शिक्षा, सेवा, साधना के आठ दशक

: सम्पादक मंडल :

श्री भूपराज जैन

श्री रिधकरण बोथरा
श्री पदमचन्द नाहटा
श्री राधेश्याम मिश्र
श्री सुरेश सिसोदिया

स्थापित : १९२८

प्रकाशक :

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

१८/डी, फूसराज बच्छावत पथ

कोलकाता-७०० ००१

अष्टदर्शी

शिक्षा, सेवा, साधना के आठ दशक

❂

प्रकाशक :
श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा
१८/डी, फूसराज बच्छावत पथ
कोलकाता-७०० ००१
फोन : २२४२-६३६९, ३०२२-६३६९

❂

१० फरवरी २००८

❂

मूल्य : ५००) रुपये

❂

आवृत्ति : ३०००

❂

मुद्रक :
नाहटा ब्रदर्स
४ जगमोहन मल्लिक लेन
कोलकाता-७०० ००७

जीवेम् शरद: शतम्

उपनिषदकारों ने व्यक्ति को आशीर्वाद देते हुए इसमें दीर्घायुष्य की कामना की है। व्यक्ति ही नहीं संस्थाओं के लिए भी यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ मात्र सौ वर्ष जीने का ही नहीं है, यह तो इसका शाब्दिक अर्थ है वस्तुत: निरामय, निरापद रहते हुए, सेवा धर्म का निर्वाह करते हुए दीर्घायुष्य प्राप्त करना है।

ईसाई मिशनरीज, रामकृष्ण मिशन जैसी संस्थाएं मानव-सेवा एवं लोक-कल्याण के क्षेत्र में वर्षो से सफलता पूर्वक कार्य कर रही है एवं दिनों-दिन मानव सेवा ही नहीं प्राणीमात्र की सेवा कार्यो का विस्तार हो रहा है एवं सेवा के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किये जा रहे हैं, नई उंचाइयों को छू रहे हैं।

सन् १९२८ में संस्थापित श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता ने भी जैन दर्शन के रत्नत्रय–सम्यक् ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र को आधार बनाकर शिक्षा, सेवा एवं साधना के लक्ष्य से मानव सेवा के क्षेत्र में कदम रखा एवं उत्साही, कर्मठ, सेवाभावी तथा अथक अध्यवसायी कार्यकर्त्ताओं ने शीघ्र ही उसकी लोककल्याणकारी प्रवृत्तियों एवं क्रियाकलापों को न केवल गति प्रदान की अपितु नये-नये आयामों को जोड़ा एवं उसके मानव-सेवी प्रकल्पों का विस्तार भी किया।

कर्मवीर एवं कर्मयोगी वही होता है जो कठिन एवं टेढ़े-मेढ़े रास्तों से चलते हुए मंजिल को प्राप्त करता है। तूफानी एवं ऊँची लहरों से जूझते हुए अपनी जीवन-नौका को किनारे तक ले जाता है, वही सफल नाविक और मल्लाहा है। ये जितने आविष्कार हुए हैं, ऐसे ही कर्मवीरों एवं कर्मयोगियों की देन हैं जिन्होंने अथक परिश्रम, अध्यवसाय, सतत संकल्प एवं अबाधित होकर सफलता प्राप्त की है। संस्थाओं की सफलता भी ऐसे ही कर्मठ सेवाभावी, कार्यकर्त्ताओं के स्नेह, सौजन्य एवं उदारता से प्रगति पथ पर अग्रसर रहती है, अकुंठ भाव से।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता के आठ दशक भी ऐसी ही लोक-कल्याणकारी कार्यों की दास्तान है जिसने इसके मानवसेवी एवं जनोपकारी सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय की दृष्टि से शिक्षा और सेवा के क्षेत्र में अनेक कीर्तिमान स्थापित किये हैं और कोलकाता की सेवाभावी संस्थाओं में अग्रणी स्थान रखती है। आठ दशक से निरन्तर सेवा कार्यों में लगे रहना इसकी परिपक्वता की ऐसी कहानी है जो अत्यन्त रोचक एवं लोकप्रिय है।

बुक बैंक इसकी ऐसी प्रवृत्ति है जिसकी महक पश्चिम बंगाल के ग्रामीण अंचलों में सर्वाधिक व्याप्त है। इसके द्वारा संचालित कम्प्युटर केन्द्र एवं सिलाई केन्द्र समय की मांग को न केवल पूर्ति कर रहे हैं अपितु सेवा का एक नया इतिहास ही रच रहे हैं।

तीर्थंकर मासिक के सम्पादक डॉ. नेमिचन्द जैन ने ऐसी मानवसेवी संस्थाओं को लोकमाता की उपमा से उपमित किया है। माँ का स्नेह, वात्सल्य पाकर जैसे बालक बढ़ता है वैसे ही संस्थाओं का अवलम्ब एवं आश्रय पाकर जनकल्याणकारी कार्य निरन्तर गतिमान एवं प्रवर्द्धनमान रहते हैं। वस्तुत: लोकमाता नदी को कहा जाता है। नदी सतत प्रवाहिनी होती है। गति ही इसका जीवन होती है और प्रवाह उसको सदा निर्मल बनाये रहता है। यही स्थिति संस्थाओं की होती है। शिक्षा-संस्थाएँ भी संस्कार सम्पन्न बालकों का निर्माण कर सुनागरिक बनाती हैं। श्री जैन सभा द्वारा संस्थापित एवं संचालित शिक्षण संस्थाएँ भी ऐसी ही संस्कारी बालकों के निर्माण केन्द्र हैं जो देश के भविष्य के निर्माता की अहम् भूमिका का निर्वाह करेंगे और सुनागरिक बनकर भारतीय संस्कृति की पताका विश्व में फहरायेंगे।

अष्ट दशकीय इसकी लोकमंगल यात्रा शताब्दी की ओर उन्मुख है, एक उज्ज्वल भविष्य के लिये। कार्यकर्त्ता उत्साहित हैं और लोकमंगलकारी भावी योजनाओं को मूर्तरूप देने के लिये कृतसंकल्प हैं। जहाँ चाह है, वहाँ राह है और कार्यकर्त्ता अकुण्ठ भाव से इसमें जुड़े हैं। सफलता असंदिग्ध है।

सभा की आठ दशकीय सेवा यात्रा को इस स्मारिका में मूर्तरूप देने का प्रयास किया है। इसकी इतिहास कथा भी इसमें समाहित है। चलते रहना, सतत प्रवर्द्धमान रहना सभा की चरित्रगत विशेषता है। कार्यकर्त्ताओं तथा प्रवृत्तियों एवं क्रियाकलापों की सचित्र झांकी भी इसी इतिहास का एक अंग है। विद्वानों, मनीषियों के सुचिन्तित लेखों से इसे संग्रहणीय और पठनीय रूप देने का प्रयास किया है।

इसे सजाने और संवारने में श्री पदमबाबू नाहटा का अध्यवसाय रेखांकित करने योग्य है। संपादक मंडल का सहयोग भी उल्लेखनीय है। मुद्रक और प्रकाशक के प्रति आभार हमारा दायित्व है। त्रुटियों के लिये हम जिम्मेदार हैं। अच्छाइयाँ सब आपको समर्पित है।

लोककल्याण एवं लोकमंगल की यह मशाल सदा जलती रहे एवं जाज्ज्वल्यमान बनकर सर्वत्र प्रकाश विकीर्ण करती रहे, इसी भावना के साथ यह आपको अर्पित है।

भूपराज जैन

■

सरदारमल कांकरिया

संयोजकीय

श्री श्वे० स्था० जैन सभा कोलकाता की स्थापना ८० वर्ष पूर्व हुई थी। हमारे बुजुर्गो ने सोचा था कि एक स्थान अपना होना चाहिये। शुरू में उन्होंने एक कमरा किराये पर लिया एवं वहां समाज के कुछ लोग सामायिक करने आने लगे, आपस में मिलनेपर विचार विमर्श होने लगा कि जगह अपनी होनी चाहिये, कुछ दिनों बाद श्री उदयचन्दजी डागा ने १, पांचा गली स्थित भवन शुभ कार्यो हेतु दिया। वहां सामायिक होती एवं पर्युषण पर्व आराधना तथा प्रतिक्रमण होते। थोड़े दिन बाद १७ मार्च १९३४ की शुभ घड़ी में १४२ए सुत्ता पट्टी में स्कूल चालू कर दी गई जिसके हेड मास्टर वच्चन सिंह थे एवं प्रथम छात्र थे श्री सोहनलाल गोलछा। समाज के कतिपय लड़के-लड़कियां वहां पढ़ने लगे। समाज के कर्णधारों के विचार विमर्श में मुद्दा रहने लगा कि कोई वड़ी जगह लेकर अच्छा स्कूल बनाया जाये। श्री फूसराजजी बच्छावत की लगन एवं निष्ठा से तथा उनके सहयोगियों के सहयोग से १८डी, सुकियस लेन में १६ कट्ठा जगह लेने का निश्चय किया। आठ कट्ठा जमीन श्री मनमोहन भाई देसाई गुजराती से लेने का निश्चय किया। ८ कट्ठा मनमोहन भाई देसाई से सीधे ली, ८ कट्ठा श्री मगनमलजी पारख से निवेदन करने पर उन्होंने सभा हेतु दी। उनको पता चला कि यहां स्कूल होगी तो उनका आग्रह रहा कि यह जमीन भी आप ले लेवें, आर्थिक असुविधा थी पर उन्होंने आश्वासन दिया कि आप रुपया बाद में दे देना। बीकानेर की हितकारिणी संस्था से रु० ५००००/- उधार लिया तथा निर्माण कार्य शुरु हुआ। कार्यकर्त्ताओं में अपूर्व जोश था लेकिन समाज के सदस्यों की तादाद कम थी तथा आर्थिक स्थिति भी साधारण ही थी लेकिन मन में अदम्य उत्साह था। श्री फूसराजजी बच्छावत, श्री सूरजमलजी बच्छावत, श्री कन्हैयालालजी मालू, श्री पारसमलजी कांकरिया आदि कई सदस्य सक्रिय होकर जगह-जगह घूमकर चंदा एकत्रित करने लगे और मकान का निर्माण तभी से होने लगा। अर्थ के अभाव में जब निर्माण का कार्य धीमा हुआ उस वक्त सुप्रसिद्ध समाज सेवी साहु श्री शांतिप्रसादजी जैन ने रु० ४४०००/- का आर्थिक सहयोग देकर कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ाया और निर्माण द्रुतगति से चालू हो गया। स्कूल के कमरे एवं सुन्दर हाल का निर्माण हो गया तथा श्री रामानन्दजी तिवारी को हेडमास्टर बनाकर स्कूल चालू की गई। शुरु में स्कूल ८वीं कक्षा तक थी। स्कूल की प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष श्री फूसराजजी बच्छावत को एवं मंत्री मुझे चुना गया। कार्यकारिणी में श्री रिखबदास भंसाली, मानिक बच्छावत आदि काफी नवयुवक थे। उत्साह के साथ जैन विद्यालय का शुभारम्भ हुआ। पहले वर्ष २०० छात्र थे। आहिस्ता-आहिस्ता छात्रों की संख्या बढ़ती गई। स्कूल भी १० कक्षा तक उन्नत हो गई। बाद में ११वीं कक्षा तक स्कूल को मान्यता मिली। कमेटी की सूझबूझ से एवं योग्य हेडमास्टर की कार्य शैली, शिक्षकों की लगन एवं योग्यता से स्कूल प्रतिदिन प्रगति की राह पर बढ़ती गई, कुछ वर्षों बाद हायर सेकेण्डरी यानि १२वीं कक्षा तक मान्यता मिल गई। श्री जैन विद्यालय

की वड़ावाजार में ही नहीं अपितु कोलकाता की नामी स्कूलों में गिनती होने लगी। आज स्कूल के छात्रों की संख्या २८०० है। वाणिज्य एवं साइंस के माध्यम से स्कूल वहुत कम फीस से बड़ा बाजार की एवं कलकत्ता के नागरिकों की सेवा कर रहा है। सभा की हीरक जयन्ती के अवसर पर इन्डोर स्टेडियम में समारोह रखा गया था उसमें विश्वमित्र दैनिक के सुप्रसिद्ध सम्पादक श्री कृष्णकुमार अग्रवाल ने अपने भाषण में कार्यकर्ताओं से कहा कि श्री जैन विद्यालय तो अच्छा चल रहा है इसके लिए आपको बधाई एवं धन्यवाद लेकिन यह स्कूल तो आपके बुजुर्गो द्वारा बनाई गई है, मजा तो तब आवे जब आप लोग कोई स्कूल हास्पिटल या कालेज बनावे। बात वजनदार थी, सभी कार्यकर्ताओं को लगा कि हमें भी कुछ करना चाहिये। हावड़ा अंचल की आबादी तेजी से बढ़ रही थी, अच्छे स्कूल की बहुत कमी थी, जमीन की खोज करने लगे। श्री रतन चौधरी के सहयोग एवं श्री सुन्दरलालजी दुगड़ के प्रयासों से एक जमीन बोन विहारी बोस रोड में खरीदी एवं ८ महीने के अल्प समय में स्कूल का निर्माण करके श्री जैन विद्यालय हावड़ा को शुरू कर दिया गया। पहले वर्ष ही १६०० छात्र-छात्राओं की भर्ती हुई। अभी लगभग ४००० छात्र-छात्राएँ योग्य शिक्षकों की देख-रेख में वाणिज्य एसं साइंस की शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। यह स्कूल मार्निग में लड़कियों के लिए एवं दिन में लड़कों के लिए कक्षा पहली से १२वीं तक चल रहा है। बहुत ही कम फीस में तथा जरूरतमन्दों को हाफ फ्री या फूल फ्री में भी शिक्षा दी जाती है। संगीत, नृत्य, कराटे, बैण्ड आदि का भी प्रशिक्षण कोलकाता एवं हावड़ा स्कूलों में दिया जाता है। सुसज्जित एवं अतिआधुनिक कम्प्यूटर मल्टिमिडीया द्वारा भी बच्चों को पढ़ाया जाता है। हावड़ा के निवासियों के लिए यह संस्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

हावड़ा स्कूल के रहते हावड़ा जाने का कई बार कार्य पड़ता था वहां के निवासियों से भी मिलना होता तो चर्चा में यह बात आई कि हावड़ा में चिकित्सा की भी अच्छी सुविधा नही हैं। कार्यकर्ताओं में विचार विमर्श होने लगा। सन् १९९३ में बिड़ला सभागार में मेरे सम्मान समारोह का आयोजन था। मैंने अपने वक्तव्य में सम्मान करने वालों को धन्यवाद दिया और यह भी कहा कि मेरा सच्चा सम्मान तो तव होगा जब हावड़ा में एक अच्छा हस्पिटल बने। हाल खचाखच भरा हुआ था। आदरणीय हरखचंदजी सा० कांकरिया की पर्ची आई कि यदि हावड़ा में हॉस्पिटल बनावें तो रु० ५१ लाख मेरी तरफ से मंगवाना। इस घोषणा से सारे माहौल में खुशी की लहरे दौड़ गई, कार्यकर्ताओं में उत्साह की लहर हिलोरें मारने लग गई। उसी वक्त हास्पिटल की नींव लग गई। समारोह के बाद हावड़ा में जमीन देखने का कार्य शुरु हुआ और बंगाल जूट मिल कम्पाउण्ड में एक जमीन खरीद ली गई एवं उत्साह तथा लगन के साथ निर्माण का कार्य शुरु हुआ। दो वर्ष में ही निर्माण कार्य पूर्ण करके २२० बेड का हास्पिटल सभा के सदस्यों ने उत्साह पूर्वक समाज को समर्पित किया। इस हास्पिटल को बनाने में दान दाताओं की होड़ लग गई। लगभग ७ करोड़ की लागत से हस्पिटल निर्माण हुआ एवं देश की आजादी की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर दिनांक १५ अगस्त १९९७ को इसका शुभारंभ हुआ। आज हावड़ा में इस हास्पिटल द्वारा जरूरतमन्द लोगों की बहुत ही रिजनेबुल रेट में सभी बीमारियों की सेवा हो रही है। धीरे-धीरे इसमें डायलेसिस डिपार्टमेन्ट चालू हुआ। हावड़ा में जैन हास्पिटल का यह विभाग बंगाल भर में मशहूर है। बहुत कम लागत में रोगियों की सेवा की जाती है। अति आधुनिकतम मशीनों द्वारा सभी प्रकार के बीमारी के जांच करने की व्यवस्था है। यह हास्पिटल हावड़ा एवं शिवपुर अंचल के रोगियों के लिए वरदान है। हास्पिटल हावड़ा की अमूल्य धरोहर है "ये शब्द सुप्रसिद्ध लोकप्रिय नेता स्व० बादल बोस, एम०एल०ए० के हैं। सभा के कार्यकर्ताओं में असीम जोश था कि श्री पन्नालालजी कोचर के अनुदान से पी० एल० इन्स्टीच्यूट ऑफ कारडियक साइंस विभाग भी प्रारम्भ किया गया है। हास्पिटल के पास से अढ़ाई कट्ठा जमीन पर भी राज भंसाली अमेरिका की ओर से पूज्य पिताजी स्व० श्री भीखमचन्दजी भंसाली की स्मृति में श्री भीखमचन्द भंसाली नर्सिग स्कूल भी शीघ्र प्रारम्भ होने वाला है।

सभा की प्लेटिनम जुवली एवं हावड़ा स्कूल की शिक्षा के एक दशक के उपलक्ष्य में एक भव्य आयोजन नेताजी इन्डोर स्टेडियम में श्री विमान वोस के सभापतित्व में रखा गया था। वहां पर श्रीमती सरला महेश्वरी एम०पी० आदि कई बड़े-वड़े नेता एवं दानवीर मौजूद थे। मैंने भाषण में कॉलेज बनाने की बात कही, विमान बोस ने भी शिक्षा संस्थानों की आवश्यकता बताई। वहां विराजित उदारमना श्री हरखचन्द कांकरिया ने कॉलेज बनाने के लिए एक करोड़ की राशि देने की घोषणा कराई। उसी वक्त स्टेज पर बैठे उदारमना श्री सुन्दरलालजी दुगड़ ने भी डेन्टल कॉलेज के लिए एक करोड़ की घोषणा की। सारी सभा में अपरिमित उत्साह एंव आनन्द की लहर दौड़ गई। श्रद्धेय विमान वोस ने भी हर्ष प्रकट किया। उसके बाद जमीन खोजने का कार्य शुरु किया। थोड़े ही दिनों में काशीपुर में एक जमीन देखी गई जो लगभग ४५५ कट्ठा थी, जिसे सभा के सभी सदस्यों को दिखाई, भाई सा० हरखचंदजी भी उस समय वहां मौजूद थे। श्री सुन्दरलालजी दुगड़, पन्नालाल कोचर, श्री रिखवदास भंसाली आदि करीव २० सदस्य थे, सभा को जमीन पसन्द आई एवं वह जमीन खरीद ली गई तथा ६ महिने में ही वहाँ तारादेवी हरखचंद कांकरिया जैन कॉलेज चालू कर दिया गया। इसका उद्घाटन भी लोकप्रिय नेता श्री विमान वोस के कर-कमलों से हुआ। जुलाई २००६ में इसका उद्घाटन हुआ। इसी जमीन पर डेन्टल

कॉलेज शीघ्र ही शुरु होने जा रहा है। इसी बीच एक कामर्स कॉलेज भी शुरु करने के लिए कमरे तैयार कर लिये गये हैं। सन २००८ के जून से कमलादेवी सोहनराज सिंघवी के नाम से कॉलेज आफ एज्यूकेशन भी चालू होगा। लगभग साढ़े सात एकड़ जमीन है, इसमें और भी कई प्रवत्तियाँ चालू की जायेंगी। श्रीमती लक्ष्मीदेवी पीरचंद जी कोचर की स्मृति में श्री पन्नालालजी कोचर ने नर्सिंग कॉलेज की घोषणा की, इसका भूमि पूजन हुआ किन्तु जमीन की कठिनाई के कारण कुछ विलम्ब से प्रारम्भ होगा। सभा के बुक बैंक के माध्यम से हर वर्ष १५०० ग्रामीण क्षेत्र के स्कूलों के छात्रों को नि:शुल्क पाठ्य पुस्तकें वितरित करती है। इस वर्ष सभा की स्थापना का ८०वाँ वर्ष है। आठ दशक के इस पावन अवसर पर सभा द्वारा और कई लोकोपकारी कार्य हो, ऐसा प्रयास रहेगा।

थोड़े से सदस्य होते हुए भी आपस में प्रेम, स्नेह एवं कार्य करने की लगन से ही यह संस्थान कोलकाता की लोकप्रिय संस्थाओं में विशेष स्थान रखता है। संस्था में युवा कार्यकर्ताओं का भी इन दिनों प्रवेश हो रहा है, यह भविष्य का शुभ संकेत है। देश की, समाज की स्थिति विगत दस वर्षों में तेजी से आगे बढ़ी है व्यापार एवं शिक्षा सभी में, ऐसे समय में उच्च शिक्षा की अति आवश्यकता है। टेकनीकल एवं उच्च शिक्षा काफी मंहगी हो गई है। जरुरतमन्दों को यह उच्च शिक्षा उपलब्ध हो, ऐसा प्रयास सभा को तथा समाज की संस्थाओं को करना चाहिये तभी ज्यादा से ज्यादा देश एवं समाज के नवयुवक एवं नवयुतियाँ उच्च शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे। साथ ही साथ गांवों में बेरोजगार बहुत से युवा हैं इनको रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना इस समारोह का मुख्य उद्देश्य होना चाहिये। ऐसा यदि करेंगे तो सभा अपने कर्तव्य के रास्ते चलेगी। देश एवं समाज में ज्यादा सेवा हो एवं युवा-जन का भविष्य संवार सकें, उनको सहयोग देकर आत्मनिर्भर बना सकें, ऐसे वातावरण का निर्माण करने से ही सभा आगे बढ़ेगी।

इस समारोह में एक नवयुवक का सम्मान करने का निश्चय किया गया है जो कि स्वनिर्मित (सेल्फ मेड है। इस व्यक्ति ने साधारण आर्थिक स्थिति में जन्म लेकर छोटे ग्राम देशनोक में मामूली शिक्षा प्राप्त की। अपनी लगन, निष्ठा, सरलता एवं सूझबूझ से व्यापार में अपना विशेष स्थान बनाया! व्यापार का दिन दूना, रात चौगुना विस्तार किया लेकिन सरलता, विनय, सहयोग की अधिकाधिक भावना से ओतप्रोत होते गये। उनकी उदारता भी बेमिसाल है। राजस्थान, कोलकाता आदि में से कहीं का भी कोई सहयोग लेने आया तो खाली हाथ नहीं भेजा। आज कलकत्ता में श्री दुगड़जी उदारता में अपने आपमें एक उदाहरण हैं। सैकड़ों संस्थाएँ इनसे लाभान्वित हुई हैं। ऐसे गुणी, उदारमना, योग्य पुरुष का अभिनन्दन करके सभा की गरिमा और बढ़ेगी। श्री सुन्दरलाल दुगड़ स्वस्थ रहते हुए शतायु हों और इनके उदार हाथों से बड़े-बड़े से सेवा के कार्य हों, ऐसी मंगलकामना के साथ मेरे साथ कार्य करने वाले सभी सहयोगियों को धन्यवाद देता हूं आठ दशक की यात्रा पूरी करके शताब्दी तक की यात्रा इस सभा की ज्यादा गतिशील हो, लोकोपकारी हो, देश एवं समाज की आकांक्षा के अनुरूप कार्य हो, ऐसी मंगल-कामना है।

गोस्वामी तुलसीदासजी की इस चौपाई से मैं अपनी बात समाप्त करता हूँ–

''परहित बस जिनके मन मांही। तिन कंह दुर्लभ कछु जग नाहीं।

■
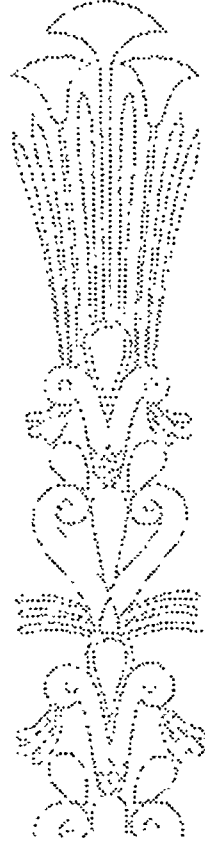
श्री फूसराज बच्छावत

सभा के संस्थापक सदस्य एवं कर्मठ कार्यकर्ता

सभा के संस्थापक
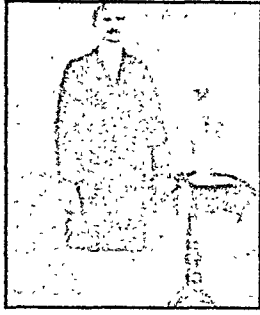
श्री उदयचन्द डागा
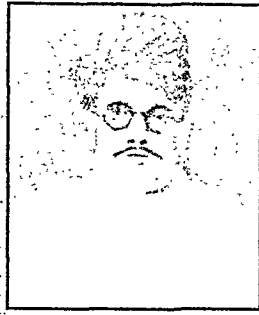
श्री जानकीदास मिन्नी
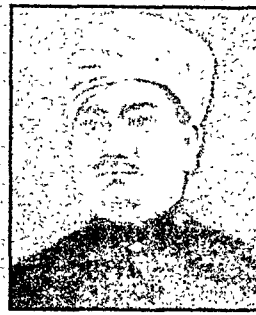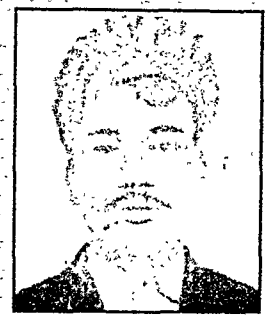
श्री नेमचन्द बच्छावत

श्री अभयराज बच्छावत
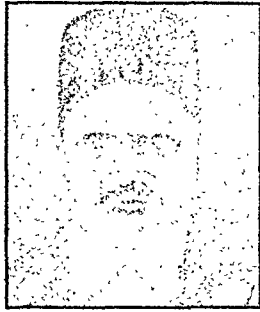
श्री तोलाराम मिन्नी

श्री सौभाग्यमल डागा
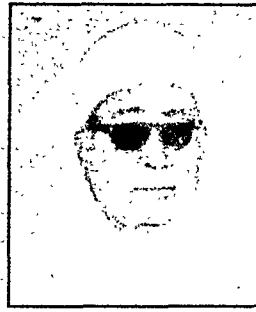
श्री दौलतरूपचन्द भण्डारी

श्री अजीतमल पारख

श्री लक्ष्मीनारायण बक्सी

श्री नेमचन्द भंसाली

श्री ईश्वरदास छल्लाणी
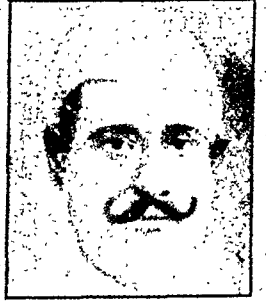
श्री नेमचन्द रांका

श्री मगनमल कोठारी

श्री पानमल मिन्नी

श्री सुजानमल रांका

सभा के पूर्व एवं वर्तमान ट्रस्टी

श्री मगनमल कोठारी
१९२८-३६

श्री भैरूंदान गोलछा
१९२८-३६
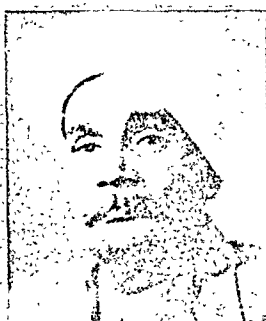
श्री किशनलाल कांकरिया
१९२८-३६

श्री बहादुरमल बाँठिया
१९२८-३७

श्री श्रीचन्द बोथरा
१९२८-३६

श्री रावतमल बोथरा
१९३६-३६

श्री अजितमल पारख
१९३६-६०
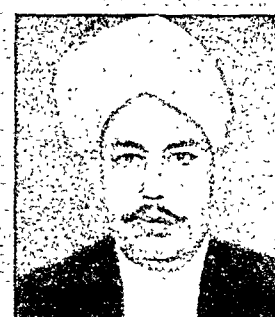
श्री सोहनलाल बाँठिया
१९३६-३७
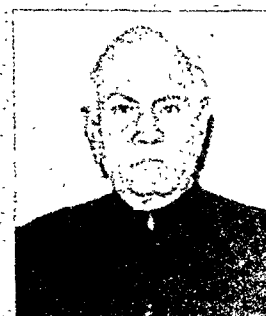
श्री छगनलाल वैद
१९६०-९०

श्री पारसमल कांकरिया
१९५३-८७

श्री जयचन्दलाल रामपुरिया
१९५९-९९

सभा के पूर्व एवं वर्तमान ट्रस्टी

श्री कन्हैयालाल मालू
१९६०-९३
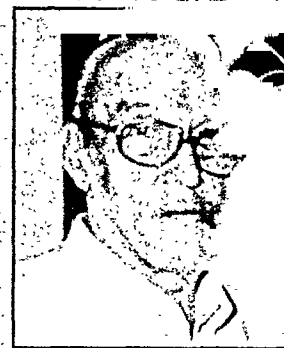
श्री सरदारमल कांकरिया
१९८७-२००७
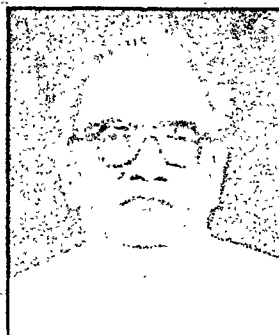
श्री भंवरलाल वैद
१९९०-९४
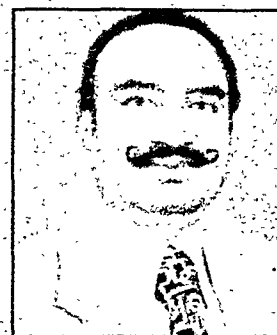
श्री माणकचन्द रामपुरिया
१९९४-२००१
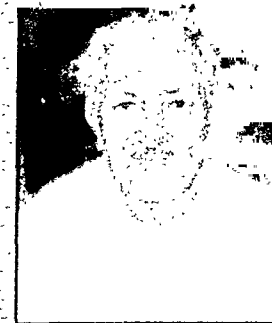
श्री भँवरलाल कर्णावट
१९९२-२०००
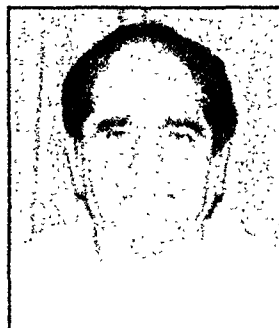
श्री जयचन्दलाल मिन्नी
१९९४-२०००
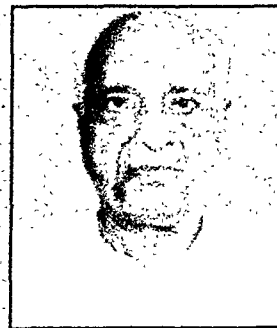
श्री रिखबदास भंसाली
२००० से निरन्तर
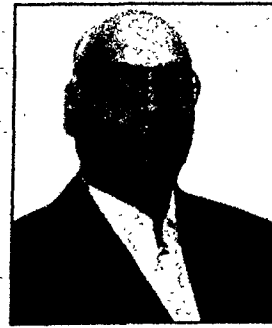
श्री बालचन्द भूरा
२००० से २००३
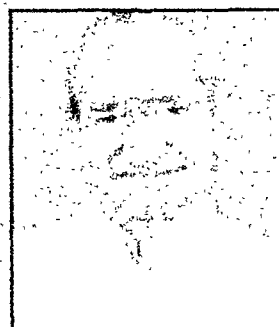
श्री बच्छराज अभाणी
२००३ से निरन्तर
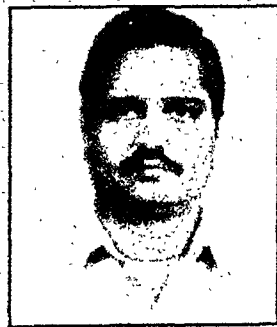
श्री सुन्दरलाल दुगड़
२००३ से निरन्तर
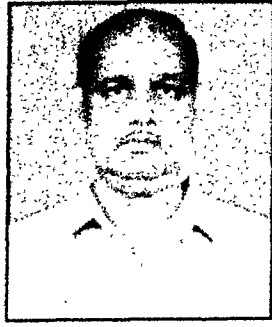
श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया
२००७ से निरन्तर

सभा के पूर्व एवं वर्तमान अध्यक्ष

श्री मगनमल कोठारी
१९२८-२९

श्री बहादुरमल बाँठिया
१९२९-३१

श्री रावतमल बोथरा
१९३१-३३

श्री भैरूंदान गोलछा
१९३३-३६
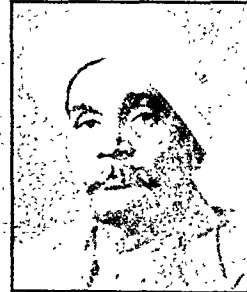
श्री किशनलाल कांकरिया
१९३६-५२
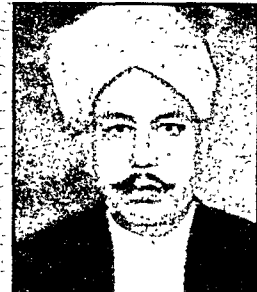
श्री सोहनलाल बाँठिया
१९५२-५९

श्री दीपचन्द कांकरिया
१९५९-६०
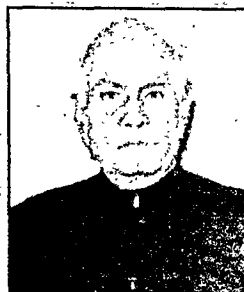
श्री छगनलाल बैद
१९६०-६४

श्री फूसराज बच्छावत
१९६४-६८

श्री पारसमल कांकरिया
१९६८-७०

सभा के पूर्व एवं वर्तमान अध्यक्ष
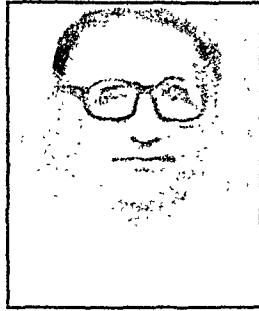
श्री कन्हैयालाल मालू
१९७०-७३

श्री फूसराज कांकरिया
१९७३-७६

श्री देवराज गोलछा
१९७६-७७

श्री माणकचन्द रामपुरिया
१९७७-८५

श्री सूरजमल बच्छावत
१९८५-९०
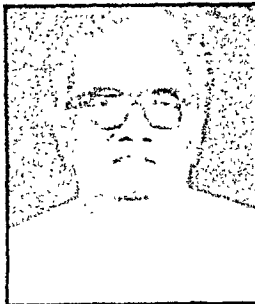
श्री भंवरलाल बैद
१९९०-९२
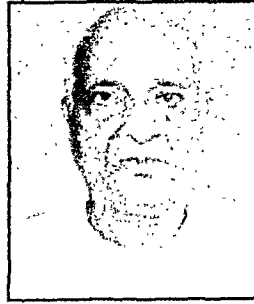
श्री रिखबदास भंसाली
१९९२-२०००
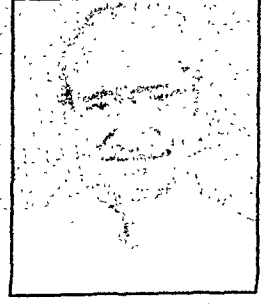
श्री बच्छराज अभाणी
२०००-२००२

श्री बालचन्द भूरा
२००२-०५
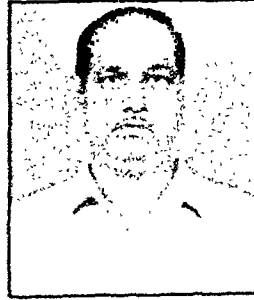
श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया
२००५-०७

श्री सरदारमल कांकरिया
२००७ से निरन्तर

सभा के पूर्व एवं वर्तमान मंत्री

श्री सुजानमल रांका
१९२८-२९

श्री प्रतापसिंह ढड्ढा
१९२९-३१

श्री अजीतमल पारख
१९३१-३६

श्री देवचन्द सेठिया
१९३६-३७

श्री फूसराज बच्छावत
१९३७-५२

श्री सूरजमल बच्छावत
१९५२-६०

श्री हरखचन्द कांकरिया
१९६०-६४
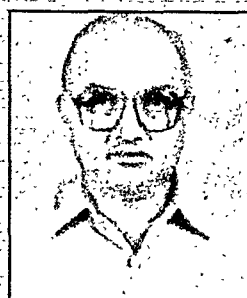
श्री कुन्दनमल वैद
१९६४-६८
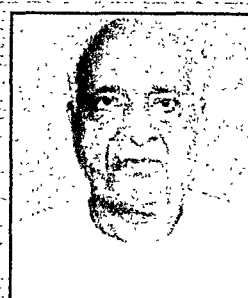
श्री रिखबदास भंसाली
१९६८-७८
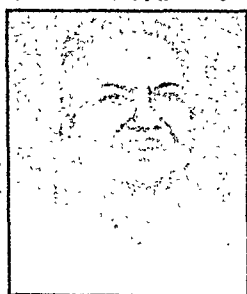
श्री झँवरलाल वैद
१९७८-८३
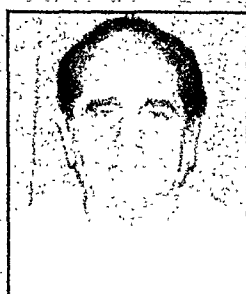
श्री जयचन्दलाल मित्री
१९८३-८८

श्री रिधकरण बोथरा
१९८८-२००१
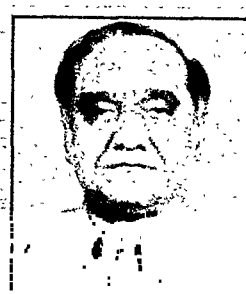
श्री विनोद मित्री
२००१ से निरन्तर

सभा के हितैषी

श्री मनमोहनभाई देसाई

साहू श्री शान्तिप्रसाद जैन

श्री मगनमल पारख
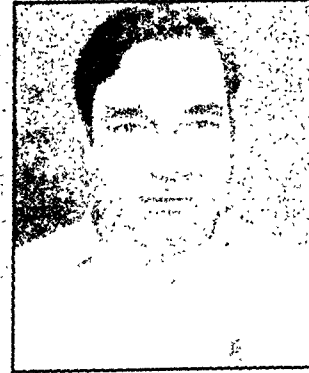
श्री कन्हैयालाल बोथरा

श्री पूरनमल कांकरिया

दानवीर श्री सोहनलाल दुगड़

श्री हनुमानमल बोथरा

श्री विजयसिंह नाहर
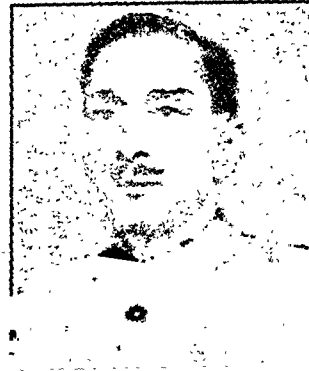
जो आज हमारे बीच नही रहे
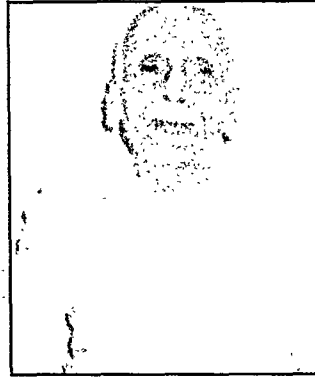
श्री सुरजमल बच्छावत
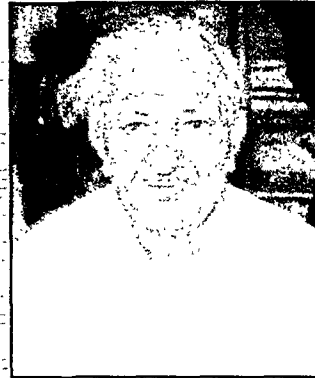
श्री भँवरलाल कर्णावट

श्री जसकरन बोथरा
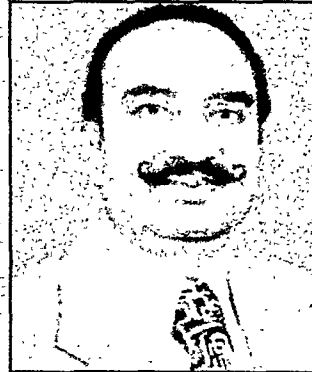
श्री माणकचन्द रामपुरिया

श्री सोहनलाल गोलछा
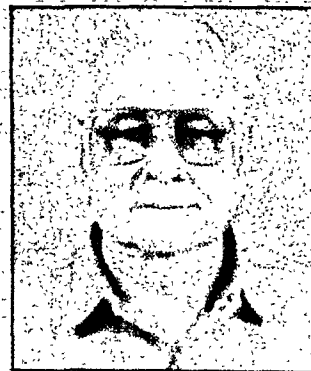
श्री मोतीलाल मालू

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, वर्तमान कार्यकारिणी
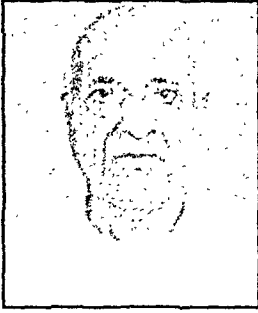
श्री रिखबदास भंसाली
ट्रस्टी
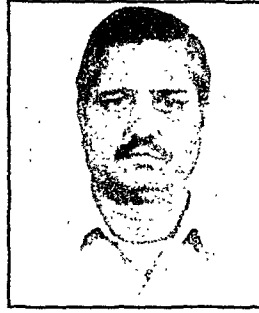
श्री सुन्दरलाल दुगड़
ट्रस्टी
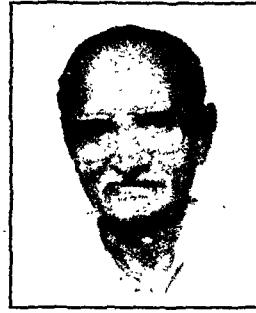
श्री बच्छराज अभाणी
ट्रस्टी
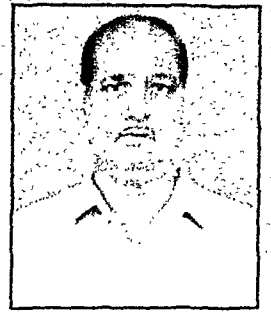
श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया
ट्रस्टी
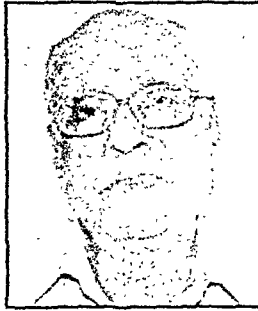
श्री रिधकरन बोथरा
उपाध्यक्ष
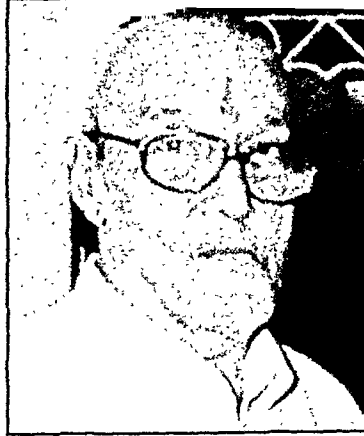
श्री सरदारमल कांकरिया
अध्यक्ष

श्री विनोद मिन्नी
मंत्री
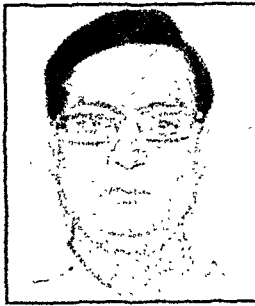
श्री अशोककुमार बोथरा
सहमंत्री

श्री किशोरकुमार कोटारी
सहमंत्री

श्री अजयकुमार अभाणी
कोषाध्यक्ष

श्री बालचंद भूरा
सदस्य

श्री मोहनराज सिंघवी
सदस्य

श्री पन्नालाल कोचर
सदस्य

श्री मोहनलाल भंसाली
सदस्य

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, वर्तमान कार्यकारिणी

श्री भंवरलाल दस्सानी
सदस्य

श्री शांतिलाल डागा
सदस्य

श्री पारसमल भूरट
सदस्य

श्री अशोक मिन्नी
सदस्य

श्री सुभाषचंद कांकरिया
सदस्य

श्री महेन्द्रकुमार कर्णावट
सदस्य

श्री फागमल अभाणी
सदस्य

श्री ललितकुमार कांकरिया
सदस्य

श्री गोपालचंद बोथरा
सदस्य

श्री अरुणकुमार मालू
सदस्य

श्री निश्चल कांकरिया
सदस्य

श्री राजेन्द्रप्रसाद बोथरा
सदस्य

श्री प्रदीप पटवा
सदस्य

श्री जय बोथरा
सदस्य

श्री सुभाष वच्छावत
सदस्य

श्री चन्द्रप्रकाश डागा
सदस्य

श्री सुरेन्द्रकुमार सेठिया
सदस्य

श्री हनुमान नाहटा
कार्यालय सचिव

श्री जैन विद्यालय कोलकाता (कार्यकारिणी)
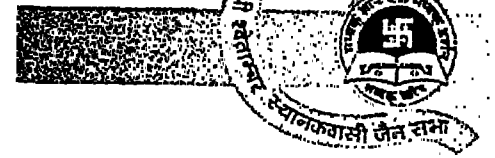
श्री सोहनराज सिंघवी
अध्यक्ष

श्री राजेन्द्रप्रसाद बोथरा
उपाध्यक्ष

श्री विनोदचंद कांकरिया
मंत्री

श्री अरुणकुमार तिवारी
प्रधानाचार्य

श्री सरदारमल कांकरिया
सदस्य

श्री रिधकरन बोथरा
सदस्य
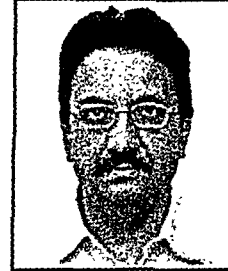
श्री जय बोथरा
सदस्य
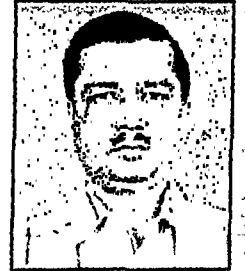
श्री राजकुमार डागा
सदस्य

श्री गोपालचन्द्र हल्दार
सदस्य
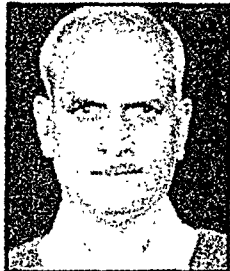
श्री देवेन्द्र तिवारी
सदस्य

श्री राधेश्याम मिश्र
सदस्य

श्री जीतनाथ मिश्र
सदस्य
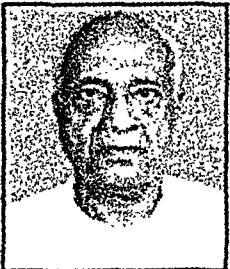
श्री रिखबदास भंसाली
विशेष आमंत्रित सदस्य

श्री बालचंद भूरा
विशेष आमंत्रित सदस्य

श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया
विशेष आमंत्रित सदस्य

श्री [illegible]
विशेष आमंत्रित सदस्य

श्री जैन विद्यालय फॉर गर्ल्स (कार्यकारिणी)
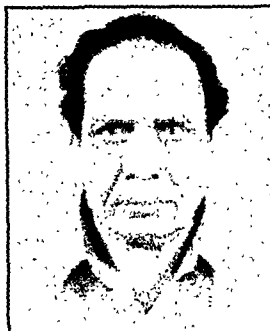
श्री पन्नालाल कोचर
अध्यक्ष

श्री महेन्द्रकुमार कर्णावट
उपाध्यक्ष

श्री ललितकुमार कांकरिया
मंत्री

श्री सरदारमल कांकरिया
सदस्य

श्री रिधकरन बोथरा
सदस्य
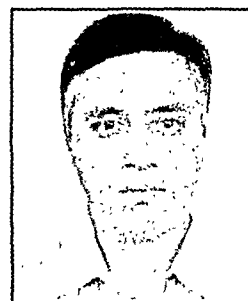
श्री राजकुमार डागा
सदस्य

श्री राधेश्याम मिश्र
सदस्य

श्रीमती मनीषा गुप्ता
सदस्य

श्रीमती ओल्गा घोष
प्रधानाचार्या

श्रीमती मीरा चौधरी
सदस्य

श्रीमती मौसमी घोषाल
सदस्य

श्री विजय साहा
सदस्य

श्री जैन विद्यालय फॉर ब्वायज्, हावड़ा (कार्यकारिणी)
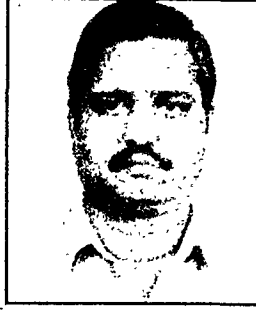
श्री सुन्दरलाल दुगड़
अध्यक्ष

श्री प्रदीप पटवा
उपाध्यक्ष
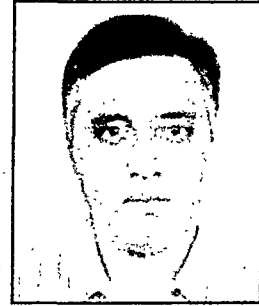
श्री ललितकुमार कांकरिया
मंत्री

श्री सरदारमल कांकरिया
सदस्य

श्री रिखबदास भंसाली
सदस्य
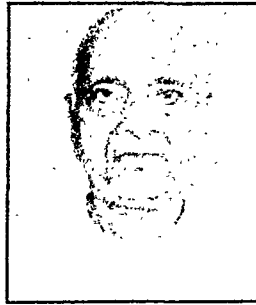
श्री अशोककुमार बोथरा
सदस्य

श्री अजयकुमार अभाणी
सदस्य
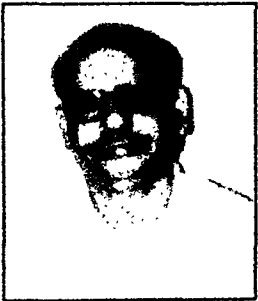
श्री रामअधीन सिंह
प्रधानाचार्य
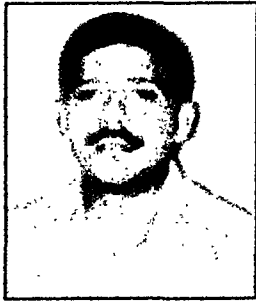
श्री अरिंदम बोस
शिक्षक - सदस्य
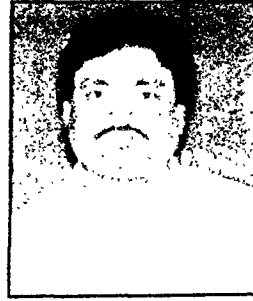
श्री संजय सिंह
शिक्षक - सदस्य
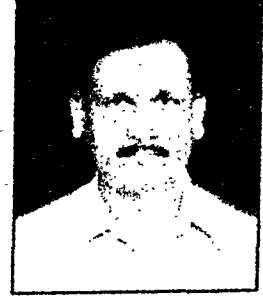
श्री चन्द्रदेव चौधरी
गैर-शिक्षक सदस्य

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर (कार्यकारिणी)
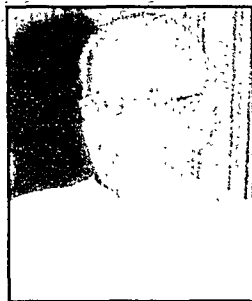
श्री हरखचन्द कांकरिया
विश्वस्त मंडल

श्री श्यामसुन्दर केजरीवाल
विश्वस्त मंडल
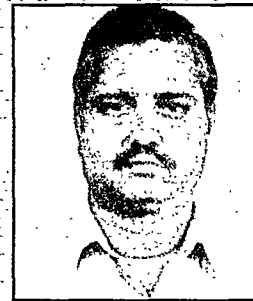
श्री सुन्दरलाल दुगड़
विश्वस्त मंडल
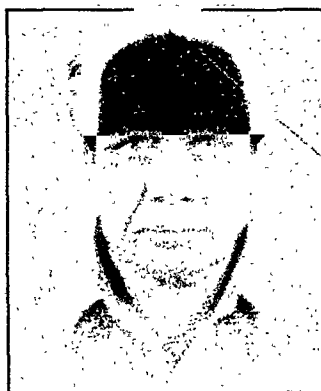
श्री पन्नालाल कोचर
अध्यक्ष

श्री सोहनराज सिंघवी
उपाध्यक्ष

श्री जयकुमार कांकरिया
उपाध्यक्ष

श्री विजय नाहटा
उपाध्यक्ष
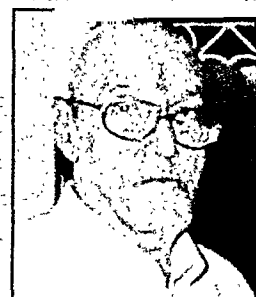
श्री सरदारमल कांकरिया
मंत्री

श्री अशोक मिन्नी
सहमंत्री
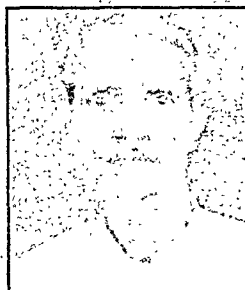
श्री फागमल अभाणी
सहमंत्री

श्री सुभाष वच्छावत
संयुक्त सहमंत्री

श्री सुभाष चोरड़िया
कोषाध्यक्ष

समितियां
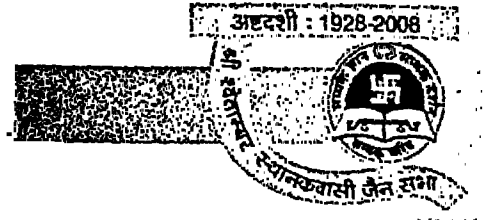
श्री जैन धर्म सभा समिति

श्री चांदमल अभाणी
संयोजक
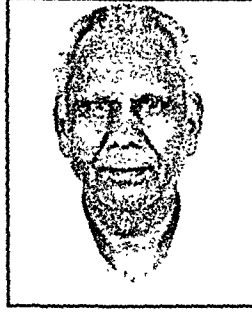
श्री अखेचंद भंडारी
सह-संयोजक

श्री कुन्दनमल फलोदिया
सह-संयोजक

श्री महिला उत्थान एवं विकास समिति

श्रीमती फूलकुमारी कांकरिया
संयोजिका

श्रीमति लीलादेवी बोथरा
सहसंयोजिका

श्रीमती प्रभा भंसाली
सहसंयोजिका

श्रीमती किरण हीरावत
सहसंयोजिका

मानव सेवा प्रकल्प

श्री सुभाष कांकरिया
संयोजक
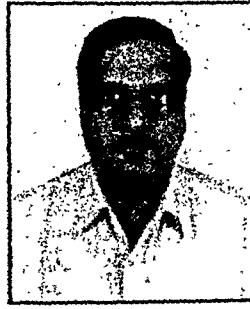
श्री सुभाष चौरड़िया
सहसंयोजक

श्री उदयचन्द सेठिया
सहसंयोजक

समितियां

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र
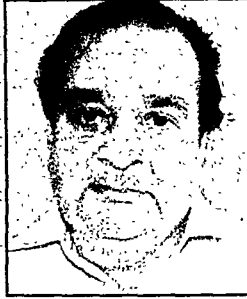
श्री अशोक बच्छावत
मंत्री

श्रीमती रेखा भंसाली
सहमंत्री

श्री अरुणकुमार तिवारी
प्रधानाचार्य

श्री राधेश्याम मिश्र
को-ऑर्डिनेटर

इन्दिरा गांधी ओपन यूनिवर्सीटी स्टडी सेन्टर
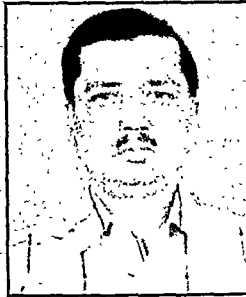
श्री राजकुमार डागा
संयोजक
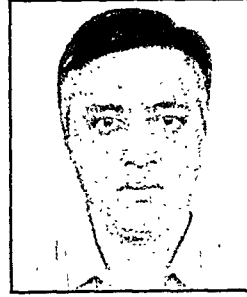
श्री ललित कांकरिया
सहसंयोजक

डॉ. गोपालजी दूबे
कोऑर्डिनेटर

श्री जैन बुक बैंक

श्री सुभाष बच्छावत
संयोजक
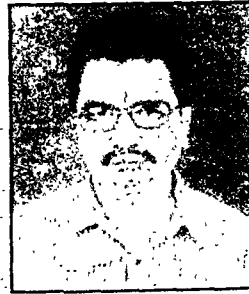
श्री अजय बोथरा
सहसंयोजक
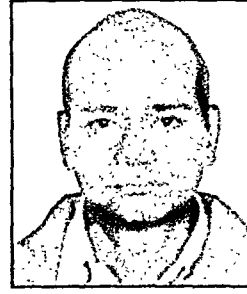
श्री अजय डागा
सहसंयोजक

श्री सुशील गेलड़ा
सहसंयोजक

तारादेवी हरखचन्द कांकरिया जैन कॉलेज कार्यकारिणी

श्री बालचंद भूरा
अध्यक्ष

श्री रिधकरन बोथरा
उपाध्यक्ष
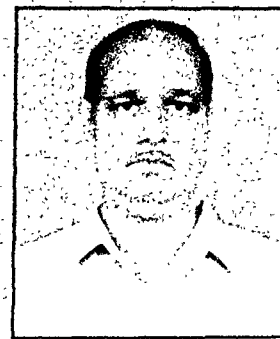
श्री सरदारमल कांकरिया
मंत्री

श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया
सह-मंत्री
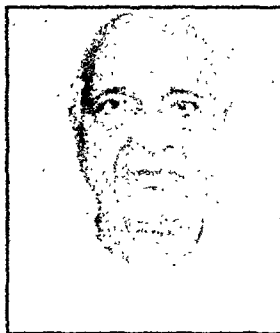
श्री रिखबदास भंसाली
सदस्य

श्री सोहनराज सिंघवी
सदस्य

श्री विनोद मित्री
सदस्य
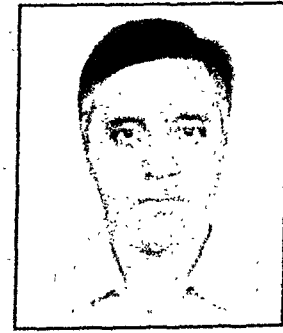
श्री ललितकुमार कांकरिया
सदस्य

श्री जैन कॉलेज योजना समिति

श्री सरदारमल कांकरिया
संयोजक

श्री पन्नालाल कोचर
सहसंयोजक

कानूनी सलाह / विधी व्यवस्था समिति

श्री किशोरकुमार कोठारी
संयोजक

श्री रिधकरन बोथरा
सह-संयोजक
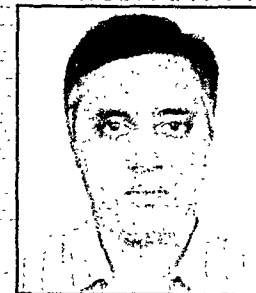
श्री ललित कांकरिया
सह-संयोजक

अभिनन्दन

सभा के पूर्व मंत्री श्री जयचन्दलाल मित्री का उनकी दीर्घ सेवाओं हेतु अभिनन्दन करते हुए श्री श्रीचन्द नाहटा

सेवा मूर्ति श्री रिधकरण बोथरा एवं श्रीमती लीलादेवी बोथरा का अभिनन्दन करते हुए श्री सरदारमल कांकरिया, श्री रिखवदास भंसाली

श्री बच्छराज अभानी
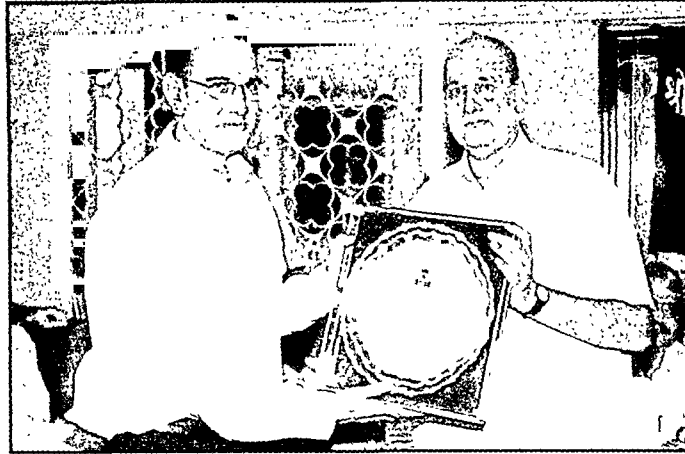
अभिनन्दन

कमिश्नर ऑफ प्रोफेसनल टैक्सेस श्री चंचलमल बच्छावत का अभिनन्दन
करते हुए सभा के अध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमार बांठिया
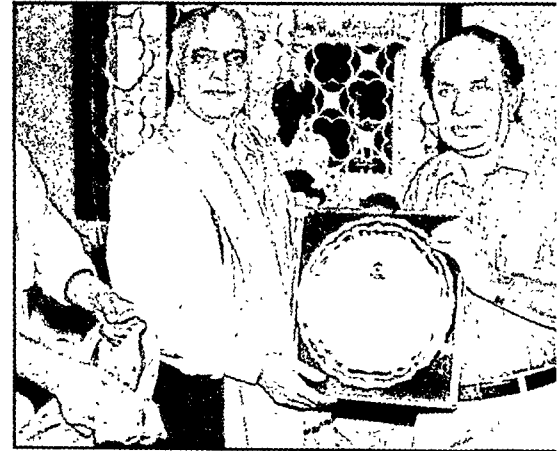
श्री उत्तमचंद नाहटा, रीजनल डायरेक्टर, कम्पनी अफैयर्स, इ
का अभिनन्दन करते हुए श्री पन्नालाल कोचर

भामाशाह दानवीर श्री सुन्दरलाल दुगड़ का अभिनन्दन करते हुए
श्री सुब्रत मुखर्जी, मेयर, कोलकाता कॉरपोरेशन

सम्पादक मण्डल

श्री भूपराज जैन

श्री रिधकरण बोथरा

श्री पदमचन्द नाहटा

श्री राधेश्याम मिश्र

श्री सुरेश सिसोदिया
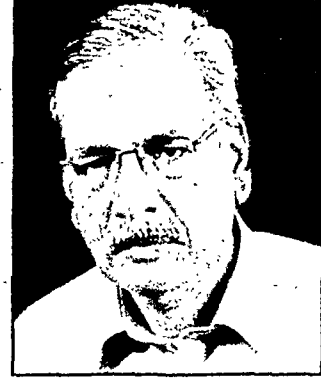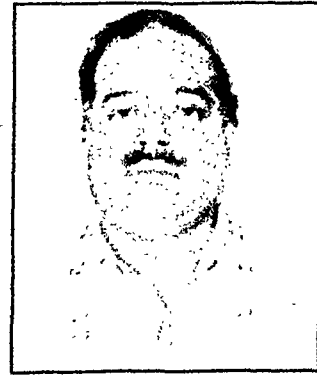
अष्ट दशक समारोह स्वागत एवं व्यवस्था समिति

श्री सरदारमल कांकरिया
संयोजक
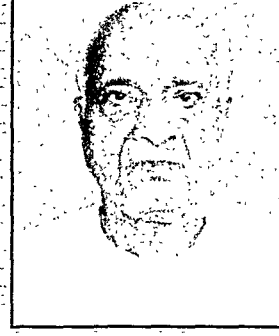
श्री रिखबदास भंसाली
सह-संयोजक

व्यवस्था समिति

श्री विनोद मिन्नी
संयोजक

श्री रिधकरन बोथरा
संयुक्त सह-संयोजक

सदस्य

श्री जयचंदलाल रामपुरिया
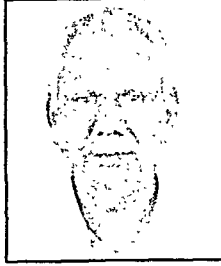
श्री अखेचंद भंडारी

श्री मोहनलाल भंसाली
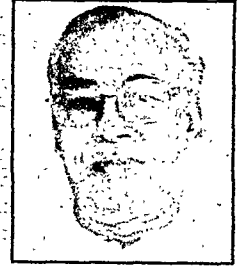
श्री पारसमल भूरट
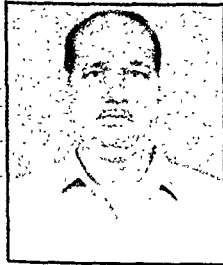
श्री सुरेन्द्रकुमार बांठिया

श्री सोहनराज सिंघवी

श्री मुभाषचन्द कांकरिया

श्री पन्नालाल कोचर

अष्ट दशक समारोह स्वागत एवं व्यवस्था समिति

श्री केवलचन्द भूरट

श्री विनोदचन्द कांकरिया

श्री शांतिलाल डागा

श्री किशनलाल बोथरा

श्री अशोक मिन्नी

श्री अशोक बच्छावत
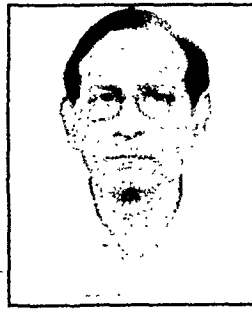
श्री केशरीचन्द गेलड़ा
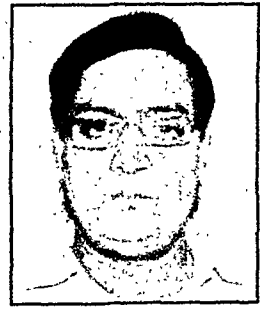
श्री अशोककुमार बोथरा
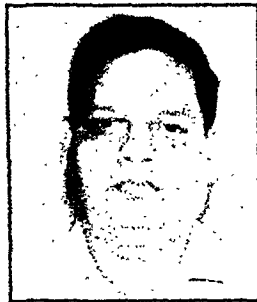
श्री किशोरकुमार कोठारी

श्री राजेन्द्रप्रसाद बोथरा
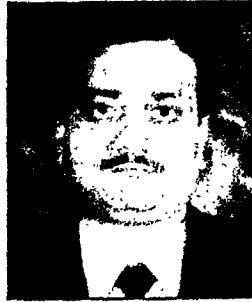
श्री महेन्द्रकुमार कर्णावट

श्री कमलसिंह भंसाली

श्री अजयकुमार डागा

श्री विनोद दुगड़
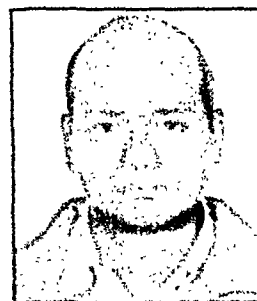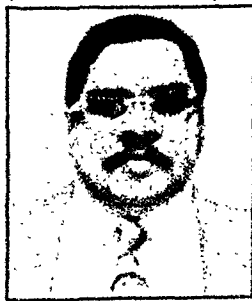
श्री दिलीप कांकरिया
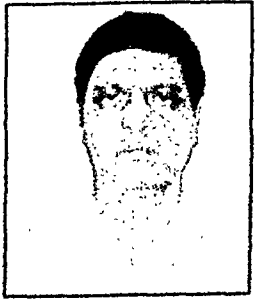
श्री हेमन्त भंसाली

अष्ट दशक समारोह स्वागत एवं व्यवस्था समिति

श्री चन्द्रप्रकाश डागा
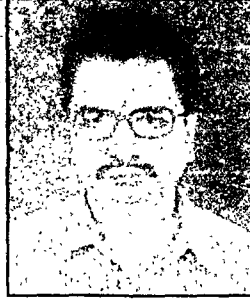
श्री अजयकुमार बोथरा
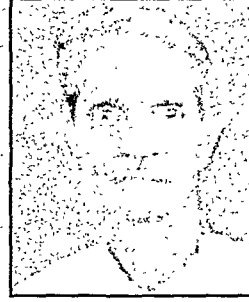
श्री फागमल अभाणी
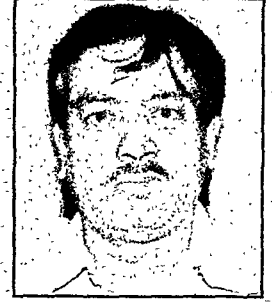
श्री कमल कर्णावट
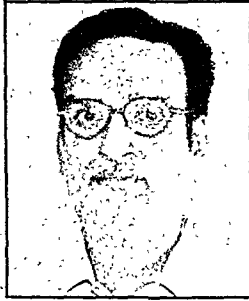
श्री अशोक कोचर
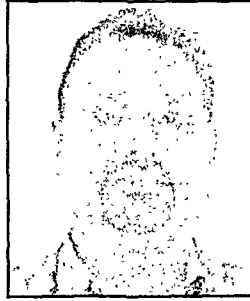
श्री सुधीर भंडारी

श्री धनराज अभाणी

श्री अजय अभाणी

श्री विजय मुकीम
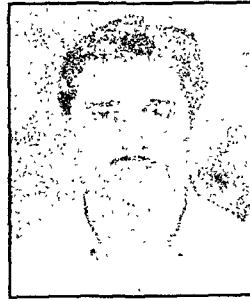
श्री अरुणकुमार मालू
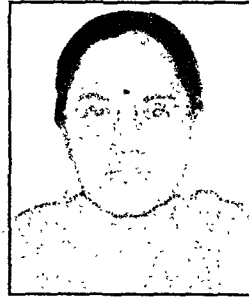
श्रीमति लीला भण्डारी

श्री कमलकुमार कोठारी

श्री सुशील गेलड़ा
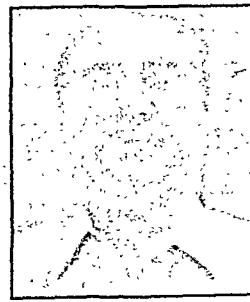
श्री पुखराज वेताला
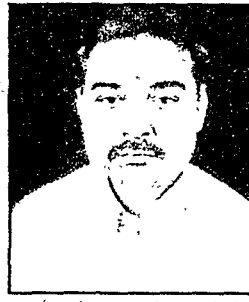
श्री कैलास बोथरा
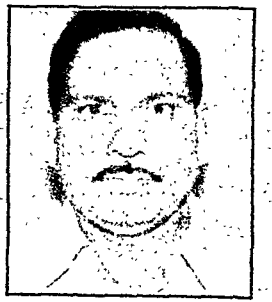
श्री पदम भण्डारी

अष्ट दशक समारोह स्वागत एवं व्यवस्था समिति

श्री अरुण सकलेचा
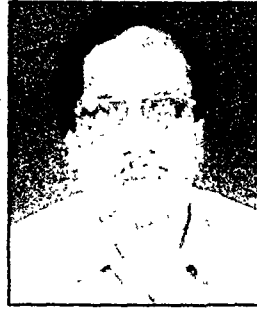
श्री अरुण बच्छावत

श्री कमल कोठारी

श्रीमति शीतल दुगड़

श्री प्रकाशचन्द जैन
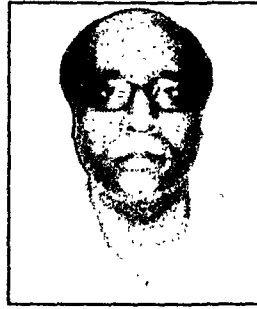
श्री ललित भंसाली

श्री विजय कांकरिया

श्री राजेन्द्र दफ्तरी

श्री दर्शन मुकीम
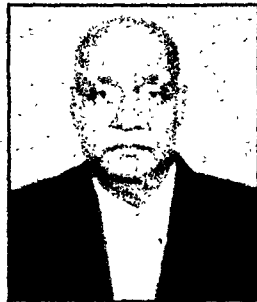
श्री भंवरलाल दस्सानी

श्री मनीष बोथरा

श्री मानिकचंद गेलड़ा

श्री संदीप डागा
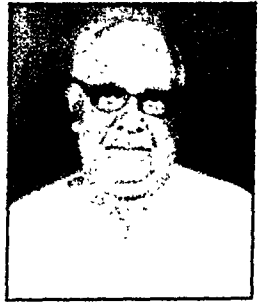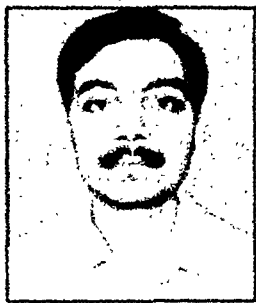
श्री कमल बच्छावत

श्री ललितकुमार कांकरिया
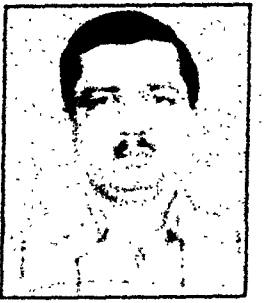
श्री राजकुमार डागा

अष्ट दशक समारोह स्वागत एवं व्यवस्था समिति

श्री गोपालचंद भूरा

श्री हस्तीमल जैन

श्री सुरेन्द्र दफ्तरी
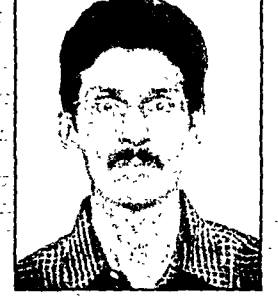
श्री निश्चल कांकरिया
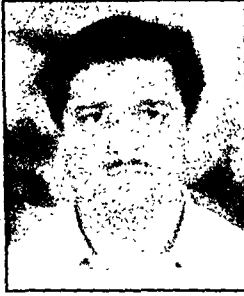
श्री अरुणकुमार मालु
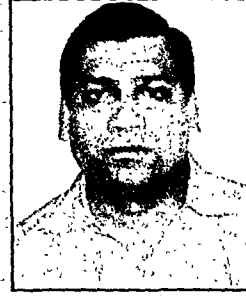
श्री आलोक झावक
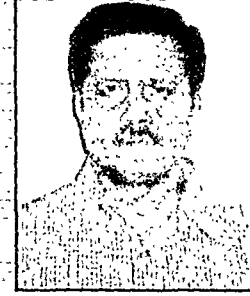
श्री राजेश मिन्नी

श्री शान्तिलाल मालू
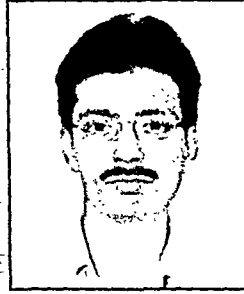
श्री अजित पारख

श्री सिद्धार्थ गुलगुलिया

श्री अभिषेक कर्नावट
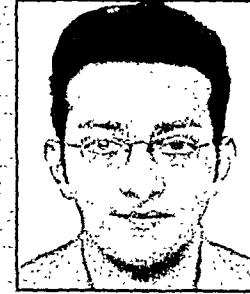
श्री विनोदकुमार डागा

श्री अरविन्द बोथरा
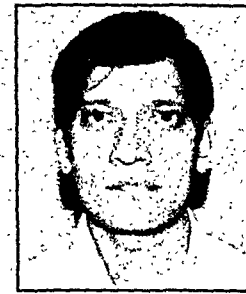
श्री शान्तिलाल पटवा
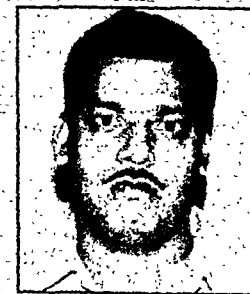
श्री रवि डागा
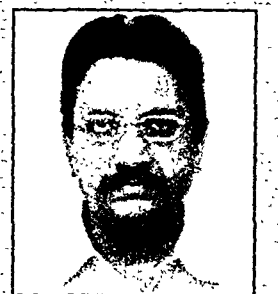
श्री जय बोथरा

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा
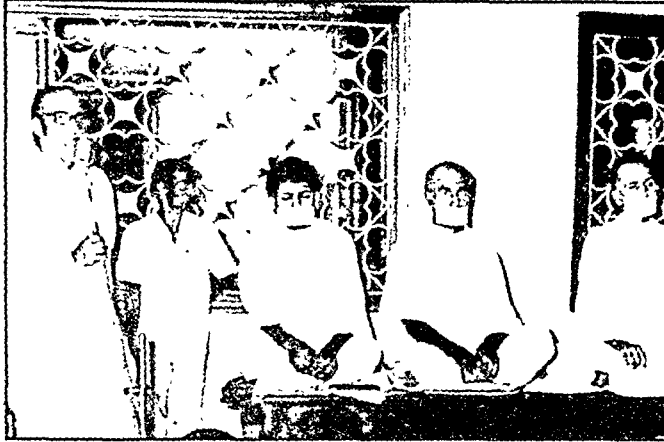
सामूहिक क्षमायाचना के अवसर पर क्षमायाचना करते हुए सरदारमलजी कांकरिया मंचस्थ आदरणीय मुनिगण

अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ की बैठक को सम्बोधित करते हुए सरदारमल कांकरिया

महावीर जयंती के अवसर पर आयोजित समारोह में उपस्थिति
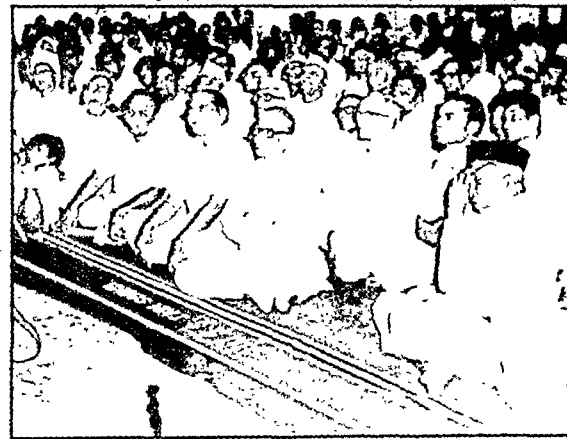
श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा द्वारा आयोजित स्वर्ण ज[illegible] समारोह की उपस्थिति का दृश्य

श्री जैन विद्यालय के वार्षिकोत्सव पर आयोजित समारोह में सभा के गणमान्य पदाधिकारीगण, छात्र एवं अभिभावक

सभा की स्वर्ण जयंती पर आयोजित समारोह को संबोधित करते हुए डॉ. नरेन्द्र भानावत

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा
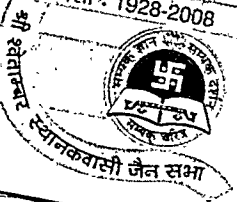
सभा हॉल में सभा के सदस्य को सम्बोधित करते हुए आचार्यश्री महाराज

अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ की कार्यकारिणी गोष्ठी
को सम्बोधित करते हुए श्री मानवमुनि
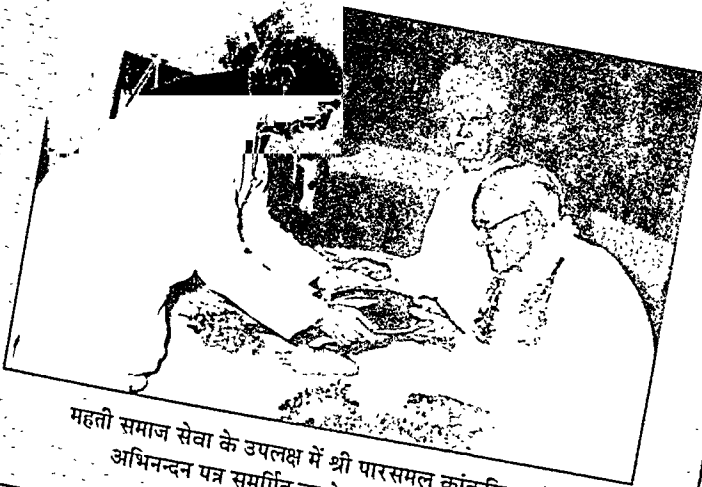
महती समाज सेवा के उपलक्ष में श्री पारसमल कांकरिया को
अभिनन्दन पत्र समर्पित करते हुए श्री बच्छावतजी
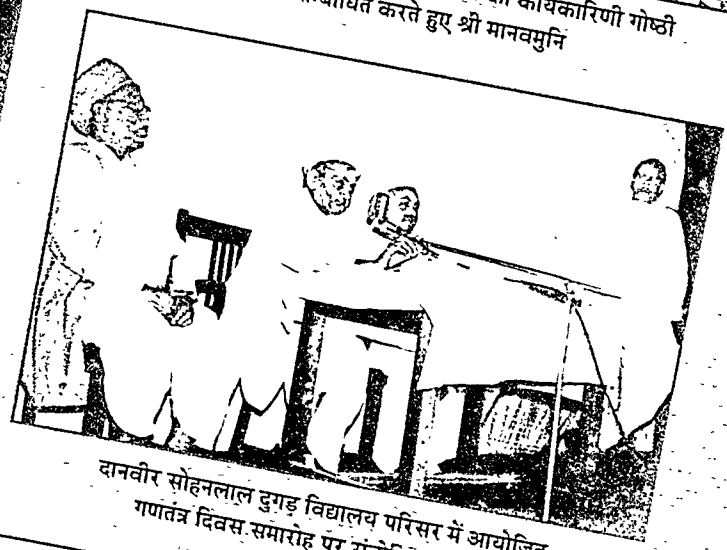
दानवीर सोहनलाल दुगड़ विद्यालय परिसर में आयोजित
गणतंत्र दिवस समारोह पर संबोधित करते हुए
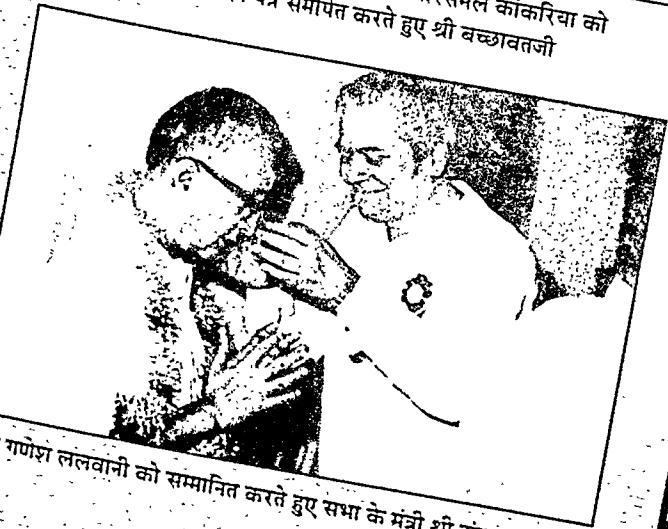
गणेश ललवानी को सम्मानित करते हुए सभा के मंत्री श्री झंवरलाल वैद

श्री जेसराजजी वैद को माल्यार्पित करता हुआ विद्यालय का एक छात्र

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

कलकत्ता में आयोजित श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ बीकानेर की कार्यकारिणी समिति की बैठक को संबोधित करते हुए श्री बच्छावतजी

श्री बच्छावतजी पश्चिम बंगाल के उपमुख्यमंत्री श्री विजयसिंह नाहर, श्री रिखबदास भंसाली, श्री छगनलाल बैद के साथ चर्चा करते हुए

श्री श्वे. स्था. जैन सभा की एक महत्वपूर्ण बैठक में श्री बच्छावतजी अन्य कार्यकर्ताओं श्री छगनमल बैद, श्री पारसमल कांकरिया, श्री दीपचंद कांकरिया, श्री रिखबदास भंसाली आदि के साथ

विद्यालय परिसर में पधारे आचार्यश्री का आशीर्वाद प्राप्त करते हुए सभा के गणमान्य सदस्य
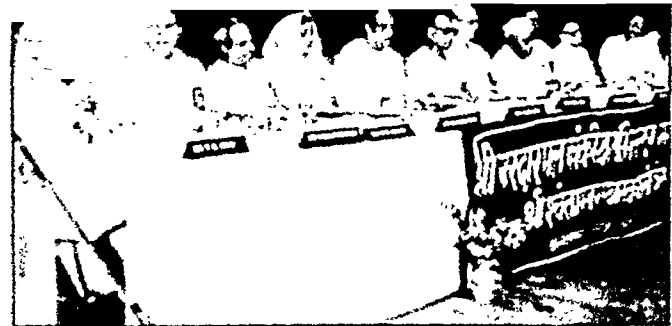
[illegible]

सभा द्वारा आयोजित स्नेह मिलन का एक परिदृश्य

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा
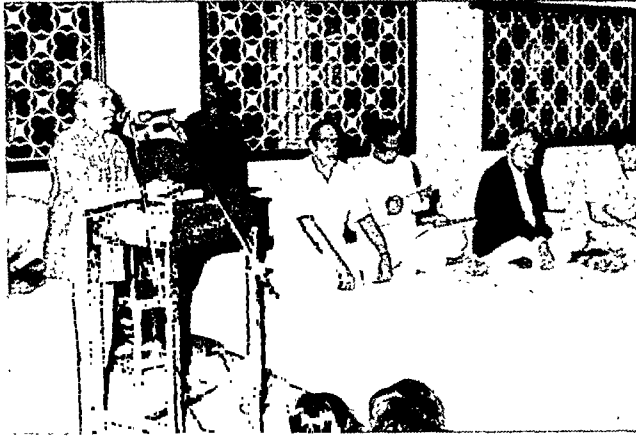
विद्यालय के स्वर्ण जयंती पर आयोजित जैन विद्वत गोष्ठी को सम्बोधित करते हुए डॉ. नरेन्द्र भानावत

श्री पूरणमल कांकरिया के अभिनन्दन के अवसर पर मंचस्थ श्री सूरजमल बच्छावत, श्री जयचंदलाल मित्री, श्री पूरणमल कांकरिया, श्री रिधकरण बोथरा एवं श्री कमलसिंह भंसाली

स्नेह मिलन का एक दृश्य
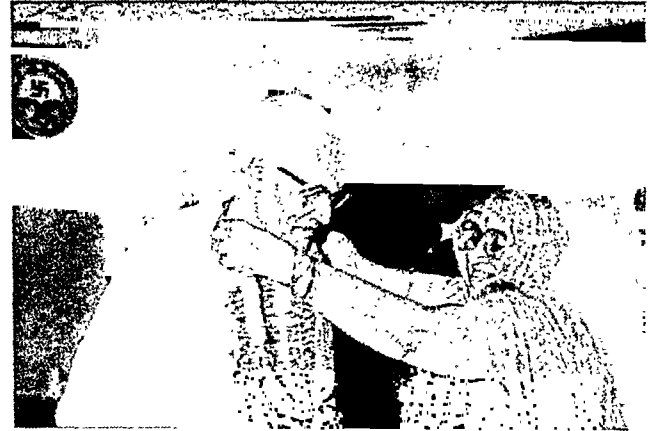
पारसमलजी कांकरिया को माल्यार्पण करती हुई श्रीमती कांकरिया

स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर आयोजित स्काउट कैम्प फायर पर उपस्थित श्री विजयसिंह नाहर, लेफ्टीनेंट जनरल के० चिमन सिंह, इन्द्र दुगड़

डॉ. सुभाष दुगड़ को प्रदर्शनी के आयोजन हेतु पुरस्कृत करते हुए डॉ. सागरमल जैन

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

विद्यालय के स्वर्ण जयंती पर आयोजित विज्ञान प्रदर्शनी का उद्घाटन काउन्सिल के प्रेसिडेन्ट प्रो. अनिल बसाक को माल्यार्पित करते हुआ विद्यालय का छात्र
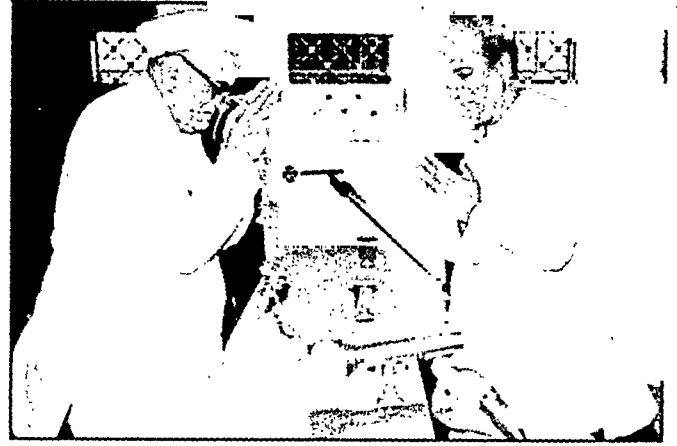
श्री फिरोदियाजी का अभिनन्दन करते हुए रिखबदासजी भंसाली

विद्यालय के हीरक जयंती समारोह पर आयोजित संगीत संध्या पर उपस्थित गणमान्य सदस्यगण

श्री सूरजमलजी बच्छावत विद्यालय के बच्चों को सम्बोधित करते हुए
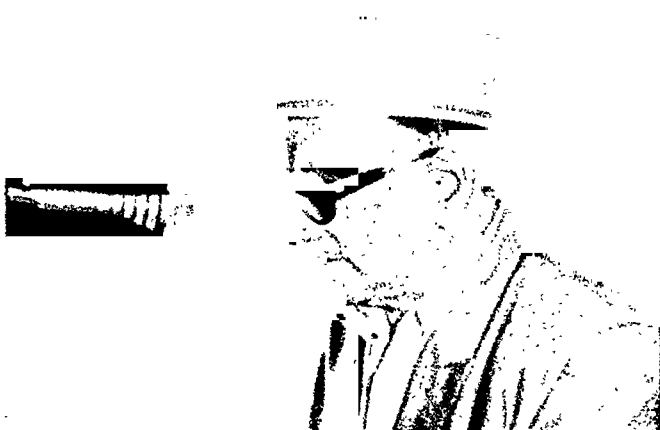
श्री कन्हैयालाल मान्डू सभा को सम्बोधित करते हुए

धार्मिक पुस्तक वितरण फूलराज बच्छावत द्वारा सभा के स्थापना दिवस पर

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

सभा के हीरक जयन्ती के अवसर पर आयोजित गोष्ठी में दायें से बायें
– श्री सूरजमल बच्छावत, श्री गणपतराज बोहरा, प्रो. के.सी. ललवाणी-खड़गपुर,
श्री रिखबदास भंसाली, डॉ. सागरमल जैन निदेशक पार्श्वनाथ विद्यापीठ बनारस

सभा की एक प्रवृति मानवसेवा एवं सांस्कृतिक समिति नि:शुल्क नेत्र ऑपरेशन
के अवसर पर डॉ. आई.एस.राय, प्रख्यात चक्षु सर्जन

विद्यालय स्वर्ण जयन्ती पर आयोजित अखिल भारतवर्षीय
साधुमार्गी जैन संघ की बैठक

विद्यालय के स्वर्ण जयंती पर आयोजित पत्रकार एवं साहित्य सम्मेलन

जैन संघ द्वारा संचालित परीक्षा में सफल छात्रों को साधुमार्गी
धार्मिक पुरस्कार प्रदान करते हुए श्री फूसराज बच्छावत

सभा के हीरक जयन्ती समारोह में पश्चिम बंगाल के पूर्व
उपमुख्यमंत्री श्री विजयसिंह नाहर से सम्मान ग्रहण करते हुए श्री सूरजमलजी बच्छावत

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

श्री नित्यानंदजी महाराज आशीर्वाद मुद्रा में सभा में प्रवेश करते हुए

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा में पधारे
आचार्यवृंदों का स्वागत करते हुए श्री कांकरिया
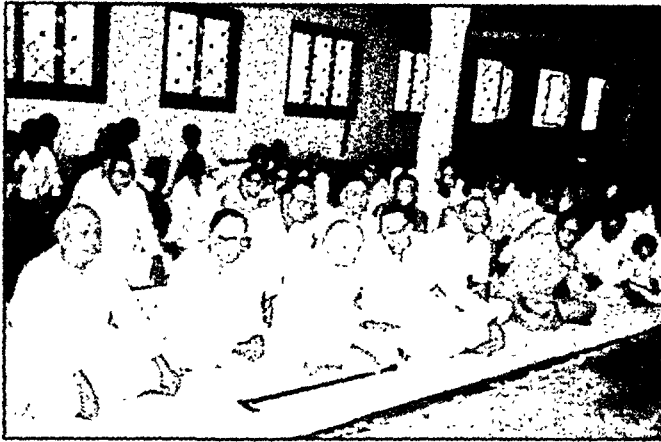
श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र द्वारा आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रम
में उपस्थित गणमान्य सदस्य

उड़ीसा में आये तूफान में सहायतार्थ सभा द्वारा प्रदत्त राशि को प्राप्त करते हुए
काशीविश्वनाथ सेवा समिति के सचिव श्री देवकीनंदन पोद्दार एवं सदस्यगण

[illegible] का सम्मान करते हुए दीपचंदजी नाहटा

सभा का एक प्रमुख प्रवृत्त जैन बुक बैंक द्वारा निःशुल्क
पाठ्यक्रम वितरण उपस्थित मंचस्थ श्री सुधांशु शील,
श्री चोपड़ाजी, एच. एम. मुरानाजी, डॉ. देवाशीष सरकार और उत्तमचंदजी नाहटा

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

श्री सरदारमल कांकरिया अभिनन्दन समारोह के अवसर पर प्रस्तावित श्री जैन हॉस्पीटल के लिए इक्वान लाख रुपये के अनुदान की घोषणा करने पर श्री हरकचंदजी कांकरिया का सभा की ओर से अभिनन्दन करते हुए श्री बच्छावतजी

श्री विजयसिंह नाहर साथ में हैं विद्यालय के यशस्वी अध्यक्ष श्री जयचंदलाल रामपुरिया

विजेता छात्र को शिल्ड प्रदान करते हुए फूसराजजी कांकरिया साथ में हैं श्री भंसाली एवं श्री रामचन्द्र शुक्ल

नवनिर्मित श्री जैन विद्यालय, हावड़ा के शुभारंभ के अवसर पर श्री बच्छावतजी, श्री जगदीशराय जैन एवं श्री रिखवचन्द जैन, नई दिल्ली के साथ मंचस्थ

तारादेवी हरखचंद कांकरिया जैन कॉलेज में आयोजित होली प्रीति सम्मेलन

डॉ० प्रताचन्द्र चन्दर का महाराजा गजासिंह से परिचय कराते हुऐ सरदारमलजी कांकरिया

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

फूसराज बच्छावत पथ के नामकरण एवं
शिलान्यास समारोह पर उपस्थित गणमान्य अतिथिवृन्द

श्री हीरालाल बच्छावत को सम्मानित करते हुए डा. प्रतापचन्द्र चन्दर

फूसराज बच्छावत पथ नामकरण हेतु अहम् भूमिका अदा करने वाले
श्री रिधकरण बोथरा को सम्मानित करते हुए हीरालाल बच्छावत

श्री भंसालीजी को सम्मानित करते हुए श्री मानक बच्छावत

फूसराज बच्छावत पथ के नामकरण समारोह पर उपस्थिति

फूसराज बच्छावत पथ के नामकरण समारोह पर उपस्थित दर्शकगण
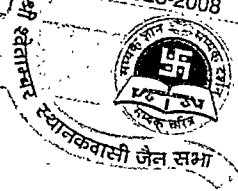
फूसराज बच्छावत पथ का नामकरण समारोह पर उपस्थित गणमान्य अतिथि

फूसराज बच्छावत पथ नामकरण पर आयोजित समारोह में
डॉ. प्रतापचन्द्र चन्दर, काउन्सिलर हृदयनंद गुप्त, एवं गणमान्य सदस्यगण

...रालाल बच्छावत को सम्मानित करते हुए श्री सरदारमल कांकरिया
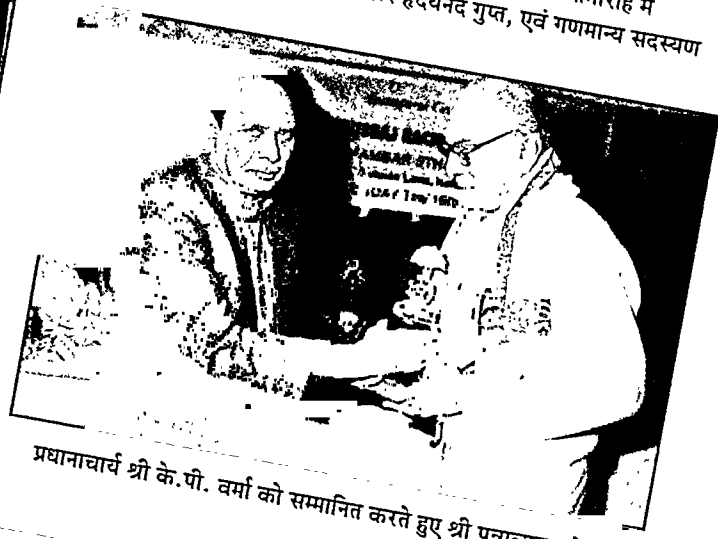
प्रधानाचार्य श्री के.पी. वर्मा को सम्मानित करते हुए श्री पन्नालाल कोचर

...ाष्ट्रगीत करते हुए इस्टर्न कमाण्ड के चीफ,
...य में विद्यालय एवं सभा के पदाधिकारीगण

सैनिक सहायता कोष हेतु चेक देते हुए विद्यालय के अध्यक्ष
सोहनराजजी सिंघवी एवं मंत्री विनोदजी कांकरिया

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

स्वरोजगार योजना में सिलाई मशीन वितरित करते हुए श्री छोटूलालजी नाहटा

सिलाई प्रशिक्षा केन्द्र के उद्घाटन पर उपस्थित श्री सरदारमलजी,
श्री भंसालीजी, श्री भँवरलाल करनावट, श्रीमती फूलकुंवर कांकरिया

नि:शुल्क राशन वितरण करते हुए श्री प्रबोधचन्द्र सिन्हा,
माननीय मंत्री पारल्यामेन्टरी अफैयर्स, प० बंगाल

राशन सुविधा प्राप्त व्यक्ति एवं महिलाएँ

सिलाई केन्द्र के उद्घाटन के अवसर पर

सागर मायोपुर में डीप ट्यूबवेल के उद्घाटन के अवसर पर

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

देवालिया उच्च विद्यालय में विज्ञान कक्ष के निर्माण के अवसर पर

नि:शुल्क जयपुरी पाँव वितरण समारोह में मान्यमंत्री श्री अजित पांजा, दुगड़जी एवं गणमान्य अतिथिगण
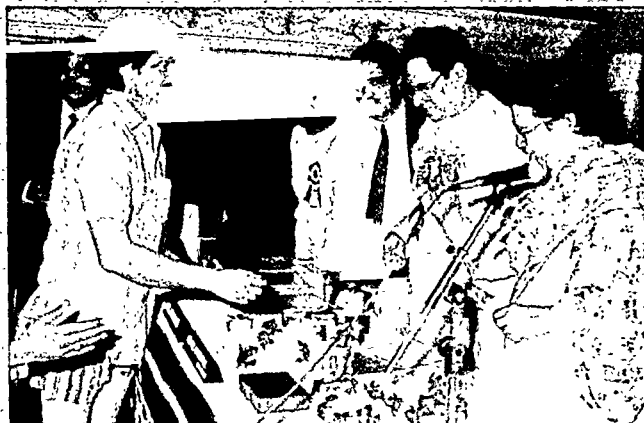
नि:शुल्क जयपुरी पाँव वितरण का समारोह

वरिष्ठ लेखिका श्रीमती महाश्वेता देवी का स्वागत करते हुए सरदारमलजी कांकरिया

वस्त्र वितरण करते हुए भंसालीजी

जयपुरी पाँव के साथ

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

महामहिम राज्यपाल प्रो. नुरुल हसन का स्वागत करते हुए
श्री सुन्दरलालजी दुगड़ एवं आचार्य कल्याणमल लोढ़ा

महामहिम राज्यपाल प्रो. नुरुल हसन को माल्यार्पित करते हुए श्री दुगड़

शिक्षा, सेवा एवं साधना के सात दशक के यशस्वी संपादक श्री भूपराजजी जैन को
सम्मानित करते हुए डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी साथ में परिलक्षित हैं श्री बोथराजी
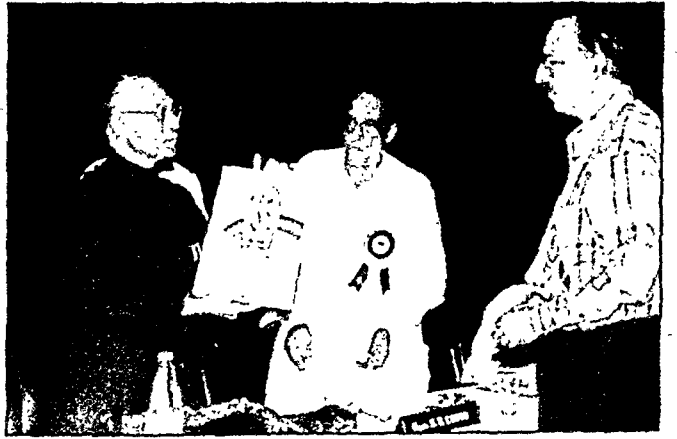
सभा की सात दशकीय सेवा यात्रा की सम्पूर्ति पर प्रकाशित
स्मारिका का विमोचन डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी द्वारा

डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी को माल्यार्पण करते हुए श्री सुभाष कांकरिया
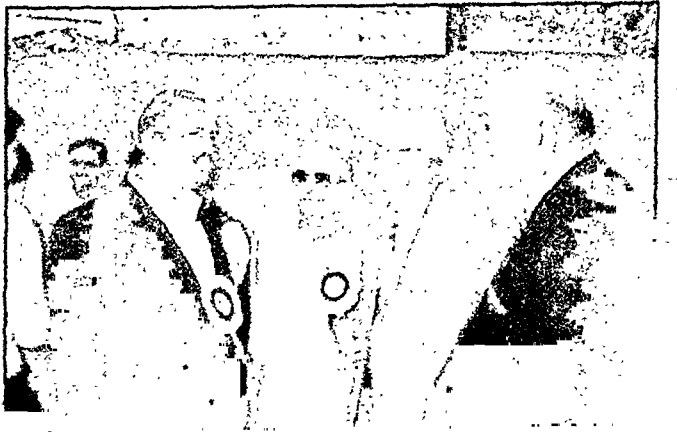
सभा द्वारा आयोजित स्नेह मिलन में उपस्थित गणमान्य महानुभाव
श्री सुन्दरलाल दुगड़, श्री जयचंदलाल रामपुरिया,
श्री रतनलालजी रामपुरिया एवं श्री नवमल भंसाली

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

सभा द्वारा आयोजित महावीर जयंती समारोह में डा० नेमीचन्द जैन, श्री सूरजमल बच्छावत

श्री भीखमचंद भंसाली जैन स्कूल ऑफ नर्सिंग के भूमि पूजन के अवसर पर श्री विमल भंसाली का सम्मान करते हुए विनोद मिन्नी

सभा द्वारा अस्पतालों में फल वितरण

सागर माधोपुर में स्थापित तारादेवी कांकरिया प्राथमिक विद्यालय के उद्घाटन पर सम्बोधित करते हुए श्री रिधकरण बोथरा
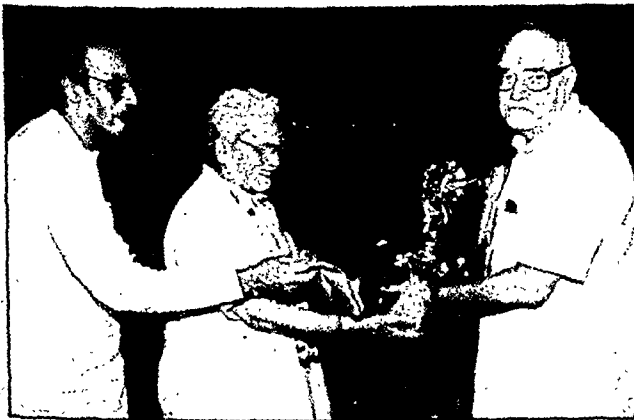
'विचार मंच' द्वारा बालकवि बैरागी को सम्मानित करते हुए आचार्य लोढ़ा, सम्मान राशि देते हुए श्री कांकरियाजी

श्री जैन बुक बैंक द्वारा नि:शुल्क पुस्तक वितरण समारोह २००७, श्री उत्तमचंदजी नाहटा को सम्मानित करते हुए प्रदीप पटवा

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा
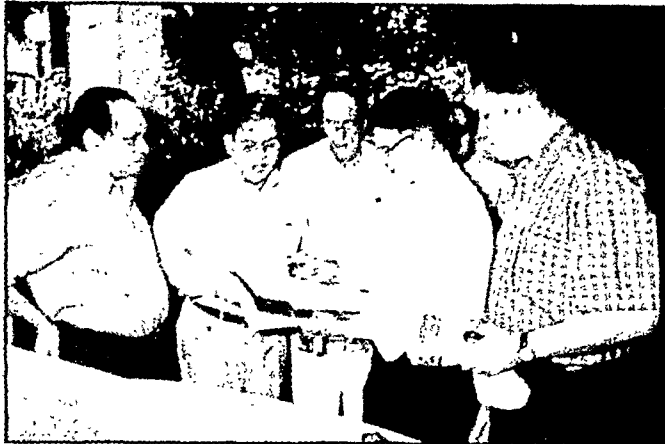
फेडरेशन ऑफ जैन एडुकेशनल इन्स्टिट्यूट के राष्ट्रीय अध्यक्ष शान्तिलाल मूथा के साथ विचार विमर्श करते हुए सोहनराज सिंघवी, अध्यक्ष

राष्ट्रीय अध्यक्ष शान्तिलालजी मूथा दीप प्रज्ज्वलित कर समारोह का उद्घाट

विकलांग शिविर श्री जैन विद्यालय कोलकाता में मुफ्त जयपुरी पाँव वितरण

श्रीमती केशरदेवी कांकरिया को सम्मानित करते हुए श्रीमती सरला मि
श्री जैन विद्यालय द्वारा आयोजित स्वतन्त्रता दिवस समारोह में

सवाई माधोपुर के कैंप ट्यूबवेल की नींव रखते हुए
श्रीमती चोरड़िया एवं सभा के पदाधिकारीगण
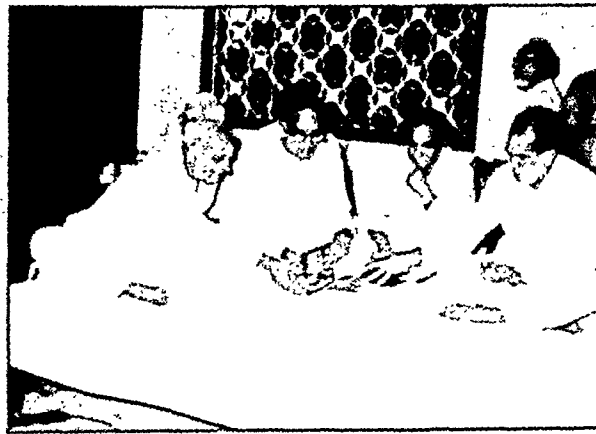
पूर्व प्रधानमंत्री चन्द्रशेखरजी के साथ सभा के पदाधिकारीगण

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा
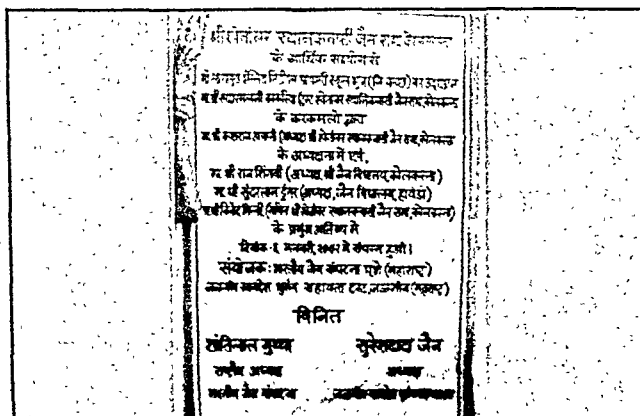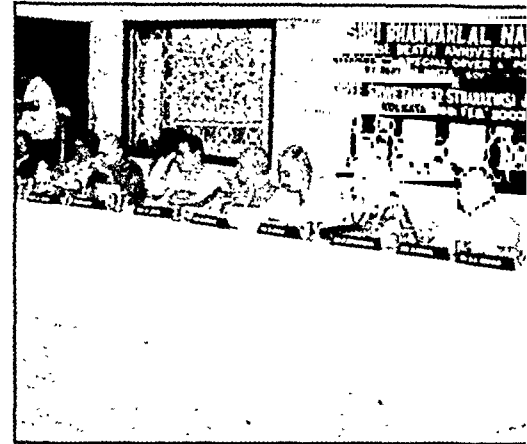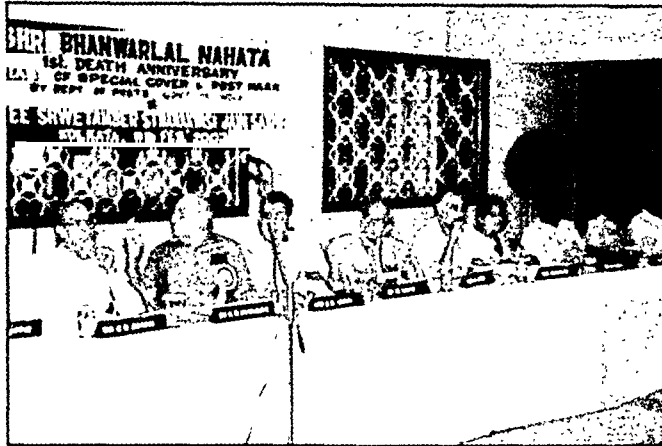
श्री भंवरलाल नाहटा प्रथम पुण्य वार्षिकी पर प्रथम दिवसीय आवरण का केन्सिलेसन समारोह
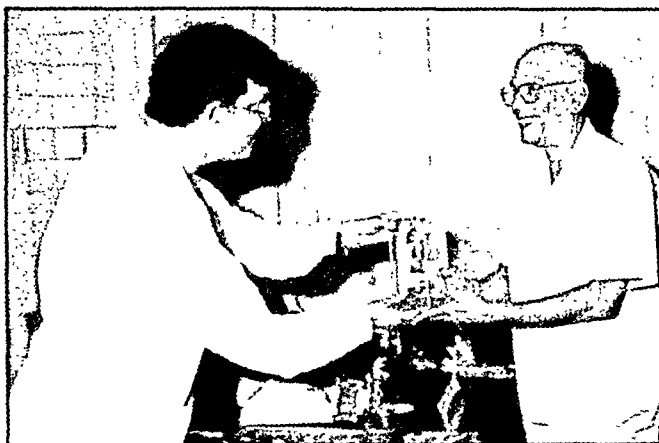
माननीय सांसद मोहम्मद सलीम को सम्मान भेंट करते हुए रिधकरण बोथराजी

मेयर श्री सुब्रत मुखर्जी को सम्मानित करते हुए किशोरज
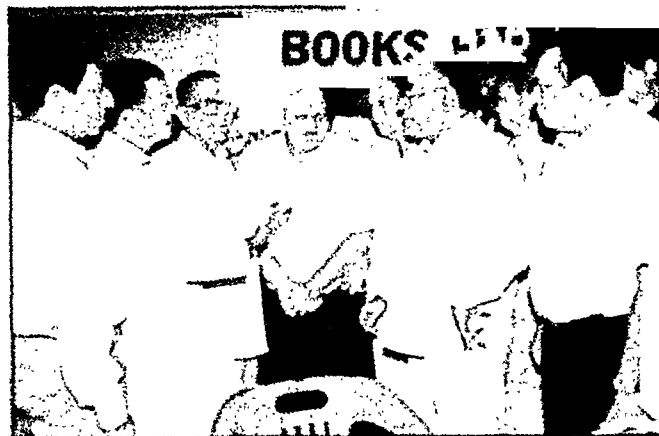
निःशुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण समारोह में उपस्थित माननीय
वित्त मंत्री श्री असीम दासगुप्ता, प.बं. सरकार

माननीय वित्त मंत्री श्री असीम दासगुप्ता को सम्मा
करते हुए सभा के ट्रस्टी सरदारमलजी कांकरि

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

विचार मंच द्वारा आयोजित अभिनंदन समारोह में डॉ. प्रभाकर श्रोत्रीय डायरेक्टर भारतीय ज्ञानपीठ को अभिनन्दित करते हुए दुगड़जी

उदीयामान कलाकारों का सम्मान सुश्री प्रीति बैंगानी का अभिनंदन करते हुए नाहटाजी

विचार मंच द्वारा आयोजित सभा में मंचस्थ अतिथिवृन्द

कर्नल डी. एस. बांया का सम्मान करते हुए श्री सरदारमल कांकरिया

साहित्य मनिषी श्री कन्हैयालाल सेठिया, लेडी रानू मुखर्जी, श्री अभयसिंह सुराना, श्री कांकरियाजी, मंत्री विचर मंच अन्य गणमान्य अतिथिगणों के साथ

विचार मंच द्वारा आयोजित अभिनंदन समारोह को सम्बोधित करते हुए प्रभाश जोशी

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता

श्री जैन विद्यालय स्वर्ण जयंती के अवसर पर आयोजित कवि सम्मेलन में कवितापाठ करते हुए माणकचंदजी रामपुरिया
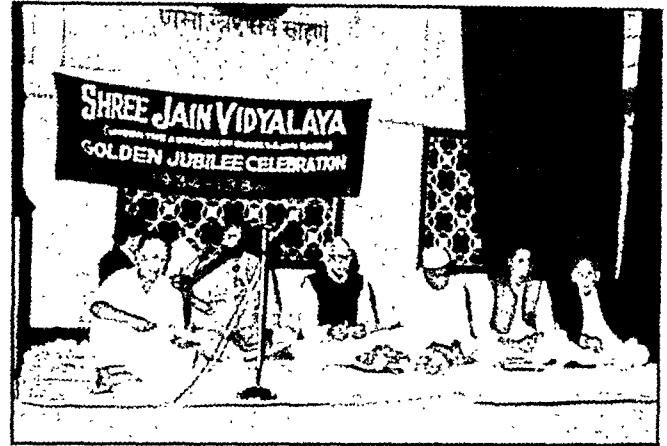
स्वर्ण जयंती पर आयोजित पत्रकार सम्मेलन में अपने पत्र का वांचन करते हुए श्री गणेशललवानी

अंत:विद्यालय वालीबॉल प्रतियोगिता का शुभारम्भ श्री अशोक घोष अध्यक्ष ए.आई.एफ.एफ. को सम्मानित करते हुए सरदारमलजी कांकरिया

विद्यालय के स्वर्ण जयंती पर आयोजित समारोह इन्डोर स्टेडियम में मान्य मंत्री अशोक गहलोत को सम्मानित करते हुए श्री कांकरियाजी

विद्यालय के स्वर्ण जयन्ती समारोह में उच्च माध्यमिक शिक्षा संसद की अध्यक्षा श्रीमती अनितादेवी के साथ श्री सूरजमलजी बच्छावत

स्वतंत्रता दिवस पर उपस्थित गणमान्य सदस्य श्री सूरजमलजी, श्री तोलारामजी डोसी एवं श्री जयकरणजी बोथरा, भंसालीजी एवं कांकरियाजी

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता

विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री रामानन्द तिवारी को सम्मानित करते हुए मुख्य चुनाव आयुक्त, भारत सरकार, श्री टी.एन. शेषन

डॉ. सागरमल जैन को सम्मानित करते हुए मुख्य चुनाव आयुक्त, भारत सरकार, श्री टी.एन. शेषन

श्री जयचंदलाल रामपुरिया, विद्यालय के पूर्व अध्यक्ष को सम्मानित करते हुए श्री टी.एन. शेषन, मुख्य चुनाव आयुक्त, भारत सरकार

श्रीमती केशरदेवी कांकरिया को सम्मानित करते हुए श्री टी.एन. शेषन, मुख्य चुनाव आयुक्त, भारत सरकार

मुख्य चुनाव आयुक्त श्री टी.एन. शेषन को सम्मानित करते हुए विद्यालय के पदाधिकारीगण
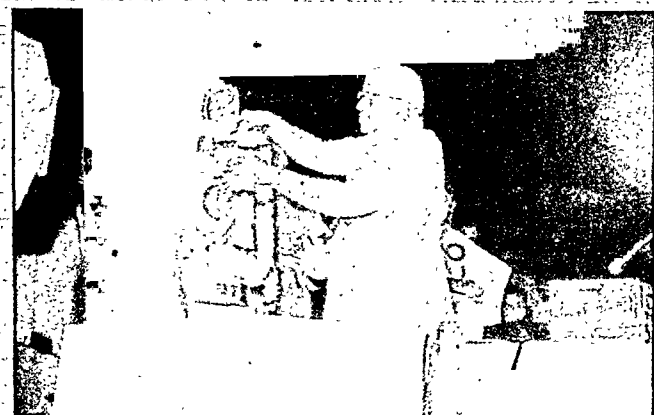
माँ वीणापाणि को माल्यार्पण करते हुए मुख्य चुनाव आयुक्त श्री टी.एन. शेषन

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता
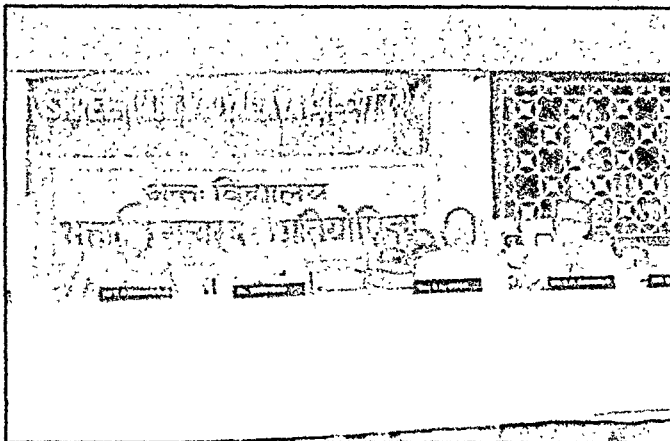
श्री जैन विद्यालय हीरक जयंती समारोह पर आयोजित अंत: विद्यालय सस्वर भक्तामर प्रतियोगिता के पुरस्कार वितरण (फाईनल) समारोह पर उपस्थित डॉ. भानीराम, सरदारमलजी कांकरिया, भंसालीजी एवं प्रधानाचार्य वर्माजी

पोस्टल स्टाम्प एवं क्वायन प्रदर्शनी का निरीक्षण करते हुए मुख्य न्यायाधीश श्री के.सी. अग्रवाल, कलकत्ता हाईकोर्ट
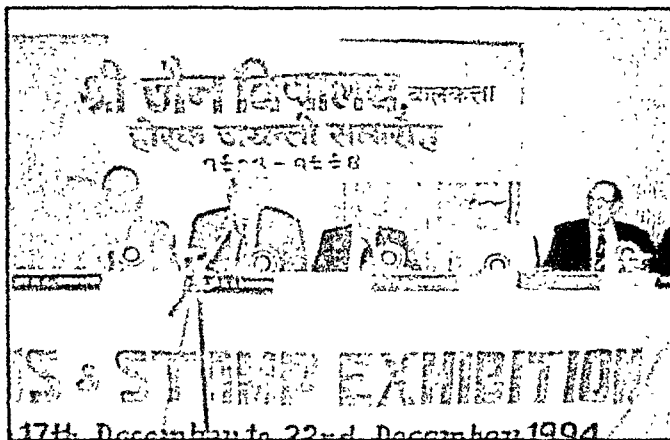
हीरक जयंती पर आयोजित पोस्टल स्टाम्प एवं क्वायन प्रदर्शनी के उद्‌घाटन के अवसर पर माननीय मुख्य न्यायाधीश श्री कृष्णचन्द्र अग्रवाल एवं श्री आर.सी. शर्मा एवं अन्य गणमान्य अतिथि

विद्यालय के स्वर्ण जयंती पर आयोजित विज्ञान प्रदर्शनी का अवलोकन करते हुए गणमान्य अतिथिवृंद
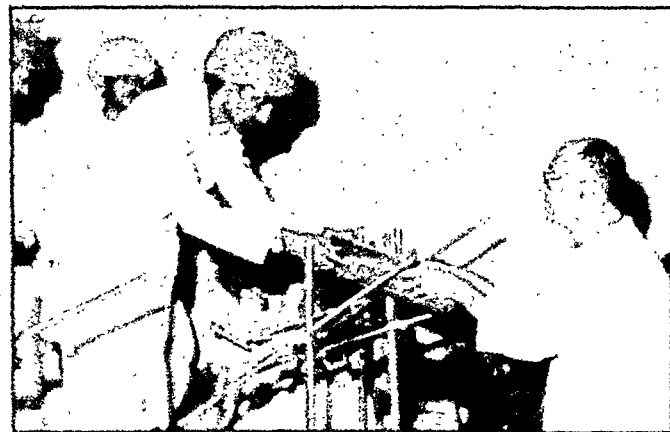
स्वर्ण जयंती पर आयोजित संगीत संध्या में पधारे राजस्थानी कलाकारों का सम्मान करते हुए श्री रिधकरण बोथरा
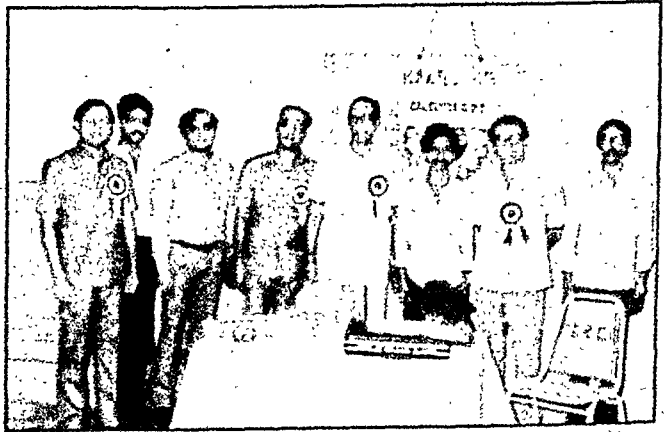
प्रथम दिवसीय आवरण जारी करते हुए पोस्टल अधिकारियों के साथ सभा के पदाधिकारी एवं कार्यकर्ता

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता
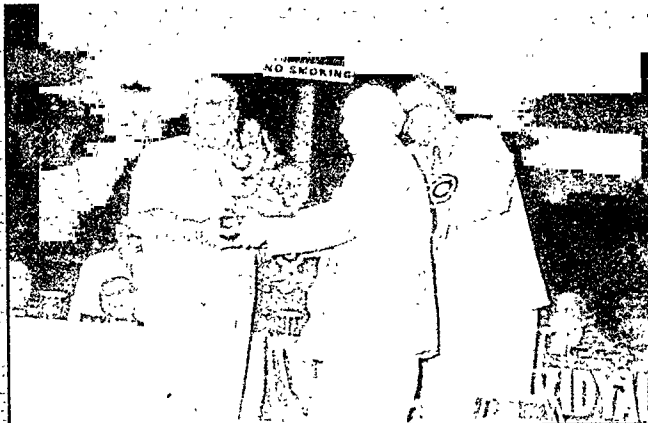
सभा वरिष्ठ कार्यकर्त्ता एवं स्तम्भ श्री सूरजमलजी बच्छावत को सम्मानित करते हुए श्री टी.एन. शेषन, मुख्य चुनाव आयुक्त

विद्यालय के हीरक जयंती समारोह (१९९४) नेताजी इन्डोर स्टेडियम में आयोजित समारोह में मुख्य अतिथि श्री टी.एन. शेषन साथ में परिलक्षित हैं कन्हैयालाल सेठिया, श्री सरदारमल कांकरिया, श्रीचंदजी नाहटा एवं सूरजमल बच्छावत, विनोदजी बैद

डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी को विशिष्ठ प्रतिभा पुरस्कार से सम्मानित करते हुए माननीय न्यायाधीश श्री बाबूलाल जैन साथ में परिलक्षित पूर्व प्रधानाचार्य श्री रामानन्द तिवारी

ख्यातिलब्ध संगीतकार रवीन्द्र जैन को शॉल ओढ़ाकर अभिनंदन करते हुए सरदारमलजी कांकरिया गणतंत्र दिवस समारोह पर

कम्प्यूटर कक्ष के उद्घाटन के अवसर पर उपस्थित श्री एन.एन. सिन्हा, श्री एम.एल. सिंघवी एवं सूरजमलजी बच्छावत

श्री जैन विद्यालय हीरक जयंती समारोह में श्रीमती रेनूका चौधरी को पुष्पगुच्छ अर्पित करती हुई श्रीमती लीलादेवी बोथरा

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता
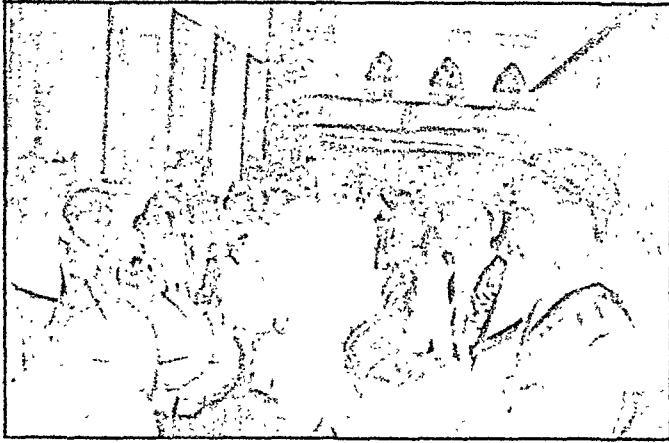
'बैंडवादन' का निरीक्षण करते हुए प्रधानाचार्य रामानन्द तिवारी

गार्ड ऑफ ऑनर तिवारीजी के विदाई के अवसर पर

मंचस्थ श्री जयचंदलाल रामपुरिया, श्री आ.टी. भंसाली, श्री सूरजमल बच्छावत,
आचार्य विष्णुकांत शास्त्री, श्री पुश्करलाल केडिया,
प्राचार्य श्री तिवारीजी एवं श्री ए.पी. तिवारी
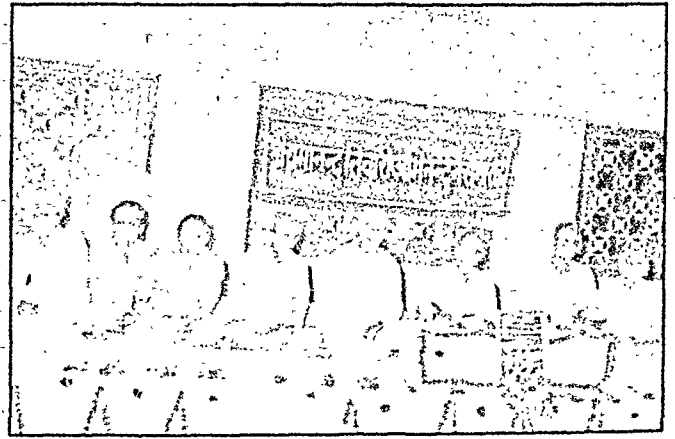
विदाई समारोह में मंचस्थ

विदाई समारोह में श्री पुष्करलाल केडिया,
आ० विष्णुकान्त शास्त्री तिवारीजी के साथ

प्रधानाचार्य श्री रामानंद तिवारी को माल्यार्पित करते हुए,
श्री सत्यफल उपाध्याय, प्रधानाचार्य ज्ञान भारती

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता
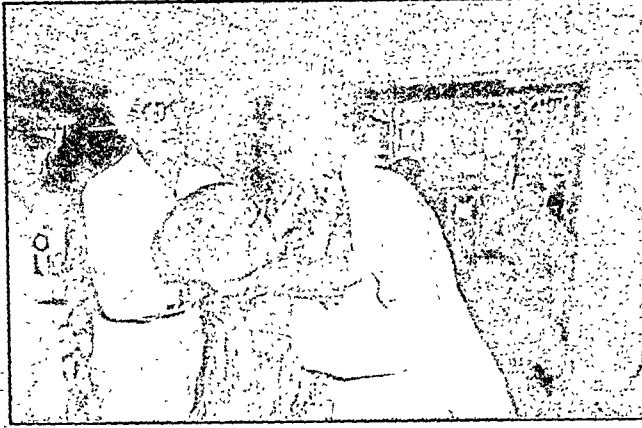
प्रधानाचार्य श्री रामानन्द तिवारी के विदाई समारोह में गुप्तजी एवं हर्ष कांकरिया

झण्डोत्तोलन करते हुए श्री तोलाराम डोसी एवं जशकरणजी बोथरा
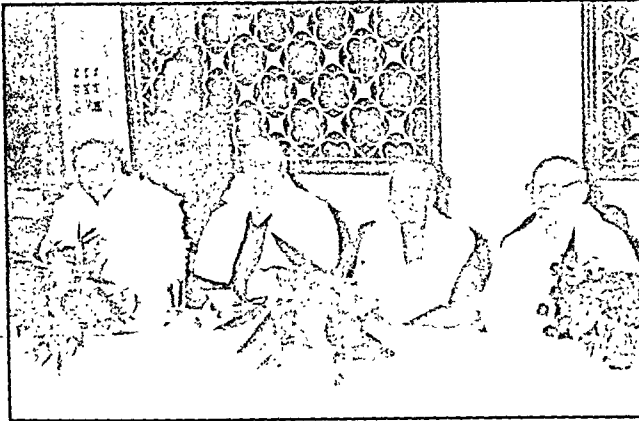
विदाई समारोह श्री इन्द्रसेन सिंह, श्री वेशवहादुर सिंह, श्री रामनिवास चौबे, श्री रामप्रताप ओझा

श्री कन्हैयालाल मालू छात्रों को पुरस्कृत करते हुए

प्रधानाचार्य श्री कामेश्वर प्रसाद वर्मा को शॉल ओढ़ाकर सम्मानित करते हुए आर. के. बोथरा

विद्यालय के अध्यक्ष श्री सोहनराज सिंघवी प्रधानाचार्य श्री वर्माजी को सम्मानित कर मिलते हुए

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता

वार्षिक खेलकूद एवं पुरस्कार वितरण समारोह में उपस्थित देवदास बनर्जी, श्री रिखबदास भंसाली एवं श्री सुन्दरलाल दुगड़ विद्यालय विजयी छात्रों के साथ

लगातार विजयी श्री जैन विद्यालय के छात्र – वालीबॉली की रनिंग ट्राफी के साथ
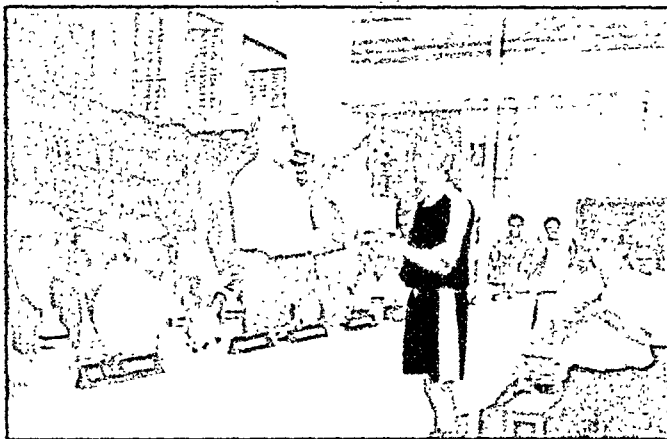
पुलिस कमिश्नर श्री दिनेश वाजपेयी से ट्राफी प्राप्त करता हुआ विद्यालय टीम का खिलाड़ी

सुनील दुगड़ अंतः विद्यालय वालीबॉ प्रतियोगिता को सम्बोधित करते हुए फुटबॉल के अन्यतम खिलाड़ी श्री शैलेन मन्ना

बास्केटबॉल प्रतियोगिता (अंतःविद्यालय) पर मंचस्थ पुलिस कमिश्नर श्री दिनेश वाजपेयी, डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी, राजकरण सिरोहिया, [illegible], भंसाली, श्री विनोद कांकरिया एवं प्रधानाचार्य [illegible]

(१९८४) विद्यालय की स्वर्ण जयंती पर आयोजित अंतःस्कूल वालीबॉल प्रतियोगिता, श्री रतनसिंह नाहर, श्री सुरजमलजी बच्छावत, पारसमलजी कांकरिया

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता
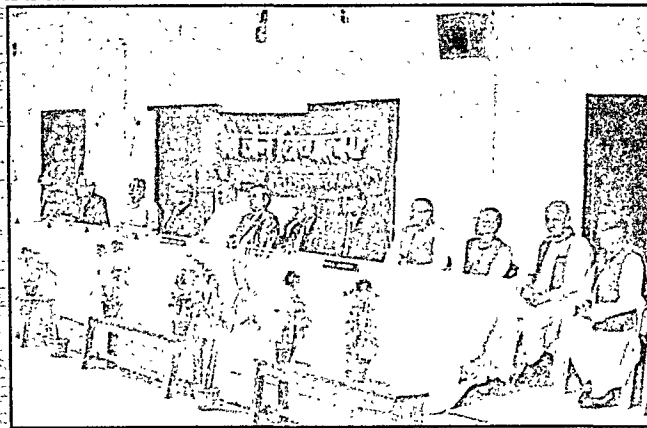
गणतंत्र दिवस समारोह में मंचस्थ अतिथिगण
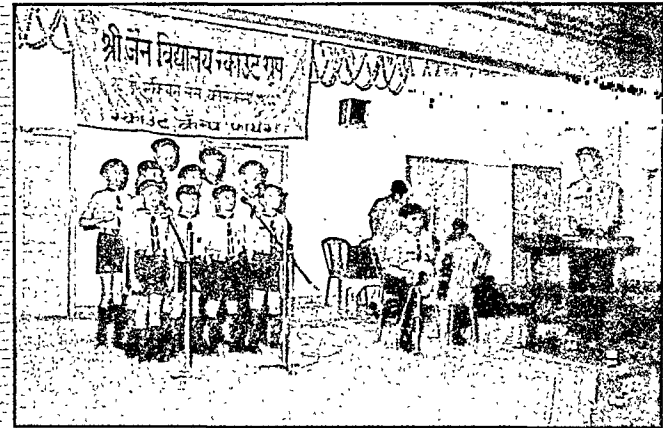
स्काउट कैंप फायर प्रदर्शन

स्वतंत्रता दिवस २००७ के अवसर पर आमंत्रित पूर्व प्रधानाचार्यगण एवं वरिष्ठ शिक्षकवृन्द श्री गुप्ताजी, श्री वर्माजी, श्री रामनिवास चौबे एवं इन्द्रसेन सिंहजी

स्वतंत्रता दिवस को सम्बोधित करते हुए डॉ. महेश गोयनका, विद्यालय का भुतपूर्व छात्र, डायरेक्टर, अपोलो सिंगल्स, कोलकाता

श्री श्यामल घोष को अभिनंदित करते हुए विद्यालय के मंत्री श्री विनोदजी कांकरिया

स्काउट कैंप फायर पर उपस्थित श्री आर.के. जौहरी, आई.जी. पुलिस साथ में हैं श्री चौधराजी एवं अरुणकुमार तिवारी

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता

प्रधानाचार्य श्री शरतचन्द्र पाठक के सेवा निवृत होने पर विदाई
समारोह में सरस्वती प्रतिमा भेंट करते हुए श्री सोहनराज सिंघवी

स्नेह मिलन १९९५ में पधारे अतिथिवृंद
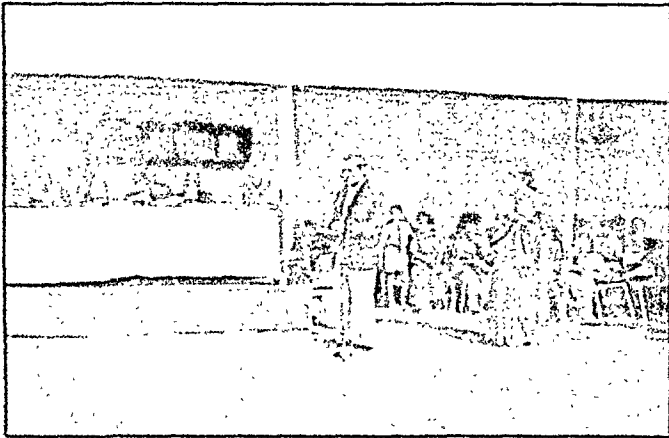
श्री जैन विद्यालय वार्षिक खेलकूद पुरस्कार वितरण समारोह को सम्बोधित
करते हुए श्री पवन गोयनका प्रेसिडेन्ट महिन्द्रा एण्ड महिन्द्रा एवं विद्यालय के पूर्व छात्र
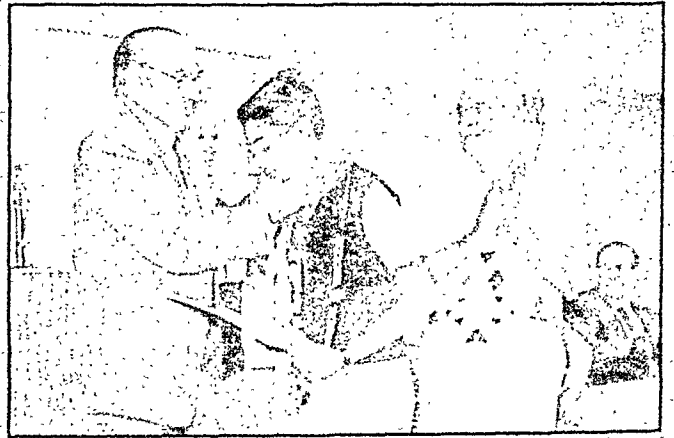
विद्यालय के छात्र सर्विल गुप्त को सम्मानित करते हुए कांकरियाजी,
एफ.जे.ई.आई. द्वारा आयोजित नौलेज कैफे में प्रथम स्थान पूरे भारतवर्ष में

गणतंत्र दिवस समारोह में पुरस्कार वितरण करते हुए श्री रमण विनानी
साथ में हैं श्री हरिहर तिवारी, श्री बोथरा एवं भूपराजजी जैन

श्री अरुण कुमार तिवारी, प्रधानाचार्य इण्डियन सॉलीटरी
काउन्सिल द्वारा सम्मानित, सम्मान ग्रहण करते हुए

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा के नींव पूजन का एक दृश्य, पूजन करते हुए श्री सरदारमल कांकरिया

श्रीमती भंवरीदेवी भंसाली को माल्यार्पित करते हुए श्री रिखबदास भंसाली

श्री जैन विद्यालय हावड़ा के भूमि पूजन करते हुए श्रीमती एवं श्री भंसाली

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा, भूमि पूजन श्रीमती एवं श्री सरदारमल कांकरिया, श्रीमती एवं श्री रिखबदास भंसाली

श्री जैन विद्यालय का भूमि पूजन करते हुए कांकरिया दम्पत्ति एवं श्री वच्छावतजी साथ में श्री रिधकरण बोथरा, श्री कन्हैयालाल गुप्त पूर्व प्रधानाचार्य एवं अन्य

विद्यालय परिसर में उपस्थित शिक्षक वृन्द एवं पदाधिकारीगण
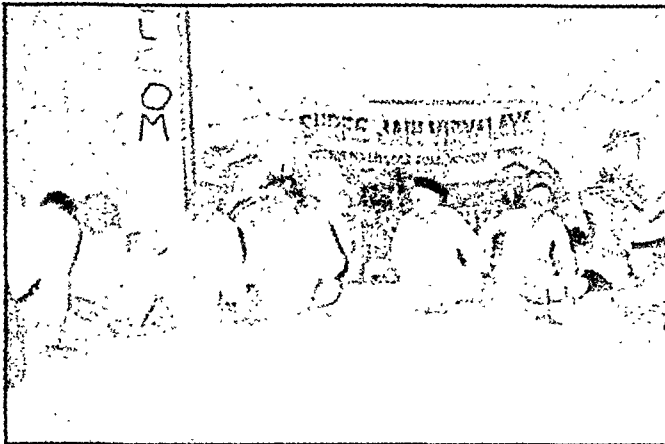
श्री जैन विद्यालय, हावड़ा

हावड़ा में आयोजित कार्यक्रम में श्री राजेश खेतान,
मूंगालाल टेकरीवाल एवं पदाधिकारीगण

स्वतंत्रता दिवस पर उपस्थित गणमान्य अतिथिवृंद

श्री मूंगालाल टेकरिवाल को सम्मानित करते हुए श्री किशनलाल बोथरा

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा में उपस्थित मंचस्थ श्री दीपचंद भूरा,
श्री मूंगालाल टेकरीवाल, डॉ. भगनीराम एवं पदाधिकारीगण

'इग्नू : एडवांस प्रोग्राम' के अवसर पर प्रो. घोष को सम्मानित करते हुए डॉ. दुबे

डॉ. दुबे को तिलक करती इग्नू की छात्रा

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा

सभा की भावी योजना जैन कॉलेज के लिए एक करोड़ रुपये की राशि घोषित करने पर लब्ध प्रतिष्ठ समाजसेवी एवं उद्योगपति श्री हरखचन्द कांकरिया का समारोह के मुख्य अतिथि श्री विमान बोस द्वारा शॉल एवं श्री गणेश प्रतिमा भेंट कर बहुमान। सहयोग कर रहे हैं श्री सरदारमल कांकरिया।

श्री अरिंदम बोस को ''श्री बादल बोस मरणोपरान्त सम्मान'' देते हुए श्री विमान बोस, चेयरमैन लेफ्ट फ्रन्ट प.बं.
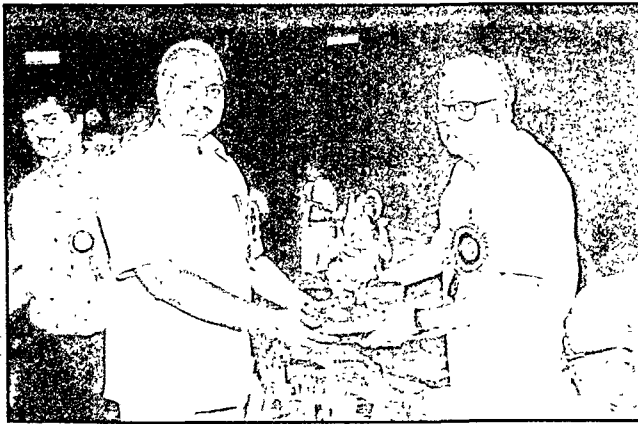
विख्यात समाजसेवी एवं उद्योगपति श्री सुन्दरलाल दुगड़ का सभा की भावी योजना डेन्टल कॉलेज के लिए एक करोड़ रुपये सहयोग की राशि की घोषणा, श्री गणेश की प्रतिमा समर्पित कर प्रसिद्ध उद्योगपति श्री श्यामसुन्दर केजरीवाल द्वारा हार्दिक अभिनन्दन साथ में अरुण मालू

श्री रिखवदास भंसाली को सम्मानित करते हुए श्री विमान बोस

मान्य अतिथि श्रीमती सरला माहेश्वरीजी, सांसद द्वारा समारोह के अवसर पर प्रकाशित 'शिक्षा : एक यशस्वी दशक' ग्रन्थ का लोकार्पण साथ में प्रसिद्ध कार्यकर्ता श्री पदमचन्द नाहटा

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की कौस्तुभ जयन्ती पर श्री जैन विद्यालय, हावड़ा के 'शिक्षा : एक यशस्वी दशक' समारोह के अवसर पर प्रमुख अतिथि श्री विमान बोस, चेयरमैन लेफ्ट फ्रंट, प.बं. द्वारा श्री जैन विद्यालय कलकत्ता एवं हावड़ा के छात्र-छात्राओं के मार्च पास्ट की सलामी लेते हुए

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा

सांस्कृतिक कार्यक्रम के अन्तर्गत होली नृत्य का भावपूर्ण दृश्य

सांस्कृतिक कार्यक्रम की प्रस्तुति
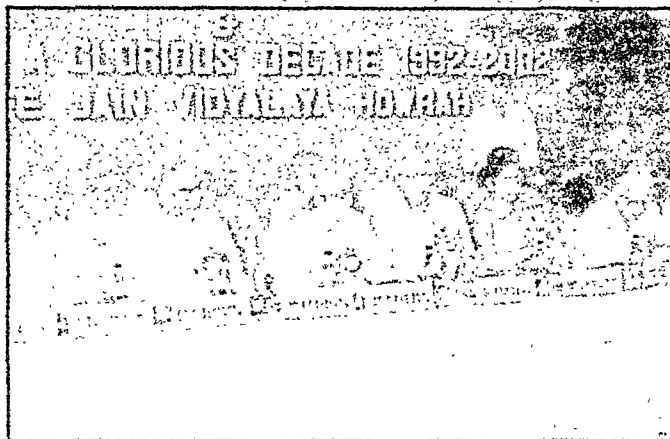
सरला माहेश्वरी, सांसद श्री विमान बोस, हरखचन्दजी कांकरिया, रिखबदासजी भंसाली एवं प्रसिद्ध उद्योगपति श्री श्यामसुंदर केजरीवाल सभा की प्लेटिनम जुबिली एवं शिक्षा : एक यशस्वी दशक समारोह के अवसर पर दि. १२ मई २००२ को नेताजी इन्डोर स्टेडियम में मंचस्थ अतिथिगण
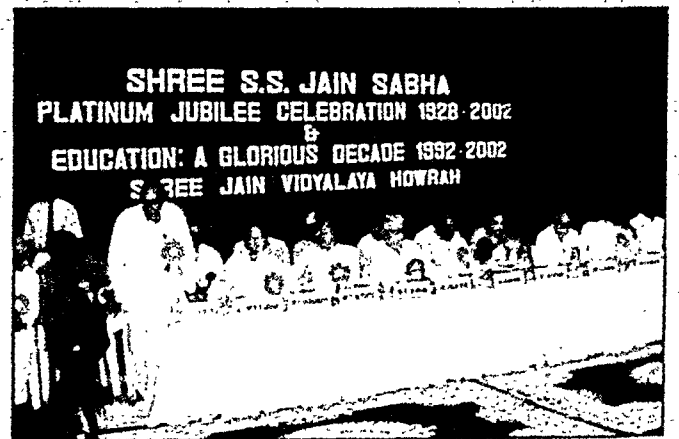
सभा की प्लेटिनम जुबिली आयोजन, इन्डोर स्टेडियम में मंचस्थ श्री विमान बोस, श्रीमती सरला माहेश्वरी, श्यामसुन्दर केजरीवाल एवं अन्य

समारोह के प्रमुख अतिथि श्री विमान बोस चेयरमैन लेफ्ट फ्रन्ट प.बं. समारोह स्थल पर शुभागमन। अगवानी कर रहे हैं श्री विनोद मिश्रा, श्री विनोदचंद कांकरिया, श्री अशोक मिश्रा एवं श्री राधेश्याम मिश्र
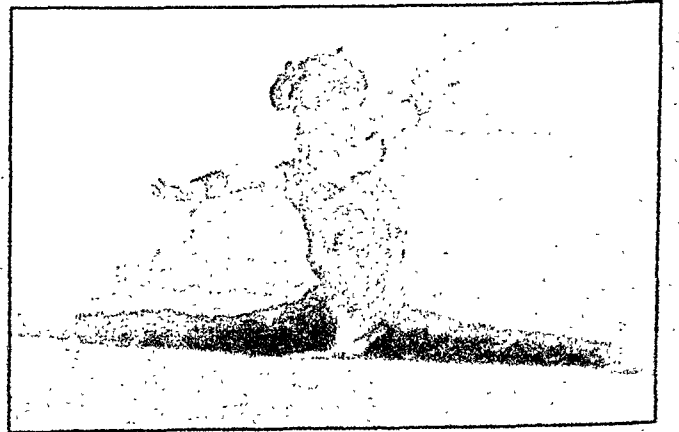
विद्यालय की छात्रा द्वारा प्रस्तुति

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा

छात्राओं द्वारा प्रस्तुत पिरामिड
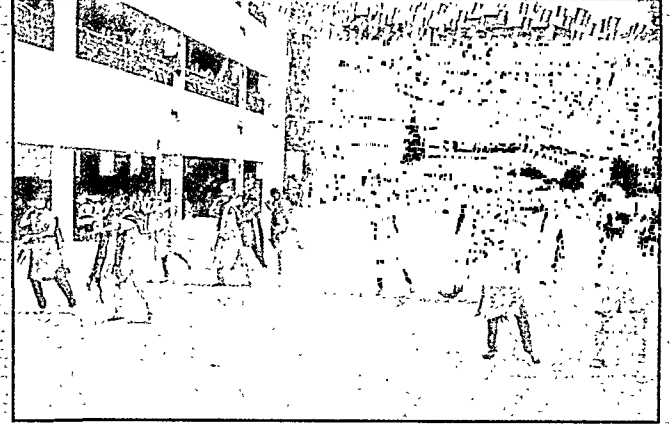
गणतन्त्र दिवस समारोह छात्राओं द्वारा प्रस्तुत डान्स ड्रिल

छात्राओं द्वारा प्रस्तुत डान्स

गाईड्स प्रदर्शन – छात्राओं द्वारा

मार्च पास्ट – एक झलक

छात्राओं द्वारा रंगारंग कार्यक्रम

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा
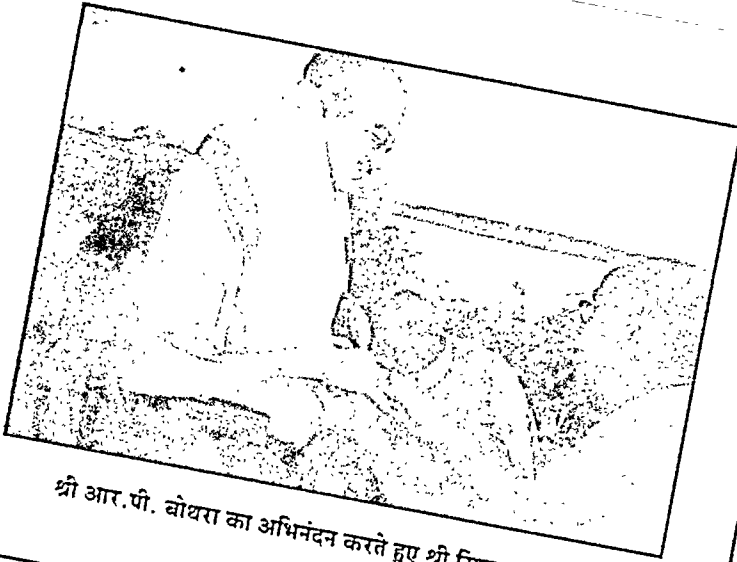
श्री आर.पी. बोथरा का अभिनंदन करते हुए श्री रिधकरण बोथरा

श्री पानमल मालू पुरस्कार वितरण करते हुए

खेलकूद प्रतियोगिता का एक दृश्य

खेलकूद एवं पुरस्कार वितरण समारोह श्री तापस मुखर्जी,
श्री आर.पी. बोथरा, श्री तरुण नियोगी, श्री पन्नालाल कोचर, श्री भंसालीजी

छात्राओं द्वारा संगीत प्रस्तुति
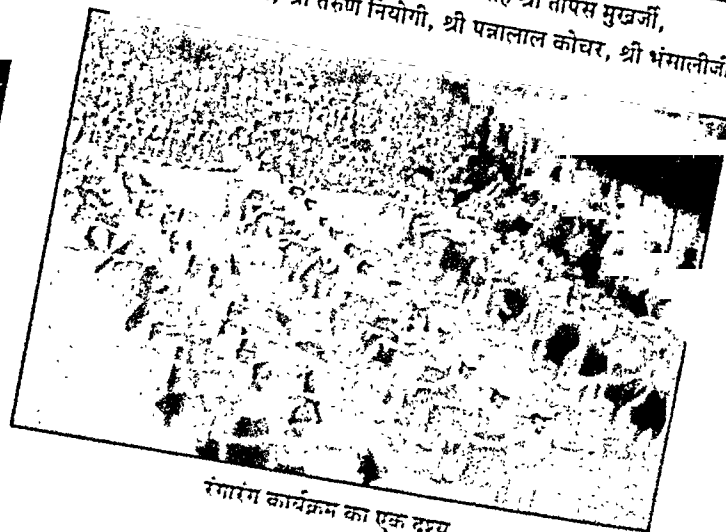
रंगारंग कार्यक्रम का एक दृश्य

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा

वार्षिकोत्सव एवं पुरस्कार वितरण मंचस्थ संदीप भूतोड़िया, हरखचंद कांकरिया एवं पदाधिकारीगण

श्री जैन विद्यालय हावड़ा में आयोजित गणतन्त्र दिवस

विज्ञान प्रयोगशाला का उद्‌घाटन श्री जैन विद्यालय, हावड़ा में सुधांशु शील

श्री नारायणप्रसाद जैन को सम्मानित करते हुए विनोदजी

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता पुरस्कृत छात्रों के साथ विद्यालय के शिक्षक

अन्त:विद्यालय रामचरित मानस प्रतियोगिता आयोजक श्री जैन विद्या

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा

श्री उत्तमचंद नाहटा का सम्मान करते हुए कांकरियाजी

गणतंत्र दिवस समारोह में मंचस्थ सरदारमलजी, सुन्दरलालजी दुगड़, उत्तमचन्दजी नाहटा, श्री खेतानजी, पन्नालालजी कोचर, श्री अरुण अवस्थी, रिधकरण बोथरा, श्री जयदीप पटवा

गणतन्त्र दिवस पर झण्डोत्तोलन करते हुए

नि:शुल्क राशन वितरण सभा की एक मानवसेवा – प्रवृति

'इग्नु' अवेयरनेस प्रोग्राम को सम्बोधित करते हुए
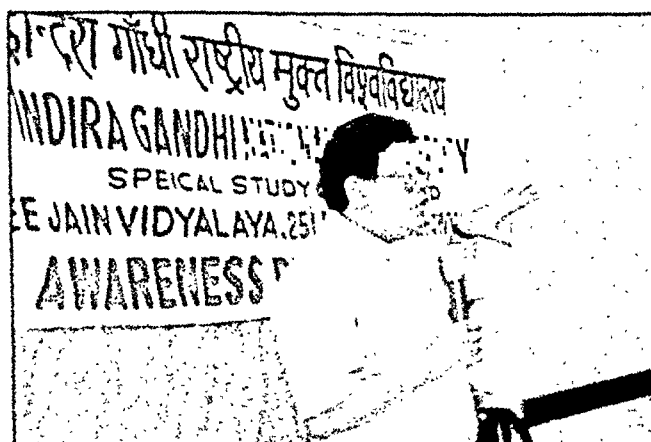
'इग्नु' स्टडी सेन्टर के वर्कशॉप के अवसर पर कांकरियाजी

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा
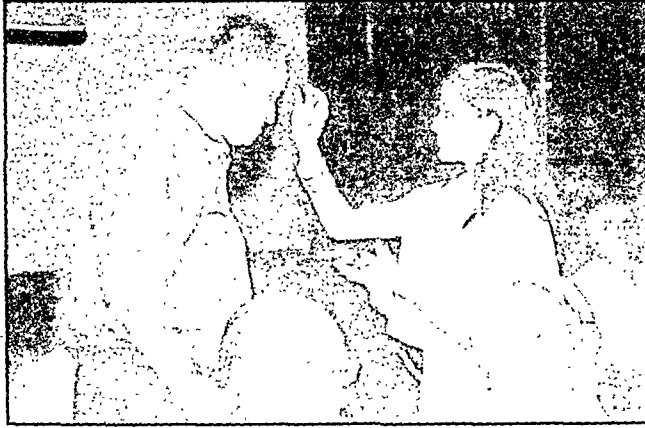
विद्यालय के यशस्वी मंत्री श्री ललित कांकरिया को तिलक लगाते विद्यालय की छात्राएँ

श्री सुरेशजी गोलेछा को अभिनंदित करते हुए श्री ललित कांकरिया, मंत्री

शारीरिक ड्रिल प्रदर्शन, छात्रों द्वारा

संगीत प्रस्तुति, विद्यालय के छात्रों द्वारा

'कराटे प्रदर्शन' विद्यालय के छात्रों द्वारा

श्री प्रलय तालुकदार का स्वागत करते श्री जैन विद्यालय हावड़ा के स्काउट एंड गाइड्स वादक छात्रा साथ में श्री सुन्दरलाल दुगड़, श्री रिधकरण बोथरा

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

फीता काटकर उद्घाटन करते हुए श्री स्वदेश चक्रवर्ती, मेयर, हावड़ा

दीप प्रज्ज्वलित कर उद्घाटन की रश्म अदा करते हुए मेयर श्री स्वदेश चक्रवर्ती

अस्पताल परिसर में स्थापित भगवान पार्श्वनाथ की भव्य प्रतिमा

अस्पताल में भूमि पूजन करते हुए श्री जय कांकरिया एवं अन्यान्य सदस्यगण

उद्घाटन के समय श्री जैन विद्यालय बालिका विभाग की छात्राएँ बैण्ड वादन करते हुए

अस्पताल उद्घाटन के समय उपस्थित जनसमुदाय

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

उद्घाटन के अवसर का एक समुह चित्र

उद्घाटन के समय श्री प्रलय तालुकदार, मंत्री श्री सुभाष चक्रवर्ती, श्री हरकचंद कांकरिया, श्री सरदारमल कांकरिया, श्री सुन्दरलाल दुगड़ एवं अन्य

श्री हरखचंद कांकरिया को सम्मानित करते हुए श्री प्रलय तालुकदार

बादल बोस का सम्मान करते हुए श्री भँवरलालजी कर्णावट

उद्घाटन के अवसर पर श्री नरेश दासगुप्ता, श्री दीपक दासगुप्ता, श्री बादल बोस, श्री प्रलय तालुकदार, श्री श्रीचंदजी नाहटा, श्री हरकचंदजी कांकरिया
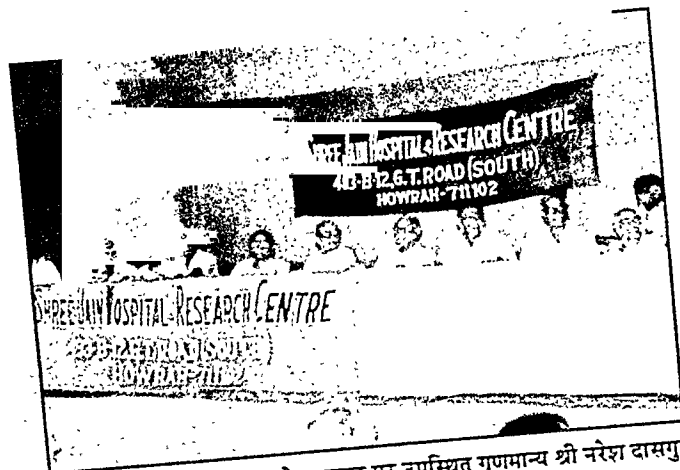
श्री जैन हॉस्पीटल के उद्घाटन के अवसर पर उपस्थित गणमान्य श्री नरेश दासगुप्त, श्री दीपक दासगुप्त, श्री बादल बोस, श्री सरदारमलजी प्रलय तालुकदार, श्री श्रीचंद नाहटा, श्री हरखचंद कांकरिया, श्री सुभाष चक्रवर्ती, भंसालीजी, करनानीजी

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

किशनलालजी कांकरिया वार्ड के लोकार्पण के समय समग्र कांकरिया परिवार

बोथरा परिवार द्वारा निर्मित कक्ष का उद्घाटन करते हुए श्री भैरूदान बोथरा, श्री भंवरलाल बोथरा, श्री किशनलाल बोथरा, श्री रिधकरणजी

धनराजजी बद्दा ऑपरेशन थियेटर का करते हुए

गार्डेन फाउन्टेन का उद्घाटन करते हुए श्री हंसराजजी कोठारी, श्री विजयसिंह कोठारी

आई.सी.यू. यूनिट का उद्घाटन करते हुए श्री सुन्दरलाल दुगड़

श्री शिखरचंद बच्छावत वार्ड का उद्घाटन करते हुए श्री कमल बच्छावत एवं उनकी माँ परिवार के अन्यान्य सदस्यों के साथ

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

बाँठियाकक्ष के लोकार्पण के समय समग्र बाँठिया परिवार

अभाणी परिवार द्वारा निर्मित वार्ड का उद्घाटन करते हुए
श्री चांदमल अभाणी एवं परिवार के सदस्यगण

सरावगी परिवार के द्वारा प्रदत्त एम्बुलेंस साथ में अस्पताल के पदाधिकारीगण
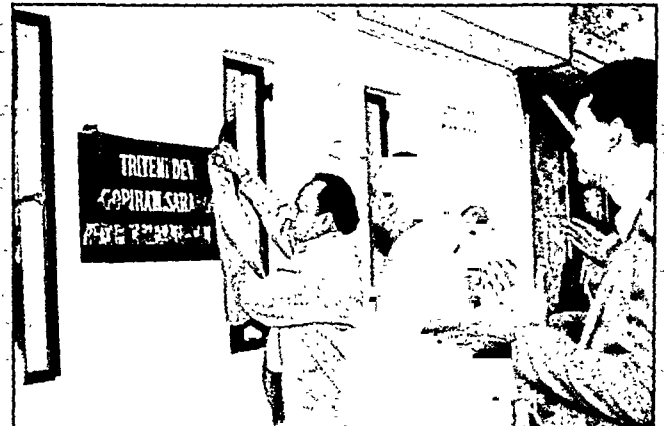
त्रिवेणी देवी गोपीराम सरावगी आर्टिफीशियल लिम्ब सेन्टर का उद्घाटन करते हुए श्री नरेन्द्र सरावगी एवं परिवार के सदस्यगण

सुशीला कोचर धर्मपत्नी पन्नालाल कोचर लिफ्ट का लोकार्पण करती हुई साथ में हनुमानमल नाहटा

चेतन देवी भंसाली वार्ड के उद्घाटन के अवसर पर उपस्थित भंसाली परिवार, श्री भिखमचंद भंसाली, मोहनलाल भंसाली, श्री कमल भंसाली एवं अन्यान्य सदस्यगण

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

श्री धनराज बोंठिया आई क्लीनिक के उद्घाटन के अवसर पर
श्री निर्मलकुमार बोंठिया का स्वागत श्री सुन्दरलालजी दुगड़ द्वारा
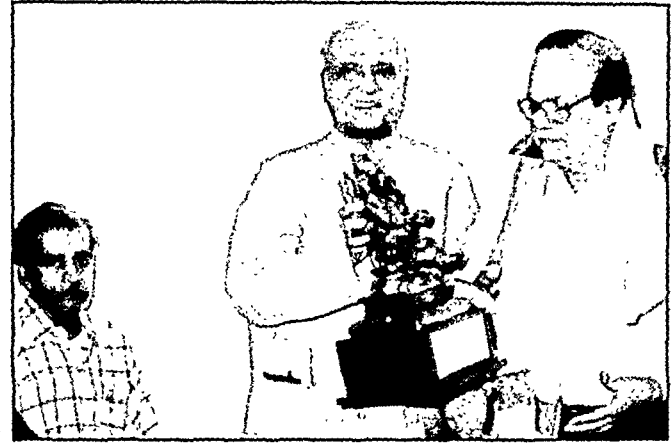
श्री जयचंदलालजी मुकीम को सम्मानित करते हुए श्री रिखबदास भंसाली
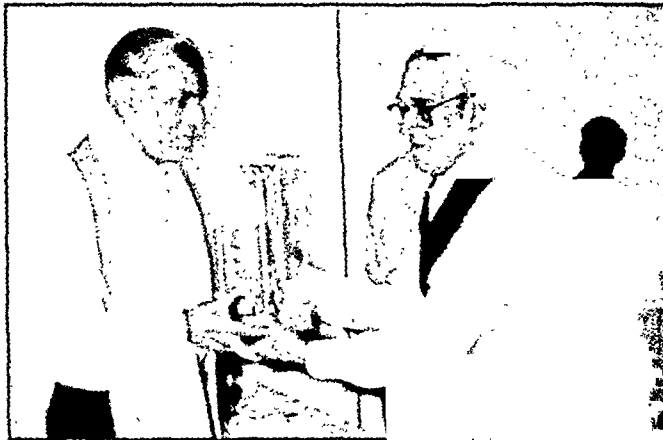
श्री जयचंदलाल दस्साणी को सम्मानित करते हुए श्री सरदारमल कांकरिया

श्री अश्विनीभाई देसाई को सम्मानित करते हुए श्री भंसाजी एवं श्री बोथराजी

श्री [illegible] बैगानी एवं श्रीमती मोहनलाल बैगानी को
सम्मानित करते हुए श्री भंसालीजी

श्री रतनलाल सिरोहिया को मोमेन्टो प्रदान करते हुए मोहनलाल गोलेछा

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा
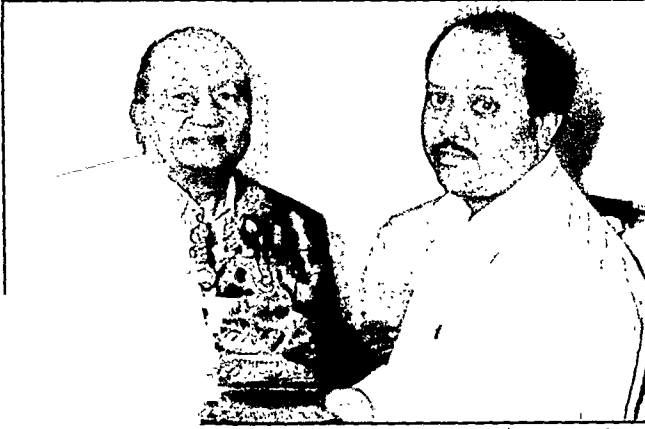
कमल बच्छावत को मोमेन्टो प्रदान करते श्री श्रीचंदजी नाहटा
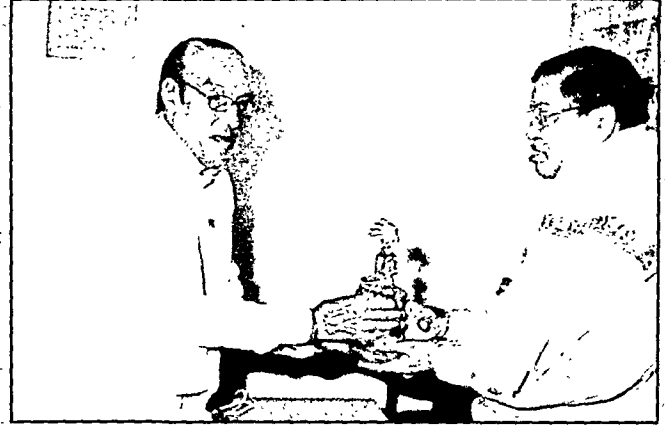
श्री नवरत्न गोलिया मुम्बई का स्वागत
करते श्री सरदारमलजी कांकरिया

श्री डी.सी. राखेचा को सम्मानित करते हुए भंसालीजी

डॉ. धारीवाल, आई.आर.सी. सिस्टम पाईल्स स्पेशलिस्ट
को सम्मानित करते हुए भंसालीजी

श्रीमती सुमन गुप्त को सम्मानित करते हुए श्रीमती पद्मा मिन्नी साथ
में परिलक्षित हैं श्री गुप्ता एवं परिवार के सदस्यगण

श्री झूमरमलजी बच्छावत को सम्मानित करते हुए श्री विनोद मिन्नी

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा
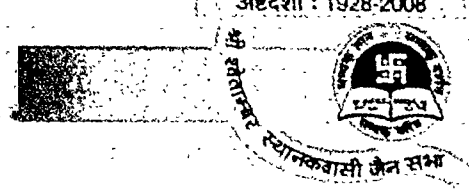
नि:शुल्क प्लास्टिक सर्जरी कैम्प के अवसर पर इन्टरप्लास्ट जर्मनी के डॉक्टरों की टीम हॉस्पीटल के डॉक्टरों के साथ
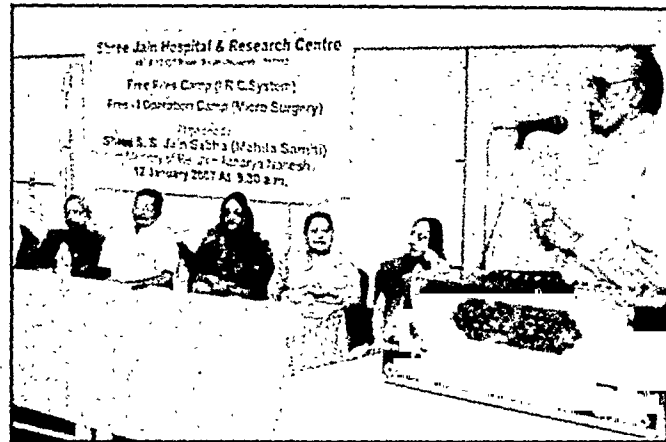
पाइल्स कैम्प के उद्‌घाटन पर हॉस्पीटल की विविध सेवाओं का उल्लेख करते हॉस्पीटल मंत्री श्री कांकरियाजी
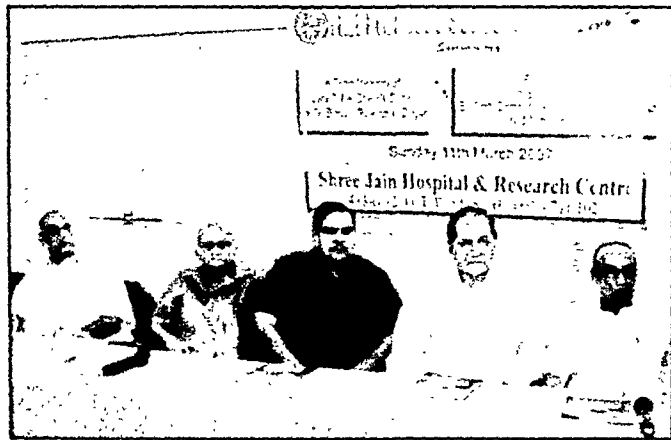
फ्री माइक्रो सर्जरी कैम्प के उद्‌घाटन पर उपस्थित श्री डी.सी. राखेचा, दिलीप कांकरिया, सुरेन्द्रजी बाँठिया एवं श्री कांकरियाजी

हॉस्पीटल के अध्यक्ष स्व. श्रीचंदजी नाहटा की स्मृति में आयोजित नि:शुल्क नेत्र शल्य चिकित्सा शिविर के अवसर पर सुपुत्र श्री विजय नाहटा व उनकी धर्मपत्नी शिविर का उद्‌घाटन करती हुई साथ में श्रीमती फूलकुंवर कांकरिया, श्री रिखबदास भंसाली
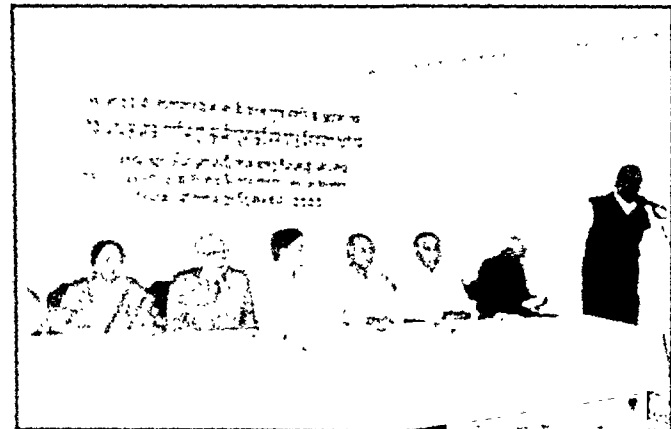
नि:शुल्क कृत्रिम पाँव एवं कैलिपर वितरण को सम्बोधित करते हुए श्री कांकरियाजी

आचार्य नानेश स्मृति फ्री आई कैम्प एवं विकलांग शिविर को सम्बोधित करते हुए श्री के. श्रीवास्तव

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

पी.एल. कोचर इन्स्टीट्यूट ऑफ कार्डिएक साइंस के उद्घाटन के अवसर पर उपस्थित श्रीमती सरला माहेश्वरी, श्रीमती सुशीला कोचर, श्री आर.सी. जैन, सम्बोधन करते हुए पी.एल. कोचर

श्री सुरेन्द्र गोलछा, जयपुर का सम्मान करते श्री पन्नालाल कोचर
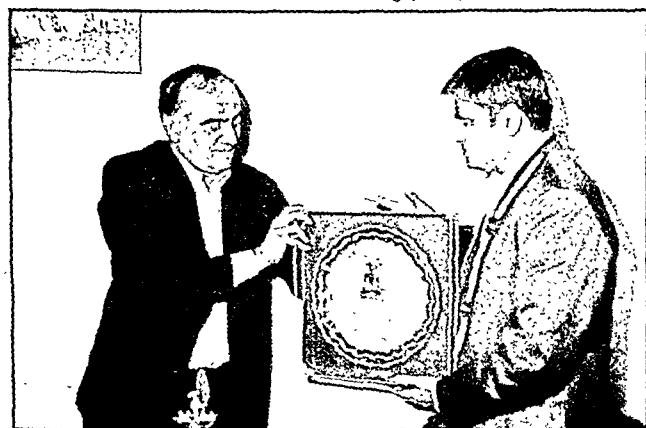
श्री देव वासा का सम्मान करते हुए श्री विनोद मित्री

श्री पी.एल. कोचर दीप प्रज्ज्वलित कर उद्घाटन करते हुए साथ में परिलक्षित हैं श्री आर.सी. जैन

उद्घाटन पर उपस्थित अतिथिगण

पी.एल. कोचर इन्स्टीट्यूट ऑफ कार्डियक साइंस के उद्घाटन के अवसर पर उपस्थित प्रोफेसर भवतोश विश्वास, श्रीमती सरला माहेश्वरी

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा
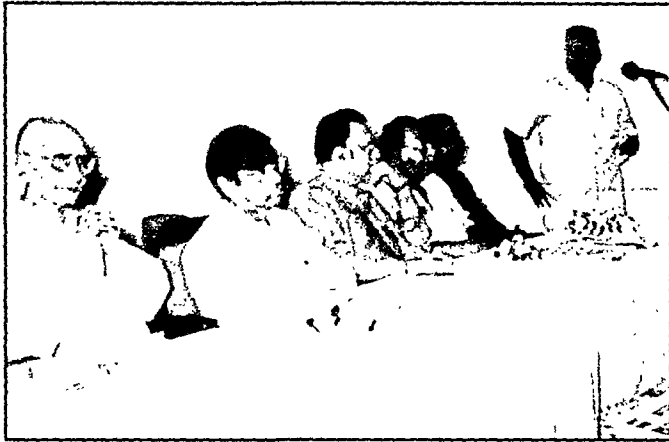
डायलिसिस यूनिट के उद्घाटन पर उपस्थित
श्री आई.पी. टांटिया, गौरीशंकरजी कांया और अतिथिगण

डॉ. आर. सेनगुप्ता सेमिनार को सम्बोधित करते हुए

हॉस्पीटल में श्री श्रेणिक शेठ के साथ श्री चंचलमल बच्छावत,
श्री प्रमोद चण्डालिया, इमामी के श्री राधेश्याम अग्रवाल एवं पीछे श्री सरदारमल कांकरिया

श्रीमती मीना दूगड़, मद्रास आर्टिफिशियल लिम्ब के समय श्री दीपचन्दजी नाहटा,
श्रीचंदजी नाहटा, श्री रिखबदास भंसाली, श्री सरदारमल कांकरिया

श्री [illegible] सेठिया लेप्रोस्कोपिक यूनिट के उद्घाटन पर सम्बोधित करते हुए

श्री सरदारमल कांकरिया सम्बोधित करते हुए,
मंचस्थ श्री मूलचंद मालू एवं श्री नवरतनमल चोरड़िया

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

श्री ज्ञानचंद कोठारी परिवार पद्मावती देवी की मूर्ति पूजा करते हुए, हॉस्पीटल परिसर में

मंत्री श्री प्रबोधचन्द सिन्हा संबोधित करते हुए साथ में रामकृष्ण मिशन के स्वामी श्री कन्हैयालालजी सेठिया, श्री सूरजमलजी बच्छावत, श्री रिखबदास भंसाली, श्री सरदारमल कांकरिया आदि
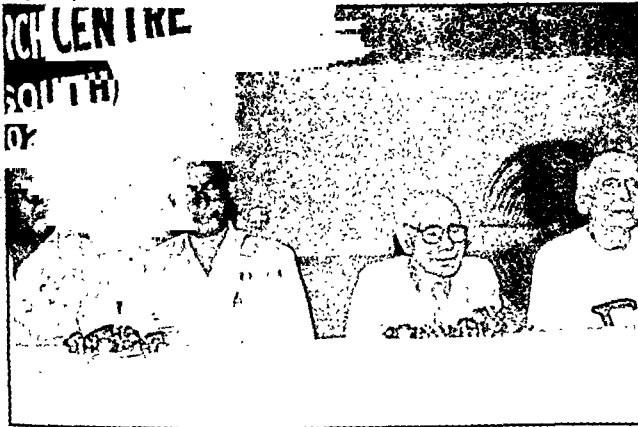
श्री बादल बोस, श्री दीपक दासगुप्ता, चेयरमैन, लेफ्ट फ्रन्ट, हावड़ा, श्री नरेश दासगुप्त एवं श्री सूरजमल बच्छावत

श्रीमती सिरियादेवी मिन्नी को मोमेन्टो प्रदान करते हुए आचार्य चन्दनाजी

हंसराजजी कोठारी के सुपुत्र का स्वागत करते श्री सुरेन्द्रजी बाँठिया

श्री रिखबचन्द जैन को सम्मानित करते हुए रिधकरण बोथरा

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा
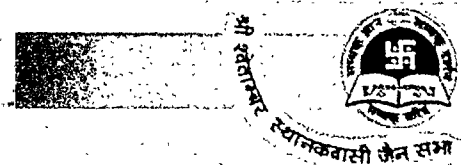
हॉस्पीटल के भूमि पूजन पर उपस्थित गणमान्य सदस्यगण

भीखमचंद भंसाली जैन स्कूल ऑफ नर्सिंग का भूमिपूजन
करते हुए श्रीमती एवं श्री विमल भंसाली

डायलिसिस यूनिट के उद्घाटन पर उपस्थित श्रीमती सुमन गुप्ता एवं गणमान्य अतिथिगण

रोगियों का सलेक्शन करने का दृश्य

जनरल वार्ड का एक दृश्य

मेगा हेल्थ चेकअप कैम्प, राजस्थान पत्रिका एवं हॉस्पीटल के संयुक्त सहयोग से

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा
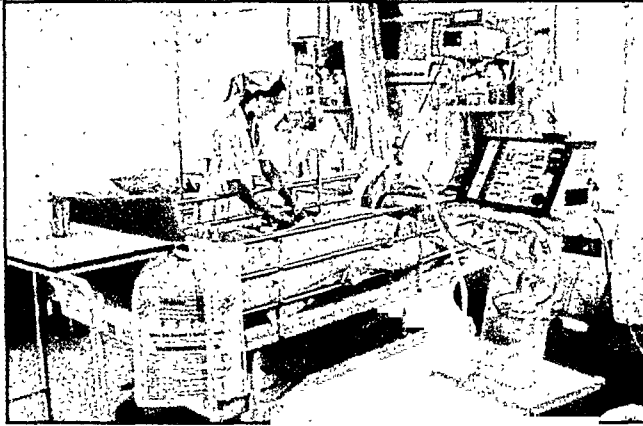
पी० एल० कोचर इन्स्टीट्युट ऑफ कार्डियाक साइंसेस का एक दृश्य

श्रीचंदजी नाहटा श्रद्धांजलि सभा में शोक प्रस्ताव प्राप्त करते परिवार के सदस्यगण

हॉस्पीटल परिसर में आयोजित श्रीचंद नाहटा श्रद्धांजलि सभा में उपस्थित गणमान्य सदस्यगण

अस्पताल परिसर में पद्मावती प्रतिमा

नानालालजी महाराज के पुण्य स्मृति में आयोजित शिविर में मंचस्थ

हरखचन्द कांकरिया जैन विद्यालय, जगतदल
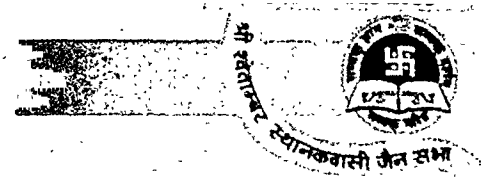
वार्षिक खेलकूद प्रतियोगिता को सम्बोधित करते हुए सरदारमलजी
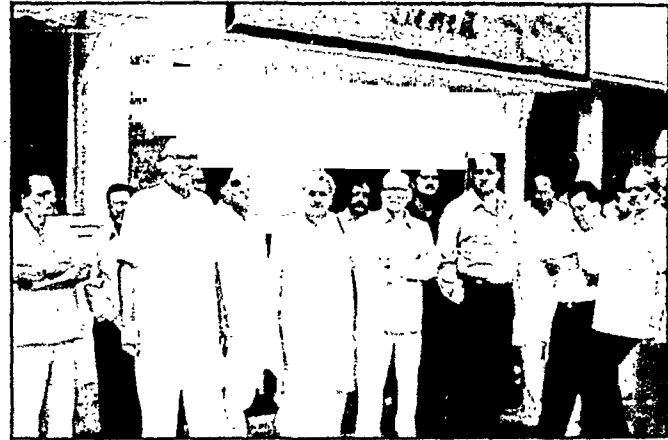
हरखचंद कांकरिया जैन विद्यालय के उद्घाटन पर उपस्थित गणमान्य

हरखचंद कांकरिया जैन विद्यालय परिसर में हरखचंदजी का सम्मान करते हुए

हरखचंद कांकरिया को सम्मानित करते हुए सरदारमलजी

[illegible] में आयोजित सेमिनार में उपस्थित

छात्रों द्वारा प्रदर्शित मार्चपास्ट का एक दृश्य

तारादेवी हरखचन्द कांकरिया जैन कॉलेज, कोलकाता
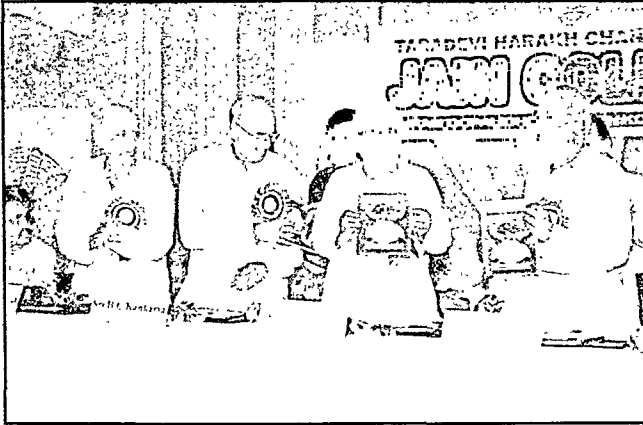
हॉस्पीटल पत्रिका 'अनुकम्पा' का विमोचन करते हुए श्री विमान बोस

श्री सुधांशु शील का सम्मान करते हुए भंसालीजी

श्री विमान बोस, चेयरमैन लेफ्ट फ्रन्ट को शॉल ओढ़ाकर सम्मानित करते हुए कांकरियाजी

श्रीमती एवं श्री सोहनराज सिंघवी को सम्मानित करते हुए श्री भँवरलाल दुगड़

झण्डोत्तोलन का एक दृश्य कॉलेज परिसर में

कॉलेज परिसर में आयोजित स्वतंत्रता दिवस समारोह

तारादेवी हरखचन्द कांकरिया जैन कॉलेज, कोलकाता
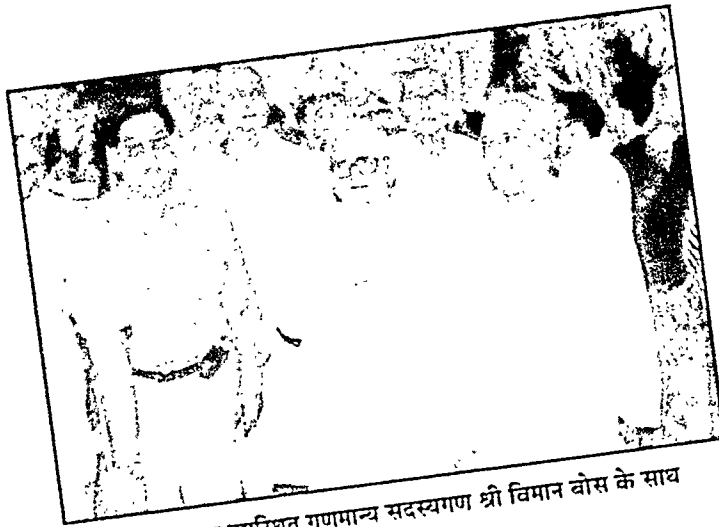
उद्घाटन पर उपस्थित गणमान्य सदस्यगण श्री विमान बोस के साथ

विमान बोस का स्वागत करते हुए सभा के पदाधिकारीगण

विमान बोस, चेयरमैन उद्घाटन पर उपस्थित,
आगवानी करते हुए सभा के पदाधिकारी

कॉलेज का उद्घाटन करते हुए श्री विमान बोस, चेयरमैन लेफ्टफ्रन्ट

श्री विमान बोस, चेयरमैन, लेफ्टफ्रंट को सम्मानित करते हुए सरदारमलजी

श्री हरखचंदजी कांकरिया को सम्मानित करते हुए श्री विमान बोस

तारादेवी हरखचन्द कांकरिया जैन कॉलेज, कोलकाता

तारादेवी हरखचंद कांकरिया जैन कॉलेज के उद्‌घाटन पर श्री बिमान बोस के साथ श्री राधेश्याम मिश्र एवं श्री अरिन्दम बोस
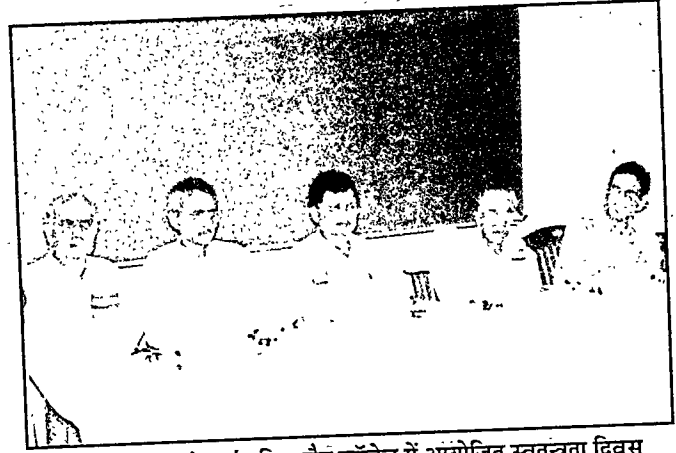
तारादेवी हरखचंद कांकरिया जैन कॉलेज में आयोजित स्वतन्त्रता दिवस समारोह मंचस्थ श्री उत्तमचंद नाहटा, श्री विजय नाहटा, श्री एन.सी. चन्द्रा, श्री हरखचंद कांकरिया, श्री चंचलमल बच्छावत

तारादेवी हरखचंद कांकरिया जैन कॉलेज में होली प्रीति सम्मेलन

डॉ. एन.सी. चन्द्रा, इन्स्पेक्टर ऑफ कॉलेजेज को सम्मानित करते हुए श्री पन्नालाल कोचर

तारादेवी हरखचंद कांकरिया जैन कॉलेज

कमलादेवी सोहनराज सिंघवी जैन कॉलेज ऑफ एडूकेशन

लक्ष्मीदेवी पीरचन्द कोचर जैन कॉलेज ऑफ नर्सिंग, कोलकाता

भूमि पूजन करते हुए श्री पन्नालाल कोचर, श्रीमती सुशीला कोचर,
श्री हीरालाल कोचर एवं श्रीमती पुष्पा कोचर

भूमिपूजन के अवसर पर उदगार व्यक्त करते हुए श्री पी.एल. कोचर

लक्ष्मीदेवी पीरचंद कोचर जैन कॉलेज ऑफ नर्सिंग के भूमि पूजन पर
श्री कोचर को अभिनंदित करते हुए सरदारमलजी

लक्ष्मीदेवी पीरचंद कोचर जैन कॉलेज ऑफ नर्सिंग के भूमि पूजन
पर उपस्थित गणमान्य अतिथिवृन्द

पन्नालाल कोचर परिवार के सदस्यगण भूमि पूजन
के अवसर पर – सम्मान मोमेन्टो के साथ

श्री हीरालाल कोचर (अमेरिका), श्रीमती पुष्पा कोचर मोमेन्टो के साथ

अनुक्रमणिका

विद्वत खण्ड

☆☆☆

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा

(१९२८-२००८)

प्रत्याशी गण (विश्वस्त मण्डल)

१.	श्री मगनमल कोठारी	१९२८-३६
२.	श्री भैरूंदान गोलछा	१९२८-३६
३.	श्री किशनलाल कांकरिया	१९२८-३६
४.	श्री बहादुरमल बाँठिया	१९२८-३७
५.	श्री श्रीचन्द बोथरा	१९२८-३६
६.	श्री रावतमल बोथरा	१९३६-३६
७.	श्री अजितमल पारख	१९३६-६०
८.	श्री सोहनलाल बाँठिया	१९३६-३७
९.	श्री छगनलाल बैद	१९६०-९०
१०.	श्री पारसमल कांकरिया	१९५३-८७
११.	श्री जयचन्दलाल रामपुरिया	१९५९-९९
१२.	श्री कन्हैयालाल मालू	१९६०-९३
१३.	श्री सरदारमल कांकरिया	१९८७-२००७
१४.	श्री भंवरलाल बैद	१९९०-९४
१५.	श्री माणकचन्द रामपुरिया	१९९४-२००१
१६.	श्री भँवरलाल कर्णावट	१९९२-२०००
१७.	श्री जयचन्दलाल मिन्नी	१९९४-२०००
१८.	श्री रिखबदास भंसाली	२००० से निरन्तर
१९.	श्री वालचन्द भूरा	२००० से २००३
२०.	श्री वच्छराज अभाणी	२००३ से निरन्तर
२१.	श्री सुन्दरलाल दुगड़	२००३ से निरन्तर
२२.	श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया	२००७ से निरन्तर

अध्यक्ष :

१.	श्री मगनमल कोठारी	१९२८-२९
२.	श्री बहादुरमल बाँठिया	१९२९-३१
३.	श्री रावतमल बोथरा	१९३१-३३
४.	श्री भैरूंदान गोलछा	१९३३-३६
५.	श्री किशनलाल कांकरिया	१९३६-५२
६.	श्री सोहनलाल बाँठिया	१९५२-५९
७.	श्री दीपचन्द कांकरिया	१९५९-६०
८.	श्री छगनलाल बैद	१९६०-६४
९.	श्री फूसराज वच्छावत	१९६४-६८
१०.	श्री पारसमल कांकरिया	१९६८-७०
११.	श्री कन्हैयालाल मालू	१९७०-७३
१२.	श्री फूसराज कांकरिया	१९७३-७६
१३.	श्री देवराज गोलछा	१९७६-७७
१४.	श्री माणकचन्द रामपुरिया	१९७७-८५
१५.	श्री सूरजमल बच्छावत	१९८५-९०
१६.	श्री भंवरलाल बैद	१९९०-९२
१७.	श्री रिखबदास भंसाली	१९९२-२०००
१८.	श्री बच्छराज अभाणी	२०००-२००२
१९.	श्री बालचन्द भूरा	२००२-०५
२०.	श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया	२००५-०७
२१.	श्री सरदारमल कांकरिया	२००७ से निरन्तर

उपाध्यक्ष :

१.	श्री नेमचन्द रांका	१९२८-२९
२.	श्री अमरचन्द पुगलिया	१९२९-३६
३.	श्री सौभाग्यमल डागा	१९३६-३७
४.	श्री चम्पालाल बाँठिया	१९३७-५२
५.	श्री दीपचन्द कांकरिया	१९५२-५९
६.	श्री पारसमल कांकरिया	१९६५-६९
७.	श्री भीखमचन्द भंसाली	१९७१-७३
८.	श्री देवराज गोलछा	१९७३-७७
९.	श्री रिखबदास भंसाली	१९७७-८३
१०.	श्री झँवरलाल बैद	१९८३-८५
११.	श्री भँवरलाल बैद	१९८५-९०
१२.	श्री भँवलाल कर्णावट	१९९०-९२
१३.	श्री वच्छराज अभाणी	१९९२-२००१
१४.	श्री रिधकरण वोथरा	२००१ से निरन्तर

सचिव

१.	श्री सुजानमल रांका	१९२८-२९
२.	श्री प्रतापसिंह ढड्ढा	१९२९-३१
३.	श्री जीतमल पारख	१९३१-३६
४.	श्री देवचन्द सेठिया	१९३६-३७
५.	श्री फूसराज वच्छावत	१९३७-५२

६. श्री सूरजमल बच्छावत — १९५२-६०
७. श्री हरखचन्द कांकरिया — १९६०-६४
८. श्री कुन्दनमल बैद — १९६४-६८
९. श्री रिखबदास भंसाली — १९६८-७८
१०. श्री झँवरलाल बैद — १९७८-८३
११. श्री जयचन्दलाल मिन्नी — १९८३-८८
१२. श्री रिधकरण बोथरा — १९८८-२००१
१३. श्री विनोद मिन्नी — २००१ से निरन्तर

उपमंत्री-सहमंत्री

१. श्री अभयराज बच्छावत — १९२८-३४
२. श्री सूरजमल बच्छावत — १९३४-३५
३. श्री प्रतापसिंह ढड्ढा — १९३५-३७
४. श्री देवचन्द बोथरा — १९३७-५६
५. श्री हरखचन्द कांकरिया — १९५६-६०
६. श्री रिखबदास भंसाली — १९६५-६९
७. श्री झँवरलाल बैद — १९६९-७५
८. श्री जयचन्दलाल मिन्नी — १९७५-८३
९. श्री निर्मलकुमार नाहर — १९७७-८०
१०. श्री रिधकरण बोथरा — १९८०-८८
११. श्री भँवरलाल कर्णावट — १९८३-९०
१२. श्री कँवरलाल मालू — १९९०-२०००
१३. श्री सुभाष बच्छावत — १९९२-९४
१४. श्री अशोक मिन्नी — १९९४-९७
१५. श्री अरुणकुमार मालू — १९९७-२०००
१५. श्री अशोक बोथरा — २०००-निरन्तर
१६. श्री किशोर कोठारी — २०००-निरन्तर

कोषाध्यक्ष :

१. श्री मगनमल बच्छावत — १९२८-२९
२. श्री लक्ष्मीनारायण बक्शी — १९२९-३६
३. श्री अगरचन्द रामलाल बोथरा — १९३६-३७
४. श्री पारसमल कांकरिया — १९३७-३८
५. श्री जानकीदास मिन्नी — १९३८-५३
६. श्री मोतीलाल मालू — १९५३-६९

१०. श्री भँवरलाल दस्सानी — १९८०-९४, ९७-२०००
११. श्री केसरीचन्द गेलड़ा — १९९४-९७
१२. श्री शांतिलाल डागा — २००२-०५
१३. श्री पारसमल भूरट — २०००-०२
१४. श्री फागमल अभाणी — २००५-०७
१५. श्री अजय अभाणी — २००७-निरन्तर

हिसाब परिक्षक :

१. श्री अजीतमल पारख — १९२८-२९
२. श्री शिवनाथमल भूरा — १९२९-३६
३. श्री ईश्वरदास छल्लाणी — १९३६-३७
४. श्री रावतमल बोथरा — १९३७-३९
५. श्री बी.आर. भंसाली — १९६०-७२
६. श्री एन.सी. कुंभट — १९७३-८०
७. श्री के.एस. बोथरा एण्ड कं. — १९८१-निरन्तर

श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता के अध्यक्ष, मंत्री एवं प्रधानाचार्य की नामावली (१९३४-२००८)

१. श्री भैरूंदान गोलछा — १९३४-३६
२. श्री किशनलाल कांकरिया — १९३६-५२
३. श्री सोहनलाल बाँठिया — १९५२-५८
४. श्री फूसराज बच्छावत — १९५८-६३
५. श्री जयचन्दलाल रामपुरिया — १९६३-८२
६. श्री सूरजमल बच्छावत — १९८२-८६
७. श्री रिखबदास भंसाली — १९८६-९०
८. श्री किशनलाल बोथरा — १९९०-९३
९. श्री मोहनलाल भंसाली — १९९३-९७
१०. श्री सोहनराज सिंघवी — १९९७-निरन्तर

मंत्री :

१. श्री अजीतमल पारख — १९३४-३५
२. श्री मुन्नालाल रांका — १९३५-३६
३. श्री फूसराज बच्छावत — १९३६-५२
४. श्री सूरजमल बच्छावत — १९५२-५८, १९६३-६७

प्रधानाचार्य :

१. श्री बच्चन सिंह १९३४-५८
२. श्री रामानन्द तिवारी १९५८-८७
३. श्री कन्हैयालाल गुप्त १९८७-९३
४. श्री कामेश्वरप्रसाद वर्मा १९९३-२०००
५. श्री शरदचन्द्र पाठक २०००-०६
६. श्री अरुणकुमार तिवारी २००६-निरन्तर

श्री जैन विद्यालय फॉर गर्ल्स हावड़ा

अध्यक्ष :

१. श्री किशनलाल बोथरा १९९२-९६
२. श्री सुन्दरलाल दुगड़ १९९६-२००१
३. श्री पन्नालाल कोचर २००१-निरन्तर

उपाध्यक्ष :

१. श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया १९९२-२००१
२. श्री आनन्दराज झाबक २००१-०२
३. श्री महेन्द्र कर्णावट २००२-निरन्तर

मंत्री :

१. श्री सरदारमल कांकरिया १९९२-२००५
२. श्री ललित कांकरिया २००५-निरन्तर

प्रधानाध्यापिका :

१. श्रीमती ओल्गा घोष १९९२-निरन्तर

श्री जैन विद्यालय फॉर ब्वॉयज, हावड़ा

अध्यक्ष :

१. श्री किशनलाल बोथरा १९९२-९६
२. श्री सुन्दरलाल दुगड़ १९९६-निरन्तर

उपाध्यक्ष :

१. श्री सुरेन्द्र बाँठिया १९९२-२००४
२. श्री राजेन्द्रकुमार नाहटा २००४-०७
३. श्री प्रदीपकुमार पटवा २००७-निरन्तर

मंत्री :

१. श्री सरदारमल कांकरिया १९९२-२००४
२. श्री ललित कांकरिया २००४-निरन्तर

प्रधानाध्यापक :

१. श्री कन्हैयालाल गुप्त, कार्यकारी प्रधानाध्यापक १९९२-९३
२. श्री भूपराज जैन, कार्यकारी प्रधानाध्यापक १९९३-९४
३. श्री जयराम सिंह १९९४-९६
४. श्री गोपालजी दूबे, रेक्टर १९९६-२००४
५. श्री रामअधीन सिंह २००४-निरन्तर

सभा की वर्तमान कार्यकारिणी समिति :

विश्वस्त मंडल :

१. श्री रिखबदास भंसाली
२. श्री बच्छराज अभाणी
३. श्री सुन्दरलाल दुगड़
४. श्री सुरेन्द्रकुमार बाँठिया

पदाधिकारी :

अध्यक्ष : श्री सरदारमल कांकरिया
उपाध्यक्ष : श्री रिधकरन बोथरा
मंत्री : श्री विनोद मिन्नी
सहमंत्री : श्री अशोककुमार बोथरा
श्री किशोरकुमार कोठारी
कोषध्यक्ष : श्री अजयकुमार अभाणी

सदस्य :

१. श्री बालचंद भूरा
२. श्री सोहनराज सिंघवी
३. श्री पन्नालाल कोचर
४. श्री मोहनलाल भंसाली
५. श्री भंवरलाल दस्सानी
६. श्री शांतिलाल डागा
७. श्री पारसमल भूरट
८. श्री अशोक मिन्नी
९. श्री सुभाषचंद कांकरिया
१०. श्री ललितकुमार कांकरिया
११. श्री महेन्द्रकुमार कर्णावट
१२. श्री फागमल अभाणी
१३. श्री गोपालचंद बोथरा
१४. श्री अरुणकुमार मालू
१५. श्री निश्चल कांकरिया
१६. श्री राजेन्द्रप्रसाद बोथरा
१७. श्री प्रदीप पटवा
१८. श्री जय बोथरा

१९. श्री सुभाष बच्छावत
२०. श्री चन्द्रप्रकाश डागा
२१. श्री सुरेन्द्रकुमार सेठिया

स्थायी आमंत्रित सदस्य :

१. श्री जयचंदलाल रामपुरिया
२. श्री भंवरलाल बैद
३. श्री किशनलाल बोथरा
४. श्री चाँदमल अभाणी
५. श्री कुन्दनमल बैद
६. श्री खडगसिंह बैद
७. श्री राजकुमार डागा
८. श्री शांतिलाल कोठारी
९. श्री मानिकचंद गेलड़ा
१०. श्री कमलसिंह भंसाली
११. श्री कमलसिंह कोठारी
१२. श्री सागरमल भूरा
१३. श्री हस्तीमल जैन
१४. श्री गौतमचंद कांकरिया
१५. श्री शांतिलाल मालू
१६. श्री विनोदचंद कांकरिया
१७. श्री गोपालचंद भूरा
१८. श्री अजयकुमार बोथरा
१९. श्री अजयकुमार डागा
२०. श्री राजेन्द्रकुमार बुच्चा
२१. श्री सुरेन्द्रकुमार दफ्तरी
२२. श्री सुभाष जैन
२३. श्री राजेन्द्र रामपुरिया
२४. श्री पंकज बच्छावत
२५. श्री कमल कर्णावट
२६. श्री जयचंदलाल मुकीम
२७. श्री कमल बच्छावत
२८. श्री भागीचंद डागा
२९. श्री कमल मुकीम
३०. श्री राजा पटवा
३१. श्री सिद्धार्थ गुलगुलिया
३२. श्री संदीप डागा
३३. श्री राजेश मिन्नी
३४. श्री राजेश कांकरिया
३५. श्री ललित चौधरी
३६. श्री सुरेश बाँठिया
३७. श्री अशोक भंसाली
३८. श्री अशोक बच्छावत
३९. श्री पुनमचन्द भूरट
४०. श्री निर्मकुमार भूरा
४१. श्री अभयराज सेठिया
४२. श्री पुखराज बेताला
४३. श्री सुशील गेलड़ा

हिसाब परीक्षक :

मे. के.एस. बोथरा एण्ड कं.
९/१२, लालबाजार स्ट्रीट
ई-ब्लॉक, १ तल्ला
कोलकाता-७०० ००१

श्री जैन बुक बैंक कमिटी

संयोजक : श्री सुभाष बच्छावत
सहसंयोजक : श्री अजय बोथरा
श्री अजय डागा

मानव सेवा प्रकल्प समिति

संयोजक : श्री सुभाष कांकरिया
सहसंयोजक : श्री सुभाष चौरड़िया
श्री उदयचन्द सेठिया

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र

मंत्री : श्री अशोक बच्छावत
सहमंत्री : श्रीमती रेखा भंसाली
प्रिन्सीपल : श्री अरुणकुमार तिवारी
को-ऑर्डिनेटर : श्री राधेश्याम मिश्र

सदस्य :
श्रीमती गीतिका बोथरा
श्री राजकुमार डागा

श्री धर्मसभा समिति

संयोजक : श्री चांदमल अभाणी
सह-संयोजक : श्री अखेचंद भंडारी
श्री कुन्दनमल फलोदिया

सदस्य :
श्री केवलचंद कांकरिया

श्री महिला उत्थान व विकास समिति

संयोजिका : श्रीमती फूलकुमारी कांकरिया

सहसंयोजिका : श्री लीलादेवी बोथरा

श्रीमती प्रभा भंसाली

श्रीमती किरण हीरावत

सदस्या :

श्रीमती कंचनदेवी कांकरिया

श्रीमती सुशीला कोचर

श्रीमती प्रमिला भंसाली

श्रीमती संजू बाँठिया

श्रीमती पदमा मित्री

श्रीमती मीना भंसाली

श्रीमती प्रमिला कांकरिया

श्रीमती शशिकला सेठिया

श्रीमती उजालादेवी रामपुरिया

कानून व्यवस्था समिति :

संयोजक : श्री किशोरकुमार कोठारी

सह-संयोजक : श्री ललित कांकरिया

श्री रिधकरन बोथरा

भावी योजना समिति विद्यालय/कॉलेज :

संयोजक : श्री सरदारमल कांकरिया

संहसंयोजक : श्री पन्नालाल कोचर

इग्नू (IGNOU) : स्टडी सेन्टर हावड़ा

कोऑर्डीनेटर : डॉ. गोपालजी दूबे

संयोजक : श्री राजकुमार डागा

सहसंयोजक : श्री ललित कांकरिया

सदस्य :

श्री सरदारमल कांकरिया

श्री रिखबदास भंसाली

श्री रिधकरन बोथरा

श्री राधेश्याम मिश्र

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की कार्यकारिणी के सदस्य

(१९२८-२००८)

१.	श्री अमरचन्द बोथरा	१९२८-२९
२.	श्री गुलाबचन्द आंचलिया	१९२८-३६
३.	श्री किशनलाल कांकरिया	१९२८-५२
४.	श्री अजीतमल पारख	१९२८-६०
५.	श्री पूनमचन्द डागा	१९२८-२९
६.	श्री मालचन्द बरड़िया	१९२८, २९, १९३६-३७
७.	श्री पूनमचन्द गोलछा	१९२८-३८
८.	श्री शिवनाथमल भूरा	१९२८-३६
९.	श्री दौलतरूपचन्द भण्डारी	१९२८-२९, १९३७
१०.	श्री सौभाग्यमल डागा	१९२८,३७
११.	श्री धनराज बैद	१९२८,३६
१२.	श्री हरखचन्द भंसाली	१९२८-२९
१३.	श्री भैरुदान झवेरी	१९२८-२९
१४.	श्री रतनलाल तातेड़	१९२८-२९
१५.	श्री जुहारमल बांठिया	१९२८, ३९
१६.	श्री बहादुर बांठिया	१९२८-३७
१७.	श्री उदयचन्द डागा	१९२८-३३
१८.	श्री नेमचन्द बोथरा	१९२८-३६
१९.	श्री भैरूंदान गोलछा	१९२८-३६
२०.	श्री जतनमल बच्छावत	१९२८, ३३, १९५२-५३
२१.	श्री नेमिदासभाई खुसाल	१९२८-३३
२२.	श्री ईश्वरदास छल्लानी	१९२८-६५
२३.	श्री अभयराज बच्छावत	१९२८-३७
२४.	श्री नेमचन्द भंसाली	१९२८-३७
२५.	श्री मगनमल कोठारी	१९२८-३६
२६.	श्री अमरचन्द पुगलिया	१९२८-३४
२७.	श्री लक्ष्मीनारायण बक्शी	१९२८-५२
२८.	श्री मगनमल बच्छावत	१९२८-५२
२९.	श्री धनपतसिंह कोठारी	१९२९-३३
३०.	श्री भीमराज दुगड़	१९२९-३३
३१.	श्री रूपचन्द बाँठिया	१९२९-३७
३२.	श्री देवचन्द सेठिया	१९२९-३७, १९५२, ५५
३३.	श्री फूसराज बच्छावत	१९२९-८४
३४.	श्री शिखरचन्द कोठारी	१९२९-३३
३५.	श्री श्रीचन्द बोथरा	१९२८-५३
३६.	श्री रावतमल बोथरा	१९३१-३९
३७.	श्री मुन्नालाल रांका	१९३५-३६
३८.	श्री प्रतापसिंह ढड्ढा	१९३५-३७
३९.	श्री सूरजमल बच्छावत	१९३५-२०००

क्रम	नाम	वर्ष
४०.	श्री गणेशदास कोठारी	१९३६-३७
४१.	श्री आसकरण बोथरा	१९३६-३७, १९५२-५३
४२.	श्री देवचन्द बच्छावत	१९३६-३७
४३.	श्री गोवर्धनदास बाँठिया	१९३६-३७
४४.	श्री सतीदास तातेड़	१९३६-३७
४५.	श्री बख्तावरचन्द सुराणा	१९३६-३७
४६.	श्री मूलचन्द लूणिया	१९३६-३७
४७.	श्री डूंगरमल दस्सानी	१९३६-३७
४८.	श्री रामलाल मुकीम	१९३६-३७
४९.	श्री तोलाराम मिन्नी	१९३७-५३
५०.	श्री मेघराज मिन्नी	१९३७-५६
५१.	श्री देवचन्द बोथरा	१९३७-५६
५२.	श्री पारसमल कांकरिया	१९३७-८७
५३.	श्री जानकीदास मिन्नी	१९३८-५२
५४.	श्री भीखमचन्द भंसाली	१९५२-७५
५५.	श्री मगनमल बाँठिया	१९५२-५६
५६.	श्री भँवरलाल कांकरिया	१९५२-५६
५७.	श्री दीपचन्द कांकरिया	१९५२-७१
५८.	श्री केशरीचन्द बेताला	१९५२-६९
५९.	श्री देवराज गोलछा	१९५२-७७
६०.	श्री जयचन्दलाल रामपुरिया	१९८२-२०००
६१.	श्री बालचन्द भूरा	१९५२-निरन्तर
६२.	श्री तोलाराम बरड़िया	१९५२-५३
६३.	श्री सोहनलाल बाँठिया	१९५२-५९
६४.	श्री तोलाराम बोथरा	१९५२-५३, १९५६
६५.	श्री छगनमल बैद	१९५२-९०
६६.	श्री जेठमल लूणिया	१९५६-६०
६७.	श्री कन्हैयालाल मालू	१९५६-९३
६८.	श्री मूलचन्द बोथरा	१९५६-६०
६९.	श्री सरदारमल कांकरिया	१९५६, १९६५-निरन्तर
७०.	श्री केशरीचन्द बच्छावत	१९५६-६०
७१.	श्री मोतीलाल मालू	१९५६-६९, १९७५
७२.	श्री जैवन्तमल मिन्नी	१९५६-६०
७३.	श्री मोहनलाल पुगलिया	१९५६-६९
७४.	श्री मोहनलाल नाहर	१९६०-६५
७५.	श्री इन्द्रकुमार बाँठिया	१९६०-६५
७६.	श्री कुन्दनमल बैद	१९६४-६८
७७.	श्री हरखचन्द कांकरिया	१९६५-६९, १९७१-७३
७८.	श्री माणकचन्द रामपुरिया	१९६५, ६९, १९७३-२००१
७९.	श्री जसवन्तसिंह लोढ़ा	१९६५-६९
८०.	श्री पीरदान पारख	१९६५-६९
८१.	श्री हेमराज खजान्ची	१९६५, ६९, १९७१-७५
८२.	श्री भँवरलाल बोथरा	१९६५-७३
८३.	श्री रिखबदास भंसाली	१९६५-निरन्तर
८४.	श्री बुलाकीचन्द कोठारी	१९६९-७७
८५.	श्री लूणकरण हीरावत	१९६९-७३
८६.	श्री मांगीलाल मिन्नी	१९६९-८३
८७.	श्री झँवरलाल बैद	१९६९-९०
८८.	श्री भँवरलाल कर्णावट	१९७१-२०००
८९.	श्री जयचन्दलाल मुकीम	१९७१-८०, १९८७-९४
९०.	श्री भँवरलाल बैद	१९७३-९७
९१.	श्री केवलचन्द कांकरिया	१९७३-७७, १९९२-९४
९२.	श्री चुन्नीलाल रामपुरिया	१९७३-७७
९३.	श्री बच्छराज अभाणी	१९७३, १९८१-निरन्तर
९४.	श्री तारकेश्वर छल्लाणी	१९७३-७७
९५.	श्री जतनमल हीरावत	१९७३, ८३
९६.	श्री मालचन्द सेठिया	१९७३-७७
९७.	श्री जयचन्दलाल मिन्नी	१९७३-२००५
९८.	श्री फूसराज कांकरिया	१९७३-७६
९९.	श्री माणिकचन्द सेठिया	१९७३-७५
१००.	श्री पूनमचन्द सिपानी	१९७३, ७७
१०१.	श्री लच्छीराम पुगलिया	१९७३-९०
१०२.	श्री माणकचन्द कोठारी	१९७५-७७
१०३.	श्री भैरूदान बाँठिया	१९७५-७७
१०४.	श्री भँवरलाल सेठिया	१९७७-९०
१०५.	श्री भँवरलाल दस्सानी	१९७७-निरन्तर
१०६.	श्री मोहनलाल भंसाली	१९७७-निरन्तर
१०७.	श्री शिखरचन्द बम्ब	१९७७-८०
१०८.	श्री पारसमल भूरट	१९७७-निरन्तर
१०९.	श्री पूरणमल कांकरिया	१९७७-९०
११०.	श्री जसकरण बोथरा	१९७७-९०
१११.	श्री शांतिलाल मिन्नी	१९७७-९५

११२. श्री इन्दरचन्द लुणावत	१९७७-८७
११३. श्री फागमल अभाणी	१९७७-८५, १९९७-निरन्तर
११४. श्री लूणकरण भंडारी	१९७७-९०, १९९७-९८
११५. श्री पारसमल सुराणा	१९७७-८१
११६. श्री नवरतनमल मेहता	१९८०-८५
११७. श्री शिखरचन्द मिन्नी	१९८०-९७
११८. श्री प्रेमचन्द मुकीम	१९८०-९५
११९. श्री रिधकरण बोथरा	१९८०-निरन्तर
१२०. श्री मूलचन्द मुकीम	१९८१-९०
१२१. श्रीमती गायत्री कांकरिया	१९८१-९०
१२२. श्री चाँदमल बरड़िया	१९८५-८७
१२३. श्री जतनमल लूणिया	१९८५-८७
१२४. श्री जयकुमार बोथरा	१९८७-९०, २००५-निरन्तर
१२५. श्री कँवरलाल मालू	१९८७-९९
१२६. श्री अनूपचन्द सेठिया	१९९०-९४
१२७. श्री सुभाष कांकरिया	१९९२-९५, २००१-निरन्तर
१२८. श्री माणिक बच्छावत	१९८८-९०
१२९. श्री सुभाष बच्छावत	१९९२-निरन्तर
१३०. श्री सुन्दरलाल दुगड़	१९९२-निरन्तर
१३१. श्री शान्तिलाल डागा	१९९२-निरन्तर
१३२. श्री मेघराज जैन	१९९२-९४
१३३. श्री प्रकाश कोठारी	१९९२-९५
१३४. श्री उगमराज मेहता	१९९२-९५
१३५. श्री गोपालचन्द भूरा	१९९२-९७
१३६. श्री अशोक बच्छावत	१९९२-९४
१३७. श्री चाँदमल अभाणी	१९९३-९५
१३८. श्री सोहनराज सिंघवी	१९९३-निरन्तर
१३९. श्री सुरेन्द्र बाँठिया	१९९३-निरन्तर
१४०. श्री सोहनलाल गोलछा	१९९३-९७
१४१. श्री केशरीचन्द गेलड़ा	१९९४-९७
१४२. श्री किशनलाल बोथरा	१९९५-निरन्तर
१४३. श्री विनोदचन्द कांकरिया	१९९५-२००१
१४४. श्री कमलसिंह कोठारी	१९९५-९७
१४५. श्री कन्हैयालाल लूणिया	१९९५-९७
१४६. श्री किशोर कोठारी	१९९५-निरन्तर
१४७. श्री अरुण मालू	१९९५-निरन्तर
१४८. श्री अशोक भंसाली	१९९७-९९
१४९. श्री महेन्द्र कर्णावट	१९९७-९९, २००१-निरन्तर
१५०. श्री ललित कांकरिया	१९९७-निरन्तर
१५१. श्री विनोद मिन्नी	१९९७-निरन्तर
१५२. श्री अशोक मिन्नी	१९९९-निरन्तर
१५३. श्री पन्नालाल कोचर	१९९९-निरन्तर
१५४. श्री हस्तीमल जैन	१९९९-२००१
१५५. श्री निश्चल कांकरिया	१९९९-निरन्तर
१५६. श्री शांतिलाल कोठारी	१९९९-२००७
१५७. श्री चन्द्रप्रकाश डागा	१९९९-निरन्तर
१५८. श्री पंकज बच्छावत	२००१-०३
१५९. श्री राजेन्द्र नाहटा	२००१-०५
१६०. श्री गोपालचन्द बोथरा	२००३-निरन्तर
१६१. श्री राजकुमार डागा	२००३-०७
१६२. श्री बिनोद दुगड़	२००५-०७
१६३. श्री प्रदीप पटवा	२००५-निरन्तर
१६४. श्री राजेन्द्रप्रसाद बोथरा	२००७-निरन्तर
१६५. श्री अशोककुमार बोथरा	१९९८-निरन्तर
१६६. श्री अजय अभाणी	२००७-निरन्तर
१६७. श्री सुरेन्द्रकुमार सेठिया	२००७-निरन्तर

प्रस्तुति : भूपराज जैन

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की

इतिहास कथा

अंग्रेजों की गुलामी एवं शोषण से मुक्त होने के लिए सम्पूर्ण भारतवर्ष महात्मा गांधी के नेतृत्व में एक जुट होकर संघर्ष रत था। अपने सर पर कफन बांधे आजादी के दीवानों की टोलियाँ संगीनों एवं गोलियों की परवाह किये विना स्वातन्त्र्य यज्ञ में अपनी आहुतियाँ दे रही थी– ''सर वाँधे कफनवा हो, शहीदों की टोली निकली।''

भारत का हर नागरिक विना किसी भेद भाव, जाति-पांति और छुआछूत के अपने उत्सर्ग के लिए तत्पर था। सेवा, साधना और सहयोग का यह अभूतपूर्व वातावरण चतुर्दिक व्याप्त था।

ऐसे ही क्रान्तिकारी वातावरण में समाज एवं राष्ट्र की सेवा की पवित्र भावना से प्रेरित होकर स्थानकवासी समाज के कतिपय उत्साही व्यक्तियों के मन में अपना संगठन बनाने का शुभ विचार उत्पन्न हुआ एवं उस अभाव को पूर्ण करने का दृढ़ संकल्प किया जो कई दिनों से अनुभव किया जा रहा था। दिनांक २ सितम्वर सन् १९२८ ई० को श्री मंगलचन्दजी उदयचन्दजी डागा की गद्दी में स्थानीय स्थानकवासी सज्जनों की एक वैठक श्री उदयचन्दजी डागा, श्री नथमलजी दस्साणी एवं अन्य उत्साही नवयुवकों की प्रेरणा से आयोजित की गई जिसमें अपना संगठन वनाने पर विचार किया किन्तु कलकत्ता जैसे नगर में स्थान की समस्या वहुत विकट थी। फिर भी जहाँ चाह होती है, वहाँ राह निकलती है। श्री उदयचन्दजी डागा ने तत्काल इस विकट समस्या का समाधान करते हुए कहा कि उनका १ पांचागली स्थित यह भवन समाज के शुभकार्यों हेतु समर्पित करते हुए उन्हें अत्यन्त प्रसन्नता एवं गौरव बोध हो रहा है। श्री डागाजी के इस आदर्श, सहयोग और स्नेह का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा। फलत: दिनांक १९ सितम्बर १९२८ ई० को श्री श्वेताम्वर स्थानकवासी जैन सभा की स्थापना की गई एवं श्री मगनमलजी कोठारी को सर्व सम्मति से अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। सभा का उद्देश्य घोषित किया गया– जैन समाज का सुसंगठन करना तथा निष्पक्ष एवं द्वेषरहित बुद्धि से जैन धर्म के सिद्धांतों ज्ञान-दर्शन चारित्र्य का प्रचार करते हुए समाज एवं राष्ट्र की सतत सेवा करना।

इस सभा की संस्थापना में जिन महानुभवों का योगदान रहा है उसकी चर्चा करते हुए सभा के प्रथम मंत्री श्री सुजानमलजी रांका ने अपने मंत्री प्रतिवेदन में उन्हें धन्यवाद दिया। उन्होंने अपने वक्तत्व में कहा– ''सर्व प्रथम में उन उत्साही बन्धुओं श्रीमान् फूसराजजी बच्छावत, नेमीचन्दजी बच्छावत, नथमलजी दस्सानी, रतनलालजी तातेड़, सौभाग्यमलजी डागा, अजीतमलजी पारख, लक्ष्मीनारायणजी बख्शी, नेमीचन्दजी रांका, गुलाबचन्दजी आंचलिया, धनराजजी बैद, हरखचन्दजी भंसाली, नेमचन्दजी भंसाली, शिवनाथमलजी भूरा, ईश्वरदासजी छल्लाणी, चांदरतनजी मिन्नी, मालचन्दजी बरड़िया, जतनमलजी कोठारी, मगनमलजी कोठारी, अभयराजजी बच्छावत, पानमलजी मिन्नी, पूनमचन्दजी गोलछा, तथा परलोकगत श्रीमान् अमरचन्दजी बोथरा को धन्यवाद देना अपना परम कर्तव्य समझता हूँ कि इन महानुभावों के सत्प्रयास और प्रेरणा से इस सभा की स्थापना हुई।''

सन् १९२८ ई० में सभा की स्थापना के समय जो पदाधिकारी एवं कार्यकारिणी सदस्य निर्वाचित किये गये, वे निम्नलिखित हैं–

पदाधिकारी

सभापति	:	श्री मगनमलजी कोठारी
उपसभापति	:	श्री नेमीचन्दजी रांका
मन्त्री	:	श्री सुजानमलजी रांका
उपमंत्री	:	श्री अभयराजजी बच्छावत
कोषाध्यक्ष	:	श्री मगनमलजी बच्छावत
हिसाव परीक्षक	:	श्री अजीतमलजी पारख
पुस्तकालयाध्यक्ष	:	श्री शिखरचन्दजी कोठारी

कार्यकारिणी सदस्य

श्री अमरचन्दजी वोथरा — श्री दौलतरूपचन्दजी भण्डारी

श्री गुलावचन्दजी आंचलिया — श्री सौभाग्यमलजी डागा

श्री किशनलालजी कांकरिया	श्री धनराजजी बैद
श्री पूनमचन्दजी डागा	श्री हरखचन्द्रजी भंसाली
श्री अजीतमलजी पारख	श्री भैरूदानजी जवेरी
श्री मालचन्दजी बरड़िया	श्री रतनलालजी तातेड़
श्री पूनमचन्दजी गोलछा	श्री जुहारमलजी बांठिया

श्री शिवनाथमलजी भूरा

सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए चार विभागों की स्थापना की गई–

धार्मिक क्रिया विभाग	पुस्तकालय विभाग
सार्वजनिक उत्सव विभाग एवं	वक्तृत्व कला विभाग

धार्मिक क्रिया विभाग

सभा स्थान में प्रात:काल ५ बजे से ९ बजे तक स्थानीय महानुभाव, सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धार्मिक क्रियाएँ नियमित रूप से करते थे। इस विभाग के संयोजक थे श्री बदनमलजी बांठिया। श्री बांठियाजी अत्यन्त धर्म परायण एवं श्रद्धालु महानुभाव थे। उनकी प्रेरणा से ४०-५० महानुभाव नियमित रूप से सभा भवन में धार्मिक क्रियाएँ एवं स्वाध्याय करते थे।

नियमित रूप से मिलने-जुलने, धार्मिक विचारों का आदान-प्रदान करने तथा परस्पर स्वाध्याय रत रहने का प्रभाव समाज के सभी अंगों पर पड़ा तथा समाज में धर्म के प्रति श्रद्धा और दृढ़ हुई। सन् १९२८ में निम्न धार्मिक क्रियाकलाप सम्पन्न हुए।

सामायिक	प्रतिक्रमण	पौषध अष्ट प्रहरी	चो प्रहरी
१३५९५	१३१	१९१	१०१

पुस्तकालय विभाग :

समाज में ज्ञान-विज्ञान और शिक्षा के प्रचार हेतु पुस्तकालय स्थापना की तीव्र आवश्यकता अनुभव की गई क्योंकि शहर के उस केन्द्र में कोई सार्वजनिक पुस्तकालय नहीं था जहाँ सर्वसाधारण विशेषकर जैन भाई-बहिन जाकर देश-विदेश की खबरें जान सकें अत: एक सार्वजनिक पुस्तकालय की स्थापना की गई जिसमें पुस्तकों के अतिरिक्त १६ समाचार पत्र नियमित आते थे। इनमें दो दैनिक, पाँच साप्ताहिक तथा नौ मासिक पत्र थे। इस पुस्तकालय में जैन-अजैन आदि भाई नियमित अध्ययन किया करते थे।

धार्मिक उत्सव विभाग :

व्यक्ति समाज का अंग है। समाज के सहयोग से ही वह अपना विकास तथा उन्नयन करता है अत: समाज के प्रति उसका उत्तरदायित्व है एवं उसे उसका निर्वाह करना चाहिये। इसी दृष्टि से जैन पर्वों एवं त्योहारों को समारोह पूर्वक आयोजित करने का निश्चय किया जिससे सभी परस्पर मिल सकें एवं स्नेह, सहयोग के आदान-प्रदान के साथ सामाजिक दायित्व के निर्वाह की स्वस्थ भावना प्रत्येक भाई बहन में जाग सके। ''जो जाति अपने त्योहारों को सार्वजनिक रूप से नहीं मनाती है, वह मृत प्राय: हो जाती है।'' अत: धार्मिक उत्सवों को सार्वजनिक रूप से आयोजित करने की जिस स्वस्थ परम्परा का सूत्रपात उस समय किया गया, उसका आज तक पालन किया जा रहा है।

सभा द्वारा आयोजित उत्सवों में गुजराती, मारवाड़ी आदि जैन भाई-बहन सम्मिलित होते थे एवं यह संख्या ५०० से ऊपर पहुँच जाती थी। इन उत्सवों में श्री अमरचन्दजी पुगलिया नागपुर, श्री गोपीचन्दजी धारीवाल, श्री लीलाधर प्रेमजी, सोमचन्द भाई, श्री नेमीदास खुशाल आदि के ओजस्वी भाषण होते थे जिसका उपस्थित श्रोताओं पर यथेष्ट प्रभाव पड़ता था एवं समाज में प्रेरणा तथा उत्साह का समुद्र लहराने लगता था।

वक्तृत्व कला विभाग :

परस्पर विचार विमर्श करने तथा वक्तृत्व शक्ति बढ़ाने की दृष्टि से वक्तृत्व विभाग की स्थापना की गई। इसमें धार्मिक एवं राष्ट्रीय विषयों पर भाषण एवं वाद-विवाद आयोजित किये जाते थे। वक्तृत्व कला के विकास के साथ विचारों का इससे परिमार्जन एवं ज्ञान वृद्धि होती थी। उसमें कभी-कभी कम उपस्थिति खटकती थी किन्तु युवा पीढ़ी के विकास एवं ज्ञान वृद्धि के लिए इसका आयोजन आवश्यक था। कायकर्ताओं में उत्साह एवं प्रेरणा संवर्द्धन के लिए भी इस की अनिवार्य आवश्यकता थी। इस विभाग का दायित्व श्री अमरचन्दजी पुगलिया एवं श्री नेमदास भाई खुशाल ने बड़ी योग्यता एवं कुशलता पूर्वक संभाला तथा समाज में उत्साह एवं प्रेरणा का संचार किया।

कलकत्ता एक प्रमुख व्यावसायिक केन्द्र होने के साथ अन्य अनेक दृष्टियों से देश के मानचित्र में अति महत्वपूर्ण स्थान का अधिकारी रहा है। क्रान्तिकारी कार्यो, समाज सुधार आन्दोलनों तथा धार्मिक उत्क्रान्तियों की ऐसी मशाल यहाँ प्रज्वलित हुई है जिसने समग्र देश को मार्गदर्शन दिया है एवं वाह्य आडम्बरों, कुपरम्पराओं तथा कुरीतियों के उन्मूलन के लिए प्रेरित किया है।

वंकिम, रवि, शरत, सुभाष एवं क्रान्तिकारी शहीदों की इस नगरी में वाहर से आने वाले श्री मोतीलालजी मूथा आनरेरी मजिस्ट्रेट सतारा, भोपाल निवासी श्री फूलचन्दजी कोठारी, कर्मठ सेवा भावी श्री रतनलाल मोहनलाल अहमदावाद, समाज

सुधारक एवं क्रान्तिकारी श्री आनन्दराज जी सुराणा आदि बन्धुओं ने सभा के क्रिया-कलापों तथा प्रवृत्तियों को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की एवं भूरि-भूरि प्रशंसा की।

श्री सुजानमलजी रांका ने अपनी मंत्री प्रतिवेदन में सभा की उपलब्धियों की चर्चा करते हुए सदस्यों को सामाजिक पुनर्निमाण, उन्नयन एवं विकास के लिए आह्वान किया तथा सभापति श्री मगनमलजी कोठारी, श्री उदयचन्द डागा, श्री अमरचन्द पुगलिया जैसे कर्मठ सेवाभावी, उदार महानुभावों के महद् योगदान के प्रति आभार व्यक्त किया।

उस समय जिन प्रेरक शब्दों में यह भावना व्यक्त की उसका उल्लेख यहाँ अत्यावश्यक है– ''कई सदात्माओं ने सत्प्रयास और सत्प्रेरणा से इस पौधे को लगाया। कई उदार सज्जनों ने इस पौधे के बाल्यकाल में नानाविध उदारपूर्ण आर्थिक, मानसिक तथा शारीरिक श्रम और सहायता रूपी जल और प्राणवायु देकर इसे सींचा और पोसा। अब यह समस्त स्थानकवासी समाज का संगठन और सम्पत्ति है। अब इस वाल्यावस्था के वाद की कुमारावस्था में इसका पालन करना समस्त स्थानकवासी समाज का कर्तव्य और जिम्मेवारी है। अतएव आप समस्त महानुभावों से विनम्र प्रार्थना है कि मानसिक, शारीरिक बल एवं आर्थिक प्रत्येक प्रकार की सहायता प्रदान कर इस सभा को उन्नति के पथ पर अग्रसर होने में सहायक बनें।''

उक्त निवेदन और आह्वान से तत्कालीन स्थिति एवं वातावरण का मूल्यांकन किया जा सकता है। सभा के सदस्यों ने अथक परिश्रम, उत्साह, साहस तथा तन-मन-धन से सींचकर इस पौधे को अंकुरित किया ताकि भावी पीढ़ी इसे पल्लवित, पुष्पित कर इसके मधुर फलों का रसास्वादन करे।

प्रथम वर्ष के समापन पर द्वितीय वर्ष १९२९ ई० के कार्य संचालन हेतु नये पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी सदस्यों का निर्वाचन किया गया, जो निम्नलिखित है–

पदाधिकारी सन् १९२९-१९३०

सभापति	:	श्री वहादुरमलजी वांठिया
उपसभापति	:	श्री अमरचन्दजी पुगलिया
मंत्री	:	श्री प्रतापसिंह जी ढड्ढा
उपमंत्री	:	श्री अभयरायजी बच्छावत
कोषाध्यक्ष	:	श्री लक्ष्मीनारायणजी वख्शी
हिसाव परीक्षक	:	श्री शिवनाथमलजी भूरा
पुस्तकालयाध्यक्ष	:	श्री मुन्नालालजी रांका

कार्यकारिणी सदस्य

श्री धनपतसिंहजी कोठारी	श्री गुलाबचन्दजी आंचलिया
श्री बदनमलजी बांठिया	श्री जतनमलजी बच्छावत
श्री उदयचन्दजी डागा	श्री नेमीदासजी खुशाल
श्री भीमराजजी दुगड़	श्री देवचन्दजी सेठिया
श्री रूपचन्दजी बांठिया	श्री शिवनाथमलजी भूरा
श्री भैरूदानजी गोलछा	श्री फूसराजजी बच्छावत
श्री पूनमचन्दजी गोलछा	श्री जवाहरमलजी बांठिया
श्री धनराजजी बैद	श्री शिखरचन्दजी कोठारी

विश्वस्त मण्डल (प्रन्यासी)

श्री मगनमलजी कोठारी	श्री बदनमलजी बांठिया
श्री भैरूदानजी गोलछा	श्री श्रीचन्दजी बोथरा
श्री किशनलालजी कांकरिया	

सन् १९२९ ई० भारतीय इतिहास का एक ज्वलन्त दस्तावेज है। रावी नदी के किनारे लाहौर में पं० जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में सम्पन्न कांग्रेस अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने की उद्घोषणा की गई थी। पूर्ण स्वतंत्रता के इस शंखनाद से सम्पूर्ण भारतवर्ष में देश प्रेम, साहस, सेवा, उत्सर्ग, त्याग एवं बलिदान की ऐसी लहर उत्पन्न हुई जिससे शक्ति, हिंसा एवं दमन-चक्र के बल पर भारतीयों को दबाने वाले अंग्रेजों के दिल दहल उठे एवं वे समझ गये कि अब वे इस देश पर अधिक समय तक शासन नहीं कर सकेंगे।

विभिन्न सामाजिक संगठन एवं संस्थाएं भी अपने ढंग से देश की आजादी में अपना योगदान कर रही थी। जैन सभा के सदस्यों में भी अपूर्व उत्साह एवं जोश था। मंत्री श्री सुजानमलजी रांका के आह्वान से प्रभावित होकर सभा के सदस्यों ने सभा की प्रवृतियों के विस्तार के साथ लोक-कल्याणकारी कार्यों में भी रुचि लेना प्रारम्भ किया एवं ऐसे अनेक कार्य सम्पादित किये जिससे सभा अधिक लोकप्रिय हुई एवं यशस्वी बनी। सभा के नये पदाधिकारियों ने भी अपनी कर्मठता एवं सक्रियता से सभा की गतिविधियों को आगे बढ़ाया एवं ज्ञान-दर्शन चारित्र्य की अभिवृद्धि हेतु सतत प्रयत्नशील रहे।

धार्मिक क्रियाओं, उत्सवों तथा समारोहों के आयोजन अत्यन्त लगन, परिश्रम एवं अध्यवसाय से किये जाते जिसमें सभी जैन भाई-वहन वड़े उत्साह से भाग लेते थे।

विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद एवं वक्तव्य आयोजित कर समाज के युवा वर्ग का मानसिक तथा बौद्धिक विकास करने में वक्तृत्व कला विभाग अपने दायित्व का निर्वाह पूर्ण जिम्मेवारी स कर रहा था।

सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों एवं गतिविधियों के विस्तार के कारण सभा भवन का स्थान छोटा लगने लग गया था। सभा भवन की लीज का समय भी समाप्त होने के कारण नये स्थान की आवश्यकता तीव्रता से अनुभव हो रही थी। समाज के उत्साही, कर्मठ एवं सेवा भावी कार्यकर्ताओं ने १४२ए, क्रास स्ट्रीट में सभा कार्यालय का स्थानान्तरण कर द्विगुणित उत्साह से कार्य करना प्रारम्भ कर दिया।

अधिकांश जैन धर्मावलम्बी वाणिज्य-व्यवसाय एवं उद्योग-धंधों में रत रहने के कारण शिक्षा पर विशेष ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते थे एवं न आवश्यक ही मानते थे किन्तु समाज में एवं देश में शिक्षा के विस्तार के साथ शिक्षा का निरन्तर वर्चस्व बढ़ रहा था। अत: जैन समाज में भी शिक्षा के प्रति रुचि जाग्रत होने लगी। भावी पीढ़ी को सुनागरिक बनाने हेतु सुशिक्षित एवं सुसंस्कारित करना आवश्यक प्रतीत होने लगा अत: जैन समाज ने अपनी शिक्षण संस्थाएं स्थापित करना प्रारम्भ कर दिया था। सभा ने भी अपने बालक-बालिकाओं एवं भावी पीढ़ी को सुशिक्षित तथा सुसंस्कारिक बनाने हेतु विद्यालय की स्थापना करने का दृढ़ निश्चय किया। जिन उत्साही एवं कर्मठ महानुभावों ने इस निश्चय को मूर्त रूप प्रदान किया उसमें श्री फूसराजजी बच्छावत, श्री रावतमलजी बोथरा, श्री बच्छराजजी कांकरिया, श्री धनराजजी बैद, श्री गुलाबचन्दजी आंचलिया, श्री अभयराजजी बच्छावत, श्री तोलारामजी मिन्नी, श्री जानकीदासजी मिन्नी, श्री भैरोदानजी गोलछा, श्री नेमीचन्दजी बच्छावत, श्री नथमलजी दस्सानी, श्री किशनलालजी कांकरिया, श्री मुन्नालालजी रांका, श्री अजीतमलजी पारख, श्री बदनमलजी बांठिया, श्री जेठमलजी सेठिया प्रमुख थे।

जैन विद्यालय की स्थापना :

१७ मार्च सन् १९३४ की शुभ घड़ी में १४२ए, सुत्तापट्टी में विद्यालय का कार्यारम्भ हुआ। सर्वप्रथम सुयोग्य एवं उत्साही अध्यापक श्री बच्चन सिंहजी की नियुक्ति हुई। मात्र दो छात्रों को लेकर इस विद्यालय का श्रीगणेश हुआ जिसमें एक श्री सोहनलालजी गोलछा थे। छात्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होने लगी, फलस्वरूप दो शिक्षकों की नियुक्ति की गई। सभा की ओर से छात्रों को निशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती थी, यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है। खर्च स्वयं सभा ही वहन करती थी। दस माह तक सभा के उत्साही एवं कर्मठ कार्यकर्ता श्री अजीतमलजी पारख ने विद्यालय का मंत्रीत्व भार वहन कर विद्यालय की नींव को सुदृढ़ बनाया।

विद्यालय के संचालन के साथ-साथ सभा अन्य सामाजिक कार्यों में भी अनवरत हाथ बटाती थी। प्रकृति प्रकोप से पीड़ितों की सहायता में सभा कभी पीछे नहीं हटती थी। सन् १९३४ में बिहार में भीषण भूकम्प आया जिसने प्रलयंकर दृश्य उपस्थित कर दिया था। सभा इस अवसर पर कैसे चुप बैठ सकती थी। तत्काल श्री दीपचन्दजी सुखाणी के नेतृत्व में सभा के कर्मठ एवं सेवा भावी कार्यकर्ताओं का एक दल कम्बल, वस्त्र, भोजन आदि की सहायता सामग्री लेकर भूकम्प पीड़ित क्षेत्र में पहुँच गया एवं वहां सराहनीय सेवा कार्य किया। इस तरह सेवा का यह नया आयाम सभा के इतिहास के साथ जुड़ गया।

विद्यालय के बढ़ते हुए कार्य को देखकर सभा ने विद्यालय के पृथक पदाधिकारी निर्वाचित करने का निर्णय किया, तदनुसार निम्नलिखित पदाधिकारी निर्वाचित किये गये–

सभापति : श्री भैंरोदानजी गोलछा
मन्त्री : श्री मुन्नालालजी रांका
सहमन्त्री : श्री सूरजमलजी बच्छावत

दिनांक २० जनवरी १९३५ को आगामी वर्ष के लिए सभा के निम्न पदाधिकारियों का निर्वाचन किया गया–

विश्वस्त मंडल के सदस्य :

श्री मगनलाल कोठारी

श्री भैरादानजी गोलछा — श्री बदनमलजी बांठिया
श्री किशनलालजी कांकरिया — श्री नेमचन्दजी बोथरा

पदाधिकारीगण :

अध्यक्ष : श्री रावतमलजी बोथरा
मंत्री : श्री अजीतमलजी पारख
कोषाध्यक्ष : श्री लक्ष्मीनारायणजी बख्शी

दिनांक १७ जून १९३४ ई० को समाज के प्रमुख कार्यकर्ता श्री जुगराजजी सेठिया, बीकानेर एवं १६ सितम्बर १९३४ को श्री लक्ष्मीचन्दजी जैन ने विद्यालय का निरीक्षण किया एवं विद्यालय की कार्यप्रणाली तथा प्रगति पर पूर्ण सन्तोष व्यक्त किया। श्री सेठियाजी ने बच्चों को शुद्ध उच्चारण सिखाने पर जोर दिया एवं बालिकाओं की शिक्षा प्रारम्भ करने की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

नव निर्वाचित पदाधिकारियों की देख-रेख में सभा का कार्य निरन्तर विकासोन्मुख था। अपने उद्देश्यों के अनुरूप सभा के समस्त कार्यकर्ता उत्साहपूर्वक सामाजिक एवं लोकपयोगी कार्यों द्वारा सभा को यशस्वी बना रहे थे।

शोक सभा

महासती श्री इन्द्रकुंवरजी म०सा० के आकस्मिक देहावसान के समाचार से समाज में शोक के बादल छा गये। सभा ने

सुधारक एवं क्रान्तिकारी श्री आनन्दराज जी सुराणा आदि वन्धुओं ने सभा के क्रिया-कलापों तथा प्रवृत्तियों को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की एवं भूरि-भूरि प्रशंसा की।

श्री सुजानमलजी रांका ने अपनी मंत्री प्रतिवेदन में सभा की उपलब्धियों की चर्चा करते हुए सदस्यों को सामाजिक पुनर्निमाण, उन्नयन एवं विकास के लिए आह्वान किया तथा सभापति श्री मगनमलजी कोठारी, श्री उदयचन्द डागा, श्री अमरचन्द पुगलिया जैसे कर्मठ सेवाभावी, उदार महानुभावों के महद् योगदान के प्रति आभार व्यक्त किया।

उस समय जिन प्रेरक शब्दों में यह भावना व्यक्त की उसका उल्लेख यहाँ अत्यावश्यक है– ''कई सदात्माओं ने सत्प्रयास और सत्प्रेरणा से इस पौधे को लगाया। कई उदार सज्जनों ने इस पौधे के बाल्यकाल में नानाविध उदारपूर्ण आर्थिक, मानसिक तथा शारीरिक श्रम और सहायता रूपी जल और प्राणवायु देकर इसे सींचा और पोसा। अब यह समस्त स्थानकवासी समाज का संगठन और सम्पत्ति है। अब इस वाल्यावस्था के बाद की कुमारावस्था में इसका पालन करना समस्त स्थानकवासी समाज का कर्तव्य और जिम्मेवारी है। अतएव आप समस्त महानुभावों से विनम्र प्रार्थना है कि मानसिक, शारीरिक बल एवं आर्थिक प्रत्येक प्रकार की सहायता प्रदान कर इस सभा को उन्नति के पथ पर अग्रसर होने में सहायक वनें।''

उक्त निवेदन और आह्वान से तत्कालीन स्थिति एवं वातावरण का मूल्यांकन किया जा सकता है। सभा के सदस्यों ने अथक परिश्रम, उत्साह, साहस तथा तन-मन-धन से सींचकर इस पौधे को अंकुरित किया ताकि भावी पीढ़ी इसे पल्लवित, पुष्पित कर इसके मधुर फलों का रसास्वादन करे।

प्रथम वर्ष के समापन पर द्वितीय वर्ष १९२९ ई० के कार्य संचालन हेतु नये पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी सदस्यों का निर्वाचन किया गया, जो निम्नलिखित है–

पदाधिकारी सन् १९२९-१९३०

सभापति	:	श्री वहादुरमलजी बांठिया
उपसभापति	:	श्री अमरचन्दजी पुगलिया
मंत्री	:	श्री प्रतापसिंह जी ढड्ढा
उपमंत्री	:	श्री अभयरायजी वच्छावत
कोषाध्यक्ष	:	श्री लक्ष्मीनारायणजी वख्शी
हिसाव परीक्षक	:	श्री शिवनाथमलजी भूरा
पुस्तकालयाध्यक्ष	:	श्री मुन्नालालजी रांका

कार्यकारिणी सदस्य

श्री धनपतसिंहजी कोठारी	श्री गुलाबचन्दजी आंचलिया
श्री बदनमलजी बांठिया	श्री जतनमलजी बच्छावत
श्री उदयचन्दजी डागा	श्री नेमीदासजी खुशाल
श्री भीमराजजी दुगड़	श्री देवचन्दजी सेठिया
श्री रूपचन्दजी बांठिया	श्री शिवनाथमलजी भूरा
श्री भैरूदानजी गोलछा	श्री फूसराजजी बच्छावत
श्री पूनमचन्दजी गोलछा	श्री जवाहरमलजी बांठिया
श्री धनराजजी बैद	श्री शिखरचन्दजी कोठारी

विश्वस्त मण्डल (प्रन्यासी)

श्री मगनमलजी कोठारी	श्री बदनमलजी बांठिया
श्री भैरूदानजी गोलछा	श्री श्रीचन्दजी बोथरा
श्री किशनलालजी कांकरिया	

सन् १९२९ ई० भारतीय इतिहास का एक ज्वलन्त दस्तावेज है। रावी नदी के किनारे लाहौर में पं० जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में सम्पन्न कांग्रेस अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने की उद्घोषणा की गई थी। पूर्ण स्वतंत्रता के इस शंखनाद से सम्पूर्ण भारतवर्ष में देश प्रेम, साहस, सेवा, उत्सर्ग, त्याग एवं बलिदान की ऐसी लहर उत्पन्न हुई जिससे शक्ति, हिंसा एवं दमन-चक्र के बल पर भारतीयों को दबाने वाले अंग्रेजों के दिल दहल उठे एवं वे समझ गये कि अव वे इस देश पर अधिक समय तक शासन नहीं कर सकेंगे।

विभिन्न सामाजिक संगठन एवं संस्थाएं भी अपने ढंग से देश की आजादी में अपना योगदान कर रही थी। जैन सभा के सदस्यों में भी अपूर्व उत्साह एवं जोश था। मंत्री श्री सुजानमलजी रांका के आह्वान से प्रभावित होकर सभा के सदस्यों ने सभा की प्रवृतियों के विस्तार के साथ लोक-कल्याणकारी कार्यों में भी रुचि लेना प्रारम्भ किया एवं ऐसे अनेक कार्य सम्पादित किये जिससे सभा अधिक लोकप्रिय हुई एवं यशस्वी बनी। सभा के नये पदाधिकारियों ने भी अपनी कर्मठता एवं सक्रियता से सभा की गतिविधियों को आगे बढ़ाया एवं ज्ञान-दर्शन चारित्र्य की अभिवृद्धि हेतु सतत प्रयत्नशील रहे।

धार्मिक क्रियाओं, उत्सवों तथा समारोहों के आयोजन अत्यन्त लगन, परिश्रम एवं अध्यवसाय से किये जाते जिसमें सभी जैन भाई-वहन वड़े उत्साह से भाग लेते थे।

विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद एवं वक्तव्य आयोजित कर समाज के युवा वर्ग का मानसिक तथा वौद्धिक विकास करने में वक्तृत्व कला विभाग अपने दायित्व का निर्वाह पूर्ण जिम्मेवारी स कर रहा था।

सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों एवं गतिविधियों के विस्तार के कारण सभा भवन का स्थान छोटा लगने लग गया था। सभा भवन की लीज का समय भी समाप्त होने के कारण नये स्थान की आवश्यकता तीव्रता से अनुभव हो रही थी। समाज के उत्साही, कर्मठ एवं सेवा भावी कार्यकर्ताओं ने १४२ए, क्रास स्ट्रीट में सभा कार्यालय का स्थानान्तरण कर द्विगुणित उत्साह से कार्य करना प्रारम्भ कर दिया।

अधिकांश जैन धर्मावलम्बी वाणिज्य-व्यवसाय एवं उद्योग-धंधों में रत रहने के कारण शिक्षा पर विशेष ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते थे एवं न आवश्यक ही मानते थे किन्तु समाज में एवं देश में शिक्षा के विस्तार के साथ शिक्षा का निरन्तर वर्चस्व बढ़ रहा था। अत: जैन समाज में भी शिक्षा के प्रति रुचि जाग्रत होने लगी। भावी पीढ़ी को सुनागरिक बनाने हेतु सुशिक्षित एवं सुसंस्कारित करना आवश्यक प्रतीत होने लगा अत: जैन समाज ने अपनी शिक्षण संस्थाएं स्थापित करना प्रारम्भ कर दिया था। सभा ने भी अपने बालक-बालिकाओं एवं भावी पीढ़ी को सुशिक्षित तथा सुसंस्कारिक बनाने हेतु विद्यालय की स्थापना करने का दृढ़ निश्चय किया। जिन उत्साही एवं कर्मठ महानुभावों ने इस निश्चय को मूर्त रूप प्रदान किया उसमें श्री फूसराजजी बच्छावत, श्री रावतमलजी बोथरा, श्री बच्छराजजी कांकरिया, श्री धनराजजी बैद, श्री गुलाबचन्दजी आंचलिया, श्री अभयराजजी बच्छावत, श्री तोलारामजी मिन्नी, श्री जानकीदासजी मिन्नी, श्री भैरोदानजी गोलछा, श्री नेमीचन्दजी बच्छावत, श्री नथमलजी दस्सानी, श्री किशनलालजी कांकरिया, श्री मुन्नालालजी रांका, श्री अजीतमलजी पारख, श्री बदनमलजी बांठिया, श्री जेठमलजी सेठिया प्रमुख थे।

जैन विद्यालय की स्थापना :

१७ मार्च सन् १९३४ की शुभ घड़ी में १४२ए, सुत्तापट्टी में विद्यालय का कार्यारम्भ हुआ। सर्वप्रथम सुयोग्य एवं उत्साही अध्यापक श्री बच्चन सिंहजी की नियुक्ति हुई। मात्र दो छात्रों को लेकर इस विद्यालय का श्रीगणेश हुआ जिसमें एक श्री सोहनलालजी गोलछा थे। छात्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होने लगी, फलस्वरूप दो शिक्षकों की नियुक्ति की गई। सभा की ओर से छात्रों को निशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती थी, यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है। खर्च स्वयं सभा ही वहन करती थी। दस माह तक सभा के उत्साही एवं कर्मठ कार्यकर्ता श्री अजीतमलजी पारख ने विद्यालय का मंत्रीत्व भार वहन कर विद्यालय की नींव को सुदृढ़ बनाया।

विद्यालय के संचालन के साथ-साथ सभा अन्य सामाजिक कार्यों में भी अनवरत हाथ बटाती थी। प्रकृति प्रकोप से पीड़ितों की सहायता में सभा कभी पीछे नहीं हटती थी। सन् १९३४ में बिहार में भीषण भूकम्प आया जिसने प्रलयंकर दृश्य उपस्थित कर दिया था। सभा इस अवसर पर कैसे चुप बैठ सकती थी। तत्काल श्री दीपचन्दजी सुखाणी के नेतृत्व में सभा के कर्मठ एवं सेवा भावी कार्यकर्ताओं का एक दल कम्बल, वस्त्र, भोजन आदि की सहायता सामग्री लेकर भूकम्प पीड़ित क्षेत्र में पहुँच गया एवं वहां सराहनीय सेवा कार्य किया। इस तरह सेवा का यह नया आयाम सभा के इतिहास के साथ जुड़ गया।

विद्यालय के बढ़ते हुए कार्य को देखकर सभा ने विद्यालय के पृथक पदाधिकारी निर्वाचित करने का निर्णय किया, तदनुसार निम्नलिखित पदाधिकारी निर्वाचित किये गये–

सभापति : श्री भैंरोदानजी गोलछा
मन्त्री : श्री मुन्नालालजी रांका
सहमन्त्री : श्री सूरजमलजी बच्छावत

दिनांक २० जनवरी १९३५ को आगामी वर्ष के लिए सभा के निम्न पदाधिकारियों का निर्वाचन किया गया–

विश्वस्त मंडल के सदस्य :

श्री मगनलाल कोठारी

श्री भैरादानजी गोलछा — श्री बदनमलजी बांठिया
श्री किशनलालजी कांकरिया — श्री नेमचन्दजी बोथरा

पदाधिकारीगण :

अध्यक्ष : श्री रावतमलजी बोथरा
मंत्री : श्री अजीतमलजी पारख
कोषाध्यक्ष : श्री लक्ष्मीनारायणजी बख्शी

दिनांक १७ जून १९३४ ई० को समाज के प्रमुख कार्यकर्ता श्री जुगराजजी सेठिया, बीकानेर एवं १६ सितम्बर १९३४ को श्री लक्ष्मीचन्दजी जैन ने विद्यालय का निरीक्षण किया एवं विद्यालय की कार्यप्रणाली तथा प्रगति पर पूर्ण सन्तोष व्यक्त किया। श्री सेठियाजी ने बच्चों को शुद्ध उच्चारण सिखाने पर जोर दिया एवं बालिकाओं की शिक्षा प्रारम्भ करने की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

नव निर्वाचित पदाधिकारियों की देख-रेख में सभा का कार्य निरन्तर विकासोन्मुख था। अपने उद्देश्यों के अनुरूप सभा के समस्त कार्यकर्ता उत्साहपूर्वक सामाजिक एवं लोकपयोगी कार्यों द्वारा सभा को यशस्वी बना रहे थे।

शोक सभा

महासती श्री इन्द्रकुंवरजी म०सा० के आकस्मिक देहावसान के समाचार से समाज में शोक के बादल छा गये। सभा ने

सुधारक एवं क्रान्तिकारी श्री आनन्दराज जी सुराणा आदि वन्धुओं ने सभा के क्रिया-कलापों तथा प्रवृत्तियों को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की एवं भूरि-भूरि प्रशंसा की।

श्री सुजानमलजी रांका ने अपनी मंत्री प्रतिवेदन में सभा की उपलब्धियों की चर्चा करते हुए सदस्यों को सामाजिक पुनर्निमाण, उन्नयन एवं विकास के लिए आह्वान किया तथा सभापति श्री मगनमलजी कोठारी, श्री उदयचन्द डागा, श्री अमरचन्द पुगलिया जैसे कर्मठ सेवाभावी, उदार महानुभावों के महद् योगदान के प्रति आभार व्यक्त किया।

उस समय जिन प्रेरक शब्दों में यह भावना व्यक्त की उसका उल्लेख यहाँ अत्यावश्यक है– "कई सदात्माओं ने सत्प्रयास और सत्प्रेरणा से इस पौधे को लगाया। कई उदार सज्जनों ने इस पौधे के वाल्यकाल में नानाविध उदारपूर्ण आर्थिक, मानसिक तथा शारीरिक श्रम और सहायता रूपी जल और प्राणवायु देकर इसे सींचा और पोसा। अब यह समस्त स्थानकवासी समाज का संगठन और सम्पत्ति है। अब इस वाल्यावस्था के वाद की कुमारावस्था में इसका पालन करना समस्त स्थानकवासी समाज का कर्तव्य और जिम्मेवारी है। अतएव आप समस्त महानुभावों से विनम्र प्रार्थना है कि मानसिक, शारीरिक वल एवं आर्थिक प्रत्येक प्रकार की सहायता प्रदान कर इस सभा को उन्नति के पथ पर अग्रसर होने में सहायक वनें।"

उक्त निवेदन और आह्वान से तत्कालीन स्थिति एवं वातावरण का मूल्यांकन किया जा सकता है। सभा के सदस्यों ने अथक परिश्रम, उत्साह, साहस तथा तन-मन-धन से सींचकर इस पौधे को अंकुरित किया ताकि भावी पीढ़ी इसे पल्लवित, पुष्पित कर इसके मधुर फलों का रसास्वादन करे।

प्रथम वर्ष के समापन पर द्वितीय वर्ष १९२९ ई० के कार्य संचालन हेतु नये पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी सदस्यों का निर्वाचन किया गया, जो निम्नलिखित है–

पदाधिकारी सन् १९२९-१९३०

सभापति	:	श्री वहादुरमलजी वांठिया
उपसभापति	:	श्री अमरचन्दजी पुगलिया
मंत्री	:	श्री प्रतापसिंह जी ढड्ढा
उपमंत्री	:	श्री अभयरायजी वच्छावत
कोषाध्यक्ष	:	श्री लक्ष्मीनारायणजी वख्शी
हिसाव परीक्षक	:	श्री शिवनाथमलजी भूरा
पुस्तकालयाध्यक्ष	:	श्री मुन्नालालजी रांका

कार्यकारिणी सदस्य

श्री धनपतसिंहजी कोठारी	श्री गुलाबचन्दजी आंचलिया
श्री बदनमलजी बांठिया	श्री जतनमलजी बच्छावत
श्री उदयचन्दजी डागा	श्री नेमीदासजी खुशाल
श्री भीमराजजी दुगड़	श्री देवचन्दजी सेठिया
श्री रूपचन्दजी बांठिया	श्री शिवनाथमलजी भूरा
श्री भैरूदानजी गोलछा	श्री फूसराजजी बच्छावत
श्री पूनमचन्दजी गोलछा	श्री जवाहरमलजी बांठिया
श्री धनराजजी बैद	श्री शिखरचन्दजी कोठारी

विश्वस्त मण्डल (प्रन्यासी)

श्री मगनमलजी कोठारी	श्री बदनमलजी बांठिया
श्री भैरूदानजी गोलछा	श्री श्रीचन्दजी बोथरा
श्री किशनलालजी कांकरिया	

सन् १९२९ ई० भारतीय इतिहास का एक ज्वलन्त दस्तावेज है। रावी नदी के किनारे लाहौर में पं० जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में सम्पन्न कांग्रेस अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने की उद्घोषणा की गई थी। पूर्ण स्वतंत्रता के इस शंखनाद से सम्पूर्ण भारतवर्ष में देश प्रेम, साहस, सेवा, उत्सर्ग, त्याग एवं बलिदान की ऐसी लहर उत्पन्न हुई जिससे शक्ति, हिंसा एवं दमन-चक्र के बल पर भारतीयों को दवाने वाले अंग्रेजों के दिल दहल उठे एवं वे समझ गये कि अब वे इस देश पर अधिक समय तक शासन नहीं कर सकेंगे।

विभिन्न सामाजिक संगठन एवं संस्थाएं भी अपने ढंग से देश की आजादी में अपना योगदान कर रही थी। जैन सभा के सदस्यों में भी अपूर्व उत्साह एवं जोश था। मंत्री श्री सुजानमलजी रांका के आह्वान से प्रभावित होकर सभा के सदस्यों ने सभा की प्रवृतियों के विस्तार के साथ लोक-कल्याणकारी कार्यों में भी रुचि लेना प्रारम्भ किया एवं ऐसे अनेक कार्य सम्पादित किये जिससे सभा अधिक लोकप्रिय हुई एवं यशस्वी बनी। सभा के नये पदाधिकारियों ने भी अपनी कर्मठता एवं सक्रियता से सभा की गतिविधियों को आगे बढ़ाया एवं ज्ञान-दर्शन चारित्र्य की अभिवृद्धि हेतु सतत प्रयत्नशील रहे।

धार्मिक क्रियाओं, उत्सवों तथा समारोहों के आयोजन अत्यन्त लगन, परिश्रम एवं अध्यवसाय से किये जाते जिसमें सभी जैन भाई-वहन वड़े उत्साह से भाग लेते थे।

विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद एवं वक्तव्य आयोजित कर समाज के युवा वर्ग का मानसिक तथा वौद्धिक विकास करने में वक्तृत्व कला विभाग अपने दायित्व का निर्वाह पूर्ण जिम्मेवारी स कर रहा था।

सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों एवं गतिविधियों के विस्तार के कारण सभा भवन का स्थान छोटा लगने लग गया था। सभा भवन की लीज का समय भी समाप्त होने के कारण नये स्थान की आवश्यकता तीव्रता से अनुभव हो रही थी। समाज के उत्साही, कर्मठ एवं सेवा भावी कार्यकर्ताओं ने १४२ए, क्रास स्ट्रीट में सभा कार्यालय का स्थानान्तरण कर द्विगुणित उत्साह से कार्य करना प्रारम्भ कर दिया।

अधिकांश जैन धर्मावलम्बी वाणिज्य-व्यवसाय एवं उद्योग-धंधों में रत रहने के कारण शिक्षा पर विशेष ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते थे एवं न आवश्यक ही मानते थे किन्तु समाज में एवं देश में शिक्षा के विस्तार के साथ शिक्षा का निरन्तर वर्चस्व बढ़ रहा था। अत: जैन समाज में भी शिक्षा के प्रति रुचि जाग्रत होने लगी। भावी पीढ़ी को सुनागरिक बनाने हेतु सुशिक्षित एवं सुसंस्कारित करना आवश्यक प्रतीत होने लगा अत: जैन समाज ने अपनी शिक्षण संस्थाएं स्थापित करना प्रारम्भ कर दिया था। सभा ने भी अपने बालक-बालिकाओं एवं भावी पीढ़ी को सुशिक्षित तथा सुसंस्कारिक बनाने हेतु विद्यालय की स्थापना करने का दृढ़ निश्चय किया। जिन उत्साही एवं कर्मठ महानुभावों ने इस निश्चय को मूर्त रूप प्रदान किया उसमें श्री फूसराजजी बच्छावत, श्री रावतमलजी बोथरा, श्री बच्छराजजी कांकरिया, श्री धनराजजी बैद, श्री गुलाबचन्दजी आंचलिया, श्री अभयराजजी बच्छावत, श्री तोलारामजी मिन्नी, श्री जानकीदासजी मिन्नी, श्री भैरोदानजी गोलछा, श्री नेमीचन्दजी बच्छावत, श्री नथमलजी दस्सानी, श्री किशनलालजी कांकरिया, श्री मुन्नालालजी रांका, श्री अजीतमलजी पारख, श्री बदनमलजी बांठिया, श्री जेठमलजी सेठिया प्रमुख थे।

जैन विद्यालय की स्थापना :

१७ मार्च सन् १९३४ की शुभ घड़ी में १४२ए, सुत्तापट्टी में विद्यालय का कार्यारम्भ हुआ। सर्वप्रथम सुयोग्य एवं उत्साही अध्यापक श्री बच्चन सिंहजी की नियुक्ति हुई। मात्र दो छात्रों को लेकर इस विद्यालय का श्रीगणेश हुआ जिसमें एक श्री सोहनलालजी गोलछा थे। छात्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होने लगी, फलस्वरूप दो शिक्षकों की नियुक्ति की गई। सभा की ओर से छात्रों को निशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती थी, यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है। खर्च स्वयं सभा ही वहन करती थी। दस माह तक सभा के उत्साही एवं कर्मठ कार्यकर्ता श्री अजीतमलजी पारख ने विद्यालय का मंत्रीत्त्व भार वहन कर विद्यालय की नींव को सुदृढ़ बनाया।

विद्यालय के संचालन के साथ-साथ सभा अन्य सामाजिक कार्यों में भी अनवरत हाथ बटाती थी। प्रकृति प्रकोप से पीड़ितों की सहायता में सभा कभी पीछे नहीं हटती थी। सन् १९३४ में बिहार में भीषण भूकम्प आया जिसने प्रलयंकर दृश्य उपस्थित कर दिया था। सभा इस अवसर पर कैसे चुप बैठ सकती थी। तत्काल श्री दीपचन्दजी सुखाणी के नेतृत्व में सभा के कर्मठ एवं सेवा भावी कार्यकर्ताओं का एक दल कम्बल, वस्त्र, भोजन आदि की सहायता सामग्री लेकर भूकम्प पीड़ित क्षेत्र में पहुँच गया एवं वहां सराहनीय सेवा कार्य किया। इस तरह सेवा का यह नया आयाम सभा के इतिहास के साथ जुड़ गया।

विद्यालय के बढ़ते हुए कार्य को देखकर सभा ने विद्यालय के पृथक पदाधिकारी निर्वाचित करने का निर्णय किया, तदनुसार निम्नलिखित पदाधिकारी निर्वाचित किये गये–

सभापति	:	श्री भैंरोदानजी गोलछा
मन्त्री	:	श्री मुन्नालालजी रांका
सहमन्त्री	:	श्री सूरजमलजी बच्छावत

दिनांक २० जनवरी १९३५ को आगामी वर्ष के लिए सभा के निम्न पदाधिकारियों का निर्वाचन किया गया–

विश्वस्त मंडल के सदस्य :

श्री मगनलाल कोठारी

श्री भैरादानजी गोलछा	श्री बदनमलजी बांठिया
श्री किशनलालजी कांकरिया	श्री नेमचन्दजी बोथरा

पदाधिकारीगण :

अध्यक्ष	:	श्री रावतमलजी बोथरा
मंत्री	:	श्री अजीतमलजी पारख
कोषाध्यक्ष	:	श्री लक्ष्मीनारायणजी बख्शी

दिनांक १७ जून १९३४ ई० को समाज के प्रमुख कार्यकर्ता श्री जुगराजजी सेठिया, बीकानेर एवं १६ सितम्बर १९३४ को श्री लक्ष्मीचन्दजी जैन ने विद्यालय का निरीक्षण किया एवं विद्यालय की कार्यप्रणाली तथा प्रगति पर पूर्ण सन्तोष व्यक्त किया। श्री सेठियाजी ने बच्चों को शुद्ध उच्चारण सिखाने पर जोर दिया एवं बालिकाओं की शिक्षा प्रारम्भ करने की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

नव निर्वाचित पदाधिकारियों की देख-रेख में सभा का कार्य निरन्तर विकासोन्मुख था। अपने उद्देश्यों के अनुरूप सभा के समस्त कार्यकर्ता उत्साहपूर्वक सामाजिक एवं लोकपयोगी कार्यों द्वारा सभा को यशस्वी बना रहे थे।

शोक सभा

महासती श्री इन्द्रकुंवरजी म०सा० के आकस्मिक देहावसान के समाचार से समाज में शोक के बादल छा गये। सभा ने

दिनांक १७-५-३६ को श्री बदनमलजी बांठिया के सभापतित्व में शोक सभा का आयोजन कर शोक प्रस्ताव पास किया एवं हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित कर स्वर्गस्थ आत्माा की चिरशांति की प्रार्थना की।

महासती जी के आकस्मिक स्वर्गवास की दुखद घटना को समाज अभी विस्मृत नहीं कर पाया था कि विद्यालय के अध्यक्ष एवं सभा के कर्मठ कार्यकर्ता श्री भैरोदानजी गोलछा का १६.८.३६ को स्वर्गवास हो गया। समाज को इससे घोर कष्ट हुआ। दिनांक १७.८.३६ को श्री रावतमलजी बोथरा की अध्यक्षता में एक शोक सभा का आयोजन कर सभा को इस दारुण दुख को धैर्यपूर्वक सहन करने एवं स्वर्गस्थ आत्मा को चिरशांति प्रदान करने की शासन देव से प्रार्थना की एवं एक शोक प्रस्ताव पारित किया।

दिनांक २३.८.३६ को सांवत्सारिक क्षमायाचना दिवस एवं जनरल सभा का आयोजन श्री बदनमलजी बांठिया की अध्यक्षता में किया गया जिसमें श्री रामलालजी बांठिया ने क्षमायाचना, श्री उमाशंकरजी शुक्ल ने सत्य, श्री हीरालालजी बच्छावत, श्री नगराजजी बरड़िया ने जैन धर्म के मूल सिद्धान्तों तथा श्री माणिकलालजी मिन्नी ने मातृपितृ-सेवा पर सारगर्भित एवं प्रेरक व्याख्यान दिये। तत्पश्चात् आगामी वर्ष के लिए पदाधिकारियों का निर्वाचन किया गया जो निम्नानुसार है-

सभा के पदाधिकारी

सभापति	:	श्री किशनलालजी कांकरिया
उपसभापति	:	श्री सौभाग्यमलजी डागा
मंत्री	:	श्री देवचन्दजी सेठिया
उपमंत्री	:	श्री फूसराजजी बच्छावत
सहायक मंत्री	:	श्री मोनलालजी पुगलिया
कोषाध्यक्ष	:	श्री अगरचन्दजी रामलालजी
हिसाब परीक्षक	:	श्री ईश्वरदासजी छल्लाणी
पुस्तकालयाध्यक्ष	:	श्री रामलालजी बांठिया
		श्री सूरजमलजी बच्छावत

ट्रस्टी

श्री बदनमलजी बांठिया	श्री अजीतमलजी पारख
श्री रावतमलजी बोथरा	श्री सोहनलालजी बांठिया

इसके अतिरिक्त कार्यकारिणी के १८ सदस्यों का भी निर्वाचन किया गया।

श्री भैरादानजी गोलदा के स्वर्गवास के कारण विद्यालय के अध्यक्ष पद का कार्यभार श्री किशनलालजी कांकरिया ने संभाला एवं मंत्री श्री मुन्नालालजी रांका के बनारस चले जाने के कारण श्री फूसराजजी बच्छावत ने मंत्री का पद ग्रहण किया एवं उपमंत्री श्री मोहनलालजी पुगलिया निर्वाचित किये गये।

निर्वाचित पदाधिकारियों ने अत्यन्त उत्साह, लगन एवं परिश्रम पूर्वक कार्यारम्भ किया। विद्यालय में छात्रों की निरन्तर वृद्धि के कारण और शिक्षकों की नियुक्ति की गई। व्ययभार के अधिक बढ़ जाने के कारण सभा के कार्यकर्ताओं ने इसकी पूर्ति के लिए समाज का आह्वान किया। समाज के सदस्यों ने अत्यन्त उत्साहपूर्वक आर्थिक योगदान देकर विद्यालय के रथ को विकास की ओर अग्रसर किया।

दिनांक १०.९.१९३७ को सभा के सदस्यों की एक बैठक श्री उदयचन्दजी डागा की अध्यक्षता आयोजित कर आगामी वर्ष हेतु निम्नांकित पदाधिकारियों का चुनाव किया गया–

सभा के पदाधिकारी : सन् १९३७-३८

अध्यक्ष	:	श्री किशनलालजी कांकरिया
उपाध्यक्ष	:	श्री चम्पालालजी बांठिया
मंत्री	:	श्री फूसराजजी बच्छावत
उपमंत्री	:	श्री प्रतापसिंहजी ढड्ढा
सहायक मंत्री	:	श्री देवचन्दजी बोथरा
कोषाध्यक्ष	:	श्री पारसमलजी कांकरिया
हिसाब परीक्षक	:	श्री रावतमलजी बोथरा
पुस्तकालयाध्यक्ष	:	श्री मालचन्दजी बरड़िया
सहपुस्तकालयाध्यक्ष	:	श्री मगनमलजी बांठिया

ट्रस्टी

श्री बदनमलजी बांठिया	श्री सोहनलालजी बांठिया
श्री अजीतमलजी पारख	श्री रावतमलजी बोथरा

कार्यकारिणी के अठारह सदस्यों का चुनाव भी इसी बैठक में सम्पन्न हुआ।

सभापति महोदय ने सभा के विकास की ओर बढ़ते चरणों से सबको परिचित कराया एवं स्थान की कमी की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए नये भवन के निर्माण पर विशेष बल दिया। उपस्थित कार्यकर्ताओं ने अध्यक्ष महोदय के निवेदन का समर्थन किया एवं पर्याप्त नवीन स्थान प्राप्त करने का संकल्प लिया।

सभा के कार्यकर्त्ता अपने कार्य में संलग्न थे कि दुर्भाग्य से सभा के ट्रस्टी एवं प्रमुख कार्यकर्त्ता श्री रावतमलजी बोथरा का ट्रेन दुर्घटना में आकस्मिक देहावसान हो गया। सर्वत्र शोक की घटाएँ घिर आई। इस रिक्त स्थान की पूर्ति श्री तोलारामजी बोथरा को ट्रस्टी निर्वाचित कर दी गई।

अत्यधिक व्यस्तता के कारण श्री पारसमलजी कांकरिया ने सभा के कोषाध्यक्ष का पद रिक्त कर दिया। उनके स्थान पर श्री जानकीदासजी मिन्नी कोषाध्यक्ष नियुक्त किये गये।

नव निर्वाचित पदाधिकारी पूर्ण मनोयोग से कार्यरत थे। धार्मिक पर्वो, उत्सवों को समारोह पूर्वक आयोजित कर समाज में चेतना की लहर उत्पन्न कर रहे थे। इसी समय द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ गया। महायुद्ध की विभीषिका एवं विपुल नरसंहार तथा संपत्ति की क्षति ने विश्व भर का दिल दहला दिया। कलकत्ता पर बम गिराये जाने के कारण कलकत्ता का समग्र जन-जीवन भी अस्तव्यस्त हो गया एवं भयग्रस्त नागरिक महानगर को रिक्त करने लगे। सभा के अनेक कार्यकर्ता भी स्वदेश चले गये।

ऐसी स्थिति में भी सभा के कर्मठ एवं उत्साही कार्यकर्ताओं के मन में सेवा-भावना की अहर्निश ज्योति जलती रही तथा सभा के सर्वांगीण विकास हेतु नवीन स्थान के निर्माण की योजना उनके दिलो-दिमाग में निरन्तर पनपती एवं विकसित होती रही। राजस्थान में रहते हुए भी उन उच्चाभिलाषी सेवाभावी कार्यकर्ताओं ने नवीन भवन के लिए एक लाख रुपये की धनराशि एकत्रित कर ली।

कलकत्ता की स्थिति में सुधार होते ही सभा के दूरदर्शी कार्यकर्ताओं ने सन् १९४५ में १८६ क्रास स्ट्रीट (मोहनलाल गली) का भवन नब्बे हजार (९०,०००) रुपयों में खरीद लिया। जिनके हौसले बुलन्द होते हैं, विपत्तियाँ उनका कुछ नहीं बिगड़ सकती– इसी उक्ति को चरितार्थ किया सभा के कार्यकर्त्ताओं ने, कर्णधारों ने।

सभा की प्रवृत्तियों का प्रगति-रथ पुन: वेग से दौड़ने लगा। सभा के कीर्तिस्तम्भ श्री जैन विद्यालय की विकास यात्रा पुन: वेग से प्रारम्भ हो गई। सभा और समाज के कार्यकर्त्ता अपरिमित उत्साह से शिक्षा, सेवा एवं साधना के कार्य में लीन हो गये।

सन् १९४२ के 'करो या मरो' एवं 'अंग्रेजों भारत छोड़ो'' आन्दोलन ने समस्त देश– आसेतु हिमाचल को उद्वेलित कर दिया था एवं देशवासी आजादी की अंतिम लड़ाई (अहिंसात्मक आन्दोलन, सत्याग्रह) के लिए मैदान में कूद पड़े थे। अंग्रेजों के बर्बर एवं पाशविक उपाय भी निरर्थक सिद्ध हो चुके थे। उन्होंने समझ लिया था कि अब उनके दिन पूरे हो चुके है एवं उन्हें अपने बोरिया-बिस्तर बांधकर इस देश से जाना ही होगा।

जन जागरण की अभूतपूर्व लहर ने अंग्रेजों को यह देश छोड़ने के लिए बाध्य कर दिया एवं उन्हें भारत को स्वतंत्रता प्रदान करने की घोषणा करनी पड़ी।

१५ अगस्त १९४७ को भारत का आकाश स्वतन्त्रता के स्वर्णिम सूर्य की आभा में नहा उठा। परतंत्रता की बेड़ियाँ छिन्न-विछिन्न हो गई। आबाल-युवा-वृद्ध नर नारी हर्षोत्फुल्ल हो नाचने लगे। अनेक त्याग एवं बलिदानों से प्राप्त इस आजादी की स्वर्णिम आभा में देश के नवनिर्माण के लिए देशवासियों का मानस कृत संकल्प था।

सभा के कार्यकर्ताओं में भी अपरिमित जोश था। विद्यालय के पुनरूद्घाटन का निश्चय किया गया एवं १५ फरवरी १९४८ को वयोवृद्ध कार्यकर्ता श्री गोविन्दरामजी भंसाली के कर कमलों से यह कार्य सम्पन्न हुआ। प्रधान अतिथि के रूप में जैन समाज के कर्मठ कार्यकर्ता शिक्षा प्रेमी श्री छोगमलजी चोपड़ा इस समारोह में उपस्थित थे। श्री चौपड़ा जी ने सभा की प्रवृद्धमान प्रवृत्तियों की प्रशंसा करते हुए कार्यकर्ताओं को साधुवाद दिया।

विद्यालय की गौरव वृद्धि के साथ छात्र-संख्या निरन्तर बढ़ रही थी। वर्तमान स्थान अत्यन्त अपर्याप्त था अत: सभा की प्रवृतियों के सुचारु संचालन, विकास एवं उन्नयन हेतु नई जगह खरीदने का निश्चय किया गया। दिनांक ११.९.५५ रविवार को श्री छगनमलजी वैद के सभापतित्व में सम्पन्न बैठक में १८६ क्रास स्ट्रीट के मकान को बेचकर १८डी, सुकियस लेन स्थित जगह को लेने का निश्चय किया।

इस स्थान का स्वामीत्व श्री मनमोहन भाई के पास था। सभा के कार्यकर्ताओं के प्रस्ताव को सुनकर उदार हृदय श्री मनमोहन भाई ने समाज एवं लोककल्याण हेतु इस जमीन को सभा के हाथ विक्रय करने का ही संकल्प व्यक्त नहीं किया अपितु पचास हजार रुपये बाद में लेने का आश्वासन भी दिया। किन्तु इस स्थान के भी अपर्याप्त होने के कारण पास वाली जमीन को लेने का निश्चय सभा के कार्यकर्ताओं ने किया।

इस जमीन को श्री मगनमलजी पारख ने क्रय कर लेने पर भी सभा की लोकोपयोगी प्रवृत्तियों के सुचारु संचालन हेतु अत्यन्त उदारता एवं सहृदयता पूर्वक सभा के लिए छोड़ दिया। सभा ने १७ कट्ठा जमीन को खरीद लिया एवं श्री मनमोहन भाई तथा मगनमलजी पारख के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त किया। इस कार्य के सम्पादन में श्री प्रभुदास भाई हेमानी का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ तदर्थ सभा ने अपनी कृतज्ञता व्यक्त की।

नवीन भवन का शिलान्यास :

१५ अगस्त १९५६ की मंगलमय घड़ी, पावन वेला में सभा के नये भवन का शिलान्यास सभा के उत्साही उपाध्यक्ष श्री दीपचन्दजी कांकरिया के कर कमलों से समाज एंव सभा के

कर्मठ कार्यकर्ताओं, कर्णधारों एवं गणमान्य सज्जनों की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। इसमें श्री पारसमलजी कांकरिया मालेगांव, श्री लालचन्दजी ड्ढा मद्रास, दानवीर सेठ श्री सोहनलालजी दुगड़ की उपस्थिति उल्लेखनीय है। अत्यन्त प्रेरक और ऐतिहासिक दृश्य था। कार्यकर्ताओं का मन-मयूर अपने आदर्शों को साकार होते देखकर नाच रहा था। हर्षोल्लास एवं प्रेरणा का सागर ही उद्वेलित था।

किसी भी अच्छे कार्य में विघ्न आना स्वाभाविक है। सभा के सामने अर्थाभव का संकट मुंह बांये खड़ा था किन्तु दृढ़ व्रतियों के सामने भीषण संकट भी नतमस्तक हो जाते हैं– "अन्य हैं जो लौटते दे शूल को संकल्प सारे" वे व्यक्ति और होते हैं जो बाधाओं रूपी शूल के सामने अपने संकल्पों का परित्याग कर अपने लक्ष्य से विचलित हो जाते हैं एवं कार्य परित्याग कर लौट जाते हैं।

कार्यकर्त्ताओं के अथक प्रयास, अध्यवसाय एवं दृढ़ संकल्प के आगे बाधाओं का पर्वत कभी टिक नहीं सकता। समाज के दानी-मानी सज्जनों के सहयोग से निर्माण कार्य आगे बढ़ रहा था। महिलाओं ने भी आगे बढ़कर इसमें योगदान दिया। सभा भवन में दो मंजिल तक का कार्य पूर्ण हो गया। विद्यालय का स्थानान्तरण कर इस नये भवन में प्रारम्भ किया गया। आठवीं कक्षा तक छात्रों को शिक्षा प्रदान करने की सुविधा इसमें उपलब्ध हो गई।

अर्थाभाव को दूर करने के लिए सभा ने अपने पुराने मकान को बेचने का महत्वपूर्ण निर्णय दिनांक ११.९.५५ की बैठक में लिया एवं दिनांक १८.४.५८ को "मेसर्स धनराज सेठिया एण्ड कम्पनी" को अस्सी हजार रुपये में विक्रय कर दिया। इसी समय कार्यकर्ताओं के प्रयास से "हितकारिणी संस्था बीकानेर" से भी पचास हजार रुपये का ऋण प्राप्त हो गया। इस प्राप्त राशि से भवन निर्माण का कार्य समाप्त हो गया। दो तल्ले पर "सभागार" के निर्माण ने भवन का महत्व बहुत बढ़ा दिया। यही भव्य सभागार सभा एवं अन्य समाजों के धार्मिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक समारोहों के आयोजन का हृदय स्थल है।

इसी भवन में २ अप्रैल १९५८ को बहुद्देश्यीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के रूप में श्री जैन विद्यालय में शिक्षण प्रारम्भ हुआ। ११ अप्रैल १९५८ को दीर्घ अनुभवी, कुशल प्रशासक एवं सफल शिक्षक श्री रामानन्द तिवारी की प्रधानाचार्य के रूप में नियुक्ति की गई। इनके कुशल नेतृत्व में इस विद्यालय ने कलकत्ता के विद्यालयों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर सभा को यशस्वी बनाया है। पश्चिम वंग शिक्षा परिषद से मान्यता प्राप्त कर यह विद्यालय उत्तरोत्तर विकास की ओर अग्रसर होने लगा। ४ मई ५८ को विद्यालय की नवीन कार्यकारिणी का गठन किया गया जिसमें निम्नलिखित पदाधिकारी थे–

अध्यक्ष : श्री फूसराज बच्छावत
मंत्री : श्री सरदारमल कांकरिया

प्रधानाचार्य एवं शिक्षक सदस्यों सहित १३ महानुभावों की इस समिति के संरक्षण में विद्यालय के सर्वांगीण विकास की आधार शिला रखी गई। सन् १९६० में मान्यता प्राप्त कर सरकार के निर्देशानुसार प्रबन्ध समिति का पुनर्निवाचन हुआ जिसके निम्नलिखित सदस्य थे–

अध्यक्ष : श्री फूसराज बच्छावत
मंत्री : श्री सरदारमल कांकरिया
सहायक मंत्री एवं प्रधानाचार्य : श्री रामानन्द तिवारी

सदस्य : श्री युवराज मुकीम, श्री महेन्द्रकुमार जैन, श्री मोतीलाल मालू, श्री माणक बच्छावत, श्री रिखबदास भंसाली

शिक्षक सदस्य : श्री कन्हैयालाल गुप्त,
श्री कामेश्वरप्रसाद वर्मा

उच्च शिक्षण एवं अनुशासन के कारण विद्यालय अत्यनत लोकप्रिय हो गया तथा विद्यार्थियों की संख्या में इतनी वृद्धि हो गई कि फिर स्थानाभाव की समस्या खड़ी हो गई। किन्तु 'साहु ट्रस्ट' से श्री शांतिप्रसादजी जैन ने चवालीस हजार रुपयों का अनुदान देकर न कवेल इस समस्या का समाधान किया अपितु सभा के उद्योगी कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ाकर अपने उत्कृष्ट शिक्षा प्रेम का परिचय दिया। सभा श्री शांतिप्रसादजी जैन एवं 'साहु ट्रस्ट' की चिर आभारी है।

सभा की प्रवृत्तियों का द्रुत विस्तार हो रहा था एवं कार्यकर्ताओं के अथक प्रयास से सभा बहुआयामी रूप धारण कर अपनी कीर्ति पताका फहरा रही थी। दिनांक २०.३.१९६० को सभा की बैठक में मंत्री श्री सूरजमलजी बच्छावत ने अपने प्रतिवेदन में सभा की प्रगति का विवरण प्रस्तुत किया एवं कार्यकर्ताओं के अथक परिश्रम तथा सहयोग की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

श्री अखिल भारतवर्षीय स्थानकवासी जैन कान्फरेन्स के अध्यक्ष श्री विनयचन्द भाई जौहरी एवं जनरल सेक्रेटरी श्री आनन्दराजजी सुराणा ने सभा की प्रवृत्तियों का अवलोकन किया तथा सभा की समाजोपयोगी एवं लोकोपयोगी बहुआयामी प्रवृत्तियों की महती प्रशंसा की। इस बैठक में सभा के नवीन पदाधिकारियों का चुनाव किया गया, जो निम्न प्रकारेण है–

अध्यक्ष : श्री छगनलालजी बैद
मंत्री : श्री हरखचंदजी कांकरिया
कोषाध्यक्ष : श्री मोतीलालजी मालू
हिसाब परीक्षक : श्री बी०आर० भंसाली

ट्रस्टी :

श्री छगनलालजी बैद — श्री अजीतमलजी पारख
श्री पारसमलजी कांकरिया — श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया

इस बैठक में सभा के अदम्य सहयोगी स्व० श्री किशनलालजी कांकरिया एवं स्व० श्री सोहनलाल बांठिया की असाधारण सेवाओं का स्मरण करते हुए उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की एवं स्वर्गस्थ आत्मा की चिरशांति की प्रार्थना की।

दिनांक १०.१.१९६५ को आयोजित सभा की साधारण बैठक में निम्नप्रकारेण चुनाव हुआ–

अध्यक्ष : श्री फूसराज बच्छावत
उपाध्यक्ष : श्री पारसमल कांकरिया
मंत्री : श्री कुन्दनमल बैद
सहमंत्री : श्री रिखबदास भंसाली
कोषाध्यक्ष : श्री मोतीलाल मालू

सभा की विद्यालय तथा अन्य प्रवत्तियाँ अपने लोककल्याणकारी कदमों से सभा की कीर्ति कौमुदी को चतुर्दिक व्याप्त करने में सतत संलग्न थी। पदाधिकारियों के सुयोग्य नेतृत्व एवं कार्यकर्ताओं की निष्काम सेवा के कारण सभा अन्य समाजों में अत्यन्त लोकप्रियता प्राप्त कर रही थी।

श्री जैन चिकित्सालय एवं श्री जैन भोजनालय की स्थापना :

रोगी एवं पीड़ित जनों की सेवा के लिए सभा ने मई सन् १९६८ में श्री जैन चिकित्सालय की स्थापना की तथा कम आय वाले जैन भाइयों को नितान्त कम शुल्क में शुद्ध एवं सात्विक आहार सुलभ कराने के लिए १ फरवरी १९७० को श्री फूसराजजी कांकरिया के कर-कमलों से श्री जैन भोजनालय का उद्घाटन कराया। मात्र ४५/- मासिक शुल्क निर्धारित किया गया।

सभा के उत्साही एवं युवामंत्री श्री रिखवदास भंसाली ने सन् १९७० के अपने मंत्री प्रतिवेदन में सभा की प्रवृतियों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हुए कहा- "आज यह संस्था आपके सामने शिक्षाप्रसार के लिए विद्यालय, रोगनिदान के लिए चिकित्सालय एवं स्वधर्मी बन्धुओं के सहयोगार्थ भोजनालय चला रही है। हमें गर्व है कि अपनी इस संस्था द्वारा देश एवं समाज की सेवा का कार्य विकासोन्मुख है।" यह प्रतिवेदन स्वयं सभा की समाजोपयोगी एवं लोककल्याणकारी विकासोन्मुख प्रवृत्तियों का प्रामाणिक दस्तावेज है।

होनहार एवं मेघावी छात्र को सभा की ओर से छात्रवृत्ति भी प्रदान करना आरम्भ किया ताकि प्रतिभा सम्पन्न छात्रों की प्रतिभा साधनों के अभाव में अकाल कुंठित न हो एवं देश को उसका लाभ मिल सके, श्री विश्रामकुमार पिछोलिया (धर्मपाल जैन) को रु० ५०/- मासिक की छात्रवृत्ति प्रदान की गई।

जीवदया कोष एवं स्वधर्मी सहायता कोष की स्थापना :

जीवदया कोष, स्वधर्मी सहायता कोष आदि की स्थापना कर सभा ने स्वधर्मी भाइयों की सेवा के साथ प्राणिमात्र की सेवा का व्रत ग्रहण किया। ज्ञान प्रचार के लिए शास्त्रोद्धार समिति राजकोट एवं गुलाबपुरा स्वाध्याय संघ को सभा ने आर्थिक अनुदान प्रदान कर अपनी उदारता का परिचय तो दिया ही साथ ही समग्र देश को अपनी सेवा, सहयोग के क्षेत्र में सम्मिलित कर चहुँमुखी विकास की ओर कदम बढ़ाया।

दिनांक २५.१.६६ को आमंत्रित सभा की साधारण बैठक में आगामी कार्यकाल के लिए पदाधिकारियों का चुनाव निम्न प्रकारेण हुआ–

अध्यक्ष एवं ट्रस्टी : श्री पारसमल कांकरिया
उपाध्यक्ष एवं ट्रस्टी : श्री कन्हैयालाल मालू
ट्रस्टी : श्री छगनलाल बैद
ट्रस्टी : श्री जयचन्दलाल रामपुरिया
संयुक्त मंत्री : श्री झंवरलाल बैद
कोषाध्यक्ष : श्री हेमराज खजांची

इसके अतिरक्त १४ महानुभावों को सदस्य के रूप में निर्वाचित किया गया।

सभा की प्रवृत्तियों के अत्यधिक विस्तार के कारण यह निश्चय किया गया कि विभिन्न प्रवृत्तियों के सुचारू संचालन एवं विकास हेतु उपसमितियाँ गठित की जाय। दिनांक ३१ जनवरी ७१ को सभा की साधारण बैठक में पदाधिकारियों के निर्वाचन के साथ उपसमितियाँ भी गठित की गई जो निम्नानुसार हैं–

अध्यक्ष : श्री कन्हैयालाल मालू
उपाध्यक्ष : श्री भीखमचन्द भंसाली
मंत्री : श्री रिखवदास भंसाली
सहमंत्री : श्री झंवरलाल वैद
कोषाध्यक्ष : श्री भंवरलाल वैद

१३ गणमान्य सदस्य कार्यकारिणी के निर्वाचित किये गये। विश्वस्त मंडल में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

हिसाब परीक्षक के रूप में श्री बी०आर० भंसाली की पुनर्नियुक्ति की गई।

श्री जैन चिकित्सालय उपसमिति :

संयोजक श्री सूरजमल बच्छावत

सदस्य

श्री झंवरलाल कोठारी	श्री फागमल अब्भाणी
श्री भीखमचन्द भंसाली	श्री सुरेन्द्रकुमार बांठिया

श्री जैन भोजनालय उपसमिति :

संयोजक श्री कन्हैयालाल मालू

सदस्य

श्री भंवरलाल कर्णावट	श्री फूसराज बच्छावत
श्री मांगीलाल मिन्नी	श्री शांतिलाल डागा
श्री भंवरलाल बैद	श्री माणकचंद रामपुरिया
श्री सरदारमल कांकरिया	श्री हरखचन्द कांकरिया

प्रचार विभाग

संयोजक : श्री शांतिलाल मुकीम

सदस्य

श्री बुलाकीचन्द कोठारी	श्री भंवरलाल बोथरा
श्री झँवरलाल बैद	श्री नीलमचन्द कुम्भट

निर्धारित अवधि में चुनाव करना सभा की एक स्वस्थ परम्परा रही है। कार्यकर्ताओं के उत्साहवर्द्धन, स्वस्थ स्पर्धा तथा प्रवृत्ति विकास के लिए भी यह अत्यावश्यक है। सामाजिक संस्थाएँ किसी के हाथ की कठपुतली न बने, तदर्थ भी चुनाव आवश्यक है।

सन् १९७१ के पश्चात् दिनांक १ जुलाई ७३ को सम्पन्न सभा की साधारण बैठक में पदाधिकारियों का निर्वाचन किया गया। सभा के बढ़ते कार्यभार के कारण कार्यकारिणी सदस्यों की संख्या बढ़ाकर इकतीस करने का भी निश्चय किया तथा ७ सदस्यों का कोरम रखा गया।

विश्वस्त मंडल के उन्हीं सदस्यो का पुनर्निवाचन किया गया, जो पूर्व में थे। पदाधिकारियों का चुनाव निम्नप्रकारेण हुआ-

अध्यक्ष	:	श्री फूसराज कांकरिया
उपाध्यक्ष	:	श्री देवराज गोलछा
मंत्री	:	श्री रिखबदास भंसाली
सहमंत्री	:	श्री झंवरलाल बैद
कोषाध्यक्ष	:	श्री भंवरलाल करणावट

इसके अतिरिक्त २२ सदस्य कार्यकारिणी के लिए चुने गये। प्रचार विभाग के कार्य को अधिक व्यवस्थित एवं सुनियोजित करने हेतु श्री केवलचन्द कांकरिया के संयोजकत्व में छह सदस्यों की समिति गठित की गई। सात सदस्यीय भोजनालय समिति के संयोजक श्री कन्हैयालाल मालू निर्वाचित किये गये।

इस बैठक में जीवदयाकोष को बढ़ाने एंव जीवदया के कार्यों में विस्तार हेतु प्रस्तुत श्री सरदारमल कांकरिया के सुझाव को सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया। श्री फूसराज बच्छावत ने सभा की सदस्य संख्या एवं सेवाकार्यों में वृद्धि हेतु सदस्यों से अनुरोध किया। सभा की एक विशेष बैठक आयोजित कर सभा के कर्मठ एवं निस्वार्थ सेवा-भावी कार्यकर्ता श्री फूसराजजी बच्छावत को उनकी सेवाओं के उपलक्षय में अभिनन्दन पत्र समर्पित किया गया।

सन् १६-३-१९७५ को सम्पन्न सभा की साधारण बैठक में पूर्व पदाधिकारियों का ही पुनर्निर्वाचन किया गया। विकासोन्मुख प्रवृतियों के कार्य भार को संभालने के लिए मंत्री के सहयोग हेतु सहमंत्री की संख्या बढ़कर दो कर दी गई। श्री झंवरलालजी बैद के साथ श्री जयचन्दलालजी मिन्नी का निर्वाचन सहमंत्री के रूप में हुआ। श्री जैन भोजनालय की आठ सदस्यीय समिति के संयोजक श्री पारसमल भूरट बनाये गये।

सभा के सदस्यों ने अनुभव किया कि समाज के महानुभाव विवाह शादी के समय बर्तनों की कठिनाई बहुधा अनुभव करते हैं। इस कमी को पूरी करने के लिए सभा ने निश्चय किया कि एक बर्तन वस्तु भंडार की स्थापना की जाय जिनमें पर्याप्त बर्तनों का प्रबन्ध किया जाय ताकि सदस्यों को विवाह शादी में बर्तनों का अभाव न हो। श्री भँवरलाल करणावट के संयोजकत्व एवं श्री भंवरलालजी दस्साणी के सहसंयोजकत्व में पाँच सदस्यीय एक समिति इस हेतु गठित की गई। पुस्तकालय एवं वाचनालय विभाग की त्रिसदस्यीय समिति के संयोजक श्री पारसमल सुराना नियुक्त किये गये। श्री भवन विस्तार एवं निर्माण की ९ सदस्यीय समिति के संयोजक श्री सूरजमल बच्छावत बनाये गये।

युवापीढ़ी को सद्धर्म एवं सदाचरण युक्त बनाने के लिए धर्म सभा की स्थापना की तीव्रता से अनुभूति की गई। समय-समय पर धर्म सभा विभिन्न आयोजनों द्वारा युवकों में धर्म, अध्यात्म एवं सदाचार का प्रचार-प्रसार करे, इस पर विशेष बल दिया गया। श्री सरदारमल कांकरिया दस सदस्यीय धर्म सभा

सभा के विकास एवं उन्नयन में अथक सहयोग देने तथा निरन्तर सेवा प्रदान करने के उपलक्ष में सभा ने श्री सूरजमल जी बच्छावत को स्वर्ण जयन्ती के इस अवसर पर अभिनन्दन पत्र प्रदान कर सम्मानित किया।

इस स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के माध्यम से सभा की समाज तथा राष्ट्रोपयोगी एवं लोक-कल्याणकारी प्रवृत्तियों का परिचय पाकर समग्र देश से आगत अतिथियों ने अत्यन्त प्रसन्नता व्यक्त की एवं कार्यकर्ताओं की भूयसी प्रशंसा करते हुए साधुवाद दिया।

जिस भव्य एवं अंगूठे ढंग से यह स्वर्ण जयन्ती समारोह सम्पन्न हुआ उसकी सुखद स्मृति दर्शकों के हृदय-पटल पर चिरस्थायी रहेगी।

महिला उत्थान समिति की स्थापना :

स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर सभा ने महिलाओं के उत्थान की दिशा में अपने कदम बढ़ाने का निश्चय किया। नारी जाति भी पुरुष के कदम के साथ कदम मिलाकर हर दिशा में अग्रसर हो रही थी अत: महिला उत्थान समिति की स्थापना कर सभा ने समाज के प्रगति-रथ को तीव्रगामी बनाने के निश्चय को मूर्त रूप प्रदान किया। इस समिति की बागडोर श्रीमती गायत्रीदेवी कांकरिया को संयोजिका बनाकर उनके सुदृढ़ हाथों से सौंपी गई। महिलाओं को स्वावलम्बी बनाने के लिए श्री शिल्प शिक्षा केन्द्र भी प्रारंभ किया गया।

दिनांक २७ जनवरी १९८० को श्री रिखबदास भंसाली की अध्यक्षता में सभा की साधारण बैठक आयोजित की गई जिसमें ट्रस्टी, अध्यक्ष, उपाध्यक्ष मंत्री एवं कोषाध्यक्ष के रूप में विगत पदाधिकारियों को ही निर्वाचित किया गया। सहमंत्री के रूप में श्री निर्मलकुमार नाहर के स्थान पर श्री रिधकरण बोथरा निर्वाचित किये गये। श्री जैन भोजनालय समिति, श्री भवन विस्तार एवं निर्माण समिति, श्री जैन बर्तन भण्डार समिति, श्री मानवसेवा सांस्कृतिक कार्यक्रम समिति, श्री धर्म सभा समिति के संयोजक के रूप में क्रमश श्री भंवरलाल दस्साणी, श्री सूरजमल बच्छावत, श्री जतनलाल सेठिया, श्री शांतिलाल मिन्नी, श्री बच्छराज अव्भाणी निर्वाचित किये गये।

गरीब छात्रों को उच्च स्तरीय शिक्षा ग्रहण करने एवं अध्ययन में सुविधा प्रदान करने के लिए सभा ने श्री जैन बुक बैंक की स्थापना का सुसंकल्प किया एवं श्री मूलचन्दजी मुकीम के संयोजकत्व में सात सदस्यीय श्री जैन बुक बैंक समिति का निर्माण कर अपने संकल्प को रूपायित किया।

दिनांक ११ जनवरी १९८१ को श्री रिखबदास भंसाली की अध्यक्षता में सम्पन्न बैठक में श्री जतनलाल सेठिया की अस्वस्थता के कारण भी भंवरलाल सेठिया श्री जैन बर्तन वस्तु भंडार के संयोजक नियुक्त किये गये। इस बैठक में १५ मार्च १९८१ को स्नेह मिलन आयोजित करने का निर्णय कर श्री प्रेमचन्द मुकीम के संयोजकत्व में दस सदस्यीय समिति का गठन किया गया। स्नेह मिलन के पूर्व कलकत्ता स्थित स्थानकवासी जैन भाइयों की जनगणना का कार्यपूर्ण करने हेतु स्नेह मिलन समिति को कार्यभार सौंपा गया।

दिनांक १३ सितम्बर ८१ को आयोजित बैठक में लगभग उन्हीं पदाधिकारियों का चुनाव किया गया जो पूर्व से चले आ रहे थे। तीन समितियों– श्री जैन भोजनालय, श्री जैन बर्तन वस्तु भंडार एवं श्री भवन निर्माण एवं विकास समिति के संयोजक क्रमश: सर्वश्री भंवरलाल कर्णावट, लूणकरण भंडारी एवं प्रेमचन्द मुकीम निर्वाचित घोषित किये गये। श्री महिला उत्थान समिति में श्रीमती सरला बच्छावत को सहसंयोजिका बनाया गया।

दिनांक ३१ जुलाई १९८३ को साधारण सभा की बैठक में श्री झंवरलाल बैद उपाध्यक्ष निर्वाचित किये गये। श्री जयचन्दलाल मिन्नी को मंत्री पद का कार्यभार सौंपा गया। अन्य स्थानों के लिए पूर्व पदाधिकारियों को ही निर्वाचित घोषित किया गया। हिसाब परीक्षक के रूप में श्री के० एस० बोथरा एण्ड कम्पनी की नियुक्ति की गई। श्री भंवरलाल कर्णावट सहमंत्री बनाये गये।

श्री जैन विद्यालय सभा की प्रमुख प्रवृत्ति है। यह सभा का वह कीर्तिस्तम्भ, आलोकस्तम्भ है जिसके उच्च शैक्षणिक स्तर, दृढ़ अनुशासन एवं शतप्रतिशत परीक्षाफल के कारण सभा की कीर्ति कौमुदी चतुर्दिक व्याप्त हुई है। सन् १९३४ ई० में स्थापित श्री जैन विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती मनाने का निश्चय किया गया। विद्यालय परिवार के हर्ष का पार नहीं था।

श्री जैन विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती :

दिनांक ८ जनवरी १९८४ से १५ जनवरी तक सप्ताह व्यापी विभिनन कार्यक्रम आयोजित करने का निर्णय किया गया। जो कार्यक्रम आयोजित किये गये उनमें श्री सुनील दुगड़ स्मृति अन्त: विद्यालय वॉलीबाल प्रतियोगिता, अन्त: विद्यालय भक्तामर स्तोत्र एवं रामचरित मानस सस्वर पाठ प्रतियोगिता, कला-विज्ञान एवं भूगोल प्रदर्शनी, अखिल भारतीय जैन पत्रकार सम्मेलन, अखिल भारतीय जैन पत्र-पत्रिका प्रदर्शनी, श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ एवं महिला समिति की प्रवन्धकारिणी समिति की वैठक, श्रीमद् जैनाचार्य स्मृति व्याख्यान माला, स्व० श्री प्रदीपकुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार, श्री अखिल भारतीय जैन विद्वत परिषद आदि प्रमुख थे।

कई आयोजनों के अखिल भारतीय स्तर के होने के कारण समग्र देश से विद्वान, मनीषी, चिन्तक, पत्रकार, प्रबुद्ध जन एवं स्थानकवासी जैन समाज के गणमान्य महानुभाव, कार्यकर्त्ता आदि इनमें सम्मिलित हुए।

१५ जनवरी को प्रमुख महोत्सव कलकत्ता के सुप्रसिद्ध नेताजी सुभाष वातानुकूलित इन्डोर स्टेडियम में दस हजार दर्शकों की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती का यह अभूतपूर्व दृश्य था। किसी विद्यालय ने अपनी स्वर्ण जयन्ती इतने विशाल पैमाने पर आयोजित की हो, यह स्मरण नहीं आता है।

सभा एवं विद्यालय परिवार प्राणपण से इसे सफल बनाने में लगा था। महीनों अहर्निश कार्य करने के परिणाम स्वरूप सफलता अवश्यम्भावी थी। कलकत्ता की शैक्षणिक संस्थाओं एवं देशभर से आये महानुभावों के मन-मस्तिष्क पर इन आयोजनों की ऐसी छाप अंकित हुई है जो कभी मिट नहीं सकती एवं जिसकी सुवास से वर्षो तक अन्तरंग महकता रहेगा। सभा एवं विद्यालय परिवार की ओर से कार्यकर्ताओं का सम्मान भी इस अवसर पर किया गया।

इस अवसर पर विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती स्मारिका भी प्रकाशित की गई। चिन्तकों, विद्वानों के आलेखों से समृद्ध यह स्मारिका मुद्रण-साज-सज्जा आदि की दृष्टि से भी इतनी सुन्दर बन पड़ी है कि सभा एवं विद्यालय की कीर्ति को चार चाँद लग गये।

विद्यालय के छात्रों के स्वास्थ्य को दृष्टिगत रखते हुए सभा ने एक केन्टीन स्थापित करने का निश्चय किया ताकि छात्रों को विश्राम के समय शुद्ध एवं सात्विक ख़ाद्य सामग्री उपलब्ध हो सके एवं बाहर के खोमचे वालों से उन्हें कुछ भी न खरीदना पड़े। स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के अवसर पर श्री सरदारमलजी कांकरिया की सुपुत्री श्रीमती कान्ता चौरड़िया, मद्रास ने केन्टीन का उद्घाटन किया। इसमें शुद्ध एवं सात्विक खाद्य सामग्री सुलभ मूल्य पर बालकों को उपलब्ध करायी जाती है। सम्प्रति केन्टीन समिति के संयोजक श्री मोहनलाल भंसाली हैं। समय-समय पर सभा एवं विद्यालय के अधिकारी खाद्य सामग्री का निरीक्षण करते रहते हैं। इससे २५०० छात्र लाभान्वित होते हैं।

सुख और दुख, उत्थान और पतन, रात और दिन प्रकाश एवं अन्धकार प्रकृति का अटल नियम है। एक के बाद दूसरे का अवतरण अवश्यंभावी है।

श्री फूसराज बच्छावत का स्वर्गवास :

स्वर्ण जयन्ती की अभूतपूर्व सफलता की खुमारी अभी मन-मस्तिष्क से उतरी नहीं थी कि सभा एवं विद्यालय के प्राण श्री फूसराजजी बच्छावत का २४ जुलाई १९८४ को अल्प बीमारी के पश्चात् स्वर्गवास हो गया। सभा, विद्यालय परिवार एवं समाज पर यह महान् वज्रपात था। सभी शोकाकुल एवं मर्माहत थे।

श्री जैन विद्यालय के मानद मंत्री श्री सरदारमल कांकरिया एवं श्री रिखबचन्द भंसाली ने बच्छावत परिवार से अनुरोध किया कि श्री फूसराजजी बच्छावत का अंतिम संस्कार सार्वजनिक रूप से होना चाहिये क्योंकि उनका समग्र जीवन शिक्षा, सेवा एवं साधना के लिए समर्पित था। श्री कांकरियाजी एवं श्री भंसालीजी का यह अनुरोध स्वीकार कर बच्छावत परिवार ने बच्छावत जी का पार्थिव शरीर समाज को सौंप दिया। श्री बच्छावत जी का पार्थिव शरीर दिनांक २५ जुलाई की प्रात:काल विद्यालय प्रांगण में विशेष रूप से तैयार मंच पर रखा गया। कलकत्ता के जैन-अजैन भाइयों एवं जैन समाज के सभी सम्प्रदायों तथा जैन-अजैन शिक्षण संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने पार्थिव शरीर पर फूल मालाएँ समर्पित कर श्रद्धांजलि अर्पित की। श्री जैन विद्यालय एवं सभा परिवार के सभी सदस्यों ने अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि दी। विद्यालय के बैण्ड वादक छात्रों द्वारा बिगुल पर अंतिम धुन बजाने पर पार्थिव शरीर की अंतिम यात्रा प्रारम्भ हुई। अत्यन्त करुण दृश्य था वह, उपस्थित समुदाय की आँखों से अश्रु बह चले। नीमतल्ला घाट पर रामधुन के बीच पार्थिव शरीर अग्नि को समर्पित किया गया। देखते ही देखते उस भौतिक शरीर को चिता की अग्नि ने भस्मीभूत कर दिया। पंचभूतों का यह मिश्रण पंच तत्वों में विलीन हो गया। शेष बची उनकी यश: काया जो अजर-अमर रहेगी। श्री बच्छावत ने मृत्यु शय्या पर रहते हुए भी मरणोपरान्त नैत्र दान की घोषणा कर न केवल अपने जीवन को सार्थक बनाया अपितु अनुकरणीय आदर्श की नींव भी डाली।

सन् १९८५ की निर्वाचन सभा में श्री माणकचन्दजी रामपुरिया के स्थान पर श्री सूरजमलजी बच्छावत सभा अध्यक्ष, श्री झंवरलालजी वैद के स्थान पर श्री भंवरलालजी वैद उपाध्यक्ष एवं श्री भंवरलालजी कर्णावट के स्थान पर श्री पारसमलजी भूरट श्री जैन भोजनालय के संयोजक निर्वाचित किये गये। अन्य पदाधिकारियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

दिनांक ९ मई १९८७ को रवीन्द्र जयन्ती के पावन अवसर पर श्री जैन विद्यालय में 'कम्प्यूटर' केन्द्र का उद्घाटन कर सभा ने समय की मांग को पूरा किया एवं विद्यालय ने इक्कीसवी सदी में प्रवेश किया। इसमें विद्यालय के छात्रों के अलावा बाहर के छात्रों को निर्धारित शुल्क में कम्प्यूटर प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। विद्यालय के भूतपूर्व छात्र श्री दिलीप सरावगी एवं उनके अग्रज श्री बजरंग जैन के सहयोग से यह

केन्द्र आरम्भ किया गया। सभा उनके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती है।

श्री पारसमलजी कांकरिया का अभिनन्दन एवं अल्पावधि में स्वर्गवास :

श्री फूसराजजी बछावत के स्वर्गवास से उत्पन्न घाव अभी पूरा भर ही नहीं पाया था कि दिनांक २० अक्टूबर १९८७ की मध्य रात्रि में धन तेरस को सभा के ट्रस्टी एवं पूर्व अध्यक्ष श्री पारसमलजी कांकरिया का स्वर्गवास हो गया। यह समाचार विजली की तरह फैल गया एवं जिसने सुना, वह हतप्रभ रह गया। अभी साढ़े तीन माह पूर्व ५ जुलाई १९८७ को सभा की ओर से सभागार में श्री पारसमलजी कांकरिया का उनकी अगणित सेवाओं के उपलक्ष में रजत पट्ट पर उत्कीर्ण अभिनन्दन पत्र समर्पित कर सम्मानित किया ही था कि साढ़े तीन माह की अल्पावधि के बाद ही देहावसान हो गया।

सरल, सौम्य, सदैव हंसमुख रहनेवाले, निरभिमानी, सात्विक श्री पारसमलजी के निधन पर समग्र समाज शोकाकुल हो गया। श्री वच्छावत जी के पश्चात् श्री कांकरियाजी के स्वर्गवास से समाज की अपूरणीय क्षति हुई है।

किसी व्यक्ति, समाज या देश के जीवन का तात्पर्य होता है उसकी गतिशीलता। यदि जीवन में गति नहीं तो वह जीवित नहीं कहा जा सकता, किन्तु इस गतिशीलता का रचनात्मक होना नितान्त आवश्यक है। यदि यह कहा जाय कि विध्वंसात्मक गति और भी अधिक खतरनाक होती है तो कतई अत्युक्ति नहीं। रचनात्मक कार्य ही वास्तव में मनुष्य को, समाज को या देश को गति प्रदान करता है।

ऐसे ही रचनात्मक कार्यकलापों से जुड़ी श्री श्वे० स्था० जैन सभा आज अपने ७० वसन्त पार कर चुकी है। इसके पहले सन् १९८८ ई० में इसने अपनी हीरक जयन्ती मनायी है जिसकी अमिट छाप अभी भी मस्तिष्क में ताजातरीन है। हीरक जयन्ती वर्ष २८ मार्च १९८८ को श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता के वार्षिकोत्सव के साथ प्रारम्भ हुई थी किन्तु इसका विधिवत् उद्घाटन साहित्य मनीषी श्री कन्हैयालाल सेठिया ने १८-९-८८ को दीप प्रज्ज्वलित कर किया। २४-९-८८ को अंत:विद्यालय भक्तामर-रामायण पाठ प्रतियोगिता का श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता में आयोजन किया गया।

इस अवसर पर विद्यालय के वालचर दल की ओर से केम्प फायर का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन पश्चिम कलकत्ता के स्काउट कमिश्नर श्री पुष्करलाल केंडिया ने किया। हीरक जयन्ती का मुख्य समारोह श्री घनश्याम दास विड़ला सभागार में २४.१२.८८ को आयोजित किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में श्री गणपतराजजी वोहरा, श्री नवमलजी फिरोदिया, डॉ० सागरमलजी जैन प्रभृति गणमान्य व्यक्तियों ने मंचस्थ हो आयोजन की शोभा बढ़ाई। इसी समारोह में सभा के कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री कन्हैयालालजी मालू एवं श्री पूरणमलजी कांकरिया का उनकी अमूल्य सेवाओं के लिए सभा की ओर से अभिनन्दन किया गया। श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की हीरक जयन्ती एवं पार्श्वनाथ शोध विद्यापीठ, वाराणसी के स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में तीन सत्रों में विद्वत् गोष्ठी का आयोजन २५.१२.८८ को किया गया, जिनमें १५ जैन विद्वानों के शोध-पत्र पढ़े गए।

इसी अवसर पर कूचबिहार एवं मुर्शिदाबाद में सभा की ओर नि:शुल्क नेत्र चिकित्सा तथा शान्तिनिकेतन में नि:शुल्क विकलांग शिविरों का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया। हीरक जयन्ती में भाग लेनेवाले छात्रों को २६.१.८९ को एवं इसे सफलतापूर्वक सम्पन्न करने में सहयोग देनेवाले शिक्षकों को २८.१.८९ को सभा ने सम्मानित किया।

सभा की नयी कार्यकारिणी का चुनाव १७.१२.८९ को किया गया जिसमें नये पदाधिकारियों का निर्वाचन निम्न प्रकार से हुआ–

ट्रस्टी

श्री छगनलाल बैद	श्री कन्हैयालाल मालू
श्री जयचंदलाल रामपुरिया	श्री सरदारमल कांकरिया

सभापति	:	श्री भंवरलाल बैद
उपसभापति	:	श्री भंवरलाल कर्णावट
मंत्री	:	श्री रिधकरण बोथरा
सह-मंत्री	:	श्री मोहनलाल भंसाली
सह-मंत्री	:	श्री सुभाष वच्छावत
कोषाध्यक्ष	:	श्री भंवरलाल दस्साणी

सदस्य

श्री सूरजमल बच्छावत	श्री शिखरचंद मिन्नी
श्री प्रेमचन्द मुकीम	श्री माणकचंद रामपुरिया
श्री प्रकाशचंद कोठारी	श्री झंवरलाल कोठारी
श्री रिखवदास भंसाली	श्री लच्छीराम पुगलिया
श्री मेघराज जैन	श्री जयचन्दलाल मिन्नी
श्री देवराज मेहता	श्री सुन्दरलाल दुगड़
श्री जसकरण वोथरा	श्री पारसमल भूरट
श्री सुभाष कांकरिया	श्री पूरणमल कांकरिया
श्री शान्तिलाल जैन	श्री कंवरलाल मालू
श्री वालचन्द भूरा	श्री वच्छराज अभाणी

श्री अशोक मिन्नी

साहित्य मनीषी श्री कन्हैयालालजी सेठिया की अध्यक्षता में ८.४.९० को ज्ञानमंच में सभा की हीरक जयन्ती का समापन समारोह सम्पन्न हुआ, जिसमें प्रधान अतिथि के रूप में श्री गुमानमलजी लोढ़ा संसद सदस्य विद्यमान थे।

अधिकांश बालक-बालिकाएं या महिलाएं औपचारिक शिक्षा पूर्ण कर पाने में अपने को असमर्थ महसूस करते हैं और उनकी शिक्षा अधूरी रह जाती है। इसी को दृष्टिगत कर भारत सरकार ने मुक्त राष्ट्रीय विद्यालय (National open School) प्रस्थापित किया है। जब हमारे पदाधिकारियों को इसके विषय में ज्ञात हुआ तो उन्होंने भी इस योजना को क्रियान्वित किया और सभा की ओर से नेशनल ओपन स्कूल सन् १९९० में प्रारम्भ किया गया जिसके प्रथम मंत्री के रूप में श्री मोहनलालजी भंसाली मनोनीत किए गए।

श्री जैन विद्यालय, हावड़ा :

हावड़ा जैसे पिछड़े अंचल में जो मुख्यत: औद्योगिक अंचल के रूप में जाना जाता है, जहां साधारण परिवार के बच्चों को शैक्षणिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए कलकत्ता की ओर भागना पड़ता था और वहां भी उन्हें प्रवेश पाने में कठिनाई का सामना करना पड़ता था, एक अच्छे विद्यालय की आवश्यकता इस क्षेत्र में कई वर्षो से महसूस की जा रही थी। सभा ने इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए सन् १९८९ में एक जमीन वनबिहारी बोस रोड में क्रय की और सन् १९९१ में विद्यालय भवन का निर्माण कार्य प्रारम्भ किया। दो वर्ष जमीन के कागजात वगैरह ठीक कराने एवं भवन का नक्शा पास कराने में निकल गए। भूमि पूजन १६.५.९१ को श्री सूरजमल बच्छावत, श्री सरदारमल कांकरिया एवं श्रीमती फूलकुंवर कांकरिया के करकमलों से सम्पन्न हुआ। भवन के निर्माण कार्य का भार श्री सरदारमलजी कांकरिया को दिया गया जिन्होंने अथक परिश्रम एवं लगन से इस कार्य को सम्पन्न किया।

२९ अप्रैल १९९२ को प्रथम प्रधानाध्यापिका के रूप में श्रीमती ओल्गा घोष की नियुक्ति की गई। ४ मई १९९२ को विधिवत नवकार मंत्र का जाप, हवन पूजन विधि से सम्पन्न कर विद्यालय का शुभारम्भ किया गया। इस हवन में रिखबदास भंसाली, श्री सरदारमल कांकरिया आदि सजोड़े सम्मिलित हुए। विद्यालय का प्रथम सत्र २५ जून १९९२ को छात्रों एवं छात्राओं के लिए प्रारम्भ किया। प्रथम कक्षा एक से कक्षा ७ तक लगभग १८०० छात्र-छात्राओं से यह प्रारम्भ किया गया। इस अवसर पर आयोजित समारोह में साहित्य मनीषी श्री कन्हैयालाल सेठिया, पंजाब जैन बिरादरी के वरिष्ठ कार्यकर्त्ता श्री जगदीशरायजी, जैन, प्रसिद्ध समासेवी श्री पुष्करलाल केडिया एवं दिल्ली जैन समाज के अग्रणी कार्यकर्त्ता श्री रिखबचंद जैन ने सम्मिलित होकर इसकी शोभा बढ़ाई एवं शिक्षा के क्षेत्र में किए गए कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा कर सभा को साधुवाद दिया और प०बंगाल माध्यमिक शिक्षा परिषद द्वारा मान्यता प्राप्त करने के लिए प्रयास प्रारम्भ कर दिया गया। इस कार्य में निरन्तर लगे रहने से सन् १९९४ में विद्यालय को मान्यता भी मिल गई। फिर सन् १९९६ में प० बंगाल उच्तर माध्यमिक शिक्षा पर्षत् द्वारा भी मान्यता मिली। इस प्रकार आज हावड़ा में श्री जैन विद्यालय फॉर गर्ल्स एवं श्री जैन विद्यालय फॉर ब्वायज के रूप में करीब ४२०० छात्र-छात्राओं को शिक्षा दे रहे हैं। विद्यालय को मान्यता दिलाने में श्री राधेश्याम मिश्र का परिश्रम एवं सहयोग प्रशंसनीय रहा।

सभा की कार्यकारिणी समिति की २५.७.९२ की बैठक में श्री कन्हैयालाजी मालू ने साग्रह प्रस्ताव रखा कि श्री सरदारमल जी कांकरिया एवं श्री रिखबदासजी भंसाली का अभिनन्दन किया जाय। जिसका अनुमोदन श्री सूरजमलजी बच्छावत ने जोरदार ढंग से किया। सभा के अध्यक्ष पद पर रहने के कारण श्री रिखबदासजी भंसाली अपने नाम के लिए कतई सहमत नहीं हुए। विशेष आग्रह पर किसी प्रकार श्री सरदारमलजी कांकरिया को इसके लिए राजी किया गया। अभिनन्दन समारोह को सफल बनाने हेतु श्री भंवरलाल बैद को संयोजक बनाया गया, किन्तु कुछ अपरिहार्य कारणों से यह कार्य आगे न बढ़ सका। फिर श्री तनसुखराजजी डागा को यह कार्य भार सौंपा गया। तदनन्तर इस कार्य को गति मिली।

२१.२.९३ की कार्यकारिणी समिति की बैठक में श्री सोहनलाल गोलछा की अपत्ति पर विशेष चर्चा हुई और श्री सुन्दरलालजी दूगड़ के इस निर्णय को मान लिया गया कि सभा की हीरक जयन्ती के अवसर पर प्रकाशित स्मारिका में प्रथम सभापति के रूप में श्री भैरूदानजी गोलछा का नाम अवश्य होना चाहिये और जब कभी इस का पुर्नप्रकाशन हो तो आवश्यक संशोधन कर लिया जाय।

श्री सरदारमलजी कांकरिया का अभिनन्दन समारोह त्रिदिवसीय कार्यक्रम के रूप में सम्पन्न हुआ। जिसमें विद्वत् गोष्ठी, अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ की कार्यकारिणी समिति की बैठक आदि आयोजन किया गया। इस अवसर पर 'शिक्षा व सेवा के चार दशक' नामक स्मारिका का लोकार्पण किया गया। इस स्मारिका को सफल बनाने में श्री गणेश ललवानी, श्री भूपराज जैन एवं श्री पद्मचन्द नाहटा के अकथनीय सहयोग का उल्लेख अपेक्षित है।

अभिनन्दन समारोह के अवसर पर सभा के अध्यक्ष श्री रिखवदासजी भंसाली ने एक अस्पताल के निर्माण का विचार लोगों के समक्ष रखा जिसके लिए तत्क्षण श्री हरखचंद कांकरिया ने ५१ लाख रुपया देने की घोषणा की। इस घोषणा से सभी सदस्यों का हृदय उल्लास से भर गया एवं तत्काल शाल ओढ़कर श्री हरखचंदजी कांकरिया का सम्मान किया गया।

समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ता एवं समाज के पूर्व अध्यक्ष एवं ट्रस्टी श्री कन्हैयालाल मालू के दिनांक ७.४.९३ को असामयिक स्वर्गवास से सभा को गहरा आघात लगा। सभा ने दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए चिरशान्ति की प्रार्थना की।

दिनांक २४.४.९३ को सभा को कार्यकारिणी समिति की वैठक में श्री जैन हास्पिटल एण्ड रिसर्च सेंटर के निर्माण हेतु श्री सरदारमल कांकरिया को संयोजक एवं श्री बच्छराज अभाणी को सह-संयोजक मनोनीत किया गया।

जुलाई'९३ में श्री जैन बुक बैंक के माध्यम से माध्यमिक, उच्च माध्यमिक एवं कालेज स्तर के बंगाल के ग्रामीण अंचल के जरूरतमंद छात्रों को करीव १००० पाठ्य-पुस्तकों के सेट का नि:शुल्क विरतण किया गया।

सभा के हितैषी डॉ० नरेन्द्र भानावत के ७.११.९३ को असामयिक निधन से भी सभा के सदस्य अत्यन्त मर्माहत हुए। डॉ० भानावत जैन दर्शन के उत्कृष्ट विद्वान थे एवं सभा के आमंत्रण पर अनेक वार वह अपनी धर्मपत्नी सहित कलकत्ता आए तथा अने विद्वतापूर्ण प्रवचनों से सभी को प्रभावित किया। उन्हें हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए स्वर्गस्थ आत्मा की चिरशान्ति की कामना की।

२१.१२.९३ को सभा ने स्वावलम्वन योजनान्तर्गत महिलाओं को स्वावलम्बी वनाने हेतु प्रथम चरण में ५० सिलाई मशीनों के वितरण का निर्णय लिया।

सभा की साधारण वैठक दिनांक ७.११.९३ को सम्पन्न हुई जिसमें कार्यकारिणी समिति के पदाधिकारियों का मनोनयन निम्न प्रकार से हुआ–

ट्रस्टी

श्री माणकचन्द रामपुरिया	श्री जयचंदलाल रामपुरिया
श्री सरदारमल कांकरिया	श्री भंवरलाल वैद

सभापति	:	श्री रिखवदास भंसाली
उपसभापति	:	श्री भंवरलाल कर्णावट
मंत्री	:	श्री रिधकरण वोथरा
सह-मंत्री	:	श्री कंवरलाल मालू
सह-मंत्री	:	श्री सुभाष वच्छावत
कोषाध्यक्ष	:	श्री भंवरलाल दस्साणी

सदस्य

श्री सूरजमल वच्छावत	श्री माणकचन्द रामपुरिया
श्री जयचन्दलाल मिन्नी	श्री शिखरचन्द मिन्नी
श्री बालचन्द भूरा	श्री बच्छराज अभाणी
श्री केवलचंद कांकरिया	श्री पारसमल भूरट
श्री मोहनलाल भंसाली	श्री प्रेमचंद मुकीम
श्री शान्तिलाल जैन	श्री सुन्दरलाल दुगड़
श्री अनूपचन्द सेठिया	श्री शान्तिलाल डागा
श्री मेघराज जैन	श्री सुभाषचन्द कांकरिया
श्री जयचन्दलाल मुकिम	श्री प्रकाश कोठारी
श्री उगमराज मेहता	श्री गोपालचंद भूरा

श्री अशोक बच्छावत

विगत ३५ वर्षों से अपनी लगन, सूझबूझ एवं कर्मठता से सेवा प्रदान करते हुए प्रधानाचार्य श्री कन्हैयालाल गुप्त, श्री जैन विद्यालय से दिनांक २५.११.९३ को सेवा निवृत्त हुए। उनके विदाई समोराह का भव्य आयोजन किया गया और उन्हें विद्यालय एवं सभा की ओर से भावभीनी बिदाई दी गई।

श्रीमती विमला मिन्नी की अप्रतिम सेवाओं एवं लोक कल्याणकारी कार्यों के लिए सभा की ओर से १९.१.९४ को उनका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया।

इसी वर्ष दिनांक ६.२.९४ को बोलपुर, शान्तिनिकेतन में नि:शुल्क चक्षु शल्य चिकित्सा शिविर का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया।

सेवा भावना से अभिप्रेरित सभा ने अस्पताल निर्माण का जो संकल्प दिनांक ४ अप्रैल ९३ को श्री सरदारमलजी कांकरिया के अभिनन्दन समारोह के अवसर पर लिया था उसके फलीभूत होने का समय आ गया था। इस वांछित अस्पताल का भूमि पूजन हावड़ा के बंगाल जूट मिल के परिसर ४९३बी, जी०टी० रोड में २८.२.९४ को सम्पन्न हुआ। यह पूजन विधिपूर्वक प० शिवनारायणजी के पौरहित्य में श्री सरदारमल कांकरिया, श्री जयकुमार कांकरिया, श्री सुरेन्द्रकुमार बांठिया, श्री पद्मचन्द नाहटा एवं ५१ अन्य सदस्यों द्वारा सजोड़े सम्पन्न हुआ।

श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता में श्री विमला मिन्नी के आर्थिक सहयोग से विमला मिन्नी कम्प्यूटर केन्द्र की स्थापना की गई। यह उनका वच्चों के प्रति असीम प्रेम को दर्शाता है। कैंसर जैसे असाध्य रोग से पीड़ित होने पर भी वालकों के प्रति उनका यह वात्सल्य भाव अद्भुत था।

जैन दर्शन के उद्भट विद्वान श्री गणेश ललवानी हालांकि जैन भवन में कार्यरत थे किन्तु इस सभा से उनका गहरा लगाव था एवं समय-समय पर उनसे सभा को भरपूर सहयोग मिलता रहा। ४ जनवरी'९४ को उनका पार्थिव शरीर चिर निद्रा में लीन हो गया। इस समाचार से सभा के पदाधिकारीगण एवं सदस्यगण को गहरा आघात लगा व उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

सन् १९९४ श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता का हीरक जयन्ती वर्ष था। इसके उपलक्ष्य में अखिल भारतीय स्तर पर मुद्रा एवं डाक टिकट संग्रह प्रतियोगिता ''जैनपेक्स'९४'' का आयोजन किया गया। इसके संयोजक श्री इन्द्रकुमार कठोतिया थे। स्काउट मेल एवं कबूतर डाक प्रणाली प्रदर्शन इसका मुख्य आकर्षण रहा। इस अवसर पर माननीय मंत्री श्री सुभाष चक्रवर्ती, प० बं० सरकार एवं श्री रिखबदास भंसाली ने कबूतरों को डाक के साथ उड़ाकर इस आयोजन का उद्घाटन किया।

विद्यालय की हीरक जयन्ती का मुख्य समारोह २५ दिसम्बर १९९४ को नेताजी इन्डोर स्टेडियम में आयोजित किया गया। इसमें विशिष्ट अतिथि के रूप में मुख्य चुनाव आयुक्त श्री टी०एन० शेषन ने पधार कर समारोह की गरिमा को चार चांद लगाए। इसी अवसर पर प्रमुख अतिथि संसद सदस्या श्रीमती रेणुका चौधरी की उपस्थिति ने समारोह को सफल बनाने में अहम् भूमिका निभायी।

सेवा की मूर्ति, बच्चों के प्रति अपार प्रेम रखनेवाली श्रीमती विमला मिन्नी का २४.४.९५ को असामयिक निधन हो गया। कैंसर से पीड़ित होते हुए भी इन्होंने जो सेवाएँ सभा को अर्पित की उसके लिए सभा सदैव उनकी आभारी रहेगी। सभा ने हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित कर स्वर्गस्थ आत्मा की चिरशान्ति की कामना की।

जुलाई'९५ में श्री जैन बुक बैंक के माध्यम से ग्राम्यंचलों के लगभग १३०० छात्र-छात्राओं को माध्यमिक स्तर की पाठ्य-पुस्तकें प्रदान की गई।

स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत ६० महिलाओं को सिलाई मशीनों का वितरण किया गया, जो इस सभा के सेवा परक कार्यों की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। ग्रामीण अंचलों में स्वरोजगार योजना एवं विद्यालय भवन निर्माण योजना का निर्णय भी सभा ने किया।

सभा ने निहायत असहाय, वृद्ध एवं विकलांग व्यक्तियों को मुफ्त राशन महीने में दो बार वितरित करने का निश्चय किया और प्रथम चरण में ऐसे ६० व्यक्तियों को चयन कर दिनांक १५ अगस्त '९५ से राशन देना प्रारम्भ किया गया। इस कार्य की महत्ता को प्रसिद्ध उद्योगपति एवं समाजसेवी श्री राधेश्यामजी तुलस्यान ने समझा एवं इस कार्य हेतु ५ लाख रूपए प्रदान किये जो उनकी परदु:खकारता का श्रेष्ठ उदाहरण है। हम इनके अत्यन्त आभारी हैं। सम्प्रति इस योजना के अन्तर्गत १०० व्यक्तियों को राशन दिया जा रहा है। अभी भी ऐसे बहुत व्यक्ति हैं जो इस सहायता की अपेक्षा रखते हैं। हमारा विश्वास है कि दानी-मानी महानुभाव आगे बढ़कर इस योजना को सहयोग प्रदान करेंगे।

अत्यन्त दु:ख की बात है कि सभा के परम निस्पृही, सेवाभावी, निष्ठावान कार्यकर्त्ता सभा के अध्यक्ष श्री रिखबदास भंसाली की धर्मपत्नी श्रीमती भंवरीदेवी भंसाली का असामयिक स्वर्गवास हो गया। सभा के लिए यह एक जबर्दस्त आघात था। अभी इस आघात से सभा उबर भी न पायी थी कि सभा के पूर्व अध्यक्ष एवं ट्रस्टी श्री छगनलालजी बैद एवं सभा के मंत्री अन्यतम सेवाभावी एवं कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री रिधकरण बोथरा के पूज्य पिताजी श्री तोलारामजी बोथरा का गंगाशहर में देहावसान हो गया। सभा को इससे मार्मिक पीड़ा हुई।

कहा जाता है कि संकट और पीड़ा कभी अकेले नहीं आते। वे कई रूपों में एक साथ मनुष्य को घेरते हैं। श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता के अत्यन्त लोकप्रिय कुशल प्रशासक एवं राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत पूर्व प्रधानाध्यापक श्री रामानन्द तिवारी के आकस्मिक स्वर्गवास ने सभा को झकझोर दिया। सभा इन दिवंगत आत्माओं की चिरशान्ति के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

दिनांक २६.११.९५ को आयोजित साधारण बैठक में सर्वसम्मति से सभा के पदाधिकारियों का निर्वाचन किया गया जो निम्न प्रकार है–

ट्रस्टी

श्री सरदारमल कांकरिया	श्री माणकचंद रामपुरिया
श्री जयचंदलाल मिन्नी	श्री भंवरलाल कर्णावट

अध्यक्ष	:	श्री रिखवदास भंसाली
उपाध्यक्ष	:	श्री बच्छराज अभाणी
मंत्री	:	श्री रिधकरण बोथरा
सह-मंत्री	:	श्री कंवरललाल मालू
सह-मंत्री	:	श्री अशोक मिन्नी
कोषाध्यक्ष	:	श्री केशरीचन्द गेलड़ा

सदस्य

श्री सूरजमल बच्छावत	श्री जयचन्दलाल रामपुरिया
श्री भंवरलाल बैद	श्री भंवरलाल दस्साणी
श्री शिखरचन्द मिन्नी	श्री बालचन्द भूरा

श्री मोहनलाल भंसाली	श्री किशनलाल बोथरा
श्री पारसमल भूरट	श्री सुन्दरलाल दुगड़
श्री सोहनराज सिंघवी	श्री सुरेन्द्र बांठिया
श्री सुभाष बच्छावत	श्री गोपालचन्द भूरा
श्री विनोदचन्द कांकरिया	श्री शान्तिलाल डागा
श्री कमलसिंह कोठारी	श्री कन्हैयालाल लूणिया
श्री किशोर कोठारी	श्री अरुण मालू

श्री सोहनलाल गोलछा

सभा के द्वारा हालांकि शिक्षा के क्षेत्र में श्री जैन विद्यालय, हावड़ा की स्थापना करने के बाद भी ऐसा अनुभव हो रहा था कि अभी और विद्यालयों की स्थापना की नितान्त आवश्यकता है। इस दृष्टि से दक्षिण कलकत्ता के चक्रबेरिया रोड पर समस्त संसाधनों से युक्त एक विद्यालय के निर्माण हेतु जमीन क्रय करने के लिए अग्रिम धनराशि जमीन के मालिक को दी गई। विश्वास है कि निकट भविष्य में ही भवन निर्माण का कार्य प्रारम्भ हो जाएगा।

कलकत्ता उच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश श्री के० सी० अग्रवाल का स्थानान्तरण होने के कारण सभा की ओर से १३ जनवरी'९६ को श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता में बिदाई समारोह का आयोजन किया गया और उन्हें भावभीनी बिदाई दी गई।

सभा ने ग्रामांचलों में शिक्षा विस्तार की योजना के अन्तर्गत डायमंड हारबर के पास सागरमाधोपुर गांव में नये विद्यालय की नींव रखी और एक गहन नलकूप जो ११०० फुट नीचे तक गया है, का उद्‌घाटन किया श्रीमती करुणा बांठिया ने। नक्सलबाड़ी गांव में भी ऐसे ही विद्यालय के निर्माण की आधारशिला रखी गई।

श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता के भूगोल के वरिष्ठ व्याखाता श्री जयराम सिंह की अभी एक वर्ष पूर्व ही श्री जैन विद्यालय फॉर ब्वायज, हावड़ा के प्रधानाध्याक पद पर नियुक्ति की गई थी एवं उनके सतत् मार्ग निर्देशन में यह विद्यालय आगे बढ़ रहा था कि दैवयोग से स्वल्प बीमारी के बाद उनका देहावसान हो गया। यह एक अत्यन्त मार्मिक घटना थी एवं अनपेक्षित भी। सभा और विद्यालय ने हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित कर स्वर्गस्थ आत्मा की चिर-शान्ति की कामना की।

श्री जैन हास्पिटल एवं रिसर्च सेन्टर का कार्य द्रुतगति से आगे बढ़ रहा था। इसमें कार्यकर्त्ताओं एवं दानदाताओं का सहयोग तो उल्लेखनीय है ही, श्री राधेश्याम मिश्र का अथक श्रम भी नितान्त प्रशंसनीय है। श्री जैन विद्यालय, हावड़ा को माध्यमिक परिषद एवं उच्चतर माध्यमिक संसद से मान्यता दिलाने में उन्होंने जो कार्य किया, वह उनकी निष्ठा एवं सेवा-भावना का परिचायक है। श्री जैन हास्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर के निर्माण कार्य में जिन सेवाभावी महानुभावों का सहयोग मिला है, उनमें श्री सुशील डागा, श्री पुखराज कोठारी एवं श्री कवल देव के सहयोग का उल्लेख करना भी अन्यथा न होगा।

सभा का यह सेवा रथ द्रुतगति से आगे बढ़ रहा था कि भारत की आजादी का स्वर्ण जयंती वर्ष आ पहुंचा। अनेक बलिदानों, कष्ट-कठिनाइयों से प्राप्त आजादी की स्वर्ण जयन्ती की यह बेला कोटि-कोटि जनमानस को प्रफुल्लित कर रही थी और शहीदों की याद में नतमस्तक भी। ऐसे महत्वपूर्ण क्षण में दिनांक १४ अगस्त, १९९७ को आजादी के स्वर्ण ज़यंती के पूर्व दिवस पर हास्पिटल परिसर में श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ की भव्य प्रतिमा की प्रतिष्ठा सभा के निष्पृही सेवाभावी उपाध्यक्ष श्री बच्छराज अभाणी के परिवार के सहयोग से की गई। प्रतिष्ठा विधिपूर्वक कराने का भार उठाया प्रसिद्ध समाजसेवी श्री ज्ञानचन्द लूणावत ने।

१५ अगस्त १९९७ आजादी का स्वर्ण जयन्ती दिवस भारतीय इतिहास का एक अनमोल दिवस। अस्पताल का निर्माण कार्य लगभग समाप्ति पर था और परिसर में श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ की प्रतिमा की प्रतिष्ठा भी हो गई थी। अत: ऐसे शुभ एवं पावन दिवस पर श्री हरखचन्द कांकरिया आउटडोर विभाग के उद्‌घाटन का समारोह आयोजित किया गया। वस्तुत: मानव सेवा का यह अप्रतिम प्रकल्प ऐसे शुभ दिवस पर लोकार्पित किया जा रहा था जो जन-जन के हृदय पटल पर सदैव अंकित रहेगा। यह उद्‌घाटन समारोह प० बं० सरकार के वरिष्ठ मंत्री श्री सुभाष चक्रवर्ती, श्री प्रलय तालुकदार, हावड़ा नगर निगम के अध्यक्ष श्री स्वदेशी चक्रवर्ती, प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्त्ता श्री बादल बोस एवं श्री नरेश दासगुप्ता के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। जिसमें समस्त जैन समाज की जानी-मानी हस्तियां, दानदाता एवं सभा के कार्यकर्त्तागण अपनी समुपस्थिति से इस समारोह को भव्यता प्रदान कर रहे थे। इस विभाग का उद्‌घाटन किया इसके अर्थसहयोगी, लब्धप्रतिष्ठ उद्योगपति एवं समाजसेवी श्री हरखचंद कांकरिया ने अपने कर कमलों से। इस अवसर पर दीप प्रज्ज्वलित किया हावड़ा नगर निगम के अध्यक्ष श्री स्वदेश चक्रवर्ती ने। इसी अवसर पर एक्स-रे, पैथोलोजी, सोनोग्राफी आदि विभागों का भी लोकार्पण किया गया।

दिसम्बर सन् ९७ की साधारण बैठक में सभा की कार्यकारिणी समिति के जो चुनाव सम्पन्न हुए, वह निम्न प्रकार हैं–

दिसम्बर माह के प्रथम सप्ताह में बहुप्रतीक्षित एवं अभिलषित इन्डोर विभाग के लोकार्पण के साथ ही विभिन्न वार्डो और विभागों की जो शृंखला प्रारम्भ हुई वह अविछिन्न रूप से अभी भी चल रही है।

सभा की सेवा के बहुआयामी क्षेत्र में इस नये आयाम के लोकार्पण ने सभा के इतिहास में एक नये अध्याय का सूत्रपात किया है जो स्वर्णाक्षरों में सदा-सदा के लिए अंकित रहेगा और एक आलोक स्तम्भ की तरह सभा की युवा पीढ़ी को अंकुठ भाव से सेवा और साधना के क्षेत्र में निस्पृह रूप से तल्लीन होकर कार्य करने का न केवल मार्गदर्शन देगा अपितु प्रेरणा भी प्रदान करेगा।

इक्कीसवी शताब्दी में प्रवेश करने के लिए हमारी युवा पीढ़ी को प्रस्तुत होना है और इस पीढ़ी ने सेवा का जो यह दीप प्रज्ज्वलित किया है उसे अपने स्नेह से परिपूरित रखकर निरन्तर ज्योतित करते रहना है।

सभा अपने यशस्वी जीवन के ७० वर्ष पूर्ण कर ७१वें वर्ष में प्रवेश करने को समुत्सुक है। सात दशक की इस सेवामयी कार्ययात्रा की सम्पूर्ति के उपलक्ष्य में कलकत्ता के नवनिर्मित भव्य एवं विशाल साइंस सिटी सभागार में समारोह आयोजित किया गया, जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त संविधान, विशेषज्ञ, राज्यसभा सदस्य एवं ग्रेट ब्रिटेन में भारत के पूर्व उच्चायुक्त स्वनामधन्य डॉ० लक्ष्मीमल्ल सिंघवी के साथ कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व उपकुलपति प्रसिद्ध शिक्षाविद् प्रो० संतोष भट्टाचार्य एवं अन्य गणमान्य महानुभावों की उपस्थिति में यह समोराह ६ सितम्बर'९८ को अनुष्ठित हुआ। इस समारोह के संयोजन का भार श्री बिनोदचंद कांकरिया को दिया गया था। इसी अवसर पर 'सेवा, शिक्षा और साधना के सात दशक' नामक स्मारिका ग्रंथ का लोकार्पण भी किया गया, जिसमें सुरुचि एवं विद्वतापूर्ण लेखों के अलावा सभा की विभिन्न सेवापरक और लोकोपकारी प्रवृत्तियों की चित्रों के माध्यम से कहानी को जीवंतता प्रदान करने का प्रयास किया गया है। यह ग्रंथ पठनीय एवं संग्रहणीय रहा एवं बहुप्रशंसित हुआ। इस ग्रंथ के सम्पादन में सम्पादक मंडल के सहयोगियों के साथ श्री भूपराज जैन एवं श्री पद्मचन्द नाहटा ने इसे सर्वांग सुन्दर एवं पठनीय बनाने का जो अथक प्रयास किया, वह श्लाघनीय है।

इस अवसर पर डा० लक्ष्मीमल सिंघवी एवं श्री भूपराज जैन का उनकी बहुमूल्य सेवाओं के उपलक्ष्य में सभा की ओर से अभिनन्दन किया गया।

ध्यातव्य : श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की इतिहास कथा जो सभा की हीरक जयन्ती स्मारिका में पृष्ठ ५ पर प्रकाशित है। इसमें जैन विद्यालय की स्थापना शीर्षक के अन्तर्गत दूसरी पंक्ति में मुद्रित ''मात्र दो छात्रों को लेकर इस विद्यालय का श्री गणेश हुआ, जिसमें एक श्री सोहनलाल गोलछा थे'' के स्थान पर ''मात्र एक छात्र को लेकर विद्यालय का श्री गणेश हुआ जो श्री सोहनलाल गोलछा थे'' पढ़ा जाए। इस प्रकार श्री सोहनलाल गोलछा इसके प्रथम छात्र थे।

दिनांक २० दिसम्बर १९९३ को सभा अध्यक्ष श्री रिखवदासजी भंसाली की अध्यक्षता में सभा भवन में वार्षिक साधारण सभा की बैठक हुई। मंगलाचरण के पश्चात् मन्त्रीजी ने गत बैठक का कार्य विवरण प्रस्तुत किया जो विचार विमर्श के बाद सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

शिक्षा :

श्री जैन विद्यालय कोलकता से माध्यमिक परीक्षा एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में क्रमश: २३७ एवं ४६२ छात्र सम्मिलित हुए। परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा। प्रबन्ध समिति के पदाधिकारी, शिक्षकगण उत्साहपूर्वक छात्रों के सर्वांगीण विकास में जुटे हुए हैं।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा के ब्वॉयज एवं गर्ल्स विभाग में माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में क्रमश: १४२ छात्र, ११७ छात्राएँ तथा १७७ छात्र एवं १५९ छात्राएँ सम्मिलित हुए। परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा।

वालिका विभाग की माध्यमिक परीक्षा में ९ छात्राओं को स्टार मार्क्स प्राप्त हुए। ब्वॉयज विभाग की माध्यमिक परीक्षा में १४ छात्रों ने स्टार मार्क्स प्राप्त कर विद्यालय का गौरव बढ़ाया।

इन विद्यालयों की प्रवन्ध समिति एवं शिक्षक वृन्द के परिश्रम से हावड़ा अंचल में विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। सभा का सवको साधुवाद।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र : राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय

रेगुलर शिक्षा प्राप्त न करने वाली छात्राओं के लिये यह वरदान स्वरूप है। माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक का सभा भवन में शनिवार एवं रविवार को अध्यापन कराया जाता है। उसके मंत्री श्री ललितकुमार कांकरिया, प्रधानाचार्य श्री भूपराजजी जैन एवं को-ऑर्डिनेटर श्री राधेश्याम मिश्र हैं।

श्री जैन बुक बैंक :

पश्चिम वंगाल के ग्रामीण अंचल के छात्र-छात्राएँ इससे सर्वाधिक लाभान्वित हैं। आलोच्य सत्र में ८२ विद्यालयों के १४४९ छात्र-छात्राओं को पाठ्यक्रम की समस्त पुस्तकें नि:शुल्क वितरित की गई। पुन: वितरण परियोजना के अन्तर्गत ३९५५ विद्यार्थियों को पुस्तकें प्रदान की जा चुकी हैं। कुल ५१४३ छात्र-छात्राऑं इससे लाभान्वित हुए हैं। सन् १९९२ में संचालित इस योजना के अन्तर्गत २६२ स्कूल, कॉलेजों के माध्यम से स्नातकीय एवं स्नातोकतर १९००० छात्र-छात्राओं को इससे लाभ प्राप्त हुआ है।

मेदिनीपुर अंचल के एक कॉलेज के प्राचार्य से ज्ञात हुआ कि इस परियोजना से लाभान्वित एक छात्र ने ८६ प्रतिशत अंक अर्जित कर इसकी सार्थकता सिद्ध की है। ७ शिक्षा संस्थानों में वुक वैंक स्थापित किये जा चुके हैं। इसी परियोजना से लाभान्वित एक छात्र सत्य स्मरण अधिकारी आयुर्वेद की उपाधि प्राप्त कर डॉक्टर वन गया है। यह गौरव एवं संतोष का विषय है।

इसी योजना के अन्तर्गत सभा ने उत्तर चौवीस परगना के मसलदपुर भूदेवी स्मृति वालिका विद्यालय को ३७,००० रुपये एवं प्रफुल्लनगर वालिका विद्यालय को २०,००० रुपये शौचालय निर्माण हेतु प्रदान किये हैं। जीर्णशीर्ण भवनों के जीर्णोद्धार के लिए भी सभा मुक्त हस्त से सहयोग करती है।

श्री परियोजना के संयोजक श्री सुभाप वच्छावत, सहयोगी श्री सुशीलजी गेलड़ा, श्री अजयजी वोथरा एवं पूरी टीम का परिश्रम अत्यन्त सराहनीय है जिसके कारण यह परियोजना अत्यधिक लोकप्रिय हो रही है।

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर हावड़ा :

अनेक शहादतों, वलिदानों एवं त्याग तपस्या से प्राप्त आजादी की स्वर्ण जयन्ती पर स्थापित इस औषधालय में दिसम्बर माह में इन्डोर विभाग भी प्रारम्भ हो गया।

आलोच्य वर्षों में दान-दाताओं के सहयोग से ऑपरेशन थियेटर, डेन्टल विभागों का लोकार्पण हुआ। निम्न एवं मध्यवित्त के लोगों के लिए यह हॉस्पीटल वरदान साबित हुआ है क्योंकि यहाँ अत्यन्त कम शुल्क में रोग का परीक्षण, निदान और चिकित्सा की जाती है।

हॉस्पीटल की प्रथम वर्षगाँठ १५ अगस्त १९९८ के उपलक्ष्य में प्रसिद्ध उद्योगपति एवं समाज सेवी श्री छोटूलालजी नाहटा के करकमलों से सिलाई मशीनें, पोलियो केलीपर, कृत्रिम अंग, सिलाई मशीनें आदि का नि:शुल्क वितरण किया गया। आउटडोर विभाग में १५० रोगी प्रतिदिन लाभान्वित होते हैं। इन्डोर विभाग में १०० से १२५ रोगी परिचर्या हेतु भर्ती होकर अस्पताल की सेवाओं का लाभ ले रहे हैं।

इसके मंत्री श्री सरदारमल कांकरिया पूर्णत: इस सेवा मन्दिर के लिए समर्पित हैं। इसके अध्यक्ष श्री हरकचंदजी कांकरिया, उपाध्यक्ष श्री श्रीचंदजी नाहटा एवं श्री भंवरलालजी कर्णावट हैं। मेडिकल ऑफीसर हैं डॉ. श्री गांगुलीजी।

कुछ मशीनों की वेहद आवश्यकता के कारण हमारे कार्यकर्त्ता दानदाताओं से सम्पर्क कर रहे हैं। शीघ्र ही इनकी पूर्ति की संभावना है। आयुर्वेद एवं होमियोपैथिक विभाग यहाँ खोलने पर विचार कर रहे हैं। श्री प्रदीपजी कुंडलिया से ग्यारह लाख रुपयों का अनुदान प्राप्त हुआ एतदर्थ ह्रार्दिक आभार।

सभा की शिक्षा, सेवा और साधना की सप्तदशकीय यात्रा :

शिक्षा, सेवा और साधना की मूर्तिमंत प्रतीक सभा की सप्तदशकीय लोक-कल्याणकारी कर्म संकुल जीवन-यात्रा की समाप्ति के उपलक्ष्य में कलकत्ता के विशाल साइंस सिटी सभागार में भव्य समारोह का आयोजन हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय संविधान विशेषज्ञ एवं लब्ध प्रतिष्ठ विधिवेत्ता डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी ने विशिष्ट अतिथि पद से संवोधित करते हुए कहा कि संवेदना से करुणा पैदा होती है और करुणा सेवा की मूल है और यह सभा करुणा का साकार रूप है। लोक-कल्याण के जितने कार्य सभा ने संपादित किये हैं, वह भावी पीढ़ी के लिए ऐसी विरासत है जिस पर युगों तक गर्व किया जा सकता है।

सभा ने डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी को शॉल एवं गणेशजी की नयनाभिराम प्रतिमा प्रदान पर सम्मानित किया। इस अवसर पर शिक्षा, सेवा और साधना की सात दशकीय भव्य स्मारिका का लोकार्पण भी डॉ. सिंघवी ने किया। इस आकर्षक, संग्रहणीय एवं पठनीय स्मारिका की मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई। इसके प्रधान संपादक श्री भूपराजजी जैन को भी शॉल, स्मृति चिन्ह एवं इक्यासी हजार की राशि प्रदान कर सभा ने सम्मानित किया। सुप्रसिद्ध साहित्य मनीषी एवं कविवर श्री कन्हैयालालजी सेठिया ने अपनी स्वरचित काव्य रचना भेंटकर श्री भूपराजजी को आशीर्वाद प्रदान किया। श्री सेठियाजी ने अपनी कविता में श्री भूपराजजी को नींव का पत्थर निरूपित किया जिसको इतिहास विस्मृत कर देता है।

इसे सर्वांग सुन्दर बनाने में श्री पदमचंजी नाहटा का परिश्रम नितान्त उल्लेख्य है। इस कार्यक्रम के संयोजक श्री विनोदजी कांकरिया थे।

हावड़ा जोधपुर सुपर फास्ट ट्रेन को लिंक ट्रेन के रूप में बीकानेर तक आगे बढ़ाने में इस योजना के संयोजक श्री अजयजी डागा एवं सहयोगी श्री भूपराजजी जैन तथा बालकृष्ण हर्ष का सहयोग साधुवाद का पात्र है।

१५ सितम्बर, १९९८ को सहयोगी संस्था विचार मंच के समारोह में महाकवि स्वयंभू द्वारा रचित पउमं चरित्रं पर डॉ. किरण सिपानी द्वारा लिखित शोध ग्रन्थ 'पउम चरित्र अनुशीलन' का लोकार्पण किया गया। सभा के व्यय द्वारा यह ग्रंथ प्रकाशित किया गया था। सभा ऐसे शोध ग्रंथों एवं शोधकर्त्ताओं को अत्यन्त महत्व देती है।

इस वर्ष सभा परिवार को भी श्री जयचन्दलालजी मित्री के सुपौत्र अजय मित्री, श्री रिखबदास भंसाली के सुपुत्र, श्री राजा बाबू की धर्मपत्नी, श्री हीरालालजी बच्छावत के सुपौत्र श्री हेमन्त बच्छावत के स्वल्पायु में आकस्मिक स्वर्गवास का बज्राघात सहन करना पड़ा।

सभा ने दिवंगत आत्माओं को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए चिरशांति के लिए शासनदेवी से प्रार्थना की, साथ ही शोक संतप्त परिवारों के प्रति संवेदना व्यक्त की।

सभा के प्रचार-प्रसार में सहयोग देने वाले कोलकाता के दैनिक पत्रों– सन्मार्ग, विश्वमित्र, जनसत्ता, छपते-छपते, महानगर के प्रति भी अपना धन्यवाद ज्ञापित किया। इसी शृंखला में विद्यालय, अस्पताल एवं सभा के उत्साही सदस्यों के प्रति भी आभार प्रकट किया।

मंत्रीजी ने १९९७-१९९८ का अंकेक्षित आय-व्यय का लेखा-जोखा सदन के पटल पर रखा जो गंभीर विचार-विमर्श के बाद सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया। आगामी वर्ष के ऑडिट के लिए भी मेसर्स के.एस. बोथरा एण्ड कं. की नियुक्ति सर्वसम्मति से की गई।

कार्य संपादन में रही हुई त्रुटि के लिए मंत्रीजी द्वारा क्षमा याचना करने एवं अध्यक्ष महोदय के प्रति धन्यवाद ज्ञापन के बाद जयनाद के साथ सभा की बैठक सम्पन्न घोषित की गई।

सभा की साधारण वार्षिक बैठक दिनांक १८ जुलाई, १९९९ को प्रात:काल १० बजे उपाध्यक्ष श्री बच्छराजजी अभाणी की अध्यक्षता में सभा भवन में आयोजित की गई।

श्री चांदमलजी अभाणी के मंगलाचरण के पश्चात् मंत्री महोदय ने गतवर्ष का वार्षिक विवरण सभा के सम्मुख प्रस्तुत किया जो सभासदों के विचार-विमर्श के बाद सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

शिक्षा : श्री जैन विद्यालय कोलकाता में सम्प्रति २९०० छात्र वाणिज्य एवं विज्ञान विभाग में कक्षा २ से १२ तक अध्ययरत हैं।

इस वर्ष माध्यमिक परीक्षा में २१६ छात्र प्रविष्ट हुए। परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा। उच्चतर माध्यमिक में ४४५ छात्र सम्मिलित हुए। परीक्षा फल शत-प्रतिशत रहा। गतवर्ष की तुलना में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण छात्रों की संख्या में वृद्धि हुई है, यह संतोष एवं गर्व की बात है। अध्यक्ष श्री सोनहराजजी सिंघवी एवं मंत्री श्री विनोदचंदजी कांकरिया का मार्गदर्शन सभा के साधुवाद की अपेक्षा रखता है।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा के माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक का परीक्षा फल शत-प्रतिशत रहा है। गर्ल्स विभाग के माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक में क्रमश: १३२ एवं १८० छात्राएँ सम्मिलित हुई। यहाँ पूर्वापेक्षया प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने वाली छात्राओं की संख्या में अभिवृद्धि हुई है। यह संतोषजनक एवं उत्साहवर्द्धक है। प्रधानाचार्या श्रीमती ओलगा घोष एवं शिक्षिकाओं का उच्चस्तरीय अध्यापन साधुवाद की अपेक्षा रखता है।

श्री जैन विद्यालय फॉर ब्वॉयज विभाग के माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में क्रमश: १८४ एवं १७४ छात्र सम्मिलित हुए। परीक्षा-फल शत-प्रतिशत रहा। यहाँ भी प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होने वाले छात्रों की संख्या में गतवर्ष की तुलना में बढ़ोतरी हुई जो विद्यालय की प्रगति, अनुशासन एवं उच्चस्तरीय शिक्षण का प्रतीक है।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा के अध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड़, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया एवं मंत्री श्री

सरदारमलजी कांकरिया हैं। इनकी संचालन शैली निश्चित ही श्लाघनीय एवं प्रशंसनीय है।

चतुर्थ शिक्षा कमीशन द्वारा वेतनमान के ढाँचे में परिवर्तन के कारण श्री जैन विद्यालय हावड़ा पर इसका प्रभाव पड़ना अवश्यंभावी है। दोनों विभाग के वेतनमान में वृद्धि के कारण लगभग ४५ लाख रुपये का भार वहन करना पड़ा। परिणास्वरूप छात्रों के शुल्क में वृद्धि के लिए प्रबन्धकों को विवश होना पड़ा। श्री जैन विद्यालय कोलकाता पर भी इसका प्रभाव लाजमी है।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र के माध्यम से राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय (एन.ओ.सी.) की माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक परीक्षा में क्रमश: २१ एवं ३० छात्राएँ सम्मिलित हुई। इसके मंत्री श्री ललितकुमारजी कांकरिया, प्राचार्य श्री भूपराजजी जैन एवं को-ऑर्डिनेटर श्री राधेश्यामजी मिश्र हैं।

श्री हरकचंदजी कांकरिया के जूट मिल परिसर में निर्मित श्री जैन विद्यालय का प्रबन्ध सभा को संभालने का अनुरोध उन्होंने किया। इस प्रस्ताव को श्री जैन सभा ने विद्यालय का निरीक्षण करने के पश्चात् स्वीकार कर लिया। इस प्रकार सभा की शिक्षा का फलक और विस्तृत हो गया।

१ मई १९९९को इसका उद्‌घाटन पश्चिम बंगाल के उद्योग मंत्री माननीय श्री विद्युत गांगुली ने किया। सम्प्रति कक्षा ७ तक यहाँ अध्ययन की व्यवस्था है।

इस अवसर पर श्री हरकचंदजी कांकरिया एवं उनके पुत्रद्वय श्री जयकुमारजी कांकरिया एवं श्री अवंतिकुमारजी कांकरिया का भावभीना सम्मान किया गया।

इसके अध्यक्ष श्री हरकचंदजी कांकरिया, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया एवं मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया हैं।

श्री जैन बुक बैंक :

यह योजना सभा की सतत विकासमान प्रक्रिया की द्योतक है। इस वर्ष ८६ विद्यालयों में ११८५ पाठ्य पुस्तकों के सेट नि:शुल्क वितरित किये एवं ४५३३ पुराने सेटों का पुन: वितरण कार्य किया गया। अब तक ग्रामीण अंचलों के नौ विद्यालयों में श्री जैन बुक बैंक की स्थापना हुई है।

शिक्षा के विशद प्रचार-प्रसार हेतु श्री जैन विद्यालय, कोलकाता एवं सभा ने मिलकर एक नया कदम उठाया। मेदिनीपुर जिले के श्री देवलिया बालिका विद्यालय में ११०० स्क्वायर फुट के एक नये ब्लॉक का निर्माण कर विद्यालय को सौंप दिया। इस पूर्ण सुसज्जित ब्लॉक में सभा ने ६० प्रतिशत तथा स्थानीय महानुभावों ने ४० प्रतिशत की भागीदारी निभाई। इस प्रकार एक अनुकरणीय आदर्श की स्थापना हुई। इस ब्लॉक के निर्माण में श्री सुशीलकुमारजी डागा का सहयोग सराहनीय है फलत: शॉल एवं माल्यार्पण पूर्वक भावभीना अभिनन्दन किया।

ग्रामीण अंचलों के जरुरतमंद विद्यालयों में विगत वर्षों की तरह पंखों, सिलाई मशीनें, शौचालय निर्माण एवं डेवलपमेन्ट हेतु सभा ने आवश्यक सहयोग देकर अपने कर्तव्य का निर्वाह किया रोजगार हेतु बिना ब्याज की रकम ६ माह के लिए फुलसीटा निवारण सेवा ट्रस्ट के माध्यम से दी गई। इस सभा का यह प्रगति-रथ निरंतर आगे से आगे लोक कल्याण की ओर बढ़ रहा है।

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा :

यह हॉस्पीटल अपनी सेवाओं के कारण अधिक से अधिक लोकप्रिय हो रहा है। सम्प्रति डॉ. सुरेन्द्रजी डागा इसके युवा, उत्साही एवं सजग मेडिकल ऑफिसर हैं। इनसे हॉस्पीटल को बहुत आशाएँ हैं।

श्री भगवतीदेवी हरिराम झुनझुनवाला ट्रस्ट के प्रबन्ध ट्रस्टी श्री माणकचंदजी सेठिया ने लेप्रोस्कोपी मशीन के लिए ट्रस्ट से सवा आठ लाख रुपये प्रदान किये। इसी तरह कोहिनूर साड़ी वालों की तरफ से ३ जून, १९९९ को गंभीर रोगियों को लाने ले जाने के लिए एक एम्बुलेन्स गाड़ी हॉस्पीटल को प्रदान की गई। सभा इन दान-दाताओं के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती है।

कारगिल युद्ध में शहीद परिवारों की सहायतार्थ सभा एवं श्री जैन विद्यालय के छात्रों के सहयोग से एकत्रित राशि का २ लाख रुपये का चेक जैन सभागार में आयोजित एक समारोह में कर्नल मंडल को समर्पित किया गया।

आगामी सत्र के कार्य के निष्पादन के लिए निम्नांकित पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी सदस्यों का चुनाव सर्वसम्मति से किया गया जो निम्न प्रकारेण है–

विश्वस्त मंडल–सर्वश्री सरदारमलजी कांकरिया, माणकचंदजी रामपुरिया, जयचंदलालजी मिन्नी एवं श्री भंवरलालजी कर्णावट। अध्यक्ष श्री रिखबदासजी भंसाली, उपाध्यक्ष श्री बच्छराजजी अभाणी, मंत्री श्री रिधकरणजी बोथरा, सहमंत्री श्री अरुणकुमारजी मालू, कोषाध्यक्ष श्री भंवरलालजी दस्साणी।

कार्यकारिणी सदस्य–१. श्री जयचंदलालजी रामपुरिया, २. श्री किशनलालजी बोथरा, ३. श्री मोहनलालजी भंसाली, ४. श्री सोहनराजजी सिंघवी, ५. श्री सुन्दरलालजी दुगड़, ६. श्री

सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया, ७. श्री फागमलजी अभाणी, ८. श्री पारसमलजी भूरट, ९. श्री शांतिलालजी डागा, १०. श्री कंवरलालजी मालू, ११. श्री अशोकजी मिन्नी, १२. श्री विनोदजी मिन्नी, १३. श्री सुभाषजी बच्छावत, १४. श्री पन्नालालजी कोचर, १५. श्री विनोदजी कांकरिया, १६. श्री हस्तीमलजी जैन, १७. श्री किशोकुमारजी कोठारी, १८. श्री ललितकुमारजी कांकरिया, १९. श्री निश्चलजी कांकरिया, २०. श्री शांतिलालजी कोठारी, २१. श्री चन्द्रप्रकाशजी डागा।

आगामी कार्यकाल हेतु सभा को उपयोगी सुझाव देने हेतु कार्यकारिणी सदस्यों के अतिरिक्त स्थायी आमंत्रित सदस्यों का सर्वसम्मति से निम्न चुनाव हुआ–

स्थायी आमंत्रित सदस्य :

१. श्री सूरजमलजी बच्छावत, २. श्री बालचंदजी भूरा, ३. श्री चांदमलजी अभाणी, ४. श्री खड़गसिंह बैद, ५. श्री कुन्दनमलजी बैद, ६. श्री सुभाषजी कांकरिया, ७. श्री भंवरलालजी बैद, ८. श्री केवलचन्दजी कांकरिया, ९. श्री गोपालचंदजी बोथरा, १०. श्री अजयजी बोथरा, ११. श्री अरुणजी सांखला, १२. श्री अजयकुमारजी डागा, १३. श्री गौतमचंदजी कांकरिया, १४. श्री जवाहरलालजी कर्णावट, १५. श्री सुशीलजी गेलड़ा, १६. श्री राजेन्द्रकुमारजी बुच्चा, १७. श्री विमलकुमारजी भंसाली, १८. श्री सुरेशजी मिन्नी, १९. श्री कमलसिंहजी भंसाली, २०. श्री तनसुखराजजी डागा, २१, श्री सुरेन्द्रजी दफ्तरी, २२. श्री सोहनलालजी गोलछा।

सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों के सुचारु संचालन हेतु संयोजक एवं सहसंयोजक का चुनाव भी सर्वसम्मति से किया गया जो निम्न प्रकारेण है–

श्री जैन बुक बैंक

संयोजक — श्री सुभाषजी बच्छावत
सहसंयोजक — श्री अजयजी डागा
श्री सुशीलजी गेलड़ा

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र

मंत्री — श्री ललितकुमारजी कांकरिया
सहमंत्री — श्रीमती गीतिका बोथरा
प्रधानाचार्य — श्री अरुणकुमारजी तिवारी

श्री महिला उत्थान एवं विकास समिति

संयोजक — श्रीमती कंचनदेवी कांकरिया
सह-संयोजिका — श्रीमती लीला बोथरा

श्री धर्म सभा

संयोजक — श्री केवलचंदजी पटवा
सह-संयोजक — श्री केवलचंदजी कांकरिया
श्री दीपचंदजी डागा
श्री जवाहरलालजी करणावट

आगामी कार्य के लिए बैंक खातों के संचालन के लिए निम्न प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया–

It has been resolved that the Secretary or Joint Secretary togethter with any one trustee should operate the SB A/C, Current A/C, Fixed Deposit, Receipts of Sri S.S. Jain Sabha with State Bank of Bikaner and Jaipur, N.S. Road, Calcutta.

मन्त्री महोदय ने सभा अध्यक्ष श्री रिखबदासजी भंसाली का पत्र पढ़कर सबको सुनाया जिसमें उन्होंने अपने कार्यकाल में प्राप्त सहयोग के लिए कार्यकर्त्ताओं का आभार व्यक्त किया एवं अपनी त्रुटियों के लिए क्षमा याचना की।

माननीय सदस्य श्री तनसुखराजजी डागा ने निम्न सुझाव दिए–

१. सभा की बेलेन्ससीट के साथ विद्यालयों की बेलेन्ससीट भी सभा की बेलेन्ससीट के साथ होनी चाहिये।
२. विदेशी अनुदान का रिटर्न भरना जरुरी है।
३. आइ.टी. सेक्शन २३५ के लिए सभा को प्रयत्न करना चाहिये।

सभा के प्रचार-प्रसार में स्थानीय समाचार पत्रों के सहयोग हेतु मंत्री महोदय ने आभार ज्ञापित किया। कार्यकर्त्ताओं के सहयोग हेतु धन्यवाद ज्ञापन किया। आय-व्यय की अंकेक्षित रिपोर्ट प्रस्तुत की गई जो सर्वसम्मति से स्वीकृत की गई। आगामी कार्यकाल के लिए सर्वश्री के.एस. बोथरा एण्ड कम्पनी का ऑडिट हेतु सर्वसम्मति से निर्वाचन हुआ।

अध्यक्ष महोदयजी के प्रति धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा की कार्यवाही जयनाद के साथ सम्पन्न घोषित की गई।

सभा की गत साधारण बैठक में श्री तनसुखराजजी डागा के द्वारा प्रदत्त सुझावों पर कानूनी सलाह मिल जाने पर सभा की एक अत्यावश्यक बैठक दिनांक २८ अक्टूबर, १९९९ को सायंकाल ६ बजे अध्यक्ष श्री रिखबदासजी भंसाली की अध्यक्षता में आयोजित की गई।

मंगलाचरण के पश्चात् मंत्री महोदय द्वारा प्रस्तुत गत बैठक का कार्य विवरण गहन विचार-विमर्श के बाद सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

गत बैठक में सभा की बेलेन्ससीट के साथ श्री जैन विद्यालयों की बेलेन्ससीट भी कन्सोलिडेटेड रूप में प्रस्तुत की जाय। इस सुझाव पर हमें सकारात्मक कानूनी सलाह प्राप्त हुई। तदर्थ इस कन्सोलिडेटेड रिपोर्ट सभा के समक्ष प्रस्तुत है। सदन के पटल पर रखने के पश्चात् उसे सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

अध्यक्षजी को धन्यवाद देते हुए जयनाद के साथ सभा की यह अत्यावश्यक बैठक संपन्न हुई।

दिनांक १७ दिसम्बर २०००, रविवार को सभा की साधारण सभा की वार्षिक बैठक सभा भवन में आहुत की गई थी किन्तु सभा भवन के पार्श्व में ३३नं. कैनिंग स्ट्रीट भवन में भयानक आग लगने के कारण आयोजित न हो सकी क्योंकि आग अत्यन्त भीषण थी एवं उसकी लपटें सभा भवन को भी स्पर्श करने लग गई थी, फलत: ध्यान सभा भवन को बचाने में केन्द्रित हो गया। जिसकी वजह से बैठक स्थगित कर दी गई।

यह स्थगित बैठक दिनांक २४ दिसम्बर २०००, रविवार को प्रात: १०.३० बजे अध्यक्ष श्री रिखबदासजी भंसाली की अध्यक्षता में सभा भवन में आयोजित हुई। मंगलाचरण के पश्चात् सभा की कार्यवाही विधिवत प्रारम्भ हुई।

सर्वप्रथम मंत्री महोदय ने गत बैठक की कार्यवाही सदन को पढ़कर सुनाई जो विचार-विमर्श के बाद सर्वसम्मति से स्वीकृत की गई।

सभा का यह लोक-कल्याणकारी कारवां राजस्थानी मुहावरा 'धड़ कूचां धड़ मंजला' के वेग से आगे बढ़ रहा है। इस सदी का यह अन्तिम वर्ष सभा के लिए पर्याप्त शकुनदायक रहा है।

शिक्षा : श्री जैन विद्यालय कोलकाता में २८०० छात्र अध्ययन रत हैं। माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं का परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा है। प्रथम श्रेणी के छात्रों ने विगत वर्षो का रिकार्ड पीछे छोड़ दिया। माध्यमिक में कुल २२० छात्रों में १३७ ने तथा उच्चतर माध्यमिक में कुल ४४५ छात्रों में ३०९ छात्रों ने प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होकर सभा परिवार एवं विद्यालय परिवार को गौरवान्वित किया। शिक्षकों के अथक अध्यावसाय का ही यह परिणाम था। सभा परिवार ने समग्र विद्यालय परिवार के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित की।

विद्यालय प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष श्री सोहनराजजी सिंघवी ने अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक विद्यालय शिक्षकों एवं सभा परिवार को अपने द्वारा दिये गये स्नेह भोज में आमंत्रित कर शिक्षकों के मनोबल को बढ़ाया।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा (ब्यायज एवं गर्ल्स विभाग)

आलोच्य सत्र में श्री जैन विद्यालय हावड़ा में २१०० छात्र एवं २१०० छात्राएं अध्ययनरत हैं। गतवर्ष की तरह दोनों विभागों का परीक्षा परिणाम भी शतप्रतिशत रहा।

ब्यायज विभाग की माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में क्रमश १४९ एवं १७१ छात्र सम्मिलित हुए। परिणाम शतप्रतिशत रहा। गर्ल्स विभाग की माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में क्रमश: १४६ एवं २४८ छात्राएं सम्मिलित हुई। परीक्षा परिणाम शतप्रतिशत रहा।

दोनों विद्यालयों की प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड़, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बांठिया एवं मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया हैं। रेक्टर श्री गोपालजी दूबे एवं प्राचार्य श्रीमती ओल्गा घोष हैं।

श्री हरखचंद कांकरिया जैन विद्यालय - जगतदल :

सम्प्रति इसमें कक्षा ८ तक ४७५ छात्र-छात्राएं अध्ययनरत हैं। इसके अध्यक्ष श्री हरकचंदजी कांकरिया, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बांठिया है एवं मंत्री सरदारमलजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्री बालकृष्ण हर्ष हैं।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र-राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय :

माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक की शनिवार एवं रविवार को कोचिंग कक्षाओं के माध्यम से लड़कियों को शिक्षा दी जाती है। इसके मंत्री श्री ललितजी कांकरिया, सहमंत्री श्री श्रीमती गीतिका बोथरा, प्राचार्य श्री अरुणकुमारजी तिवारी तथा को-ऑर्डिनेटर श्री राधेश्यामजी मिश्रा है।

श्री जैन बुक बैंक :

आलोच्य सत्र में निशुल्क पुस्तक वितरण समारोह २ जुलाई २००० को सभाभवन में ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता प्रख्यात बंगला लेखिका एवं उपन्यासकार आदिवासियों के कल्याण हेतु समर्पित लब्ध प्रतिष्ठ कार्यकर्त्री महाश्वेता देवी के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

९३ विद्यालयों की मारफत माध्यमिक पाठ्क्रम की पुस्तकों के १३०० सेट एवं लगभग ५७०० पुराने सेट छात्र छात्राओं को निशुल्क वितरित किये गये। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ७००० छात्र-छात्राएं लाभान्वित हो रहे हैं।

कोलाघाट अंचल के हीरालाल विद्यालय में लेबोरेटरी, लाइयबेरी में पुस्तकें एवं ६ कम्प्यूटर देकर सभा ने कम्प्यूटर केन्द्र की स्थापना की। फ्लुसीटा निवारण सेवा समिति के माध्यम से ग्रामीण महिलायों ६ माह के लिए बिना व्याज का २५०००

रुपये लोन दिया गया। जो वापस आ गया। विकलांग महिलाओं को ५ सिलाईमशीनें रोजगार हेतु दी गई। प्रतिवर्ष की तरह रतलाम में सात सिलाई मशीने बेरोजगार महिलाओं को रोजगार हेतु निशुल्क दी गई।

फुलसीटा में बिना ब्याज के एक लाख रुपये लोन स्वरूप दिये गये इसमें से पचार हजार रुपये पुन: प्राप्त हो गये।

श्री जैन कॉलेज, कोलकाता के लिए सभा का प्रयास निरन्तर चालु है डिग्री कॉलेज के लिए १९९४ में जो आवेदन दिया गया था उसकी स्वीकृति के लिए सतत प्रयत्न चल रहा है।

सेवा निकाय :

क) मानवसेवा प्रकल्प :

भरण-पोषण से वंचित असहाय गरीब १०० लोगों को माह में दो बार राशन की सम्पूर्ण सामग्री सभा की ओर से निशुल्क वितरित की जाती है। श्री सरदारमल कांकरिया के संयोजकतत्व में यह मानव सेवी प्रकल्प सतत चल रहा है।

ख) श्री जैन हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

पीड़ित, असहाय, रोगों ने पीड़ित संत्रस्तों की सेवा में लगे श्री जैन हॉस्पिटल के त्रिवर्षीय सेवा काल की समाप्ति पर दिनांक १५ अगस्त, २००० को निशुल्क सर्जरी केम्प आयोजित किया गया इसमें १०० रोगियों की नेत्र शल्य चिकित्सा एवं १०३ रोगियों की जनरल सर्जरी निशुल्क की गई। इस अवसर पर साहित्य मनीषी हिमाचल प्रदेश के राज्यपाल आचार्य श्री विष्णुकांतजी शास्त्री ने मुक्त हृदय से सबको अपने आशीर्वाद की पावन गंगा में अवगाहन करवाया। स्थापना के इस पावन अवसर को केन्द्रीय मंत्री श्री तपन सिकदर ने सम्बोन्धित किया एवं कहा कि ऐसे सेवा मंदिर में माननीय प्रधान मंत्री को आमंत्रित करना चाहिए।

गतवर्ष की भांति दिनांक २६ नवम्बर से १ दिसम्बर तक निशुल्क प्लास्टिक सर्जरी शिविर मेसर्स कायां फाउण्डेशन ७ लायन्स रेंज, कोलकाता एवं हमारी सभा के माननीय सदस्य श्री पन्नालालजी कोचर एवं इन्टर प्लास्ट जर्मनी के डाक्टरों के सहयोग से सम्पन्न हुआ। ११३ रोगियों की निशुल्क सर्जरी की गई। अर्थ सहयोगी सदस्यों के प्रति हार्दिक आभार।

हॉस्पिटल के बगल में स्थित अढ़ाई कट्ठा जमीन सभा ने क्रय कर ली। इसका नक्शा एच.एम.सी. हावड़ा म्युनिसिपल कारपोरेशन में स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जायेगा।

श्री राधेश्यामजी मिश्र के प्रयत्नों से हॉस्पिटल को क्लीनकल लाइसेंस भी प्राप्त हो गया।

आलोच्य सत्र में आउटडोर विभाग में २०० रोगी प्रतिदिन एवं इनडोर विभाग में १४० रोगी लाभान्वित हो रहे हैं।

भावी योजनाएं : नार्सिंग कालेज एण्ड डेन्टल कॉलेज को मूर्तरुप देने का प्रयास सतत चालू है। कोना हाईवे के पास की जमीन के सम्बन्ध में विचार चल रहा है। इस पर तीन करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान है।

स्व०.आचार्य श्री नानालालजी म० सा० की पुण्य तिथि पर श्री सरदारमलजी कांकरिया के प्रयत्नों से आयोजित दि० २५ दिसम्बर को निशुल्क शिविर में रोगियों को चश्मा, पोलियो केलीपर एवं कृत्रिम पैर का वितरण संपादित हुआ। दि० २४ दिसम्बर को विराटी में नेवटिया परिवार के सहयोग से निशुल्क विकलांग शिविर आयोजित किया जा रहा है। इस प्रकार मानव सेवा का यह प्रकल्प सतत प्रगति की ओर उन्मुख है।

साधना-पर्युषण पर्व :

हमारे अनुरोध पर श्री समता प्रचार संघ, चित्तौड़गढ़ ने पर्युषण पर्वाराधना हेतु श्री विमलजी बांठिया, श्री प्रदीपजी सांड एवं श्री नवीनजी कोठारी स्वाध्यायियों को भेजा। इनके सदप्रयासों से आठ दिन नवकार मंत्र का अखंड जाप सम्पन्न हुआ। त्याग, तपस्या, प्रत्याखान आदि भी पर्याप्त मात्रा में हुए।

स्व० आचार्य श्री नानालालजी म० सा० की प्रथम पुण्य तिथि कार्तिक वदी तृतीया डा० किरण सिपानी के सान्निध्य में धर्माराधना पूर्वक आयोजित की गई।

सभा इस वर्ष अपने जाज्वल्यमान सितारों के प्रकाश से वंचित हो गई। सभा के ट्रस्टी श्री भंवरलालजी कर्णावट, संस्थापक, कर्मठ सदस्य श्री सूरजमलजी बच्छावत एवं अनन्य सहयोगी श्री जसकरणजी बोथरा के संथारा पूर्वक समाधि पंडित मरण के कारण सभा की अपूरणीय क्षति हुई। स्वर्गस्थ आत्मा की चिरशांति एवं सद्गति की कामना करते हुए सभा परिवार ने मार्मिक श्रद्धांजलि अर्पित की एवं संतप्त परिवारों के प्रति हार्दिक संवेदना अभिव्यक्त की।

दि० ३१ दिसम्परको सभा द्वारा 'स्नेह मिलन' का आयोजन श्री जैन विद्यालय, हावड़ा के प्रांगण में होगा। इसके संयोजक श्री फागमलजी अभाणी एवं श्री भंवरलालजी दस्साणी हैं।

१७ दिसम्वर को ३३ नम्बर केनिंग स्ट्रीट में लगी भयावह आग को आगे वड़ने से रोकने में विद्यालय एवं सभा परिवार ने जो कठोर परिश्रम किया तदर्थ हम आभारी है।

भगवान महावीर के २६०० वें जन्म कल्याणक के आयोजन में अन्य जैन सम्प्रदायों के साथ सभा ने भी अपनी संपूर्ण भागीदारी का निर्वाह किया। अन्त: विद्यालय भक्तामर

गत वैठक में सभा की वेलेन्ससीट के साथ श्री जैन विद्यालयों की वेलेन्ससीट भी कन्सोलिडेटेड रूप में प्रस्तुत की जाय। इस सुझाव पर हमें सकारात्मक कानूनी सलाह प्राप्त हुई। तदर्थ इस कन्सोलिडेटेड रिपोर्ट सभा के समक्ष प्रस्तुत है। सदन के पटल पर रखने के पश्चात् उसे सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

अध्यक्षजी को धन्यवाद देते हुए जयनाद के साथ सभा की यह अत्यावश्यक वैठक संपन्न हुई।

दिनांक १७ दिसम्वर २०००, रविवार को सभा की साधारण सभा की वार्षिक बैठक सभा भवन में आहुत की गई थी किन्तु सभा भवन के पार्श्व में ३३नं. कैनिंग स्ट्रीट भवन में भयानक आग लगने के कारण आयोजित न हो सकी क्योंकि आग अत्यन्त भीषण थी एवं उसकी लपटें सभा भवन को भी स्पर्श करने लग गई थी, फलत: ध्यान सभा भवन को बचाने में केन्द्रित हो गया। जिसकी वजह से बैठक स्थगित कर दी गई।

यह स्थगित वैठक दिनांक २४ दिसम्बर २०००, रविवार को प्रात: १०.३० बजे अध्यक्ष श्री रिखबदासजी भंसाली की अध्यक्षता में सभा भवन में आयोजित हुई। मंगलाचरण के पश्चात् सभा की कार्यवाही विधिवत प्रारम्भ हुई।

सर्वप्रथम मंत्री महोदय ने गत बैठक की कार्यवाही सदन को पढ़कर सुनाई जो विचार-विमर्श के वाद सर्वसम्मति से स्वीकृत की गई।

सभा का यह लोक-कल्याणकारी कारवां राजस्थानी मुहावरा 'धड़ कूचां धड़ मंजला' के वेग से आगे वढ़ रहा है। इस सदी का यह अन्तिम वर्ष सभा के लिए पर्याप्त शकुनदायक रहा है।

शिक्षा : श्री जैन विद्यालय कोलकाता में २८०० छात्र अध्ययन रत हैं। माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं का परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा है। प्रथम श्रेणी के छात्रों ने विगत वर्षो का रिकार्ड पीछे छोड़ दिया। माध्यमिक में कुल २२० छात्रों में १३७ ने तथा उच्चतर माध्यमिक में कुल ४४५ छात्रों में ३०९ छात्रों ने प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होकर सभा परिवार एवं विद्यालय परिवार को गौरवान्वित किया। शिक्षकों के अथक अध्यावसाय का ही यह परिणाम था। सभा परिवार ने समग्र विद्यालय परिवार के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित की।

विद्यालय प्रवन्ध समिति के अध्यक्ष श्री सोहनराजजी सिंघवी ने अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक विद्यालय शिक्षकों एवं सभा परिवार को अपने द्वारा दिये गये स्नेह भोज में आमंत्रित कर शिक्षकों के मनोवल को वढ़ाया।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा (ब्यायज एवं गर्ल्स विभाग)

आलोच्य सत्र में श्री जैन विद्यालय हावड़ा में २१०० छात्र एवं २१०० छात्राएं अध्ययनरत हैं। गतवर्ष की तरह दोनों विभागों का परीक्षा परिणाम भी शतप्रतिशत रहा।

ब्यायज विभाग की माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में क्रमश १४९ एवं १७१ छात्र सम्मिलित हुए। परिणाम शतप्रतिशत रहा। गर्ल्स विभाग की माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में क्रमश: १४६ एवं २४८ छात्राएं सम्मिलित हुई। परीक्षा परिणाम शतप्रतिशत रहा।

दोनों विद्यालयों की प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड़, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बांठिया एवं मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया हैं। रेक्टर श्री गोपालजी दूवे एवं प्राचार्य श्रीमती ओल्गा घोष हैं।

श्री हरखचंद कांकरिया जैन विद्यालय - जगतदल :

सम्प्रति इसमें कक्षा ८ तक ४७५ छात्र-छात्राएं अध्ययनरत हैं। इसके अध्यक्ष श्री हरकचंदजी कांकरिया, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बांठिया है एवं मंत्री सरदारमलजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्री बालकृष्ण हर्ष हैं।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र-राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय :

माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक की शनिवार एवं रविवार को कोंचिंग कक्षाओं के माध्यम से लड़कियों को शिक्षा दी जाती है। इसके मंत्री श्री ललितजी कांकरिया, सहमंत्री श्री श्रीमती गीतिका वोथरा, प्राचार्य श्री अरुणकुमारजी तिवारी तथा को-ऑर्डिनेटर श्री राधेश्यामजी मिश्रा है।

श्री जैन बुक बैंक :

आलोच्य सत्र में निशुल्क पुस्तक वितरण समारोह २ जुलाई २००० को सभाभवन में ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता प्रख्यात वंगला लेखिका एवं उपन्यासकार आदिवासियों के कल्याण हेतु समर्पित लब्ध प्रतिष्ठ कार्यकर्त्री महाश्वेता देवी के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

९३ विद्यालयों की मारफत माध्यमिक पाठ्क्रम की पुस्तकों के १३०० सेट एवं लगभग ५७०० पुराने सेट छात्र छात्राओं को निशुल्क वितरित किये गये। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ७००० छात्र-छात्राएं लाभान्वित हो रहे हैं।

कोलाघाट अंचल के हीरालाल विद्यालय में लेबोरेटरी, लाइयवेरी में पुस्तकें एवं ६ कम्प्यूटर देकर सभा ने कम्प्यूटर केन्द्र की स्थापना की। फ्लुसीटा निवारण सेवा समिति के माध्यम से ग्रामीण महिलायों ६ माह के लिए विना व्याज का २५०००

रुपये लोन दिया गया। जो वापस आ गया। विकलांग महिलाओं को ५ सिलाईमशीनें रोजगार हेतु दी गई। प्रतिवर्ष की तरह रतलाम में सात सिलाई मशीने बेरोजगार महिलाओं को रोजगार हेतु निशुल्क दी गई।

फुलसीटा में बिना ब्याज के एक लाख रुपये लोन स्वरूप दिये गये इसमें से पचार हजार रुपये पुन: प्राप्त हो गये।

श्री जैन कॉलेज, कोलकाता के लिए सभा का प्रयास निरन्तर चालु है डिग्री कॉलेज के लिए १९९४ में जो आवेदन दिया गया था उसकी स्वीकृति के लिए सतत प्रयत्न चल रहा है।

सेवा निकाय :

क) मानवसेवा प्रकल्प :

भरण-पोषण से वंचित असहाय गरीब १०० लोगों को माह में दो बार राशन की सम्पूर्ण सामग्री सभा की ओर से निशुल्क वितरित की जाती है। श्री सरदारमल कांकरिया के संयोजकतत्व में यह मानव सेवी प्रकल्प सतत चल रहा है।

ख) श्री जैन हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा

पीड़ित, असहाय, रोगों ने पीड़ित संत्रस्तों की सेवा में लगे श्री जैन हॉस्पिटल के त्रिवर्षीय सेवा काल की समाप्ति पर दिनांक १५ अगस्त, २००० को निशुल्क सर्जरी केम्प आयोजित किया गया इसमें १०० रोगियों की नेत्र शल्य चिकित्सा एवं १०३ रोगियों की जनरल सर्जरी निशुल्क की गई। इस अवसर पर साहित्य मनीषी हिमाचल प्रदेश के राज्यपाल आचार्य श्री विष्णुकांतजी शास्त्री ने मुक्त हृदय से सबको अपने आशीर्वाद की पावन गंगा में अवगाहन करवाया। स्थापना के इस पावन अवसर को केन्द्रीय मंत्री श्री तपन सिकदर ने सम्बोन्धित किया एवं कहा कि ऐसे सेवा मंदिर में माननीय प्रधान मंत्री को आमंत्रित करना चाहिए।

गतवर्ष की भांति दिनांक २६ नवम्बर से १ दिसम्बर तक निशुल्क प्लास्टिक सर्जरी शिविर मेसर्स कायां फाउण्डेशन ७ लायन्स रेंज, कोलकाता एवं हमारी सभा के माननीय सदस्य श्री पन्नालालजी कोचर एवं इन्टर प्लास्ट जर्मनी के डाक्टरों के सहयोग से सम्पन्न हुआ। ११३ रोगियों की निशुल्क सर्जरी की गई। अर्थ सहयोगी सदस्यों के प्रति हार्दिक आभार।

हॉस्पिटल के बगल में स्थित अढ़ाई कट्ठा जमीन सभा ने क्रय कर ली। इसका नक्शा एच.एम.सी. हावड़ा म्युनिसिपल कारपोरेशन में स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जायेगा।

श्री राधेश्यामजी मिश्र के प्रयत्नों से हॉस्पिटल को क्लीनकल लाइसेंस भी प्राप्त हो गया।

आलोच्य सत्र में आउटडोर विभाग में २०० रोगी प्रतिदिन एवं इनडोर विभाग में १४० रोगी लाभान्वित हो रहे हैं।

भावी योजनाएं : नार्सिंग कालेज एण्ड डेन्टल कॉलेज को मूर्तरुप देने का प्रयास सतत चालू है। कोना हाईवे के पास की जमीन के सम्बन्ध में विचार चल रहा है। इस पर तीन करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान है।

स्व०.आचार्य श्री नानालालजी म० सा० की पुण्य तिथि पर श्री सरदारमलजी कांकरिया के प्रयत्नों से आयोजित दि० २५ दिसम्बर को निशुल्क शिविर में रोगियों को चश्मा, पोलियो केलीपर एवं कृत्रिम पैर का वितरण संपादित हुआ। दि० २४ दिसम्बर को विराटी में नेवटिया परिवार के सहयोग से निशुल्क विकलांग शिविर आयोजित किया जा रहा है। इस प्रकार मानव सेवा का यह प्रकल्प सतत प्रगति की ओर उन्मुख है।

साधना-पर्युषण पर्व :

हमारे अनुरोध पर श्री समता प्रचार संघ, चित्तौड़गढ़ ने पर्युषण पर्वाराधना हेतु श्री विमलजी बांठिया, श्री प्रदीपजी सांड एवं श्री नवीनजी कोठारी स्वाध्यायियों को भेजा। इनके सदप्रयासों से आठ दिन नवकार मंत्र का अखंड जाप सम्पन्न हुआ। त्याग, तपस्या, प्रत्याखान आदि भी पर्याप्त मात्रा में हुए।

स्व० आचार्य श्री नानालालजी म० सा० की प्रथम पुण्य तिथि कार्तिक वदी तृतीया डा० किरण सिपानी के सान्निध्य में धर्माराधना पूर्वक आयोजित की गई।

सभा इस वर्ष अपने जाज्वल्यमान सितारों के प्रकाश से वंचित हो गई। सभा के ट्रस्टी श्री भंवरलालजी कर्णावट, संस्थापक, कर्मठ सदस्य श्री सूरजमलजी बच्छावत एवं अनन्य सहयोगी श्री जसकरणजी बोथरा के संथारा पूर्वक समाधि पंडित मरण के कारण सभा की अपूरणीय क्षति हुई। स्वर्गस्थ आत्मा की चिरशांति एवं सद्गति की कामना करते हुए सभा परिवार ने मार्मिक श्रद्धांजलि अर्पित की एवं संतप्त परिवारों के प्रति हार्दिक संवेदना अभिव्यक्त की।

दि० ३१ दिसम्परको सभा द्वारा 'स्नेह मिलन' का आयोजन श्री जैन विद्यालय, हावड़ा के प्रांगण में होगा। इसके संयोजक श्री फागमलजी अभाणी एवं श्री भंवरलालजी दस्साणी हैं।

१७ दिसम्बर को ३३ नम्बर केनिंग स्ट्रीट में लगी भयावह आग को आगे बढ़ने से रोकने में विद्यालय एवं सभा परिवार ने जो कठोर परिश्रम किया तदर्थ हम आभारी है।

भगवान महावीर के २६०० वें जन्म कल्याणक के आयोजन में अन्य जैन सम्प्रदायों के साथ सभा ने भी अपनी संपूर्ण भागीदारी का निर्वाह किया। अन्त: विद्यालय भक्तामर

प्रतियोगिता, चित्र प्रतियोगिता, वाद-विवाद के कार्यक्रमों का व्यय भार श्री जैन विद्यालय कोलकाता ने वहन करने का प्रशंसनीय कार्य किया। इस अवसर पर १९ अप्रैल, १९९९ को समग्र जैन समाज का सामुहिक नवकार जाप का प्रशंसनीय आयोजन आठ हजार श्रोताओं की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। १३ पृष्ठों का कलात्मक बहुरंगी केलेण्डर भगवान महावीर स्वामी के जीवन के १३ चित्रों का ३१ जनवरी को प्रकाशित होगा, इसका मूल्य प्रति केलेण्डर ६० रुपया है। मुख्य कार्यक्रम दिनांक २६ अप्रैल, २००१ को नेताजी इनडोर स्टेडियम में संपन्न होगा।

श्री साधुमार्गी जैन संघ, हावड़ा के सदप्रयत्नों से सप्तदिवसीय पूर्वांचल शिविर का आयोजन दि० २५ दिसम्बर से आयोजित किया है। इसमें संघ के अखिल भारतवर्षीय पदाधिकारी भी उपस्थित होंगे। किसी संस्था का विकास उसके कार्यकर्ताओं के परिश्रम पर निर्भर होता है। हमारा सौभाग्य है कि हमारे कर्मठ कार्यकर्ताओं के कठोर अध्यवसाय से सभा की कल्याणकारी प्रवृत्तियां दिन पर दिन वर्धमान है। सब घटकों के प्रति हमारा हार्दिक आभार।

मंत्री महोदय द्वारा सभा की कन्सोलिडेटेड अंकेक्षित रिपोर्ट सदन के पटल पर रखने के बाद गंभीर मंत्रणा पूर्वक सर्वसम्मति से स्वीकार की गई।

आगामी वर्ष के लिए मेसर्स के एस बोथरा एण्ड कं० की नियुक्त सर्वसम्मति से की गई। पीठासीन अध्यक्ष महोदय को धन्यवाद पूर्वक जयनाद के साथ सभा की बैठक सम्पन्न घोषित की गई।

सभा की वार्षिक साधारण सभा की बैठक दिनांक १४ अक्टूबर २००१ को अध्यक्ष श्री रिखबदासजी भंसाली की अध्यक्षता में आयोजित की गई।

बीसवीं सदी की समाप्ति और २१वीं. सदी का प्रारम्भ। विश्व में अनेक परिवर्तन घटित, ज्ञान-विज्ञान के नये वातायन खुले। वैश्वीकरण के इस घटनाक्रम के परिवेश में २००१ की बैठक का आयोजन।

मंगलाचरण के पश्चात् मंत्रीजी द्वारा प्रस्तुत गतवर्ष का वार्षिक विवरण गहन मंत्रणापूर्वक सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

शिक्षा :

आलोच्य सत्र में श्री जैन विद्यालय की माध्यमिक परीक्षा में कुल २४० छात्र सम्मिलित हुए। उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में ४५३ छात्रों ने परीक्षा दी। परिणाम शत्प्रतिशत रहा।

श्री जैन विद्यालय कोलकाता का वार्षिक परितोषिक वितरण समारोह दि० १३ मई, २००१ को महाजाति सदन में सम्पन्न हुआ। श्री सरदारमलजी कांकरिया ने अपने ओजस्वी भाषण में लड़कियों के उच्च स्तरीय अध्ययन हेतु एक कॉलेज की स्थापना पर बल दिया। तत्काल दानवीर श्री हरकचंदजी कांकरिया ने इस हेतु ५१ लाख रुपये के अनुदान की घोषणा की। तुमुल हर्ष ध्वनि पूर्वक उनका स्वागत किया गया।

इस अवसर पर विद्यालय की पत्रिका 'आभा' का लोकार्पण भी हुआ। इस अंक में सभा के वरिष्ठ एवं सक्रिय कार्यकर्ता स्व० श्री सूरजमलजी बच्छावत का चित्र एवं परिचय श्रद्धांजलि स्वरूप प्रकाशित किया गया।

इस विद्यालय के अध्यक्ष श्री सोहनराजजी सिंघवी, मंत्री श्री विनोदजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्री शरतचन्द्रजी पाठक है।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा-ब्यायज विभाग :

आलोच्य सत्र में माध्यमिक परीक्षा में १५९ छात्र तथा उच्चतर माध्यमिक में २०२ छात्र सम्मिलित हुए। परिणाम शत प्रतिशत रहा। इसके अध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड़, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बांठिया, मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया एवं रेक्टर श्री गोपालजी दूबे है।

गर्ल्स विभाग : सम्प्रति कक्ष १ से कक्षा १२ तक २१०० छात्राएं अध्ययन रत हैं। माध्यमिक परीक्षा में १५१ छात्राएं एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में २०० छात्राएं सम्मिलित हुई। परिणाम शत प्रतिशत रहा। इसके अध्यक्ष श्री पन्नालालजी कोचर, उपाध्यक्ष श्री आनन्दराज जी झाबक, मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्रीमती ओल्गा घोष हैं।

हावड़ा के इन विद्यालयों ने अपने उच्चस्तरीय अध्यापन, अनुशासन एवं परीक्षा परिणाम के कारण इस अंचल में अपनी अलग पहचान बनाई है एवं ये दिन पर दिन लोकप्रिय होते जा रहे हैं।

देखते-देखते इनकी स्थापना को एक दशक पूर्ण हो गया। इस एक दशकीय शैक्षणिक गौरव यात्रा के उपलक्ष्य में आगामी मईमाह में नेताजी सुभाष स्टेडियम में आकर्षक समारोह आयोजन करने एवं 'शिक्षा एक गौरवपूर्ण दशक' स्मारिका के प्रकाशन का निश्चय किया गया। इसके प्रधान संपादक श्री भूपराजजी जैन होंगे।

श्री हरकचंद कांकरिया जैन विद्यालय, जगतदल : इस वर्ष यहां कक्षा ९ की कक्षाएं प्रारम्भ हो गई। माध्यमिक की मान्यता के लिए परिश्रम बंगाल माध्यमिक बोर्ड में आवेदन किया गया है।

सम्प्रति यहां ६०० छात्र-छात्राएं अध्ययन कर रहे हैं। इसके अध्यक्ष श्री हरकचंदजी कांकरिया, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बांठिया एवं मंत्री सरदारमल कांकरिया एवं प्राचार्य श्री बालकृष्ण हर्ष हैं।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र-राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय :

शनिवार एवं रविवार को कोचिंग के माध्यम से माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक की शिक्षा छात्राओं को दी जाती है। इसके मंत्री श्री ललितजी कांकरिया, सहमंत्री श्रीमती गीतिका बोथरा, प्राचार्य श्री अरुणकुमारजी तिवारी एवं कोआरडिनेटर श्री राधेश्याम मिश्रा हैं।

श्री जैन बुक बैंक : सभा की यह अत्यन्त लोकप्रिय प्रवृत्ति अपने नाम के अनुसार सतत कार्योन्मुखी है।

१ जुलाई, २००१ को आयोजित समारोह में नई पुस्तकों के १५०० सेट एवं पुराने ७००० सेट निशुल्क वितरित किये गये। इस प्रकार ८५०० से अधिक छात्र लाभान्वित हो रहे हैं। आनन्दबाजार पत्रिका के संपादक श्री सुमन चट्टोपाध्याय, पश्चिम बंगाल के माननीय मंत्री जनाब मोहम्मद सलीम, श्री जयगोस्वामी कवि एवं समाजसेवी श्री थानमलजी बोथरा प्रभृति ने इस प्रवृत्ति की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इस योजना के अन्तर्गत एक अशोक नगर बालिका विद्यालय उत्तर २४ परगणा, २ विवेकानंद, पाठ्य चक्र कोलकाता एवं ३-श्यामसुन्दर पटना हाई स्कूल मेदिनीपुर में कम्प्यूटर केन्द्र की स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त जरुरतमंद ग्रामीण अंचलों में सिलाई केन्द्र, पंखो, शौचालय निर्माण, लाइब्रेरी, साइन्स लेबोरेटरी, बालबाड़ी, फर्नीचर निर्माण हेतु भी सभा ने सहयोग प्रदान किया।

नूतन विद्यालय निर्माण में सहयोगी :

गुजरात के कच्छ-भुज क्षेत्र में गणतंत्र दिवस २६ जनवरी, २००१ को महाविनाशकारी भयंकर भूकम्प आया। जान एवं माल की भयंकर क्षति हुई। सभा ने भी ऐसी विकट भयावह स्थिति से निजात पाने के लिये सहयोग का हाथ आगे बड़ाया।

१. भारतीय जैन संगठन की अपील पर १० लाख रुपये विद्यालय में ब्लॉक निर्माण हेतु भेजे। भुज जिला स्थित शिवशक्ति विद्यालय का निर्माण हो गया। इसके लोकार्पण समारोह पर उपस्थित होने के लिए हमें आग्रह भरा आमंत्रण प्राप्त हुआ है।

२. राजगृह की प्रसिद्ध संस्था वीरायतन ने भी गुजरात के मांडवी भुज रोड पर शिक्षा के लिए एक केम्पस की योजना बनाई। इसका भूमिपूजन अक्टूबर, २००१ में हुआ। इस अवसर पर सभा के अन्य गणमान्य सज्जनों के साथ अध्यक्ष श्री रिखबदासजी भंसाली एवं श्री जैन विद्यालय कोलकाता के अध्यक्ष श्री सोहनराजजी सिंघवी विद्यमान थे। सभा ने ६ कमरों के एक ब्लॉक के लिए ७.५० लाख रूपये के सहयोग की स्वीकृति दी एवं इस अवसर पर ५ लाख रुपये का एक चेक उन्हें समर्पित किया।

३. तारादेवी कांकरिया जैन विद्यालय, सागरमाधोपुर : सुन्दरवन इलाके के इस गाँव में बिजली पानी व कोई स्कूल नहीं होने के कारण ३० सितम्बर, २००१ को श्री हरकचंदजी कांकरिया के अर्थ सहयोग से प्राथमिक विद्यालय की स्थापना की गई। उद्घाटन के अवसर पर कठिन रास्ते के बावजूद श्री हरकचंदजी कांकरिया स्वयं उपस्थित हुए एवं अपने पैसे के सदुपयोग को देखकर अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की।

श्री मानवसेवा प्रकल्प : इस योजना के अन्तर्गत माह में दो बार भरण-पोषण वंचित असहाय लोगों को निशुल्क राशन सामग्री दी जाती है। सन १९९५ से यह प्रवृत्ति अनवरत चल रही है। इसके संयोजक श्री सरदारमलजी कांकरिया हैं।

श्री जैन हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा - भारतीय आजादी की स्वर्ण जयन्ती १९९७ से प्रारम्भ यह पीड़ित मानव सेवा मंदिर अधिकाधिक लोकप्रियता की ओर गतिमान है। इस सत्र में युवा कार्यकर्ता श्री अशोक मिन्नी ने मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया के साथ सहयोग करना प्रारम्भ किया है। इनका स्वागत है। यह शुभ लक्षण है एवं परिणाम भी संतोषजनक है।

हॉस्पिटल के इनडोर विभाग में सम्प्रति रोगियों की संख्या १३० है एवं आउटडोर विभाग में प्रतिदिन २०० से अधिक रोगियों का इलाज चल रहा है।

हॉस्पिटल के प्रशासनिक स्तर में सुधार, युनियन के साथ त्रिवर्षीय समझौता तथा सी.ई.एस.सी. द्वारा पी.रेट व डोमेस्टिक रेट में बिजली सप्लाइ करना आलोच्य सत्र के महत्त्वपूर्ण फैसले हैं। हॉस्पिटल में नर्सेज ट्रेनिंग सेन्टर खोलने का प्रस्ताव है, इस पर कार्य किया जा रहा है। इसके संयोजक श्री समर विजय घोष हैं।

हॉस्पीटल प्रशासनिक समिति के अध्यक्ष श्री हरकचंदजी कांकरिया, उपाध्यक्ष श्री श्रीचंदजी नाहटा, श्री श्यामसुन्दरजी केजरीवाल, मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया, सहमंत्री श्री वच्छराजजी अभाणी एवं डा० नरेन्द्रजी सेठिया है। मेडिकल सुपरिन्टेन्डेन्ट डा० ए० चटर्जी हैं।

सभा का ७४वां स्थापना दिवस समारोह : सभा का ७४वां स्थापना दिवस समारोह शांति दूत परम प्रभावक आचार्यश्री विजय नित्यानन्द सुरिश्वरजी एवं उनकी शिष्य मंडली के सान्निध्य में अत्यन्त हर्षोल्लास पूर्वक सभाभवन में आयोजित

हुआ। इस अवसर पर सभा के कर्णधारों ने सभा की प्लेटिनम जुबिली तक उच्चस्तरीय अध्ययन हेतु एक कॉलेज के निर्माण का संकल्प लिया। आचार्य श्रीजी म० सा० ने सभा की मानव-सेवी एवं जन-कल्याणकारी प्रवृत्तियों की मुक्त कंठ से सराहना करते हुए कहा कि इस विद्या मन्दिर में आकर मैं स्वयं धन्य हो गया हूँ। आशीर्वाद स्वरूप आचार्य श्री द्वारा सभा के प्रति व्यक्त भाव अत्यन्त मार्मिक और भावाकूल थे। अस्वस्थता के बावजूद भी आचार्य श्री सभाभवन में पधार कर महती अनुकम्पा की। डॉक्टरों के पूर्ण आराम की सलाह देने पर भी आप अपनी इच्छा शक्ति के बल पर पधारे। उनका आशीर्वाद हमारा संबल एवं पाथेय है। इसका सफल संचालन श्री भूपराजजी जैन ने किया।

ग्रामीण विकास योजना : इस योजना के तहत प्रतिवर्ष की भांति बेरोजगार ग्रामीण महिलाओं को रोजगार उपलब्ध कराने की योजना से बिनाव्याज लोन मेदिनीपुर की फुलसीटा निवारण सेवा ट्रस्ट के माध्यम से ६ माह हेतु दिया गया। प्रति वर्ष एक लाख रुपया इस योजना अन्तर्गत दिया जाता है। इसके संयोजक स्वनाम धन्य श्री सरदारमलजी कांकरिया हैं।

संस्था की सफलता इसके कार्यकर्ताओं के सामंजस्य, एक जुटता, सहिष्णुता एवं कार्यदक्षता पर निर्भर करती है। सभा के पास ऐसे कार्यकर्ता है जो पूर्ण मनोयोग एवं निस्वार्थ भाव से सेवा कार्य करते हैं। वे ही संस्था के भविष्य की आशा-आकांक्षा हैं।

सभा के लोक कल्याणकारी कार्यो से जनता को अवगत कराने के लिए दैनिक पत्रों विश्वमित्र, जनसत्ता, सन्मार्ग, राष्ट्रीय महानगर छपते-छपते एवं पाक्षिक श्रमणोपासक का योगदान श्लाघनीय एवं प्रशंसनीय है।

'दो शतक तक यह कार्य मैने पूर्णत: स्वान्त: सुखाय किया है। समाज द्वारा प्रदत्त स्नेह सहयोग एवं सम्मान के लिए मै आभारी हूँ। विवेकानन्द के इन शब्दों के साथ – First learn to obey, Command will come automatically कार्य संपादन में रही हुई त्रुटियों की क्षमा याचना के बाद मंत्री ने कन्सोलिडेटेड आय व्यय का लेखा सदन पटल पर रखा जो गहन मंत्रणा पूर्वक सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया।

सभा के आगामी कार्यकाल के सुचारु संचालन हेतु निम्न महानुभवों पदाधिकारियों के रुप में सर्व सम्मति से निर्वाचन किया गया।

विश्वस्त मंडल – १. श्री सरदारमलजी कांकरिया, २. श्री माणकचंदजी रामपुरिया, ३. श्री रिखवदासजी भंसाली एवं ४. श्री वालचंदजी भूरा।

पदाधिकारीगण : अध्यक्ष श्री बच्छराजजी अभाणी, उपाध्यक्ष-श्री रिधकरणजी बोथरा, मंत्री-श्री विनोदजी मिन्नी, सहमंत्री-श्री अशोकजी बोथरा एवं श्री किशोरकुमारजी कोठारी, कोषाध्यक्ष-श्री पारसमलजी भूरट।

कार्यकारिणी सदस्य : २१ सदस्यों का निर्वाचन सर्वसम्मति से हुआ।

१. श्री जयचंदलालजी मिन्नी, २. श्री किशनलालजी बोथरा, ३. श्री मोहनलालजी भंसाली, ४. श्री सोहनराजजी सिंघवी, ५. श्री सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया, ६. श्री भंवरलालजी दस्साणी, ७. श्री पन्नालालजी कोचर, ८. श्री फागमलजी अभाणी, ९. श्री सुन्दरलालजी दुगड़, १०. श्री शांतिलालजी कोठारी, ११. श्री अशोककुमारजी मिन्नी, १२. श्री शांतिलालजी डागा, १३. श्री सुभाषजी कांकरिया, १४. श्री महेन्द्रजी कर्णावट, १५. श्री सुभाषजी बच्छावत, १६. श्री ललितजी कांकरिया, १७. श्री अरुणजी मालू, १८. श्री चन्द्रप्रकाशजी डागा, १९. श्री निश्चलजी कांकरिया, २०. श्री पंकजजी बच्छावत एवं २१. श्री राजेन्द्रजी नाहटा

स्थायी आमंत्रित सदस्य : समय-समय पर उपयोगी सुझाव देने हेतु २५ स्थायी आमंत्रित निम्न सदस्य सर्वानुमति से घोषित किये गये–

१. श्री सोनहलालजी गोलछा, २. श्री खड़गसिंहजी बैद, ३. श्री कुन्दनमलजी बैद, ४. श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया, ५. श्री भंवरलालजी बैद, ६. तनसुखराजजी डागा, ७. श्री चाँदमलजी अभाणी, ८. श्री विनोदजी कांकरिया, ९. श्री हस्तीमलजी जैन, १०. श्री कंवरलालजी मालू, ११. श्री कमलसिंहजी कोठारी, १२. श्री कमलसिंहजी भंसाली, १३. श्री गोपालचंदजी बोथरा, १४. श्री माणकचंदजी गेलड़ा, १५. श्री अजयकुमारजी डागा, १६. श्री गोपालचंदजी भूरा, १७. श्री जवाहरलालजी कर्णावट, १८. श्री गौतमचंदजी कांकरिया, १९. श्री सुरेन्द्रजी दफ्तरी, २०. श्री अजयकुमारजी बोथरा, २१. श्री राजेन्द्रकुमारजी बुच्चा, २२. श्री सुरेशकुमारजी मिन्नी, २३. श्री कमलकुमारजी कर्णावट, २४. श्री सुशीलकुमारजी गेलड़ा एवं २५. श्री सुरेन्द्रकुमारजी सेठिया।

सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों के सुचारु संचालन हेतु निम्न महानुभावों का संयोजक एवं सह-संयोजक पद के लिए सर्वसम्मति से चुनाव हुआ।

श्री जैन बुक बैंक

संयोजक	श्री सुभाषजी वच्छावत
सहसंयोजक	श्री अजयकुमारजी डागा

सहसंहयोजक	श्री अजयकुमारजी बोथरा
सहसंयोजक	श्री सुशीलकुमारजी गेलड़ा

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र

मंत्री	श्री ललितकुमारजी कांकरिया
सहमंत्री	श्रीमती गीतिका बोथरा
प्रधानाध्यापक	श्री अरुणकुमारजी तिवारी

श्री महिला उत्थान एवं विकास समिति

संयोजिका	श्रीमती लीलादेवी बोथरा
सहसंयोजिका	श्रीमती प्रभादेवी भंसाली
सहसंयोजिका	श्रीमती किरण हीरावत

श्री जैन धर्म सभा समिति

संयोजक	श्री केवलचंदजी पटवा
सहसंयोजक	श्री केवलचंदजी कांकरिया

श्री लीगल कमेटी

संयोजक	श्री अशोककुमारजी मित्री
सहसंयोजक	श्री ललितकुमारजी कांकरिया

श्री जैन विद्यालय कॉलेज न्यू प्रोजेक्ट कमेटी

संयोजक	श्री सरदारमलजी कांकरिया
सहसंयोजक	श्री सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया

आगामी कार्यकाल के लिए लेखा परीक्षा हेतु के.एस. बोथरा एण्ड कं. का नाम सर्वसम्मति से पारित किया गया।

अन्त में अध्यक्ष महोदय के प्रति धन्यवाद ज्ञापन के वाद जयनाद के साथ बैठक विसर्जित हुई।

— — —

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की साधारण बैठक दि. २७ अक्टुबर, २००२, रविवार को प्रात:काल १० बजे सभा भवन में सभा अध्यक्ष श्री बच्छराजजी अभाणी की अध्यक्षता में आयोजित हुई। मंगलाचरण के पश्चात् मंत्री महोदय द्वारा गत बैठक की कार्यवाही विवरण प्रस्तुत किया गया जो विचार-विमर्श पूर्वक सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया।

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता :

सम्प्रति विद्यालय के वाणिज्य एवं विज्ञान निकाय में कक्षा १ से १२ तक २९०० छात्र शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

आलोज्य सत्र की माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक की परीक्षा में क्रमश: २१० एवं ४५५ छात्र सम्मिलित हुए। परीक्षा फल केवल शतप्रतिशत ही नहीं रहा अपितु गत रिकार्ड्स भी पीछे छोड़ दिये।

उच्चतर माध्यमिक में ८१ प्रतिशत छात्रों ने प्रथम श्रेणी प्राप्त कर विद्यालय को गौरवान्वित किया। १०० छात्रों को स्टार मार्क्स प्राप्त हुए। ६६ छात्र सी.ए. की प्रवेश परीक्षा में सफल रहे। यह अब तक का सर्वोच्च रिकार्ड है।

उच्चतर माध्यमिक परिषद के मतानुसार कोलकाता में श्री जैन विद्यालय कोलकाता का २०वाँ स्थान रहा। यह अपने आप में गौरवपूर्ण है।

विद्यालय का वार्षिक समारोह महाजाति सदन में उत्साह पूर्वक मनाया गया। माननीय अतिथियों ने समारोह में प्रस्तुत कार्यक्रमों की भूयसी प्रशंसा की। इस अवसर पर विद्यालय के पूर्व छात्र श्री महावीर लूणावत ने कम्पनी सेक्रेटरी (सी.एस.) की परीक्षा में सम्पूर्ण भारत में सर्वोच्च अंक प्राप्त कर स्वर्ण पदक प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की। तदर्थ विद्यालय ने विशिष्ट प्रतिभा पुरस्कार से महावीर लूणावत को सम्मानित किया। इसी समारोह में विज्ञान के डॉ. बी.सी. साह को २४ वर्ष तक लगन से एवं निष्ठापूर्वक शिक्षा प्रदान करने के कारण शॉल ओढ़ाकर सरस्वती की रम्य प्रतिमा स्मृति स्वरूप प्रदान कर भावभीना स्वागत किया।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा :

ब्वॉयज विभाग में २१ छात्रों को योग्य शिक्षकों द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती है। आलोच्य सत्र की माध्यमिक परीक्षा में १४९ छात्र प्रविष्ट हुए। परिणाम शत-प्रतिशत रहा। उच्चतर माध्यमिक में कुल १७४ छात्र सम्मिलित हुए। परिणाम शत-प्रतिशत एवं संतोषजनक रहा।

पश्चिम बंग उच्चतर माध्यमिक परिषद ने सन् २००१ के लिए Certificate of Excellence दिये श्री जैन विद्यालय फॉर गर्ल्स को प्रथम स्थान तथा फॉर ब्वॉयज को पांचवां स्थान प्राप्त हुआ। यह हमारे लिए अत्यन्त गौरव का विषय है। श्री जैन विद्यालय हावड़ा के समग्र परिवार के प्रति सभा ने हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित की।

शिक्षा के एक गौरवमय दशक की पूर्णता एवं सभा की प्लेटिनम जुबिली के प्रथम चरण स्वरूप एक भव्य समारोह दिनांक १२ मई २००२ को वातानुकूलित इण्डोर स्टेडियम में आयोजित किया गया। सभा द्वारा संचालित सभी विद्यालयों ने इस महोत्सव में पूर्ण मनोयोग एवं उत्साह से भाग लिया। इस अवसर पर मार्क्सवादी पार्टी के चेयरमेन माननीय श्री विमान वोस, सांसद श्रीमती सरला माहेश्वरी, श्री हरकचंदजी कांकरिया, श्री श्रीचंदजी नाहटा, श्री श्यामसुंदर केजरीवाल ने अपने मार्मिक भावोद्गार व्यक्त किये।

विद्यालय मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया ने अपने स्वागत भाषण में एक डेन्टल कॉलेज एवं एक उच्चस्तरीय तकनीकी कॉलेज के निर्माण की भावना व्यक्त की। श्री हरकचंदजी कांकरिया ने कॉलेज हेतु तत्काल एक करोड़ रुपये की राशि प्रदान करने की घोषणा की। इसी प्रकार डेन्टल कॉलेज हेतु भी एक गुप्त नाम से एक करोड़ रुपये के अनुदान का आश्वासन प्राप्त हुआ। यह गुप्त नाम सभा के अभिन्न अंग श्री सुन्दरलालजी दुगड़ का है।

सभा ने इस सार्वजनिक घोषणा के लिए श्री हरखचन्दजी कांकरिया का शॉल ओढ़ाकर एवं मनोहारी विघ्न विनाशक श्री गणेशजी की प्रति भेंट कर अभिनन्दन किया।

सभा के समर्पित एवं कर्मठ सेवाभावी कार्यकर्त्ता श्री रिखवदासजी भंसाली एवं अभिन्न सहयोगी श्री सुन्दरलालजी दुगड़ का भी इस अवसर पर भव्य स्वागत किया गया।

अत्यन्त लगनशील, निष्ठावान कार्यकर्त्ता श्री भंवरलालजी का मरणोपरान्त अभिनन्दन उनके सुपुत्रों ने स्वीकार किया, यह क्षण अत्यन्त मार्मिक एवं भाव प्रवण था।

इस अवसर पर आगम अहिंसा प्राकृत एवं समता संस्थान के शोधाधिकारी डॉ. सुरेशजी सिसोदिया को जैन आगमों में शोध के लिए शॉल ओढ़ाकर अभिनन्दन-पत्र समर्पित किया गया।

इस अवसर पर 'शिक्षा एक गौरवपूर्ण दशक' स्मारिका का लोकार्पण सांसद श्रीमती सरला माहेश्वरी ने किया। इस भव्य संग्रहणीय एवं पठनीय स्मारिका का सम्पादन प्रधान सम्पादक श्री भूपराजजी जैन एवं उनकी टीम ने किया तदर्थ सभा की ओर से हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापन।

इस कार्यक्रम के संयोजक श्री रिधकरणजी वोथरा एवं श्री ललितजी कांकरिया थे।

इस अवसर पर सभा, हावड़ा विद्यालय एवं हॉस्पीटल के सच्चे हितैषी श्री वादल वोस का मरणोपरान्त अभिनन्दन उनके सुपुत्र श्री अरिन्दम वोस ने ग्रहण किया।

श्री हरकचंदजी कांकरिया जैन विद्यालय, जगतदल :

सम्प्रति ६०० छात्र-छात्राएँ अध्ययनरत हैं। कक्षा १० की मान्यता के लिए जो आवेदन माध्यमिक परिषद को दिया था, खेद है कि वह अस्वीकृत हो गया। कक्षा ९ का रजिस्ट्रेशन अन्य विद्यालय से करवाया गया। मान्यता के लिए अन्य विकल्प पर विचार किया जा रहा है।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र : राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय :

पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा इसको मान्यता देने के कारण अब इसमें अध्ययन के लिए छात्राओं की संख्या में वृद्धि होगी, ऐसा विश्वास है। सम्प्रति ७० छात्राओं ने प्रवेश लिया है। इसके पदाधिकारी पूर्ववत हैं।

श्री जैन बुक बैंक :

२४ जून २००२ को आयोजित बुक बैंक के समारोह के विशिष्ट अतिथि पश्चिम बंगाल के वित्त मंत्री माननीय श्री असीम दासगुप्ता एवं श्री जेठमलजी बाँठिया थे। सभा द्वारा इस वर्ष १२५ ग्रामीण विद्यालयों की मारफत १५०० छात्र-छात्राओं को पाठ्यक्रम की पुस्तकें नि:शुल्क प्रदान की गई। पुराने सेटों का वितरण लगभग ८००० छात्र-छात्राओं में हुआ। इस वर्ष यह संख्या ९००० से १२००० तक पहुँच गई है।

जरुरतमंद विद्यालयों की शृंखला में काशीपुर स्थित श्री आर्य विकास विद्यालय में कम्प्यूटर सेन्टर प्रारंभ किया गया है। इसके संयोजक श्री सुभाष बच्छावत हैं।

ग्रामीण महिला रोजगार योजना :

विगत वर्षों की तरह मेदिनीपुर के फुलसीटा निवारण सेवा सदन की मारफत बेरोजगारों की सहायता के लिए बिना ब्याज जो लोन दिया जाता है, उससे प्रभावित होकर ऐसे ही कार्य संपादन के लिए माननीय श्री झूमरमलजी बच्छावत का फुलसीटा मेदिनीपुर जाते हुए कोयलाघाट के पास आकस्मिक दुर्घटना में स्वर्गवास हो गया। यह अनभ्र वज्रपात था।

श्री जैन बुक बैंक के समारोह के आयोजन के अवसर पर स्व. झूमरमलजी का मरणोपरान्त अभिनन्दन उनके परिवारजनों ने स्वीकार किया, यह क्षण अत्यन्त मार्मिक था एवं श्री झूमरमलजी की स्मृति होते ही उपस्थित जनों के नेत्र सजल हो गये।

श्री जैन मेडिकल डेन्टल कॉलेज एवं उच्चस्तरीय कॉलेज :

सभा के ७४वें स्थापना दिवस पर सभा के कर्णधारों ने शांतिदूत परम प्रभावक आचार्य श्री विजय नित्यानन्द सूरिश्वरजी म.सा. के सामने डेन्टल मेडिकल कॉलेज के वारे में चर्चा की थी। यह स्वप्न अब आकार ग्रहण कर रहा है। काशीपुर क्षेत्र में एवरेडी इण्डिया को ४५५ कट्ठा जमीन का एम.ओ.यु. तय करके २५ लाख रुपये का चेक उन्हें दिया गया है। नवम्बर-दिसम्बर तक यह कार्य पूरी होने की उम्मीद है। इस कार्य में अपने समाज के कुशल डेन्टल डॉक्टर श्री अशोकजी सुराणा ने हर तरह के सहयोग का आश्वासन दिया है।

सेवा : श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा :

अत्याधुनिक मशीनों से सज्जित ४ ऑपरेशन थियेटर युक्त यह हॉस्पीटल हावड़ा एवं आसपास के अंचलों के लिए वरदान सावित हुआ है।

डायलिसिस सेन्टर :

श्री ईश्वरीप्रसादजी टांटिया के सहयोग से ४ मशीनों से इस सेन्टर की स्थापना हुई। इसका वाटर ट्रीटमेन्ट प्लान्ट श्री अमरनाथजी गुप्ता के सौजन्य से निर्मित है, तदर्थ दान-दाताओं को हार्दिक धन्यवाद।

जंबू देवी सम्पतलाल पटवा इकोलोजी सेन्टर :

राष्ट्रपिता पूज्य बापू की जन्मतिथि २ अक्टुबर, २००२ को भीनासर के श्री प्रदीपजी पटवा के परिवार के सहयोग से इस सेन्टर का लोकार्पण हुआ। प्रसन्नता की बात है कि टाटा मेमोरियल सेन्टर में ४-५ वर्ष से कार्यरत डॉक्टरों की टीम कोलकाता की थी। उन्होंने इस चिकित्सालय में सेवा देने की इच्छा प्रकट की। ये मेडिसिन एवं सर्जरी के डॉक्टर हैं। सोमवार से शुक्रवार तक यहाँ रोगियों को देखते हैं। इस चिकित्सालय में कैंसर के ऑपरेशन एवं केमोथेरेपी का कार्य संभव हो सकता है। 'रे' के लिए चित्तरंजन कैंसर हॉस्पीटल को रेफर किया जाता है।

इस अवसर पर हॉस्पीटल के हितैषी एवं दानदाता श्री सत्यनारायणजी खेतान् का अभिनन्दन, निशुल्क शय्या प्रदान करने के लिए किया गया।

प्लास्टिक सर्जरी कैम्प :

इस वर्ष दिनांक १ से २५ दिसम्बर तक इण्डर प्लास्ट जर्मन के डॉक्टर दल के सहयोग से नि:शुल्क प्लास्टिक सर्जरी कैंप का आयोजन हुआ। जो विगत वर्षो की तरह अत्यन्त जनोपयोगी सिद्ध हुआ है।

सभा की महिला विभाग एवं श्रीमती फूलकुंवर कांकरिया के प्रयत्नों द्वारा श्री भंसाली परिवार एवं श्रीमती करुणा बांठिया के सौजन्य से स्व. आचार्य श्री नानालालजी म.सा. की पुण्य तिथि पर नि:शुल्क ऑपरेशन एवं विकलांग शिविर दिसम्वर के अंतिम सप्ताह में आयोजित किये जाते हैं।

हॉस्पीटल के सभी विभाग सुचारुरूपेण कार्य कर रहे हैं। इसमें 'हाईकेयर युनिट' और स्थापित हो गया है। उच्चस्तरीय टेस्टिंग के लिए 'रेनवक्सी लेवोरेटरी' के साथ हॉस्पीटल का सम्वन्ध हो गया है।

हॉस्पीटल की प्रशासनिक समिति और सेवाभावी कार्यकर्त्ताओं की लगन से यह हॉस्पीटल दिन-प्रतिदिन प्रगति की ओर उन्मुख है।

श्री मानव सेवा प्रकल्प :

इसके अन्तर्गत भरण-पोषण से वंचित एक सौ लोगों को माह में दो बार खाद्य सामग्री नि:शुल्क प्रदान की जाती है।

सभा का ७५वाँ स्थापना दिवस समारोह :

पूज्य मुनि श्री पुन्यरत्नचन्द्रजी म.सा. की सान्निध्यता में सभा का ७५वाँ स्थापना दिवस समारोह आयोजित किया गया। इस अवसर पर तेले की तपस्या करने वाले तपस्वियों का सभा द्वारा वहुमान किया गया। लम्वे समय तक धर्म सभा के संयोजक रहे श्री केवलचंदजी पटवा के द्वारा कोलकाता छोड़कर बीकानेर जाने के निर्णय के कारण सभा ने स्मृति चिन्ह एवं शॉल प्रदान कर सम्मान किया।

मंत्री महोदय द्वारा आय-व्यय की अंकेक्षित कन्सोलिडेटेड रिपोर्ट प्रस्तुत करने पर गहन मंत्रणा पूर्वक सर्वसम्मति से स्वीकार की गई। सभा के माननीय सदस्य श्री मोहनलालजी भंसाली ने कुछ सवाल इस रिपोर्ट के सम्बन्ध में किये जिनका उत्तर मेसर्स बोथरा एण्ड कम्पनी के श्री संदीपजी कोचर ने देकर समाधान किया।

आगामी वर्ष के लिए मेसर्स बोथरा एण्ड कम्पनी को सर्वसम्मति से ऑडिटर निर्वाचित किया गया।

सभा की प्रगति के आधार कार्यकर्त्ताओं से क्षमायाचना पूर्वक मंत्री महोदय ने पीठासन अधिकारी के प्रति धन्यवाद ज्ञापन के साथ सभा की बैठक सम्पन्न घोषित की।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की वार्षिक साधारण सभा रविवार, ३० जनवरी २००३ को प्रात: १० बजे अध्यक्ष श्री वच्छराजजी अभाणी की अध्यक्षता में आयोजित की गई।

मंगलाचरण के पश्चात् मंत्री महोदय ने गत वैठक की कार्यवाही सभा के समक्ष प्रस्तुत की जिसे गंभीर मंत्रणा के वाद सर्वसम्मति से स्वीकार की गयी।

सन् १९२८ में संस्थापित यह सभा ने अपने लोक कल्याणकारी कार्यो के ७५ वर्ष पूरे कर लिए। पचहत्तर वर्षीय यह गौरवयात्रा शताव्दी की ओर अपने कदम वढ़ा चुकी है। विगत वर्षो में जिस आत्मीयता, अध्यवसाय एवं असीम सेवा भाव से एकजुट होकर कार्यकर्त्ताओं ने इसे आगे वढ़ाया और लोकप्रिय वनाया, विश्वास है कि शताव्दी की ओर इसके चरण संचरण और अधिक कारगर सिद्ध होंगे।

श्री जैन विद्यालय कोलकाता :

इस समय २८०० छात्र अध्ययनरत हैं। इसकी माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं में क्रमश: २३५ और ४७४ छात्र सम्मिलित हुए। माध्यमिक परीक्षा में ६९ छात्रों ने स्टार मार्क्स प्राप्त किये। ७८ प्रतिशत छात्र प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुए। तृतीय श्रेणी में एक भी छात्र नहीं आया और कोई असफल भी नहीं हुआ, ऐसा विद्यालय के इतिहास में प्रथम बार हुआ है।

उच्चतर माध्यमिक में विज्ञान के छात्र श्वेतांक शेखर ने ८७६ एवं वाणिज्य विभाग के आदित्य बोथरा ने ८५० अंक प्राप्त कर एक नवीन अध्याय की रचना की। सी.ए. की प्रवेश परीक्षा में विज्ञान के ९० छात्रों में से ८१ छात्रों ने सफलता अर्जित कर विद्यालय का गौरव बढ़ाया।

प्रतिभा पुरस्कार :

गतवर्ष इसी विद्यालय से उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में उत्तीर्ण छात्र ने कम्पनी सेक्रेटरी (सी.एस.) की परीक्षा मे सर्वोच्च अंक अर्थात् स्वर्ण पदक प्राप्त कर विद्यालय के नाम को रोशन किया। इस छात्र विजय धानुका को प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. श्याम चक्रवर्ती ने सभा की ओर से विशिष्ट प्रतिभा पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया।

विद्यालय के सुचारु संचालन हेतु सभा इसके अध्यक्ष श्री सोहनराजजी सिंघवी, मंत्री श्री विनोदजी कांकरिया, प्राचार्य श्री शरतचन्द्र पाठक एवं वाइस प्रिंसिपल श्री अरुणकुमारजी तिवारी के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती है।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा फॉर ब्वायज :

सम्प्रति २१०० छात्र अध्ययनरत हैं। इस वर्ष माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में १५८ एवं १९८ छात्र सम्मिलित हुए। परीक्षा फल शतप्रतिशत रहा। इसके अध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड़, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया, मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्री आर.ए. सिंह हैं।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा फॉर गर्ल्स में इस वर्ष २२०० छात्राएँ अध्ययनरत हैं। इसकी माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में क्रमश: १६३ एवं २६२ छात्राएँ प्रविष्ट हुई। परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा।

इसके अध्यक्ष श्री पन्नालालजी कोचर, उपाध्यक्ष श्री महेन्द्रजी कर्णावट, मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्रीमती ओलगा घोष हैं।

इस वर्ष अगस्त माह में कम्पनी ने आइ.एस.ओ.-९००१ प्रमाण पत्र इसकी पढ़ाई एवं व्यवस्था के लिए प्रदान किया है। दोनों ही विद्यालयों की समुचित व्यवस्था हेतु प्रबन्ध समिति के पदाधिकारीगण साधुवाद के पात्र हैं।

इग्नू (इंदिरा गाँधी ओपन युनिवर्सिटी) :

इस स्टडी सेन्टर की मान्यता श्री जैन विद्यालय हावड़ा को प्राप्त हुई है। इसमें वाणिज्य विषय की स्नातकीय तथा स्नातकोतर कक्षाओं का अध्ययन शनिवार एवं रविवार को कोचिंग कक्षाओं के माध्यम से कराया जाता है। इस वर्ष इसमें २१५ छात्रों ने प्रवेश लिया है। इसमें करीब १००० तरह के कोर्स हैं। अगले वर्ष यहाँ कुछ और कोर्स प्रारंभ करने का विचार है। इसके संयोजक श्री राजकुमारजी डागा, श्री ललितजी कांकरिया एवं को-ऑर्डिनेटर डॉ. गोपालजी दूबे हैं।

श्री हरकचंद कांकरिया जैन विद्यालय – जगतदल :

सम्प्रति इसमें कक्षा ८ तक ६०० छात्र-छात्राओं को शिक्षा प्रदान की जा रही है। कक्षा १० तक की मान्यता के लिए माध्यमिक बोर्ड को आवेदन किया जा चुका है। शीघ्र मान्यता मिलने की संभावना है।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र :

शनिवार एवं रविवार को कोचिंग के माध्यम से कक्षा १० एवं १२ की लड़कियों को शिक्षा दी जाती है। इस वर्ष उनकी संख्या १५० के लगभग पहुँच गई है। पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा इस कोर्स को मान्यता मिल जाने के कारण अब किसी विद्यालय या कॉलेज में इस कोर्स के पास कर लेने पर प्रवेश पा सकते हैं।

भावी योजनाएँ :

श्री जैन डेन्टल कॉलेज के लिए ४५४ कट्ठा जमीन क्रय करने के लिए एवरेडी कम्पनी को अग्रिम राशि दी जा चुकी है। अरबन लैण्ड सिलिंग से स्वीकृति न मिलने के कारण भावी कार्यवाही रुकी हुई है। इसके पास करवाने का प्रयास सतत जारी है।

श्री जैन बुक बैंक एवं ग्रामीण विकास योजना :

श्री जैन बुक बैंक का शिक्षा प्रचार-प्रसार का कार्य सतत २५ वर्षो से लोकप्रियता के चरम शिखर पर पहुँच गया। रजत जयन्ती समारोह २९ जून २००३ को सभा भवन में सोल्लास सम्पन्न हुआ। इस वर्ष इस योजना पर २० लाख रुपये निम्न कार्यों पर व्यय करने का अनुमान रखा था।

१. आलोच्य सत्र में १२५ स्कूलों के माध्यम से १५०० छात्र-छात्राओं को पाठ्यक्रम के सेट नि:शुल्क वितरित किये गये। लगभग १२००० छात्र-छात्राएँ इससे लाभान्वित हो रहे हैं।

२. निम्न विद्यालयों में कम्प्यूटर सेन्टर की स्थापना की गई।
अ. श्री आर्य विकास विद्यालय, बी.टी. रोड, कोलकाता
ब. देशप्रिय बालिका विद्यालय, दमदम

३. तीन विद्यालयों में विज्ञान लेबोरेटरी की स्थापना का निश्चय

४. तीन विद्यालयों में लाइब्रेरी की पुस्तकें प्रदान करना

५. लड़कियों के पाँच स्कूलों में शौचालय निर्माण

६. जरुरतमंद स्कूलों में वाटर प्रोजेक्ट लगाना

इस प्रवृत्ति के संयोजक श्री सुभाष बच्छावत का अभिनन्दन रजत मान पत्र, शॉल व माल्य प्रदान कर इस अवसर पर किया गया। इस अवसर पर टीम कार्यकर्त्ताओं एवं दानदाताओं को स्मृति चिन्ह प्रदान कर अभिनन्दन किया।

पीड़ित मानवता की सेवा का साकार रूप है श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा। आलोच्य सत्र में निम्न कार्य संपादन हुए।

१. **डायलिसिस युनिट :**
गतवर्ष ४ मशीनों से यह युनिट प्रारम्भ हुआ था। रोगियों की अधिक संख्या के कारण एक मशीन और क्रय कर ली गई। अब भी और मशीनों की आवश्यकता है जो दानदाताओं के सहयोग से क्रय की जायेगी।

२. **चक्षु विभाग :**
इस वर्ष इसमें नई फेको मशीन ली गई है। इससे ऑपरेशन बढ़ने की संभावना बलवती हो गई है।

३. **सी. आर्म मशीन :**
इस एक्सरे मशीन के लगने से आर्थोपैडिक ऑपरेशन में वृद्धि हुई है।

४. **आइ.टी.यू. एवं आइ.सी.यू. :**
सम्प्रति इसमें १२ शैय्याओं की व्यवस्था है। यह रोगियों से भरा रहता है। प्रतिदिन अन्य रोगियों को भर्ती करने से इनकार करना पड़ता है। फलत: प्रबन्ध समिति ने चौथे तल्ले पर बाइस शय्याओं से युक्त अत्याधुनिक इन्टेनसिव केयर यूनिट बनाने का निर्णय लिया एवं इस पर कार्यारंभ हो गया। ४० लाख रुपये व्यय की संभावना है।

५. **ऑक्सीजन :**
हॉस्पीटल परिसर में तरल ऑक्सीजन का प्लान्ट लग जाने के कारण आई.सी.यू. एवं ऑपरेशन थियेटर का कार्य सुविधाजनक हो गया है।

६. **नि:शुल्क शल्य चिकित्सा शिविर :**

ए. दिनांक २ दिसम्बर से १४ दिसम्बर तक इण्टर प्लास्ट जर्मनी के सहयोग से ८९ व्यक्तियों की नि:शुल्क प्लास्टिक सर्जरी।

बी. पद्म श्री डॉ. शरद दीक्षित के सहयोग से दि. २२ जनवरी से २५ जनवरी, २००३ तक १२४ व्यक्तियों की प्लास्टिक सर्जरी।

सी. इण्टर प्लास्ट जर्मन द्वारा दि. १ मार्च से १९ मार्च तक ६० व्यक्तियों की प्लास्टिक सर्जरी।

डी. दिनांक २६ जनवरी से ३ फरवरी तक सैंथिया में २८ पोलियोग्रस्त को केलीपर एवं ३५ विकलांगों को जयुपर पैर नि:शुल्क प्रदान किये।

ई. पटकटिंग आसाम में २७ मार्च से ३ अप्रैल को १०३ पोलियोग्रस्त लोगों को केलीपर एवं २३ विकलांगों को नि:शुल्क जयपुर पैर।

एफ. हाईड्रोसिल शिविर : १६ फरवरी से २३ फरवरी तक ३५ व्यक्तियों का ऑपरेशन स्व. आचार्य श्री नानालालजी म.सा. की पुण्य स्मृति में आयोजित नि:शुल्क शिविर में लगभघ २५० नेत्र शल्य चिकित्सा, २० केलीपर एवं ३५ जयपुर पैर प्रदान।

७. **अमरनाथ गुप्ता टेलिमेडिसन सेन्टर :**
२३ नवम्बर २००३ को जैन हॉस्पीटल हावड़ा में इस सेन्टर का लोकार्पण श्री अमरनाथ गुप्ता परिवार ने किया। यह अपोलो ग्रुप चेन्नई, हैदरावाद, दिल्ली से संवद्ध है। इनके विशेषज्ञ डॉक्टरों से किसी भी मरीज के सम्बन्ध में सलाह मशविरा किया जा सकता है।

८. **श्री भीकमचंद भंसाली नर्सिंग स्कूल :**
इस भवन के निर्माण हेतु इसका भूमि पूजन श्रीमती एवं श्री विमलचंद भंसाली द्वारा सम्पन्न हुआ। इसके संचालन एवं कार्य निष्पादन हेतु श्री राज भंसाली, अमेरिका ने ग्यारह लाख रुपये प्रदान करने का आश्वासन दिया है। इसको चलाने के लिए पास की जमीन लेने का प्रयास चल रहा है।

९. **मानव सेवा प्रकल्प योजना :**
गत अन्य वर्षो की भाँति जरुरतमंद एक सौ व्यक्तियों को माह में दो वार राशन सामग्री नि:शुल्क प्रदान की जाती है।

१०. सभा का स्थापना दिवस :

सभा का ७६वाँ स्थापना दिवस समारोह उपाध्याय श्री ईश्वरमुनि, आशुकवि श्री रंग मुनि एवं महासती श्री समप्रज्ञाजी म.सा. के सान्निध्य में आयोजित हुआ।

सभा भगवान महावीर का जन्म कल्याणक विगत अनेक वर्षो से श्री जैन विद्यालय कोलकाता के साथ मनाती आ रही है। इस वर्ष भी ऐसा ही किया गया।

पर्युषण पर्व अराधना : इस वर्ष समता प्रचार संघ चित्तौड़गढ़ के स्वाध्यायी श्री सुशीलजी मेहता ने कराई। श्री जैन विद्यालय के छात्रों को भी उन्होंने सप्त कुव्यसनों की हानियों से अवगत कराया एवं इनसे दूर रहने की सलाह दी। छात्रों ने इस सम्वन्ध में अपनी शंकाओं का समाधान किया एवं लगभग पचास छात्रों ने आजीवन सप्त कुव्यसनों के त्याग के सौगन्ध लिए।

आपको यह अवगत कराते हुए प्रसन्नता है कि आलोच्य सत्र में श्री जैन हॉस्पीटल को निम्न सफलताएँ प्राप्त हुई हैं–

१, इसे आइ.एस.ओ.–९००१ की मान्यता प्राप्त हो गई है। मान्यता प्राप्त हावड़ा जिले का यह प्रथम अस्पताल है।

२. इनडोर विभाग में प्राय: १५० रोगी भर्ती रहते हैं, यह उसकी लोकप्रियता का लक्षण है।

डायलिसिस महीने में प्राय: ३०० रोगियों की हो जाती है। नो लोस, नो प्रॉफीट हमारी नीति प्राय: सफल रही है। खर्च के वाद कुछ लाभ होता है जिससे नई मशीनें क्रय की जा सकती हैं।

मंत्री एवं संयुक्त मंत्री के प्रयासों से यह अस्पताल विकास की सीढ़ियों पर आरोहण कर रहा है। ये धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रतिस्पर्धा के इस युग में परिवर्तन आवश्यक दृष्टिगत होता है। हमें भी अपनी पद्धति में सुधार लाने की आवश्यकता है। इसके लिए हमें प्रोफेशनलिज्म का अवलम्व लेना होगा। भविष्य का विकास इसी पर निर्भर करेगा। सदस्यों को इस पर गंभीरतापूर्वक विचार करने का आग्रह है। अपनी बात के समर्थन में मंत्री प्रवर ने एक कथानक का सहारा लिया।

पुण्याई समाप्त होने पर सेठ ने विदा होती लक्ष्मी से वर मांगा कि उनकी सन्तानें मिलजुल कर प्रेम, सहयोग एवं सद्भाव पूर्वक रहे। लक्ष्मीजी वर देकर विदा हो गई किन्तु कुछ समय वाद स्वत: लौट आई। जिज्ञासा करने पर वताया कि जहाँ प्रेम, पुरुषार्थ एवं परिश्रम है, वहाँ लक्ष्मी को रहना ही होगा।

यही रहस्य सभा के उन्नयन का है। कार्यकर्त्ताओं का पुरुषार्थ, प्रेम और सद्भाव इसकी विकास यात्रा का आधार है।

सभा के कार्यक्रमों के प्रचार-प्रसार हेतु महानगर के दैनिक पत्रों के सहयोग के प्रति आभार व्यक्त किया। सभा के सभी अंगों के पारस्परिक सहयोग हेतु भी साधुवाद।

कार्य संपादन की त्रुटियों हेतु क्षमायाचना के बाद २८ दिसम्बर, ०३ को आयोज्य स्नेह-मिलन की सूचना दी गई।

मन्त्री महोदय द्वारा कन्सोलिडेटेड बेलेन्ससीट सभा के सदन पटल पर रखी गयी जो विचार-विमर्श पूर्वक सर्वसम्मति से स्वीकृत की गई।

आगामी कार्यकाल के लिए विश्वस्त मंडल, पदाधिकारी, कार्यकारिणी सदस्य एवं स्थायी आमंत्रित सदस्यों का निर्वाचन सर्वसम्मति से किया गया, जो निम्न है–

विश्वस्त मंडल :

१. श्री सरदारमलजी कांकरिया
२. श्री रिखबदासजी भंसाली
३. श्री बच्छराजजी अभाणी
४. श्री सुन्दरलालजी दुगड़

पदाधिकारी : अध्यक्ष-श्री बालचंदजी भूरा, उपाध्यक्ष-श्री रिधकरणजी बोथरा, मंत्री-श्री विनोदजी मिन्नी, सहमंत्री-श्री अशोकजी बोथरा, श्री किशोरजी कोठारी, कोषाध्यक्ष-श्री शांतिलालजी डागा।

कार्यकारिणी सदस्य : श्री जयचन्दलालजी मिन्नी, श्री सोहनराजजी सिंघवी, श्री सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया, श्री भँवरलालजी दस्साणी, श्री फागमलजी अभाणी, श्री पन्नालालजी कोचर, श्री मोहनलालजी भंसाली, श्री किशनलालजी बोथरा, श्री पारसमलजी भूरट, श्री अशोकजी मिन्नी, श्री सुभाषजी वच्छावत, श्री सुभाषचंदजी कांकरिया, श्री ललितकुमारजी कांकरिया, श्री राजेन्द्रकुमारजी नाहटा, श्री महेन्द्रकुमारजी कर्णावट, श्री शांतिलालजी कोठारी, श्री गोपालचंदजी बोथरा, श्री अरुणजी मालू, श्री निश्चलजी कांकरिया, श्री राजकुमारजी डागा, श्री चन्द्रप्रकाशजी डागा।

स्थायी आमंत्रित सदस्य :

१. श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया, २. श्री सोहनलालजी गोलछा, ३. श्री भंवरलालजी वैद, ४. श्री चांदमलजी अभाणी, ५. श्री कुन्दनमलजी वैद, ६ श्री खड़गसिंहजी वैद, ७. श्री मानिकचंदजी गेलड़ा, ८. श्री कमलसिंहजी कोठारी, ९. श्री कमलसिंहजी भंसाली, १०. श्री तनसुखराजजी डागा, ११. श्री सागरमलजी भूरा, १२. श्री हस्तीमलजी जैन, १३. श्री गौतमचंदजी कांकरिया, १४. श्री संजयजी मिन्नी, १५. श्री कंवरलालजी मालू, १६. श्री विनोदजी कांकरिया, १७. श्री

गोपालचंदजी भूरा, १८. श्री अजयकुमारजी बोथरा, १९. श्री अजयकुमारजी डागा, २०. श्री राजेन्द्रकुमारजी बुच्चा, २१. श्री सुरेन्द्रकुमारजी दफ्तरी, २२. श्री पंकजजी बच्छावत, २३. श्री सुरेन्द्रकुमारजी सेठिया, २४. श्री कमलजी करनावट, २५. श्री जयचन्दलालजी मुकीम, २६. श्री जय बोथरा, २७. श्री अजयजी अभाणी, २८. श्री भागीचंदजी डागा, २९. श्री कमलजी मुकीम, ३०. श्री प्रदीपजी पटवा, ३१. श्री सिद्धार्थजी गुलगुलिया।

सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों के संचालन एवं कार्य संपादन हेतु भी संयोजक एवं सहसंयोजक पद पर निम्न महानुभावों का चयन सर्वसम्मति से किया गया।

१. श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र

मंत्री	श्री अशोकजी बच्छावत
सहमंत्री	श्रीमती गीतिका बोथरा
प्राचार्य	श्री अरुणकुमारजी तिवारी

२. श्री जैन बुक बैंक

संयोजक	श्री सुभाषजी बच्छावत
सहसंयोजक	श्री अजय बोथरा
सहसंयोजक	श्री सुशील गेलड़ा
सहसंयोजक	श्री सुरेन्द्र दफ्तरी

३. श्री जैन धर्म सभा समिति

संयोजक	श्री चांदमलजी अभाणी
सहसंयोजक	श्री केवलचंदजी कांकरिया
सहसंयोजक	श्री जवाहरलालजी करणावट

४. श्री लीगल कमेटी :

संयोजक	श्री अशोकजी मिन्नी
सहसंयोजक	श्री किशोरजी कोठारी

५. श्री महिला उत्थान एवं विकास समिति

संयोजिका	श्रीमती लीलादेवी बोथरा
सहसंयोजिका	श्रीमती प्रभादेवी भंसाली
सहसंयोजिका	श्रीमती किरण हीरावत

६. श्री जैन विद्यालय/कॉलेज प्रोजेक्ट कमेटी :

संयोजक	श्री सरदारमलजी कांकरिया
सहसंयोजक	श्री सुरेन्द्रजी वाँठिया

आगामी कार्य के लिए श्री के.एस. बोथरा एण्ड कं. की सर्वसम्मति से लेखा-परीक्षक के रूप में नियुक्ति की गई।

पीठासीन अध्यक्ष महोदय को धन्यवाद के बाद सभा की कार्यवाही विसर्जित हुई।

x x x

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की वार्षिक साधारण सभा की बैठक दि. १९ दिसम्बर २००४ को प्रात: १० बजे सभा भवन में अध्यक्ष श्री बालचंदजी भूरा की अध्यक्षता में संपन्न हुई।

मंगलाचरण के पश्चात् मंत्री महोदय ने गत बैठक की कार्यवाही को पढ़कर सुनाया जिसे सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

श्री फूसराज बच्छावत पथ : सभा के संस्थापक सदस्य एवं कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री फूसराज बच्छावत कार्यकर्त्ताओं के अजस्र प्रेरणा स्रोत थे। उनकी स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए सुकियस लेन नाम का परिवर्तन श्री फूसराजजी बच्छावत पथ करने का निर्णय कलकत्ता कॉरपोरेशन ने अपनी बैठक में १८ अगस्त, २००४ को कर दिया। यह एक कार्यकर्त्ता का सच्चा सम्मान था। इस हेतु १६ जनवरी, २००५ को सभा भवन में एक आयोजन रखा गया। इसमें नाम परिवर्तन के साथ श्री बच्छावतजी की मूर्ति के लोकार्पण का निश्चय किया गया।

शिक्षा :

श्री जैन विद्यालय कोलकाता : इस वर्ष परीक्षाफल निम्नप्रकारेण रहा जो शत-प्रतिशत एवं संतोषजनक था।

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	पास	कुल	स्टार मार्क्स
माध्यमिक	१६६	६०	–	२२६	–
उच्चतर माध्यमिक	३५७	७७	१६	४५०	७७

सम्प्रति इसके अध्यक्ष श्री सोहनराजजी सिंघवी, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रजी वाँठिया, मन्त्री श्री सरदारमलजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्री शरतचन्द्रजी पाठक हैं।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा – ब्वॉयज विभाग :

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	पास	कुल
माध्यमिक	९७	४५	१	१४३
उच्चतर माध्यमिक	६६	९४	१५	१७५

इसके अध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड़, उपाध्यक्ष श्री राजेन्द्रजी नाहटा, मंत्री श्री ललितजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्री आर.ए. सिंह हैं।

श्री जैन विद्याल हावड़ा – गर्ल्स विभाग :

माध्यामिक में इस वर्ष १४८ एवं उच्चतर माध्यमिक में २६७ छात्राएँ सम्मिलित हुईं। परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा।

हावड़ा स्थित दोनों जैन विद्यालयों में आगामी सत्र से विज्ञान की पढ़ाई शुरू करने का निर्णय लिया गया।

इसके अध्यक्ष श्री पन्नालालजी कोचर, उपाध्यक्ष श्री महेन्द्रजी कर्णावट, मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया, प्राचार्य श्रीमती ओल्गा घोष हैं।

श्री हरकचंद कांकरिया जैन विद्यालय–जगतदल : पश्चिम बंगाल सरकार ने इसे आठवीं तक की मान्यता प्रदान कर दी है। शीघ्र ही माध्यमिक की मान्यता मिलने की संभावना है। सम्प्रति ६०० छात्र-छात्राएँ यहाँ अध्ययनरत हैं। इसके अध्यक्ष श्री हरकचंदजी कांकरिया, उपाध्यक्ष श्री सुरेन्द्रजी बाँठिया एवं मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया हैं।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय : श्री जैन विद्यालय, हावड़ा में यह अध्ययन केन्द्र चल रहा है। इस वर्ष करीव ३५० छात्र सम्मिलित हुए। कुछ और नये कोर्स इसमें प्रारम्भ करने की योजना है। इसकी प्रगति संतोषजनक है। इसके संयोजक श्री राजकुमारजी डागा, श्री ललितजी कांकरिया एवं को-ऑर्डिनेटर डॉ. गोपाल दूवे हैं।

तारादेवी जैन विद्यालय, सागर माधोपुर : इसमें प्राथमिक कक्षाओं तक की शिक्षा दी जाती है। इसका प्रवन्ध श्री जैन विद्यालय हावड़ा ने संभाल लिया है।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र : यह सम्प्रति मंथरगति से चल रहा है। इसके मंत्री श्री अशोक बच्छावत, सहमंत्री श्रीमती गीतिका वोथरा एवं प्रधानाध्यापक श्री अरुणकुमारजी तिवारी हैं।

जैन शिक्षण संस्थान संगठन : समग्र भारतवर्ष में जैन शिक्षण संस्थानों में एकरूपता लाने तथा उच्चस्तरीय तकनीकी शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से इस संगठन की नींव रखी गई। सम्प्रति इसके अन्तर्गत १७०० शिक्षण संस्थान हैं। इसका एक सेमीनार पूना में आयोजित किया गया। हमारे यहाँ से शिक्षा जगत में अनेक वर्षो से कार्यरत श्री सरदारमलजी कांकरिया के साथ एक दल– सर्वश्री रिखवदासजी भंसाली, सोहनराजजी संघवी, पन्नालालजी कोचर, विनोदजी कांकरिया, ललितजी कांकरिया एवं विनोदजी मिन्नी इसमें भाग लेने के लिए गये। इस सेमीनार में विभिन्न विषयों के विशषज्ञों ने अपने विचार रखे ताकि हम भी तदनुरूप वदलाव ला सकें एवं स्तर ऊँचा उठा सकें।

इस एफ.जी.ई.आई. के अध्यक्ष श्री शांतिलालजी मूथा पूना एवं बैंगलोर के श्री चैनरूपजी हैं, जो अत्यन्त प्रभावशाली रहे।

श्री जैन बुक बैंक : आलोच्य सत्र में २७ जून २००४ को आयोजित समारोह में १७०० सेट पाठ्य पुस्तकें छात्राओं को नि:शुल्क वितरित की गई। पुनर्वितरण में १० हजार सेटों का कार्य नये छात्र-छात्राओं में किया गया। इस अवसर पर कम्प्यूटर सेट, लायब्रेरी के लिए पुस्तकें, साइन्स लेबोरटरी का सामान विभिन्न विद्यालयों को उपलब्ध कराया।

सोनारपुर के फतेसिंह नाहर विद्यालय में एक तल्ले का निर्माण कर इसे उच्च माध्यमिक बनाने में सभा ने सहयोग प्रदान किया। संयोजकीय टीम का कार्य धन्यवादार्थ है।

श्री जैन हॉस्पीटल एवं रिसर्च सेन्टर, हावड़ा : आलोच्य सत्र में इस मानव सेवा मन्दिर में काफी परिवर्तन हुए। आइ.टी.यु. को २२ शैय्याओं युक्त किया गया। इस हेतु श्री सुन्दरलालजी दुगड़ ने २१ लाख रुपये प्रदान किये।

कार्डिक केयर युनिट : ८ बेडों का यह विभाग पुन: शुरू किया गया।

डायलिसिस युनिट : चौथे तल्ले में ६ मशीनों के साथ यह युनिट सुचारु रूपेण चल रहा है। कुछ और मशीनें इस विभाग में जल्दी ही लगने की संभावना है।

श्री प्रहलादराय अग्रवाल, रूपा गंजी एवं श्री चन्द्रवदन देसाई प्रत्येक ने एक-एक डायलिसिस मशीन के लिए सहयोग प्रदान किये, एतदर्थ सभा हार्दिक आभारी है।

प्राईवेट वार्ड : पुराने आइ.सी.यु. में १२ शय्याओं का प्राइवेट वार्ड पुन: शुरू कर दिया गया।

पी.एल. कोचर इन्स्टीच्यूट ऑफ कारडियक साइन्सेज : २९ अगस्त २००४ को प्रात:काल दस बजे इसका लोकार्पण हॉस्पीटल परिसर में हुआ। श्रीमती सुशीला पन्नालालजी कोचर ने इस हेतु ५१ लाख रुपये की राशि प्रदान कर इस कार्य को सहज बनाया। समारोह का उद्घाटन प्रसिद्ध उद्योगपति श्री रिखवचंदजी जैन, दिल्ली ने दीप प्रज्ज्वलित कर किया। समारोह में सांसद श्रीमती सरला माहेश्वरी, प्रो. सी.आर. माइती, डॉ. मदनमोहन चौधरी, पूर्वी रेलवे के जनरल मैनेजर श्री रतनराजजी भंडारी विशिष्ट अतिथि के रूप में विद्यमान थे। प्रो. भवतोष विश्वास एवं उनके सहयोगी डॉ. अलफ्रेड वुडवर्ड के सान्निध्य में वाईपास सर्जरी का कार्यारम्भ किया गया। डॉ. चौधरी ने कहा कि सरकार सवकुछ नहीं कर सकती अत: जैन हॉस्पीटल जैसी संस्थाओं को आगे वढ़कर ये कार्य संभालने की आवश्यकता है।

मानद सचिव श्री सरदारमलजी कांकरिया ने ४५००० रुपयों के पैकेज में बाईपास सर्जरी करने की घोषणा की। इसके अन्तर्गत रोगी का ११ दिन स्टे हॉस्पीटल में दवा, ऑपरेशन सभी सम्मिलित होंगे। इस आह्वान पर दानदाताओं ने मुक्त हस्त से दान देने की घोषणा की। इसमें ये कतिपय उल्लेख्य हैं–श्री सुन्दरलालजी दुगड़ ९ लाख रुपये, श्री थानमलजी बोथरा ५ लाख रुपये, श्री रिखबचन्दजी जैन ५ लाख रुपये, श्री हरकचंदजी कांकरिया अढाई लाख रुपये एवं पांचीलालजी नाहटा २ लाख रुपये।

श्री पन्नालालजी कोचर ने अपने पिता की स्मृति से भाव विह्वल होकर इसे सफल बनाने में सर्वतोभावेन सहयोग का आश्वासन दिया।

स्व. आचार्य श्री नानालालजी म.सा. की पुण्य तिथि के उपलक्ष में श्रीमती फूलकुंवर बाई के संयोजकत्व में दिसम्बर माह में विभिन्न नि:शुल्क शिविर का आयोजन गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी किया गया।

विवाहादि उत्सव : हॉस्पीटल परिवार एवं सभा ने विवाहादि के उत्सवी अवसर पर एक प्रशंसनीय कदम उठाया, वर-वधू के गौरवमय उज्ज्वल भविष्य के लिए भाई विनोदजी कांकरिया की सुपुत्री का विवाह सरदारशहर निवासी डागा परिवार एवं ललितजी कांकरिया के सुपुत्र का विवाह जयपुर के गोलछा परिवार में सम्पन्न हुआ। दोनों ही परिवारों तथा कांकरिया परिवार ने हॉस्पीटल की प्रगति के लिए अच्छी सहयोग राशि प्रदान की।

अभिनन्दन : दानवीर श्री सुन्दरलालजी दुगड़ का सभा भवन में भावभीना अभिनन्दन किया गया। कोलकाता के मेयर श्री सुब्रत मुखर्जी ने वैभव का प्रतीक हाथी उन्हें सभा की ओर से भेंट किया।

पर्युषण पर्व : समता प्रचार संघ के स्वाध्यायी श्री कमलजी मेहता एवं श्री महावीरजी ने अष्ट दिवसीय पर्युषण पर्व की आराधना धर्म ध्यान, तप त्याग एवं प्रत्याख्यान पूर्वक विधिवत करवाई।

श्री जैन मेडिकल डेन्टल कॉलेज : यह एक ऐसा स्वप्न था जिसके साकार होने में कठिनाई लग रही थी किन्तु अब यह शीघ्र साकार रूप ग्रहण करेगा, ऐसा विश्वास है। जमीन के लिए अग्रिम बयाना राशि दी जा चुकी है। उस पर अगले सप्ताह हमारा अधिकार हो जायेगा। इसके साकार होने पर सभा की यह एक बड़ी उपलब्धि होगी।

स्नेह मिलन : प्रतिवर्ष की तरह इसका आयोजन काशीपुर स्थित शैक्षणिक परिसर में जनवरी माह में करने का विचार है। इसके संयोजक श्री फागमलजी अभाणी, चन्द्रप्रकाशजी डागा एवं उनकी टीम है.

महकते फूल नहीं रहे : सभा की स्तम्भ श्रीमती अमरावदेवी कांकरिया धर्मपत्नी स्व. फूसराजजी कांकरिया का ९५ वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया, इससे सभा की महती क्षति हुई। सभा ने दिवंगत आत्मा की चिरशांति एवं सदगति के लिए प्रार्थना की, एवं भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

सभा का यह रूप इसी तरह एक कारवां की तरह सतत प्रवर्द्धमान रहे, यही शासनदेवी से प्रार्थना है।

मन्त्री महोदय द्वारा सभा एवं विद्यालयों की कन्सोलिडेटेड अंकेक्षित रिपोर्ट सदन पटल पर रखी गई। आवश्यक विचार-विमर्श के बाद सर्वसम्मति से स्वीकृत की गई।

आगामी वर्ष के ऑडिट के लिए मेसर्स के.एस. बोथरा एण्ड कं. का निर्वाचन सर्वसम्मति से किया गया। सभी घटकों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए स्वत्रुटियों के लिए क्षमा-याचना पूर्वक पीठासीन अधिकारी को धन्यवाद ज्ञापन के बाद सभा की यह बैठक सम्पन्न घोषित की गई जयनाद के साथ।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की साधारण वार्षिक बैठक दि. १८ दिसम्बर २००५ को सभा अध्यक्ष श्री बालचंदजी भूरा की अध्यक्षता में आहूत की गई। मंगलाचरण के पश्चात गत बैठक की कार्यवाही मंत्रीजी ने पढ़कर सुनाई, जिसे सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया।

श्री जैन विद्यालय कोलकाता : आलोच्य सत्र का परीक्षा परिणाम निम्नप्रकारेण रहा–

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	पास	कुल	स्टार मार्क्स
माध्यमिक	१९२	३०	–	२२२	६२
उच्चतर माध्यमिक	३९६	८६	५	४८७	१२८

छात्र उज्ज्वल जैन ने विज्ञान में ९१४ अंक प्राप्त कर विद्यालय का नाम रोशन किया।

श्री जैन विद्यालय – ब्वॉयज विभाग :

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	कम्पा	फेल	कुल
माध्यमिक	५१	६०	०५	०४	१	१२१
उच्चतर माध्यमिक	४९	१०८	२६	०१	१	१९५

माध्यमिक में राजेश पांडे ने विद्यालय में सर्वाधिक ७११, ८८.०८ एवं उच्चतर माध्यमिक में पंकज पांडे ने ७१३, ७१.३ मार्क्स प्राप्त कर विद्यालय का गौरव वढ़ाया।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा – गर्ल्स विभाग :

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	पूरक	कुल	स्टार मार्क्स
माध्यमिक	८५	४७	०२	०१	१३५	१५
उच्चतर माध्यमिक	१५१	९४	०८	०२	२५५	१०६

सर्वाधिक अंक पूजा चाण्डक – ७९३, ७९.३०

श्री हरकचंद कांकरिया जैन विद्यालय – जगतदल :

सम्प्रति ३४७ छात्र-छात्राएँ अध्ययनरत हैं। माध्यमिक परीक्षा में प्रथम श्रेणी में ५, द्वितीय श्रेणी में १७, तृतीय श्रेणी में ०२ एवं पूरक परीक्षा ०७ एवं असफल कुल ३२ छात्र सम्मिलित हुए। प्राइमरी में १६८ एवं माध्यमिक में १७४ कुल ३४२ छात्र-छात्राएँ शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र : राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय में सम्प्रति माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा में २३ छात्राएँ सम्मिलित हुई। इस वर्ष माध्यमिक में १४५ एवं उच्चतर माध्यमिक में ९० छात्राओं कुल २३५ छात्राओं ने प्रवेश लिया है।

इन्दिर गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, हावड़ा : इसमें ३५० छात्र-छात्राएँ अध्ययनरत हैं।

श्री जैन बुक बैंक : ३ जुलाई, २००५ को आयोजित समारोह में पाठ्य पुस्तकों के १५०० सेट नि:शुल्क वितरित किये गये। पुराने १२००० के करीव सेटों का उन्हीं विद्यालयों में पुनर्वितरण किया।

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा : पीड़ित एवं रुग्ण मनुष्यों की सेवा में यह हॉस्पीटल सततरत है। स्व. आचार्य श्री नानेश की पुण्य स्मृति में संजय सेठिया के सहयोग से लगभग एक हजार नेत्र रोगियों की शल्य चिकित्सा की गई। पी.एल. कोचर हार्ट सेन्टर में अव तक प्राय: ३५ रोगियों के सफलतापूर्वक ऑपरेशन हुए।

ट्रोमा युनिट : आर्थोपिडिक रोगियों के लिए यह युनिट पृथक रूपेण कार्य कर रहा है।

डायलेसिस युनिट : महीने में लगभग ७२५ रोगियों की डायलिसिस हो जाती है। समग्र कोलकाता महानगर में इसने द्वितीय स्थान प्राप्त कर हॉस्पीटल का गौरव वढ़ाया है.

आई ऑपरेशन थियेटर : इसका उद्घाटन श्रीमती करुणा वाँठिया के कर कमलों से संपन्न हुआ। नेत्र शल्य चिकित्सा में अव पर्याप्त वृद्धि की संभावना है।

डी.एन.बी. : एम.वी.वी.एस. की उपाधि प्राप्त करने के वाद डॉक्टर स्पेशलिस्ट बनने के लिए कोर्स करते हैं। मेडिकल कोर्स के लिए जैन हॉस्पीटल ने आवेदन किया था। इस संबंध में संबंधित विभाग द्वारा निरीक्षण कार्य संपादित कर लिया। आगामी वर्ष में यह कोर्स प्रारंभ होने की संभावना है। ४ डॉक्टर यहाँ से प्रतिवर्ष मेडिसन का कोर्स कर सकेंगे। हॉस्पीटल के लिए शुभ शकुन है एवं गर्व का विषय है।

स्व. आचार्य श्री नानेश की पुण्य तिथि पर आयोज्य नि:शुल्क नेत्र शल्य चिकित्सा शिविर हेतु रोगियों का चयन आज अर्थात् १८ दिसम्बर से सभा भवन में प्रारम्भ हो गया है। आगामी २५ दिसम्बर को चयनित रोगियों का नि:शुल्क इलाज जैन हॉस्पीटल में किया जायेगा। १०० आँख ऑपरेशन मात्र ३५००० रुपये में करने का निर्णय सभा ने लिया है। यह क्रम वर्ष में अनेक वार सम्पन्न करने हेतु दानदाताओं से सम्पर्क में जुटे हुए हैं।

साधना : इस वर्ष पर्युषण पर्वाराधना हेतु समता प्रचार संघ की ओर से उदयपुर के जैन दर्शन के विद्वान डॉ. दलपतसिंहजी वया का आगमन हुआ। आपने भगवान महावीर के उपदेशों की सटीक एवं मार्मिक व्याख्या करते हुए भगवान द्वारा कर्तव्य पर विशेष वल देने की वात कही।

तारादेवी हरकचंद कांकरिया जैन कॉलेज काशीपुर: इस प्रस्तावित कॉलेज का बंगाल सरकार द्वारा निरीक्षण सम्पन्न कर लिया गया एवं हमें शीघ्र अनापत्ति प्रमाण आदेश प्राप्त हो जायेगा। साथ ही इस कॉलेज में वाणिज्य, विज्ञान एवं कम्प्यूटर टेक्नोलोजी की कक्षाएँ प्रारंभ करने की अनुमति भी प्राप्त हो गई है। आगामी जून माह से यहाँ प्रवेश प्रक्रिया प्रारम्भ हो जायेगी, यह हमारे लिए प्रसन्नता एवं गर्व का विषय है। श्री सरदारमलजी कांकरिया के प्रति इस सम्वन्धी प्रयास हेतु सभा कृतज्ञता ज्ञापित करती है। इसके लिए ऑफिस के पुनर्निर्माण का कार्य प्रारम्भ हो गया है।

श्री सुन्दरलाल दुगड़ डेन्टल कॉलेज, काशीपुर के लिए अरवन सीलिंग लैण्ड का क्लीयरेन्स भी हमें शीघ्र मिलने की उम्मीद है। क्लीयरेन्स मिलते ही कार्यवाही शीघ्र प्रारम्भ हो जायेगी। नक्शा भी इसका तैयार है।

स्नेह मिलन : २५ दिसम्बर को प्रात: ११ वजे काशीपुर शैक्षणिक परिसर में स्नेह मिलन आयोजित किया जा रहा है।

इसके संयोजक श्री फागमलजी अभाणी एवं श्री चन्द्रप्रकाशजी डागा हैं।

ओल्ड चायना बाजार प्रोपर्टी : सभा ने कोऑनर्स से इनका हिस्सा खरीद लिया है। इसका पंजीकरण हो गया है। केवल ७३ प्रतिशत हिस्से का पंजीयन शेष है जो शीघ्र सम्पन्न हो जायेगा।

महकते फूल नहीं रहे : श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर, हावड़ा को अपना अध्यक्ष श्री श्रीचन्दजी नाहटा के आकस्मिक एवं असामयिक स्वर्गवास का अनभ्र वज्रपात सहन करना पड़ा। इनकी स्मृति स्वरूप श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया जिसमें सभा परिवार ने मार्मिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए स्वर्गस्थ आत्मा की चिरशांति एवं सद्गति की प्रार्थना की। इनका मरणोपरान्त अभिनन्दन एवं मान पत्र इनके परिवार को समर्पित किया गया।

अस्पताल के हितैषी श्री ताराचन्दजी सुराणा, श्रीमती चन्द्रकला बंग के स्वर्गवास से भी हॉस्पीटल परिवार को मार्मिक आघात लगा। श्री जैन विद्यालय कोलकाता के प्रथम छात्र श्री सोहनलालजी गोलछा ने मरणोपरान्त डॉक्टरी शिक्षा हेतु अध्ययन करने की दृष्टि से अपनी देह का दान कर पश्चिम बंगाल के जैन समाज में अपूर्व आदर्श की स्थापना की। मरण के तत्काल बाद इनकी आँखों एवं गुर्दों का दान परिवारजनों ने देकर शेष शरीर मेडिकल कॉलेज को समर्पित कर दिया। सभा द्वारा आयोजित श्रद्धांजलि सभा में वक्ताओं ने हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित कर स्वर्गस्थ आत्मा की चिरशांति एवं सद्गति की प्रार्थना की। एक मृत शरीर से आठ डॉक्टर शिक्षा ग्रहण कर पाते हैं।

सभा का यह पारिवारिक रूप सदैव बना रहे एवं कार्यकर्त्ता इसी तरह इस कारवाँ को आगे बढ़ाते रहें, इसी कामना के साथ अपनी त्रुटियों के लिए क्षमा याचना एवं सभी घटकों के सहयोग, स्नेह एवं सदभाव के प्रति धन्यवाद ज्ञापन के पश्चात् सभा पटल पर अंकेक्षित कन्सोलिडेटेड आय-व्यय का लेखा-जोखा रखा गया जिसे सर्वानुमति से स्वीकार किया गया।

आगामी कार्यकाल हेतु लेखा परीक्षक के रूप में एस. बोथरा एण्ड कम्पनी की नियुक्ति सर्वसम्मति से की गई।

आगामी कार्यकाल के सफल एवं सुचारु संचालन के लिये निम्नलिखित महानुभावों का विश्वमण्डल, पदाधिकारी, कार्यकारिणी सदस्य एवं स्थायी आमंत्रित सदस्यों का निर्वाचन सर्वसम्मति से किया गया जो इस प्रकार है–

विश्वस्त मंडल : सर्व श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिखबदासजी भंसाली, श्री सुन्दरलालजी दुगड़ एवं श्री बच्छराजजी अभाणी।

पदाधिकारी गण : अध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया, उपाध्यक्ष श्री रिधकरणजी बोथरा, मन्त्री श्री विनोदजी मिन्नी, सहमंत्री श्री अशोकजी बोथरा, श्री किशोरजी कोठारी, कोषाध्यक्ष श्री फागमलजी अभाणी।

कार्यकारिणी सदस्य : १. श्री बालचंदजी भूरा, २. श्री सोहनराजजी सिंघवी, ३. श्री पन्नालालजी कोचर, ४. श्री मोहनलालजी भंसाली, ५. श्री भंवरलालजी दस्साणी, ६. श्री शांतिलालजी डागा, ७. श्री पारसमलजी भूरट, ८. श्री अशोकजी मिन्नी, ९. श्री सुभाषजी कांकरिया, १०. श्री ललितजी कांकरिया, ११. श्री महेन्द्रजी कर्णावट, १२. श्री शांतिलालजी कोठारी, १३. श्री गोपालचन्दजी बोथरा, १४. श्री अरुणकुमारजी मालू, १५. श्री निश्चलजी कांकरिया, १६. श्री विनोदजी दुगड़, १७. श्री प्रदीपजी पटवा, १८. श्री जय बोथरा, १९. श्री सुभाषजी बच्छावत, २०. श्री चन्द्रप्रकाशजी डागा एवं २१. श्री राजकुमारजी डागा।

स्थायी आमंत्रित सदस्य : १. श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया, २. श्री किशनलालजी बोथरा, ३. श्री भंवरलालजी बैद, ४. चांदमलजी अभाणी, ५. श्री कुन्दनमलजी बैद, ६. श्री खड़गसिंहजी बैद, ७. श्री मानिकचंदजी गेलड़ा, ८. श्री कमलसिंहजी कोठारी, ९. श्री कमलसिंहजी भंसाली, १०. श्री सागरमलजी भूरा, ११. श्री हस्तीमलजी जैन, १२. श्री गौतमचंदजी कांकरिया, १३. श्री शांतिलालजी मालू, १४. श्री विनोदजी कांकरिया, १५. श्री गोपालचन्दजी भूरा, १६. श्री अजयकुमारजी बोथरा, १७. श्री अजयकुमारजी डागा, १८. श्री राजेन्द्रजी बुच्चा, १९. श्री सुरेन्द्रजी दफ्तरी, २०. श्री सुरेन्द्रजी सेठिया, २१. श्री पंकज बच्छावत, २२. श्री कमल कर्णावट, २३. श्री अजय अभानी, २४. श्री जयचन्दलालजी मुकीम, २५. श्री कमल बच्छावत, २६. श्री भागीचन्दजी डागा, २७. श्री कमल मुकीम, २८. श्री राजा पटवा, २९. श्री सिद्धार्थ गुलगुलिया, ३०. श्री राजेन्द्र बोथरा, ३१. श्री संदीप डागा एवं ३२. श्री राजेश मिन्नी।

सभा के विभिन्न घटकों के सुचारु संचालन हेतु निम्न महानुभावों का संयोजक एवं सहसंयोजक के रूप में सर्वसम्मति से चयन किया गया।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र :

मंत्री	श्री अशोक बच्छावत
सहमंत्री	श्रीमती गीतिका बोथरा
प्रधानाध्यापक	श्री अरुणकुमारजी तिवारी

श्री जैन बुक बैंक :

संयोजक	श्री सुभाष बच्छावत
सहसंयोजक	श्री अजय बोथरा
सहसंयोजक	श्री सुशील गेलड़ा

श्री जैन धर्म सभा समिति :

संयोजक	श्री चांदमलजी अभाणी
सहसंयोजक	श्री केवलचन्दजी कांकरिया

श्री लीगल कमेटी :

संयोजक	श्री किशोरजी कोठारी
सहसंयोजक	श्री ललितजी कांकरिया

श्री महिला उत्थान एवं विकास समिति :

संयोजक	श्रीमती फूलकुंवर कांकरिया
सहसंयोजक	श्रीमती प्रभा भंसाली
सहसंयोजक	श्रीमती किरण हीरावत

श्री जैन विद्यालय/कॉलेज न्यू कमेटी :

संयोजक	श्री सरदारमलजी कांकरिया
सहसंयोजक	श्री पन्नालालजी कोचर

अन्त में सभापतिजी को धन्यवाद ज्ञापन के बाद जयनाद के साथ सभा की कार्यवाही पूर्ण हुई।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की वार्षिक साधारण सभा दिनांक १७ दिसम्बर २००६, रविवार को प्रात: १० बजे सभा भवन में अध्यक्ष श्री सुरेन्द्रकुमारजी बाँठिया की अध्यक्षता में आयोजित की गई। मंगलाचरण के पश्चात् मंत्री महोदय द्वारा गत बैठक की कार्यवाही प्रस्तुत की गयी जिसे सर्वसम्मति से स्वीकृत की गई।

सभा का यह कारवां विगत ७८ वर्षों से सतत आगे बढ़ रहा है।

शिक्षा :

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता : आलोच्य सत्र में परीक्षा फल निम्न प्रकार रहा–

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	कुल
माध्यमिक	१८९	३४	–	२२३
उच्चतर माध्यमिक	४४४	३८	–	४८२

विद्यालय का परीक्षा फल शत-प्रतिश ही नहीं अभूतपूर्व रहा। उच्चतर माध्यमिक का प्रथम श्रेणी का परिणाम ८९.१२ प्रतिशत एवं माध्यमिक का ८४.७५ प्रतिशत रहा। माध्यमिक के एक छात्र ने ९५ प्रतिशत अंक प्राप्त कर विद्यालय परिवार को गौरवान्वित किया। छात्र को हमारी बधाई। स्टार मार्क्स भी अनेक छात्रों ने प्राप्त किये।

१७ जून २००६ को प्राचार्य श्री शरतचन्द्रजी पाठक का बिदाई समारोह उनके गुरू प्रो. कल्याणमलजी लोढ़ा की अध्यक्षता में आयोजित हुआ। श्री पाठक ने आलोच्य वर्ष में अभूतपूर्व परीक्षा परिणाम देकर विद्यालय के शैक्षणिक इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित करवा लिया। समग्र विद्यालय एवं सभा परिवार ने इन्हें हार्दिक साधुवाद दिया।

इस विद्यालय के पूर्व छात्र श्री अरुणकुमार तिवारी गोल्ड मेडलिस्ट–जो वाइस प्रिंसिपल थे, ने प्राचार्य का पद संभाल लिया। श्री अरुणकुमारजी तिवारी को इंडियन सोलिडरिटी काउन्सिल, नई दिल्ली द्वारा ज्वेल ऑफ इंडिया एवं अंतर्राष्ट्रीय शैक्षणिक एवं प्रबंध संस्थान द्वारा लाइफ टाइम एचिवमेन्ट स्वर्ण पदक से दि. २२ दिसम्बर, ०६ को विभूषित किया जायेगा। श्री जैन विद्यालय के लिए यह अत्यन्त गौरव का विषय है।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा फॉर ब्वॉयज : माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं का परिणाम निम्नानुसार रहा :

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	पूरक	कुल	स्टार मार्क्स
माध्यमिक	८०	५८	०२	०१	१४१	१८
उच्चतर माध्यमिक	९१	१०१	०६	–	२०८	–

छात्र पियुष जैन को माध्यमिक में ८९.०७ अंक प्राप्त हुए। उच्चतर माध्यमिक में दीपक तिवारी ने सर्वाधिक ७५.०१ अंक प्राप्त किये।

श्री जैन विद्यालय फॉर गर्ल्स : परीक्षा फल निम्न प्रकार रहा–

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	पूरक	कुल	स्टार मार्क्स
माध्यमिक	६९	७२	०२	०५	१४८	०८

छात्रा चांदनी बाँठिया एवं निकिता जैन ने ८२.०२ अंक प्राप्त किये।

	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	पूरक	कुल	स्टार मार्क्स
उच्चतर माध्यमिक	१९६	८२	०१	०१	२८१	०९

छात्रा कुसुम मिश्रा ने सर्वाधिक ८०.०४ अंक प्राप्त किये।

दोनों ही विद्यालयों में विज्ञान की पढ़ाई शुरू कर दी गई है। लेबोरेटरी एवं कम्प्यूटर पूर्णतया आधुनिक एवं सुसज्जित है।

इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय : इसका अध्ययन केन्द्र श्री जैन विद्यालय हावड़ा है। इसके विभिन्न बी.ए., बी.कॉम, बी.पीपी आदि कोर्सेज् में सन् २००५-०६ में ५९६ छात्र एवं २००६-०७ में ७६९ छात्र अध्ययनरत हैं। इसकी लोकप्रियता तेजी से बढ़ रही है।

तारादेवी हरकचंद कांकरिया जैन कॉलेज काशीपुर : १६ जून २००६ को सर्वप्रथम प्रात: १० बजे कॉलेज परिसर में भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा महामांगलिक प्रदाता महासती प्रवर्तिनी श्री चन्द्रप्रभाजी म.सा. की शिष्याओं ने विधिविधान द्वारा स्थापित करवाई। तत्पश्चात् श्रीमती तारादेवी कांकरिया की प्रतिमा का अनावरण कांकरिया परिवार द्वारा किया गया।

मुख्य समारोह १२.३० बजे आरम्भ हुआ। लेफ्ट फ्रंट चेयरमेन श्री विमान बोस ने कॉलेज भवन का लोकार्पण किया एवं वादा किया कि आगामी वर्ष से यहाँ बी.कॉम पास कोर्स एवं बी.कॉम ऑनर्स की कक्षाएँ प्रारम्भ करवा दी जायेगी। समारोह की अध्यक्षता सांसद श्री सुधांशु शील ने की। मुख्य वक्ता थे प्रो. सूरजदास प्रो. वाइस चांसलर एवं सम्मानीय अतिथि श्री श्रीनिवास हांडा थे। श्री कांकरिया ने कहा कि पूर्वी भारत में जैनियों का यह प्रथम कॉलेज है।

इस वर्ष यहाँ माइक्रो बोटेनी एवं कम्प्यूटर साइन्स कक्षाओं में ६० छात्रों के प्रवेश की अनुमति प्रदान की गई। ५३ छात्र-छात्राएँ अध्ययनरत हैं। प्राचार्य श्री ओ.पी. सिंह एवं कांकरिया परिवार का शॉल, मोमेन्टो से सम्मान किया गया।

दिनांक २६ मार्च, २००६ को काशीपुर परिसर में लक्ष्मीदेवी पीरचंद कोचर जैन कॉलेज ऑफ नर्सिंग का भूमि पूजन किया गया। भूमि पूजन की रस्म श्रीमती सुशीलादेवी पन्नालाल कोचर एवं अमेरिका से आगत श्रीमती पुष्पादेवी हीरालाल कोचर ने अदा की। इस समारोह की अध्यक्षता सांसद श्री सुधांशु शील ने की। प्रमुख अतिथि श्री सी.एस. वच्छावत आइ.ए.एस. आयुक्त कमर्शियल टेक्स पश्चिम बंगाल, विशिष्ट अतिथि श्री हरकचंदजी कांकरिया, श्री श्यामसुन्दरजी केजरीवाल, श्री अश्विनी भाई देसाई एवं मुख्य वक्ता डॉ. जयन्त बोस थे। श्री सरदारमल कांकरिया ने सबका स्वागत किया एवं बी.एस.सी. नर्सिंग कॉलेज की आवश्यकता पर वल दिया।

श्री हरखचंद कांकरिया जैन विद्यालय–जगतदल : वर्तमान में ३२५ छात्र कक्षा ८ तक अध्ययनरत हैं। माध्यमिक की स्वीकृति मिलने की शीघ्र संभावना है।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र-राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय : माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक में सम्प्रति १५० छात्राएँ अध्ययनरत हैं। शनिवार एवं रविवार को कक्षाएँ लगती हैं।

कमलादेवी सोहनराज सिंघवी जैन कॉलेज ऑफ ऐज्युकेशन : यह शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र शीघ्र प्रारम्भ होगा। इसका आवेदन भुवनेश्वर में किया जा चुका है।

कुसुमदेवी सुन्दरलाल दुगड़ जैन डेन्टल मेडिकल कॉलेज : अरबन सिलिंग का क्लीयरेन्स मिलने पर इस योजना का कार्यारंभ होगा। अतिरिक्त भूमि को वेस्ट करने का समाचार सरकारी गजट में प्रकाशित होने के बाद यह भूमि हमें मिलने की कवायद प्रारम्भ होगी।

श्री जैन बुक बैंक : ७ मई, २००६ को आयोजित समारोह की अध्यक्षता प्रसिद्ध समाजसेवी श्री सुन्दरलाल दुगड़ ने की। प्रमुख अतिथि सांसद श्री सुधांशु शील, विद्यालयी शिक्षा के मुख्य सचिव श्री देवादित्य चक्रवर्ती आइ.ए.एस., राजस्थान पत्रिका के स्थानीय संपादक श्री हेम शर्मा एवं श्री संतोष जैन थे। ग्रामीण अंचल में १५०० सेट पाठ्यपुस्तकों के नि:शुल्क वितरित किये गये एवं चार नये कम्प्यूटर सेन्टर की स्थापना के लिए कम्प्यूटर एवं अन्य सामग्री संबंधित स्थानों को दी गई।

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर हावड़ा : यूरो सेन्टर की सहायता से सिटीस्केन मशीन का यहाँ उद्घाटन किया गया।

हॉस्पीटल का डायलिसिस विभाग तीन सत्रों में सुचारू कार्य कर रहा है। इसमें भर्ती रोगियों की अवस्था सोचनीय एवं दयनीय होती है। ४० प्रतिशत तक छूट देनी पड़ती है। इसके सुचारू संचालन के लिए ४० लाख रुपये के कोष की आवश्यकता है। दानदाताओं से इस ओर ध्यान देने का अनुरोध है।

गतवर्ष में पर्याप्त आँख ऑपरेशन शिविर हुए। एक हजार रोगियों की माइक्रो सर्जरी की गई। इस वर्ष दिनांक २४ दिसम्बर को नि:शुल्क आँख माइक्रो सर्जरी शिविर विमलादेवी मित्री संस्थान व श्री सुरेशजी जैन के सहयोग से आयोज्य है।

स्व. आचार्य श्री नानेश की पुण्य स्मृति में नि:शुल्क पाइल्स शिविर में डॉ. शांतिलाल धाड़ीवाल मद्रास द्वारा ऑपरेशन किये जायेंगे। महिला विकास समिति का इसमें पूरा सहयोग है।

सभा का स्थापना दिवस : दि. ३ सितम्बर २००६ को सभा का स्थापना दिवस आचार्य चंदनाजी, वीरायतन के सान्निध्य में अनुष्ठित हुआ। इस अवसर पर श्री चंचलमलजी वच्छावत आयुक्त कमर्सियल टेक्स पश्चिम बंगाल एवं श्री उत्तमचंदजी नाहटा रिजनल डायरेक्टर कम्पनी ऑफिस भारत सरकार का

सभा द्वारा मोमेन्टो, शॉल एवं माल्य प्रदान कर भावभीना अभिनन्दन किया। आचार्यश्री ने इन्हें हार्दिक आशीर्वाद प्रदान कर गौरवमय भविष्य की कामना की।

विगत वर्षो की तरह समता प्रचार संघ के स्वाध्यायियों ने पर्युषण पर्वाराधना, शास्त्र वांचन त्याग तपस्या एवं प्रत्याख्यान पूर्वक कराई। स्व. आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. एवं स्व. आचार्य श्री गणेशीलालजी म.सा. एवं स्व. आचार्य श्री नानालालजी म.सा. की पुण्य तिथियाँ धर्माराधना पूर्वक सभा भवन में मनाई गई।

दिनांक ५ नवम्बर '०६ को जैनाचार्य श्रीमद् विनयरत्नाकर सूरीश्वरजी म.सा. का पदार्पण सभा भवन में हुआ। मांगलिक प्रदान की एवं एक रात विराजना हुआ। यह विद्यालय एवं सभा परिवार का सौभाग्य था।

२० से ३४ ओल्ड चायना बाजार स्ट्रीट प्रोपर्टी में अभी भी ४३ प्रतिशत की रजिस्टरी बाकी है। यह शीघ्र ही हो जायेगी।

स्नेह मिलन : इस वर्ष ३१ दिसम्बर, रविवार को प्रात: ११ बजे काशीपुर परिसर में आयोज्य है। इसके संयोजक श्री फागमलजी एवं चन्द्रप्रकाशजी डागा हैं।

कार्यकर्त्ताओं का स्नेह, सामंजस्य एवं एकजुटता इस सभा की रीढ़ है। हम सभी घटकों एवं कार्यकर्त्ताओं के आभारी हैं।

कार्य संपादन एवं प्रचार-प्रसार में सहयोग प्रदान करने हेतु हम महानगर के समाचार पत्रों के प्रति धन्यवाद ज्ञापन करते हैं।

कार्य संपादन में रही हुई त्रुटि के लिए क्षमा याचना। सभा की कन्सोलिडेटेड अंकेक्षित आय-व्यय का लेखा-जोखा मंत्री द्वारा सदन पटल पर रखने के बाद विचार-विमर्श पूर्वक सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

आगामी कार्यकाल के लेखो-जोखा के ऑडिट के लिए मेसर्स के.एस. बोथरा एंड कं. का नाम प्रस्तावित किया गया जो सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

माननीय अध्यक्ष महोदय के प्रति धन्यवाद ज्ञापन के पश्चात् जयनाद पूर्वक बैठक सम्पन्न घोषित की गई।

सभा ने अपने कर्म संकुल जीवन यात्रा के ७९ वर्ष पूर्ण कर ८०वें वर्ष में प्रवेश कर लिया है। सभा ने अपने घटकों के साथ मानव सेवा के कई कीर्तिमान स्थापित किये हैं। यह हम सबके लिए गौरव की बात है और इसका श्रेय है कार्यकर्त्ताओं का अथक प्रयास, कर्मठ सेवाभाव, सहिष्णुता, दूरदृष्टि एवं सौजन्य। विगत वर्षो का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हुए मंत्री महोदय ने अत्यन्त प्रसन्नता व्यक्त की।

शिक्षा :

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता : १७ मार्च १९३४ को स्थापित यह उच्चतर माध्यमिक शिक्षा केन्द्र आगामी वर्ष अमृत महोत्सव आयोजित करने जा रहा है। शिक्षा के क्षेत्र में यह विद्यालय सभा के लिए मील का पत्थर साबिहत हुआ है और इसने कई कीर्तिमान स्थापित कर महानगर में अपनी अलग पहचान कायम की है। वर्तमान में इसके अध्यक्ष श्री सोहनराजजी सिंघवी, मंत्री श्री विनोदजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्री अरुणकुमारजी तिवारी हैं।

परीक्षा :	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	कुल	स्टार मार्क्स	परिणाम
माध्यमिक	१७३	२०	१	१९४	५८	१००

उच्चतर माध्यमिक में कुल ४८४ छात्र सम्मिलित हुए। परीक्षा परिणाम १०० प्रतिशत रहा। ९० प्रतिशत से अधिक छात्रों ने प्रथम श्रेणी ए ग्रेड में उत्तीर्ण होकर विद्यालय परिवार को यशस्वी बनाया है। क्षितिज रामपुरिया ने सर्वाधिक अंक प्राप्त किये। आइ.आइ.टी. में ५ छात्र राहुल भूरा, हर्ष गुप्ता, पंकज अग्रवाल, सुभाष बजाज ने प्रवेश प्राप्त किया। मेडिकल में (प. बंगाल) १४ छात्रों जेईई पश्चिम बंगाल टेस्ट में ३९वाँ स्थान प्राप्त किये। ५८ छात्रों का चयन इंजीनियरिंग शिक्षा हेतु हुआ। सी.पी.टी.-सी.ए. परीक्षा में २०० से अधिक छात्र सफल हुए। एम.बी.ए. में ६ छात्रों ने प्रवेश लिया।

माध्यमिक परीक्षा में छात्र संतोष उपाध्याय ने ७४९, साकेत सौरभ पाठक ने ७३७, अनुराग गुप्ता ने ७२४ एवं जितेन्द्र सेरवानी ने ७१५ अंक प्राप्त कर विद्यालय का गौरव बढ़ाया।

प्राचार्य श्री अरुणकुमार तिवारी को 'ज्वेल ऑफ इंडिया' एवं 'लाइफ टाइम एचीवमेन्ट' सम्मान से केरल के राज्यपाल माननीय श्री आर.एल. भाटिया एवं पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त श्री जी.बी. कृष्णमूर्ति ने सम्मानित किया। पूर्वी भारत में प्रथम बार विद्यालय स्तर पर यह सम्मान प्राप्त कर श्री अरुण कुमार तिवारी ने सभा एवं विद्यालय परिवार को यशस्वी बनाया है तदर्थ हार्दिक धन्यवाद।

श्री जैन विद्यालय हावड़ा फॉर गर्ल्स : इस वर्ष इसकी नई प्रबन्ध समिति का गठन हुआ। सर्वसम्मति से अध्यक्ष श्री पन्नालालजी कोचर, उपाध्याय श्री महेन्द्रजी कर्णावट एवं मंत्री श्री ललितजी कांकरिया निर्वाचित हुए। इसकी प्राचार्य श्रीमती ओल्गा घोष हैं।

माध्यमिक में ११३ प्रथम श्रेणी, ५० द्वितीय श्रेणी एवं पूरक परीक्षा में एक कुल १६४ छात्राएँ उत्तीर्ण हुईं। उच्चतर माध्यमिक में २९४ छात्राएँ सम्मिलित हुई जिसमें २८१ छात्राएँ एवं ३ पूरक परीक्षा में उत्तीर्ण हुई। शत-प्रतिशत परीक्षा परिणाम रहा। परिवार मिलन कार्यक्रम में विद्यालय को तृतीय स्थान प्राप्त हुआ। कराटे प्रतियोगिता में ८ छात्राएँ सम्मिलित हुई।

श्री जैन विद्यालय फॉर ब्वॉयज : इसकी प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड़, उपाध्यक्ष श्री प्रदीपजी पटवा एवं मंत्री श्री ललितजी कांकरिया हैं। प्राचार्य श्री आर.ए. सिंह हैं। सन् २००७ का परीक्षा फल निम्न प्रकार रहा–

माध्यमिक परीक्षा में प्रथम श्रेणी में ९५ छात्र द्वितीय श्रेणी में ५३ एवं तृतीय श्रेणी में एक छात्र कुल १४९ छात्र सम्मिलित हुए एवं परिणाम शत-प्रतिशत रहा। २८ छात्रों को स्टार मार्क्स प्राप्त हुआ। उच्चतर माध्यमिक परीक्षा २१४ छात्र सम्मिलित हुए एवं सभी उत्तीर्ण घोषित हुए। परिणाम शत-प्रतिशत रहा।

विद्यालय के बगल में ४ कट्ठा अर्थात् ४५०० स्क्वायर फुट जमीन का रजिस्ट्रेशन सभा के नाम से हो गया है। आगामी सत्र से पूर्व तैयार होकर यह विद्यालय के काम आने लग जायेगी।

तारादेवी हरकचंद कांकरिया जैन कॉलेज काशीपुर : सन् २००६ में माइक्रो बोटोनी एवं कम्प्यूटर साइन्स में ५२ छात्रों ने प्रवेश लिया। सन् २००७ में इन दोनों निकायों में १३ छात्रों ने प्रवेश लिया। प्रथम वर्ष की परीक्षा में एक छात्रा को पूरे विश्वविद्यालय में द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ है, यह गौरव का विषय है। इसके अध्यक्ष श्री बालचंदजी भूरा, उपाध्यक्ष श्री रिधकरणजी बोथरा, मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया एवं प्राचार्य श्री ओमप्रकाश सिंह हैं। आगामी वर्ष से यहाँ बी.कॉम का कोर्स प्रारम्भ होने की पूरी संभावना है।

श्री हरकचंद कांकरिया जैन विद्यालय–जगतदल : अभी तक पश्चिम बंग सरकार से इसे कक्षा ८ तक की मान्यता प्राप्त है। १०वीं कक्षा के छात्र अन्य विद्यालय से परीक्षा देते हैं।

सेंट जेवियर कॉलेज में आयोजित 'सूडूको' प्रतियोगिता में विद्यालय के छात्र ने द्वितीय स्थान प्राप्त कर गौरव में वृद्धि की है।

ईग्नु स्टडी सेन्टर हावड़ा : इसके संयोजक श्री राजकुमारजी डागा एवं सह-संयोजक श्री ललित कांकरिया हैं। को-ऑर्डिनेटर डॉ. गोपाल दूबे हैं। सन् २००६-०७ में इसके विभिन्न कोर्सेज् में ८१३ छात्रों ने प्रवेश लिया है। सन् २००७-०८ में विभिन्न कोर्सेज् में ५०० छात्रों ने प्रवेश प्राप्त किया है। लगभग १२०० छात्र-छात्राएँ इस स्टडी सेन्टर में अध्ययनरत हैं। अन्य विषयों के लिए भी आवेदन किया हुआ है।

कमलादेवी सोहनराज सिंघवी जैन कॉलेज ऑफ एज्युकेशन : इस बी.एड. कॉलेज का भुवनेश्वर द्वारा निरीक्षण कर लिया गया है। शीघ्र ही मान्यता मिलने की संभावना है।

कुसुमदेवी सुन्दरलाल दुगड़ जैन डेन्टल कॉलेज : इसी सप्ताह पश्चिम बंगाल मेडिकल फेकल्टी द्वारा इसका निरीक्षण किया गया है। अनापत्ति प्रमाण पत्र मिलने पर इस जमीन का रजिस्ट्रेशन पश्चिम बंगाल सरकार सभा के नाम से कर देगी।

श्री जैन बुक बैंक : जून, २००७ में समारोह का आयोजन हुआ। ११० ग्रामीण विद्यालयों के १५०० छात्र-छात्राओं को नि:शुल्क पाठ्य पुस्तकें प्रदान की गई। पुराने १०००० सेटों का पुनर्वितरण भी उन्हीं स्कूलों में किया या। प्रतिवर्ष ११००० छात्र-छात्राएँ इससे लाभान्वित हो रहे हैं। इसके संयोजक एवं सहसंयोजकों की टीम के कठिन परिश्रम का यह परिणाम है। पुस्तकों के अलावा पंखे एवं कम्प्यूटर भी प्रदान किये जाते हैं।

ग्रामीण विकास योजना : मेदिनीपुर की फुलसीटा निवारण सेवा समिति के माध्यम से ग्रामीण अंचल की महिलाओं को रोजगार हेतु ६ माह के लिए बिना ब्याज लोन दिया जाता है। यह रकम साढे तीन लाख तक पहुँच गई है। इसका आवर्तन इसी तरह होता रहता है। ग्रामीण महिलाओं के लिए योजना बहुत बड़ा अवलम्ब है।

श्री जैन हॉस्पीटल एण्ड रिसर्च सेन्टर हावड़ा : हॉस्पीटल सुचारु रूपेण चल रहा है। डायलिसिस सेन्टर के रूप में कलकत्ता एवं हावड़ा में इसे द्वितीय स्थान प्राप्त है। गरीब रोगियों को विशेष छूट देने के कारण इसमें टूटत काफी अधिक है। इस घाटापूर्ति के लिए एक योजना ५०००० रुपये आजीवन एक मिती एवं ५००० रु. की वार्षिक मिती प्रारम्भ की गई। इसे कम से कम ५ वर्षो तक चालू रखने का आग्रह है। इसका प्रभाव अच्छा रहा एवं लगभग २०० से ऊपर मितियाँ प्राप्त हो गई हैं।

यहाँ पर कम्पनी डिपार्टमेन्ट के स्थानकवासी डायरेक्टर इस योजना में पहले से ही ५००० रुपये प्रतिमाह देते आ रहे हैं। यह हमारे लिए एक आदर्श एवं प्रेरणास्पद है।

हॉस्पीटल के पास वाली अढाई कट्ठा जमीन पर निर्माण कार्य पूरा हो गया है। इसमें भीखमचंद भंसाली नर्सिंग स्कूल के लिए बोर्ड का निरीक्षण भी हो गया है। जनवरी माह में यह कार्य शुरू होने की संभावना है।

डी.एन.वी. कोर्स के लिए भी हॉस्पीटल ने आवेदन कर रखा है। स्वीकृति मिलने पर चार आर.एम.ओ. को इसमें ट्रेनिंग मिल सकेगी।

हॉस्पीटल में प्रतिवर्ष स्व. आचार्य श्री नानालालजी की पुण्य तिथि पर विभिन्न शिविरों के माध्यम से नि:शुल्क नेत्र चिकित्सा, विकलांगों को पैर एवं पोलियो ग्रस्त को केलीपर देने का कार्य महिला विभाग द्वारा पर्युषण पर्व में महिलाओं से प्राप्त सहयोग के आधार पर संपादित किया जाता है। महिला विभाग अजमेर में श्रीमती प्रेमलता जैन द्वारा संचालित मणिपुंज संस्थान के अबोध अनाथ एवं निसहाय बच्चों की शिक्षा के लिए प्रतिवर्ष सहयोग देती है। इसकी संयोजिका श्रीमती फूलकुंवर कांकरिया हैं। रोटेरियन श्री सुभाषजी कांकरिया ने हॉस्पीटल में १००० आँख ऑपरेशन का जिम्मा लिया है। यह अच्छा सगुन है। वे धन्यवाद के पात्र हैं।

इसकी प्रशासन समिति के अध्यक्ष श्री पन्नालालजी कोचर, उपाध्यक्ष श्री विजयकुमारजी नाहटा, श्री सोहनराजजी सिंघवी, श्री जयकुमारजी कांकरिया, मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया, सहमंत्री श्री अशोकजी मित्री, श्री फागमलजी अभाणी एवं सह-संयुक्त मंत्री श्री सुभाषजी बच्छावत हैं। प्रशासक श्री सुरेश शर्मा हैं।

पीड़ित एवं रोग ग्रस्त मानव सेवा के उद्देश्य से श्री जैन हॉस्पीटल की स्थापना हुई है। बड़ी गरिमा पूर्वक इस हॉस्पीटल ने एक दशक पूर्ण कर अपना इतिहास रचा है। १० फरवरी २००८ को साइन्स सिटी में 'सेवा एक दशक' स्मारिका का लोकार्पण होगा। इसके प्रथम, द्वितीय कवर के लिए भी प्रयास चालू है।

साधना : इस वर्ष जैन क्वीज प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। एक सौ भाई वहनों ने इसमें भाग लिया। प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त दलों को सम्मान स्वरूप अच्छी राशि प्रदान की गई। सान्त्वना पुरस्कार भी प्रदान किये गये। इसे सफल वनाने में श्री अजयकुमार अभाणी, श्री धनराज अभाणी, श्री निश्चल कांकरिया एवं श्री सुशील गेलड़ा का कार्य सराहनीय रहा। क्वीज मास्टर की भूमिका में श्रीमती कंचनदेवी ने प्रशंसनीय कार्य किया।

आलोच्य सत्र में पर्युषण पर्वाराधना हेतु समता प्रचार संघ के दो स्वाध्यायी श्री नानालालजी पीतिलिया एवं श्री गणेशजी गहलोत आये। दोनों ने पर्युषण पर्वाराधना बहुत अच्छे ढंग से कराई अत: साधुवाद के पात्र हैं।

कोलकाता-हावड़ा चातुर्मास व्यवस्था समिति : इस संघ का निर्माण व्यसन मुक्ति के प्रेरणा दाता आचार्य श्री रामलालजी म.सा. के आगामी चातुर्मास हेतु हुआ है। यह संघ अपनी पूर्ण जिम्मेदारी पूर्वक कार्य करे।

सभा के आठ दशक : सभा के ८० साल की पूर्णता के अवसर पर एक महत्वपूर्ण आयोजन अमृत महोत्सव के रूप में दिनांक १० फरवरी, २००८ को रविवार को साइन्स सिटी सभागार में होगा। इस अवसर पर उदारमना दानवीर श्री सुन्दरलालजी दुगड़ स्मारिका तथा श्री जैन हॉस्पीटल की 'सेवा एक दशक स्मारिका' का लोकार्पण भी होगा। सभा का प्रथम द्वितीय कवर का कार्यक्रम पोस्टल विभाग के सहयोग से सम्पन्न होगा। इस आठ दशक आयोजन के संयोजक हैं कर्मठ कार्यकर्त्ता सभा के ट्रस्टी श्री सरदारमलजी कांकरिया।

श्री जैन विद्यालय कोलकाता : इस भवन में स्थित केन्टीन के पुनर्निर्माण एवं पुनर्रचना का संपूर्ण कार्य भाई श्री किशोरजी कोठारी की देखरेख में चल रहा है। जनवरी के अंतिम सप्ताह तक यह कार्य पूर्ण होने की संभावना है। ग्राउण्ड फ्लोर में कैन्टीन व २ तल्ले पर ऑफिस, थर्ड फ्लोर में कम्प्यूटर रुम, फिजिक्स एवं केमस्ट्री लेबोरेटरी होगी। कलकत्ता कॉरपोरेशन द्वारा इसका पूर्णरूपेण स्वीकृत नक्शा मिल गया है। इस भवन को पूरा नया रूप देने का श्रेय भाई श्री किशोरजी कोठारी को है वे भूयसी साधुवाद के पात्र हैं.

अल्प संख्याक जैन : १३ दिसम्बर २००७ को अल्प संख्यक मंत्री जनाब श्री अब्दुल सत्तारजी ने यह विधेयक विधान सभा में प्रस्तुत किया जो ध्वनिमत से पारित हो गया। महामहिम राज्यपाल महोदय के हस्ताक्षर के बाद यह कानून बन जायेगा।

इसका सम्पूर्ण श्रेय कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री रिधकरणजी बोथरा व उनकी टीम के सदस्य श्री राधेश्यामजी मिश्र व श्री युधिष्ठिर महतो को है। ये हमारे भूयसी साधुवाद के हकदार हैं।

श्री विजयसिंह नाहर शताब्दी वर्ष : पश्चिम बंगाल के पूर्व उप-मुख्यमंत्री एवं कांग्रेस के दिग्गज नेता श्री विजयसिंहजी नाहर का गतवर्ष शताब्दी वर्ष था। श्री नाहरजी सभा व विद्यालय के सच्चे हितैषी थे एवं इनका बहुत अधिक अवदान था। सभा ने शताब्दी समिति को आंशिक रूप से सहयोग दिया। विधानसभा में इनका आदमकर चित्र लगाने का कार्य भी शीघ्र संपादित करने हेतु प्रयत्न चल रहा है। कॉन्वेन्ट रोड का नामकरण विजयसिंह नाहर रोड हो गया है। इन पर पोस्ट स्टाम्प निकालने हेतु प्रयास भी जारी है।

स्नेह मिलन : प्रतिवर्ष की तरह इस वर्ष भी स्नेह मिलन का आयोजन ३० दिसम्वर, २००७ को काशीपुर परिसर में रखा गया है। इसके संयोजक श्री फागमलजी अभाणी एवं श्री चन्द्रप्रकाशजी डागा हैं।

२० से २४ ओल्ड चायना बाजार प्रोपर्टी : पूरे मकान के ६० लाख के शेयर में मात्र ७ हजार शेयर क्रय करने का कार्य शेष है। केश हाईकोर्ट में चल रहा है। ये शेयर रजिस्ट्रार को खरीदने हैं। यह कार्य भी शीघ्र पूर्ण हो जाने की उम्मीद है।

महकते फूल नहीं रहे : अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त संविधान विशेषज्ञ एवं विधिवेत्ता डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी का निधन हो गया। सभा से इनका निकट का सम्बन्ध था।

हमारी सभा के विशिष्ट एवं वरिष्ठ कार्यकर्त्ता श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया की धर्मपत्नी श्रीमती अमरावदेवी रामपुरिया का लम्बी बीमारी के बाद स्वर्गवास हो गया। उनकी स्मृति में एक लाख रुपये का चेक सभा को प्रदान किया है।

हमारी सभा के कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री शिखरचंदजी मिन्नी, श्री मोतीलालजी मालू एवं श्री भंवरलालजी दस्साणी की धर्मपत्नी श्रीमती छगनदेवी का स्वर्गवास भी इस वर्ष हो गया। सभा के हितैषी श्री दीपचन्दजी नाहटा भी नहीं रहे।

सभा इन सभी दिवंगत आत्माओं की चिरशांति की कामना करते हुए श्रद्धा सुमन अर्पित करती है.

सभा का यह पारिवारिक स्वरूप सदैव बना रहे एवं सभा प्रगति पथ पर निरन्तर बढ़ती रहे, यही हमारी कामना एवं प्रार्थना है।

सभा के कार्यों के संपादन में सभी घटकों एवं कार्यकर्त्ताओं का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ एतदर्थ आभार व्यक्त करना हमारा कर्त्तव्य है। पत्र-पत्रिकाओं के सहयोग हेतु भी सभा का हार्दिक आभार। कार्य निष्पादन में रही हुई त्रुटियों एवं भूलों के लिए क्षमायाचना के बाद अध्यक्ष महोदय को धन्यवाद दिया गया एवं जयघोप के साथ सभी बैठक समाप्त हुई।

मंत्री द्वारा प्रस्तुत सभा का कन्सोलिडेटेड आय-व्यय का अंकेक्षित लेखा-जोखा सदन पटल पर रखने के पश्चात् विचार-विमर्श के बाद सर्वानुमति से स्वीकृत किया गया।

आगामी ऑडिट कार्य के लिए के.एस. वोथरा एण्ड कम्पनी का प्रस्तावित नाम सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

आगामी कार्यकाल के सुचारू संपादन हेतु विश्वस्त मंडल पदाधिकारी, कार्यकारिणी सदस्य एवं स्थायी आमंत्रित सदस्यों का चुनाव सर्वसम्मति से किया गया।

■

Sri B. C. Kankaria
Secretary, Shree Jain Vidyalaya
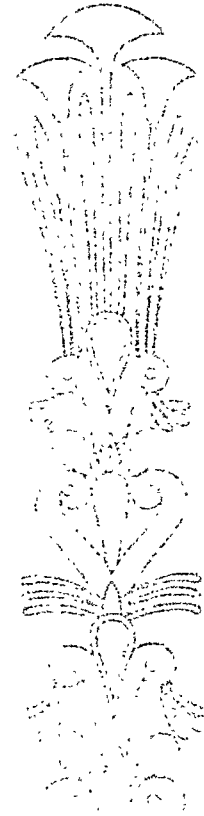
SHREE JAIN VIDYALAYA, HEADING TOWARDS PAR-EXCELLENCE

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रह विद्यते।
तत्स्वयं योग संसिद्ध: कालेनात्मनि विन्दति।।

Going through the above shlok that underlines the supremacy of knowledge and enlightment for the purification of the soul, I really feel elated and honoured that a commoner like me has long been associated with the noble work of imparting knowledge to the common pupils, Nearly a decade ago, I felt hugely privileged when I was handed over the responsibility of being the secretary of the Managing committee of Shree Jain Vidyalaya, Kolkata. Needless to say, Shree Jain Vidyalaya, Kolkata has a long and glorious tradition of impartiing quality education, maintaining discipline among the students and toiling endlessly for the all-round development of its pupils' personality. To keep up such a great lagacy was certainly a Herculean task. Hundred percent result of both the Madhyamik and Higher Secondary sections had become usual. The school had already earned a reputation. So, I took up the challenge and today I pride myself on saying that the school has taken a long incredible leap during the last decade. Hundred percent result is gradually turning into almost hundred percent first division. The last six years' results of Madhyamik and H. S. Sections are outstanding and the cause of concern and envy for our competitors. This is really a big achievement and such a great success has become possible owing to tireless endeavour of our Principals, teachers and above all the students. Here, I cannot help conveying my sincere thanks to Shree S. S. Jain Sabha for providing all sorts of support to school. The Sabha has been performing various benevolent works for society, yet it has done a tremendous and inspiring deed for the betterment of school. For this, I offer my heartiest gratitude to the icons of Shree S. S. Jain Sabha. Shri S. M. Kankaria, Shree R. D. Bhansali, Shree R. K. Bothra and Shri S. S. Singhvi are among many officials of the Sabha who have been torch-bearers for us. They never shy away from any help needed by the School. Instead, They provide all active support. More often than not, they compel the students as well as the teachers to learn the intricacies of the profession (Learning and teaching) with the help of hard work, commitment and singlemindedness.

Notwithstaning our extra-ordinary achievements, we have been making efforts to uplift the school in order to face the modern challenges in the educational arena. Our contemporary achievements leave much to be desired. The sophisticated practical rooms with essential equipments for the science students and the computer classes for all are just the few steps in this regard. Shree Jain Vidyalaya, Kolkata has earned name and fame not only for its unequalled teaching and maintaining discipline but for being very generous to its pupils also. About ten percent of the total students enjoys the benefit of free studentship while more than that have got the advantage of the half-free studentship. The poor and brilliant students feel at ease in this school by availing themselves of the benefit of scholarships also. The rank-holders and the students having the potential of keeping the school's flag flying are annually awarded with cash prizes. Not only this, the school takes care of its intelligent students even after passing from the school. Those students who are unable to bear the expenses of further and higher studies, are helped liberally by the school. So, I do not hesitate to say proudly that even in the age of stiff competition and pure professionalism, Shree Jain Vidyalaya is always ready to serve those who believe that knowledge is the greatest purifier and knowledge helps one in attaining purity of heart. Besides all these charitable acts, the school Manaing Committee, in a landmark decision decided to confer the "Vishista Pratibha Puraskar" (similar to Gold medal) to the exceptional budding prodigy of the school. Till date, about twenty promissing talents have been awarded with this "Puraskar". This "Puraskar" is mainly awarded to our ex-studens who have obtained a position or rank in higher studies like graduate, Post-graduate exams, engineering, medical, C.A., C.S., Management studies and in other such streams.

Contrary to the modern belief, we belive neither in publicity nor in celebrating mediocrity but we have firm faith in the following shloka of Rig Veda

ॐ संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।

Live and move ahead with love, knowledgeable
Be active and dutiful like your ancestors.

■

सुभाष बच्छावत
संयोजक, श्री जैन बुक बैंक

श्री जैन बुक बैंक

साधना, शिक्षा एवं सेवा को ध्यान में रखकर आठ दशक पूर्व श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की स्थापना हुई थी। सभा की स्थापना के साथ ही साधना एवं शिक्षा का कार्य प्रारम्भ हो गया था परन्तु सेवा का कार्य संगठित रूप में १९७७ से पू. जयन्तीलालजी महाराज की प्रेरणा से ही गतिशील हो सका। सन् १९७७ में बुक बैंक गठन के लिए एक तीन सदस्यीय कमेटी श्री विनोदजी मिन्नी के संयोजन में गठित की गई जिसमें सदस्य के रूप में मुझे और श्री सुबोध मिन्नी को रखा गया। श्री प्रेमचन्द्र मुकीम, श्री शांतिलाल जैन, श्री कस्तुरचंद मुकीम, स्व. धनराजजी भूरा, श्री निर्मल नाहर, श्री मूलचन्द मुकीम आदि युवा द्वारा १९७८ से बुक बैंक का कार्य प्रारम्भ हुआ। हायर सेकेण्डरी, ग्रेजुएशन एवं पोस्ट ग्रेजुएशन के छात्र-छात्राओं को लोन पर पुस्तकें दी जाने लगी। धीरे-धीरे कार्य आगे बढ़ने लगा। व्यावसायिक प्रतिबद्धता एवं पारिवारिक जिम्मेदारी के कारण कार्यकर्त्ताओं में समयाभाव को देखते हुए १९८६ में बुक बैंक की जिम्मेदारी मुझे दी गयी। कार्य को गति देना एवं नई टीम तैयार करना मेरी प्राथमिकता थी। बुक बैंक से पुस्तक लेकर पढ़ने वाले छात्रों में से ४ छात्रों का चुनाव कर मैने कार्य करना प्रारम्भ किया। उनमें से एक छात्र श्री तारकनाथ दास अभी तक बुक बैंक के कार्य में सक्रिय हैं। ३-४ साल तक कोई भी नये कार्यकर्त्ता जुड़ नहीं पाए। उसके पश्चात् धीरे-धीरे श्री अजय बोथरा, श्री अजय डागा, श्री सुरेन्द्र दफ्तरी, श्री सुशील गेलड़ा, श्री महावीर लुणावत आदि कार्य करने लगे।

१९९१ से सभा ने यह विचार रखा कि कार्य की पूर्ण समीक्षा की जाए एवं नयी रूपरेखा बनाई जाय कि ज्यादा से ज्यादा छात्र इस सुविधा से लाभान्वित हो सकें। हमलोगों ने गाँव-गाँव घूम-घूम कर शिक्षकों से यह बात सुनिश्चित की कि अगर माध्यमिक स्तर पर यह कार्य आरम्भ हो सके तो बहुत ज्यादा छात्र-छात्राएँ लाभान्वित हो सकेंगे। पुस्तकों के अभाव में जो छात्र स्कूल छोड़ते हैं, उनकी संख्या कम हो सकती है। विचार किया गया कि स्कूलों मे श्री जैन बुक बैंक खोली जाय जिसकी देख-रेख की जिम्मेदारी उस स्कूल की होगी एवं सभा द्वारा बताए दिशा-निर्देश पर वे कार्य करेंगे तथा सभा को रिपोर्ट करेंगे। १९९२ में ४२ स्कूलों में ५५७ छात्र-छात्राओं के साथ इस योजना का शुभारम्भ हुआ। उन्हें यह कहा गया कि अगले शिक्षा सत्र पर आप इस सत्र में दी गई पुस्तकें वापस देंगे एवं नए सेट्स के लिए अर्जी देंगे। इस तरह दोनों सत्रों की पुस्तकें लाकर पुन: छात्र-छात्राओं में बाँटना एवं उसकी रिपोर्ट करना जिससे और ज्यादा छात्र समूह इससे लाभान्वित हो। ३-४ वर्षो में ही जो कार्य ४२ स्कूलों के ५५७ छात्रों से शुरू हुआ था, वो १०० से ज्यादा स्कूलों के १५०० छात्र-छात्राओं तक पहुँच गया। इसके साथ ही शिक्षकों को यह ट्रेनिंग भी दी जाने लगी कि किस तरह बुक बैंक को बढ़ाया जाय। अब प्रतिवर्ष नयी एवं पुरानी पुस्तकों को मिलाकर लगभग १०००० से ज्यादा छात्र-छात्राएँ इस योजना का लाभ ले रहे हैं। सभा प्रतिवर्ष १२५-१५० स्कूलों के १५०० छात्र-छात्राओं को नये सेट्स उपलब्ध करवाती है। इस तरह से अब तक कुल १५०००० से ज्यादा छात्र-छात्रायें इस योजना का लाभ ले चुके हैं।

इस योजना के शुरू होने के साथ ही हमारा स्कूलों में आना-जाना काफी बढ़ गया, साथ ही वहाँ की समस्याओं से भी रूबरू होने लगे। स्कूलों की आकांक्षाएँ भी हमसे काफी होने लगीं। सभा ने यह विचार किया कि स्कूलों के आधारभूत ढ़ाँचों के निर्माण की दिशा में अग्रसर होना चाहिए। अब हम प्रतिवर्ष ६० सिलींग फैन देते हैं। स्कूलों में फर्नीचर, अलमारी समय-समय पर दी गयी है। लड़कियों के स्कूलों एवं कॉलेज में टॉयलेट का निर्माण किया जाता है। विभिन्न स्कूलों में पीने के पानी की व्यवस्था, साइंस लेबोरेटरी, क्लास रुम का निर्माण आदि कार्य किये गये हैं। १५ स्कूलों में लाइब्रेरी बनवाई गयी है। दो लड़कियों के स्कूल में सिलाई-केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इक्कीसवीं सदी में कम्प्यूटर के महत्त्व को समझते हुए ग्रामीण स्कूलों एवं कलकत्ते के स्कूलों में कम्प्यूटर प्रशिक्षण के लिए कम्प्यूटर केन्द्र स्थापित किये गये हैं।

स्कूलों के विकास को देखते हुए शिक्षकों एवं ग्रामवासियों को ग्राम उत्थान की अपेक्षा होने लगी। अव ग्राम विकास का कुछ काम किया जाने लगा। महिला-उत्थान के तहत विभिन्न गाँवों में ७ सिलाई शिक्षण केन्द्र खुलवाए गए। एकीकृत ग्राम विकास के लिए सुन्दरवन इलाके के पाथर प्रतिम व्लॉक के सागर माधवपुर ग्राम का चयन किया गया। यह एक वड़ा ग्राम है जिसमें १००० से ज्यादा परिवार रहते हैं। यहाँ न विजली है, नहीं रास्ता एवं स्कूल भी नहीं है। सिर्फ एक ट्यूबवेल है, उसी से ग्राम में पानी की आपूर्ति होती है। समुद्री इलाका होने के कारण तूफान भी काफी आता है। नदियाँ हैं लेकिन पानी नमकीन है। अत: खेती सिर्फ वर्षा पर निर्भर है। आधुनिक खेती की जानकारी के अभाव में फसल भी ठीक नहीं होती। मुख्य रास्ते पर उतरकर लगभग २ कि.मी. पैदल या साइकिल से जाना पड़ता है। यहाँ वस्त्र, कम्वल एवं गर्म कपड़ों तथा बर्तन वितरण का कार्य किया गया। आने-जाने में असुविधा न हो इसके लिए एक साइकिल वैन ली गई। ग्राम में पहली वार सौर ऊर्जा चालित दो वत्तियाँ लगीं। पानी की सुविधा के लिए एक गहन ट्यूववेल (लगभग १३०० फीट) लगवाया गया तथा एक प्राइमरी स्कूल की स्थापना की गई। कृषि की ट्रेनिंग की व्यवस्था की गई जिससे वहाँ मिर्च एवं टमाटर की उन्नत एक से अधिक फसलें होने लगी, इससे ग्रामवासियों की आर्थिक उन्नति भी होने लगी।

अव ग्राम विकास के अन्तर्गत कलकत्ता से २५० कि.मी. दूर वांकुड़ा के जंगल में स्थित भेदुआसोल नामक एक ग्राम का चयन किया गया है। २००६ से यहाँ हमने कुछ कार्य प्रारम्भ किया है। इस ग्राम में न विजली है, पीने के पानी का भी अभाव है, रोजगार के साधन भी नहीं हैं तथा पूरा ग्राम वनवासियों का है जो कि वन पर निर्भर करते हैं तथा साल पत्तों के पत्तल वनाते हैं। ग्राम माओवादियों के इलाके में पड़ता है। सर्वे का काम चालू है। शीघ्र ही ग्राम विकास का कार्य प्रारम्भ हो जायेगा।

भावी योजना : २००८-२००९ में ट्रेनिंग सेन्टर खोलने की है जिससे कृषि एवं अन्यान्य ट्रेनिंग की व्यवस्था रहेगी जिससे ग्रामवासियों का आर्थिक उन्नयन हो तथा ४ स्कूलों में कम्प्यूटर शिक्षण केन्द्र खुलवाना आदि है।

इस कार्य के प्रेरणास्त्रोत एवं आधार स्तम्भ श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिखवदासजी भंसाली, श्री रिधकरण वोथरा, श्री भंवरलालजी वैद, श्री विनोदजी मिन्नी आदि हैं।

■

Goutam Kr. Bose

Down the Memory Lane

The small seed that was planted in the year 1978, has today blossomed into a full-grown plant rendering shade to innumerable students. Shree Jain Book Bank has traversed a long way spreading its branches, facing the challenges undaunted, reaching out to the poor but meritorious students.

I came in contact with this noble philanthropic institution twelve years back. It is like a dream come true where every wish and desire has been fulfilled. The students of Shyam Sunderpur Patna High School in East Midnapore interior have reaped the benefits of the Book Bank. Not only our school but also another 400 schools, more than 25,000 students have largely benefitted through the services of the Book Bank.

The Jain Book Bank has constantly showered its blessings in various spheres. Not only has it stood behind the deserving and meritorious students but has been highly supportive in providing the various school-related accessories like ceilling fans, books, laboratory, equipment, library computers etc. It has erected school buildings with proper water supply in many backward areas, keeping in mind the need and want of the deprived masses. The only slogan that keeps the ball rolling is 'Books for all, Education for all'. A small sentence but a deep connotation. It is one of the most enterprising private body which has been successful in controlling the rate of drop-outs in the rural, backward areas. One of its major focus has been on the education of the girls who are often made victims of poverty, compelled to do domestic works. The Bank performs the mammoth task of showering the ray of light and hope to this under privileged, deprived class.

Our school will be ever indebted to the Jain Book Bank. Their love, concern and helping hand has enabled many of our students to prosper and flourish in life. They have not restricted to the boundaries of the school but have gone much beyond it. They have extended their hands to colleges and other vocational trainings. In short they have transcended all limits.

I would like to end saying that it is my proud privilege and feel deeply honoured to be associated with this noble body, their one and only motto –

Serve, Serve and Serve.

I wish them all success and earnestly pray that they celebrated their golden jubilee in the days to come.

Long Live Book Bank.

■

अशोक बच्छावत
सचिव, श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र के बढ़ते चरण

११० करोड़ आबादी वाले हमारे भारत में शिक्षा का स्तर काफी नीचे है। मूल कारण आजीविका का अभाव, जनसंख्या का निरन्तर बढ़ना। लोग जहाँ एक वक्त की रोटी के लिए छोटे बच्चों को काम करने के लिए भेजते हैं, वहाँ शिक्षा का हश्र यही होना है। केन्द्रीय सरकार ने इसे देखा, सोचा और समझा। फलतः उसने 'मानव संसाधन विकास मंत्रालय' के अन्तर्गत १९८९ में 'राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय' की स्थापना की। इसका उद्देश्य कर्मरत लड़के/लड़कियों को, हरिजन जातियों एवं प्रजातियों को, ग्रामीण युवकों को, विवाहित/अविवाहित महिलाओं को, विकलांगों को, यहाँ तक की मूक-बधिरों को भी शिक्षा-दान करना है।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, जो कलकत्ता के अग्रणी संस्थाओं में से एक है एवं जो सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन एवं सम्यक् चारित्र के आधार पर श्री जैन विद्यालय जैसे शत-प्रतिशत उत्तीर्ण छात्रों के कई स्कूल चलाते हैं, को यह उद्देश्य काफी अच्छा लगा। संस्था ने १९९० में 'श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र' की स्थापना की एवं राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय से अनुमोदन ग्रहण कर छात्रों-छात्राओं की भरती आरंभ कर दी।

श्री जैन शिल्प शिक्षा केन्द्र १९९० से आज २००८ तक प्राचार्य श्री भूपराज जैन और उनके अवकाश ग्रहण के पश्चात् श्री अरुणकुमार तिवारी और राधेश्याम मिश्र के सुदृढ़ एवं सफल निर्देशन में अनवरत चल रहा है। इसके दोनों विभाग–माध्यमिक एवं उच्च-माध्यमिक में छात्र-छात्राओं की भर्ती वर्ष में एक बार जुलाई-अगस्त माह में होती है। प्रति वर्ष सैंकड़ों की संख्या (सैंकड़ों इसलिए कि कोई भी शिक्षण संस्थान ५०० से अधिक छात्र-छात्राओं को एक सत्र में भर्ती नहीं कर सकता) में यहाँ भर्ती होती है और उत्तीर्ण छात्रों का औसत अंक ७० प्रतिशत के आस-पास होता है।

हमारे यहाँ गरीब विद्यार्थियों की भी भर्ती होती है तथा आवश्यकतानुसार उनकी फीस आधी या पूरी माफ और किसी-किसी को तो फार्म भरने तथा परीक्षा फीस भी संस्था के माननीय सदस्य दे देते हैं। कामगार महिलाएँ, गृहिणी आदि भी हमारे यहाँ शिक्षा प्राप्त कर रही हैं एवं समाज में, कार्यालय में अपनी योग्यता स्थापित की है। मुक्त विद्यालय की अत्यधिक सुविधाओं का लाभ ये विद्यार्थी बराबर उठाते हैं।

इसकी परिसेवा का विस्तार होने के कारण केन्द्रीय मंत्रालय ने सन् २००२ में इसका नाम बदल कर 'राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान' कर दिया। तकरीबन १ लाख से अधिक छात्रों को २७०० विद्यालयों एवं ११ क्षेत्रीय कार्यालयों के माध्यम से शिक्षा को बढ़ावा दिया जा रहा है। उसकी कुछ सुविधाओं का सीधा लाभ छात्र/छात्रा उठाते हैं। एक बार भर्ती होने का अर्थ है पाँच साल का पंजीकरण। इन पाँच वर्षों में छात्र अपनी सुविधानुसार परीक्षा दे सकता है। वर्ष में २ बार परीक्षाएँ होती हैं। कुल मिलाकर एक छात्र को ९ सुयोग मिलते हैं। विषय का चयन इच्छामूलक (स्वैच्छिक) है। सिर्फ ६ या ७ विषय चुनना है जिसमें ५ विषय में पास करना आवश्यक है। इसके अलावा छात्र अल्प समय के दूसरे व्यावहारिक विषयों में भी प्रवेश ले सकते हैं। अब तो इंटरनेट से भी प्रवेश एवं परीक्षा दी जा सकती है जो अन्य विद्यालयों या निकायों में उपलब्ध नहीं है। भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त होने के कारण भारत के अन्य विद्यालयी संस्थानों ने भी इसे मान्यता दी है। इससे उत्तीर्ण छात्र दूसरे विश्वविद्यालयों में भी भर्ती हो सकते हैं। इसके अलावा इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय तो है ही। फिर छात्र क्यों न इनका लाभ लें?

हमारा विद्यालय भी इन सुविधाओं से युक्त है और हमारे छात्रगण इन सुविधाओं का भरपूर लाभ लेते हैं। हमें विश्वास है कि हमारा विद्यालय भविष्य में भी चलता रहेगा और इन सुविधाओं से छात्रों की मदद करता रहेगा।

■

Smt. Geetika Bothra
Ex-Joint Secretary, Shree Jain Shilpa Shiksha Kentra

Shree Jain Shilpa Shiksha Kendra

Shree Jain Shilpa Shiksha Kendra—As this name echoes in my ears all my fond memories flow in my mind I remember it clearly; it's been almost a decade that I have been involved in this organization as a teacher in IGNOU and joint secretary.

The classes are held on Saturday & Sunday. This institute is very good for those students who for some reasons could not continue the regular school.

Here the level of studies is very easy. The- classes are for 10th &11th standard. I have seen a lot of students who have passed out from this school and completed their graduation & post-graduation. It was my father-in-law who had asked me if I was interested to join Both my sister-in-laws have also been apart of this school.

I found it to be a golden opportunity to fulfill my childhood dream, as "teacher -teacher" was my favorite game! When I joined the school I use to teach English &later I taught business studies as I am a commerce student. I simply enjoyed myself, there island of satisfaction which is very important in everybody's life. In between I had taken a leave due to personal reason, that time I use to teach at my place to complete the course. When I was expecting my second child I took a leave, that time I was so touched by the students who had come up to me to congratulate & requested me to join as they were missing me. There were times that could not attend the class for which I use to feel very guilty because according to me we should do a thing with full dedication .This is the reason that I left the school & the last year as I had other priorities in life which need a lot of time.

My experience at Jain Vidyalaya has been very good cherished the time I spent there.I am very proud to be a part of this institute. It is my humble to all educated women to come forward and help in making this organization a better place. We need your help. Believe me try in once ,you will like it so much & somehow it will help you also.

My best wishes are always there for a very bright future.

■

धनराज अब्भाणी

धर्म सभा

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता की प्रमुख प्रवृत्ति धर्म सभा ने समस्त जैन बालक-बालिकाओं के ज्ञानवर्धन एवं धार्मिक संस्कार युक्त जीवन निर्माण के उद्देश्य से जैन धर्म सम्बन्धी प्रश्नोत्तर की प्रतियोगिता का एक कार्यक्रम "धार्मिक क्वीज कॉन्टेस्ट, २००७" का आयोजन किया। इसका प्रथम चरण दिनांक २७ मई, २००७ को आयोजित किया गया। इसमें लगभग १०० बच्चे लिखित परीक्षा में सम्मिलित हुए। इनमें से ५२ बच्चे सेमी फाइनल के लिए चुन गये। दूसरा चरण सेमी फाइनल ३ जून, २००७ को सम्पन्न हुआ। इसमें से २८ बच्चे फाइनल में पहुँचे। इन २८ बच्चों के चार-चार के सात ग्रुप का फाइनल दिनांक १० जून, २००७ को सम्पन्न हुआ। इसमें सुमतिनाथ दल के बच्चे प्रथम स्थान पर रहे एवं इन्हें रु. ११,१११/- का नगद पुरस्कार दिया गया। द्वितीय स्थान के अधिकारी "पद्म प्रभु दल" के बच्चे थे जिन्हें रु. ५,१११/- के नकद पुरस्कार से सम्मानित किया। तृतीय स्थान "अजितनाथ दल" के बच्चों ने प्राप्त किया जिन्हें पुरस्कार स्वरूप रु. ३,१११/- की राशि प्रदान की गई। शेष चार दलों को रु. १,१११/- सान्त्वना पुरस्कार दिया गया।

यह सम्पूर्ण कार्यक्रम श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा के उपाध्यक्ष श्री रिधकरणजी बोथरा एवं मंत्री श्री विनोदजी की प्रेरणा से धनराज अब्भानी, निश्चल कांकरिया एवं सुशील गेलड़ा के संयोजकत्व में सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। क्वीज मास्टर की भूमिका श्रीमती कंचनदेवी कांकरिया ने निभाई। कार्यक्रम के अध्यक्ष तेरापंथ महासभा के अध्यक्ष श्री राजकरणजी सिरोहिया थे। उद्घाटनकर्त्ता थे श्री पन्नालालजी कोचर एवं प्रमुख अतिथि थे श्री रूपचन्दजी सावनसुखा तथा प्रधान वक्ता थीं श्रीमती तारादेवी दुगड़।

यह कार्यक्रम अत्यन्त सफल रहा एवं समाज पर इसका अच्छा असर पड़ा।

■

केवलचंद कांकरिया
सहसंयोजक – धर्म सभा

स्वाध्याय भवन (समता-भवन) का निर्माण

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता के अमृत महोत्सव के मांगलिक प्रसंग पर हार्दिक शुभकामनाएं, किसी संस्था अथवा सभा का आठ दशक तक निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर रहना अपने आपमें एक गौरव का विषय है। साधना के मूल उद्देश्य को लेकर सभा ने शिक्षा एवं सेवा के विभिन्न आयामों में अपनी सक्रियता प्रकट की है और नगर तथा आंचलिक क्षेत्रों में जैन विद्यालयों, जैन कॉलेज जैन चिकित्सालय आदि शिक्षा एवं सेवा के क्षेत्र में बहुविध सफलता प्राप्त करने का प्रयास किया, यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है। सभा के कर्मठ कार्यकर्ता, पदाधिकारी एवं सदस्यों की सक्रियता एवं हार्दिक लगन का ही यह सुफल है।

सन् १९५२ में मैंने अपना कर्मक्षेत्र पश्चिम बंगाल के महानगर एवं राजधानी कोलकाता में प्रारम्भ किया था और करीब पचास वर्षो से सभा से नियमित रूप से जुड़े रहने का सौभाग्य मुझे प्राप्त है। साधना की प्रवृत्तियों में भाग लेने का अवसर मुझे फूसराज वच्छावत मार्ग (सुकियस लेन) में विद्यालय भवन के निर्माण एवं द्वितीय माला में विशाल सभा कक्ष की व्यवस्था के बाद ही प्राप्त हुआ था। प्रत्येक रविवार को धर्मसभा का आयोजन, अष्टमी तथा चतुर्दशी को सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध एवं धर्मचर्चा के कार्यक्रम नियमित रूप से चलते थे। आसपास के इलाके के निवास करने वाले बुजुर्ग प्रात:काल सामायिक एवं धर्म आराधना हेतु भी सभागार का उपयोग करते थे। पर्युषण पर्व के आठ दिनों में संत सतियों हेतु उपयुक्त आवास-व्यवस्था के अभाव में स्वाध्यायी बंधुओं को आमंत्रित किया जाता था तथा उनके सानिध्य में पर्युषण पर्व की आराधना का क्रम विधिवत निरन्तर चल रहा है।

कोलकाता महानगर में स्वाध्याय भवन की कमी निरन्तर खलती रही है। प्रारम्भ में विद्यालय भवन के बगल में चीना बाजार की कुछ जमीन को खरीदने का प्रयास काफी वर्षो तक चलता रहा ताकि आराधना भवन का निर्माण किया जा सके, किन्तु उस कार्य में सफलता नहीं मिल सकी और संभवत: उसके बाद आराधना-भवन की व्यवस्था हेतु कभी चिन्तन भी नहीं किया गया। गुरु विना ज्ञान नहीं होने के अनुसार संत-संतियों के चातुर्मास अथवा संक्षिप्त समय के लिए भी आवास की व्यवस्था होने पर उनके सान्निध्य मे ज्ञान अर्जित करना एवं धर्म आराधना करने के लाभ से अभी तक वंचित ही रहना पड़ा है। इन पांच दशक की अवधि में महानगर में स्थानकवासी श्वेताम्बर जैन परिवारों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। उन्हें स्वाध्याय भवन की अत्यंत आवश्यकता महसूस हुई है और नगर के विस्तार के साथ-साथ आंचलिक क्षेत्रों मे भी स्वाध्याय भवन निर्माण की ओर समाज का ध्यान गया है। भवानीपुर क्षेत्र में २६/१, रमेश मित्रा रोड में महावीर सदन की स्थापना सन् २००२ में हुई। हावड़ा तथा काकुड़गाछी इलाके में स्वाध्याय भवनों की व्यवस्था हेतु सक्रिय प्रयास आरम्भ किये जा चुके हैं तथा अति शीघ्र ही इस ओर सफलता मिलने की संभावना दृष्टिगोचर हो रही है। श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा अपने अमृत महोत्सव के पावन प्रसंग पर बड़ाबाजार अथवा मध्य कोलकाता क्षेत्र में समता-भवन के निर्माण का निर्णय लेवे ताकि आराधना के क्षेत्र में भी सभा का महत्वपूर्ण एवं आवश्यक योगदान हो सके।

■

रिधकरण बोथरा
उपसभापति, श्री श्वे० स्था० जैन सभा

शिक्षा, सेवा और साधना

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा ने सेवा, शिक्षा व साधना जैसे महत्वपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति करते हुए अपने जीवन के ७९ वर्ष पूर्ण कर ९ दशक में प्रवेश कर लिया है। आगे भी शिक्षा के क्षेत्र में टीचर्स ट्रेनिंग स्कूल, नर्सिंग ट्रेनिंग स्कूल व कॉलेज तथा डेन्टल मेडिकल कॉलेज जैसे महत्त्वपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति में लगी हुई है। किसी भी सभा व संस्था के प्राण इसके कार्यकर्त्ता होते हैं। श्री फूसराजजी बच्छावत जैसे इनके संस्थापक कार्यकर्त्ता ने निस्वार्थ भाव से इस सभा की सेवा कर इसे गौरवान्वित किया। अभी वर्तमान में कोलकाता म्युनिसिपल कॉरपोरेशन ने सुकियास लेन का नाम परिवर्तन कर फूसराज वच्छावत पथ रख कर एक कार्यकर्त्ता को सम्मान दिया – इस हेतु उस समय के माननीय मेयर श्री सुब्रतो मुखर्जी साहब व रोड रिनेमिंग कमिटी के चेयरमेन, पूर्व शिक्षा मंत्री श्री प्रतापचंदर चंदर साहब को धन्यवाद देना चाहता हूँ। श्री वच्छावत की कार्यप्रणाली व उनके वताए रास्ते पर वर्तमान में इनके कार्यकर्त्ता इस सभा को आगे बढ़ाते जा रहे हैं।

विगत तीन दशक से मैं भी इस सभा से जुड़ा हुआ हूँ। मेरे अनुभवों का थोड़ा-सा हिस्सा मैं आपके सम्मुख रख रहा हूँ। सन् १९८६ में श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता का मंत्री था। मैं प्राय: कार्य पूर्व मंत्री श्री सरदारमलजी कांकरिया से पूछ कर ही करता था। इसके दो तीन साल बाद एक दिन उन्होंने मुझे पूछ लिया कि क्या आप स्वतंत्र निर्णय नहीं ले सकते? मैंने कहा, मैं स्वतंत्र निर्णय ले सकता हूँ पर सारे कार्य आपसे सलाह करके ही करना चाहता हूँ। अभी हमारी सभा में इसी परम्परा का निर्वाह बड़े प्रेम व सौहार्द के साथ किया जाता है।

मेरी बड़ी लड़की का विवाह था। उससे ३ दिन पूर्व भारत के प्रधानमंत्री माननीय राजीव गाँधी की हत्या हो गई थी, पूरे भारतवर्ष में एक तनाव का वातावरण था। बारात रायपुर से आने वाली थी। हमारे समाज के इन कर्णधारों ने प्रति घंटा रायपुर से सम्पर्क किया व जब बारात हावड़ा स्टेशन पर पहुँची मेरे परिवार का एक भी सदस्य स्टेशन पर नहीं था – समाज के इन्हीं कर्णधारों ने बारात का स्वागत ही नहीं वरन् उस तनाव के वातावरण में मेरी लड़की के विवाह में पूर्ण सहयोग कर अच्छी तरह से बारात को बिदा किया।

हमारी सभा के ये अग्रज श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिखबदासजी भंसाली, भाई विनोदजी मित्री व स्वर्गीय भंवरलालजी कर्णावट सभा के कार्यकर्त्ताओं के सुख-दु:ख ही नहीं वरन् किसी भी तकलीफ, कष्ट के निवारण में यथासाध्य सहयोग करके एक संबल प्रदान करते हैं। कार्यकर्त्ता अपने को कभी भी अकेला महसूस नहीं करता, जरुरत पड़ने पर पूरा समाज उसके साथ है। ऐसे कई उदाहरण मुझे देखने को मिले हैं। हमारी सभा में सब तरह के प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति हमें देखने में मिलते हैं– नीवं के पत्थर श्री राधेश्यामजी मिश्रा, श्री हनुमान नाहटा जो सभा को ही अपना घर मानते हैं। हमारे विद्यालय के शिक्षकों में यही भाव नजर आता है। वे विद्यालय को अपना विद्यालय मानते हैं एवं विद्यालय की उन्नति के लिये इसी कारण प्रतिपल कर्तव्यनिष्ठ रहते हैं।

साहसिक कार्यकर्त्ताओं में भाई किशोरकुमार कोठारी सामने हैं– प्रतिकूल परिस्थितियों में भी समभाव से कार्यो को पूर्ण करते हैं। इस अवसर पर उदारमना, दानवीर सेठ श्री सुन्दरलालजी दुगड़ के अभिनन्दन का कार्यक्रम भी रखा है। सरल स्वभावी, स्पष्ट वक्ता, उदार हृदय श्री दुगड़जी ने सेवा व शिक्षा व साधना के क्षेत्र में खुले हाथ व हृदय से अपार राशि पूरे भारतवर्ष में जगह-जगह दी है। श्री जिनेश्वर देव से यही प्रार्थना है कि श्री दुगड़जी स्वस्थ रहें, प्रतिदिन प्रगति करते हुए समाज की सेवा इसी तरह करते रहें।

किसी भी सभा या संस्था की सफलता व असफलता का रहस्य उसके कार्यकर्त्ताओं के वीच पारस्परिक विश्वास, सहयोग की भावना और वैचारिक सामन्जस्य पर ही निर्भर होता है। हमारी यह सभा अक्षरश: इन तथ्यों पर चल रही है। श्री जिनेश्वर देव से यही प्रार्थना है कि सभा का यह रूप मूर्तिमान रहे और इसी तरह कार्य करते-करते इसकी यशोगाथा को वढ़ाते हुए शताव्दी वर्ष मनाए।

☆☆☆

रिखबदास भंसाली
पूर्व अध्यक्ष, श्री श्वे० सभा जैन सभा

सभा ८० वर्ष की शुभयात्रा परिपूर्ण कर रही है इस अवसर पर एक भव्य कार्यक्रम का आयोजन एवं स्मारिका का प्रकाशन होने जा रहा है। चूंकि इस संस्था से विगत् ५ दशक से जुड़ा होने के कारण भावनात्मक रूप से अपने उद्‌गार व्यक्त करना अपना कर्तव्य समझता हूँ।

सर्व प्रथम श्री श्वे० स्था० जैन सभा के उन सम्मानीय सदस्यों को श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूँ एवं उनकी निष्ठा, श्रद्धा एवं समर्पण के बल पर जो भी उनके कर कमलों द्वारा बीजारोपण किया गया था आज वह एक वृक्ष का रूप ले चुका है। इसकी शाखायें कोलकाता में ही नहीं वरन् सुदूर ग्रामीण अंचलों में भी अपनी सुवास फैला चुकी है। साधना, शिक्षा और सेवा का यह संकल्प साकार रूप में सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय समर्पित है।

संस्था के सम्मानीय सदस्यगण सदैव गतिशील हैं एवं विकास के सहभागी है। इसी के परिणाम स्वरूप किसी भी योजना को कार्यान्वित करने में किसी प्रकार की अड़चन नहीं आती। संस्था के प्रति जैन समाज का ही नहीं वरन् जैनेतर समाज की भी अटूट श्रद्धा, विश्वास है अत: निरन्तर तन, मन और धन से सहयोग प्राप्त होता रहता है।

एक पीढ़ी का स्वर्णिम अवसर आंखों के सामने ओझल हो गया एवं दूसरी पीढ़ी भी उस राह की ओर अग्रसर है। किन्तु संस्था ने कभी भी निराशा महसूस नहीं की। आशावान बनकर गतिशील रही एवं कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। चरैवेति चरैवेति के सिद्धांत का अनुसरण किया। यही शुभ लक्षण है कि आज की युवा पीढ़ी इस संस्था की बागडोर संभालने में सक्षम हैं जिनमें जोश के साथ होश भी है। उनमें भी बड़ों का सम्मान, अपने सहयोगियों के साथ सद्व्यवहार और सचेत अवस्था में कार्य करने की क्षमता है अत: ऐसे वातावरण में कही भी निराशा नहीं झलकती है वरन् स्वर्णिम भविष्य दृष्टिगोचर होता है।

मैं संस्था का ऋणी हूँ क्योंकि मैंने और मेरे परिवार ने प्राथमिक शिक्षा इसी संस्था द्वारा संचालित विद्यालय में प्राप्त की। समाज के कर्णधारों ने समाज में कार्य करने का जो सुअवसर प्रदान किया मैं उन्हें नमन करता हूँ,वंदना करता हूं उनका स्नेह, आशीर्वाद मार्गदर्शन प्रत्यक्ष या परोक्ष में निरंतर मुझे प्राप्त होता रहे इन्हीं मंगल भावनाओं के साथ संस्था के प्रति मेरी भावांजलि।

☆☆☆

Vinod Minni
Secretary, Shree S.S. Jain Sabha

GLORIOUS EIGHT DECADES A MEMORABLE JOURNEY

It is a matter of great pride & happiness as our Sabha celeberates eight glorious decades. A small group of persons (our founders) took a challenge to get a place for the community in the City of Kolkata, after a long struggle they managed to get the piece of land at 18D, Phusraj Bachhawat Path (Sukeas Lane) & developed it as one of the reputed educational institution along with a community hall. Dedicated team work & good effort by teachers made Shree Jain Vidyalaya one of best educational institutions of Kolkata. A challege was taken up in 1990 & the generosity shown by Shri Sunderlalji Duggar by surrendering his land deal in favour of Sabha & our captain Sardarmalji took a dynamic decision & in 1992 Shree Jain Vidayala Howrah was born & looking at the enthusiasm of donors another mile stone achievement on the occasion of Abhinandan of Shri Sardarmalji Kankaria at G. D. Birla Sabhagar Shri Harkhachandji Kankaria assured of donation of fifty one lacs if Sabha took a challange to build a Hospital. Shri R. D. Bhansali, Shri R. K. Bothra, Shri B. L. Karnawat again took the pledge to build a general hospital under Shri S. M. Kankariaji & donors responded positively inspiring to make it the best hospital in Howrah. The journey continues and in the year 2003 a land deal of 500 kathas is finalised at Cossipore to make an education hub with keeping higher studies in mind a College started at Cossipore i.e. Taradevi Harkhchand Kankaria Jain College in the year 2006, three more colleges are waiting clearances.

1. Kusum Devi Sundarlal Dugar Jain Dental Medical College.
2. Kamla Devi Sohanraj Singhvi Jain B. Ed. College
3. Laxmi Devi Peerchand Kochar Jain College Nursing.

An ambitious future plan all under one roof in full unanimity. The journey continues.

वच्छराज अभाणी
पूर्व अध्यक्ष- श्री श्वे० स्था० जैन सभा, कोलकाता

बिना किसी भेद भाव के सेवा में अग्रणी

सन् १९२८ ई० में संस्थापित श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता में एक साम्प्रदायिक संस्था के छोटे से रूप में स्थापित हुई थी किन्तु जैन धर्म के रत्नत्रयी सम्यक् ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र की अभिवृद्धि के उद्देश्य से स्थापित हुई थी एवं शिक्षा, सेवा एवं साधना की अनवरत प्रवाहिणी त्रिवेणी त्रिपथगा के महान उद्देश्यों को लेकर चलने के कारण शीघ्र ही कलकत्ता महानगर एवं ग्रामीण अंचलों तक इसकी सुवास व्याप्त हो गई। मानव सेवा, लोक कल्याण एवं परोपकार सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामय की घुट्टी जिसने जन्मते ही पान की हो वह भला कट्टर कैसे हो सकती है।

इसके सभी पदाधिकारी एवं कार्यकर्ता समाज सेवा के प्रति पूर्ण समर्पित हैं। एक दूसरे से अगाध विश्वास, प्रेम एवं सद्भावना से आपस से मिल जुलकर कार्य करते हैं। मत भेद हो सकता है पर मन भेद कभी नहीं रहता। संस्था के सारे कार्य अत्यन्त पारदर्शी हैं एवं स्फटिक की तरह निर्मल एवं साफ सुथरी छवि लिए हुए हैं। सभी आपसी सूझबूझ और एक जूट होकर कार्य करते हैं अत: यह विशाल वटवृक्ष की तरह छाया, विश्रान्ति एवं अमृतोपम फल प्रदान कर रही है।

इस संस्था को कभी अर्थ का अभाव नहीं हुआ है। जैन-अजैन सभी इसकी लोक कल्यणकारी गतिविधियों एवं क्रिया कलापों से प्रभावित आगे बढ़कर सहयोग प्रदान करते हैं अत: इसकी विभिन्न समितियों में जैनेतर समाज के रूप में भी सम्मिलित होकर कंधे से कंधा मिलाकार चलते हैं।

जहां सर्वश्री हरखचंदजी कांकरिया, सरदारमलजी कांकरिया, रिखबदासजी भंसाली, सुन्दरलालजी दुगड़, सोहनराजजी सिंघवी, रिधकरणजी वोथरा, बच्छराजजी अभाणी जैसे सेवा भावी कार्यकर्ता पदाधिकारी एवं ट्रस्टी हों वहां कभी किसी चीज की कमी नहीं रह सकती। सर्वश्री विनोद मिन्नी, अशोक मिन्नी, सुभाष बच्छावत, फागमल अभाणी, चन्द्रप्रकाश डागा, किशोर कोठारी युवा कार्यकर्ता जहां प्राणपण से कार्य करते हों, वह संस्था दिन दुनी, रात चौगुनी तरक्की करते हुए अपने सेवा प्रकल्पों को आगे बढ़ाने में सदैव सक्षम है और भविष्य में भी रहेगी

बुक बैंक हो, नि:शुल्क शिविर हो, शिक्षा के विभिन्न आयाम हों सभी कार्यक्रम इन्हीं युवा कार्यकर्ताओं के कंधों का सहारा लेकर नित नये कीर्तिमान स्थापित कर रहे हैं। ग्रामीणों अंचलों में सिलाई प्रशिक्षण केन्द्र, कम्प्यूटर केन्द्रों एवं बुक बैंक की स्थापना इस सभा को एक नया स्वरूप प्रदान कर जन-जन में लोक प्रियता के कीर्तिमान स्थापित कर रही है। आठ दशक की यह यात्रा अत्यन्त गौरवपूर्ण रही है एवं शताब्दी की यात्रा अनेक नये कीर्तिमान स्थापित करने में सफल होगी, इसी आशा और विश्वास के साथ।

☆☆☆

पन्नालाल कोचर

गति जीवन विश्राम मौत है

कोई भी व्यक्ति, समाज या संस्था वही जीवित कहलाती है जिसके लोक कल्याणकारी कार्यों एवं विभिन्न क्रिया कलापों में सतत निरन्तरता कायम रहती। बहता पानी सदा निर्मल रहता है। उपनिषदों में भी इसीलिए 'चरैवेति-चरैवेति' चलते रहो, चलते रहो कहा गया है। यह निरन्तरता, यह सातत्य संस्था का प्राण होता है। इसीलिए गति जीवन विश्राम मौत है, कहा गया है।

श्री श्वे० स्था० जैन सभा कोलकाता भी एक जीवन्त संस्था है। इसकी लोक कल्याणकारी प्रवृतियों एवं मानव सेवी प्रकल्पों ने आठ दशक से इसे प्राणवान एवं ऊर्जा सम्पन्न किया है। कहना न होगा कि इसकी बहुआयामी लोकोपकारी प्रवृतियां एवं मानव सेवी क्रिया कलाप इसके कर्मठ सेवा भावी अथक अध्यवसायी एवं दूरदृष्टि सम्पन्न कार्यकर्ताओं की एकजुटता, समवेत प्रयत्नों एवं परिश्रम का सुफल एवं परिणाम है। ये सभी कार्यकर्ता बधाई के पात्र हैं।

शिक्षा, सेवा और चिकित्सा के क्षेत्र में सभा ने जो कार्य किये हैं, वे नितान्त स्पृहणीय, अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय तो हैं ही फिर भी इनके विस्तार की और अधिक आवश्यकता है। खास तौर से महिलाओं के उच्च एवं तकनीकी शिक्षा के लिए अच्छे महाविद्यालयों की स्थापना और उसके कुशलता पूर्वक संचालन की वर्तमान में अत्यधिक आवश्यकता है। सरकारी प्रयत्न तो नाकाफी एवं स्वल्य ही हैं अत: सभा अपने नवम दशक में इस ओर लक्ष्य रखकर कार्य करे, यह समय की मांग और समाज तथा राष्ट्र विकास के लिए जरुरी है। चिकित्सा के क्षेत्र में भी और बहुत कुछ करने की सतत आवश्यकता प्रतीत होती है। अच्छे कामों के लिए कभी भी अर्थाभाव एवं सहयोग की कमी नहीं रहती है। लोग आगे बढ़कर अच्छे कार्यों के संपादन के लिए तत्पर रहते हैं। आवश्यकता है उचित समायोजन, कुशल प्रबंधन एवं कार्य दक्षता की एवं हमारी नई युवा पीढ़ी इसके सर्वथा योग्य है एवं सभा की बहुआयामी लोक कल्याणकारी प्रवृतियों को नये क्षितिज प्रदान करेगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। इस अमृत महोत्सव पर मेरी अशेष शुभकामनाएँ।

☆☆☆

फागमल अभानी

श्री श्वे० स्था० जैन सभा अपने कर्ममय जीवन के आठ दशक पूर्ण कर अमृत महोत्सव मनाने जा रही है।

इस शुभ अवसर पर मुझे उस महामानव कर्मयोगी विलक्षण प्रतिभा एवं व्यक्तित्व के धनी संस्थापक सेठ फूसराज वच्छावत की स्मृति तरोताजा हो रही है। अपने सम्पूर्ण जीवन काल में सदा ही उनके मन में इस संस्था के प्रति सेवा एवं समर्पण की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। मगर जीवन के आखिरी पड़ाव यानि अंतिम श्वांस तक भी संस्था की प्रगति के स्वप्न उनके मन में हिलौरें मार रहा था। अंतिम घड़ी में मैं उनके पास ही बैठा था और चेहरे की भाव भंगिमा से यह स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रहा था।

ऐसे निस्वार्थ तपस्वी के कर कमलों से ही इस संस्था रूपी पौधे ने प्रकाश में प्रथम अंगड़ाई ली थी और आज देखते-देखते विराट वृक्ष का रूप धारण कर चुका है। यह उन्हीं का आशीर्वाद है कि आज भी संस्था की उत्तरोत्तर प्रगति हेतु समाज के उदारमना भामाशाहों, अनुभवी पदाधिकारियों का अथक सहयोग निरंतर जारी है। संस्था को गौरव है कि युवा शक्ति भी उतनी ही तन्मयता एंव समर्पित भावों के साथ संस्था की उन्नति में भरपूर योगदान कर रही है। स्व० फूसराज जी के वरदहस्त एवं आशीर्वाद के कारण ही मुझे इस संस्था से जुड़ने का अवसर मिला, जिसके लिये मैं उनका चिर ऋणी हूँ।

संस्था के माध्यम से सेवा-शिक्षा आदि की विभिन्न प्रवृतियां जारी हैं। चार विद्यालय, अस्पताल, शिल्प केन्द्र, बुक बैंक एवं नेत्र चिकित्सा, विकलांग शिविर, प्लास्टिक सर्जरी शिविर आदि अनेकों सेवाप्रद गतिविधियों से पूरे राज्य की जनता लाभान्वित हो रही है।

मुझे विश्वास है कि भावी पीढ़ी भी इस लोक कल्याणकारी सेवा वृतियों को और आगे बढ़ाकर इस वट वृक्ष को नंदन कानन के रूप में परिणत करने में सक्षम होगी। संस्था की उत्तरोत्तर प्रगति हो, यही हार्दिक शुभकामना है।

जयचन्दलाल मिन्नी
पूर्व मंत्री- श्री श्वे० सभा जैन सभा, कोलकाता

सेवा शिक्षा और साधना की अनवरत जलती मशाल

सन् १९२८ में समाज के कतिपय उत्साही महानुभावों ने सभा की स्थापना का निश्चय किया। वे सब संकल्प के धनी, कर्तव्य परायण एवं समाज के धार्मिक कार्यों को अंजाम देने की ललक संजोये हुए थे। परिश्रम एवं प्रयत्न की महिमा अपरम्पार है। उनकी मेहनत रंग लाई एवं श्री उदयचंदजी डागा ने पांचां गली स्थित अपना मकान इस कार्य के लिए दे दिया था। सामायिक, प्रतिक्रमण होने लगे एवं धीरे-धीरे सामाजिक, धार्मिक गतिविधियां वढ़ने लगी एवं यह स्थान अपर्याप्त लगने लगा। नये स्थान की खोज होने लगी एवं १८डी सुकिसन लेन में १७ कट्ठा जमीन खरीद कर सभा के नये भवन का निर्माण कार्य उत्साह पूर्वक प्रारम्भ हो गया। १९३४ में स्थापित श्री जैन विद्यालय भी यहां स्थानान्तरित हो गया एवं सभा की सभी गतिविधियां भी यहीं से संचालित होने लग गई।

कार्यकर्ताओं में अपूर्व जोश था। सर्वश्री फूसराज जी सा० वच्छावत, श्री पारसमलजी कांकरिया, श्री सूरजमलजी बच्छावत के नेतृत्व में सभा का कार्य आगे वढ़ा और युवा कार्यकर्ता उससे जुड़ते चले गये। श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिखवचन्दजी भंसाली, श्री रिधकरणजी वोथरा आदि उत्साह पूर्वक गतिविधियों को आगे वढ़ाने लगे।

सभा का उद्देश्य प्रारम्भ से ही मानव सेवा का था एवं शिक्षा, साधना एवं सेवा को दृष्टिगत रखकर शिक्षा का विस्तार किया गया। सम्यक् ज्ञान, दर्शन एवं चरित्र की वृद्धि सभा का स्वप्न था। धीरे-धीरे मानवसेवा के अन्य प्रकल्पों पर भी कार्य होने लगा। हावड़ा में श्री जैन विद्यालय बालकों एवं बालिकाओं के लिए प्रारम्भ किया गया एवं १९९७ में भारत की आजादी के स्वर्णजयन्ती महोत्सव दिनांक १५ अगस्त १९४७ को श्री जैन हास्पिटल एंव रिसर्च सेन्टर हावड़ा में श्री हरखचन्दजी कांकरिया के अनुदान से आऊट डोर विभाग प्रारम्भ हो गया। मैं भी इस सभा का सन् १९८३ में मंत्री बना एवं कई वर्षो तक सक्रिय रहकर मैंने सभा की गतिविधियों को आगे बढ़ाने में सहयोग दिया।

श्री जैन बुक बैंक जो सभा की एक प्रमुख प्रवृति है, ने ग्रामीण अंचलों के निर्धन छात्र-छात्राओं को पाठयक्रम की पुस्तकें निशुल्क प्रदान करने का प्रतिवर्ष जो क्रम प्रारम्भ किया, वह आज १५०० छात्र छात्राओं तक पहुंच गया है, नि:शुल्क नैत्र शल्य चिकित्सा शिविर, पोलियो कैम्प तथा विकलांगों के लिए आर्टीफिशयल लिम्ब के नि:शुल्क शिविर प्रति वर्ष अनेक बार आयेजित किये जाते हैं। इस तरह सभा तन-मन-धन से सेवा प्रकल्पों को निरन्तर आगे बढ़ा रही है। यह इसके उत्साही, सजग, कर्मठ, सेवा भावी कार्यकर्ताओं के बल पर ही संभव हो रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी नित नयी योजनाओं को मूर्त रूप दे रही है। सभा के नवें दशक का भविष्य भी नितान्त उज्ज्वल है। सभी कार्यकर्ता लगनपूर्वक मेहनत से जुटे हुए हैं एवं इन्हीं के बल बूते पर पश्चिम बंगाल की यह एक महत्पूर्ण संस्था बन गई है। मैं इसके सफल भविष्य की कामना करता हूँ।

☆☆☆

भँवरलाल दस्साणी

श्री श्वे० स्था० जैन सभा अपेन संस्थापन काल से ही लोक कल्याणकारी कार्यो से जुड़ी हुई है। प्रतिवर्ष उनका विस्तार हो रहा है तथा सभा के कार्यकर्ता प्राणपण से इसमें लगे हुए हैं।

सभा की अनेक गतिविधियाँ एवं क्रिया कलाप जनोपयोगी एवं लोकोपकारी हैं। सभा सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय के उद्देश्य से जुड़कर शिक्षा, सेवा एवं साधना के क्षेत्र में जो कार्य कर रही है, वह अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है।

वुक वैंक, चिकित्सालय, कम्प्यूटर केन्द्र, सिलाई केन्द्र ने पश्चिमी वंगाल के ग्रामीण अंचलों को काफी लाभ पहुंचाया है, यह सर्व विदित है।

सभा की कई भावी योजनाएँ कामर्स कॉलेज, डेन्टल कॉलेज, प्रशिक्षण केन्द्र, नर्सेस ट्रेनिंग केन्द्र भी शीघ्र चालू होंगे एवं सवको लाभ मिलेगा। सभा दिन दुनी, रात चौगुनी उन्नति करे, यही भावना है।

☆☆☆

पारसमल भूरट

महानगर की प्रथम अग्रणी जैन संस्था

सन् १९२८ में संस्थापित श्री श्वेताम्वर स्थानकवासी जैन सभा कलकत्ता महानगर ही नहीं अपितु पश्चिम वंगाल की प्रथम अग्रणी जैन संस्थाओं में एक चिर परिचित तथा अत्यन्त लोक प्रिय नाम है। विगत आठ दशक से यह सभा मानव सेवा के शिक्षा, सेवा एंव साधना के नित नये प्रकल्पों एंवं आयामों से जुड़कर अनेक कीर्तिमान स्थापित कर रही है।

सभा के कर्मठ सेवाभावी, उत्साही, जागरूक एवं दूरदृष्टि सम्पन्न कार्यकर्ताओं ने सेवा की जो यह अखंड ज्योति प्रज्वलित की है, वह सतत सदैव जाज्वल्यमान रहेगी एवं एक आलोक स्तम्भ, आकाश दीप वनकर सेवा के इन आयामों को यह और आगे वढ़ायेगी एवं मार्ग दर्शक वनकर अन्यों को प्रेरणा देगी।

आठ दशक का यह महोत्सव सेवा की ऐसी मशाल जलायेगी जो शताब्दी महोत्सव तक देश-विदेश में ख्याति अर्जित करेगी एवं मानव मात्र के कल्याण के नये कीर्तिमान स्थापित करेगी, यही मेरा दृढ़ विश्वास एवं आशा आकांक्षा है। सभी कार्यकर्ताओं को मेरी हार्दिक वधाई एवं शुभकामनाएँ।

महेन्द्र कर्णावट
उपाध्यक्ष, श्री जैन विद्यालय, हावड़ा (वालिका विभाग)

लोक कल्याण की यह मशाल जलती रहे

श्री श्वेताम्वर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता से हमारा परिवार घनिष्ठ रूप से विगत अनेक वर्षो से सम्वद्ध है। विशेषत: मेरे पूज्य पिताजी स्व. भंवरलालजी कर्णावट सभा की प्रत्येक गतिविधि एवं क्रियाकलाप में सक्रिय रूप से भाग लेते थे एवं लोक कल्याणकारी कार्यो एवं मानव सेवा में उनकी विशेष रुचि थी।

सभा के नि:शुल्क शिविरों, वुक वैंक एवं अन्य जनोपयोगी कार्यों में वे सदैव अग्रणी रहकर कार्य करते थे। उनके इस सेवाभावी जीवन का हमारे परिवार के सदस्यों पर भी काफी प्रभाव पड़ा और हम भी सभा की प्रवृत्तियों से जुड़ गये। सभा जिस तरह लोकोपकारी एवं दीन, अनाथ एवं जरुरतमंदों की सहायता में लगी हुई है, यह सव कार्यकर्त्ताओं के कठोर परिश्रम, अथक अध्यवसाय एवं सेवाभावना का परिणाम एवं परिचायक है।

मैं अपनी अस्वस्थता के कारण वहुत सक्रिय रूप से भाग नहीं ले पा रहा हूँ। लेकिन लोक कल्याण एवं मानव सेवा की जो मशाल हमारे अग्रजों ने ज्वलित की है, वह सदैव जाज्वल्यमान एवं प्रदीप्त रहेगी, यह निर्विवाद एवं असंदिग्ध है।

सभा के सभी कार्यकर्त्ता मिलजुलकर एकात्म भाव से निष्ठा एवं परिश्रम पूर्वक कार्य करते हैं, ऐसी मिशाल अन्यत्र मिलना असंभव नहीं तो दुष्कर अवश्य है।

यह सभा अमृत महोत्सव से आगे वढ़कर निर्विघ्न शताव्दी महोत्सव मनावे एवं लोक कल्याण तथा मानव सेवा का इसका परचम सदा लहराता रहे, यही शुभकामना है एवं प्रभु से प्रार्थना है।

☆☆☆
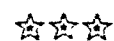
Kishan Lal Bothra
Ex-President, Shree Jain Vidyalaya, Kolkata

Our Sabha i.e. Shree S. S. Jain Sabha Kolkata is fully committed to substainable developments and has completed various educational and health care programmes keeping, not only local but the entire nation in mind mainting integrated management system under the expert guardianship of Shree Sardarmalji Kankaria & his Team. I wish all around success of the Sabha.

From The Desk of Ashok Minni

Having been established in the year 1928. SHREE SHWETAMBER STHANAKVASHI JAIN SABHA, Calcutta is entering sucesssfully in its ninth decade. The Organization is following the foot step of "SAMYAK GYAN, SAMAYK DARSHAN, SAMYAK CHARITRA" the icons led by Lord Mahaveera. The sapling planted decades back has taken up a large shape now. the Sabha marching ahead in the right directions and striving to sight a golden tomorrow.

In augmentation of education scenario, Shree Jain Vidayalaya, Calcutta, Shree Jain Vidyalaya (Boys & Girls) Howrah, Shree Harakhand Kankaria Jain Vidyalaya, Jagatdal is providing educaiton (10+2) to nearly 8000 students on a reasonable and affordable school fees. Modern education with the help of computer are also functioning in remote villages and urban towns of West Bengal. Taking into the consideration of perennial demand of the Public, a huge plot has been acquired within the vicinity of Cossipore situated on the bank of river GANGES for development of Campus for Technical education. Shree Harakhcnad Kankaria Degree College is dedicated since 2006. In the next phase of planning a Dental College (Courtesy Shree Sunderlal Dugar Charitable Trust), College of Education (Courtesy Shree Sohanlal Kamala Devi Singhivi) and a Nurses Training College (Courtesy - Shree Pannalala Hiralal Kochar) on the same premises are coming up shortly.

Distribution of Free Books among needy and financially challenged about 1500 students is organized every year by JAIN BOOK BANK a subsidiary of Sabha. Indira Gandhi National Open University (IGNOU) is offering education in every directions to the students under employment for their bright prospects and carrier.

To mark the celebration of Golden Jubilee Anniversary of the Independence of Country, a state-of-the-art Hospital within the heart of HOWRAH with 220 Beds was dedicated to the citizens of Calcuttan, Howrah and suburbs for Lower and Middle class patients suffering from vavious chronicle and critical illness. The Hospital has a team of professional Management, talented staff, expert Doctors and Surgeons, trained Nurses, neat and clean Wards, calm and peaceful serene around the premises is available for treatment and surgery of A to Z illness. Camps for Blood Donation, Plastic Surgery, Free Distribution of artificial Limbs are organized every year. Open Heart Surgery and Dialysis are done on reasonable and affordable prices.

In nut shell, It becomes our moral duty to offer optimum time and precious suggestions to the Managemnet of SABHA that will strengthen the foundation more concrete.

☆☆☆

सुरेन्द्र सुराणा 'सूरु'

हकीकत

जव भी हकीकत खुलती है किसी की·
दिल में एक अनजाना सा डर होता है,
गिरती है जव आसमां से विजलियाँ
न जाने क्यूँ वह मेरा ही घर होता है
तमाम मुश्किलें हो जाती है आसां
साथ में जव कोई हमसफर होता है
शिखरों की ऊँचाईयों पर से जमी पर
फिसल जाने का भी डर होता है
यातनाओं के डर से क्यूं भाग रहे हो,
इस तरह भी कहीं गुजर होता है?
झूठ कहने से कतराते हो क्यूं,
सच कहने से भी कहीं गुजर होता है?
मत झिझोड़ो चेतना के तार तुम
देह की सव आस अव पथरा चुकी है,
देखकर मक्कारी, फरेव झूठ दुनिया के,
जाने की सव आशाएँ जा चुकी है
वक्त के जखम कभी भर न पाये,
धौंकनी-सांसों की अव थम चुकी है,
कव तक ये साँसें देंगी साथ भला
मृत्यु की अवधि अव समीप आ चुकी है,
तन्हाई में हमें अकेला छोड़ दो
अव जीवन-ज्योति वुझाई जा चुकी है।

Arun Kumar Tiwari
Principal - Shree Jain Vidyalaya, Kolkata

Decades old Association with Shree Jain Vidyalaya & S. S. Jain Sabha

I Sincerely imagine and think of myself apart from Shree Jain Vidayalaya and S. S. Jain Sabha. I feel that these two above mentioned premiere institutions are inseparable from me and I am compelled to feel and think so as I have the peculiar and proud distinction of both being a student of this school and at present heading Shree Jain Vidyalaya, Kolkata. It is, no doubt, a great feeling to feel the heat both from inside and outside the fence. As a student, I was fortunate to be blessed and taught properly by the teachers. At that time also, I felt that there was large liberal helping hand behind the running and development of the school and that "hand" was Shree S.S. Jain Sabha which always helped and encouraged the students. Sabha and its selfless services left an indeliable impact on my innocent mind. Sabha's active and alert officials were very positive in their approach towards the development of the school. The Journey from being a taught to a teacher of the same institution has a remarkable place in my heart. As a teacher also, I came closer to the activities of the sabha and it has been an extra ordinary experience for me. Despite being very busy in their pursuits, the members and office bearers of the sabha, never hesitate in contributing their parts for the welfare of the underprivileged dwellers of the society.

The glorious and proudest moment of my life arrived when Shree S. S. Jain Sabha bestowed upon me the responsibility of being the Principal of Shree Jain Vidyalaya, Kolkata. So much water has flowed in the Hoohgly and tremendous changes have taken place during the last few decades but if something has not changed that is the ever widening thought and action of Shree S. S. Jain Sabha, Personally I feel that I have the greater responsibility to keep up the reputation of Shre Jain Vidyalaya and it is my dream not only to maintain the School's high profile glory but also to take it to the zenith in the educational arena. For This I am more than hundred percent sure that S. S. Jain Sabha will provide me full fledged support.

Shree S. S. Jain Sabha has completed eighty years of service and benevolence. It has always followed the dictum "Service to mankind is the best and truest religion". The sabha has added many feathers in the forms of several schools, colleges, hospitals, book banks, charitable organizations to its crown. It is still performing several generous deeds in the different fields and I hope it will continue to do so in the future also. A few words of congratulations and tributes are just triffle in comparison to the deeds of the sabha. At this moment, I am reminded of these words :

*"Let us then be up and doing
With a heart for any fate
Still achieving still pursuing
Heart within and God o' erhead".*

☆☆☆

चांदमल अभाणी
संयोजक : धर्म सभा

सेवा कार्य में अग्रणी

विगत ८० वर्षों से श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता जन कल्याणकारी, पीड़ित असहाय एवं निराश्रित व्यक्तियों की तन-मन-धन से सेवा में लगी हुई, यह बेमिसाल है। अग्रजों द्वारा स्थापित यह संस्था कार्यकर्त्ताओं, पदाधिकारियों एवं कर्णधारों के कठोर परिश्रम, सामंजस्य, एकजुटता और सहनशीलता के बल पर जन-जन में लोकप्रिय है। पश्चिम बंगाल के ग्रामीण अंचलों में शिक्षा, सहायता का जो परचम लहराया है, वह बेजोड़ है। सभा की बुक बैंक जैसी प्रवृत्ति ने शिक्षा के प्रचार-प्रसार का बीड़ा ही अपने कंधों पर उठा रखा है। बेरोजगारों को रोजगार प्रदान करने में भी यह सभा किसी से पीछे नहीं है।

अकाल, बाढ़, भूकम्प आदि प्राकृतिक आपदाओं में भी सभा के कार्यकर्त्ता उदारतापूर्वक सहयोग करने में सदा अग्रणी रहे हैं। नेत्र शल्य चिकित्सा, विकलांग सहायता एवं प्लास्टिक सर्जरी शिविरों के माध्यम से नि:शुल्क सेवा प्रतिवर्ष अनेक बार कर मानव सेवा के अनेक कीर्तिमान इस संस्था ने बनाये हैं।

पश्चिम बंगाल के ग्रामीण अंचलों के जरुरतमंद विद्यालयों में शौचालय निर्माण, छत्ते के पंखे, कम्प्यूटर केन्द्र, लाइब्रेरी एवं साइन्स लेबोरेटरी में सहयोग सभा द्वारा प्रतिवर्ष किया जाता है। निस्सन्देह ये समस्त सेवा कार्य उदार दानदाताओं के सहयोग से किये जाते हैं।

बच्चों में धार्मिक संस्कारों को बढ़ावा देने के लिए भी सभा निरन्तर प्रयासरत है। धर्म सभा के माध्यम से जो प्रत्येक माह के अंतिम रविवार को सभागार में आयोजित होती है, धर्म के प्रति सभासदों एवं मानव सेवी प्रकल्पों के माध्यम से तन-मन-धन एवं दानदाताओं के उदार सहयोग से सामाजिक, शैक्षणिक एवं धार्मिक क्षेत्र में निस्पृह, निष्काम सेवा भाव द्वारा अहर्निश तल्लीन है।

सभा के अनेक भावी योजनाओं को क्रियान्वित करने हेतु सभा के पदाधिकारी, कर्णधार एवं कार्यकर्त्ता सन्नद्ध हैं। सभा अपने परिश्रम से कई मील के पत्थर बनाने में सफल रहे, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

☆☆☆

अशोक बोथरा
सहमंत्री- श्री श्वे० स्था० जैन सभा

सभा के नित नये बढ़ते चरण

विगत आठ दशक से श्री श्वे० स्था० जैन सभा, कोलकाता के शिक्षा-सेवा-साधना के जिन मानव सेवी प्रकल्पों, गतिविधियों एवं क्रिया-कलापों का जो विस्तार हुआ वह कर्मठ समाजसेवी, अथक अध्यवसायी, उदार, सक्रिय कार्यकर्ताओं, पदाधिकारियों एवं कर्णधारों की आशा-आकांक्षाओं एवं गहरे विश्वास तथा समवेत रूप से कार्य करने का सुपरिणाम एवं सुफल है। ये सभी कार्यकर्ता हमारी नयी पीढ़ी के लिए प्रणम्य, पूज्य और वन्दनीय हैं तो है ही अपितु अनुकरणीय, प्रशंसनीय तथा वरेण्य भी हैं।

हमारी नई पीढ़ी जिसके कंधों पर इस मानव सेवी सभा का उत्तरदायित्व आनेवाला है, इन्हीं अग्रणी कार्यकर्ताओं एवं पदाधिकारियों की देखरेख में प्रशिक्षण ले रही है और मुझे दृढ़ विश्वास है कि संकल्प की धनी, दूर दृष्टि सम्पन्न यह नई पीढ़ी अपनी मेहनत, सूझ-बूझ, दूरदर्शिता, सद्भावना एवं प्रेम पूर्ण व्यवहार से सबके मन को जीतकर निरन्तर इन मानव सेवी प्रकल्पों को नये क्षितिजों, आयामों तक विस्तार देगी।

ये आविष्कार, ये प्रगतियां कर्मवीरों, कर्मयोगियों की कठिन मेहनत का फल है। उन्होंने जो स्वप्न देखे थे उनको पूरा करने के लिए अपने प्राणों तक का विसर्जन कर दिया। फल की आशा किये बिना सतत कर्म करते रहना, क्रियाशील रहना प्रगति का सूचक है। हमारे पूर्व राष्ट्रपति मिसाइल मेन डा० अब्दुल कलाम नई पीढ़ी को सदा यही प्रेरणा देते हैं कि सपने देखो और इनको पूरा करने के लिए सर्वतोभावेन जुट जाओ। स्वयं ने सपने देखे और अपने अथक परिश्रम से वे उस मुकाम तक पहुँचने मे सफल हुए। एकलव्य ने द्रोणाचार्य की मिट्टी की मूर्ति के सामने धनुर्विद्या का अभ्यास किया एवं पारंगत हो गया तथा अर्जुन को भी पीछे छोड़ दिया। उसका स्वप्न था महान धनुर्धर बनने का एवं परिश्रम और लगन ने उसे उस मुकाम तक पहुँचा दिया जो अुर्जन के लिए भी संभव नहीं हो सका था।

हमारी नई पीढ़ी में दमखम है और अपने बुजुर्गों के आशीर्वाद से वह इस सभा को, उसके क्रिया कलापों को, सेवा भावी मानव प्रकल्पों को उस मुकाम तक अवश्य पहुँचाने में सक्षम होगी जिसकी कल्पना हमारे कर्णधार करते हैं।

करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान, की कहावत हमें चरितार्थ करनी है। आठवें दशक से शताब्दी की यात्रा मंगलमय एवं सफल हो, इसी शुभकामना एवं प्रार्थना के साथ।

मोहनलाल भंसाली
पूर्व अध्यक्ष- श्री जैन विद्यालय, कलकत्ता

अमृत महोत्सव

श्री जैन श्वेताम्वर स्थानकवासी जैन सभा, कलकत्ता के स्थानकवासी जैन समाज वालों के लिए सभा के स्थापनकाल से ही शिक्षा, सेवा एवं साधना जैसे कल्याणकारी कार्यों के लिए वरदान स्वरूप रही है। इस सभा की स्थापना प्राय: अस्सी वर्षो पूर्व कलकत्ता जैन समाज के चन्द गणमान्य लोगों द्वारा हुई थी। आज यह संस्था दिन प्रतिदिन प्रगति करती हुई शिक्षा एवं सामाजिक कार्यो में असाधारण रूप से कार्य सम्पन्न कर रही है। सभा की सेवा-साधना कार्यो से कलकत्ता के जैन समाज के साथ-साथ अन्य समाज भी अनेक रूप से लाभान्वित हो रहे हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में इस सभा के अन्तर्गत शुरु में जैन विद्यालय की स्थापना एक किराये के मकान में सीमित छात्रों एवं शिक्षकों द्वारा प्रारम्भ हुई थी। आज वही जैन विद्यालय अपने निजी विशाल भवन में बट वृक्ष की तरह हजारों एवं कुशल शिक्षक समूह की कार्य कुशलता से सुचारू रूप से चल रहा है। इस विद्यालय के छात्रों की शिक्षा का परिणाम हर साल पश्चिम वंगाल की अन्य शिक्षालयों की तुलना में काफी उच्च रहा है। यह सभा के लिए एक गर्व का विषय है।

सभा द्वारा संचालित अन्य शिक्षा संस्थाओं की स्थापना भी समय-समय पर हो रही है जिनमें निम्नलिखित संस्थायें शामिल हैं।

(१) जैन विद्यालय, हावड़ा छात्र एवं छात्राओं का पृथक-पृथक (२) श्री हरखचन्द कांकरिया जैन विद्यालय, जगतदल (३) काशीपुर में एक विशाल भूखण्ड में तकनीकी शिक्षा श्री हरखचन्द तारादेवी कांकरिया स्नातकीय कॉलेज सन् २००६ में शुरु हो गई। इसके अलावा प० वंगाल में कई जगहों पर कम्प्यूटर केन्द्र स्थापित कर आधुनिक शिक्षा दी जा रही है।

इस सभा के माध्यम से प्रतिवर्ष माध्यमिक से स्नातकोतर तक के अर्थाभाव से पीड़ित असमर्थ छात्रों को पाठ्यक्रम की पुस्तकों का नि:शुल्क वितरण किया जाता है। जैन बुक वैंक के सहारे छात्र छात्राओं को अध्ययन हेतु प्रेरित एवं प्रोत्साहित किया जाता है।

आजादी के स्वर्ण जयन्ती वर्ष सन् १९९७ में शिवपुर हावड़ा में विमारियों से ग्रस्त रोगियों की सेवा हेतु सर्व सुविधा सम्पन्न एवं आधुनिक यन्त्रों से सुसज्जित जैन हास्पिटल एवं रिसर्च सेन्टर की स्थापना सभा के गण्य मान्य सदस्यों के सहयोग से की गई। जहां हर प्रकार के रोगों का निदान अल्प खर्च से उपलब्ध कराया जाता है। इस प्रांगण में समय-समय पर नि:शुल्क नेत्र शल्यचिकित्सा शिविर का आयोजन एवं विकलांगों तथा पोलियो ग्रस्त रोगियों के इलाज के लिए भी शिविरों का आयोजन किया जाता है। चिकित्सा क्षेत्र में इस सभा का अप्रतिम आदर्श रहा है।

आठ दशकीय लोक कल्याणकारी कार्यो का श्रेय सभा के कर्मठ उदारमना एवं परोपकारी कार्यकर्त्ताओं के अथक प्रयासों एवं सहयोग का परिणाम है।

☆☆☆

चन्द्रप्रकाश डागा

आभार

अत्यत हर्ष का विषय है कि हमारी सभा अपने ८० वर्ष पूर्ण कर रही है। हमारी सभा के संस्थापकों ने इस सभा की नींव ऐसी शुभ घड़ी में रखी कि आज यह विशाल रूप से हम सबके सामने है। सभा द्वारा संचालित तीन विद्यालयों, एक कॉलेज और सेवा के क्षेत्र में अस्पताल वहुत ही अच्छी तरह कार्य कर रहे हैं। हमारे विद्यालय से पढ़कर कई विद्यार्थी वहुत प्रतिभावान वन चुके हैं और अभी भी सभी विद्यालयों का रिजल्ट श्रेष्ठ रहता है इसमें हमारे अध्यापकों का भी अच्छा योगदान है। अस्पताल में भी साधारण परिवार के रोगियों के लिए कम खर्च में उचित इलाज की व्यवस्था है। Dylysis Dept भी वहुत ही सफलता व ख्याति प्राप्त कर चुका है। यहां उचित दर पर वहुत ही वढ़िया तरीके से Dylysis किया जाता है। मशीनें सारी आधुनिक हैं। इस सभा की सवसे वड़ी विशेषता यह है कि यहां कम कार्यकर्ता हैं और ये सभी कार्यकर्ता मिलकर वड़े से वड़ा कार्य करने में सक्षम है।

पानमल मालू

श्री श्वेतामबर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता स्थानीय जैन समाज के विभिन्न समुदायों में से एक धार्मिक, शैक्षणिक, सामाजिक और स्वास्थ्य सम्बन्धी अपने दायित्वों का पूर्ण निष्ठा व लगन से निर्वहन कर रही है।

समाज के बुजर्गो द्वारा शिक्षा के उपवन में जो पौधा वर्षों पूर्व रोपा गया वह आज के शिक्षा प्रेमी अधिकारियों, कार्यकर्ताओं द्वारा सिंचित होकर सुखद छाया के साथ शीतल समीर एवं सुमधुर फल भी प्रदान करने लगा है।

कोलकाता में शिक्षा के क्षेत्र में श्री जैन विद्यालय कोलकाता, हावड़ा व श्री जैन कॉलेज अपने नाम से जानें जाते हैं। इनकी अपनी एक विशिष्ट पहचान है। स्थानकवासी जैन सभा ने न सिर्फ इन शिक्षण संस्थानों का निर्माण करवाया अपितु इनके सफल संचालन के दायित्व का भी निर्वहन किया है। विद्यालय में शिक्षारत विद्यार्थियों के प्रति शिक्षकों के वात्सल्य पूर्ण व जिम्मेदाराना दायित्व का ही नतीजा है कि बोर्ड की सेकेण्डरी व हायर सेकेण्डरी परीक्षा के परिणामों में शत-प्रतिशत सफलता।

सभा द्वारा संयोजित बुक बैंक से इन स्कूलों के अलावा पश्चिम बंगाल के स्कूलों में अध्ययनरत जरुरतमन्द छात्रों को प्रति वर्ष नि:शुल्क पाठ्य पुस्तकें व कापियां उपलवध करवाई जाती हैं। श्री जैन विद्यालय कोलकाता और हावड़ा में अध्ययनरत आर्थिक रूप से कमजोर विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है उच्च शिक्षा प्राप्ति के इच्छुक विद्यार्थियों की जरुरतों के अनुसार।

सभा सामाजिक दायित्वों के निर्वहन करने के लि आर्थिक रूप से कमजोर महिलाओं, विधवाओं को आत्मनिभ बनाने के लिए समय-समय पर कैम्पों का आयोजन कर सिला मशीनें उपलब्ध करवाने के अलावा आर्थिक लाभ प्रदान करवा हेतु विभिन्न जीवनोपयोगी कार्यक्रम भी आयोजित करती है।

नव-वर्ष के शुभागमन पर प्रतिवर्ष सभा द्वारा प्रायोजि स्नेह मिलन समाज के सभी वर्गों, सभी समुदायों के लोगों आपसी सौहार्द, स्नेह और संगठन को बनाये रखने हेतु अत्यन प्रशंसनीय कार्यक्रम है।

समय-समय पर समाज के समर्पित भाव से कार्य कर वाले प्रबुद्ध कार्यकर्ताओं का अभिनन्दन करना, सम्मान प्रदा करना भी सभा का सराहनीय कार्यक्रम है।

चिकित्सा के क्षेत्र में सभा द्वारा संचालित जैन हास्टिपत आधुनिक साज सज्जा व अत्याधुनिक उपकरणों से सुसज्जि विशाल भवन से हावड़ा व आसपास के क्षेत्रों में रहने वालों क आवश्यकता के अनुसार अपनी सेवायें प्रदान कर रहा है। यह पर सभी तरह की चिकित्सा की व्यवस्था है।

समय-समय पर कैम्प आयोजित कर मोतिया बिन्द वे ऑपरेशन, विकलांग व्यक्तियों को अंगदान जयपुरी पांव व अन्य उपकरण यथा वैसाखी, साइकल इत्यादि की व्यवस्था भ सभा नि:शुल्क व अति सुविधा जनक शुल्क पर करती है। जै हास्टिपल के डायलिसिस विभाग का कार्य भी अति प्रशंसनी है। समाज के कमजोर (आर्थिक रूप से) व्यक्तियों क चिकित्सा के दौरान छूट का लाभ भी सभा प्रदान करती है।

इस सभा के अन्तर्गत इतने सारे कार्यक्रमों के संचालन म श्री सरदारमलजी साहब कांकारिया की अगुवाई में सभा वे अधिकारीगण, कार्य समिति के सदस्य वृन्द, विभिन्न विभागों उप समितियों के संयोजक व सदस्य गण समाज व अन्य समाजों के सज्जनों के सहयोग से हो रहा है, यह अभिनन्दनीय है, प्रशंसनीय है, अनुकरणीय है।

मैं काफी समय से सभा द्वारा संचालित शैक्षणिक व चिकित्सकीय गतिविधियों से जुड़ा हुआ हूँ इन कार्यक्रमों वे संचालन में, क्रियान्वयन के दौरान सभा के वरिष्ठ अधिकार गणों, कार्य समिति के सदस्यों व अन्य सहयोगी वन्धु वान्धावे का जो स्नेह सहयोग मिलता है तदर्थ आभार। यह प्रेरणादायक है, अवर्णनीय है इन्हीं भावनाओं के साथ।

☆☆☆

पुखराज बोथरा
राष्ट्रीय अध्यक्ष, श्री अ०भा० साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

शुभकामनायें

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता अपने स्वर्णिम आठ दशकों की महायात्रा को सफलतापूर्वक सम्पन्न कर शीघ्र ही नवम् दशक में प्रवेश करने जा रही है। यह विशाल यात्रा किसी भी संस्था के लिए एक गौरवमयी उपलब्धि है। इस उपलक्ष्य में हमारे संघ के वरिष्ठ संरक्षक सेवा समर्पित आदरणीय श्री सरदारमलजी कांकरिया के कुशल संयोजकत्व में अमृत महोत्सव का आयोजन किया जा रहा है जो कि बड़े ही हर्ष का विषय है।

शिक्षा, सेवा एवं साधना को समर्पित यह संस्था वास्तव में अपने आप में एक आदर्श रूप है। जैन धर्म के सिद्धान्तों को आत्मसात् करते हुए इस संस्था ने जो प्रगति की है वह गौरवपूर्ण है। कुशल संगठन, उचित प्रबन्ध एवं दूरदर्शितापूर्ण निर्णयों से इस संस्था ने जो मुकाम हासिल किया है वह हर एक संस्था के लिये मात्र एक स्वप्न है। वास्तव में इसके कार्यकर्त्ताओं ने साथ मिलकर जो कार्य किया है उसी का यह प्रतिफल है कि आज यह संस्था अपने गौरवपूर्ण अतीत एवं स्वर्णिम वर्तमान को संजोये हुए हैं।

परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर १००८ श्री रामलालजी म०सा० द्वारा उच्चारित ये पंक्तियाँ –

व्यक्ति अकेला निर्बल होता, संघ सबल होता मानें।
संघे शक्ति कलोयुगे: की, सत्य भावना पहचानें।।

वास्तव में इस संगठन में देखने को मिलती है। इस संस्था में जहाँ सम्यक्दर्शन एवं सम्यकचारित्र को पूर्ण महत्व दिया गया है, वही समाजसेवा, मानवसेवा और स्वधर्मी वात्सल्य को भी पूर्ण स्थान देते हुए यह संस्थान स्थान-स्थान पर विद्यालयों का निर्माण, कम्प्यूटर शिक्षा, चिकित्सालय निर्माण, रोग निदान शिविरों का आयोजन, धार्मिक शिविरों के संचालन सहित अनेक परोपकारी कार्यों में समय के शिलालेख पर अपने सशक्त हस्ताक्षर कर रही हैं।

आज के युग में मनुष्य जहाँ भौतिकता की चकाचौंध में अपने उच्च नैतिकता परक मूल्यों को खोता जा रहा है एवं सद्संस्कारों का निरन्तर ह्रास होता जा रहा है, वहीं यह संस्था अंधियारे में उजियारा बनकर ज्ञान की ज्योति फैलाने का कार्य कर रही है। संस्था के इस अमृत महोत्सव के मंगल आयोजन के अवसर पर मेरी ओर से आर्दिक शुभकामनाएँ।

❀❀❀
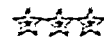
धनराज बेताला

विकासोन्मुख श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता

इस संस्था की स्थापना सन् १९२८ में श्वेताम्बर स्थानकवासी जैनों के अग्रणी महानुभावों द्वारा सामाजिक गतिविधियों के संचालन हेतु की। तब से यह संस्था अनवरत विकासोन्मुख है। समाज सेवा व शिक्षा के क्षेत्र में इस संस्था द्वारा सम्पादित कार्यों की विशेष प्रतिष्ठा है।

महानगरी कोलकाता में जैन समाज द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में प्रदत्त योगदान ने राजस्थान से आए व्यापारी बन्धुओं को पहचान प्रदान की व बंगाल की जनता के साथ सामंजस्य स्थापित किया। इस संस्था ने अपनी स्थापना के पश्चात् कभी विराम नहीं लिया बल्कि प्रतिवर्ष कुछ न कुछ सेवा के आयाम बढ़ाते गये। शिक्षा के क्षेत्र में विशेष स्तर इस संस्था ने बनाये रखा। यही कारण है कि इस संस्था से शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों की विशेष प्रतिष्ठा है। शिक्षा में कीर्तिमान से संस्था विकसित हुई– इसके साथ श्री जैन विद्यालय हावड़ा, श्री हरखचंद कांकरिया जगतदल, सुदूरवर्ती कई गाँवों में कम्प्यूटर केन्द्र स्थापित कर शिक्षा के क्षेत्र में प्रसिद्धि प्राप्त की। साथ ही अभी-अभी हरखचन्द तारादेवी स्नातकीय कॉलेज प्रारंभ हो गया है।

इसी संस्था ने विशेष रूप से सेवा समर्पित श्रीमान् सरदारमलजी सा कांकरिया व उनके सहयोगियों के प्रयत्नों व प्रेरणा से स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में श्री सुन्दरलाल दूगड़ चैरिटेबल ट्रस्ट की ओर से डेंटल कॉलेज, श्री सोहनलालजी कमलादेवी सिंघवी कॉलेज ऑफ एज्युकेशन व अन्याय संस्थाओं के कार्य प्रस्तावित हैं।

इसी संस्था के प्रयत्नों से श्री जैन हास्पिटल एवं रिसर्च सेन्टर हावड़ा स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में सर्वोत्तम है। इस संस्था के कारण ही चिकित्सीय क्षेत्र में चिकित्सा सुविधा कम से कम व्यय में हो पायी है।

ऐसी जैन संस्था ने अपने कार्य कलापों से सम्पूर्ण जैन समाज को गौरवान्वित किया है। आप स्मारिका प्रकाशित कर रहे हैं एतदर्थ हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ स्वीकारें।

नोखा, जिला-बीकानेर

जिनेन्द्रकुमार जैन
सम्पादक, दैनिक यंगलीडर/जिनेन्दु

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा : एक बहुआयामी संस्था

श्री श्वेताम्बर स्थानकासी जैन सभा अपने आप में एक बहुआयामी और आदर्श संस्था/संगठन है। शिक्षा और सेवा के अनेक जनोपयोगी महत्वपूर्ण कार्यो के सफल संचालन के कारण न केवल जैन समाज के लिए ही, अपितु समस्त कोलकाता महानगर के लिए प्रेरणाजनक है।

यद्यपि कहने के लिए स्थानकवासी सभा एक सम्प्रदाय विशेष की संस्था है, लेकिन पदाधिकारियों के व्यापक दृष्टिकोण के कारण हर कार्यक्रम राष्ट्रीय आवश्यकतों को सामने रख कर निर्धारित किया जाता है। यही नहीं कार्यक्रम सिर्फ बनाये ही नहीं जाते, उन्हें हर कार्यकर्त्ता सम्पूर्ण विवेक और उत्साह के साथ सफल बनाने हेतु जुट जाता है। परिणाम स्वरूप सम्प्रदाय विशेष की यह संस्था कोलकाता महानगर की 'आधार' बन गई है। सेवा, सहयोग और संस्कार जैन धर्म के प्रमुक आधार हैं। जैन धर्म तप-त्याग को विशेष महत्व देता है। इस कारण सभा का हर कार्यकर्त्ता चारित्र के गुणों का हर क्षण ध्यान रखता है।

स्थानकवासी जैन सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों को जानने/समझने और उपयोग करने का मुझे अवसर प्राप्त हुआ है। 'जिनेन्दु' का प्रथम प्रकाशन सन् १९५३ में कोलकाता से ही शुरू हुआ था। उस समय श्री जैन विद्यालय एक छोटा-सा पौधा था, जो आज वटवृक्ष बन गया है। अब तो इसकी हावड़ा में भी सहोदर संस्थाएँ सफलता/कुशलतापूर्वक चल रही हैं। विद्यालय की शिक्षा सुविधाओं से सिर्फ जैन ही नहीं, बहुत बड़ी संख्या में जैनेत्तर छात्र भी लाभ उठा रहे हैं। सन् १९३४ से सन् २००८ का काल देखते ही देखते बीत गया। यद्यपि सभा के कई संस्थापक सदस्य आज हमारे समक्ष नहीं हैं और कई ऐसे मौजूद हैं, जो प्रौढ़ और वृद्ध हो गये हैं। अनेक युवा कार्यकर्त्ता भी सभा की गतिविधियों से जुड़े हैं, लेकिन ऐसा नहीं लगता कि कोई कार्यकर्त्ता वृद्ध होकर थक गया है। सभी कम आयु के अथवा अधिक आयु के सदस्य शक्ति और स्फूर्ति से ओतप्रोत हैं। कार्यकर्त्ताओं में ऐसा समन्वय और मैत्री भाव अन्यत्र देखने को नहीं मिलता।

पत्रकार होने के नाते सभा के पुराने चले आ रहे कार्यो की सफलता की जानकारियाँ और हाथ में लिये नये कार्यो के बारे में पता चलता रहता है और उन्हें जान कर गर्व होता है। तब दिल खोल कर सराहना करने की इच्छा होती है।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा छात्रों के लिए धर्म, समाज, राष्ट्र सेवा की फैक्ट्री जैसी है। कल के अनेक छात्र आज उच्च और उच्चोत्तर पद पर आसीन हैं। जब कभी इनसे मिलना होता है तो वे संस्था से प्राप्त अपनी शिक्षा का ऐसा बखान करते हैं, जैसे कि उन्होंने आस्ट्रेलिया से **एमबीए** किया था। मैं पहले भी निवेदन कर चुका हूँ कि सभा के कार्य बहुआयामो हैं। सभा का शिल्प शिक्षा केन्द्र, महिला उत्थान एवं विकास और धर्म प्रचार की विभिन्न प्रवृत्तियाँ सुचारु रूप से चल रही हैं। साथ ही सभा प्रसिद्ध लेखकों और ख्यातिप्राप्त विद्वानों का गरिमामय स्वागत सम्मान करना भी अपना कर्त्तव्य समझती है।

मुझे बहुत आश्चर्य हुआ जब सभा ने अपने हीरक जयन्ती महोत्सव पर **'जैन पत्रकार सम्मेलन'** का सफल आयोजन किया। दो दिनों में सम्पन्न हुई चार बैठकों में से एक की अध्यक्षता करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। सम्भवत: यह जैन पत्रकारों का वह प्रथम अधिवेशन था, जिसमें पूरे देश के लगभग पचास जाने-पहचाने पत्रकार सम्मिलित हुए थे। सभा ने पत्रकारों की देखभाल और स्वागत सत्कार में पलक पावड़े बिछा दिये। यद्यपि सम्मेलन पत्रकारों का था, परन्तु प्रत्येक बैठक में सभा के प्राय: समस्त कार्यकर्त्ता उपस्थित रहते थे। चौथे और अन्तिम बैठक में **अ.भा. पत्रकार संघ** की विधिवत स्थापना की गई और स्व. डॉ. नरेन्द्रजी भानावत उसके संयोजक मनोनीत किये गये। उस समय समाज रत्न गणपतराजजी बोहरा (पिपलियां कलां) भी पधारे हुए थे। उन्होंने पत्रकारों के दूसरे सम्मेलन के लिए रु. एक लाख का अनुदान देने का ऐलान किया। एक

पत्रकार होने के नाते सभा के सान्निध्य में बिताये दो दिन मेरे जीवन के अविस्मरणीय रहेंगे। यद्यपि आज हमारे बीच न भाई डॉ. नरेन्द्र भानावत मौजूद हैं और न ही पूज्य गणपतराजजी बोहरा भी। इतने लम्बे काल में सिर्फ एक बार सन् २००६ में **दिल्ली जैन महासभा** ने उसी प्रकार का **राष्ट्रीय पत्रकार सम्मेलन** बुलाया था। वैसे कहने को हर वर्ष एक-दो पत्रकार सम्मेलन होते हैं, लेकिन वे प्रायः दिगम्बर समाज द्वारा सिर्फ दिगम्बर जैन पत्रकारों के लिए ही बुलाये जाते हैं। इस कारण जैन समाज की सशक्त आवाज नहीं बन पाती है क्योंकि समाज की आवाज बनने के लिए समान जैन समाचार पत्रों और पत्रकारों का संगठन बनना आवश्यक है।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा और कोलकाता का स्थानकवासी जैन समाज के जीवंत कार्यों को देख कर स्थानकवासी युवकों की कार्यक्षमता पर गर्व होता है। साथ ही उन स्वर्गस्थ और वयोवृद्ध अग्रणी महानुभावों के प्रति भी श्रद्धा उमड़ पड़ती है, जिनके आदर्श और कर्मठ जीवन से इन्हें शक्ति और प्रेरणा प्राप्त हो रही है। मैं श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा के अमृत महोत्सव पर अपनी हार्दिक शुभेच्छाएँ प्रेषित करते हुए गर्व अनुभव कर रहा हूँ।

अहमदाबाद

☆☆☆

बनेचद मालू

शिक्षा, सेवा और साधना के आठ दशक

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा शिक्षा, सेवा एवं साधना के गौरवमय आठ दशक पूर्ण करने जा रही है तथा इस उपलक्ष में अन्य आयोजनों के अतिरिक्त एक सुन्दर पठनीय स्मारिका का प्रकाशन भी करने का निश्चय किया गया है, मैं अपने आपको धन्य मानता हूँ कि इस अवसर पर मुझे आपने याद किया एवं दो शब्द लिखने अथवा मेरी स्वरचित दो काव्य रचनाएं भेजने का अनुरोध किया।

इस गौरवमय संस्था के लिए जितना भी कहा जाए कम होगा। विगत लगभग तीन दशक से जबसे मेरा इस संस्था एवं इसके कर्मठ सेवा भावी कार्यकर्ताओं से सम्पर्क हुआ है, देख रहा हूँ शिक्षा एवं चिकित्सा जैसे आधारभूत एवं महत्वपूर्ण क्षेत्र में इसने प्रशंसनीय कीर्तिमान स्थापित किये हैं। ऐसा तभी संभव है, जब इसके कार्यकर्ता पूर्ण समर्पण एवं पूर्ण पारस्परिक सौहार्द भाव से एकजुट हो लगे हुए हों, आदरणीय एवं अनुकरणीय श्री सरदारमलजी कांकरिया के नेतृत्व में, देख रहे हैं कार्यकर्ताओं की पूरी टीम सेवा-भाव से सतत कार्यरत हैं।

ऐसे नि:स्वार्थ सेवाभवी कार्यकर्ताओं को नमन करता हुआ मैं श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा को उसके गौरव गरिमामय अष्ट दशक पूर्ति पर शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ एवं कामना करता हूँ कि इसके लगनशील कार्यकर्ताओं की टीम के सतत सद्प्रयासें से यह संस्था शिक्षा, चिकित्सा एवं अन्य सेवाओं के क्षेत्र में अपने कृतित्व से मानव सेवा में अग्रसर होती रहे।

K. P. Verma

Shree S. S. Jain Sabha : A model

Platinum Jubilee celebration in itself is great and glorifying. It is a flagrant point, arrived at in terms of time, for it contains all the strain and stress of years after years, and S. S. Jain Sabha is no exception.

Set up in 1928 to serve the community and the country at large, it has very well withstood the test of time. It has added several feathers to its cap. Its founder stalwarts gave its motto-"Shiksha, Seva, and Saddhana" and it has literally stood true to its motto shiksha (Education) had its first attention. It started a school with two students and one teacher. Now, it has ramified into five big institutions, imparting education from Primary to Degree classes. First it started with Shree Jain Vidyalaya, Calcutta. Over years this vidyalaya has turned into a centre of excellence. It has got a letter of credit from the council of H.S.Education, West Bengal with hundred percent pass, every year remarkably with 90% in the first Division.It began to attract students from different parts of the country to its H.S. Classes.

Now, it has a high school in a factry labour area, Jagatdal. Happily its students are also doing very well. It has two full fledged Boys and Girls H.S.Schools in Howrah in a five storeyed building with all the modern facilities of education. It has a very large computer centre with multi media facilities. Nearly 50 students practise at a time. Tara Devi Harakh Chand Kankaria Jain College is in Cossipore area. It has Science and Commerce Departments. It has a proposal to start MBA classes and in Science it is already teaching Micro-Biology. The plans, up its sleeves, are a Dental College, a Nursing training centre and also a training college for teachers. Buildings for these are under construction. Happily,it has bought the large property of Eveready Battery campus when it closed its business in Cassipore.

In sphera of Seva (Service) it has the Jain Hospital and Research Centre at Howrah. At its initial stage, there was a proposal to start a 120 bed clinic or hospital but soon large. Donations began to pour in response to an appeal for them. It ended its appeal letter we must remember that we are rich by what we give and poor by what we refuse and keep, otherwise, ·we will have to regret like the man in Tagore's Getanjali. He saw the king of kings coming in his golden chariot. His hopes raised high - his life's misery would end. The chariot stopped where the man was standing; the king of kings came down the chariot and in stead of giving the man any thing he stretched his hand before the beggar. Confused and miserly, the man took out a piece of corn and put it on the palm of the king of kings. He smiled and went off. At evening when the beggar empted his bag, he found a golden piece of corn in it. He cried why he had not the heart to give him his all.

This appeal had its effect soon the magestic Jain Hospital and Research Centre, in its four storyed building came up, equipped with the latest apparatuses, treating from ordinary fever, cough and cold to open heart surgery. Its open door department, named Harakh Chand Kankaria Hospital is a grand success. Everyday hundreds of patients of various diseases are attended to by competent doctors.

Besides, S.S.Jain Sabha organises free eye operation camps distributing spectacles free. It has a permanent department that makes artificial legs and is supplied free of cost to the lame and disabled ones. Every year a team of German Plastic surgeons visit the Jain Hospital and performs plastic surgery free.It has become very popular with the needy ones. In distant villages, Jain Sabha, some times' opens X-ray centre free or charging a nominal fee to avoid its abuse.

Jain Sabha has a great reputation for rendering service. It has built several latrines and urinals in schools where there were no such facilities for students. It has also distributed fans free. It donates its second hand computers and in those schools computer centres are set up. In several villages of Bengal it has also set up Primary schools and constructed their buildings.

But to cap it all, it has a system of distributing several thousand sets of text books free from Class-V to Degree sections of colleges. Activits of the Jain Sabha go round the state , and choose schools and colleges for distribution of sets of text books. Choice of deserving candidates lies with school authorities. It is held, every year in the month of July - under the motto - books for all. A few years ago, the General Manager of the Statesman, Mr.B.Ray was the Chief Guest of the celebration. He was moved to see a Class-VII girl

student crying, when she saw all the text books on her palm. I had never had entire books. My parents can not afford to buy even two. Then he said in his speech 'How foolish I feel that such a great thing was going on within two Kilometers of the Statesmen and I was quite unware of it one year a correspondent of the BBC graced the occasion. 'Books for all' slogan appealed to him so much that he kept on speaking nearly 15 minutes on the merit of the slogan. We have satisfied ourselves with education for all, but this is a noble idea 'Books for all' he said.

Thus, we find in every field of activity, S.S.Jain Sabha is doing something. The great thing about this Sabha is - there is no politics. The posts are offered to its active members with a great request to accept it. The sabha has not piled up money. They appeal for donations when there is a project at hand. They estimate the cost of implementing. Then, the members voluntarily go round and collect money.

Very few Sabhas can compare with it. It has taken a great humanitarian work. It has found several very poor and destitute families and supplies regularly free ration to them every week.

The Sabha is not satisfied with the educational facilities it has offered. It is running the Indira Gandhi open University classes with commendable credit. It has several students in its various faculties. This runs in evening at Howrah Jain Vidyalaya.

The Jain Sabha has got the name of its location (Sukeas Lane) changed into Phusraj Bachhawat Path after the name of its stalwart founder Shree Phusraj Bachhawat.

Many people keep asking "what is it that keeps Jain Sabha Kicking?" To answer this question. An election slogan may be quoted "My heart beats for India" we don't know howmany hearts in that party really beat for India, but we do know there are several hearts in Shree S.S.Jain do beat vigoroously for it.

It is a model for other sabhas of this nature. It can ably suggest how to run a society.

In the back ground of all these activities-one person is in the forefront. He outstands. He is sri Sardarmaljee Kankaria. He has become a legendary figure.

We wish this sabha grand success!

☆☆☆

पुखराज बैताला

आपणां सूँ आपणी बातां

जो बात अनुचित हो उस पर दृष्टि न डालो और जो कुछ अयोग्य हो उससे मन को सर्वथा दूर रखो। हालांकि मन की चंचलता एवं चपलता को सभी व्यक्ति और सभी धर्म एक स्वर से स्वीकार करते हैं परन्तु इस पर विजय प्राप्त करने का उपाय जैन आगमों में लिपिबद्ध है।

हम अपने मन पर विजय पा सकते हैं, इसके लिए हमें बार-बार अभ्यास करना है। मेरा आशय है कि किन्हीं भी परिस्थितियों में हमें स्वयं को विवेकवान बनाए रखना है, मन के विचारों को विचलित नहीं होने देना है, समाज के अनुशासित सिपाही बनकर समाज के प्रति अपने दायित्त्वों का निर्वहन करना है।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता के छत्र तले हम बढ़ रहे हैं, इस सभा की देशनाओं में जीवन को सारभूत ही नहीं अपितु आधार भूत विवेचनाओं का समागम हमें प्राप्त है। उन पर श्रद्धावनत होकर हमें बढ़ना है। वास्तव में श्रद्धा जीवन की रीढ़ है। जैसे बिना रीढ़ मनुष्य गतिमान नहीं हो पाता, ठीक उसी प्रकार श्रद्धा के अभाव में मनुष्य में मनुष्यता का सृजन नहीं हो पाता, मार्गबाधित हो जाता है, हम आत्मविश्वास मन में लेकर श्रद्धा के धरातल पर दृढ़ता पूर्वक चालित हैं और यही कारण है कि हम अपने संघ व समाज के समन्वय के प्रयासों में भली भाँति अग्रसर हैं। ''हृदय में श्रद्धा हो, विनय हो, विश्वास हो तो सम्मान की प्राचीर से हम समाज को आच्छादन प्रदान कर पाने में भली-भाँति सफल रहेंगे।''

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता के ८१वें वर्ष में प्रवेश पर हम अपनी सामर्थ्य अनुसार तन-मन-धन से सहयोग देंगे। हमें साकार करना है उन विलक्षणताओं को जिनसे समाजहित फलीभूत हो और समाज की प्रगति का ग्राफ सदा सर्वथा उन्नति की ओर अग्रसर रहे।

अपनी धर्म साधनाओं के माध्यम से समत्व में, पारस्परिकता में, मैत्रित्व के परिवेश में सामाजिकता के यथेष्ट सकारात्मक वातावरण में हम स्थिर रहें।

अत: अंत में पुन: एक बार फिर श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता के ८० वर्ष पूर्ण होने व ८१वें वर्ष में प्रवेश पर हार्दिक शुभ मंगल कामनाएँ।

चम्पालाल डागा

एक प्राणवान-ऊर्जावान संस्था श्री जैन सभा

यह जानकर अपार हर्ष हुआ कि श्री श्वेताम्बर स्था० जैन सभा कोलकाता अपनी स्थापना के आठ दशक पूर्ण कर शिक्षा, सेवा और साधना के नित्य नवीन आयामों को स्थापित करते हुए तथा नवीन प्रतिमानों के साथ उत्कर्ष की अपनी यात्रा के आगामी शतकीय पड़ाव की ओर अग्रसर हो रही है।

श्री एस० एस० जैन सभा ने अपनी स्थापना के बाद ग्रहण किये गये प्रत्येक दायित्व को एक पावन कर्तव्य के रूप में पूर्ण करके अपनी अप्रतिम संकल्प शक्ति का परिचय दिया है। सामाजिक जीवन के सहज समभाव्य उत्कर्ष अपकर्ष की सुदीर्घ जीवन-यात्रा में संस्था ने वामन से विराट की अपनी यात्रा अंगद पांवों से सम्पन्न की है। समाज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में संस्था ने अपनी उच्च गुणवत्ता की अमिट छाप छोड़ी है। सामाजिक उत्सवों, धार्मिक समारोहों एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए कोलकाता महानगर में इस संस्था ने विशिष्ट कीर्तिमान स्थापित किये हैं। यह संस्था सच्चे अर्थों में कोलकाता महानगर और विशेषकर जैन समाज की धड़कन है।

विद्वत गोष्ठियों के आयोजन जाति, धर्म, पंथ से परे रहकर गुणीजनों का सम्मान और मानव मात्र सेवा में समर्पित इस संस्था ने देशभर के कार्यकर्त्ताओं को कार्य की उन्नत प्रेरणा प्रदान की है। स्वयं मुझे भी एक छोटा-सा कार्यकर्त्ता होते हुए इस महनीय संस्था द्वारा सम्मनित होने का अवसर प्राप्त हुआ है।

एक श्रेष्ठ संगठन किस प्रकार उच्च आदर्शों को अपनी मिशन भावना से पूरा करके लक्ष-लक्ष जनों को लाभान्वित कर सकता है, इस बात की यह संस्था एक प्रत्यक्ष प्रमाण है।

वर्तमान में तो संस्था ने शिक्षा, सेवा और साधना के क्षेत्र में अगणित नवीन प्रकल्प लेकर अपने कार्यक्षेत्र का असीम विस्तार किया है। एक श्रेष्ठ कार्य को सहयोग करने के लिए किस प्रकार हजारों कदम अग्रसर होते हैं, यह संस्था की गतिविधियों में दानवीरों तथा जन-जन के सहयोग से आंका जा सकता है। जैन सभा ने छोटे-छोटे गांवों तक अपने कार्य का विस्तार किया है। साथ ही कोलकाता महानगर में शिक्षा और चिकित्सा के अनेक विशाल केन्द्र स्थापित किये है।

यह सब कुशल नेतृत्व और समर्पित कार्यकर्ताओं के सहयोग से संभव हो पाया है। मैं संस्था के दूरदर्शी ओर मनीषी संस्थापकों तथा गत अस्सी वर्ष में अंकुठ योगदान करने वाले कार्यकर्त्ताओं और वर्तमान नेतृत्व की मुक्तकंठ से सराहना करता हूँ। मेरा विश्वास है कि श्री जैन सभा सरदारमलजी कांकरिया जैसे सेवाभावी और सर्व भावेन समर्पित व्यक्ति के नेतृत्व में आगे और भी अनेक ऊँचाइयों को स्पर्श करेगी। श्री जैन सभा के सर्वतोभावेन विकास की मंगलकामना।

नई लेन, बोथरा चौक, गंगाशहर

☆☆☆

आपके पत्र द्वारा श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा की विगत आठ दशक की शिक्षा सेवा एवं साधना विषयक प्रवृत्तियों की जानकारी ने मुझे चकित कर दिया और निरन्तर सार्थक रूप से कर्मशील बने रहने की प्रेरणा दी। सोचता हूँ मनुष्य का कितना समय अपने घोंसले को बनाने में नहीं, अन्यों के बने घोंसले को बिखेरने में चला जाता है। ईर्ष्या द्वेष की आग बड़ी भयावह होती है। किनसे प्रेरणा लें। उसके लिए अतीत अधिक आदर्शवान तथा प्रेरक लगता है। लोक कथाओं की दृष्टि से तो हमारा लोक जीवन ही बड़ा जीवंत और स्फूर्त बना हुआ है। अकेले मेरे अपने छोटे से गाँव में ही मैंने प्रारंभ की छोटी उम्र पाई उसी ने मुझे बहुत कुछ सीख दे दी। वे जीवंत पात्र जिन्हें मैं देख चुका, मेरे लिए वे ही बीते इतिहास के अन्यतम उदाहरण बने लगते हैं। वे सबके सब जो अभावग्रस्त थे, उन्होंने जीवन में बड़े संघर्षो से जिलाये रखा, कभी बुझने नहीं दिया। नानपने की, बेसहारे की, अंधेरे की, अभाव की जिंदगी में भी हौंसला, स्वाभिमान और सत्व की अटक रखनेवाली जोखिम भरी जीवनी के कई पात्रों के साथ मैं भी जिया हूँ। इसलिए मैं सदैव उन व्यक्तियों की टोह में रहा जो सेवा-साधना सुमंगल-सुयश तथा सुधर्म-सुकर्म के ताने-बाने से तरंगित होते रहे पर उनका बड़ा अभाव ही मिला। तथाकथित तो बहुत मिले जिनके साथ जयकारे करने वालों को समर्थ कही जाने मंडली थी पर भीतर से उसका आत्मबल आत्मानुराग भी निष्फल और भोथरा ही मिला।

डॉ. महेन्द्र भानावत
पूर्व निदेशक भारतीय लोककला मण्डल, उदयपुर
संस्थापक एवं अध्यक्ष सम्प्रति संस्थान, उदयपुर

रतनलाल सुराना

सेवा का पर्याय : श्री जैन सभा

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा एक आदर्श प्रतिष्ठान है। मैं सन् १९८४ में इसकी लोक-कल्याणकारी प्रवृत्तियों से परिचित हुआ हूँ। यहाँ सर्वप्रथम सभा के तत्त्वावधान में विकलांग शिविर का आयोजन हुआ था। उस सयम मैं तीन विकलांगों को लेकर बोलपुर से यहाँ आया था। उसी समय इस नि:शुल्क विकलांग शिविर को देखकर मैं काफी प्रभावित हुआ एवं तव से अव तक मैं सभा की गतिविधियों से जुडा हूँ।

सभा ने बोलपुर (शान्तिनिकेतन) में विकलांग शिविर आयोजित करने की सलाह दी। यह सभा का हीरक जयन्ती वर्ष था। सभा ने शिक्षा, सेवा एवं साधना के उद्देश्य से मानव सेवा के ६० वर्ष पूर्ण कर लिये थे।

शान्तिनिकेतन के रोटरी क्लव ने इस शिविर हेतु ४०,०००) रुपये देने की घोषणा की। मैं उस समय १९८८-१९८९ में रोटरी क्लव का चेयरमेन था। हमारे लिए मानव सेवा का यह अपूर्व अवसर था। श्री भँवरलालजी कोठारी ने जयपुर से सामान सहित कार्यशाला लगाने का वचन दिया था। क्लव की ओर से चालीस हजार एवं अन्य श्रोत से ६० हजार – इस तरह एक लाख रुपये का आश्वासन मिल गया।

सभा के सहयोग से पूर्वी भारत का पहला नि:शुल्क विकलांग शिविर बोलपुर (शान्तिनिकेतन) में आयोजित किया गया। इसमें ५०० से अधिक विकलांग एकत्रित हुए। सात दिन तक मरीजों के लिए भोजन, आवास व्यवस्था, इलाज, कृत्रिम पैर आदि नि:शुल्क थे। यह अभूतपूर्व शिविर था। इसका श्रेय श्री स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता एवं इसके कार्यकर्त्ता श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिधकरणजी बोथरा, श्री भंसालीजी आदि को है। स्थानीय समाचार पत्रों ने भी इस सेवा कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

इसमें ३०० से अधिक विकलांगों को डॉ. ए.एस. चूड़ावत की देखरेख में कृत्रिम पैर एवं पोलियो ग्रस्त को केलीपर नि:शुल्क दिये गये। श्री महावीर विकलांग सेवा समिति, जयपुर का भी योगदान सराहनीय रहा।

मेरे जीवन में इससे एक नया मोड़ आया और मैं सेवा कार्यों में रुचि लेने लगा। सम्प्रति रोटरी इन्टरनेशनल जिला ३२४० वर्ष २००८-२००९ का विकलांग सेवा का मैं चेयरमेन निर्वाचित हुआ हूँ। इसके अलावा सभा के सहयोग से तीन-चार नि:शुल्क नेत्र शल्य चिकित्सा शिविर भी बोलपुर में आयोजित किये गये हैं। मैं श्री जैन सभा एवं श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिखबदासजी भंसाली, श्री रिधकरणजी बोथरा आदि कार्यकर्त्ताओं का आभारी हूँ।

सभा मानव सेवा के ८० वर्ष पूर्ण कर रही है, यह गौरव की बात है। सभा इसी तरह मानव सेवा के कार्यो में अग्रणी रहे, यही मेरी कामना है। रवि बाबू की ये पंक्तियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं–

'जेथाय थाके अबार अधम दीनेर हते दीन,
सेई खाने ते चरण तोमार बाजे सबार पीछे
सबार नीचे सर्वहारार माझे'

इस अवसर पर सभा की ओर से दानवीर भामाशाह श्री सुन्दरलालजी दुगड़ का सार्वजनिक अभिनन्दन किया जा रहा है, यह अत्यन्त प्रसन्नता की बात है। श्री दुगड़जी सस्वस्थ शतायु हों, यही हार्दिक भावना है। श्री दुगड़जी का अनेकश: अभिनंदन।

बोलपुर (शान्तिनिकेतन)

☆☆☆

पानादेवी सेठिया
अध्यक्षा : श्री साधुमार्गी जैन महिला समिति, हावड़ा

शानदार आठ दशक

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा अपने शानदार आठ दशक पूर्ण कर भव्य समारोह का आयोजन कर रही है, यह बहुत ही हर्ष का विषय है। देखते-ही-देखते समय ने किस तरह छलांग मारी। कल की बात सुन रहे हैं कि हमारे पूर्वजों ने अपने समाज के हित के लिए बात सोची। सिर्फ धर्म आराधना के लिए सोचा और शंभु मल्लिक लेन में एक छोटा-सा कमरा भाड़े पर लिया और साधना शुरू कर दी। विचारों में परिवर्तन आया, आगे की सुध-बुध सूझी। यदि यह कमरा मकान मालिक छुड़ा लेगा तो हम कहाँ जायेंगे? जगह निज की होना चाहिए। सिर्फ आराधना ही क्यों बच्चों को संस्कारित कैसे किया जायेगा, उनके पढ़ने की क्या व्यवस्था होगी? ऐसी सोच आती गयी। सोचते-सोचते जगह सुकियस लेन में ली गई, कमरे बने। उत्साह बढ़ता गया। स्कूल बनाया गया, शिक्षा का क्षेत्र खुल गया। अब उच्च शिक्षा का विचार आया। जैसे-जैसे समाज की जरुरत महसूस होती गई, कार्य बढ़ता गया। मानव सेवा और साथ में समाज के लिए भी योजनाएँ बनती गई, क्रियान्वित होती गई। हावड़ा के बच्चों के लिए स्कूल की आवश्यकता अनुभव हुई और वह भी सम्पन्न हुआ। चिकित्सा का अभाव महसूस किया गया। हॉस्पीटल बन गया। पिछड़े इलाके के उत्थान के लिए मुफ्त पुस्तकों का वितरण, आर्थिक सहायता, रोजगार हेतु स्कूलों के लिए कमरे, पंखे, सिलाई मशीनें, टॉयलेट आदि सब तरह की सहायता जारी है।

लेकिन यह वट वृक्ष कैसे बना इसके पीछे क्या राज है? यह ध्यान देने योग्य है। सभा यद्यपि छोटी है लेकिन विचारों में और अनुशासन में पीछे नहीं है। सेवा-भावी और दानशील है। समझ और सहानुभूति वाली है। इसकी नींव ऐसे शुभ समय में हुई कि सब कुछ होता गया। सभा के कार्यकर्त्ता पूर्णरूपेण समर्पित थे। उनमें सभा के प्रति श्रद्धा, विनय, कार्यकुशलता, सूझ-बूझ, उच्चविचार, सहयोग की भावना अनेकान्त वाद तर्क-वितर्क की भावना से रहित थे। एक-दूसरे का आदर भाव, समय का समायोजन, त्याग-भावना थी। इस सभा में कार्यकर्त्ताओं के बीच कभी चुनाव या पद के लिए विचार नहीं हुआ। जिसको भी जो पद दिया गया उसने अपने सहयोग और साधन से इसे पूर्ण किया। दूसरे सभी संघों और कार्यकर्त्ताओं के प्रति सद्भाव और मैत्री का परिचय दिया। सभी का आदर सम्मान किया। आज यह सभा अपने सिद्धान्तों पर पूर्ण रूप से अविचल, उन्नति के शिखर पर है। शिक्षा, आराधना और सेवा के क्षेत्र में अग्रसर है। स्त्री-शिक्षा पर भी पूर्ण सहयोग हो रहा है। धर्म के क्षेत्र में पीछे नहीं है।

जैन विद्यालय का नाम लेते ही बांछें खिल जाती हैं। सीना फूल जाता है। सभा के सभी पदाधिकारियों, कार्यकर्त्ताओं और विद्यालय के शिक्षकों तथा सदस्यों को सौ-सौ बार बधाई।

हमारा संघ उत्तरोत्तर उन्नति करे, यही शुभकामनाएँ।

संघ के संस्थापक एवं श्री फूसराजजी बच्छावत से लेकर आज तक के संरक्षकों, अध्यक्षों और कार्यकारिणी के सदस्यों को भुलाया नहीं जा सकता। ये सभा के प्रेरणा के श्रोत हैं। सभी शतायु हों, यही मंगलकामना है।

☆☆☆

रतनलाल सुराना

सेवा का पर्याय : श्री जैन सभा

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा एक आदर्श प्रतिष्ठान है। मैं सन् १९८४ में इसकी लोक-कल्याणकारी प्रवृत्तियों से परिचित हुआ हूँ। यहाँ सर्वप्रथम सभा के तत्त्वावधान में विकलांग शिविर का आयोजन हुआ था। उस सयम मैं तीन विकलांगों को लेकर वोलपुर से यहाँ आया था। उसी समय इस नि:शुल्क विकलांग शिविर को देखकर मैं काफी प्रभावित हुआ एवं तब से अव तक मैं सभा की गतिविधियों से जुडा हूँ।

सभा ने वोलपुर (शान्तिनिकेतन) में विकलांग शिविर आयोजित करने की सलाह दी। यह सभा का हीरक जयन्ती वर्ष था। सभा ने शिक्षा, सेवा एवं साधना के उद्देश्य से मानव सेवा के ६० वर्ष पूर्ण कर लिये थे।

शान्तिनिकेतन के रोटरी क्लव ने इस शिविर हेतु ४०,०००) रुपये देने की घोषणा की। मैं उस समय १९८८-१९८९ में रोटरी क्लव का चेयरमेन था। हमारे लिए मानव सेवा का यह अपूर्व अवसर था। श्री भँवरलालजी कोठारी ने जयपुर से सामान सहित कार्यशाला लगाने का वचन दिया था। क्लव की ओर से चालीस हजार एवं अन्य श्रोत से ६० हजार – इस तरह एक लाख रुपये का आश्वासन मिल गया।

सभा के सहयोग से पूर्वी भारत का पहला नि:शुल्क विकलांग शिविर वोलपुर (शान्तिनिकेतन) में आयोजित किया गया। इसमें ५०० से अधिक विकलांग एकत्रित हुए। सात दिन तक मरीजों के लिए भोजन, आवास व्यवस्था, इलाज, कृत्रिम पैर आदि नि:शुल्क थे। यह अभूतपूर्व शिविर था। इसका श्रेय श्री स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता एवं इसके कार्यकर्त्ता श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिधकरणजी बोथरा, श्री भंसालीजी आदि को है। स्थानीय समाचार पत्रों ने भी इस सेवा कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

इसमें ३०० से अधिक विकलांगों को डॉ. ए.एस. चूड़ावत की देखरेख में कृत्रिम पैर एवं पोलियो ग्रस्त को केलीपर नि:शुल्क दिये गये। श्री महावीर विकलांग सेवा समिति, जयपुर का भी योगदान सराहनीय रहा।

मेरे जीवन में इससे एक नया मोड़ आया और मैं सेवा कार्यों में रुचि लेने लगा। सम्प्रति रोटरी इन्टरनेशनल जिला ३२४० वर्ष २००८-२००९ का विकलांग सेवा का मैं चेयरमेन निर्वाचित हुआ हूँ। इसके अलावा सभा के सहयोग से तीन-चार नि:शुल्क नेत्र शल्य चिकित्सा शिविर भी बोलपुर में आयोजित किये गये हैं। मैं श्री जैन सभा एवं श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिखबदासजी भंसाली, श्री रिधकरणजी बोथरा आदि कार्यकर्त्ताओं का आभारी हूँ।

सभा मानव सेवा के ८० वर्ष पूर्ण कर रही है, यह गौरव की बात है। सभा इसी तरह मानव सेवा के कार्यों में अग्रणी रहे, यही मेरी कामना है। रवि बाबू की ये पंक्तियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं–

'जेथाय थाके अबार अधम दीनेर हते दीन,
सेई खाने ते चरण तोमार बाजे सबार पीछे
सबार नीचे सर्वहारार माझे'

इस अवसर पर सभा की ओर से दानवीर भामाशाह श्री सुन्दरलालजी दुगड़ का सार्वजनिक अभिनन्दन किया जा रहा है, यह अत्यन्त प्रसन्नता की बात है। श्री दुगड़जी सस्वस्थ शतायु हों, यही हार्दिक भावना है। श्री दुगड़जी का अनेकश: अभिनंदन।

बोलपुर (शान्तिनिकेतन)

☆☆☆

पानादेवी सेठिया
अध्यक्षा : श्री साधुमार्गी जैन महिला समिति, हावड़ा

शानदार आठ दशक

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा अपने शानदार आठ दशक पूर्ण कर भव्य समारोह का आयोजन कर रही है, यह बहुत ही हर्ष का विषय है। देखते-ही-देखते समय ने किस तरह छलांग मारी। कल की बात सुन रहे हैं कि हमारे पूर्वजों ने अपने समाज के हित के लिए बात सोची। सिर्फ धर्म आराधना के लिए सोचा और शंभु मल्लिक लेन में एक छोटा-सा कमरा भाड़े पर लिया और साधना शुरू कर दी। विचारों में परिवर्तन आया, आगे की सुध-बुध सूझी। यदि यह कमरा मकान मालिक छुड़ा लेगा तो हम कहाँ जायेंगे? जगह निज की होना चाहिए। सिर्फ आराधना ही क्यों बच्चों को संस्कारित कैसे किया जायेगा, उनके पढ़ने की क्या व्यवस्था होगी? ऐसी सोच आती गयी। सोचते-सोचते जगह सुकियस लेन में ली गई, कमरे बने। उत्साह बढ़ता गया। स्कूल बनाया गया, शिक्षा का क्षेत्र खुल गया। अब उच्च शिक्षा का विचार आया। जैसे-जैसे समाज की जरुरत महसूस होती गई, कार्य बढ़ता गया। मानव सेवा और साथ में समाज के लिए भी योजनाएँ बनती गई, क्रियान्वित होती गई। हावड़ा के बच्चों के लिए स्कूल की आवश्यकता अनुभव हुई और वह भी सम्पन्न हुआ। चिकित्सा का अभाव महसूस किया गया। हॉस्पीटल बन गया। पिछड़े इलाके के उत्थान के लिए मुफ्त पुस्तकों का वितरण, आर्थिक सहायता, रोजगार हेतु

हिम्मतसिंह डूंगरवाल

असहायों के प्रति समर्पित

हमारी शुभकामनाएँ है कि जैन-सभा कोलकाता 'दिन दूनी रात चौगुनी' नये आयामों के साथ प्रगति के पथ पर आगे बढ़ते हुए अपनी सुवास नगरों के साथ-साथ सुदूर आदिवासी एवं पिछड़े क्षेत्र तक तीव्र गति से पहुंचाए। मैं नमन करता हूँ उन सभी श्रेष्ठीजनों को जिनके मन में इस संस्थान की स्थापना का विचार आया तथा अपने समर्पण भाव से इसे मूर्त रूप प्रदान कर जैन समाज की ही नहीं अपितु पूरे मानव जाति की सेवा की।

ऐसे बिरले व्यक्ति ही होते हैं जिनके जीवन का प्रत्येक क्षण एवं कार्य दूसरे की सेवा के लिए समर्पित होता है। ऐसे व्यक्तियों का जीवन दूसरों को समाज के लिए कुछ कर गुजरने की प्रेरणा देता है।

ऐसे व्यक्तियों में एक व्यक्तित्व श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन-सभा कोलकाता के प्रमुख ट्रस्टी शिक्षा प्रेमी, धर्म एवं कर्मनिष्ठ, ऊर्जावान 'संघ-सरदार' परम श्रद्धेय श्रीमान सरदारमलजी कांकरिया हैं। जिसका सम्पूर्ण जीवन मानव कल्याण के लिए समर्पित है। हम संस्थान के उपाध्यक्ष के रूप में आपका मार्गदर्शन एवं सम्बल प्राप्त कर गौरवान्वित हैं। इनकी धर्म-निष्ठा इनके कर्मशील व्यक्तित्व में परिलक्षित होती है। इनके व्यक्तित्व के किसी भी पक्ष को लेकर देखें दूसरों के लिए प्रेरणास्पद है।

कोलकाता प्रवास के दौरान तथा संस्थान के कार्याध्यक्ष श्री सोहनलालजी धींग को आपका एवं उदारमना भामाशाह परम श्रद्धेय श्रीमान् सुन्दरलालजी दूगड़ का सान्निध्य मिला। दोनों हृदय सम्राटों द्वारा किये गये आतिथ्य सत्कार एवं आत्मीयता से हम बहुत अभिभूत हुए। श्रद्धेय कांकरिया सा. ने जैन सभा द्वारा असहायों के लिए 'श्री जैन हास्पिटल एवं रिसर्च सेन्टर हावड़ा' तथा नये महाविद्यालय की स्थापना हेतु ली गई भूमि एवं उस पर बन रहे विशाल-भवनों के दिग्दर्शन के साथ ही भावी योजनाओं से अवगत कराया। इस उम्र में भी संस्थान के लिए दौड़धूप कर संस्थान में नये आयाम स्थापित करने की ललक देखकर हम बहुत प्रभावित हुए। निसन्देह संस्थान ऐसे ऊर्जावान, निष्ठावान कर्मयोगी को पाकर धन्य हुआ है।

जैन सभा की उदार दृष्टि के चलते दो लाख इक्यावन हजार रुपये, पांच कम्प्यूटर एवं उच्च अध्ययनरत् प्रतिभाशाली जरुरत मंद जवाहर विद्यापीठ के विद्यार्थियों को जो महती सहायता कांकरिया सा. एवं दुगड़ सा. ने प्रदान करायी, वह हमारे लिए गौरव की बात है।

जैन सभा, कोलकाता के अन्तर्गत श्री सुन्दरलालजी दुगड़ चेरिटेबल ट्रस्ट की ओर से बनने वाले डेन्टल कॉलेज, श्री सोहनलालजी-कमला देवी सिंघवी कॉलेज ऑफ एजूकेशन एवं श्री पन्नालाल-हीरालाल कोचर नर्सेस कॉलेज तथा कामर्स एवं तकनीकी शिक्षा हेतु हरकचन्द-तारा देवी स्नातकीय कॉलेज अपने उद्देश्यों को मूर्त रुप देता हुआ मानव सेवा करने की दूसरों को प्रेरणा देता रहे।

प्रकाशन के सम्पादक बधाई के पात्र है कि उन्होंने समाज सेवी व्यक्तियों के समाज के उत्थान हेतु किये जा रहे कार्यों से समाज को अवगत कराने का कार्य हाथ में लिया। निसन्देह इस प्रकाशन से समर्पित भाव से समाज सेवा में लगे व्यक्तियों का मनोबल तो बढ़ेगा ही साथ ही इनके कार्यों से प्रेरणा लेकर नये व्यक्ति समाजसेवा के कार्यों से जुड़ समाज को विकास की ओर अग्रसर करेंगे।

संचालक, जवाहर विद्यापीठ, कानोड़

☆☆☆

अबीरचन्द सेठिया

कल्याणकारी संस्था

भारतीय संस्कृति, दर्शन, सभ्यता एवं जैन दर्शन में सेवा को अत्यन्त महत्व दिया गया है। साथ ही सेवा धर्म अत्यन्त कठिन और गहन भी है, यह भी कहा गया है। उसी सेवा एवं मानव कल्याणकारी कार्यों का महत्त्व है जो बिना किसी फल, परिणाम या प्रतिदान की भावना से की जाती है। स्वयं भगवान महावीर स्वामी ने सेवा करने वाले को धन्य एवं महान माना है।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता भी अपने संस्थापन काल से जैन दर्शन के रत्नत्रय सम्यक् ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र को आधार बनाकर शिक्षा, सेवा एवं साधना के माध्यम से लोक कल्याणकारी एवं मानव सेवा के प्रकल्पों में अहर्निश संलग्न है।

श्री जैन सभा ने विगत आठ दशकों में लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियों एवं मानव सेवी क्रिया कलापों में जितना विस्तार किया है, जिस तल्लीनता से इसके कार्यकर्त्ता, पदाधिकारी लगे हुए हैं, वह नितान्त आश्चर्यकारी, अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है।

धर्म का निष्कर्ष या निचोड़ यदि कुछ भी है तो वह केवल सेवा है। केवल कोलकाता ही नहीं अपितु पश्चिम बंगाल के ग्रामीण अंचलों में भी सभा ने जो लोक-कल्याण एवं जरुरतमंदों की सहायता के कार्य संपादित किये हैं, उससे वे काफी प्रभावित हैं एवं उन अंचलों में सभा का नाम बड़े आदर एवं श्रद्धा से लिया जाता है। जैन बुक बैंक, कम्प्युटर केन्द्र, सिलाई मशीन केन्द्र, नि:शुल्क नेत्र शल्य चिकित्सा शिविर, नि:शुल्क विकलांग शिविर, नि:शुल्क प्लास्टिक सर्जरी कैम्प के माध्यम से जो सेवाकार्य संपादित किये जा रहे हैं, उनकी सुवास से सभी सुवासित हैं।

श्री जैन सभा का यह आठ दशकीय अमृत महोत्सव इसी का जीवंत प्रमाण है। सभा की ये लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियाँ अधिक से अधिक सेवा कार्य में संलग्न रहे। अमृत महोत्सव की सफलता असंदिग्ध है, इसी भावना के साथ।

☆☆☆

अभयराज सेठिया

सभा के बढ़ते कदम

कुछ युगदृष्टा व्यक्तियों ने समाज के समुचित संगठन और हित की दृष्टि से सोचा और स्थान लेकर धर्म आराधना का कार्य शुरू किया। देखा यह स्थान छोटा पड़ रहा है, अत: दूसरे स्थान की खोज होने लगी। तब १८डी, सुकियस लेन वाली जमीन खरीद की एवं वहाँ मकान बनवाना प्रारम्भ किया। ऐसे व्यक्तियों में प्रमुख थे श्री फूसराजजी बच्छावत। विद्यालय जो अन्यत्र चल रहा था, उसे भी १८डी, सुकियस लेन वाले मकान में लाया गया। श्री जैन विद्यालय हाई स्कूल से हायर सेकेण्डरी स्कूल में परिणत हुआ। यहाँ वाणिज्य और विज्ञान की पढ़ाई होने लग गई।

जैसे-जैसे सभा के क्रिया कलाप बढ़ने लग गये कार्यकर्त्ता भी आगे आये और सोचा कि जिस प्रान्त में हम रहते हैं, उसकी भी सेवा, मानव सेवा आवश्यक है अत: नि:शुल्क नेत्र शल्य चिकित्सा शिविर एवं विकलांग शिविर का आयोजन होने लगा। समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री सूरजमलजी बच्छावत, श्री सरदारमलजी कांकरिया, श्री रिखवदास भंसाली, श्री भंवरलाल कर्णावट, श्री रिधकरणजी बोथरा, श्री बच्छराजजी अभाणी आदि ने लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियाँ प्रारम्भ की। जैन बुक बैंक, श्री जैन विद्यालय हावड़ा, श्री जैन हॉस्पीटल एवं रिसर्च सेन्टर हावड़ा आदि प्रमुख हैं। कई स्थानों पर कम्प्यूटर केन्द्र, सिलाई मशीन केन्द्र स्थापित कर जरुरतमंदों को रोजगार प्रदान किया। जहाँ पीने का पानी नहीं था वहाँ नलकूप लगवाकर मीठे पानी की व्यवस्था की। इस प्रकार श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता लोक कल्याणकारी एवं मानव सेवी संस्थाओं में प्रमुख एवं अग्रणी स्थान रखती है, यह सब कार्यकर्त्ताओं की कर्मठ सेवा भावना, अथक अध्यवसाय, उदारता का प्रतिफल है। नर्सिंग होम, कॉमर्स कॉलेज एवं डेन्टल कॉलेज की योजनाएँ क्रियान्वित करने हेतु कार्यकर्त्तागण उत्साह से कार्य कर रहें हैं, सभी अभिनन्दन एवं बधाई के पात्र हैं। यह कार्यकर्त्ताओं की एकता और मिलजुलकर कार्य करने की उत्कृष्ट भावना है। आठ दशाक की पूर्णता पर अमृत महोत्सव का आयोजन एवं दानवीर भामाशाह का अभिनन्दन न केवल अपने समाज के लिए अपितु अन्यों के लिए प्रेरणादायी और आदर्श बनेगा, ऐसा विश्वास है।

शुभकामनाओं सहित–

अध्यक्ष,
श्री साधुमार्गी जैन श्रावक संघ, हावड़ा

शुभकामनायें

जैन दर्शन के रत्नत्रय– सम्यक् ज्ञान-दर्शन और चारित्र को आधार बनाकर यह सभा अपने संस्थापन काल से शिक्षा, सेवा और साधना के लोक कल्याणकारी मार्ग पर चल रही है। शिक्षा, सेवा और साधना समन्वित यह बीज अंकुरित होकर विशाल वटवृक्ष का रूप धारण कर चुका है एवं इसकी सुखद शीतल छाया एवं मधुर फलों के रसास्वादन से केवल पं० बंगाल ही नहीं वरन् समग्र भारत राष्ट्र आप्यायित और लाभान्वित हो रहा है।

वीरेन्द्र सिंह लोढ़ा
उपाध्यक्ष - आगम अहिंसा-समता एवं प्राकृत संस्थान, उदयपुर

☆☆☆

पश्चिम बंगाल में श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैनसभा, कोलकाता ने शिक्षा, सेवा और लोक कल्याणकारी कार्यों में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है, यह संतोष का ही नहीं, गौरव का भी विषय है।

शिक्षा के क्षेत्र में श्री जैन विद्यालय कोलकाता, श्री जैन विद्यालय हावड़ा (बॉयज एवं गर्ल्स) श्री हरखचंद जैन विद्यालय जगतदल अपना वर्चस्व कायम किये हुए हैं। तकनीकी शिक्षा में (जो आज की महती आवश्यकता है) हरखचंद-तारादेवी स्नातकीय कॉलेज २००६ से अपनी सेवाएँ प्रदान कर रहा है। साथ ही सुन्दरलाल दुगड़ चैरिटेबल ट्रस्ट द्वारा डेन्टल कॉलेज, श्री सोहनलाल-कमलादेवी सिंघवी कॉलेज ऑफ एजुकेशन एवं श्री पन्नालाल-हीरालाल कोचर द्वारा नर्सेज ट्रेनिंग कॉलेज भी शीघ्र ही प्रारंभ होने वाले हैं। यह सब जैन समाज द्वारा बंगाल में शिक्षा सेवा के क्षेत्र में अनुपम एवं अभिनन्दनीय कार्य है।

चिकित्सा के क्षेत्र में शिवपुर-हावड़ा में २२० बैड का सर्व सुविधा सम्पन्न आधुनिक यंत्रों से सुसज्जित श्री जैन हॉस्पिटल एवं रिसर्च सेन्टर जहाँ असहाय रोगियों के लिए वरदान है वही ''जीवो और जीने दो'' का प्रत्यक्ष में कार्य द्वारा संपन्न कर रहा है। सेवा का गुण प्रत्यक्ष में परिलक्षित हो रहा है।

श्री श्वेताम्वर स्थानकवासी जैन सभा के सभी कार्यकर्तागण, पदाधिकारी एवं दान देने वाले महानुभाव बधाई के पात्र हैं, जिन्होंने पश्चिम बंगाल में जैन धर्म के सेवा गुण को साकार रूप देकर एक अभिनंदनीय अभिनव कार्य किया है।

वीर प्रभु से यही प्रार्थना है कि यह सभा निरन्तर प्रगति कर मानव सेवा में अविस्मरणीय रहे।

गुमानमल चौरड़िया

☆☆☆

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता की स्थापना पर्वाधिराज पर्युषण के अष्टम दिवस सम्वत्सरी के शुभ अवसर पर १९२८ में हुई। यह दिवस त्याग-तप, क्षमा देने व करने का है। समाज के महामानवों ने संकल्प किया और उनकी निष्ठा, सेवा, कुछ करने गुजरने का जज्बा ही आज जैन समाज को गौरवान्वित कर रहा है।

१९७८ स्वर्ण जयंति के अवसर पर भविष्य की जिन योजनाओं की रूपरेखा सभा ने तैयार की तथा जिस सामूहिक निष्ठा व सेवा भावना से सभा के कार्यकर्ताओं ने उसे आगे बढ़ाया, वह राष्ट्र के लिए भी प्रेरणादायक है।

आठ दशकों की संपूर्ति के शुभ अवसर पर जनकल्याणकारी कार्यक्रम की योजना बनाकर उच्च शिक्षा के संस्थान मैनेजमेंट, इंजीनियरिंग, टेक्नोलोजी आदि महाविद्यालयों की स्थापना करके शताब्दी तक जैन विश्व महाविद्यालय में परिणत हो, उसकी गुणवत्ता व व्यवस्था अंतर्राष्ट्रीय स्तर की हो, इसी मंगलकामना के साथ।

झंवर लाल बैद
पूर्व मंत्री- श्री श्वे० स्था० जैन सभा, कोलकाता

☆☆☆

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता आठ दशकीय लोक कल्याणकारी शिक्षा-सेवा साधना की संपूर्ति के उपलक्ष में ''अमृतमहोत्सव'' के आयोजन पर संग्रहणीय स्मारिका का प्रकाशन भी कर रहा है। जिसमें उपलब्धियों भरे गौरवमय ८० (अस्सी) विगत वर्षों का लेखा रहेगा तथा भावी योजनाओं की पूर्व जानकारी रहेगी। इस अनुपम आयोजन की सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ एवं बधाई।

केसरीचंद गोलछा

☆☆☆

''कलकत्ता महानगर की अग्रणी जैन संस्थाओं में एक चिरपरिचित नाम ''श्री जैन सभा कलकत्ता'' पिछले ८० वर्षो से निरन्तर सेवा-शिक्षा-साधना के लक्ष्य को नित नई ऊँचाइयों की दिशाा में बृहत्तम आयाम स्थापित करते हुए गतिमान है। यह कलकत्ता ही नहीं समग्र भारत के जैन समाज के लिए गौरव और प्रसन्नता की बात है। हम अमृत महोत्सव मना रहे हैं लेकिन अब तक की यात्रा के पीछे समस्त भूतपूर्व एवं वर्तमान ट्रस्टियों के अथक प्रयासों की भूरि-भूरि प्रशंसा के बिना महोत्सव अधूरा है अत: सभी को हार्दिक बधाई एवं अभिनन्दन। यह प्रज्ज्वलित ज्योति अखंड प्रकाशमान रहे, इसी शुभकामना के साथ।

हीरालाल बोहरा
सह सचिव- वीरायतन कलकत्ता

सभा को देखकर लगा कि सभी नि:स्वार्थ भावना के साथ शिक्षा के क्षेत्र में सेवा के क्षेत्र में एवं साधना के क्षेत्र में सेवा कर रहे हैं। आदरणीय श्रीमान् सरदारमलजी सा० कांकरिया का जीवन अपने आप में महान् है। किस प्रकार वे पूरे समाज को साथ लेकर सहयोग की भावना से काम में लगे हैं, यह अनुकरणीय है। जैन हॉस्पिटल में भी जाने का सौभाग्य मिला जिस प्रकार रोगियों की नि:स्वार्थ भावना के साथ सेवा की जा रही है वह अपने आप में एक कीर्तिमान है।

शिक्षा के क्षेत्र में सभी पूरे भारतवर्ष में नाम कमाया है। आज के युग में पढ़ाई एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है और सभी ने इस महत्वपूर्ण कार्य को अपने हाथ में लेकर बच्चों का भविष्य सुन्दर बनाया है, सभी साधुवाद के पात्र हैं। ऐसे शुभ कार्य में आदरणीय श्रीमान सुन्दरलाल जी सा० दुग्गड़ का सभा के साथ होना सोने में सुहागा है।

यह संस्था दिन दुनी, रात चौगुनी प्रगति के पथ पर निरन्तर आगे बढ़ती रहे एवं सेवा में निरन्तर अपनी भागीदारी निभाती रहे, इन्हीं शुभ मंगल भावनाओं के साथ।

शान्तिलाल माण्डावत

महामंत्री, श्री साधुमार्गी जैन मेवाड़ संघ

☆☆☆

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा ने अपने सेवा काल के ८ दशक पूर्ण किये हैं – यह संस्था के लिए गौरव की बात है। नई-नई संस्थाओं के बीज अंकुरित होते हैं, पर अनेक संस्थायें ऐसी भी हैं, जिनका बीज मुर्झा गया है। कई संस्थाओं ने अपना अस्तित्व भी गवां दिया है।

ईश्वर की अनुकम्पा से श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा सेवा क्षेत्र में वट वृक्ष की तरह अपनी जड़ें फैला रही है और समाज को अनुकरणीय योगदान दे रही है।

श्री जैन विद्यालय और जैन हॉस्पीटल का आज कोलकाता में विशेष स्थान है। कार्यकर्त्ता नये-नये आयाम जोड़ रहे हैं। नये-नये कार्यकर्त्ता को आगे लाया जा रहा है। बिना किसी जाति-पांति के भेदभाव से आगे बढ़ना वास्तव में अनुकरणीय है।

मैं सभा के कार्यो का निरन्तर विकास हो, कामना करता हूँ।

पूनमचन्द जैन

इण्डोर सेक्रेटरी, श्री विशुद्धानन्द हॉस्पिटल एंड रिसर्च इन्स्टीच्यूट, कोलकाता

☆☆☆

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता के ट्रस्टी बन्धुओं ने मानव कल्याण की शिक्षा सेवा और साधना के आठ दशक से निरन्तर सेवा सहयोग समर्पण का कीर्तिमान स्थापित किया। इसको चिरस्थाई बनाने के लिए ''अमृत महोत्सव'' का रूप देकर एक आयोजन किया जा रहा है। इस अमृत महोत्सव पर एक पठनीय और जीवनपयोगी 'स्मारिका' का प्रकाशन करने जा रहे हैं।

यह भगीरथ प्रयास सफल हो तथा स्मारिका हम सब के जीवन के लिए प्रेरणादायी बनें। हार्दिक शुभकामनाएं

मनोहरलाल जैन

पूर्व उपाध्यक्ष - श्री अ०भा० साधुमार्गी जैन संघ

☆☆☆

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कलकत्ता सन् १९२८ में स्थापित शिक्षा, सेवा और साधना के कर्म क्षेत्र एवं लोक कल्याणकारी मानवसेवा, राष्ट्र हितैषी, सेवा आठ दशक पूर्ण कर नवम् में प्रवेश सत्कार्यो से सुशोभित हो रही है। सद्विवेक मानवता का सुन्दर उपहार है। मैंने कई बार प्रत्यक्ष रूप से विद्यालय में अपने जीवन का अमूल्य समय बिताया है। परम आदरणीय सरदारमलजी साहब कांकरिया एवं समर्पित सहयोगियों के कर्मठ सहयोग से यह सभा आज इस मुकाम पर पहुँची है कि मानव कल्याण के कार्य किये जा रहे हैं।

जीवन निर्माण के दायित्व की ओर अग्रसर हो रही है। मेरी ओर से स्मारिका के सफल प्रकाशन हेतु शुभकामनाएं। मुझे विश्वास है स्मारिका पठनीय एवम् अनुकरणीय रहेगी।

श्रीमती रत्ना ओस्तवाल

राष्ट्रीय अध्यक्षा, श्री अ०भा०साधुमार्गी जैन महिला समिति

☆☆☆

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा शिक्षा, सेवा एवं साधना के अष्ट दशक पूर्ण कर नवम दशक में प्रवेश कर रही है, यह नि:सन्देह गौरवमय हैं। संस्था की सेवाएँ अत्यन्त सराहनीय है। शिक्षा के क्षेत्र में संस्था की सेवाएँ चिर स्मरणीय रहेंगी। संस्था ने शिक्षा सेवा एवं साधना के क्षेत्र में जिन ऊँचाईयों को प्राप्त किया है, वे अपने आपमें विलक्षण हैं, अनुकरणीय हैं, प्रशंसनीय हैं। मैं संस्था के उत्तरोत्तर विकास की शुभ कामना करता हूँ।

संस्था शीघ्र ही अमृत महोत्सव आयोजित करने जा रही है, यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है। मैं अमृत महोत्सव की सफलता की मंगल कामना करता हूँ। संस्था के कर्मठ सेवा भावी पदाधिकारियों एवं कार्यकर्त्ताओं को साधुवाद समर्पित करता हूँ।

गजन सिंह मेहता

☆☆☆

सज्जनसिंह मेहता 'साथी'
एम०ए० (१) हिन्दी (२) जैन दर्शन (३) राज-शास्त्र

समाज विकास में समता दर्शन की भूमिका

समता का अर्थ– समता का मूल शब्द सम है जिसका अर्थ है समानता। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समान दृष्टि रखकर, समानता का व्यवहार करना समता है। समता का विलोम शब्द विषमता है। विषमता की जननी ममता है। समता या समानता की आवश्यकता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आवश्यक है चाहे वह आध्यात्मिक हो, राजनैतिक हो, आर्थिक हो या सामाजिक हो। समता कारण रूप है और समानता उसका फल है। विषमता से मुक्त होने के लिए समता धारण की जावे। समता और विषमता दोनों मानव के मन में स्थित है, समता धारण की जावे। समता और विषमता दोनों मानव के मन में स्थिर है, समता मानव का मूल स्वभाव है और विषमता आमन्त्रित है, आयातित है, विभाव दशा है।

वर्तमान युग– मानव विषमता एवं तनाव में जी रहा है। सम्पूर्ण विश्व विषमता के घेरे में फंसता जा रहा है। व्यक्ति तनाव ग्रस्त है, विषमता की परिधि में त्रस्त है। विषमता का साम्राज्य सर्वत्र व्याप्त है। विषमता का विस्तार व्यक्ति से प्रारंभ होकर परिवार, समाज, राष्ट्र एवं सम्पूर्ण विश्व में हो चुका है। इस विषमता के अनेक कारण हो सकते हैं, परन्तु प्रमुख कारण मानव की ममता, मूर्च्छा, राग-द्वेष है। भगवान महावीर ने मूर्च्छा को परिग्रह कहा है– 'मूच्छापरिग्गहो वुत्तो' भौतिक चकाचौंध और आपाधापी के इस विषम वातावरण में प्रत्येक मानव आज अर्थोपार्जन की होड़ में दौड़ रहा है अत: तनाव-ग्रस्त है, दु:खी है। किसी कवि ने कहा है–

गोधन, गजधन, वाजिधन और रतन धन खान।
जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूलि समान।।

सन्तोष के अभाव में आज मानव दु:खी ही नहीं महादु:खी है। विषमता की इस विभीषिका में समता ही एक मात्र सुख का आधार है। पारिवारिक सुख को नष्ट करती हुई यह विषमता जब आगे अपने पैर पसारती है तो इसका प्रभाव समाज, राष्ट्र और विश्व तक व्याप्त हो जाता है जिससे पारस्परिक भेदभाव एवं पक्षपात की दीवारें तैयार हो जाती हैं, कदम-कदम पर पतन के गर्त तैयार हो जाते हैं। आज विश्व सैन्यशक्ति की होड़ में भी पीछे नहीं है। सभी राष्ट्र संहारक शस्त्रास्त्र तैयार करने की होड़ में है। परमाणु शास्त्रास्त्रों का अम्बार कब किस घड़ी विश्व को विनाश के द्वार पर खड़ा कर दे, कोई पता नहीं।अत: ऐसे विषम एवं सघन अन्धकार पूर्ण वातावरण में समता ही ज्योति-पुंज बनकर प्रकाश कर सकती है।

समता दर्शन क्या है? – समभाव, समता, समानता पर आधारित व्यक्ति से लेकर विश्व तक के कल्याण के विचारों को समता दर्शन कहा जा सकता है। दर्शन का एक अर्थ होता है देखना। 'दृश' धातु से लट प्रत्यय होने पर 'दर्शन' शब्द बनता है, यह दृशधातु चक्षु से उत्पन्न होने वाले ज्ञान का बोध कराने वाली है।[१] दर्शन शब्द का सम्बन्ध दृष्टि से होता है। दृश्यते अनेन इति दर्शनम् जिससे देखा जाय वह दर्शन है।[२] दर्शन का एक अर्थ श्रद्धा भी होता है– 'तत्वार्थ श्रद्धानं सम्यग् दर्शनम्[३] अर्थात् तत्वों पर सम्यक् श्रद्धा करना सम्यग् दर्शन है। अरस्तु के अनुसार 'दर्शन वह विज्ञान है जो परम तत्व के यथार्थ स्वरूप की खोज करता है। (Phylosophy is the science which investigates the nature of being as it is in itself)[४] इस प्रकार दर्शन की अनेक परिभाषाएँ उपलब्ध हैं। यहाँ दर्शन का अर्थ सिद्धान्त से है, विचारों से है।

आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि सभी क्षेत्रों में यथा योग्य समानता, समता का व्यवहार करने के सिद्धान्त के विचारों को समता दर्शन कह सकते हैं। आध्यात्मिक क्षेत्र में देखें तो भगवान महावीर ने कहा कि सभी आत्माएँ समान हैं अर्थात् सभी आत्माओं में सर्वोच्च विकास संपादित करने की शक्ति समान रूप से रही हुई है केवल कर्मों का अन्तर है–

सिद्धा जैसा जीव है जीव सो ही सिद्ध होय।
कर्म मेल का आंतरा समझे विरला कोय।।

यही नहीं प्रभु महावीर का उद्घोष है कि आत्मा ही परमात्मा है-'अप्पा सो परम अप्पा' इस उच्च पद को प्राप्त करने के लिए प्रभु महावीर ने सबसे पहले सम्यग् दृष्टि या सम दृष्टि वनने का उपदेश दिया, मिथ्यादृष्टि को दूर कर सम्यग् दृष्टि बनने का विषम दृष्टि से मुक्त हो सम दृष्टि बनने का उपदेश दिया है। ''विषमता मिथ्या होती है और समता सम्यक्। ''समता के प्रवेश को सम्यक्त्व का श्री गणेश कह सकते हैं। जहाँ सम्यक्त्व का श्री गणेश है, वहाँ समदृष्टि का विकास सम्भव है।[5] भगवान महावीर ने समता दर्शन का व्यवस्थित सिद्धान्त विचार एवं आचार दोनों रूप में संसार के समक्ष प्रस्तुत किया। प्रभु महावीर के अनुसार संसार के समस्त प्राणी समान हैं, सभी जीव जीना चाहते हैं अत: किसी भी जीव की हिंसा नहीं की जावे। जीओ और जीने दो का सिद्धान्त प्रस्तुत किया है।

विचार एवं आचार में समता– आध्यात्मिक क्षेत्रों में भगवान महावीर ने विचार रूप में 'जीओ और जीने दो' सभी जीव समान हैं का सिद्धान्त दिया तो आचार रूप में सप्त कुव्यसन का त्याग, श्रावक के बारह व्रत, साधु के पांच महाव्रत, समिति गुप्ति के पालन का विधान प्रस्तुत किया जिससे विचारों की समता प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता एवं शक्ति के अनुसार जीवन में उतार सके। सप्त कुव्यसन हैं– (१) मांस भक्षण (२) मदिरा पान (३) जुआ (४) चोरी (५) शिकार (६) परस्त्रीगमन (७) वेश्यागमन। प्रत्येक मानव को इन कुव्यसनों से मुक्त रहने का उपदेश दिया। श्रावक के व्रत हैं (१) स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत (२) स्थूल मृषावाद विरमण व्रत (३) स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत (४) स्वदार संतोष, परदार विवर्जन मैथुन विरमण व्रत (५) परिग्रह परिमाण व्रत (६) दिशा परिमाण व्रत (७) उपभोग परिभोग परिमाण व्रत (८) अनर्था दण्ड त्याग व्रत (९) सामायिक व्रत (१०) देशावगासिक व्रत (११) पड़िपुन्न पौषध व्रत (१२) अतिथि संविभाग व्रत। पाँच महाव्रत हैं (१) अहिंसा (२) सत्य (३) अस्तेय (४) ब्रह्मचर्य (५) अपरिग्रह। व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुसार श्रावक के व्रतों का या साधु के महाव्रतों का पालन करें।

सामाजिक क्षेत्र में समता दर्शन– सामाजिक स्तर पर समाज के सभी सदस्य समान हैं। वर्ण, जाति प्रदेश आदि के भेद से व्यक्ति-व्यक्ति के मध्य भेद की दीवार खड़ी करना सर्वथा अनुचित है। सामाजिक स्तर पर सभी समान हैं, विकास के अवसर सभी के लिए समान हों, यह समता दर्शन है, प्राचीन काल में सामाजिक स्तर पर विषमताएँ थीं, पर समय के परिवर्तन के साथ विषमताओं के बंधन ढ़ीले हो गये। सामाजिक समानता के क्षेत्र में वर्तमान में काफी विकास हुआ है।

राजनैतिक क्षेत्र में समता दर्शन– इस जगती-तल पर लोकतन्त्र का प्रादुर्भाव। आगमन राजनैतिक क्षेत्र में समानता के विकास में एक महत्वपूर्ण कदम है। प्राचीन काल की साम्राज्यवादी लिप्सा, सामन्तवादी राजतन्त्र, विस्तारवादी राजनीति के बन्धनों को प्रजातन्त्र ने शिथिल किये। जनता का जनता के लिए जनता द्वारा शासन प्रजातन्त्र या लोकतन्त्र है। लोक तन्त्र द्वारा राजनैतिक समानता की स्थापना हुई। यह एक सफल प्रयास है, फिर भी इसे पूर्ण रूप से राजनैतिक समानता नहीं कह सकते हैं, अभी इसमें सुधार की आवश्यकता है। राजनैतिक क्षेत्र में सभी को समानता प्राप्त हो, यह समता दर्शन है।

आर्थिक समानता– आर्थिक क्षेत्र में सभी व्यक्तियों को या योग्य समानता के अवसर प्राप्त हों, यह आर्थिक समता दर्शन है। समय के परिवर्तन के साथ आर्थिक क्षेत्र में भी इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयास किये गये। कार्ल मार्क्स ने साम्यवाद के रूप में विश्व में नया दर्शन प्रस्तुत किया। इस क्षेत्र में बहुत कुछ सफलता भी मिली। परन्तु फिर भी विश्व में आर्थिक असमानता मुँह फाड़े खड़ी है। समता दर्शन के अनुसार आर्थिक समानता का अर्थ यह नहीं है कि संसार के सभी व्यक्तियों के पास समान सम्पत्ति हो, सम्पत्ति का वितरण समान हो, चाहे वह परिश्रमी हो या निठल्ला हो, योग्य हो या अयोग्य हो, पुरुषार्थी हो या पुरुषार्थहीन हो। इस प्रकार की समानता तो मान्य एवं योग्य नहीं है। सभी व्यक्तियों को अर्थोपार्जन के समान अवसर प्राप्त हों, योग्यता के अनुसार पारिश्रमिक दिया जावे, आर्थिक असमानता की गहरी खाइयों को पाटा जावे, व्यक्ति की क्षमता के अनुसार कार्य लिया जावे, अत्यधिक आर्थिक विषमता को दूर किया जावे। प्रत्येक व्यक्ति को आवश्क वस्तुओं की आपूर्ति हो। सभी को शिक्षा एवं विकास के समान अवसर उपलबध हों। आर्थिक समानता के क्षेत्र में वर्तमान युग में बहुत प्रगति हुई है, फिर भी विश्व में विषमता विद्यमान है। एक ओर जहाँ कुछ देश एवं कुछ व्यक्तियों के पास धन का अम्बार है तो दूसरी ओर ऐसे व्यक्ति भी है जो महान अर्थ संकट में है, दो समय का भोजन भी उन्हें उपलबध नहीं होता है। इस विषमता को दूर करना आवश्यक है जिसके लिए समता दर्शन आवश्यक है।

समाज क्या है ? सीधी सादी भाषा में व्यक्तियों के समूह को समाज कहते हैं। समाज शास्त्रियों ने समाज की अनेक परिभाषाएँ प्रस्तुत की हैं। पाठकों को परिभाषाओं के जाल में न डालकर मैं सीधा इस विषय पर उपस्थित हो रहा हूँ कि समता दर्शन सामाजिक विकास में किस प्रकार सहयोगी हो सकता है। समता दर्शन के बारे में ऊपर मैंने बहुत संक्षेप में कुछ लिखने का प्रयास किया है। विस्तृत जानकारी के इच्छुक पाठकगण आचार्य श्री नानेश की पुस्तक 'समता दर्शन एवं व्यवहार' पढ़ने का कष्ट करें।

समता दर्शन श्रमण भगवान महावीर का दिया गया जीवनोपयोगी सिद्धान्त है। भगवान महावीर ने समता को धर्म कहा है। धर्म व्यक्ति को तिराने वाला है। समाज व्यक्तियों से बनता है व्यक्ति के उत्थान से समाज का उत्थान है और व्यक्ति के पतन से समाज का पतन है। अत: समता दर्शन समाज को भी तिराने वाला है।

समाज विकास में समता दर्शन की अहम् भूमिका है– समता दर्शन द्वारा समाज में व्याप्त विषमताएँ समाप्त होंगी। समता दर्शन द्वारा सम्पूर्ण विश्व में शांति एवं सुख का साम्राज्य स्थापित हो सकता है। आवश्यकता है समता दर्शन को प्रत्येक व्यक्ति समझे, चिन्तन करे एवं जीवन में आचरण में लाए, मिठाइयों के नाम लेने से, चर्चा करने से रसास्वादन नहीं होता। रसास्वादन तो मिठाइयों के सम्यग् स्वरूप को समझकर यथा समय विवेक पूर्वक खाने से ही सम्भव है। समता दर्शन मात्र सिद्धान्त ही नहीं वरन् जीवन में आचरण करने योग्य है। समता दर्शन के सम्यक् स्वरूप को समझकर जीवन में उतारने पर व्यक्ति का जीवन उन्नत, सुखमय, आदर्श, हितकारी बन सकता है। यदि व्यक्ति का विकास होगा तो समाज का विकास स्वत: निश्चित है। समाज का मूल्यांकन उसके सदस्यों के आधार पर किया जाता है।

व्यक्ति समाज के लिए एवं समाज व्यक्ति के लिए– जब से व्यक्ति ने अकेलापन छोड़कर समूह में अन्य साथियों के साथ रहना स्वीकार किया है, तबसे सामाजिक व्यवस्था का विकास हुआ है, तब से पारस्परिक सहयोग की भावना विकसित हुई है, सामाजिक व्यवस्था का शुभारम्भ हुआ है, सहकार एवं सहयोग की भावना जागृत हुई है, अत: व्यक्ति एवं समाज अन्योन्याश्रित हो गये हैं। समता दर्शन प्रत्येक मानव के जीवन का अंग बने तो व्यक्तिगत पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन में समता के संचार से सर्वत्र आनन्द ही आनन्द होगा। वसुधैव कुटुम्बकम् की कल्पना मूर्त रूप ग्रहण कर सकेगी। समता समृद्धि, शान्ति एवं श्रेष्ठता की प्रतीक है। आचार्य श्री नानेश के शब्दों में ''अन्त में यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि जो समता की साधना करेगा उसका स्वयं का जीवन तो धन्य होगा ही किन्तु वह समाज के जीवन को भी धन्य बनायेगा।''

अत: यह पूर्ण विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि समाज विकास में समता दर्शन की अहम् भूमिका है। मैं यहाँ 'समता' दर्शन और व्यवहार' पुस्तक के कुछ अंश/उद्धरण प्रस्तुत करना उचित समझता हूँ। यथा

१. विश्व दर्शन तभी सार्थक है जब योग द्रष्टा अपनी समर्थ दृष्टि के माध्यम से सम्पूर्ण दृश्य को समतामय बना सके। यथावत् स्वरूप दर्शन से ही समता का स्वरूप प्रतिभासित हो सकेगा। पृष्ठ संख्या ३७

२. मनुष्य के मन के मूल में रही समता ज्यों-ज्यों उभरती जायेगी, वह अपने व्यापक प्रभाव के साथ मानव जीवन को भी उभारती जायेगी। उसे अशांति, दु:ख, दैन्य एवं निकृष्टता के चक्रवात से बाहर निकाल कर यही समता उसे शांति, सर्वांगीण समृद्धि एवं श्रेष्ठता के सांचे में ढ़ालेगी। पृष्ठ संख्या २८

३. भारतीय संस्कृति में ''वसुधैव कुटुम्बकम'' की जो कल्पना की गई है, उसे समता पथ पर चलकर ही साकार बनाई जा सकती है। सारे विश्व को बड़ा कुटुम्ब मान लें, उसे अपनी स्नेह पूर्ण आत्मीयता से रंग दें, तो भला क्यों नहीं ऐसी श्रेष्ठ कल्पना साकार हो सकेगी? पृष्ठ संख्या ८९

४. समता के प्रवेश को सम्यक्त्व का श्री गणेश कह सकते हैं। अत: सबसे पहले समदृष्टिपना आवे, यह वांछनीय है, क्योंकि समदृष्टि जो बन जायेगा तो वह स्वयं तो समता पथ पर आरूढ़ होगा ही किन्तु अपने सम्यक् संसर्ग से वह दूसरों को भी विषमता के चक्रव्यूह से बाहर निकालेगा। इस प्रयास का प्रभाव जितना व्यापक होगा उतना ही व्यक्ति एवं समाज का सभी क्षेत्रों में चलने वाला व्यवस्था क्रम सही दिशा की ओर परिवर्तित होने लगेगा। पृष्ठ संख्या ४२

५. योग दृष्टा की समर्थ दृष्टि विश्व के विशाल रंगमंच पर जहां भी पड़ेगी, वह समतत्त्वों की शोध करेगी तथा विषम तत्त्वों को भी समता के साथ सम बनाने में निरत हो जायेगी। द्रष्टा वही योग्य जो समता को अपनी दृष्टि में समा ले तथा दृष्टि वही समर्थ जो विषम को भी सम बनादे। यह समता मूलक धरातल ही सफल विश्व दर्शन की ओर अग्रसर बनता है। ऐसा प्रगतिशील दृष्टा 'समदर्शी' बन जाता है। पृष्ठ संख्या ३०

६. मूल आवश्यकताएं होती हैं– भोजन, वस्त्र और निवास। यही कारण है कि समस्त जीवनोपायेगी पदार्थों के यथा विकास, यथायोग्य वितरण पर बल दिया जा रहा है। यथा विकास एवं यथा योग्य वितरण का लक्ष्य यह होगा कि जिसको अपनी शरीर-दशा, धंधे या अन्य परिस्थितियों के अनुसार जो योग्य रीति से चाहिये, वैसा उसे दिया जाय। यही अपने तात्पर्य में समवितरण होगा। पृष्ठ संख्या६३

■

डॉ० कहानी मानावत

लोक-लोक में मीरा की खोज

साहित्य का इतिहास लिखने वालों में लोक पक्ष को ठीक ही नहीं जांचा-परखा इसलिए लोक जीवन में समाज, साहित्य, संस्कृति, कला, संगीत विषयक जो अलभ्य सामग्री छिपी पड़ी रही वह अनदेखी ही रह गयी। इसका परिणाम यह रहा कि जो कुछ लिखा गया वह अपूर्ण ही रहा। लोक पक्ष का यह समाज अपढ़ तथा परम्परानिष्ठ रहने के कारण अपने ही हाल में मस्त रहा जबकि पढ़े-लिखे समाज में जो कुछ लिखा जाता रहा वही पढ़ा और समझा जाता रहा और उसी को पूर्ण माना जाता रहा। यही कारण रहा कि लोक जीवन का समाज और पढ़े लिखे का समाज अलग-अलग समझे जाने लगा।

पढ़े लिखे समाज ने लोक जीवन को हर दृष्टि से अपने से अलग और पिछड़ा माना इसलिए पढ़ा लिखा समाज ही हर दृष्टि से और हर क्षेत्र में अगुवा बना रहा। वह यह भूल गया कि जो समाज उसकी तुलना में आधुनिक नहीं है वही मूल भारत की आत्मा है। उसी का बाहुल्य है। उसी के पास परम्परानिष्ठ समृद्ध संस्कृति है, वही भारतीय अन्तर चेतना है। परम्परागत ज्ञान के सारे स्रोत और असल दस्तावेज पोथियों में नहीं नुकेरे जाकर उसके मस्तिष्क में और वाचिक परम्परा द्वारा कण्ठ दर कण्ठ मुखरित बने हुए हैं।

यह ठीक ही कहा गया कि "साहित्य की एक धारा उन लोगों की रही जो अपनी नामवरी से दूर रह अपने सृजन कर्म में निरन्तर लगे रहे और बदले में किसी पद प्रतिष्ठा, यश एवं धनसम्पदा की चाहना नहीं की। लोकधारा के इन साधकों ने पर्याप्त मात्रा में गीतों-गाथाओं, कथा-किस्सों तथा अन्य विधाओं में लिखा और उसे जनगंगा के हवाले कर दिया। लोक की कसौटी पर जो साहित्य खरा उतरता रहा, वह कंठ दर कंठ चलता रहा और कुन्दन-सा निखार पाता रहा। ऐसा जनजयी साहित्य ही कालजयी हो पाता है। यह लोक का ही अजूबा है कि जिन्होंने बहुत लिखा, बहुत गाया मगर कहीं अपनी छाप नहीं छोड़ी सो वे अनाम जाने ही बने रहे जबकि ऐसा भी हुआ कि जिन्होंने न गाया, न लिखा मगर उनकी छाप चलती रहने से वे आज भी बहुजानी बने हुए हैं। इनमें गुरु शिष्य के रूप में रैदास मीरा का नाम लिया जा सकता है।[१]

मीरा के सम्बन्ध में यह विचारणीय है कि जब तक यह चित्तौड़ में रही, पूर्णत: राज परिवार के काण कायदे और मर्यादा में रही किन्त पति भोजराज के निधन के बाद जब उसने चित्तौड़ से विदा ले ली तब शेष चालीस वर्षीय जीवन उसने अपनी पद यात्राओं द्वारा विविध तीर्थों एवं धार्मिक स्थलों में ही बिताया। यह जीवन कोई कम अवधि का नहीं था, लगभग तीस वर्ष का रहा और अधिकांश में लोक समाज, लोक जन और लोक में विचरण करने वाले पहुंचे हुए साधु-सन्यासी, सन्तों-सन्ताणियों के सान्निध्य संगत और मेलजोल का रहा।

मीरा के सम्बन्ध में जो साहित्य अब तक प्रकाशित हुआ वह न तो उसके राज परिवार से जुड़े वैवाहिक जीवन की कोई पुख्ति जानकारी देता और न लोकनिधि के रूप में उसके लोक-लोक में विचरण करने का अध्ययन ही प्रस्तुत करता है। गम्भीर चिन्तन का विषय है कि मीराबाई के जन्म से लेकर वैवाहिक जीवन के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा गया वह नहीं के बराबर जनश्रुतियों के आधार पर लिखा गया। .परिवार के अन्दर की घटनाओं को लिपिवद्ध करने की तब कोई आवश्यकता रही और न ऐसी परम्परा ही देखने को बनती है इसलिए मीरा का यह पक्ष अजाना ही रहा और चित्तौड़ से जब मीरा निष्कापित हुई तब कोई सुखद वातावरण उसके पक्ष में भी नहीं था इसलिए शेष काल मीरा के लिए सर्वाधिक निराशाजनक ही रहा।

मीरा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष भक्ति के बहाने अध्यात्म में आकंठ निमग्न का रहा। विद्वानों ने मीरा के इस पक्ष को बहुत गम्भीरता से रेखांकित नहीं किया और साधु सन्तों के साथ गाने, बैठने और नाचने के रूप में लिखकर उसे जो गरिमा प्रदान करनी

थी वह नहीं की गयी। इस काल में मीरा का पीहर परिवार भी मीरा के प्रति अधिक सहानुभूति पूर्ण नहीं रहा, कारण कि जब वह अपने ससुराल में ही ठीक ढंग से नहीं स्वीकारी गई तो पीहर वाले इस मीरा को अपने कुल के अनुकूल मिजाज वाली नहीं मानने लगे। जाहिर है कि मीरा जब दोनों ही राजकुल की प्रिय भाजन नहीं रही तब लोक में भी राजपरिवार के विरुद्ध आगे आकर उसके प्रति सहानुभूति का दिखावा नहीं रहा। यों भी मीरा का अधिकांश समय तो नितान्त कृष्ण भक्ति में खोये रहने में व्यतीत होता था।

उसे बाह्य अगजग की अधिक परवाह नहीं रही। कृष्ण भक्ति में पूर्ण रूप से समर्पित मीरा बेसुध रह कर सुधहीन ही एकान्त साधना करती रही।

साहित्यकारों ने मीरा को सर्वाधिक लोकप्रियता उसके पदों के कारण दी। स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाई जाने के कारण मीरा पद-रचना के रूप में ही सर्वाधिक चर्चित हुई। यह गहन खोज का विषय है कि विभिन्न पाठ्यक्रमों में मीरा के नाम के जो पद पढ़ाये जाते रहे क्या वे मीरा द्वारा रचे गये हैं? तब फिर लोक समाज में मीरा के नाम के जो पद, भजन आदि गाये जा रहे हैं क्या वे मीरा के द्वारा रचित हैं? इधर विद्वान लोग ही मीरा के प्रामाणिक पदों के संकलन की बार-बार आवश्यकता महसूस कर रहे हैं। ऐसे करते-करते कितने ही संकलन मीरा के पदों के प्रकाशित हो गये हैं, किन्तु तब भी कोई एक मत से यह कहने के लिए तैयार नहीं है कि कौनसे पद मीरा द्वारा लिखे गये हैं और कौन से क्षेपक हैं।

रैदास मीरा के वाट-गुरु अर्थात् राह-गुरु थे। चित्तौड़ से मीरा इनके साथ निकली और अन्त तक रैदास उसके साथ रहे, ऐसा कहा जाता है। हमारे यहां अनाम अथवा दूसरों के नाम और छाप से साहित्य सृजन की बड़ी जबर्दस्त परम्परा रही है। ऐसे कई लोग मिलते हैं जिन्होंने या तो बेनाम से लिखा या फिर उनके परिचय और संगत में जितने भी लोग आये उनके नाम छाप से लिखा। चित्तौड़ जिले के छीपों के आकोला गाँव के मोहनजी ने अनाम भाव से लगभग पचास हजार पदों की रचना की। ये पद उनके सम्पर्क में जो भी गायक, वादक और भजनीक आये उन्हें उनके नाम से लिख-लिख देते रहे। ऐसे करते-करते उन्होंने प्रेमदास, देवीलाल, जोरावरमल, गंगाराम, कालूराम, रामलाल, राघवलाल, टेकचन्द, शंकरलाल, लक्ष्मीलाल आदि कइयों की छाप से पद लिखे। चन्द्रसखी के नाम से भी कई पद मिलते हैं। उदयपुर में ही दशोरा परिवार में एक सज्जन ऐसे हुए जिन्होंने चन्द्रसखीमय बनकर चन्द्रसखी छाप के सौ पद लिखे।

लोक जीवन में मीरा के नाम से अगणित पद भजन कीर्तन प्रचलित हैं। मीरा के नाम से ब्यावलें, ढालें, धमालें, ख्यातें, बातें परचियां और फलियां भी कई मिलती हैं। राजस्थान के अलावा काठियावाड, गुजरात, सिन्ध, हरियाणा, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र तमिलनाडु, तेलगु, पंजाब, ब्रज, उत्तरप्रदेश आदि कई प्रान्तों में मीरा के नाम का डंका गाया, बजाया और नाचा जा रहा है। भजन गाने वाले अनेक ऐसे हैं जिनसे यह पता लगता है कि मीरा के नाम से जो भजन वे गा रहे हैं वे उन्होंने कब किससे, कहां सीखे? उनमें से प्रमुख गायक यह कहते हुए मिलते हैं कि भजन गायकी में जब वे पूरे डूब जाते हैं तब उन्हें अपनेपन का भान नहीं रहता और वे मीराजी के नाम से रात-रात भर गाते रहते। पहले से कोई पद उन्हें याद नहीं होता। उनके पास लिखा हुआ कोई कागज-पानड़ा भी नहीं होता तब अपने आप लाइनें की लाइनें उनके मन में आती रहती हैं और वे उसी-उसी धुन में गाते हुए मगन मस्त रहते है। गोकुल, वृन्दावन, मथुरा, द्वारिका आदि में जहां मीरा एक से अधिक बार गई, वहां कई मीराधारी महिलायें ऐसी मिलेंगी जो निरन्तर नित नये-नये पद गाती हुई सुनी जा सकती हैं। जनजातियों में भी मीरा के नाम को कई रूपों में गाया जाता है वहां कौन मीरा के नाम से गवा रहा है अथवा वे कहां से शिक्षा-दीक्षा लेकर मीरा को गा रहे हैं।

अब जब लोक बोलियों का अधिक बोलबाला है और हर अंचल की बोली भाषा के रूप में अपना अस्तित्व देने को आतुर है तब मीरा के नाम से गाये जाने वाले साहित्य के सांगोपांग अध्ययन की सिलसिलेवार आवश्यकता महसूस की जाने लगी है। मीरा के नाम से काव्य-रूप की जो विधाएं है उनके सम्बन्ध में भी नया प्रकाश पड़ेगा और छन्द अंलकार का जो अध्ययन अब तक हो चुका है उससे अधिक जानकारी और काव्य-रूपों के लक्षणों के बारे में जानकर भी साहित्य में अधिक अवदान दिया जा सकेगा।

■

डॉ० कहानी भानावत
व्याख्याता (चित्रकला)
राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज०)

शिक्षा, शिक्षक एवं शिक्षण

शिक्षण विधि शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मध्य होने वाली शैक्षिक अन्त:क्रिया है। शिक्षण, शिक्षक एवं शिक्षार्थी तीनों उस तिराहा की तरह हैं, जहां से शिक्षण रूपी नदी का उद्‌गम होकर शिक्षक एवं शिक्षार्थी उसके दो समानान्तर किनारे बनते हैं। दोनों का समन्वय, सौहार्द्र एवं सहकार जैसे नदी को पूर्वांगी, पानीदार और पयस्विनी बनाते हैं, वैसे ही शिक्षक और शिक्षार्थी की आपसी समझ, सकारात्मक सोच और सहिष्णुता शिक्षण को गतिवान, मतिवान एवं मंगलवान बनाते हैं।

इसमें शिक्षक की भूमिका अहम एवं सर्वोपरि है जैसे युद्ध में किसी योद्धा की होती है। युद्ध में विजय करने के लिए किसी योद्धा का हथियारों से लेस होना ही पर्याप्त नहीं है उन हथियारों के प्रयोग और परिस्थिति को पहचानते हुए उनकी उपयोग विधि का विवेक जरूरी है। इसी प्रकार एक शिक्षक के लिए यह जानना जरूरी है कि शिक्षण की विविध पद्धतियों में से वह कौन-सी पद्धति को अंगीकार करे। इससे पूर्व वह यह भी जाने कि किस प्रकार के, कौन से छात्र हैं, साथ ही किस विषय का कौन-सा पाठ है। यहां शिक्षक को अपने मनोवैज्ञानिक मन से शिक्षण का वह सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक धरातल खोजना होगा जिससे बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास हो सके। वह ऐसा शिक्षण दे जो बोधगम्य तो हो पर बोझिल न हो। जो अनुरंजन मूलक तो हो पर उदासीमूलक न हो। जो बच्चों के मन में जिज्ञासा पैदा करे, जुगुप्सा नहीं।

यह सही है कि सभी बच्चे एक जैसे नहीं होते। वे कुंद बुद्धि के भी होते हैं तो क्षिप्र बुद्धि के भी। वे न्यून अंगी भी हो सकते हैं तो कौतुक कर्मी भी। वे अध्ययन-जीवी भी हो सकते हैं तो अन्तर्मुखी भी। वे मस्तमौजी भी हो सकते है तो अल्हड़ आनन्दी भी। इन सभी प्रकार की संगतियों और विसंगतियों के बीच एक शिक्षक को अपने शिक्षण-कर्म की उम्दा पैठ, उन्नत पहचान और उत्कृष्ट परम्परा का निर्वाह करना होता है। यह ऐसी घड़ी होती है जब शिक्षक ही शिक्षार्थियों की परीक्षा नहीं ले रहा होता है, बच्चे भी शिक्षक को विभिन्न प्रकार की परीक्षाओं से गुजारते हुए देखे जाते हैं।

प्राचीन शिक्षण पद्धति अब बेमानी, व्यर्थ, अव्यावहारिक एवं अवैज्ञानिक हो गई है। अब ''घंटी बाजे घम-घम, विद्या आवै गम-गम'' का नुस्खा देकर छात्रों को नहीं पढ़ाया जा सकता। अनुपस्थित छात्र को टांगाटोली कर नहीं लाया जा सकता। किसी के कान की पपड़ी पर कंकरी रखकर मसलना या लप्पड़ से गाल लालकर शिक्षा की औखध नहीं पिलाई जा सकती। सजाकारी शिक्षा के जमाने लद गये। कई प्रभावशाली विधियों का नया-नया उन्मेष हो रहा है उनसे शिक्षक को अपना तादात्म्य बिठाना होना। उसे स्वयं भी शिक्षण-कला के कौशल तलाशने होंगे और अपने व्यक्तित्व के अनुरूप पढ़ाये जाने वाले पाठ में वे गुर देने होंगे जिनसे शिक्षार्थी क्रियाशील बने। उसमें चिंतन-क्षमता का विकास हो। उसकी तर्क शक्ति प्रांजल बने। उसमें मानवीय मूल्यों का वपन हो। वह आगे जाकर अच्छा आदमी बने तब गीतकार की यह पंक्ति नहीं गुनगुनानी पड़े–

अखबार की रद्दी तो फिर भी काम की,
आदमी रद्दी हुआ किस काम का?

अब भय और कम्पन देने वाले, चमड़ी उधेड़ने वाले, फफोले देने वाले और विवाहोत्सव पर टूंटिया टूंटकी के खेलों में गीतों द्वारा महिलाओं में बिच्छू चढ़ाने, उतारने जैसे टोटकों से कोई आदर्श शिक्षक नहीं बन सकता। **शिक्षा कोई जादू टोना या नटों– भवाइयों की तरह कौतुक कर्म नहीं है, वह जीवन निर्माणकारी संजीवनी है। कमल का वह फूल है जिस पर जल का दाग भी नहीं लग सकता। गूलर का वह फल है जो वर्ष में केवल एक बार फलित होता हैं वह भी शरद पूर्णिमा की श्वेत धवल रात को ऐन बारह बजे और जिस**

डाल पर वह गुजरता है उसे फूलमय बनाता चलता है। बड़ी मुश्किलों में गुजरने पर जब कोई सफलता हाथ लगती है तब "गूलर का फूल देना" कहावत कही जाती है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने भी रंग में भंग" मे यह पंक्ति कही थी– "हां-हां, जनाब तब तो गूलर भी फूल देगा।"

अन्त में आने वाला समय शिक्षा में नव-नवोन्मेष का है। शिक्षण की कई नवीन विधियां, पद्धतियां और प्रकल्पनाएं आविष्कृत होती रहेंगी तब हमारे लिए सेमीनार, संगोष्ठियां, कार्यशालाएं, सम्मेलन महत्वपूर्ण भूमिका के धारक होते हैं, जहां एक दूसरे के विचारों का आदान-प्रदान हो सके। एक दूसरे को अपने अनुभवों का लाभ मिल सके। कठिनाइयों एवं समस्याओं का निराकरण कर सकें। शिक्षा से जुड़े नवाचारों, सरोकारों, प्रयोगों और प्रकल्पों से रू-ब-रू हो सकें।

ज्ञान की पिपाशा कभी समाप्त नहीं होती और सीखने की भी कोई निश्चित उम्र नहीं होती। परम्पराशील और बंधे-बंधाये रास्ते ताजगी नहीं देते। ज्ञान के गवाक्ष सब ओर से खुले रहेंगे तो ही हम विज्ञान-सुज्ञान की सौंधी सुगंध को आत्मसात कर सकेंगे। आपने वह कहानी तो सुनी ही होगी जिसमें रोटी का टुकड़ा प्राप्त करने के लिए लोमड़ी कौए को फुसलाती है पर कौआ अब वह कौआ नहीं रहा। लोमड़ी ने ज्योंहि उसकी प्रशंसा कर गाना सुनने को कहा, कौए ने अपेन पास रखा ट्रांजिस्टर चलाया बोला– "यह आकाशवाणी है।" लोमड़ी डरी और भागी कि यह कौआ है या और कोई प्राणी।

■

प्रो० सागरमल जैन
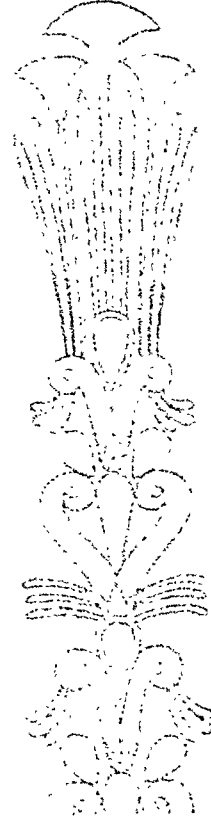
जैन आगमों में मूल्यात्मक शिक्षा और वर्तमान सन्दर्भ

वर्तमान युग ज्ञान-विज्ञान का युग है। मात्र बीसवीं सदी में ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में जितना विकास हुआ, उतना विकास मानवजाति के अस्तित्व की सहस्त्रों शताब्दियों में नहीं हुआ था, आज ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा एवं शोधकार्य में संलग्न सहस्त्रों विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों और शोध-केन्द्र है। यह सत्य है कि आज मनुष्य ने भौतिक जगत के सम्बन्ध में सूक्ष्मतम ज्ञान प्राप्त कर लिया है। आज उसने परमाणु को विखण्डित कर उसमें निहित अपरिमित शक्ति को पहचान लिया है, किन्तु यह दुर्भाग्य ही है कि शिक्षा एवं शोध के इन विविध उपक्रमों के माध्यम से हम एक सभ्य, सुसंस्कृत एवं शान्तिप्रिय मानव-समाज की रचना नहीं कर सके।

वस्तुत: आज की शिक्षा हमें बाह्य जगत और दूसरों के सम्बन्ध में बहुत कुछ जानकारी प्रदान कर देती है, किन्तु उन उच्च जीवन मूल्यों के सम्बन्ध में वह मौन ही है, जो एक सुसभ्य समाज के लिये आवश्यक है। आज शिक्षा के माध्यम से हम विद्यार्थियों को सूचनाओं से तो भर देते हैं, किन्तु उन्हें जीवन के उद्देश्यों और जीवन मूल्यों के सन्दर्भ में हम कोई जानकारी नहीं देते हैं। आज समाज में जो स्वार्थपरताजन्य, संघर्ष और हिंसा पनप रही है, उसका कारण शिक्षा की यही गलत दिशा ही है। हम शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति को सूचनाओं से भर देते हैं, किन्तु उसके व्यक्तित्व का निर्माण नहीं करते हैं।

वस्तुत: आज शिक्षा का उद्देश्य ही उपेक्षित है। आज शिक्षक और शिक्षार्थी, शासक और समाज कोई भी यह नहीं जानता कि हम क्यों पढ़ रहे हैं और क्यों पढ़ा रहे हैं? यदि वह जानता भी है तो या तो वह उदासीन है या फिर अपने को अकर्मण्यता की स्थिति में पाता है। आज शिक्षा के क्षेत्र में सर्वत्र अराजकता है। इस अराजकता या दिशाहीनता की स्थिति के सम्बन्ध में भी जो कुछ चिन्तन हुआ है, उसे शिक्षा को आजीविका से जोड़ने के अतिरिक्त कुछ नहीं हुआ। वर्तमान में रोजगारोन्मुख शिक्षा न होने से ही आज समाज में अशान्ति है, किन्तु मेरी दृष्टि में वर्तमान सामाजिक संघर्ष और तनाव का कारण व्यक्ति का जीवन के उद्देश्यों या मूल्यों के सम्बन्ध में अज्ञान या गलत दृष्टिकोण ही है। स्वार्थपरक भौतिकवादी जीवन-दृष्टि ही समस्त मानवीय दु:खों का मूल है।

सबसे पहले हमें यह निश्चय करना होगा कि हमारी शिक्षा का प्रयोजन क्या है? यदि यह कहा जाय कि शिक्षा का प्रयोजन रोजी-रोटी कमाने या मात्र उदरपूर्ति के योग्य वना देना है, तो यह एक भ्रान्त धारणा होगी। क्योंकि रोजी-रोटी की व्यवस्था तो अशिक्षित भी कर लेता है। पशु-पक्षी भी तो अपना पेट भरते ही हैं। अत: शिक्षा को रोजी-रोटी से जोड़ना गलत है। यह सत्य है कि बिना रोटी के मनुष्य का काम नहीं चल सकता। दैहिक जीवन मूल्यों में उदरपूर्ति व्यक्ति की प्राथमिक आवश्यकता है, इससे इंकार भी नहीं किया जा सकता है किन्तु इसे ही शिक्षा का ''अथ और इति'' नहीं बनाया जा सकता, क्योंकि यह कार्य शिक्षा के अभाव में भी सम्भव है। यदि उदरपूर्ति/आजीविका अर्जन ही जीवन का एक मात्र लक्ष्य हो तो फिर मनुष्य पशु से भिन्न नहीं होगा। कहा भी है–

''आहार निद्रा भय मैथुनं च सामान्यमेतद पशुभि: नराणाम्।
ज्ञानो हि तेषामधिको विशेषो ज्ञानेनहीना नर पशुभि: समाना।''

पुन: यदि यह कहा जाय कि शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य को अधिक सुख-सुविधा पूर्ण जीवन-जीने योग्य वनाना है, तो उसे भी हम शिक्षा का उद्देश्य नहीं कह सकते। क्योंकि मनुष्य के दु:ख और पीड़ाएँ भौतिक या दैहिक स्तर की ही नहीं है, वे मानसिक स्तर की भी हैं। सत्य तो यह है कि स्वार्थपरता, भोगाकांक्षा और तृष्णाजन्य मानसिक पीड़ाएँ ही अधिक कष्टकर हैं, वे ही मानवजाति में भय एवं संत्रास का कारण है। यदि भौतिक सुख-सुविधाओं का अम्बार लगा देने में ही सुख होता है जो आज

अमेरिका (U.S.A.) जैसे विकसित देशों का व्यक्ति अधिक सुखी होता, किन्तु हम देखते हैं वह संत्रास और तनाव से अधिक ग्रस्त है। यह सत्य है कि मनुष्य के लिये रोटी आवश्यक है, लेकिन वही उसके जीवन की इति नहीं है, ईसामसीह ने ठीक ही कहा था कि मनुष्य केवल रोटी से नहीं जी सकता है।[१] हम मनुष्य को भौतिक सुखों का अम्बार खड़ा करके भी सुखी नहीं बना सकते। सच्ची शिक्षा वही है जो मनुष्य को मानसिक संत्रास ओर तनाव से मुक्त कर सके। उसमें सहिष्णुता,समता, अनासक्ति, कर्त्तव्यपरायणता के गुणों को विकसित कर, उसकी स्वार्थपरता पर अंकुश लगा सके। जो शिक्षा मनुष्य में मानवीय मूल्यों का विकास न कर सके उसे क्या शिक्षा कहा जा सकता है? यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि आज शिक्षा का सम्बन्ध ''चारित्र'' से नही ''रोटी'' से जोड़ा जा रहा है। आज शिक्षा की सार्थकता को चरित्र-निर्माण में नहीं, चालाकी (डिप्लोमेसी) में खोजा जा रहा है। शासन भी इस मिथ्या धारणा से ग्रस्त है। नैतिक शिक्षा या चरित्र की शिक्षा में शासन को धर्म की ''बू'' आती है, उसे अपनी धर्मनिरपेक्षता दूषित होती दिखाई देती है, किन्तु क्या धर्म निरपेक्षता का अर्थ धर्महीनता या नीतिहीनता है? मैं समझता हूँ धर्म निरपेक्षता का मतलब केवल इतना ही है कि शासन किसी धर्म विशेष के साथ आवद्ध नहीं रहेगा। आज हुआ यह है कि धर्म निरपेक्षता के नाम पर इस देश में शिक्षा के क्षेत्र से नीति और चारित्र की शिक्षा को भी वहिष्कृत कर दिया गया है। चाहे हम अपने मोनोग्रामों में ''सा विद्या या विमुक्तये'' की सूक्तियाँ उद्धृत करते हों। किन्तु हमारी शिक्षा का उससे दूर का भी कोई रिश्ता नहीं रह गया है। आज की शिक्षा योजना में आध्यात्मिक एवं नैतिक मूल्यों की शिक्षा का कोई स्थान नहीं है, जवकि उच्च शिक्षा एवं माध्यमिक शिक्षा के सम्बन्ध में अभी तक विठाये गये तीनों आयोगों ने अपनी अनुशंसाओं में आध्यात्मिक एवं नैतिक मूल्यों की शिक्षा की महती आवश्यकता प्रतिपादित की है। आज का शिक्षक शिक्षार्थी दोनों ही अर्थ के दास हैं। एक ओर शिक्षक इसलिये नहीं पढ़ाता है कि उसे विद्यार्थी के चरित्र निर्माण या विकास में कोई रुचि है, उसकी दृष्टि केवल वेतन दिवस पर टिकी है, वह पढ़ने के लिये नहीं पढ़ाता, अपितु पैसे के लिए पढ़ाता है। दूसरी ओर शासन, सेठ और विद्यार्थी उसे गुरु नहीं ''नौकर'' समझते हैं। जव गुरु नौकर है तो फिर संस्कार एवं चरित्र निर्माण की अपेक्षा करना ही व्यर्थ है। आज तो गुरु शिष्य के बीच भाव-मोल होता है, सौदा होता है। चाहे हमारे प्राचीन ग्रन्थों में ''विद्यायाऽमृतमश्नुते'' की वात कहीं गई है हो, किन्तु आज तो विद्या अर्थकरी हो गयी है। शिक्षा के मूल-भूत उद्देश्यों को ही हम भूल रहे हैं। वर्तमान सन्दर्भ में फिराक का यह कथन कितना सटीक है, जव वे कहते है–

सभी कुछ हो रहा है, इस तरक्की के जमाने में,
मगर क्या गजव है कि आदमी इनसां नहीं होता।

आज की शिक्षा चाहे विद्यार्थी को वकील, डाक्टर, इंजीनियर आदि सभी कुछ वना रही है, किन्तु यह निश्चित है कि इन्सान नहीं बना पा रही है। जव तक शिक्षा को चरित्र निर्माण के साथ नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों के साथ नहीं जोड़ा जाता है तव तक वह मनुष्य का निर्माण नहीं कर सकेगी। हमारा प्राथमिक दायित्व मनुष्य को मनुष्य वनाना है। वालक को मानवता के संस्कार देना है। अमेरिका के प्रवुद्ध विचारक टफ्ट्स शिक्षा के उद्देश्य, पद्धति और स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखते है– ''शिक्षा चरित्र निर्माण के लिये, चरित्र द्वारा चरित्र की शिक्षा है।'' इस प्रकार उनकी दृष्टि में शिक्षा का अथ और इति दोनों ही वालकों में चरित्र निर्माण एवं सुसंस्कारों का वपन है। भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात् शिक्षा के स्वरूप का निर्धारण करने हेतु सुप्रसिद्ध दार्शनिक डॉ० राधाकृष्णन्, सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ० दौलतसिंह कोठारी और शिक्षा शास्त्री, डा० मुदालियर की अध्यक्षताओं में जो विभिन्न आयोग गठित हुये थे उन सवका निष्कर्ष यही था कि शिक्षा को मानवीय मूल्यों से जोड़ा जाय। जव तक शिक्षा मानवीय मूल्यों से नहीं जुड़ेगी, उसमें चरित्रनिर्माण और सुसंस्कारों के वपन का प्रयास नहीं होगा, तव तक विद्यालयों एवं महाविद्यालयों रूपी शिक्षा के इन कारखानों से साक्षर नहीं राक्षस ही पैदा होंगे।

भारतीय चिन्तन प्राचीनकाल से ही इस सम्बन्ध में सजग रहा है। औपनिषदिक युग में ही शिक्षा के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहा गया था– सा विद्या या विमुक्तये'' अर्थात् विद्या वही जो विमुक्ति प्रदान करे। प्रश्न हो सकता है कि यहाँ विमुक्ति से हमारा क्या तात्पर्य है? विमुक्ति का तात्पर्य मानवीय संत्रास और तनावों से मुक्ति है, अपनत्व और ममत्व के क्षुद्र घेरों से विमुक्ति है। मुक्ति का तात्पर्य है– अहंकार, आसक्ति, राग-द्वेष और तृष्णा से मुक्ति। यही वात जैन आगम इसिभासियाई (ऋषिभासित) में कही गई है–

इमा विज्जा महाविज्जा, सव्वविज्जाण उत्तमा।
जं विज्जं साइहत्ताणं सव्वदुक्खाण मुच्चती।।
जेण वन्धं न मोक्खं च, जीवाणं गतिरागतिं।
आयाभावं च जाणाति, सा विज्जया दुक्खमोयणी।।

–इसिभासियाइं, १७/१-२

वही विद्या महाविद्या है और वही विद्या समस्त विद्याओं में उत्तम है, जिसकी साधना करने से समस्त दु:खों से मुक्ति मिलती है। विद्या दु:ख मोचनी है। जैन आचार्यों ने उसी विद्या को उत्तम माना है जिसके द्वारा दु:खों से मुक्ति हो और आत्मा के शुद्ध स्वरूप का साक्षात्कार हो।

अव प्रश्न यह उपस्थित है कि दु:ख क्या है और किस दु:ख से मुक्त होना है? यह सत्य है कि दु:ख से हमारा तात्पर्य दैहिक दु:खों से भी होता है, किन्तु ये दैहिक दु:ख प्रथम तो कभी भी पूर्णतया समाप्त नहीं होते, क्योंकि उनका केन्द्र हमारी चेतना न होकर हमारा शरीर होता है। जैन परम्परा के अनुसार तीर्थंकर अपनी वीतराग दशा में भी दैहिक दु:खों से पूर्णत: मुक्त नहीं हो सकता। जब तक देह है क्षुधा, पिपासा आदि दु:ख तो रहेंगे ही। अत: जिस दु:ख से विमुक्ति प्राप्त करनी है, वे दैहिक नहीं मानसिक है। व्यक्ति की रागात्मकता, आसक्ति या तृष्णा ही एक ऐसा तत्व है, जिसकी उपस्थिति में मनुष्य दु:खों से मुक्ति प्राप्त नहीं कर पाता है। इससे स्पष्ट होता है कि जैन आचार्यों की दृष्टि में शिक्षा का प्रयोजन मात्र रोजी-रोटी प्राप्त कर लेना नहीं रहा है। जो शिक्षा व्यक्ति में आध्यात्मिक आनन्द या आत्मतोष नहीं दे सकती, वह शिक्षा व्यर्थ है। आत्मतोष ही शिक्षा का सम्यक् प्रयोजन है। शिक्षा-पद्धति स्पष्ट करते हुए ''इसिभासियाइं'' में कहा गयाहै कि जिस प्रकार एक योग्य चिकित्सक सर्वप्रथम रोग को जानता है फिर उस रोग के कारणों का निश्चय करता है, फिर रोग की औषधि का निर्णय करता है और फिर उस औषधि द्वारा रोग की चिकित्सा करता है।[४] उसी प्रकार हमें सर्वप्रथम मनुष्यों के दु:ख के स्वरूप को समझना होता है, तत्पश्चात् दु:ख के कारणों का विश्लेषण करके फिर उन कारणों के निराकरण का उपाय खोजना होता है और अन्त में इन उपायों द्वारा उन कारणों का निराकरण किया जाता है। यही वातें जैन धर्म में शिक्षा के प्रयोजन एवं पद्धति को स्पष्ट करती है। सम्यक् शिक्षा वही है जो मानवीय दु:खों के स्वरूप को समझे, उनके कारणों का विश्लेषण करे फिर उनके निराकरण के उपाय खोजे और उन उपायों का प्रयोग करके दु:खों से मुक्त हो। वस्तुत: आज की हमारी जो शिक्षा नीति है, उसमें हम इस पद्धति को नहीं अपनाते। शिक्षा से हमारा तात्पर्य मात्र वालक के मस्तिष्क को सूचनाओं से भर देना है। जब तक उसके सामने जीवन-मूल्यों को स्पष्ट नहीं करते, तव तक हम शिक्षा के प्रयोजन को न तो सम्यक् प्रकार से समझ ही पाते हैं न मनुष्य के दु:खों का निराकरण ही कर पाते है। जैन आगमों में ऋषिभाषित एवं आचारांग से लेकर प्रकीर्णकों तक में शिक्षा के उद्देश्य की विभिन्न दृष्टियों से विवेचना की गयी है। यदि उस समग्र विवेचना को एक ही वाक्य में कहना हो तो जैन आचार्यों की दृष्टि में शिक्षा का प्रयोजन चित्तवृत्तियों एवं आचार की विशुद्धि है। चित्तवृत्तियों का दर्शन ज्ञान-यात्रा का प्रारम्भ है। आचारांग में मैं कौन हूँ? इसे ही साधना-यात्रा का प्रारम्भ बिन्दु कहा गया है। आचारांग ही नहीं सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में आत्म-जिज्ञासा से ही ज्ञान-साधना का प्रारम्भ माना गया है, उपनिषद का ऋषि कहता है ''आत्मानं विद्धि', आत्मा को जानो। बुद्ध ने ''अत्तानं'' कहकर इसी तथ्य की पुष्टि की। ज्ञातव्य है कि यहाँ आत्मज्ञान का तात्पर्य अमूर्त आत्म तत्व की खोज नहीं, अपितु अपने ही चित्त की विकृतियों और वासनाओं का दर्शन है। चित्तवृत्ति और आचार की विशुद्धि की प्रक्रिया तब ही प्रारम्भ हो सकती है, जब हम अपने विकारों और वासनाओं को देखें, क्योंकि जब तक चित्त में विकारों, वासनाओं और उनके कारणों के प्रति सजगता नहीं आती तब तक चरित्र शुद्धि की प्रक्रिया प्रारम्भ ही नहीं हो सकती। आचारांग में ही कहा गया है कि जो मन का ज्ञाता होता है, वही निर्ग्रन्थ (विकार-मुक्त) है।''[५]

जैन आचार्यों की दृष्टि में उस शिक्षा या ज्ञान का कोई अर्थ नहीं है जो चारित्र शुद्धि या आचार शुद्धि की दिशा में गतिशील न करता हो, इसीलिए सूत्रकृतांग में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि ''विज्जाचरणं पमोक्ख''[६] अर्थात् विद्या और आचरण से ही विमुक्ति की प्राप्ति होती है। उत्तराध्ययनसूत्र में शिक्षा के प्रयोजन को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि श्रुत की आराधना से जीव अज्ञान का क्षय करता है और संक्लेश को प्राप्त नहीं होता।[७] इसे और स्पष्ट करते हुए इसी ग्रन्थ में पुन: कहा गया है कि जिस प्रकार धागे से युक्त सुई गिर जाने पर भी विनष्ट नहीं होती है अर्थात् खोजी जा सकती है, उसी प्रकार श्रुत सम्पन्न जीव संसार में विनष्ट नहीं होता।[८] इसी ग्रन्थ में अन्यत्र यह भी कहा गया है कि ज्ञान, अज्ञान और मोह का विनाश करके सर्व विषयों को प्रकाशित करता है।[९] यह स्पष्ट है कि ज्ञान-साधना का प्रयोजन अज्ञान के साथ-साथ मोह को भी समाप्त करना है। जैन आचार्यों की दृष्टि में अज्ञान और मोह में अन्तर है। मोह अनात्म विषयों के प्रति आत्म बुद्धि है, वह राग या आसक्ति का उद्भावक है उसी से क्रोध, मान, माया और लोभ इन चारों कषायों का जन्म होता है। अत: उत्तराध्ययन के अनुसार जो व्यक्ति की क्रोध, मान, माया आदि की दूषित चित्त वृत्तियों पर अंकुश लगाये, वही सच्ची शिक्षा है।[१०] केवल वस्तुओं के सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त कर लेना शिक्षा का प्रयोजन नहीं है। उसका प्रयोजन तो व्यक्ति को वासनाओं और विकारों से मुक्त कराना है। शिक्षा व्यक्तित्व

या चरित्र का उदात्तीकरण है। जब तक शिक्षा को केवल जानकारियों तक सीमित रखा जायेगा तब तक वह व्यक्तित्व की निर्माता नहीं बन सकेगी। दशवैकालिक सूत्र में शिक्षा के चार उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि–

१. मुझे श्रुत ज्ञान (आगम ज्ञान) प्राप्त होगा, इसलिए अध्ययन करना चाहिये।

२. मैं एकाग्रचित्त होऊँगा, इसलिए अध्ययन करना चाहिये।

३. मैं अपने आप को धर्म में स्थापित करूँगा, इसलिए अध्ययन करना चाहिये।

४. मैं स्वयं धर्म में स्थित होकर दूसरों को धर्म में स्थित करूंगा, इसलिए अध्ययन करना चाहिये।[११]

इस प्रकार दशवैकालिक के अनुसार अध्ययन का प्रयोजन ज्ञान प्राप्ति के साथ-साथ चित्त की एकाग्रता तथा धर्म (सदाचार) में स्वयं स्थित होना तथा दूसरों को स्थित करना माना गया है। जैन आचार्यो की दृष्टि में जो शिक्षा चरित्र शुद्धि में सहायक नहीं होती, उसका कोई अर्थ नहीं है। चंद्रवेध्यक नामक प्रकीर्णक में ज्ञान और सदाचार में तादाम्य स्थापित करते हुए कहा गया है कि जो विनय है, वही ज्ञान है और जो ज्ञान है उसे ही विनय कहा जाता है।[१२] श्रुतज्ञान में कुशल हेतु और कारण का जानकार व्यक्ति भी यदि अविनीत और अहंकारी है तो वह ज्ञानियों द्वारा प्रशंसनीय नहीं है।[१३] जो अल्पश्रुत होकर भी विनीत है वही कर्म का क्षय कर मुक्ति प्राप्त करता है, जो बहुश्रुत होकर भी अविनीत, अल्पश्रद्धा और संवेग युक्त है वह चरित्र की आराधना नहीं कर पाता है।[१४] जिस प्रकार अंधे व्यक्ति के लिये करोड़ों दीपक भी निरर्थक हैं उसी प्रकार अविनीत (असदाचारी) व्यक्ति के बहुत अधिक शास्त्रज्ञान का भी क्या प्रयोजन? जो व्यक्ति जिनेन्द्र द्वारा उपदृष्ट अति विस्तृत ज्ञान को जानने में चाहे समर्थ न ही हो, फिर भी जो सदाचार से सम्पन्न है वस्तुत: वह धन्य है, और वही ज्ञानी है।[१५] जैन आचार्य यह मानते हैं कि ज्ञान आचरण का हेतु है, मात्र वह ज्ञान जो व्यक्ति की आचार शुद्धि का कारण नहीं होता, निरर्थक ही माना गया है। जिस प्रकार शस्त्र से रहित योद्धा और योद्धा से रहित शस्त्र निरर्थक होता है, उसी प्रकार से रहित आचरण और आचरण से रहित ज्ञान निरर्थक होता है।

जैनागम उत्तराध्ययनसूत्र में शिक्षा प्राप्ति में बाधक निम्न पाँच कारणों का उल्लेख हुआ है (१) अभिमान (२) क्रोध (३) प्रमाद (४) आलस्य और (५) रोग।[१६] इसके विपरीत उसमें उन आठ कारणों का भी उल्लेख हुआ है जिन्हें हम शिक्षा प्राप्त करने का साधक तत्व कह सकते हैं–(१) जो अधिक हँसी-मजाक नहीं करता हो (२) जो अपनी वासनाओं पर नियन्त्रण रखता हो, (३) जो किसी की गुप्त बात को प्रकट नहीं करता हो (४) जो अशील अर्थात् आचारहीन न हो (५) जो दूषित आचार वाला न हो (६) जो रस लोलुप न हो (७) जो क्रोध न करता हो और (८) जो सत्य में अनुरक्त हो।[१७] इससे यही फलित होता है कि जैनधर्म में शिक्षा का सम्बन्ध चारित्रिक मूल्यों से रहा है।

वस्तुत: जैन आचार्यो को ज्ञान और आचरण का द्वैत मान्य नहीं है वे कहते हैं– जो ज्ञान है, वही आचरण है, जो आचरण है, वही आगम-ज्ञान का सार है।[१८] इस प्रकार हम देखते हैं कि जैन परम्परा में उस शिक्षा को निरर्थक ही माना गया है जो व्यक्ति का चारित्रिक-विकास या व्यक्तित्व-विकास करने में समर्थ नहीं है। जो शिक्षा मनुष्य को पाशविक वासनाओं से ऊपर नहीं उठा सके, वह वास्तविक शिक्षा नहीं है।

जैन आचार्य शिक्षा का अर्थ व्यक्ति को जीवन और जगत के सम्बन्ध में जानकारियों से भर देना नहीं मानते हैं, अपितु वे इसका उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास या सद्गुणों का विकास मानते हैं, किन्तु इसका तात्पर्य यह भी नहीं है कि वे शिक्षा को आजीविका या कलात्मक कुशलता से अलग कर देते हैं। रायपसेनीयसुत्त में तीन प्रकार के आचार्यो का उल्लेख है – १. कलाचार्य २. शिल्पाचार्य एवं ३. धर्माचार्य।[१९] उसमें इन तीनों आचार्यो के प्रति शिष्य के कर्त्तव्यों का भी निर्देश है। इससे यह फलित है कि जैन चिन्तकों की दृष्टि में शिक्षा व्यवस्था तीन प्रकार की थी। कलाचार्य का कार्य जीवनोपयोगी कलाओं अर्थात् ज्ञान-विज्ञान और ललित कलाओं की शिक्षा देना था। भाषा, लिपि, गणित के साथ-साथ खगोल, भूगोल, ज्योतिष, आयुर्वेद, संगीत, नृत्य आदि की भी शिक्षा कलाचार्य देते थे। वस्तुत: आज हमारे विश्वविद्यालयों में कला, सामाजिक विज्ञान एवं विज्ञान संकाय जो कार्य करते हैं, उन्हीं से मिलता-जुलता कार्य कलाचार्य का था। जैनागमों में पुरुष की ६४ एवं स्त्री की ७२ कलाओं का निर्देश उपलब्ध है।[२०] इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि शिक्षा जीवन के सभी पहलुओं का स्पर्श करती है।

कलाचार्य के बाद दूसरा स्थान शिल्पाचार्य का था। शिल्पाचार्य वस्तुत: वह व्यक्ति होता था जो आजीविका अर्जन से सम्बन्धित विविध प्रकार के शिल्पों की शिक्षा देता था। आज जिस प्रकार विभिन्न औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थायें प्रशिक्षण प्रदान करती हैं, उस काल में यही कार्य शिल्पाचार्य करते। इनके ऊपर धर्माचार्य का स्थान था। इनका दायित्व वस्तुत: व्यक्ति के

चारित्रिक गुणों का विकास करना था। वे शील और सदाचार की शिक्षा देते थे। इस प्रकार प्राचीन काल में शिक्षा को तीन भागों में विभक्त किया गया था और इन तीनों विभागों का दायित्व तत्-तत् विषयों के आचार्य निर्वाह करते थे।

ज़ैन परम्परा में कलाचार्य, शिल्पाचार्य और धर्माचार्य के जो निर्द्रेश उपलब्ध होते हैं उनसे ऐसा लगता है कि भारतीय चिन्तन में जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चार पुरुषार्थों की शिक्षा की व्यवस्था अलग-अलग तीन आचार्यों के लिए नियत की गई थी। शिल्पाचार्य का कार्य अर्थ पुरुषार्थ की शिक्षा देना था, तो कलाचार्य का काम भाषा, लिपि और गणित की शिक्षा के साथ-साथ काम पुरुषार्थ की शिक्षा देना था। धर्माचार्य का कार्य मात्र धर्म और मोक्ष पुरुषार्थ से ही सम्बन्धित था इस प्रकार विविध जीवन मूल्यों की शिक्षा के लिए विविध आचार्यों की व्यवस्था थी, चूँकि जैनधर्म में मूलत: एक निवृत्ति मूलक की शिक्षा के लिए विविध आचार्यो की व्यवस्था थी। चूँकि जैनधर्म मूलत: एक निवृत्ति मूलक और संन्यासपरक धर्म था इसलिए धर्माचार्य का कार्य धर्म और मोक्ष की पुरुषार्थ की शिक्षा देने तक ही सीमित रखा गया था। इस प्रकार जीवन के विविध मूल्यों के आधार पर शिक्षा की व्यवस्था भी अलग-अलग थी। आज हम सम्पूर्ण जीवन मूल्यों के लिए जो एक ही प्रकार की शिक्षा व्यवस्था की बात करते हैं, वह मूल में भ्रांति है, जहाँ शिल्पाचार्य और कलाचार्य वृत्तिमूलक शिक्षा प्रदान करते थे, वहाँ धर्माचार्य निवृत्ति मूलक शिक्षा प्रदान करते थे। पुन: यह भी आवश्यक है कि जो आचार्य जिस प्रकार की जीवन शैली जीता है, वह वैसी ही शिक्षा प्रदान कर सकता है। अत: धर्माचार्य से अर्थ और काम की शिक्षा और शिल्पाचार्य एवं कलाचार्य से धर्म एवं मोक्ष पुरुषार्थ की शिक्षा की अपेक्षा करना उचित नहीं है। वर्तमान सन्दर्भ में यह आवश्यक है कि हम शिक्षा के विविध क्षेत्रों का दायित्व विविध आचार्यो को सौंपे और इस बात का विशेष ध्यान रखें कि जो व्यक्ति जिस प्रकार की शिक्षा देने के योग्य हो, वही उसका दायित्व सम्भालें। जब तक ऐसा नहीं होगा तब तक शिक्षा के क्षेत्र में मानव के सर्वागीण विकास की कल्पना सार्थक नहीं होगी। ''रायपसेनीयसुत्त'' में कलाचार्य, शिल्पाचार्य और धर्माचार्य की व्यवस्था दी गयी है इससे यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा के ये तीनों क्षेत्र मानव जीवन के तीन मूल्यों से सम्बन्धित थे तथा एक-दूसरे से पृथक थे और सामान्य व्यक्ति तीनों ही प्रकार की शिक्षायें प्राप्त करता था, फिर भी प्राचीनकाल में यह शिक्षा पद्धति व्यक्ति के लिये भार स्वरूप नहीं थी।

जहाँ तक आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षा का प्रश्न था यह धर्माचार्य के सान्निध्य में उपदेशों के श्रवण के माध्यम से प्राप्त की जाती थी। इसके लिए व्यक्ति को कुछ व्यय नहीं करना होता है। सामान्यतया श्रमण परम्परा में धर्माचार्य भिक्षाचर्या से ही अपनी उदरपूर्ति करते थे और उनके कोई स्थायी आश्रम आदि भी नहीं होते थे, अत: वे व्यक्ति और समाज पर भार स्वरूप नहीं होते थे। इसके विपरीत वैदिक परम्परा में धर्माचार्य सपरिवार अपने आश्रमों में रहते थे तथा धर्माचार्य और कलाचार्य का कार्य एक ही व्यक्ति करता था कुछ कलाचार्य सम्पन्न व्यक्तियों या राजाओं या सामन्तों के घर जाकर भी शिक्षा प्रदान करते थे फिर भी सामान्यतया, वे शिक्षा अपने आश्रमों में ही प्रदान करते थे। आश्रम पद्धति की विशेषता यह थी कि विद्यार्थी और शिक्षक अपनी आजीविका या तो अपने श्रम से उपार्जित करते अथवा भिक्षाचर्या के माध्यम से उसकी पूर्ति करते। इसलिए उस युग में शिक्षा न तो व्यक्ति पर भार स्वरूप थी ओर न राज्य पर। समृद्ध व्यक्ति अथवा राजा समय-समय पर दानादि देकर शिक्षकों को सम्मानित अवश्य करते थे। विद्यार्थी भी अपनी शिक्षापूर्ण करने के पश्चात् जब स्वयं आजीविका अर्जन करने लगता, तो वह भी गुरु दक्षिणा देकर अपने गुरु को सम्मानित करता था। फिर भी यह समग्र व्यवस्था मूलत: ऐच्छिक थी। शिल्पाचार्य आजीविका अर्जन से सम्बन्धित विभिन्न शिल्पों की शिक्षा देते थे। विद्यार्थी शिल्पाचार्य के सान्निध्य में रहकर ही शिल्प सीखते थे। इसमें शिक्षण और आजीविका अर्जन की प्रक्रिया साथ-साथ ही चलती थी। सामान्यतया शिक्षा पिता-पुत्र की परम्परा से चलती थी। किन्तु कभी-कभी व्यक्ति दूसरों के सान्निध्य में भी ऐसी शिक्षा प्राप्त करता था। ''रायपसेनीय'' में स्पष्ट रूप में यह उल्लिखित है कि किस प्रकार के शिक्षक को किस प्रकार से सम्मानित करना चाहिये।[२१] शिल्पाचार्य और कलाचार्य के सम्मान की पद्धति धर्माचार्य के सम्मान की पद्धति से भिन्न थी। कलाचार्य और शिल्पाचार्य की शिष्यगण तेलमालिश, स्नान आदि के द्वारा न केवल शारीरिक सेवा करते थे, अपितु उन्हें वस्त्र, आभूषण आदि से अलंकृत कर सरस भोजन करवाते थे तथा उनकी आजीविका एवं उनके पुत्रादि के भरण-पोषण की योग्य व्यवस्था भी करते थे। दूसरी ओर धर्माचार्य को वन्दन नमस्कार करना, उसके उपदेशों को श्रद्धापूर्वक सुनना, भिक्षार्थ आने पर आहारादि से उसका सम्मान करना– यही शिक्षार्थी का कर्त्तव्य माना गया था।[२२] ज्ञातव्य है कि जहाँ शिल्पाचार्य और कलाचार्य अपने शिष्यों से भूमि, मुद्रा आदि के दान की अपेक्षा करते थे, वहाँ

धर्माचार्य अपरिग्रही होने के कारण अपने प्रति श्रद्धाभाव को छोड़कर अन्य कोई अपेक्षा नहीं रखते थे। यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि शिल्पाचार्य और कलाचार्य सामान्यतया गृहस्थ होते थे और इसलिए उन्हें अपने पारिवारिक दायित्वों को सम्पन्न करने के लिए शिष्यों से मुद्रा आदि की अपेक्षा होती, किन्तु धर्माचार्य की स्थिति इससे भिन्न थी, वे सामान्य रूप से सन्यासी और अपरिग्रही होते थे, अत: उनकी कोई अपेक्षा नहीं होती थी। वस्तुत: नैतिकता और सदाचार की शिक्षा देने का अधिकारी वही व्यक्ति हो सकता था जो स्वयं अपने जीवन में नैतिकता का आचरण करता हो और यही कारण था कि उसके उपदेशों एवं आदेशों का प्रभाव होता था। आज हम नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा देने का प्रथम तो कोई प्रयत्न ही नहीं करते दूसरे उसकी अपेक्षा हम उन शिक्षकों से करते हैं जो स्वयं उस प्रकार का जीवन नहीं जी रहे होते हैं, फलत: उनकी शिक्षा को कोई प्रभाव भी नहीं होता। यही कारण है कि आज विद्यार्थियों में चरित्र-निष्ठा का अभाव पाया जाता है क्योंकि यदि शिक्षक स्वयं चरित्रवान नहीं होगा तो वह अपने विद्यार्थियों को वैसी शिक्षा नहीं दे पायेगा, कम से कम धर्माचार्य के सन्दर्भ में तो यह बात आवश्यक है। जब तब उसके जीवन में चारित्रिक और नैतिक मूल्य साकार नहीं होंगे, वह अपने शिष्यों पर उनका प्रभाव डालने में समर्थ नहीं होगा। चन्द्रवेध्यक प्रकीर्णक कहता है कि सम्यक् शिक्षा के प्रदाता आचार्य निश्चय ही सुलभ नहीं होते।[२३]

जैन आगमों में इस प्रश्न पर भी गम्भीरता से विचार किया गया है कि शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी कौन है? चन्द्रवेध्यक प्रकीर्णक में उन व्यक्तियों को शिक्षा के अयोग्य माना गया है, जो अविनीत हों, जो आचार्य का और विद्या का तिरस्कार करते हों, मिथ्या दृष्टिकोण से युक्त हों तथा मात्र सांसारिक भोगों के लिए विद्या प्राप्त करने की आकांक्षा रखते हों।[२४] इसी प्रकार योग्य आचार्य कौन हो सकता है इसकी चर्चा करते हुए कहा गया है कि जो देश और काल का ज्ञाता, अक्षर को समझने वाला अभ्रान्त, धैर्यवान अनुवर्त्तक और अमायावी होता है, साथ ही लौकिक, आध्यात्मिक और वैदिक शास्त्रों का ज्ञाता होता है, वही शिक्षा देने का अधिकारी है। इस ग्रन्थ में आचार्य की उपमा दीपक से दी गयी है। दीपक के समान आचार्य स्वयं भी प्रकाशित होते हैं और दूसरों को भी प्रकाशित करते हैं।[२६]

श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही परम्पराओं में आचार्य के गुणों की संख्या ३६ स्वीकार की गयी है किन्तु ये ३६ गुण कौन-कौन हैं इस सम्बन्ध में विभिन्न ग्रन्थकारों के विभिन्न दृष्टिकोण हैं। भगवतीआराधना में आचारत्व आदि ८ गुणों के साथ-साथ १० स्थित कल्प १२ तप और ६ आवश्यक, ऐसे ३६ गुण माने गये हैं।[२७] इसी के टीकाकार अपराजितसूरि ने ८ ज्ञानाचार, ८ दर्शनाचार, १२ तप, ५ समिति और ३ गुप्ति ये ३६ गुणों माने हैं।[२८] श्वेताम्वर परम्परा में स्थानांग में आचार्य को आठ प्रकार की निम्न गणि सम्पदाओं से युक्त बतलाया गया है– १. आचार सम्पदा, २. श्रुत सम्पदा, ३. शरीर सम्पदा, ४. वचन सम्पदा, ५. वाचना सम्पदा, ६. मति सम्पदा, ७. प्रयोग सम्पदा (वादकौशल) और ८. संग्रह परिज्ञा (संघ व्यवस्था में निपुणता)।[२९] प्रवचनसारोद्धार में आचार्य के ३६ गुणों का तीन प्रकार से विवेचन किया गया है। सर्वप्रथम उपरोक्त ८ गणि सम्पदा के द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से ३२ भेद होते हैं, इनमें आचार्य, श्रुत, विक्षेपणा और निर्घाटन–ये विनय में चार भेद सम्मिलित करने पर कुल २४ भेद होते हैं, इनमें १२ प्रकार का तप मिलाने पर ३६ भेद होते हैं, प्रकारान्तर से ज्ञानाचार, दर्शनाचार और चारित्राचार के आठ-आठ भेद करने पर २४ भेद होते हैं। उनमें १२ प्रकार का तप मिलाने पर ३६ भेद होते हैं। कहीं-कहीं आठ गण सम्पदा, १० स्थितिकल्प, १२ तप ओर ६ आवश्यक मिलाकर आचार्य में ३६ गुण माने गये हैं, प्रवचनसारोद्धार के टीकाकार ने आचार्य के निम्न ३६ गुणों का भी उल्लेख किया है– १. देशयुत, २. कुलयुत, ३. जातियुत, ४. रूपयुत, ५. संहननयुत, ६. घृतियुत, ७. अनाशंसी, ८. अविकत्थन, ९. अयाची १०. स्थिर परिपाटी ११. गृहीतवाक्य, १२. जितपर्षतु, १३. जितनिद्रा, १४. मध्यस्थ, १५. देशज्ञ, १६. कालज्ञ, १७. भावज्ञ, १८. आसन्नलब्धप्रतिम, १९. नानाविध देश भाषज्ञ, २०. ज्ञानाचार, २१. दर्शनाचार, २२. चारित्राचार, २३. तपाचार, २४. वीर्याचार, २५. सूत्रपात, २६. आहरलनिपुण, २७. हेतुनिपुण, २८. उपनयनिपुण, २९. नयनिपुण, ३०. ग्राहणाकुशल, ३१. स्वसमयज्ञ, ३२. परसमयज्ञ, ३३. गम्भीर, ३४. दीप्तिमान, ३५. कल्याण करने वाला और ३६ सौम्य।[३०]

इन गुणों की चर्चा से यह स्पष्ट हो जाता है कि जैन आगमों में आचार्य कैसा होना चाहिये इस प्रश्न पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया था और मात्र चरित्रवान एवं उच्च मूल्यों के प्रति निष्ठावान व्यक्ति को ही आचार्यत्व के योग्य माना गया था।

इससे यह फलित भी होता है कि जो साधक अहिंसादि महाव्रतों का स्वयं पालन करता है तथा आजीविका अर्जन हेतु मात्र भिक्षा पर निर्भर रहता है जो स्वार्थ से परे हैं, वही व्यक्ति आध्यात्मिक एवं नैतिक मूल्यों का शिक्षक होने का अधिकारी है।

विद्यार्थी कैसा होना चाहिये, इसकी चर्चा करते हुए उत्तराध्ययन सूत्र में कहा गया है कि जो भिक्षाजीवी, विनीत, सज्जन व्यक्तियों के गुणों को जानने वाला, आचार्य के मनोभावों के अनुरूप आचरण करने वाला, सर्दी-गर्मी भूख-प्यास आदि को सहन करने वाला, लाभ-अलाभ में विचलित नहीं होने वाला, सेवा तथा स्वाध्याय हेतु तत्पर, अहंकार रहित और आचार्य के कठोर वचनों को सहन करने में समर्थ शिष्य ही शिक्षा का अधिकारी है।[३१] ग्रन्थकार यह भी कहता है कि शास्त्रों में शिष्य की जो परीक्षा विधि कही गयी है उसके माध्यम से शिष्य की परीक्षा करके ही उसे मोक्ष मार्ग में प्रवृत्त करना चाहिये।[३२]

उत्तराध्ययन सूत्र में शिष्य के आचार-व्यवहार के सन्दर्भ में निर्देश करते हुए कहा गया है कि जो शिष्य गुरु के सान्निध्य में रहता है, गुरु के संकेत व मनोभावों को समझता है, वही विनीत कहलाता है, इसके विपरीत आचरणवाला अविनीत। योग्य शिष्य सदैव गुरु के निकट रहे, उनसे अर्थ पूर्ण बात सीखे और निरर्थक बातों को छोड़ दे, गुरु द्वारा अनुशासित होने पर क्रोध न करे, शूद्र व्यक्तियों के संसर्ग से दूर रहे, यदि कोई गलती हो गयी हो तो उसे छिपाये नहीं अपितु यथार्थ रूप में प्रकट कर दे। बिना पूछे गुरु की बातों मे बीच में न बोले, अध्ययन काल में सदैव अध्ययन करे। आचार्य के समक्ष बराबरी से न बैठे, उनके आगे, न पीछे सटकर बैठे। गुरु के समीप उनसे अपने शरीर को सटाकर भी नहीं बैठे, बैठे-बैठे ही न तो कुछ पूछे और न उत्तर दे। गुरु के समीप उकडूं आसन से बैठकर हाथ जोड़कर जो पूछना हो उसे विनयपूर्वक पूछे।[३३]

ये सभी तथ्य यह सूचित करते हैं कि जैन शिक्षा व्यवस्था में शिष्य के लिए अनुशासित जीवन जीना आवश्यक था। यह कठोर अनुशासन वस्तुत: बाहर से थोपा हुआ नहीं था, अपितु मूल्यात्मक शिक्षा के माध्यम से इसका विकास अन्दर से ही होता था। क्योंकि जैन शिक्षा व्यवस्था में सामान्यतया शिष्य में ताड़न-वर्जन की कोई व्यवस्था नहीं थी। आचार्य और शिष्य दोनों के लिए ही आगम में उल्लेख अनुशासन का पालन करना आवश्यक था। जैन शिक्षा विधि में अनुशासन आत्मानुशासन था। व्यक्ति को दूसरे को अनुशासित करने का अधिकार तभी माना गया था, जब वह स्वयं अनुशासित जीवन जीता हो। आचार्य तुलसी ने निज पर शासन फिर अनुशासन का जो सूत्र दिया है वह वस्तुत: जैन शिक्षा विधि का सार है। शिक्षा के साथ जब तक जीवन में स्वस्फूर्त अनुशासन नहीं आयेगा, तब तक वह सार्थक नहीं होगी।

सन्दर्भ :

१. *बाइबिल, उद्धृत नये संकेत, आचार्यरजनीश, पृ. ५७*
२. *इसिभासियाइं, १७/१*
३. *आचारांग, १/१/१*
४. *कठोपनिषद, ३/३*
५. *आचारांग, २/३/१५/१*
६. *सूत्रकृतांग, १/१२/११*
७. *उत्तराध्ययन, ३२/२*
८. *वही, २९/६०*
९. *वही, ३२/२*
१०. *वही, ३२/१०२-१०६*
११. *दशवैकालिक, ९/४*
१२. *चन्द्रवेध्यक, ६२*
१३. *वही, ५६*
१४. *वही, ६४*
१५. *वही, ६८*
१६. *उत्तराध्ययनसूत्र, ११/३*
१७. *वही, ११/४-५*
१८. *चन्द्रवेध्यक, ७७*
१९. *रायपसेनीयसुत्त (घासीलालजी म.) सूत्र १५६, पृ. ३३८-३४१*
२०. *समवायांग-समवाय ७२ (देखें–टीका)*
२१. *रायसेनीयसुत्त (घासीलालजी म.) सूत्र १५६, पृ. ३३८-३४१*
२२. *वही, पृ. ३३८-३४१*
२३. *चन्द्रवेध्यक, २०*
२४. *वही, ५१-५३*
२५. *वही, २५, २६*
२६. *वही, ३०*
२७. *भगवतीआराधना, ५२८*
२८. *वही, टीका*
२९. *स्थानांग-स्थान, ८/१५*
३०. *प्रवचन सारोद्धार, द्वार ६४*
३१. *देखें – उत्तराध्ययनसूत्र, अध्याय १ एवं ११*
३२. *चन्द्रवेध्यक, ५३*
३३. *उत्तराध्ययनसूत्र, १/२-२२*

■

महावीर का महावीरत्व

वीरता, आत्मा का जीवट है। अनन्त शक्ति धर्मा आत्मा का साक्षात्कार जिसने भी साधा वह शौर्यवान बना, 'महावीर' बना। उसे बनना कुछ नहीं था, और वह कुछ नहीं बना। सहज बन गया। जो सहज होगा वह श्रद्धा शील व विनीत होगा। काल-सत्य का आग्रही बनकर उसे सत्याग्रह नहीं करना। कारण साफ कि महावीर का समय आग्रही अनुनय विनय का नहीं, असहिष्णुता, हिंसा एवं आग्रही हठ का था, शास्त्रीय दम्भ का था। महावीर चला अकेला, उसे न शास्त्र ढ़ोना था, न शास्त्राश्रयी होना था।

वह चला निर्मल मन से। चैतनन्यता चित्त की लिए वह प्रशान्त भाव से उठता, बैठता, सोता, जागता, चलता, ठहरता हर क्षण संवादित रहा, उस आत्मा से जो रमी-रची-बसी थी देह में विदेह स्वरूप। वह लग्नपूर्वक संलग्न रहा अपनी उस अन्तर्यामी चेतना से जो अपने साधक को निर्ग्रन्थ पद देती है निर्बन्ध स्वरूप में स्थित करते हुए।

वर्धमान से महावीर का सम्बोधन उसे कब मिला? इसका भान हुआ ही नहीं उसे अपने काल में। उसे भान हुआ, आत्मा से आत्मा को देखने का, तलाशने का। यह शौर्य था उसकी अंत:स्फूर्त साधना का। हाँ, उसने जिस अहिंसा को भगवती कहा, उसका वाहन सिंह है, इस भान के साथ उसको सम्यग्ज्ञान, दर्शन एवम् चारित्र्य का सिंहत्व जागा। सिंह चलता है अकेला। सहज समझने का सरल सूत्र यही है कि महावीर ने साधुत्व व श्रावकत्व को पहली बार कषायासुरों से जूझने के पाँच महाव्रतों के सूत्र धारे अभय मंत्र साधते हुए।

महावीर की साधना कैसी थी?

माना कि शास्त्रं ज्ञापकन तु कारकम्– पर हम तो काल के महाकारक महावीर की साधना की बात करते आचारांग शास्त्र की वीर-सूत्र वाणी की ज्ञापना प्रस्तुत करते हैं कि कैसी थी महावीर की साधना? कहता है शास्त्र :

महावीर की साधना थी–

- काँस्य पात्र की तरह निर्लेप,
- शंख की तरह निरंजन, राग रहित,
- जीव की तरह अप्रतिहत,
- गगन की तरह आलम्बनरहित,
- वायु की तरह अप्रतिवद्ध,
- शरद ऋतु के स्वच्छजल की तरह निर्मल,
- कमल पत्र की तरह भोग निर्लिप्त,
- कच्छप की तरह जितेन्द्रिय,
- गेंडे की तरह राग-द्वेष रहित एकाकी,
- पक्षी की तरह अनियत विहारी,
- भारण्ड की तरह अप्रमत्त,
- उच्च जाति के गजेन्द्र की तरह शूर,
- वृषभ के समान पराकर्मी,
- सिंह की तरह दुर्द्धर्ष,
- सुमेरु की तरह परिषहों के बीच अचल,
- सागरवत् गंभीर,
- चन्द्रवत् सौम्य,
- सूर्यवत् तेजस्वी,
- स्वर्णवत् कान्तिमान,
- पृथ्वीवत् सहिष्णु,
- अग्निवत् दैदीप्यमान

महावीर अनियत विहारी-परिवारी भी!

मैं सुधी पाठक के अंत:ज्ञान के वीर धर्म के प्रति पूर्णत: आश्वस्त हूँ कि वे आचारांग शास्त्र की उक्त २१ महावीर साधना सरणियों के एक-एक सूक्ष्म पड़ाव को जांचते हुए निश्चित रूप से टोह लेंगे महावीर के साधना-शौर्य के लोकधर्मी कल्याणपथ को।

महावीर लोकवासी थे। जनवाणी के वाग्मी थे, मौन वाचा के परमवीर कि ब्राह्मण, श्रमण सब उनके सम्मुख रहे एक घाट पर अध्यात्म स्वाध्याय प्रतिक्रमण रत, सामायिकी साधते

सामयिक रहे सभी वर्ग के, समाज के। उस वीतराग की अन्त:वाणी का अपूर्व था मुखर मौन। यह वीरत्व अपरिमेय है अंतिम जैन तीर्थंकर की अद्यावधि मर्यादा का।

बहुत कुछ अनकहा कहा, महावीर वाणी की श्रुत परम्परा ने ऐसा खुला-खुला ऐसा खिला-खिला तीर्थकर महावीर ही तो थो जो अपने समय में ज्योतिषी पुष्प से कहा—मैं परिवार के साथ हूँ।

- संवर निर्विकल्प ध्यानी है मेरा पिता,
- अहिंसा है मेरी माँ,
- ब्रह्मचर्य है भाई,
- अनासक्ति है बहिन,
- शांति मेरी प्रिया,
- विवेक है मेरा पुत्र,
- क्षमा मेरी पुत्री,
- सत्य है मेरा मित्र,
- उपशम मेरा गृह है,

ज्योतिषी मान गया वीरंकर महावीर का कि यह तो चक्रवर्ती भगवंत है कि जिसका धर्मचक्रप्रबल है, दिव्य है इसका आचार-छत्र!

सौदागर नहीं होता 'धम्मवीर'

महावीर की दशाब्दियों की मौन-वाचा को सूत्रों में पिरोते-पिरोते थक गए टीकाकार, भाष्यवेत्ता और मीमांसक।

उन सभी पुरार्वाचीन विद्वानों एवं निश्छल श्रावकों को अब आज के प्रतिभारत-भारत सहित विश्व के समस्त आध्यात्मिकों, वैज्ञानिकों को एवम प्रज्ञानियों को बता देना चाहिये कि महावीर की अहिंसा वाणी कायरों की नहीं यह अभया गिरा है मनुष्य ज़ाति के स्वाभिमान की रक्षा शक्ति है। शस्त्रों व शास्त्रों के सौदागर नहीं निष्काम कर्मयोगी होते हैं। तपस्वी महावीर, बुद्ध गाँधी कि कोई मार्टिन लूथर किंग। महावीर ने एक सिद्ध काल गणितज्ञ की सिद्धि पाई, यह युग-सत्य बीसवीं सदी के ढलते-ढलते पश्चिमी जगत ने जाना और माना। महावीर मेथामेटिशयन ने सीधी रेखा की ज्यामिति की वीरजयी लकीर खींची काल पटल पर कि विन्दु अनन्त अणिमा धर्मी है कि जिसके वैन्दव-विस्तार से खिंचती है एक लकीर। महावीर की खिंची यह लकीर, लकीर के फकीरों के लिए नहीं।

यह काल रेखा की सीध है त्याग की, तप की, साधना-तन्मयता की, यह रेखा बोलती है, समय का स्वर पट खोलती है वीर भाव सहित कि—

पर वस्तु रमण / आत्मगुण घात / कैसा अहिंसक ?
पर पुदगल को स्व जो कथे कैसा सत्यवादी ?
बिना पुदगल आज्ञा करे ग्रहण – कैसा अचौर्यव्रत ?
जो पुदगल भोगे वह – कैसा ब्रह्मचारी ?
नाम रूप पद मूर्च्छापरिग्रही – वो कैसा त्यागी ?

—भँवरलाल नाहटा

महावीर नाम न बनावट का, न बुनावट का। वह तो प्रशान्त वीर हैं अहिसक कान्तिपथ का वह हर युग का, हर वर्ग का है।

महावीरत्व व्याख्या नहीं चाहता

हम व्यक्ति है हदपार। मनुष्य बनने की बातें बघारने से आदमी अनादमी ही बना रहता है। बनो मत कुछ। महावीर ने काल को सुना। गुणा अनन्त ज्ञान, भणा और चुना तो वो पंथ जिसे नहीं साध पाता हर कोई। बात एक दम सीधी सी यह है कि हम अपने से अपनों के मोह से, लोभ से, लाभ से कसकर बन्धे हैं। इस बन्ध से हुण्डा सर्पिणी काल खंड में विरला ही बचा है कोई श्रमण कि श्रावक कि कोई भक्त भावक। बन्ध की इस धक्कम पेल में हमारा पूर्व भव कर्म संचित पुण्य ले जाये यदि हमें धर्म सभा की ओर तो इस किंचित पुण्य योग को न गंवायें, हम झूठी प्रतिज्ञाओं से बचें, देखा-देखी की नामवरी से बचें तो हमें स्वाध्याय काल में निकटता मिलेगी जरूर महावीर की कि जिसके आगे और पीछे, ऊपर-नीचे जीवन जीने की 'धम्म कला' की गूंज है।

दिव्य ध्वनि को पानेवाले विरलतम सहयोगियों में अग्रणी महावीर भाव रूप विद्यमान है हम सबके हृदयों में। कषाय-पट खुलें तो अहसासें अपने आंतरिक महावीरत्व को, धर्म पुरुषार्थ को, सत्यमार्गी शौर्य को, आत्मा के ओजस और तेजस को हम पा ही लेंगे- इरादा पाक हो और लगन पक्की तो निराश नहीं करेगा हमें हमारा अर्हत्!

सूर्य की कोई परिभाषा नहीं। इस तरह वीर धर्मव्रती होकर यदि हम नहीं है अविश्वासी तो महावीरत्व की व्याख्या फिर क्या? मनसा, वाचा, कर्मणा जो भाव-हिंसा से मुक्त रहे वो महावीरत्व का धनी है। जो डरा हुआ है अपने कदाचार से वह महावीर का होता कौन है?

विश्व हितंकर तीर्थंकर थे महावीर

भगवान महावीर का समय, हिंसा-जन्य पशु बलियों का, क्षत्रपों के दुखद संघर्षो का, वैदिकी असहिष्णुता, सामाजिक दैन्य एवम घोर नास्तिकता का था। युद्धों व संघर्षो की अतिचारी हिंसा का सामना किया युग-कल्प महावीर ने आत्मा की प्रशान्त सहिष्णुता के वल पर। अकल्पनीय पीड़ायें सही क्रूर प्रतिपक्षियों

की, परिषहों के मर्मान्तक कष्ट सहे एक वीर कल्प धनी के रूप में नितान्त निर्भयता के साथ महावीर ने। कल्प का अर्थ समझ हम समझे महावीर की, अंतरात्मा की अजेयता को। नीति, आचार, व्यवहारी ज्ञान, तप, शील के कल्प गुणों के इस तपस्वी ने उपग्रह और दोषों का निग्रह किया संकल्पी साधक के रूप में।

अहिंसा, महावीर की बहुआयामी तेजस्विता पूर्ण युग क्रान्ति की वाहिका थी। चित्त में एकाग्रता के उत्तराध्यनन वर्णित (३१-१४) बीसों सूत्रों के असमाधि स्थानों कर उन्होंने परिहार किया। संवेग, निर्वेद, उपशम, अनिन्दा, भक्ति, अनुकम्पा एवम् वात्सलयादि आठों लक्षणों व रत्नत्रयी को जीवंत व्याख्या दी मौन वाचा की साधना सिद्ध करते हुए भयग्रस्त आकुल भारतीय समाज को "गवान महावीर ने।

महावीर बने राष्ट्र के अद्वितीय अहिंसक क्रान्तिवीर, ब्राह्मणों का हृदय जीता। श्रमण-ब्राह्मण एकता कायम की। हजारों साधु-साध्वियों व स्वाध्यायी श्रावकों की आध्यात्मिक जन शक्ति का जनाधार खड़ा किया। अपरिग्रह, अनेकांत और अहिंसा की अकार त्रयी की युग प्रचेता महावीर ने 'प्राणी मैत्री' का सौम्य स्वरूप दिया उसे, विश्व को। अणु अुण भौतिकी विज्ञानी अलवर्ट आइंस्टीन ने भ० ऋषभ से महावीर तक की जैनत्व शक्ति के सूत्र तलाशे विज्ञान के पटल पर।

गुप्तेश्वरनगर, उदयपुर

■

. श्यामसुन्दर केजड़ीवाल

शिक्षा का समाज में स्थान

किसी भी समाज एवं राष्ट्र के सर्वागीण विकास के लिये लोगों का शिक्षित होना आवश्यक है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य को उचित-अनुचित की पहचान होती है। शिक्षा के द्वारा भी मनुष्य को अपने धर्म एवं कर्त्तव्यों का ज्ञान प्राप्त होता है। निरक्षर व्यक्ति को पशु माना जाता है। संस्कृत के एक कवि ने निरक्षर मनुष्य को ''साक्षात पशु पुच्छ विषाणहीन:'' की संज्ञा दी है। अत: सुखी जीवन के लिये प्रत्येक व्यक्ति को साक्षर एवं शिक्षित होना आवश्यक है।

मनुष्य के व्यावहारिक जीवन में कदम-कदम पर शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है। शिक्षित व्यक्ति व्यवसाय एवं रोजगार में भी सफल होता है। ज्ञान के अभाव में निरक्षर व्यक्ति को दूसरों पर आश्रित होना पड़ता है। आज हमारे देश में सरकार सर्व शिक्षा अभियान चलाकर देश के नागरिकों को शिक्षित करने का अथक प्रयास कर रही है।

यह दुखद स्थिति है कि आज भी हमारे देश में कुछ नागरिक अनपढ़ हैं। आज समाज और राष्ट्र का सबसे बड़ा दायित्व है कि सभी बड़ी लगन से निरक्षरता के उन्मूलन में लग जायें, क्योंकि राष्ट्र की उन्नति के लिये बच्चे-बच्चे को साक्षर बनाना होगा।

शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार सामाजिक कर्त्तव्य भी है। एक शिक्षित समाज ही धर्म-कर्म में निपुण हो सकता है। अत: समाज के सभी शिक्षित व्यक्तियों का कर्त्तव्य है कि वे समाज से निरक्षरता दूर करने के लिए यथासम्भव प्रयास करें। निरक्षर व्यक्ति को जीवन में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अत: सम्पूर्ण समाज का साक्षर होना गौरव की बात है। अंत में हमारी यही इच्छा है –

''उचित शिक्षा के बिना सूना जहान है।
हम सब को शिक्षित करें, यही मेरा अरमान है।।''

■

ओंकार श्री

जैनत्व हो तो अलबर्ट आइंस्टीन जैसा..

वीसवीं सदी के मानवतावादी भारतीय वैज्ञानिक डॉ० दौलतसिंह कोठारी, विनम्रता के सहज प्रतीक थे। उदयपुर के अपने निवास पर जीवन के अंतिम वर्षो में गाहे-वगाहे सांध्यवेला में, आध्यात्मिक विचारकों की गोष्ठी परम्परा निभाते रहे। गोष्ठी में डॉ० कोठारी, मुझे लगा मौन भाव से आध्यात्मिक ग्रंथ चर्चा के दौर में एक प्रशांत श्रावक के रूप में तलाशते थे विज्ञान व अध्यात्म के सम्यक् सूत्रों को।

डॉ कोठारी, प्रज्ञा सम्पन्न सतर्क जैन चिन्तक थे नितान्त संवेदनशील। एक दिन अल सवेरे प्रात: भ्रमण से लौटते भूपालपुरा स्थित मेरे किराये के मकान पर आ पहुँचे। मेरा आदर स्वीकारते हुए चाय-पान के दौरान मुझसे पूछ वैठे 'ओमजी' ॐ शव्द की आपकी व्याख्या सुनूं मैं? मैं अभिभूत भाव से वोल पड़ा–

ॐ तो वैठा है शांत भाव से ATOM के शव्दायतन तन में..

डॉ० कोठारी एटम में 'ओम' के वास स्थान की मेरी सूत्र व्याख्या सुन पुलकित होते बोले– "काश मैं अलवर्ट आइंस्टीन महोदय की 'ओम' जिज्ञासा को शांत कर पाता इस तरह। मैं उत्साहित हो पूछ वैठा उनसे डा० सा० आपकी व आइंस्टीन महोदय की ऐतिहासिक भेंट के दौरान, जैन धर्म व दर्शन पर वार्ता प्रसंग चला? "हाँ, उन्होंने (आइंस्टीन ने) थ्योरी ऑफ प्रोबेविलिटी व रिलेटीविटी का जिक्र छेड़ते हुए जैन धर्म के स्याद्वाद के तालमेल का भावमय प्रतिपादन कर भारतीय अध्यात्म के प्रति गहरी कृतज्ञता प्रगट की।"

जैन धर्म से बड़ा कोई विश्व धर्म नहीं :

डॉ० कोठारी ने मुझे बताया कि उक्त भाव व्यक्त किया, विश्व के महान भौतिकी वैज्ञानिक एवं अणु-शक्ति जनक आइंस्टीन ने १८ अप्रैल १९५५ के दिन प्रिंस्टन अस्पताल में अपना नश्वर शरीर त्यागने की कुछ घड़ी पहले, पास खड़ी एक परिचारिका से।"

बातों ही बातों में पता ही नहीं चला कि अरूणोदय हो चुका है। "इस जैनाइंस्टीन चर्चा को अभी विराम! "आज २६ मार्च है, आपका जन्म दिन। जय हो 'जैनोम' (जैन ओम) की।" यह बोल डॉ० कोठारी चुपचाप चल दिए।

उदयपुर की एक ढलती सांझ। डॉ० कोठारी सांध्य भ्रमण से लौटते दिखे, एक तुड़ी मुड़ी देसी तड़ी टेकते। अपने भूपालपुरा स्थित वंगले के आगे मुझे प्रतीक्षारत देख मेरा अभिवादन स्वीकारते हुए सीधी सादी बनावट के वरामदे में मेरे साथ वैठे सील शर्वत पीते, डा० सा० बोले, "हाँ, तो क्या विधि योग है कि आज मेरा जन्म दिन है और आज की उपनिषद में आत्मावान महान आइंस्टीन महोदय के वारे में आधे घंटे वतियायेंगे अपन।" मैंने चर्चा सूत्र पकड़ा और जानना चाहा डा० सा० से आइंस्टीन महोदय के जैनोलॉजी के रूझान बावत। डॉ० सा० वोले– यह सुखद रहस्य है कि आइंस्टीन महोदय ने जैन शास्त्रों के जर्मन अनुवादों का स्वाध्याय सापेक्षत सिद्धान्त सिद्धि की ओर वढ़ते, व्यस्त काल वेला में समय निकाला भी तो कैसे? एक वात वता दूं कि वे भले जैन न थे पर उनकी जैनत्व आस्था वाली धारणा थी वड़ी प्रवल। वे पक्के अपरिग्रही थे। एक ही सावुन से शेव, कपड़ों की धुलाई, उसी से कभी कभार स्नान करते थे। गिनती की कपड़ा जूता जोड़ी। एक छड़ी। एक घड़ी। एक रूमाल। अल्पाहारी। मितभाषी और पक्के शाकाहारी थे। धन जोड़ा नहीं। देना सीखा, जो अतिरिक्त है वो जरूरतमंदों का।

वीतरागी हो तो आइंस्टीन-सा :

मैंने डॉ० कोठारी की वात तन्मयता से सुनी और मुझसे पूछे विना नहीं रहा गया कि "सन् १९३२" में, सुना है जर्मनी के एक जैन संस्थान को, अपनी ओर से एक वड़ी राशि समर्पित की थी, इसका पता आपको अवश्य होगा, प्रकाश डालें इस पर–

डॉ० कोठारी बोले– ऐसा है कि सन् ३२ में इन्स्टीच्यूट ऑफ एडवांस स्टडीज संस्थान ने आइंस्टीन की सेवायें लेनी चाही। वेतन कितना लेंगी? वे बोले ३००० डालर इस भोली सदाशयता से प्रभावित हो इन्स्टीच्यूट मेनेजमेन्ट ने उन्हें १० गुणा वेतन दिया। आइंस्टीन तो ठहरे सम्पदा अपरिग्रही। उन्होंने अपनी वेतन राशि का एक बड़ा भाग जर्मनी की एक जैन संस्था को, जैन पांडुलिपियों के प्रकाशन व अनुवाद हेतु समर्पित कर दिया।

वे सिद्धान्तवादी वैज्ञानिक थे परीक्षण प्रयोगी सावधनी। व्यावहारिक जीवन में इन्होंने साधुमना जीवन जिया। वीतराग साधा। इससे बड़ा जैनत्व का प्रमाण और क्या?

डॉ० कोठारी समयपाल पक्के। भावुक स्वर में उक्त उद्‌गार प्रगट कर उन्होंने कहा वात चली है जैनत्व की तो कुछ और चलेगी। आज की वार्ता को यहीं दें आराम।

डॉ० कोठारी तो जन्मना से अधिक कर्मणा सिद्ध अपरिग्रही हुए भाव व्यवहार में पर उन्हें अपनी भौतिकी विज्ञान प्रशिक्षा व शोध की सात समंदर पार यात्रा में विश्व का महान अपरिग्रही विज्ञानी काल योगात डॉ० आइंस्टीन जैसा मिला जैनाइंस्टीन।

ताकि सनद रहे :

एक अस्तित्व वाद फ्रेंच साहित्यकार को नोबेल पुरस्कार एक आलू के बोरे से अधिक मूल्य का नहीं लगा। ज्यांपाल सार्त्र नामक स्वाभिमानी था वह रचनाकार पर उससे भी आगे निकला एक और नोबेल पुरस्कार विजेता विज्ञान धनी अलबर्ट आइंस्टीन। ये महोदय डायरी लिखते थे। पर उनको १९२१ में जो संदर्भित पुरस्कार (भौतिकी में) मिला उसकी टीप इन्होंने अपनी डायरी में मांडी तक नहीं, नही मित्रों को पत्र लिखा। ज्ञान, विज्ञान के इस कीर्तिमानशाली मनुष्य की आकिंचन्यता गवेषणीय, मननीय और अनुकरणीय है।

जब मैंने यह प्रेरक प्रसंग, बीकानेर के विश्व मान्य रसायनवेत्ता, डॉ० डी० एन पुरोहित से सुना तो मेरा मन वीतरागत्व की तह तक जा पहुँचा।

डॉ० डी० एस० कोठारी ने मुझे आइंस्टीन की जीवनी की एक पोथी दी। इस पोथी में एक रोचक प्रसंग पढ़ा। आइंस्टीन के एक गाढ़े मित्र थे लियोपोल्ड एनफील्ड। इन्होंने अपनी विज्ञानी मित्र को जैनागमों (जर्मन अनुवादित) के सूत्रों में कई वार तल्लीन देखा स्वाध्यायरत। एक दिन इसी मित्र ने मनोविनोद भाव से ही सही, पर युग सम्बोधन दे ही दिया – आइंस्टीन को 'हैलोमिस्टर जैन! की मधुर टेर के साथ।'

मैंने यह प्रसंग पढ़ा। पोथी वंद की और मेरी आत्मा गूंज उठी न आइंस्टीन अजैन रहा और न तू। बड़ा मूल्य है जैनत्व का।

काल पात्र के बोल :

डॉ० अलबर्ट आइंस्टीन नो, अमेरीकी काल-पात्र में रखने के लिए, अग्रत: सन्देश लिख भेजा।

''प्रिय भविष्यत्,

आप हमारे मुकाबिले अधिक मानवतावादी, न्यायप्रिय, शांतिकामी, तर्क संगत नहीं होंगे तो हमारे पर शैतान की मार अवश्य पड़ेगी।''

देश के जैनाजैन बन्धु इस सन्देश के एक-एक अक्षर की चेतना तलाशें।

संदर्भित काल-पात्र के बोल मैंने स्वर्गीय डा० डी० एस० कोठारी की एक स्फुट डायरी से नोट किये। मुझे आज भी यह नोट, विश्व शांति का 'प्रो नोट' प्रतीत होता है।

आइंस्टीन ने अपने जीवन काल में अणुशक्ति विश्व विनाशक तांडव हीरोशिमा व नागासाकी के प्राणी संहार में देखा, उनका दिल दहल उठा और यह बोलते-बोलते संसार से विदा हो गया कि आगामी विश्वयुद्ध होगा तो आदमी पत्थरों से लड़ेगा।

अणु शक्ति के अमानवीय साम्राज्यवादी दुरुपयोग का ठीकरा इस महाविज्ञानी के सिर फोड़ने से नहीं चूका समय का क्रूर वाचक।

नहीं-नहीं, जैन दर्शन के निश्चय सत्य व व्यवहार सत्य का मर्म टटोला। सापेक्ष सत्य की रोशनी दी जगत को इस मानवतावादी विज्ञान मनीषी जैनत्वधारी ने पूरी विनय के साथ।

गुप्तेश्वर नगर, उदयुपर

■

प्रतिभा गहलोत

युग की चुनौतियाँ और नारी शक्ति

यह सूक्ति अत्यन्त प्राचीन लोकप्रिय और प्रचलित है कि ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रम्यन्ते तत्र देवता''। नारी पूज्या है, आराध्य है, अन्नपूर्णा है। रमणीयता, सरसता, मधुरता कोमलता, ममता ओर सुन्दरता का पुंज है। अवला कहना नारी का घोर अपमान करना है। वैसे भी अवला का शव्दिक अर्थ होता है जिससे सारी वलायें दूर रहे।

एक समय ऐसा था जव हमारे देश में महिलायें जागृत थीं। कर्तव्य और उत्तरदायित्व के प्रति सजग थीं। वीच के दौर में उदासीनता आई तो नारी को अपने वारे में सोचने का अधिकार नहीं था। नारी की भूमिका भोग की वस्तु, वच्चों को पालना और गृह कार्य तक ही सीमित थी। नारी की सहनशीलता ने पुरुषों का हौसला वढ़ा दिया। लेकिन आज युग वदला, विचार वदले, मान्यतायें वदल गई और इसी के साथ नारी घर की चार दीवारी छोड़कर स्कूलों, कॉलेजों, अस्पतालों तक क्या आंतरिक्ष तक जा पहुँची। अभी हाल ही मैं सुनीता विलियम्स ६ माह अंतरिक्ष में विता कर धरती पर लौटी है जिस पर नारी समाज क्या संपूर्ण मानव जाति को गर्व है। नारी जाति में जागृति की जो लहर आई है उससे प्रगति पथ की सारी राहें सुगम हो गई हैं।

आज का समय महिलाओं के हाथ में है। नारी को अपने अस्तित्व का बोध हुआ है। शिक्षा के विकास ने नारी की बौद्धिक-चेतना के बंद दरवाजों को खोला है। भले ही नारी के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण समय-समय पर बदले हों परन्तु उसकी नैसर्गिक विशेषताओं का महत्व हर युग में विद्यमान रहा है और स्वीकारा गया है।

हमारे देश में समाज पितृ-सत्तात्मक है, इसलिये पुरुष वर्ग का प्रतिनिधित्व और प्रभुत्व है। परन्तु हम यह क्यों भूल जाते हैं कि नारी और पुरुष दोनों की स्वतंत्र सत्ता है, अपनी अस्मिता और पहचान है। एक महिला को पुरुष की जितनी जरुरत है उतनी ही जरुरत पुरुष को महिला की है। क्योंकि वे दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। धरती पर उगे एक समान बीज के दो पौधे हैं एक ही माँ की सन्तान हैं फिर अवल और सवल का अंतर क्यों।

शिक्षा और स्वावलम्बन के क्षेत्र में उतरने के पश्चात नारी ने अपने शाश्वत मूल्य को जाना है। शिक्षा, साहित्य, खेल, व्यवसाय सभी क्षेत्रों में आगे बढ़कर नारी ने कीर्तिमान स्थापित किये हैं। नारी विश्व की जननी है, संस्कृति का गौरव है। एक अच्छी माता सौ शिक्षकों के बराबर है। महावीर और राम जैसे महापुरुषों को जन्म देनेवाली माता त्रिशला और कौशल्या, अपने आत्मवल से रावण जैसे महावली को पराजित करने वाली महासती सीता आज संपूर्ण नारी जाति के लिये आदर्श है। जैन शास्त्रों में मुक्ति मंजिल में प्रवेश पाने वाले उन्नीसवें तीर्थकर भगवान मल्लिनाथ का जीवन उदाहरण है कि नारी भी अपने चरम विकास को प्राप्त करने में सक्षम है।

नर और नारी सृष्टि रचना के दो रूप हैं। उनकी आन्तरिक क्षमताओं में कोई अन्तर नहीं है। झांसी की रानी लक्ष्मीवाई और रानी पदमावती इतिहास की गवाह है। भारत की पूर्व प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी का वर्चस्व भी पूरी दुनियाँ में फैला था। भारत में ऐसी एक नहीं अनेक विभूतियाँ हुई है जिन्होंने भक्ति, सेवा परोपकार के क्षेत्रों में अपनी अमिट छाप छोड़ी है, जैसे-मीरा, पन्नाधाय, मदर टेरेसा आदि। अनेक धार्मिक, प्रशासनिक, सामाजिक पदों पर रहकर नारी ने अकल्पनीय कार्यो को विस्तार दिया है। नारी का जीवन एक दृष्टि से समाज का वरदान है। श्रेष्ठ संकल्पों को कार्य रूप में लाना नारी के सशक्तिकरण का द्योतक है। यदि महिलाओं की संयुक्त शक्ति एक जुट हो। जाये तो विश्व को हिलाने में नारी समर्थ है। दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती नारी शक्ति के ही तीन रूप हैं जिन्हें पूरा विश्व नमन करता है।

यह सब बतलाने के पीछे मेरा तात्पर्य यही है कि नारी में भी वही शक्ति और चेतना है जो पुरुषों में है। आज समय की मांग है कि महिला स्वयं अपने तेज और सामर्थ्य को समझकर जीवन, परिवार, समाज तथा राष्ट्र की उन्नति करे। ममता की गौरवमयी प्रतिमा, वात्सल्य का छलछलाता सागर, सिंहनी शक्ति का प्रतिरूप नारी अपनी छिपी हुई प्रतिभा को प्रकाशवान कर प्रगति के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उत्कृष्टता सिद्ध करे। पुरुषार्थ को छोड़ स्त्रियर्थ के द्वारा अपनी क्षमता उजागर करे।

इसी सन्दर्भ में मेरा वहनों से यही कहना है कि हमारा सौभाग्य है हम विकास का एक हिस्सा बन पाये। राष्ट्र और समाज की जो प्रगति सामने है वह व्यापक तौर पर हमारे प्रयासों को अधिक वल प्रदान करती है। आगे की सफलता के वीज हमारे चारों और विखरे पड़े हैं आवश्यकता है हमारे आत्म-विश्वास की, भीतर के प्रकाश की। हम राष्ट्र और समाज की ताकत हैं। परिवार की जिम्मेदारी प्रमुख है लेकिन शिक्षा, सभ्यता, संस्कृति के विस्तार की दिशा में वुद्धि और विवेक के साथ आगे वढ़ना है।

समारोहों, नारों या समाज सेवा के कार्यो तक सीमित न रहकर बदलते हुए परिवेश में भावी पीढ़ी के निर्माण की विशिष्ट भूमिका में हम उतर जायें। यही हमारा मुख्य कार्यक्षेत्र है। हमारा दायित्व है कि हम अपने घर की प्रत्येक परम्परा में उचित-अनुचित का चिन्तन करें। परिवार में घुसपैठ करने वाली पाश्चात्य संस्कृति को रोकें। अवांछनीयता को तुरन्त नियंत्रित करें, विकास के नाम पर आधुनिकता की दौड़ से वचें। सांस्कृतिक फिसलन आज की मुख्य और चिन्तनीय समस्या है, जिसे रोकने के लिए नारी को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। इन कर्तव्यों को जागरूकता से पूरा करना ही नारी की सवलता का प्रतीक है।

निम्वाहेड़ा (राज०)

■

मेघराज श्रीमाली

अजन्मी मां की गुहार

मैं तो अभी नहीं जन्मी हूँ,
अभी तो मैं हूँ तेरे तन में।
सेज विछाकर सुख से सोई,
आंख मूंद कर करती हूँ–
हर घड़ी प्रतीक्षा।
कव वीतेगी दुखद शर्वरा,
जव मैं जग में आंख खोलकर,
तेरे आनन को निहार कर,
वेटी वनकर तेरे आंचल में मचलूंगी,
धरती का शृंगार करूंगी।

पर यदि तेने रोक दिया,
या धक्का देकर गिरा दिया तो,
कौन धरा की मांग भरेगा।
कौन तुम्हारी वंश वृद्धि कर,
जीवन में आनन्द भरेगा।

नहीं जलेंगे दीप घरों में,
और न गूंजेगी शहनाई।
रंगोली से सजा घरों को,
कौन मनायेगा दीवाली,
अर्धांगिनी के विना,
यज्ञ की कैसे होगी,
पूर्ण आहूति?

वतलाओ माता विन कैसे,
पुरुषों का अस्तित्व वनेगा,
निज प्राणों का रक्त पिलाकर,
कौन उन्हें पाले पोपेगा?
क्या नारी के विना पुरुप का,
है कोई वजूद इस जग में।
आने दो मुझको इस जग में,
मैं जग का आधार वनूंगी।
यदि तूने आने दिया मुझे तो,
तेरे जैसी माता वनकर,
धरती का शृंगार वनूंगी।
माता वनकर प्यार करूंगी,
जीवन का आधार वनूंगी।

सी०-२०१ जवाहर एनक्लेव
जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४

■

ऋषभकुमार मुरड़िया
एम०ए० (दर्शन शास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास)बी० एड०)

जैन गणित का गणितशास्त्र में योगदान

जैन दर्शन में कर्म प्रकृतियों के आश्रव वंध, संवर एवं निर्जरा को सम्यक् रूप से समझने, अध्यात्म के गूढ़ विषयों के स्पष्टीकरण में, लोक स्वरूप एवं उसके आकार प्रकार तथा विभिन्न प्रकार की जीव राशियों की गणना एवं परस्पर सम्बन्ध को स्पष्ट करने में जैन गणित का महत्वपूर्ण योगदान है। दीक्षा, पंच कल्याणक प्रतिष्ठा इत्यादि अनेक धार्मिक अनुष्ठानों की पूर्ति हेतु शुभ मुहूर्त का चयन ज्योतिष गणित से किया जाता है। जैन दार्शनिक विषयों की व्याख्या में समाहित गणितीय ज्ञान विशेषत: कर्म सिद्धान्त का गणित अधिक परिष्कृत एवं उपयोगी है।

जैनागम गणित :: एक विवेचन

जैन धर्म में विभिन्न जैनाचार्यो, विद्वानों तथा दार्शनिकों ने जैन गणित की महत्ता की विवेचना प्रस्तुत की–

''वहुभिर्विप्रलापैः किं त्रैलोक्ये सचराचरे,
यत्किचिंद्वस्तु तत्पसर्वगणितेन, विना नाहिं।''

(गणितसार संग्रह)

अर्थात् गणित के सम्यक ज्ञान के विना जैन दर्शन को भली प्रकार आत्मसात ही नहीं किया जा सकता है। टोडरमाल रचित ग्रन्थ त्रिलोकसार की पूर्व पीठिका में लिखा है– ''वहुरि जे जीव संस्कृतादिक के ज्ञान सहित हैं किन्तु गणिताम्नायादिक के ज्ञान के अभाव ते मूल ग्रन्थ या संस्कृत टीका विषै प्रवेश न करहुं तिन भव्य जीवन काजे इन ग्रन्थ की रचना करी.है।''

अर्थात् गणित एवं गणितीय प्रक्रियाओं को सम्यक् रूप से समझे बिना मूल ग्रन्थों एवं आगमों की विषय वस्तु को ठीक प्रकार से नहीं जाना जा सकता है।

जैन आगमों में 'लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ' अर्थात् वहत्तर कलाओं में लेख एवं गणित का ज्ञान प्रथम माना है। जैन धर्म की दोनों ही परम्पराओं में गणित का अति विशिष्ट स्थान है। दिगम्बर परम्परा में जहाँ करणानुयोग, द्रव्यानुयोग के ग्रन्थ गणितज्ञों के लिए रुचिकर हैं वही श्वेताम्बर परम्परा में भी गणितानुयोग एवं करणानुयोग के ग्रन्थ उपयोगी हैं। धर्म ग्रन्थों मे निहित गणितीय ज्ञान की ओर सर्वप्रथम श्री धर जैनाचार्य द्वारा प्रणीत त्रिशतिका (पाटी गणित सार) का अजैन कृति के रूप में प्रकाशन हुआ। मद्रास सरकार ने १९१२ में एम० रंगाचार्य द्वारा गणितसार संग्रह का प्रकाशन किया जिसे जैन संप्रति गणित अथवा JAINA SCHOOL OF MATHEMATICS की संज्ञा दी गई।

जैन गणित साहित्य एवं उसका गणित शास्त्र में योगदान :

जैन गणित साहित्य में महावीराचार्यकृत गणितसार संग्रह, श्रीधर कृत पाटीगणित, राज्यादित्य कृत व्यवहार गणित, क्षेत्र गणित, जैन गणित सूत्रोदाहरण, सिंह तिलक सूरि कृत गणित तिलक टीका, ठक्करफेरु कृत गणित सार कौमुदी, महिमोदय कृत गणित साठ सौ, हेमराजकृत गणितसार, आनन्दकवि कृत गणित सार संग्रह, गणित विलास, गणित कौष्ठक इत्यादि जैन गणितीय ज्ञान के प्रमुख ग्रन्थ हैं। इन सभी गणितीय ग्रन्थों के गणितीय ज्ञान का उपयोग आधुनिक गणित शास्त्र में समाहित है। जैनागमों में निहित समस्त गणितीय सामग्री को स्थूल रूप से दो भागों में विभक्त किया है (१) लौकिक गणित (२) अलौकिक गणित।

लौकिक गणित के अन्तर्गत स्थानीयमान, पद्धति, अंकों के प्रकार लेखन, मापन पद्धतियाँ, अंकों के परिकर्म, व्यवहार, ज्यामितीय, क्षेत्रफल इत्यादि, बीजगणित घातांक सिद्धान्त, लघुगणिक इत्यादि गणितीय सामग्री आती है तथा लोकोत्तर गणित के अन्तर्गत समुच्चय सिद्धान्त, एकैकी संगति, अनन्त विपयक गणित कर्म एवं निकाय सिद्धान्त आता है। लोकोत्तर गणित की सामग्री अधिक सामयिक एवं.गौरवपूर्ण है।

जैन आगम के स्थानांग सूत्र (ठाणा) के अध्याय १० में ७४७ वी गाथा में कहा है–

दस विधे संखाणे पणत्ते तं जहा!
परिकम्मं ववहारो रज्जु रासी कलासवने (कलासवण्णे) य।
जावांतावति वग्गो घनो ततह वग्ग वग्गो विकप्पो त।

इस गाथा में गणित के १० प्रकारों की विवेचना की गई है। वही दस प्रकार का विवेचन आधुनिक गणित में भी दृष्टिगोचर होता है वह इस प्रकार है–

क्रम	गणितीय	शब्द अभयसुरिजी म०	आधुनिक गणितीय प्रचलित शब्द
१.	परिकम्मं	संकलन इत्यादि	अंक गणित के आठ मूलभूत परिकर्म-संकलन, व्यवकलन, गुणा, भाग, वर्ग, वर्गमूल घन एवं घनमूल
२.	व्यवहारों	श्रेणी व्यवहार, पाटी गणित के व्यवहार	श्रेणी व्यवहार, मिथक व्यवहार ब्याज, छाया व्यवहार, घात व्यवहार एवं कंकचिका व्यवहार
३	रज्जु	समतल ज्यामिति	लोकोत्तर गणित
४.	रासी	अन्नों की ढ़ेरी	समुच्चय सिद्धान्त
५.	कलासवन्ने	भिन्न	भिन्नों का योग, व्यवकलन, गुणा, भाग
६.	जावत् तावत्	प्राकृतिक संख्याओं का गुणन एवं संकलन	सरल समीकरण
७.	वग्गो	वर्ग	वर्ग समीकरण (द्विघात समीरकण)
८.	घणो	घन	घन समीकरण
९.	वग्गो वग्गो	चतुर्थ घात	उच्च घातीय समीरण
१०.	विकप्पो	क्रकचिका व्यवहार	विकल्प एवं भंग (क्रमचय एवं संचय)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जैन आगम में निहित गणितीय विषयों की सूची अत्यंत व्यापक है और उसमें गणित का बहुत बड़ा क्षेत्र समाहित है। इसी आगम गणित के सिद्धान्तों पर ही हमारा आधुनिक गणित टिका हुआ है। आधुनिक गणित के समस्त तथ्य आगम जैन गणित के ही तथ्य हैं। अत: आवश्कयता है जैन गणित से सम्बन्धित ग्रन्थों एवं संदर्भो का अविलम्व संकलन कर गणितज्ञों, प्राकृत एवं संस्कृत भाषाविदों तथा जैन दर्शन के मर्मज्ञ विद्वानों द्वारा उनका विश्लेषण किया जाय जिससे जैन गणितीय ज्ञान का अधिकाधिक उपयोग आधुनिक गणित शास्त्र में किया जा सके। इसी से आधुनिक गणित के ज्ञान को सरलता की ओर अग्रेसित किया जा सकता है।

संदर्भ साहित्य

(१) गणित सार संग्रह लेखक आचार्य महावीर
हिन्दी अनुवाद प्रो० श्री लक्ष्मीचन्द जैन

(२) कतिपय अज्ञात जैन गणित लेखक- श्री अनुपम जैन

(३) 'प्रणाम' विश्व क्षितिज पर जैन गणित
लेखक-श्री अनुपम जैन

(४) जैन आगमों में निहित गणितीय अध्ययन के विषय
लेखक-श्री अनुपम जैन

■

कन्हैयालाल भूरा

व्यसन मुक्त समाज-निर्माण की दिशा में

शाब्दिक व्याख्या :

व्यसन का अगर शाब्दिक अर्थ खोजते हैं तो पाते हैं लत, काम, और क्रोध जनित दोष, निष्फल, प्रयत्न, आपत्ति, दु:ख कष्ट इत्यादि। प्राय: प्रत्येक धर्म में ही व्यसन को एक मत से नशे, लत के रूप में ही लिया है।

भगवान महावीर :: सप्त कुव्यसन

भगवान महावीर ने अति सूक्ष्मता में जाते हुए व्यसन के आगे कु शब्द और जोड़कर व उनके भेद कर सप्त कुव्यसन (सात खराव लत) से मनुष्य को विरत रहने की बात की है। जैसे– जुआ, मांस, शराव, चोरी, परस्त्री गमन, वेश्यागमन और शिकार इत्यादि।

परिहार :

मनुष्य मात्र चाहे वह अन्य धार्मिक क्रियाएं कर पाये या न पाये अगर इन सात कुव्यसनों का सर्वथा परिहार कर इनसे अगर सर्वतोभावेन वचा रहे तो समाज का स्वस्थ निर्माण स्वयमेव हो जावेगा। आज की ज्वलन्त समस्या पर्यावरण, अनैतिकता, अराजकता, आतंकवादिता, हिंसा का ताण्डव इत्यादि स्वयमेव समाप्त हो जायेंगे।

व्यसनी क्यों?

सर्वप्रथम हम यह विचार करें कि मनुष्य व्यसनी क्यों बनता है? एक बच्चा जन्म लेता है, कोई भी व्यसन लेकर जन्म नहीं लेता फिर वह क्यों इसका आदी हो जाता है। बड़े-बड़े मनोवैज्ञानिकों ने इसका कारण जानने का प्रयास किया, मुख्यतया निम्न कारण सामने आये–

१. संगति (साथी, संगी, मित्र) : जहाँ वह उठता-बैठता है, जिनके साथ पढ़ता है, खेलता है, अनजाने या जाने में उनको देखकर कुव्यसन अपना लेता है।

२. पारिवारिक जन : पारिवारिक जनों को लिप्त देखकर अपना लेता है।

३. अवसाद-असफलता-हानिभाव : इस अवस्था में मनुष्य मानसिक रूप से दुर्बल होकर टूट जाता है और गम गलत करने हेतु नशा, कुव्यसन की ओर दौड़ पड़ता है। उसे लगता है–यही एक मात्र समाधान है।

४. झूठी शान शौकत व मान-प्रतिष्ठा दिखाना

सभी धर्मों की प्ररूपणा :

हिन्दू, इस्लाम, ईसाई, सिख, जैन, बौद्ध सभी प्रमुख धर्मो ने हिंसा-क्रूरता, अनैतिकता, असत्य भाषण, व्यभिचार, क्रोध, द्वेष, राग (मोह) इत्यादि को घृणास्पद व त्याज्य बताया है। उनकी मुख्य शिक्षा प्राणी कौम के साथ सह-अस्तित्व, दया व करुणापूर्ण व्यवहार की है।

व्यसन मुक्त समाज निर्माण की दशा में पहला कदम :

सर्व प्रथम हमें तम्बाकू, शराब, पान मसाला, गुटका इत्यादि नशीली चीजों पर विचार करना होगा। जन साधारण को इनसे होने वाले नुकसान, हानियां, स्वास्थ्य पर प्रभाव, कैंसर व हृदयरोग जैसी विमारियों के वारे में जानकारी देनी होगी।

१. : प्रशासन व पुलिस की चार प्रमुख समस्यायें :

१. शराब, २. मादक द्रव्य, ३. जुआ, ४. अनैतिकता – अगर ये ठीक हो जायें तो अपराध का आधा आंकड़ा समाप्त हो जाय। ध्यान रहे-वेश्यावृत्ति व सुरापान का चोली-दामन का साथ है। अवैध संतानों की उत्पत्ति का मुख्य अड्डा, मद्यपान व ड्रग्स है। पुरुषों व महिलाओं में चारित्रिक पतन का मुख्य कारण शराव है।

२. तम्बाकू : यह किन-किन रूपों में सेवन की जाती है– वीड़ी, सिगरेट, जर्दा, खेनी, चिलम, सिगार, गुटका, नसवार, तम्बाखू वाले दंत मंजन, गुड़ाकू, मसेरी, पान मसाला, किमाम, जैसे अन्य पदार्थ।

शराब तम्बाकू के अलावा अन्य नशे :

अफीम, भांग, गांजा, चरस, ब्राऊन सुगर, हेरोईन, स्मेक आदि।

हानिकारक परिणाम :

मुख, गला, स्वर यंत्र, फेफड़े, अन्य नली व मूत्राशय का कैंसर, हृदयाघात, लकवा, उच्च रक्त चाप, श्वास की दुर्गन्धि, दाँतों की गंदगी, शारीरिक व मांस पेशियों की दुर्वलता, अंगुलियों का सड़कर गिरना।

चौंकानेवाले तथ्य – हमारे देश के आंकड़े।

२० लाख लोग कैंसर व ३० लाख लोग हृदय की बीमारी से आक्रांत हैं।

कैंसर में तिहाई, तम्बाकू में १/४, शराव वाले, हृदय रोग में ४०% तम्बाकू व २०% शराब वाले।

तम्बाकू के धुएँ में कार्वोलिक, मोनोक्साईड, सायनाईड व बैंजापायरिन जैसी घातक गैसें होती है जो कैंसर पैदा करती है। बीड़ी में उपरोक्त गैसों की मात्रा सिगरेट से भी दुगुनी है।

तम्बाकू की खेती (वर्ष २००३) छह लाख हेक्टेयर जमीन पर व उत्पादन ७८ करोड़ के०जी०,

सिगरेट का उत्पादन (वर्ष २००३) ९३०० करोड़, (बीड़ी का हिसाव नहीं)।

विलायती शराब के बड़े कारखानों के उत्पादन-वीयर, विहस्की वगैरह ५८ करोड़ ५० लाख लीटर (अनुमानित) देशी शराब, अवैध रूप से वनाने वाले चोलाई मद्य का कोई हिसाब नहीं।

सचेतन होने योग्य बात :

पन्द्रह वर्ष से अधिक उम्र वाले अनुमानित अढ़ाई करोड़ पुरुष व ७ करोड़ महिलायें किसी न किसी प्रकार से तम्बाकू या शराब या दोनों का सेवन करते हैं।

स्वयं समझें एवं प्रचार करें :

१. कोई भी सिगरेट फिल्टर, मैन्थल या कम (ठारवाली) सुरक्षित नहीं है।
२. कैंसर होना तम्बाकू शराव की मात्रा पर निर्भर नहीं है। थोड़ी मात्रा भी क्षतिकारक है।
३. निष्क्रिय धूम्रपान के धूँए से सावधान आपके मुंह से उगला हुआ धुंवा आपके अपने प्रिय परिवार जनों, वच्चों में कैंसर, अपच, हृदय रोग उपहार में दे देता है।
४. पान मसाला, गुटका व अन्य पदार्थ भी कैंसर व हृदयरोग को आमंत्रित करते हैं। क्या व्यसन मुक्त समाज का निर्माण संभव है?

मैं पुरजोर शब्दों में कहूँगा – हाँ है ।

फिर क्या करना चाहिये– समझें।

हमारा देश ऋषि, मुनियों, संत-महात्माओं का देश है। विश्व के अन्य प्रत्येक देश में भी कम ज्यादा महापुरुष जन्म लेते हैं। काल के प्रभाव से जन-मानस विशेष कर किशोर-किशोरियों पर टी०वी०, सिनेमा, पोस्टर, विज्ञापन आदि के माध्यम के दूषित प्रभाव पड़ रहा है। विश्व की सभ्यता, संस्कृति व अस्मिता, परिवेश रक्षक ग्रहों तक कि मानव मात्र के विध्वंस की समस्या मुंह वायें सामने खड़ी हैं– भ्रूण हत्या, बलात्कार, चोरी, डकैती, अपहरण, पशु बलि, मृत्यु भोज, जुआ व शराव के अड्डे, वेश्यालय व चकले, आधुनिक सभ्यता की आड़ में चारित्रिक पतन। वाप बेटी का, पर स्त्री का, सासू, जंवाई का अन्य किसी तरह का लिहाज नहीं, अस्वस्थता, बीमारियों, अवसाद, मानसिक उन्माद येन केन प्रकारेण अर्थोपार्जन की होड़, भौतिकता की चकाचौंध, नित नये भोग्य पदार्थो का आविष्कार व उन्हीं में सुख पाने की मानसिकता, सर्वोपरि अनैतिकता, मानवीय मूल्यों का ह्रास इत्यादि समस्याएँ हमें उद्वेलित कर रही हैं। आइये, निरपेक्ष दृष्टि से विचार कर इन तथ्यों को आजमायें –

१. धीरे-धीरे परिवर्तन, आदत, लत सुधार, नशा परिहार करने में संदेह है अतएव दृढ़ इच्छा शक्ति से पूर्ण मनोवल के साथ एक बार में ही परिवर्तन लावें।
२. प्रथम कुछ दिन तकलीफ रहेगी। यह समय आत्मविश्वास व मन की दृढ़ता से गुजार दें फिर देखें सफलता ही सफलता है।
३. साधु-संतों का सान्निध्य व भगवत भजन में खाली समय विताएं।
४. आंतरिक शक्ति के लिए प्रार्थना करें, गहरे श्वास ले, व्यायाम, दौड़ना, धूमना, तैरना, खेल आदि में भाग लें।
५. ध्यान में बैठकर रोज अनुप्रेक्षा यानी दृढ़संकल्प को पुनः-पुनः दोहरायें।
६. कैंसर, हृदयरोग, अन्य व्याधियों, अनैतिकता के शिकार लोगों के कष्ट की स्मृति चित में लावें।
७. गलत लोगों की सोहवत/संगति छोड़ दें। ऐसी स्थिति व परिवेश से वचें जिसमें बुरा काम / नशा करने की वार-वार तलव लगे।
८. और भी नये-नये उपाय खोजें।
९. नशा छोड़ने से जो रुपये वच रहे हों, उन्हें जमा करें। यही वड़ी रकम देखेंगे तो आप स्वयं अनुमान करेंगे कि आप कितने मूर्ख थे जो इतने दिन इतने रुपये वचा नहीं पाये।

१०. कुछ फड़कते नारों के पोस्टर छपा कर जगह-जगह बाँटे –

१. पान मसाला	मौत मसाला
२. जर्दा खाओ	जीभ जलाओ
३. गुटका खाओ	गाल गलाओ
४. धूम्रपान	खतरे में जान
५. मुंह का मजा	मौत की सजा
६. नशे से छुट्टी	मुसीबतों से मुक्ति

अंत में नशा नाश का द्वार, व्यसन विनाश का कगार।

औषधियों का उपचार :

(क) तम्वाकू की आदत से छुटकारा पाने हेतु– कैलेडियम २०० शक्ति की १२ गोली लेकर सुबह, दोपहर शाम चूसें। इसमें तम्वाकू से अरूचि व नफरत हो जावेगी,

(ख) पान मसाला व गुटका से मुक्ति के लिए - आवंला या अदरक के नमक लगायें टुकड़े चूसें। धीरे-धीरे आदत छूट जायेगी एवं विटामिन-सी की प्राप्ति भी होगी।

(ग) सिगरेट से अरुचि के लिए टेबोकेम २०० शक्ति १२ गोली तव तक चूसते रहे जवतक सिगरेट से अरुचि न हो जाय।

(घ) शराव से अरुचि के लिए– अजवायन व नींबू रस मिलाकर, सुखाकर, पीसकर गोलियां बनालें, व चूसते रहें। जीभ को शराव पीने जैसा आनन्द आता रहेगा।

२. घोड़ी का पसीना या पिशाव की एक बूंद पियक्कड़ के अनजाने में खाने की चीज में डालकर खिला दें। सम्भावना यही है कि इससे शराव पीते ही उल्टी आ जावेगी और पियक्कड़ उसे छोड़ देगा।

व्यसन मुक्ति में शाकाहार :

व्यसन मुक्ति में अव तक शाकाहार का जिक्र न कर सिर्फ नशाकारी प्रवृत्तियों का ही विवेचन किया गया लेकिन शाकाहार का भी वड़ा महत्व है। मांसाहार और शिकार (सप्त कुव्यसनों में से) आपस में एक दूसरे से जुड़े हुवे हैं। प्रकृति अपने आप अपना भार-साम्य (संतुलन) रखती है।

प्रकृति के नियमों को अपने हाथ में लेना समाज पर कुठाराघात करना है। प्रकृति ने मनुष्य को शरीर रचना के हिसाव से शाकाहारी की श्रेणी के अनुकूल वनाया है। पशुओं में मांसाहारी व शाकाहारी दोनों है। सभी शाकाहारी जीवों की शरीर रचना, हाथ, पांव, दांत, नाखून, पंजे, जीभ, पानी पीने की आदत, आंत की लंवाई, पाचन का समय, लीवर, गुर्दे, हाइड्रोक्लोरिक एसिड, लार, सूंघने की शक्ति, निशाचर, शव्द (आवाज) का फर्क है। मांसाहारी की प्रत्येक चीज प्रकृति विरूद्ध व अप्रिय है। मांसाहारी जीवों के बच्चे जन्म के बाद एक सप्ताह तक प्राय: दृष्टि शून्य होते हैं। शाकाहारी जीवों के बच्चे प्रारम्भ से ही दृष्टि वाले होते हैं।

शाकाहार सात्विक आहार है। कहते हैं ''जैसा खाये अन्न वैसा होवे मन।'' आज समाज में सुख-शांति लानी है तो मनुष्य को शाकाहारी बनाना पड़ेगा। पाश्चात्य देशों में जहां अधिकांश मांसाहारी थे, वहां आज करोड़ों लोग शाकाहारी बन रहे हैं।

हमारे देश में जितने भी धर्मगुरु हैं अपने-अपने स्तर पर सभी व्यसन मुक्त जीवन जीने की प्रेरणा दे रहे हैं इसी दिशा में समाज के दुख-दर्द की अनुभूति करते साधुमार्गी परंपरा के आचार्यश्री रामलालजी म०सा० ने वर्षो पूर्व समाज को व्यसन मुक्त होने का आह्वान किया। उनके आह्वान पर हजारों लोगों को व्यसन मुक्ति के संकल्प कराये जा चुके हैं।

इस तरह व्यसन मुक्त समाज निर्माण की दिशा में कार्य हो तो रहा है पर यह पूरा नहीं है। लाखों लोगों को इससे जोड़ना है। गांव-गांव, नगर-नगर, डगर-डगर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चेतना लानी है। मैं आशावादी होकर चिन्तन करता हूँ सारा विश्व व्यसन मुक्त होगा। एक अच्छे समाज का निर्माण होगा। भाईचारा, प्रेम बढ़ेगा। जैन सिद्धांत ''परस्परोपग्रहो जीवानाम'' की गूंज होगी।

राष्ट्रीय संयोजक व्यसन मुक्ति संस्कार जागरण समिति
एन०एन० रोड, कूचबिहार

■

श्रीमती रत्ना ओस्तवाल

नारी सशक्तिकरण महज एक नारा नहीं है

हम कभी ऐसी टिप्पणियां सुनते हैं कि लिंग भेद एक पश्चिमी धारणा है। भारत देश में इसकी जरुरत नहीं है इस सोच को सिद्ध करने के लिए कई तर्क दिये जाते हैं। जैसे अनादिकाल से देवी पूजा होती आई है। प्राचीन इतिहास में जैसे कई विदुषी महिला, शासकीय, प्रशासकीय महिला पुराणों में लोक कथाओं में, आगमों में नारी गाथा का सार्वभौम उल्लेख है और उनकी सेवा समर्पणा की लोक दुहाई देते हैं जिससे सावित होता है कि औरतों का मान, सम्मान और आदर सदैव होता आया है।

भारत उन कुछ देशों में से एक है जहां औरतों को वोट देने का अधिकार मिला है। भारत का संविधान भी औरतों को, मर्दो को समान अधिकार का आश्वासन देता है। यह सभी वातें सावित करती हैं कि भारत की औरत समाज की स्वतंत्र व सम्मानित सदस्य है।

कुछ सबूतों का पुल्लिंदा दर्शाता है कि –

१ : भारत में प्रति १००० मर्दो पर ९३३ औरतें हैं।

२ : अधिकांश औरतें कुपोषण का शिकार होती हैं।

३ : परिवार के भीतर लडकियों को पोषण संबधी भेदभाव का सामना करना पड़ता है,

४ : परिवार में भी सवको खिलाकर अंत में और कभी-कभी कम खाना पड़ता है।

५ : ७६% मर्दों की तुलना में ५४% भारतीय महिलाएं साक्षर हैं।

६ : चाहे शासन हो या समाज परिवार में निर्णय लेने वाले पदों पर औरतों का प्रतिनिधित्व वहुत कम है। वर्तमान में ८% से कम संसदीय सीटों पर ६% से कम मंत्रीमंडलों और ४% उच्च और उच्चतम न्यायालयों मे स्थान है।

जीवन भर ७०% महिलायें परिवार के भीतर व वाहर हिंसा का सामना करती हैं। पुलिस रिकार्ड के अनुसार हर २५ मिनट पर यौन उत्पीड़न और यौन छेड़छाड़, ३४ मिनट पर वलात्कार, ४५ मिनट पर यौन उत्पीड़न और हर ४३ मिनट पर एक औरत से तलाक या अलगाव किया जाता है।

सार्वजनिक मुद्दों पर विचार या चिंतन हेतु या औरतों पर होने वाले अमानवीय अत्याचारों पर दिया जाने वाला समय चाहे वह मिडिया हो, चाहे समाचार पत्र हो, चाहे नेताओं के भाषण हों, इन निर्धारित कार्यक्रमों में मात्र १४% जगह महिलाओं के लिए निर्धारित होती हैं।

आज के आधुनिक परिवेश में प्रचार-प्रसार के माध्यम से कामकाजी महिलाओं को घुस्सैल, चिड़चिड़ी रिश्तों में निभाने में असफल वताया जाता है। आज के आधुनिक सीरियल या विज्ञापनों की दुनिया में नारी को वढ़ा-चढ़ाकर चाहे यौन उत्पीड़न, शादी, माता पिता की भूमिका आदि उठाये गये महत्वपूर्ण मुद्दों पर अवांछनीय मजाक उड़ानेवाले, रीति रिवाजों पर कलंक रूप, शादी के वंधन का घिनौना रूप दर्शाकर नारी पात्र को कलंकित किया जाता है। आज भी प्रकाशन माध्यम में औरतों को सिर्फ हांशिये पर जगह मिलती है। विज्ञापन के जरिये अश्लील रूप में नारी के प्रदर्शन आदि के खिलाफ आवाज पर अनदेखा किया जाता है। आज तक किसी भी प्रांत ने अश्लील विज्ञापन पर रोक नहीं लगाई है।

भारत में कितनी औरतें रहती हैं? पिछले समय की गणना के अनुसार भारत की कुल १.०३ अरव की जनसंख्या में ४९ करोड़ ६० लाख औरतें हैं। इस अनुपात में तो एक हजार मर्दो के पीछे ९३३ औरते हैं। जनसंख्या की दृष्टि से ३.२ करोड़ औरतें गायव हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि औरतें पैदा होने के पहले ही मार दी जाती हैं। कुछ कुपोषण, कुछ वलात्कारी की शिकारी होकर आत्महत्या करती हैं। माननीय अमर्त्य सेन के तर्क के अनुसार ३.२ करोड का हिसाव हमारे पास नहीं है। यह

सव चिंतन का विषय है।

हरियाणा में	१००० पुरुष के पीछे ८६० महिलाएं हैं।
मध्यप्रदेश में	१००० पुरुष के पीछे ८७५ महिलाएं हैं।
उड़ीसा में	१००० पुरुष के पीछे ९७२ महिलाएं हैं।
केरल में	१००० पुरुष के पीछे ९३० महिलाएं हैं।

इस तरह से घटता-वढ़ता आंकड़ा सिद्ध करता है, यही वताता है कि महिलाओं को जीने का अवसर नहीं दिया जा रहा है।

दुर्भाग्य है कि भारत में औरतें कितनी आजाद हैं, कितनी वरावर हैं, कितनी निम्नस्तर का जीवन जी रही हैं, इन सबका सवाल और जवाव आज तक भी समाचार पत्र हो या कोई मीडिया या नेताओं की बड़ी सभाएं हो या किसी महात्मा का उपदेश, नहीं दिया। भारत की नारी के लिए आज भी यह प्रश्न चिह्न है? क्या भारतीय नारी की संभावनाएं विकसित करने की आजादी है? क्या उनकी आजादी छिननेवाले मुख्य स्रोतों से वे सुरक्षित है। क्या हिंसा, भेदभाव, अभाव, भय तथा अन्याय से वे सुरक्षित हैं? इन सब सवालों का जबाब मात्र नारी सशक्तीकरण है जिसके अंतर्गत स्वयं जलती मशाल के रूप में मानसिक भावानात्मक सुरक्षा, दूसरों द्वारा कह दिया जाने वाला विश्वास जो राष्ट्र, समाज परिवार और हम सबके जीवन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

नारी सशक्तीकरण कोई मापतौल का विषय नहीं हैं लेकिन व्यापक रूप से छेड़ा गया आंदोलन नारी जाति को अपना स्तर वनाने के लिए कई उपलब्धियों के स्तरों के साथ समानता का अधिकार हासिल करने की हरित क्रांति है। आज भारत में कितनी औरतें जो करना चाहें, करने के लए स्वतंत्र है जो वे वनना चाहे वनने के लिए आजाद हैं। उनके आगे संघर्ष, आत्मसम्मान और विकास की मांग है और इन्हीं अवसरों की समानता के साथ नारी सशक्तीकरण सामाजिक, नैतिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं पारिवारिक समान अवसरों के साथ उपलब्धियों को पाने का और ऊँचाइयों को छूने का माध्यम है। कुछ ऐसा ही नारी सशक्तीकरण में पाना है जो

१. भरपूर जीने की आजादी दे।
२. स्वस्थ जीवन का अधिकार।
३. शिक्षा का अधिकार।
४. विना शोषण के काम करने का अधिकार।
५. विना शोषण निर्णय का अधिकार।
६. भय से आजादी आदि मुद्दे अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता एवं सतर्कता कह सकते हैं।

मुझे महसूस होता है कि नारी सशक्तीकरण आत्मा की आवाज है, निर्मल हृदय की पुकार है। इसीलिए भारतीय संविधान औरतों को विश्वास दिलाता है कि धर्म, नस्ल, लिंग, जन्मस्थान व कोई भेदभाव न हो। अनुच्छेद १५ (१) औरतों तथा मर्दो को समान रूप से रोजगार तथा सरकार के अंतर्गत किसी भी कार्यालय में नियुक्ति के मामले में समानता अनुच्छेद (१६) औरतों तथा मर्दो के लिए समान रूप से, रोजगार के पर्याप्त साधनों का अधिकार सुनिश्चित कराने के लिए सरकार को नीति निर्देश / अनुच्छेद ३९ (ए) औरतों तथा मर्दो दोनों के लिए समान काम का समान वेतन अनुच्छेद ३९ (डी) है। इस तरह नीर सशक्तीकरण महज एक नारा नहीं है, यथार्थ का दर्शन है।

राष्ट्रीय अध्यक्ष
श्री अखिल भारतीय साधुमार्गी जैन महिला समिति

■

डॉ सुरेश सिसेदिया

शिक्षा का वर्तमान स्वरूप

वर्तमान युग उच्च शिक्षा की आधारशिला पर टिका हुआ है। यह समय ज्ञान-विज्ञान के युग के रूप में जाना जाता है। मात्र २०वीं शताब्दी में शिक्षा और विज्ञान के क्षेत्र में जितना विकास हुआ है उतना विकास विगत सौ वर्षो में नहीं हुआ होगा और इस गति को देखते हुए कहा जा सकता है कि आने वाले दस वर्षो में ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्र में जो प्रगति होना सम्भावित है, उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। बच्चे के जन्म लेने के साथ ही वर्तमान में अभिभावक उसके आवास – भोजन से अधिक चिंतित उसकी शिक्षा को लेकर रहते हैं। प्राचीन समय में शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का और उसमें सद्‌गुणों का विकास करना रहा था किन्तु वर्तमान में तो शिक्षा के मूल उद्देश्य से ही हम प्राय: भटक चुके हैं। आज शिक्षा का अर्थ व्यक्ति को जीवन और जगत के सम्बन्ध की जानकारियाँ भर देना मात्र रह गया है। प्राचीन समय में शिक्षा को जीविकोपार्जन के साधन से नहीं जोड़ा जाता था किन्तु आज शिक्षा आजीविका का साधन बनकर रह गई है। तीव्र गति से इसका व्यवसायीकरण हुआ है हो रहा है, इससे ऐसा विदित होता है कि हम शिक्षा के मूलभूत उद्देश्यों से ही भटक रहे हैं।

शिक्षा का वर्तमान स्वरूप :

वर्तमान शिक्षा पद्धति छात्रों के नैतिक एवं चारित्रिक विकास से संदर्भित नहीं होकर मात्र उसकी आजीविका का साधन बनकर रह गई है। आज शिक्षक और शिक्षार्थी के लिए शिक्षा का स्वरूप केवल जीविकोपार्जन का साधन बनने मात्र तक सीमित रह गया है। वर्तमान पाठ्यक्रम में जो विषयवस्तु है वह भी व्यक्ति को डॉक्टर, इंजीनियर, चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट, प्रशासनिक अधिकारी आदि की शैक्षणिक योग्यता अर्जित कराने तक सीमित हैं किन्तु उस सम्पूर्ण पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा का कहीं कोई प्रावधान नहीं है। वर्तमान शिक्षा पद्धति के माध्यम से विद्यार्थी को उच्च शिक्षा देकर भी हम एक सभ्य, सुसंस्कृत एवं शान्तिप्रिय समाज की रचना नहीं कर सके हैं।

स्कूली शिक्षा का स्वरूप :

बच्चा जन्म से लेकर विद्यालय स्तर तक जहाँ अध्ययन करता है वहाँ की स्थिति यह है कि अभिभावक बच्चे को स्कूल में प्रवेश दिलाने और उसकी फीस की व्यवस्था कर देने मात्र में अपनी जिम्मेदारी की इतिश्री मान लेते हैं। वह कभी यह जानने की कोशिश ही नहीं करते हैं कि स्कूल में बच्चा किन साथियों की संगति में रहता है, उसके शिक्षक उसे पुस्तकीय ज्ञान के अतिरिक्त कोई नैतिक अथवा चारित्रिक शिक्षा देते भी हैं अथवा नहीं? इसी के समानान्तर जब हम इसकी दूसरी ओर देखते है तो अधिकांश शिक्षकों का स्तर भी आज नैतिकता और चारित्र के धरातल पर टीका हुआ प्रतीत नहीं होता क्योंकि शिक्षकों के चयन का आधार वर्तमान में नैतिक मूल्यों की अपेक्षा विद्यालयों के संचालकों की मेहरबानी, प्रधानाध्यापक की चाटुकारिता और राजनीति के प्रभाव से होने लगा है। परिणाम स्वरूप ज्ञान और चारित्र से शून्य किन्तु चाटुकारिता में चतुर व्यक्ति आज शिक्षक वर्ग के रूप में अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। अत: उनसे बच्चों के चरित्र निर्माण की विशेष अपेक्षाएं नही रखी जा सकती हैं। मेरे लेखन का यह अर्थ कदापि नहीं है कि सम्पूर्ण शिक्षक वर्ग चारित्र शून्य है किन्तु व्यवहार में शिक्षकों को आचरण की जो बहुलता हम देख रहे हैं उसी आधार पर मेरा यह सोचना है अन्यथा चरित्रनिष्ठ और जीवनदर्शन शिक्षा को समर्पित शिक्षकों का सर्वथा अभाव भी समाज में नहीं है ऐसे चुनिन्दा चरित्रवान शिक्षको के कारण ही आज भी शिक्षकों को वन्दनीय एवं पूजनीय मानकर गरिमा प्रदान की जाती है किन्तु बहुसंख्यक शिक्षकों को अपने ज्ञान के साथ ही स्वयं में चारित्रगुणों को विकसित करने की आज महती आवश्यकता है।

महाविद्यालयी शिक्षा का स्वरूप :

महाविद्यालयी शिक्षा का स्वरूप तो और अधिक विकृत होता जा रहा है। अधिकांश महाविद्यालयों में छात्र इसलिए नहीं पढ़ रहा है कि उसे पढाई पूरी कर संस्कारवान अथवा चारित्रवान

वनना है उसका लक्ष्य तो येन-केन-प्रकारेण डिग्री प्राप्त कर आजीविका से जोड़ा जा रहा है। महाविद्यालयों में मुश्किल से प्रतिदिन ३-४ घण्टे का अध्ययन होता है और उसमें हम कल्पना करें कि विद्यार्थी ज्ञानवान और चरित्रवान वनेगा तो हमारी ये कल्पना मात्र कल्पना ही है यथार्थ नहीं। परीक्षा पूर्व प्रश्न-पत्रों का वाजार में आ जाना, विना योग्यता और विषय का ज्ञान प्राप्त किये ही शिक्षकों को रुपये देकर परीक्षा उत्तीर्ण कर लेना, रुपये देकर पीएच.डी के शोध प्रवन्ध तक लिखवाना, यह सव शिक्षा का विकृत स्वरूप है जो वर्तमान में रक्तवीज की तरह वढ़ रहा है। हम सव इससे भलीभांति परिचित हैं। होना तो यह चाहिए कि महाविद्यालय स्तर की शिक्षा अर्जित करने के पश्चात् विद्यार्थी के चेहरे से ही छलकना चाहिए कि वह कितना ज्ञानवान और क्रियावान है किन्तु आज ऐसा कुछ दिखाई नहीं देता। अत: हमें शिक्षा के वर्तमान स्वरूप के साथ नैतिक शिक्षा को जोड़ने का उपक्रम अवश्य करना चाहिए।

शिक्षा का व्यवसायीकरण :

प्राचीन समय में शिक्षा कभी भी आय का स्रोत नहीं रही। शिक्षण संस्थानों की स्थापना चाहे किसी व्यक्ति ने की, किसी समाज ने की अथवा शासन की ओर से की गई हो, सभी उसमें शैक्षणिक गतिविधियों के लिए धन का व्यय करते थे। धनाढ्य व्यक्ति अथवा सम्पन्न समाज अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के पश्चात् रचनात्मक कार्यों में धन खर्च करने के लिए शिक्षा दान को उचित माध्यम मानते थे और इसी कारण जगह-जगह स्कूलों, महाविद्यालयों, धार्मिक पाठशालाओं, विविध शोध संस्थानों आदि की स्थापना उनके द्वारा की जाती थी और विना अर्थ लाभ के हमेशा अपनी ओर से कुछ न कुछ धन उसमें विनियोजित करने की ही उनकी भावना रहती थी। शासन के आय के स्रोत अन्य थे किन्तु शिक्षा कभी भी शासन की आय का स्रोत नहीं थी, वर्तमान में परिस्थितियाँ सर्वथा इसके प्रतिकूल दिखाई देती हैं। पहले उदारमना दानी महानुभाव शिक्षण संस्थानों की स्थापना करते थे आज उद्योगपति शिक्षण संस्थानों की स्थापना कर रहे हैं। पूंजीपतियों को आज शिक्षा सवसे वड़ा उद्योग दिखाई दे रहा है। वे अल्प समय में जितनी धन सम्पदा अन्य उद्योगों से अर्जित नहीं कर सकते उससे अधिक धन-सम्पदा अर्जित करने का माध्यम उन्होंने शिक्षा संस्थानों की स्थापना कर उद्योग के रूप में उसका संचालन कर सम्पत्ति अर्जन करना वना रखा है।

शासन द्वारा भी पूर्व में शिक्षा, चिकित्सा आदि पर धन व्यय किया जाता था किन्तु आज शासन ने भी शिक्षा को सम्पत्ति अर्जन का माध्यम वना लिया है और इतनी ऊँची फीस स्कूलों, महाविद्यालयों तथा विविध तकनीकी पाठ्यक्रमों की कर दी गई है कि सामान्य परिवार के बच्चों के लिए ऐसी शिक्षा ग्रहण करना अव सहज नहीं रहा है।

समाज में आज भी ऐसे शिक्षा प्रेमी और उदारमना व्यक्ति मौजूद हैं जो अपने पुरुषार्थ से अर्जित सम्पत्ति का विनियोजन वच्चों को उच्च शिक्षा और नैतिक शिक्षा देने पर करना चाहते हैं। आवश्यकता इस बात है कि हम वर्तमान विकृत शिक्षा पद्धति से परे एक सुसंस्कारित और चरित्र निर्माण करने वाली शिक्षा पद्धति को विकसित करें और तद्नुरूप शिक्षण संस्थानों की स्थापना करें।

प्रतिभा पलायन की समस्या :

हमारे देश में प्रतिभाओं की कोई कमी नहीं है। हम अपने चहुंओर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होता है कि हमारे कई प्रतिभावान विद्यार्थी जो आज यहाँ शिक्षा के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किये हुए है, विदेशों में उनकी योग्यता की परख करते हुए तुरन्त ही उन्हें मोटी रकम देकर अपने यहां सेवा देने हेतु नियुक्त कर लिया जाता है इस प्रकार प्रतिभा पलायन को रोकना हमारे लिये अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि उन प्रतिभाओं को उनकी प्रतिभा के अनुरूप कार्य करने का समुचित अवसर यहां अपने देश में दें। यदि ऐसा होता है तो हमारी प्रतिभाओं के माध्यम से निर्मित तकनीकी जिसको हम विदेशों से आयातित करते हैं, वह नहीं करनी पड़ेगी और हम अपनी ही प्रतिभाओं से तकनीकी क्षेत्र में भी गुणवत्ता के मापदण्ड प्राप्त कर देश की समृद्धि और विकास में सहयोगी वन सकेंगे।

प्राचीन समय में व्यक्ति आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षा ग्रहण करता था और वह शिक्षा उसे अपने धर्माचार्य से विना कुछ धन व्यय किये सहज ही प्राप्त हो जाती थी किन्तु वर्तमान व्यावहारिक शिक्षा जिसका सीधा संवंध व्यक्ति को रोजगार दिलाने से है विना धन के व्यय किये प्राप्त नहीं हो सकती। आज गुरु और शिष्य के वीच जो सम्वन्ध हैं उसमें आदर का भाव प्राय: लुप्त हो चुका है क्योंकि इन दोनों के वीच पढ़ने और पढ़ाने के लिए राशि को लेकर सौदेवाजी होती है और जहाँ राशि को लेकर सौदेवाजी होती हो वहां कोई गुरु यह अपेक्षा करे कि शिष्य मुझे आदर और सम्मान देगा तो यह उसकी भूल है क्योंकि गुरु को आदर और सम्मान उस काल में दिया जाता था जव गुरुकुल पद्धति थी। विद्यार्थी आश्रम में रहकर अपने गुरु से नि:शुल्क शिक्षा अर्जित करता था। वर्तमान में गुरु-शिष्य सम्वन्धों में जो गिरावट आई है उसके लिये वर्तमान शिक्षण

पद्धति और शिक्षा को जीविकोपार्जन का साधन मानना दोनों ही समान रूप से जिम्मेदार हैं। गुरु-शिष्य की चर्चा करते हुए जैन साहित्य में कहा गया है कि नाना प्रकार के परिषहों को सहन करने वाले, लाभ-हानि में सुख-दु:ख रहित रहने वाले, अल्प इच्छा में संतुष्ट रहने वाले, ऋद्धि के अभिमान से रहित, उस प्रकार सेवा सुश्रुषा में सहज तथा गुरु की प्रसंशा करने वाले ऐसे ही विविध गुणों से सम्पन्न शिष्य की कुशलजन प्रशंसा करते हैं। समस्त अहंकारों को नष्ट करके जो शिक्षित होता उसके वहुत शिष्य होते हैं किन्तु कुशिष्य के कोई भी शिष्य नहीं होते। शिक्षा किसे दी जाए इस सम्बन्ध में जैन साहित्य में कहा गया है कि किसी शिष्य में सैकड़ों दूसरे गुण क्यों न हो किन्तु उसमें यदि विनय गुण नहीं है तो ऐसे पुत्र को भी वाचना नहीं दी जाए फिर गुण विहीन शिष्य को तो क्या? अर्थात् उसे तो वाचना दी ही नहीं जा सकती। चन्द्रवेध्यक प्रकीर्णक में ज्ञान गुण की चर्चा करते हुए जो विवेचन किया गया है वह दृष्टव्य है। वहां गया है कि वे पुरुष धन्य हैं जो जिनेन्द्र भगवान द्वारा उपदिष्ट अतिविशिष्ट ज्ञान को जानने हेतु समर्थ नहीं है फिर भी जो चारित्र से सम्पन्न है वस्तुत: वे ही ज्ञानी हैं। (गाथा ६८)

ज्ञान से रहित क्रिया और क्रिया से रहित ज्ञान तारने वाला अर्थात् सार्थक नहीं होता जवकि क्रिया में स्थिर रहा हुआ ज्ञानी संसाररूपी भवसमुद्र को तैर जाता है (गाथा ७३)। आगे यह भी कहा है कि जिस प्रकार शस्त्र से रहित योद्धा और योद्धा से रहित शस्त्र निरर्थक होता है उसी प्रकार ज्ञान से रहित क्रिया और क्रिया से रहित ज्ञान निरर्थक होता है (गाथा ७५)।

सम्यक् चारित्र की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए कहा गया है कि सम्यक् दर्शन से रहित व्यक्ति को समयक् ज्ञान नहीं होता है और सम्यक् ज्ञान से रहित व्यक्ति को सम्यक् चारित्र नहीं होता है तथा सम्यक् चारित्र से रहित व्यक्ति का निर्वाण नहीं होता है (गाथा ७६)। इस प्रकार जैन साहित्य में व्यक्ति की योग्यता का मापदण्ड उसके जीवन मूल्यों में नैतिकता और सदाचार से रहा है जिसकी आज महती आवश्यकता है।

जैन शास्त्रों में वर्णित गुरु-शिष्यों का यह सम्बन्ध उच्च नैतिकता के धरातल पर आधारित है आज न तो ऐसे गुरु उपलब्ध हैं और न ही ऐसे शिष्य। समाज और शासन को इस दिशा में ईमानदारी पूर्वक प्रयास करने चाहिये कि बच्चों को व्यावहारिक शिक्षा के साथ ही नैतिक शिक्षा भी देने की व्यवस्था की जाये। निष्ठावान शिक्षकों का सम्मान भी गरिमा के साथ किया जाये और समाज में उन्हें आर्थिक समृद्धि उपलब्ध कराते हुए उच्च स्थान प्रदान किया जाये तो शिक्षा के स्वरूप में सुधार के अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रतिभा पलायन और शिक्षा के व्यावसायीकरण को रोकने के लिए हमें इमानदारी पूर्वक प्रयास करने होंगे तभी हम एक सभ्य, सुसंस्कृत और नैतिक समाज की रचना कर सकेंगे।

सहनिदेशक,
आगम-अहिंसा, समता एवं प्राकृत संस्थान, उदयपुर (राज)

■

अभयकुमार पांडे, एम.एस.सी., बी.एड.

आदिम महाविस्फोट (बिग बैंग)

ऋग्वेद का एक सूक्त है –

''को अद्धा वेद क इह प्रवोचत्
कुत्त आजाता कुत इयं विसृष्टि: ।
अर्वाग् देवा अस्य विसर्जनेना–
ऽथा को वेद यत आवभूव ।
इयं विसृष्टिर्यत आवभूव
यदि वा दधे यदि वा न ।
यो अस्याध्यक्ष: परमे व्योमन्
सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद ।।''

अर्थात् यह सृष्टि किससे उत्पन्न हुई, किसलिए हुई, इसे वस्तुत: कौन जानता है? देवता भी वाद में पैदा हुए, फिर जिससे यह सृष्टि उत्पन्न हुई उसे कौन जानता है?

किसने विश्व को वनाया और वह कहाँ रहता है, इसे कौन जानता है? सवका अध्यक्ष परमाकाश में। वह शायद इसे जानता है अथवा वह भी नहीं जानता।

विश्व की उत्पत्ति संवंधी जिज्ञासा, मानव चिंतन के इतिहास में वहुत पुरानी है। रात्रि के समय आकाश के तारों को देखकर सहज ही जिज्ञासा होती है कि ये क्या हैं? कितनी दूर हैं? संसार का विस्तार कहाँ तक है? सृष्टि का आरंभ कव हुआ? कैसे हुआ? इसका अंत कव और कैसे होगा?

मिथकों की भाषा में सीमित प्रेक्षणों के आधार पर इन सवालों के उत्तर प्रस्तुत करने का प्रयास प्राय: सभी प्राचीन सभ्यताओं ने किया। ऋग्वेद का एक ऋषि कहता है कि शायद परमात्मा भी नहीं जानता कि यह सृष्टि उत्पन्न कैसे हुई थी? किससे हुई? किसलिए हुई? ऊपर उल्लिखित श्लोक से यह स्पष्ट है और ऋग्वेद का ही ऋषि आगे चुनौती देते हुए कहता है–

''इह ब्रवीतु य उ तच्चिकेतत्''

यानि यह सव जानने वाला यदि कोई है तो यहाँ आकर वताए।

इस चुनौती को स्वीकार करना खेल नहीं था। हाल ही में इस पुरातन चुनौती को स्वीकार करने में वैज्ञानिक समर्थ हुए हैं। इस चुनौती के संभाव्य उत्तर देने में वैज्ञानिकों ने विभिन्न अनुसंधानों जिसमें खगोल-भौतिकी, नाभिकीय-भौतिकी, खगोलीय गणित के क्षेत्रों की मदद से करने का प्रयास किया है।

वीसवीं सदी के लगभग दूसरे दशक तक भी कोई वैज्ञानिक तारों के परे विश्व का विस्तार कहाँ तक है, नहीं जानता था। तीसरे दशक में अमरीकी खगोल शास्त्री 'एडविन हव्वल' ने वताया कि हमारी आकाशगंगा के परे अनेक मंदाकिनियाँ मौजूद हैं। ये सव समूह या गुच्छ वनाती हैं। एक गुच्छे में २५-३० से लेकर एक हजार तक मंदाकिनियाँ हो सकती हैं। करीव सात दशक पहले मंदाकिनियों के वारे में एक और अत्यंत महत्व की जानकारी मिली। इसके अनुसार दूर की मंदाकिनियाँ हमसे अधिक दूर भाग रही हैं। जो हमसे अधिक दूर हैं वे और अधिक वेग से पलायन कर रही हैं। 'एडविन हव्वल' ने पलायन, वेग और मंदाकिनियों की दूरी से संवंधित एक नियम भी प्रस्तुत किया।

अव यदि 'एडविन हव्वल' के तर्क की तरफ ध्यान दें तो यह समझने में देर नहीं लगेगी कि जो चीज हमसे दूर जा रही है वह निश्चित रूप से कभी पास रही होगी। अतीत में एक समय ऐसा भी रहा होगा जव सभी मंदाकिनियाँ एक दूसरे के वहुत नजदीक हों।

यदि हम एक फूले हुए गुव्वारे की कल्पना करें जिसके ऊपरी सतह पर फैलाव हो तथा इसमें और हवा भरी जाय तो यह निरंतर फैलेगा और एक समय ऐसा होगा जव यह विस्फोट के साथ फट जायेगा। इसी प्रकार मंदाकिनियों के गुच्छ, जव संतुलन-विचलन के प्रभाव से महाविस्फोट के रूप में अलग हुए तो खगोलविदों ने इस घटना को विग-वैंग का नाम दिया। यह घटना एक कल्पना ही है, परन्तु 'हव्वल' के नियम से प्रभावित होकर सत्य प्रतीत होती है।

विश्व के समस्त द्रव्य एवं ऊर्जा के वारे में भी हम कह सकते हैं कि अतीत में सारा द्रव्य एक स्थान पर पुंजीभूत था और एक महाविस्फोट की विलक्षण घटना ने उसका छितराव कर दिया।

अभी करीव पाँच दशक पहले एक अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धि हुई। इसे समझने के लिए द्रव्य तथा ऊर्जा की स्थितियों पर विचार करना होगा। प्रारम्भिक अवस्था में उस अतिघनीभूत द्रव्य का तापमान वहुत ऊँचा रहा होगा। यह इसलिए होगा कि इस समय द्रव्य के साथ-साथ प्रचूर मात्रा में विद्युत चुंवकीय विकिरण भी मौजूद रहा होगा। इतना ही नहीं एक समय में द्रव्य और विकिरण का संतुलन भी होगा। परंतु कालान्तर में, विश्व के विस्तार के साथ, उस आदिम विकिरण का भी फैलाव होता गया और इस तरह उसका तापमान निरंतर घटता गया। विग बैंग के वाद की १५ से २० अरव सालों की लंवी अवधि में उस विकिरण का तापमान इतना घट गया कि अव उसके अवशेष 'माइक्रोवेव' के रूप में पहचाने जा सकते हैं।

अवशिष्ट माइक्रोवेव की परिकल्पना 'जार्ज गेमोव' ने काफी पहले ही प्रस्तुत कर दी थी। समूचे विश्व में व्याप्त ऐसे माइक्रोवेव की खोज १९६४ में खगोल विद 'आरनो पेजियाज' और 'रावर्ड विल्सन' ने की। इसका तापमान करीब ३ डिग्री केल्विन (-२७०°C) है।

इन सबूतों के कारण विश्वोत्पत्ति संवंधी 'विग बैंग' मॉडल को ज्यादा उपयुक्त माना गया। इसका यह भी मतलव नहीं है कि हमें सारे सवालों के हल प्राप्त हो गये हैं। वस्तुत: इस सिद्धान्त की कई वातें अभी स्पष्ट नहीं हो पायी हैं। हम यह नहीं जानते कि यह महाविस्फोट क्यों हुआ। उस समय या उसके पहले दिक, काल, द्रव्य या ऊर्जा की क्या स्थिति रही है। इन सव प्रश्नों पर विचार करने पर वैज्ञानिकों ने पहले यह पता लगाना चाहा कि उस आदिम महाविस्फोट की घटना के १५-२० अरव वर्षो वाद विश्व की स्थिति कैसे वदली और किस तरह इस रूप में आयी। वैज्ञानिकों के अनुसार यदि आज की स्थिति के वारे में सोचें तो द्रव्य तथा ऊर्जा के संतुलन के वारे में किसी निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं और उस समय उसमें असंतुलन क्यों हुआ इसके वारे में कोई धारणा वना सकते हैं। सारांश यह कि विश्वोत्पत्ति के आरम्भिक क्षणों की परिस्थितियों के वारे में यकीन के साथ कुछ वताया नहीं जा सकता। यह सही है कि महाविस्फोट के वाद ही दिक् और काल अस्तित्व में आए हैं, मगर 'शून्य काल' में या उसके पहले दिक्काल और द्रव्य ऊर्जा की क्या स्थिति रही है, इसके वारे में फिलहाल केवल परिकल्पनाएँ ही प्रस्तुत की जा सकती हैं।

अव जरा आगे की कल्पना की जाय। प्रश्न यह है कि विश्व खुला है या वंद? इसे जानने का क्या उपाय है? विश्व में मौजूद समस्त द्रव्य की मात्रा और घनत्व की जानकारी यदि हमें मिल जाय तो इसके वारे में कहा जा सकता है। यदि द्रव्य का संचय एक निश्चित मात्रा से अधिक है तो गुरुत्वाकर्षण शक्ति देर-सवेर विश्व के विस्तार को पूर्णत: रोक देगी और उसके वाद मंदाकिनियाँ एक दूसरे के निकट पहुँचने लगेंगी। पर यह पता चला है कि गुरुत्वाकर्षण द्वारा रोक लगाने के लिए जितने द्रव्य की जरुरत है उसका केवल करीव दस प्रतिशत द्रव्य ही विश्व में खोजा गया है। तो क्या विश्व का विस्तार निरंतर जारी रहेगा? कुछ वैज्ञानिक तो अभी यही धारणा रखे हैं। पर कुछ के अनुसार द्रव्य की लीलाएँ वड़ी विचित्र हैं। विश्व का काफी द्रव्य अभी हम सवके लिए अदृश्य है। और इसी परिकल्पना पर द्रव्य की खोज में 'व्लैक होल' थ्योरी प्रकाश में आ रही है। यदि विश्व में सचमुच और द्रव्य हैं जिससे गुरुत्वाकर्षण वल इसका विस्तार रोक देगा तो फिर यह आदिम महाविस्फोट की घटना होगी। और यदि ऐसा नहीं है तो सारी मंदाकिनियाँ विश्व से पलायन के रास्ते पर रहेंगी। इस क्रम में विश्व का तापमान गिरेगा और धीरे-धीरे उसकी मृत्यु होगी।

कोई यह प्रश्न पूछ सकता है कि भविष्य में मानव-समाज की क्या स्थिति होगी? विश्व चाहे जैसा भी हो वंद या खुला, आगे के सालों में मनुष्य अपना अस्तित्व कायम रख सकता है पर वहुत दूर भविष्य के वारे में कुछ कहा नहीं जा सकता। अभी तो यही चिंता है कि मानव कहीं अपने हाथों ही अपना अस्तित्व न मिटा दे।

श्री जैन विद्यालय, कोलकाता

■

डा० पारस जैन

होम्योपैथी मानव के लिए वरदान

चिकित्सा का प्राकृतिक विधान जिसे होम्योपैथी कहते है का आविष्कार डा० सेमुअल हैनिमेन ने १९वीं शताव्दी के प्रारम्भ में किया था। इस प्राकृतिक नियमावलित चिकित्सा प्रणाली ने चिकित्सा जगत में एक क्रांति उत्पन्न कर दी है। इसकी आश्चर्यमय आरोग्यकारिणी शक्ति ने अन्य चिकित्सा शैली के वड़े-वडे डाक्टरों को भी विस्मित कर दिया है और यही कारण है कि आज समग्र पृथ्वी के लाखों लोगों ने इस आदर्श चिकित्सा प्रणाली को अपनाया है। होम्योपैथी में स्वस्थ मानव शरीर पर औषधियों की परीक्षा होती है। मनुष्यों पर सारे प्रयोगों को करने के पश्चात महात्मा हैनिमेन ने यह सत्य सिद्धान्त, प्रतिपादित किया, ''जिस औपधि की मात्रा स्वस्थ मानव शरीर पर जो विकार पैदा करती है उसी दवा की लघु मात्रा वैसे ही समलक्षण युक्त प्राकृतिक रोग को आरोग्य भी करती है।

यही तो है ''सम सम: शमयति'' इसी को अंग्रेजी में सीमिलिया, सीमिलवस क्यूंरेटर कहते हैं इसी का नाम डा० हैनिमेन ने रखा होम्योपैथी। होम्योपैथी में स्वस्थ मानव शरीर पर औपधियों की परीक्षा होती है अत: होमियोपैथी में मानसिक लक्षणों को सर्वोपरि स्थान दिया गया है।

क्या चूहे, कुत्ते, विल्ली, वंदर, खरगोश आदि जानवरों के मानसिक लक्षण मनुष्य के मानसिक लक्षणों से मिल सकती है? कदापि नहीं। होम्योपैथी के निश्चित सिद्धान्त हैं। प्राकृतिक नियम के आधार पर स्थापित होने के कारण कभी वदलते नहीं। इस विज्ञान में जो आज सच है वह हमेशा सत्य रहेंगे। यही कारण है कि होम्योपैथी दिनों-दिन लोकप्रिय होती जा रही है, एक होम्योपैथ का दवाई का चुनाव किसी की राय पर निर्भर नहीं है। यदि कोई पूछे कि रोग के नाम पर नहीं जीवाणु व कीटाणु की शक्लसूरत पर नहीं, शरीर यंत्र के स्थूल परिवर्तन पर नहीं, स्वयं की राय पर नहीं तो फिर किस पर निर्भर है तो इसका उत्तर होगा कि रोगी के धातुगत विशेष लक्षणों पर, इसलिए होम्योपैथी के मशहूर डा० केंट ने बार-बार कहा है ट्रीट द पेशेंट नाट द डीजीज'' इस प्रकार होम्योपैथी में रोगी की चिकित्सा की जाती है न कि रोग की।

होम्योपैथ के लिए रोगी ही सर्वस्व है, रोग क्या है? यह जानना असंभव है। और रोग का कारण सूक्ष्म है, जीवन शक्ति अदृश्य है। इसलिए उसे पर जो रोग शक्ति आक्रमण करती है वह भी अदृश्य है। जीवन शक्ति को ही रोग होना सम्भव है क्योंकि यह शक्ति रहने से ही रोग होता है वरना नहीं होता होम्योपैथी द्वारा कई जटिल रोग ठीक होते देखे गये हैं।

पाइल्स, वार्टस कार्नस, चर्म रोग इससे ठीक हो जाते हैं। पथरी रोग में भी होम्योपैथी वड़ी कारगर हुई। १३-१४ एम०एम० तक की पथरी मूत्र मार्ग से निकल जाती है। मैंने स्वयं ३५०० से अधिक लोंगों की पथरियों को विना आपरेशन के निकालने में सफलता प्राप्त की है।

टैगोर मार्ग, नीमच

होम्योपैथिक डाक्टर्स एसोसियेशन आफ इण्डिया शाखा उज्जैन द्वारा
डा० पारस जैन को महात्मा हनीमेन सम्मान प्राप्त हुआ है।

■

किशोर जेवरिया

हिन्दुओं में जातिगत भेदभाव एवं धर्मान्तरण

''इशावास्यमिंद सर्व यत्किंच जगत्यां जगत

अर्थात् यह दृश्मान सब, ओर जो कुछ भी जगत है वह सब ईश्वर से आच्छादित है, ईश्वर में बसने योग्य है। उसमें ईश्वर विद्यमान है।

उपनिषद की ये पंक्तियां यदि सही हैं तो फिर उपनिषदों को मानने वाले हिन्दुओं में ईश्वर के बनाये हुए मनुष्यों में भेदभाव क्यों? वह यदि प्राणी-मात्र में विद्यमान है तो फिर मनुष्यों में अछूत कैसे? हिन्दुओं के एक बड़े वर्ग को अछूत अथवा शुद्र कहकर तथाकथित उच्च जाति के लोगों ने वर्षो छला है और आज जब वह उनके समकक्ष खड़ा होने की स्थिति में आने लगा है तो यह उन्हें बर्दाश्त नहीं हो पा रहा है। सदियों से समाज में दबे, कुचले, तिरस्कृत एवं हेयदृष्टि से देखे जाने वाले उस वर्ग को अपने बीच खड़ा पाकर वे उसे पचा नहीं पा रहे हैं।

दुनिया में अपने आपको सर्वश्रेष्ठ बताने वाले हिन्दू धर्म पर हम दृष्टि डालें तो विश्व में सबसे अधिक धर्मान्तरण यदि किसी धर्म में हुए हैं तो वह हिन्दू धर्म में। इसका सबसे बड़ा कारण हिन्दुओं में जातिगत भेद भाव। एक जाति को उच्च वर्ग एवं एक जाति को निम्नवर्ग में बांटने के कारण मनुष्य में भेद किया गया, उनको छूने से परहेज किया गया इस कारण हिन्दुओं में सबसे अधिक धर्मान्तरण हुआ। बौद्ध, जैन, सिख, मुस्लिम अथवा ईसाइयों में जातियां हो सकती हैं परन्तु उनमें कार्य के अनुसार जातियां नहीं बनाई गयी, नहीं उनमें कोई छूत-अछूत रहा, चाहे वह धर्म उपदेशक रहा हो, चाहे विद्या प्रदान करने वाला रहा हो, सैनिक हो, व्यापारी हो अथवा जूते चप्पल बनाने वाला, अथवा सफाई करने वाला हो, सभी को पूजा स्थलों में जाने की पूर्ण स्वतन्त्रता रही है। किसी बौद्ध को कर्म के आधार पर मठ में जाने से वंचित नहीं किया गया, किसी को जाति के कारण मस्जिद में आने से नहीं रोका गया, ना ही कोई गिरजाघरों में प्रार्थना करने से वंचित किया गया। सभी सिक्खों को गुरुद्वारे में मत्था टेकने में वर्ण एवं वर्ग भेद नहीं किया गया।

जबकि हिन्दुओं में उच्च कहे जाने वालों ने शुद्रों के साथ हमेशा घटिया व्यवहार किया। यही कारण है कि हिन्दुओं में सबसे अधिक धर्मान्तरण हुआ है, वह भी निम्न समझे जानेवाले शुद्रों द्वारा। अपवाद छोड़ दें तो ब्राह्मणों एंव वैश्यों में धर्मान्तरण नहीं हुआ। क्षत्रियों में भी जो धर्मान्तरण हुआ है वह अपने राज अथवा जान बचाने के कारण ही हुआ है। वह भी किसी विशेष काल खण्ड में। परन्तु शुद्रों ने लगातार तिरस्कार और जहालत झेलने के कारण धर्मान्तरण किया। वर्ण व्यवस्था के अनुसार अपने आपको श्रेष्ठ बताने के लिए शरीर से वर्णों की तुलना की गई, शरीर के उच्च भाग सिर को बुद्धि का निवास मानकर सर्वश्रेष्ठ बताया गया उसकी तुलना ब्राह्मण से की गई। वक्ष एवं भुजाओं को शक्ति का केन्द्र मानकर उसकी तुलना क्षत्रिय अर्थात् राजा से की गई। उदर भाग को व्यापार से जोडकर वैश्य एवं शरीर के निचले भाग पैरों को शुद्र की संज्ञा दी गई। इस तरह से कई दृष्टान्त गढ़े गये।

किसी हिन्दू ने इस्लाम अथवा ईसाई मत को स्वीकार किया हो तो वहां उसका स्वागत हुआ। उसे धर्म में समान अधिकार प्रदान किये गये। उसको किसी मस्जिद अथवा गिरजाघर में जाने से नहीं रोका गया। उसकी इबादत अथवा प्रार्थना के बाद किसी मस्जिद अथवा गिरजाघर को धोकर शुद्ध करने का नाटक नहीं किया गया। उसके छूने से कोई अपवित्र नहीं हुआ कि उसे अपने ऊपर गंगाजल छींटें मारना पड़े अथवा स्नान करना पड़े।

धर्मान्तरण के अन्य कारण जैसे तलवार के बल पर अथवा लालच भी रहे हैं, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। इसके कारण होने वाले धर्मान्तरण इतने नहीं रहे हैं। गरीबी को कारण माने तो हिन्दुओं से ज्यादा गरीबी तो मुलसमानों में है

परन्तु उनमें कोई लालच के कारण अपना धर्म नहीं छोड़ता। उनमें जातिगत भेदभाव नहीं होने से कोई धर्म नहीं छोड़ता। मुसलमानों अथवा ईसाइयों में से हिन्दू वनने वालों की संख्या नगण्य है। यदि कोई है तो उसे उंगलियों पर गिना जा सकता है। जवकि हिन्दुओं से मुसलमान अथवा ईसाई वनने वालों की संख्या लाखों में है जो आज करोड़ों में पैदा हो गये हैं। मुस्लिम धर्मान्तरण को तलवार से और ईसाई धर्मान्तरण को लालच से जोड़कर देखा जाता है, दोनों ही धर्म के मानने वाले हिन्दुस्तान में वाहर से आये थे, उन्हें हमारे यहां अपने आपको स्थापित करने के लिए हिन्दू नहीं वनना पड़ा। उल्टे हिन्दुओं की भेदभाव पूर्ण समाज व्यवस्था का फायदा उठाकर अपने धर्मावलम्वियों की वृद्धि की। क्योंकि उनके यहां पे जातिगत भेदभाव नहीं था। उनके यहां धर्मान्तरित होकर आये हिन्दू का स्वागत किया गया। हिन्दुओं में यदि कोई मुस्लिम लड़की से शादी करके आया तो तव की वात छोड़िये आज भी ववाल मच जाता है। हिन्दुओं में उसका स्वागत नहीं तिरस्कार किया जाता था। उसके परिवार के लोग या तो उसे घर से वेदखल कर देते थे या यदि रखा भी तो उसके हाथ का वना खाना खाना तो दूर उसके रसोई में घुसने पर भी पावन्दी लगाा देते थे। आज भी क्या हिन्दू इस मानसिकता में है कि यदि कोई मुस्लिम लड़की उनके परिवार में विवाह कर आये तो उसे हिन्दू वहू की तरह घर में सव कामकाज करने देंगे ?

महात्मा गांधी, महर्षि दयानन्द, ज्योति वा फूले एवं डा० भीमराव अम्वेडकर जैसे महापुरुषों के प्रयासों के कारण ही जातिगत भेदभाव में कमी आई और सरकार को ऐसे कानून वनाने पड़े जिसके कारण शहरों में काफी हद तक जातिगत भेद भाव समाप्त हो गया है परन्तु गांवों में आज भी जाति के आधार पर ही व्यक्तियों क्रो जाना जाता है।

हिन्दू धर्म की रक्षा करने वाले तथाकथित ठेकेदारों को समझना चाहिये कि उक्त महापुरुषों के कारण ही हिन्दुओं को हिन्दू धर्म में सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार प्राप्त हुआ है और धर्मान्तरण रुका है।

पंजाव नेशनल वैंक, नीमच

■

श्री नेमिचन्द सुराणा
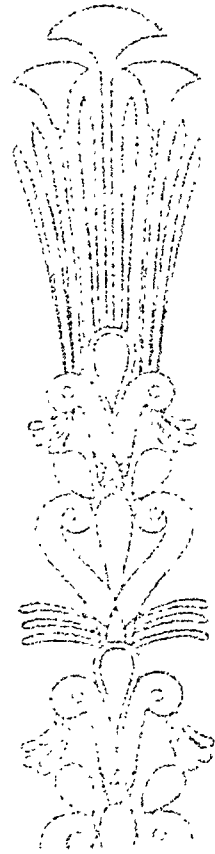
जैन संस्थाओं का दशा और दिशा

किसी भी शिक्षण संस्था के संगठन का मूल उद्देश्य बच्चों के शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास पर निर्भर करता है और वह भी उस संस्था के तपेतपाये, कर्मठ एवं भावनाशील व्यक्तित्व पर आधारित है। यदि वह संस्था धार्मिक शिक्षण पर ध्यान केन्द्रित कर चलती है तो बच्चों के गुणात्मक विकास में योगदान मिलता है। यहां प्रसंग जैन शिक्षण संस्थाओं की प्रभावी भूमिका पर होने के नाते हमें विचार करना होगा कि क्या वस्तुत: ये संस्थायें अपने पुरातन गुरुकुलीय वातावरण के अनुकूल छात्रों के जीवन निर्माण में योगदान करती है कि नहीं? प्राचीन गुरुकुलीय पद्धति केवल बच्चों की दिशा धारा को शिक्षा तक सीमित न रखकर विद्या को जीवन का लक्ष्य मानती थी जिससे वच्चे चरित्रवान, सुयोग्य नागरिक वनकर समाज व राष्ट्र की सेवा के लिए समर्पित होते थे। आज तो जो कुछ दिया जा रहा है वह शिक्षा मात्र है जो जीवकोपार्जन के लक्ष्य की पूर्ति मात्र करती है। विद्या से उसका कोई सरोकार नहीं, समाज व राष्ट्र के प्रति जीवन-जीने की कला का विकास नहीं करती, यही कारण है कि आज भारत जो पुरातन काल में विश्व गुरु कहलाता था, उसकी वह विश्वगुरुता स्वप्निल वन गयी है।

आज आवश्यकता है बच्चों के सर्वांगीण विकास पर आधारित उस विद्या की जो बच्चों में देवत्व की प्राण प्रतिष्ठा करे, जो उसके विवेक को जागृत कर विवेकानंद बनाये, उसे दयानंद बनावे, उसे नर से नरोत्तम बनाये। यदि देश को अपनी दयनीय मन स्थिति से उबार कर विचार क्रान्ति के राह पर अग्रसर कर सके तो गांधी व नेहरू की जमात खड़ी करनी पड़ेगी जो राष्ट्र को एक ऐसे मोड़ पर ला कर खड़ा करे, जो जनतंत्र प्रणाली से देश को अग्रसर कर सके।

पुरातन कालीन शिक्षण संस्थाओं से निकलने वाले छात्र न केवल मेधावी होते थे, वरन् अपने उन्नत चरित्र से संस्थाओं की साख बढ़ाने में योगदान करते थे। संस्थाओं के कर्णधारों का एक विशिष्ट लक्ष्य होता था जिसकी प्राप्ति के लिए अनवरत लगे रहते थे। यह कहूं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि संस्थायें उनके नाम पर जानी पहचानी जाती थीं, जिनके आकर्षण का बीज ही डूब गया है। आज भी कतिपय शिक्षण संस्थाएं उल्लेखनीय कार्यकर रही है यथा जैन गुरुकुल पंचकुला, जैन गुरुकुल छोटी सादड़ी (जो अब बंद हो गयी है) जैन गुरुकुल ब्यावर, गांधी विद्यालय गुलाबपुरा आदि। देश के अन्य भागों में भी ऐसी संस्थायें चलती थी जो ट्रस्ट द्वारा संचालित होती थी। स्वतंत्रता से पूर्व व बाद ऐसी संस्थाएं संचालित होती थीं जिनका पाठ्यक्रम जैन दर्शन पर आधारित था तथा राजकीय शिक्षातंत्र के आधार पर ही शिक्षा व व्यावहारिक विषयों का अध्ययन व अध्यापन कराया जाता था। उस समय की शिक्षण संस्थाओं के प्राचार्य एवं शिक्षकों का नैतिक आचरण भी उत्कृष्ट था अत: ये शिक्षण संस्थायें समाज में आदृत थीं। वर्तमान में चल रही शिक्षण संस्थायें केवल जैन नाम की प्रतीक मात्र हैं किन्तु जैन दर्शन पर आधारित मूल्यों का स्थान उनमें नगण्य है।

समय के वदलाव के साथ शिक्षा के लक्ष्यों में परिवर्तन होता रहता है और इसका प्रभाव शिक्षा पर पड़े विना नहीं रहता किन्तु स्वतंत्रता से पूर्व जो शिक्षा का मापदण्ड था उसे पुनर्जीवित करने का प्रयास किया जाना चाहिये। इस दशा में शिक्षा के क्षेत्र में कम्प्यूटर और टेक्नोलोजी का महत्वपूर्ण योगदान है। इस तकनीकी स्वरूप से ये जैन शिक्षण संस्थायें फिर से अपने पुरातन आदर्श को जीवित कर सकती हैं। अव समय आ गया है कि हम नवयुग के निर्माण की आधार शिला रखें और शिक्षा को पुराने ढांचे से वाहर निकालकर वहुआयामी बनावें। शिक्षा वह हो जो हमें संस्कारित करे। वह जीवनोपयोगी हो। स्वावलम्विनी हो। विज्ञान के तीन शताव्दी के विकास ने इसे सामूहिक आत्महत्या के मार्ग पर लाकर खड़ा कर दिया है। विज्ञान वढ़ा है, पर ज्ञान घटा है। शिक्षा वढ़ी है पर विद्या में वड़ी तेज से घटोतरी हुई है। प्रत्यक्षवाद वढ़ा है पर अध्यात्मवाद को मानने वालों की संख्या में कमी हुई हैं।

हमारे ऋषिगण प्रतिकूलताओं से भरा अभावग्रस्त जीवन जीते थे फिर भी तथाकथित सुखी समद्ध कहे जाने वालों लोगों की तुलना में अधिक शांति भरा जीवन जीते थे। तब का समय सतयुग कहलाता था, अध्यात्म अपने स्वच्छ निर्मल रूप में विद्यमान था। सभी के जीवन में उतरा देखा जा सकता था। इसका एक मात्र यही समाधान है कि विज्ञान के साथ सद्भाव का समावेश हो। भौतिकी और आत्मिकी का समन्वय हो। भौतिकवाद और अध्यात्मवाद दोनों ही क्षेत्रों में जमी विद्रूपताओं को आमूलचूल निकाल बाहर करना जैसा कि ऊपर लिखा गया है कि शिक्षा जीवकोपार्जन के लिए हो किन्तु यह देखना है कि कहीं हम शिक्षा सर्जन के साथ मानवीय मूल्यों व नैतिकता का गला तो नहीं घोट रहे हैं? आज शिक्षा विद्याविहीन होने से नैतिक मूल्यों का ह्रास हुआ है। चरित्र निर्माण के लिए शिक्षा की भूमिका अहम होती है। उज्ज्वल चरित्र, श्रेष्ठ चिंतन एवं शालीन व्यवहार की धुरी है, विद्या जिसमें जीवन जीवंत होता है पर आज ऐसा कुछ नहीं दिखाई देता। जहां चरित्र और आदर्श महान होना चाहिये वहां ग्लेमर की चकाचौंध है। स्वामी विवेकानंद के कथनानुसार ''मानव की अपने जीवन की इच्छाओं का संयमित होकर वास्तविक अवधारणाओं का प्रकट होना, जिसमें मानवीयता का विकास हो, यही शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है, शिक्षा वह है जो जीवन के साधनों के अर्जन के अलावा आंतरिक चेतना को परिष्कार करे। उसमें समवेदना और भावना का समावेश हो,'' इसी कारण उपनिषद के मंत्र ''सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया'' का उद्घोष किया जा सका। शिक्षा में ऐसे पुनीत एवं दिव्य वातावरण की रचना करे कि समाज महापुरुषों के निर्माण की टकसाल बन जाय। शिक्षा ऐसी हो कि धर्म, दर्शन और संस्कृति संबंधित पाठ्यक्रम सभी में ''जीवन जीने की कला'' निहित हो।

शिक्षा के संबंध में यह दिशा बोध व्यवहार रूप में जीवन में उतरे, हमारे जीवन की समझ पैदा करे, जो विचारों में श्रेष्ठता व भावना में उत्कृष्टता लाए। उपर्युक्त विवरणानुसार आज शिक्षा का स्वरूप दिखाई नहीं देता, अतः शिक्षण संस्थाएं चाहे जैन हो या अजैन उपर्युक्त लक्ष्य को प्राप्त करें।

विजयनगर

पूर्व प्राचार्य श्री गोदावत जैन गुरुकूल, छोटीसादड़ी

■

नंदलाल बंसल, बी.ए., बी.एड.

वर्तमान शिक्षा दशा और दिशा

मेरा पूरा प्रयास बाल-शिक्षा पर केन्द्रित रहेगा जो भावी जीवन की नींव है।

तेजी से बढ़ती महत्वाकांक्षा एवं भौतिक सुखों की इच्छा ने शिक्षण के विषय में आज वर्षो से प्रस्थापित विवेक पूर्ण दिशा निर्देशों एवं मान्यताओं को जड़ (चूल) से हिला दिया है, बालक के स्वाभाविक मानवीय विकास के लक्ष्य को ध्वस्त कर दिया है।

उदाहरणार्थ बच्चे की शाला प्रवेश की उम्र को लें। हमारे यहां प्राचीनकाल में ५ वर्ष की उम्र होने पर विद्याभ्यास के लिए गुरुकुलों में भेजते थे। विश्वस्तर पर यह मान्य है कि Reading readiness comes at 5 plus। लगभग १७ वर्ष पूर्व जयपुर में एक मनोवैज्ञानिक चिकित्सक से मेरी चर्चा हुई थी। उसने भी आयु के उपरोक्त सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। उसने बताया था कि बालक को कलम पकड़ सकने, आकार बनाने, पढ़ने आदि बौद्धिक विकास की तैयारी ५ वर्ष की उम्र के बाद ही होती है। उन्होंने बताया था कि इससे पूर्व के० जी० अथवा अन्य पद्धतियों के द्वारा विभिन्न शिक्षण साधनों व उपकरणों के साथ खेलते-खेलते बच्चे की इन्द्रियों का विभिन्न प्रकार से विकास होता है। मांतेस्सरि पद्धति बिल्कुल यही करती है। उसके विभिन्न साधन पूर्ण वैज्ञानिक तरीके से बनाए गये हैं। तरह-तरह के साधनों से खेलते-खेलते अनजाने ही बच्चे के स्नायुओं में एकाग्रता, अनुशासन, सफाई, व्यवस्था, स्वालम्बन आदि का चारित्रिक विकास होता चलता है। मांतेस्यरि पद्धति में बिना पुस्तक, स्लेट, गिनती, रेखगणित की विभिन्न आकृतियों अक्षरों से परिचित हो जाता है। और ५ वर्ष की उम्र आते-आते बालक पूर्ण रूप से मानसिक दृष्टि से शाला प्रवेश के लिए तैयार हो जाता है। के० जी० – किन्डर गार्डन का अर्थ ही है खेल द्वारा शिक्षा। अत: ५ वर्ष से पूर्व की उम्र औपचारिक शिक्षा प्रारम्भ करने की नहीं है।

समृद्धि के लिए दौड़ ने किताबी शिक्षा के दबाव को इतना बढ़ा दिया है कि माता-पिता दो अढ़ाई साल के बच्चे से आशा करने लगे हैं कि वह पढ़ने, लिखने लगे। यु०के०जी० एल०के०जी० और नर्सरी से भी आगे बढ़कर प्ले ग्रुप स्कूल खुल गये हैं। इन सबमें खेल-कूद गौण, बचपन गायब। इस स्थिति के लिए माता-पिता की हविश ही एक मात्र जिम्मेदार है। बस बच्चा पढ़े। पढ़े, पढ़े। चाहे अर्थ समझ में नहीं आवे तो रटे और अच्छे नम्बरों से पास हो। हम सभी जानते हैं कि बच्चे की काफी शक्ति इसी रटने में, घोकने में खर्च हो जायेगी और स्वाभाविक सृजन शक्ति, विचार शक्ति एवं स्मृति का विकास कुण्ठित हो जायेगा। इसके साथ ही बालक एक तरफ दब्बू बनेगा तो दूसरी तरफ उद्दण्ड व हठी भी। इस अस्वाभाविक शिक्षा व्यवस्था से बालकों के शारीरिक विकास का भी बड़ा नुकसान हो रहा है– दुर्बल शरीर, आँखों पर चश्मा, उत्फुल्लता खत्म। बचपन में बचपना गायब।

दैनिक भास्कर २४ जून २००७ के अनुसार आई सी एफ ई (इण्डियन सर्टिफिकेट आफ सेकेण्डरी एजूकेशन) चाहता है कि शाला प्रवेश के समय बच्चे की उम्र ४ वर्ष हो। महाराष्ट्र शिक्षा मण्डल का नियम ५ वर्ष की उम्र का है। यही मध्य प्रदेश राज्य में भी है।

बालकों की बच्चों को जल्दी शिक्षा, अच्छी शिक्षा, अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में शिक्षा की लालसा का दोहन करते हुए शिक्षण एवं भरपूर कमाई देनेवाला व्यवसाय बन गया है। करोड़पति और अरबपति लोग भी नर्सरी सेल लगाकर व्यावसायिक शिक्षा की ऊँची व भव्य चमकदार दुकाने खोलकर बैठ गये हैं।

दोष :

एक - बच्चों के लिए पढ़ाई को और अधिक अप्रिय व बोझिल बना दिया है। छोटी कक्षाओं में पीरियड व्यवस्था ने जो कम से कम प्राथमिक स्तर तक पूर्ण अवैज्ञानिक है, बालक की रुचि, आनन्द, स्वाभाविक विकास सब रुक जाते हैं। किसी विषय का "पाठ" चल रहा है। शिक्षक व बालक पूरी तन्मयता के साथ उसके रसास्वादन में डूबे हुए हैं और अचानक पीरियड की घंटी बज जाती है। बालकों को लगता है जैसे किसी ने थप्पड़

मार दिया है। न चाहते हुए भी शिक्षक व बालकों को अगले पीरियड में लगना पड़ता है। कालांश पद्धति का एक बड़ा दुर्गुण यह भी है कि बालक भावनात्मक दृष्टि से किसी भी शिक्षक से नहीं जुड़ पाता है। उसके लिए तो वे सब विषय शिक्षिक (Subject Teacher) हैं। जबकि इन्हीं में से उस को दीदी, ताई या मौसी चाहिये किसका जब चाहे पल्लू पकड़कर मन की बात कर सके।

दूसरे– बच्चों के नैसर्गिक स्वस्थ विकास में बाधक बनता है पहले से तय शुदा दैनिक पाठ्यक्रम। शिक्षक को अपने कालांश में आना है और पहले से तैयार पाठ पढ़ाना है। उसके पास इसके लिए कोई गुंजाइश नहीं है कि उसके बच्चे आज क्या जानना चाहते हैं, क्या करना या पढ़ने की इच्छा है, आज वातावरण को देखते हुए उनकी उत्सुकता किसमें है? शिक्षक को मासिक, त्रैमासिक वार्षिक विभाजन के अनुसार पाठ्यक्रम पूरा कराने से मतलब है। अमेरिकन शिक्षाशास्त्री जान हाल्ट ने अपनी पुस्तक ''बच्चे असफल कैसे होते हैं?'' में विस्तार से प्रकाश डाला है।

तीसरा– बालक की शिक्षा में माध्यम का अति महत्वपूर्ण स्थान है। प्राथमिक स्तर तक हर हालत में शिक्षा का माध्यम बालक की मातृभाषा होना चाहिये। सभी शिक्षा-शास्त्रियों ने इसकी अनिवार्यता बताई है। अरे, किस भाषा में बालक ने शिशु अवस्था में ही रोना, गाना, गुनगुनाना सीखा है। जिस भाषा में वह घर में वे सारी बातें करता है, आनन्दित होता है। स्कूल में जाते ही सब छूट जाते हैं और सौतेली मां अंग्रेजी माध्यम उसकी झोली में डाल दिया जाता है। अभिव्यक्ति की शिक्षा का लक्ष्य होता है जिस बालक की अभिव्यक्ति शक्ति जितनी पुष्ट होगी उसका सर्वांगीण विकास उतना ही उत्तम होगा।

साठ के दशक की बात है। मैं बालनिकेतन जोधपुर में कक्षा ४ का अध्यापक था। एक दिन की बात है कि हिन्दी में अपनी पूर्व निश्चित पाठ्य सामग्री लाया था। अचानक बादल छाने लगे। हल्की बूंदें भी पड़ने लगी। बारिश का मौसम था ही। बच्चे वर्षा व बादलों सम्बन्धी चर्चा करने लगे मैंने रोका नहीं, प्रोत्साहित किया। कुछ मिनटों बाद अचानक मैंने उनसे कहा- 'आप वर्षा ऋतु पर निबंध लिखना चाहेंगे।' सबने बड़े उल्लास के साथ हां भर दी। मैंने कहा– ''आज की विशेषता यह होगी कि आज समय कितना भी लगे, हर बालक, बालिका विस्तार से अपने विचार प्रकट करे।'' एक कक्षा एक शिक्षकवाली व्यवस्था होने से कालांश व शिक्षक बदलने की कोई आवश्यकता नहीं थी। आज ५० वर्ष बाद भी मुझे उस सरिता का चेहरा याद है जिसने अपनी कापी के १४ पृष्ठ भरे थे। इस लेख में पुनरावृत्ति के अंश काट भी दिये फिर भी १० या ११ पृष्ठ का तो था ही। देखा आपने माध्यम व अभिव्यक्ति का चमत्कार।

स्वामी विवेकानन्दजी ने लिखा है (पुस्तक-शिक्षा) ''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।'' जन्मजात व वातावरण से प्राप्त शक्तियों का कैसे होगा सुन्दर विकास। कैसे हो जायेगी अभिव्यक्ति?

आइए, विचार करें हम पालक, शिक्षक व यह शिक्षण व्यवस्था। हम क्या चाहते हैं? क्या कर रहे है? और क्या पाएंगे? पा सकेंगे, बुद्धि व भावना से पूर्ण सुविकसित इन्सान। एक सुसंस्कृत, अनुशासित व प्रसन्नचित्त समाज।

अभी तक हमारी सारी कथा व्यथा हुई, बच्चे के स्वास्थ्य, शिक्षण व्यवस्था और उसकी दशा पर। अब हम चले घर परिवार में जहां बच्चा पैदा होता है, आंखें खोलता है, किलकारी करता है, तुतलाता है, बोलना चहता है–म म म मां मां ब बा, द द दा। आस पास की वस्तुओं से परिचित होना चाहता है, उनके नाम जानना-बोलना चाहता है हम सबको बोलते देखकर। और हम बड़ा प्यार दिखाते हुए बताते हैं मा मम्मी पापा, एप्पल, आंटी, अंकल। थोड़ा और आगे बढ़ें तो टीचर, मेडम, फादर। यह सब बताते, रटाते हुए हम अपने बच्चे के प्रति बड़े गौरवपूर्ण उत्तरदायित्व निर्वहन की अनुभूति करते हैं। मा, दादा, बहिन, ताई, गुरुजी ये सब तो पिछड़े लोगों के सम्बोधन हो गये।

बच्चा कुछ माह का ही हुआ और कच्छी पहनाना अनिवार्य कर दिया। साल डेढ़ साल का बच्चा कहीं बिना कच्छी सामने आ गया। माता-पिता शेम कहते उसे जबरन कच्छी पहनाने दौड़ पड़ते हैं। बच्चा मस्ती में रहना चाहता, खुला घूमना, कूदना, फांदना चाहता है। हम उससे वह सब छीन लेते हैं। तारीफ की बात यह है कि हम अविवेकी होकर बच्चे पर यह सब लाद रहे हैं। जर्मनी के प्रोफेसर जुस्ट ने अपनी पुस्तक रिटर्न टू नेचर में लिखा है कि बच्चे को ५ साल की उम्र तक नंगा घूमना चाहिये उसे पुष्ट होने दें, निकर न पहनायें।

मेरा पोता जब डेढ़ दो साल का रहा होगा, नंगा खेलता, घूमता रहता था। उसकी मां ने मुझे लाचारी भाषा में कहा ''यह बच्चा चड्डी नहीं पहन रहा है। मैने कहा मत पहनने दो, घूमने दो ऐसे ही। फिर मां ने कहा ''अच्छा नहीं लगता और उसकी ऐसी आदत पड़ जायेगी।'' मैने कहा ''डरो नहीं, जब समय आयेगा, वह अपने आप पहनने लगेगा।'' और समयानुसार वह अपने आप पहनने लग गया।

बरसते पानी में मेरा पोता ६-७ का था तब नहाना चाहता है। मैं, हां भर देता हूँ। हर साल बरसात में वह ४-५ बार तो नहाता ही है। उसकी मां कहती है। सर्दी लग जायेगी। पर कभी नहीं लगी।

बच्चे को ढीले हल्के खुले-खुले वस्त्र पहनाना चाहिए। वे चाहते भी यही हैं। हम हैं जो उस पर जबरन टाई, बेल्ट, जूते, मौजे, पेंट लाद देते हैं। क्या सराहना की जाय बच्चों के हितैषी होने का दम्भ पाले हुए इन अभिभावकों की और उनके ज्ञान की।

अत: अन्त में मेरा आग्रह यही है कि हम बच्चे को प्रसन्नचित्त, सुसंस्कारी, सुशिक्षित बनाने की ओर ध्यान दें। आवश्यकतानुसार बालक की वृत्तियों उसकी महान क्षमताओं के विकास सम्बन्धी बालमनोविज्ञान व बाल शिक्षा साहित्य का अध्ययन भी करें और अपने प्रिय लाड़ले को विकास पथ पर आगे बढ़ने में सच्चे सहयोगी बनें।

हंसी और आश्चर्य की बात है कि स्कूटर चलाने वाला स्कूटर के बारे में, कार चलाने वाला कार के बारे में जरुरी जानकारी रखता है पर अपने बालक की क्षमताओं और विकास प्रक्रियाओं के बारे में अक्सर कुछ नहीं जानता, न जानना चाहता है।

कभी-कभी कहता हूँ कि कोई ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि किशोर किशोरी का विवाह होने से पूर्व सुखी दाम्पत्य जीवन एवं बालक के विकास सामग्री का अध्ययन अनिवार्य किया जाये। उसके बाद ही उन्हें विवाह करने की, जीवन साथी बनाने की पात्रता दी जाए।

नीमच (म.प्र.)

कन्हैयालाल बोथरा

शिक्षा द्वारा राष्ट्र विकास संभव है

शिक्षा व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व का निर्माण करती है। पहली शिक्षा जननी प्रदान करती है और फिर प्रकृति प्रदत्त होती है। मानव विकास की क्रमवध कहानी में हम ५२५वीं पीढ़ी में हैं।एक पीढ़ी २२ वर्ष की औसत रूप से मानी जाती है तो लगभग ११५५० वर्ष पूर्व शिक्षा प्रारम्भ हुई। मानव मस्तिष्क में सोच द्वारा शब्द और लिपि का विकास हुआ। संस्कृत भाषा धरती पर मानव की पहली भाषा है। तीन हजार साल मौखिक के बाद लिपि बनी। ब्राह्मी लिपि में लिखी गई। प्राकृत, पाली, अपभ्रंश भाषाओं के बाद हिन्दी का प्रादुर्भाव क्रमशः १००० बीसी से ५०० बीसी०, ५०० बीसी से ५०० ईस्वी, ५००ई० से १२०० ई० तथा फिर राजस्थानी, डिंगल, पिंगल, हरायनवी एवं हिन्दी, अंग्रेजी, परसियन तथा विश्व की अनेक भाषाएं संस्कृत से निकली हैं। हमारे यहाँ शिक्षा गुरूकुल तथा फिर नालन्दा जैसे विश्वविद्यालयों में दी जाने लगी। धन-सम्पदा ने हमलावरों को ललचाया और ७वीं सदी से १९४७ तक का विकास आर्यावर्त का मंथर रहा।

मन्दिरों में पढ़ाया जाता था, भारत में ४% साक्षर १८८० ई० में थे। बीकानेर में १९११ की प्रथम जनगणना में शिक्षा २.९३% थी। स्त्रियों में ९९.७६% निरक्षरता थी। जैनों में ६.५% हिन्दू में २.५% एवं मुसलमान १.२% साक्षर थे। पूरे राज्य में १८,७७९ हिन्दी, ८८१ अंग्रेजी और ६७३ उर्दू भाषी साक्षर थे। अंग्रेजी में पुरुष ८६५ एवं १६ स्त्रियां साक्षर थीं। उससे पूर्व १८८५ में पहली स्कूल ८ जून को प्रारम्भ हुई, जिसमें ५२६ छात्र पढ़ते थे। जातिवार– ब्राह्मण १७०, बनिया १४५, राजपूत ५४, मुसलमान ६६ एवं पारसी २ पढ़ते थे। अमेरिका में भी १८८० में शिक्षा कम थी और पेड़ों के नीचे काले पट पर पढ़ाते थे। अब भारत में ६५ प्रतिशत साक्षर हैं। भारत में स्वतन्त्रता के बाद शिक्षा का प्रसार हुआ। प्रथम वकील भारत के नसीरूद्दीन जी तैयब जी १८६७ में हुए और विश्वविद्यालय कलकत्ता में १८५० से स्थापित हुआ। अब भारत में ३५० विश्वविद्यालय हैं और शिक्षा द्वारा विकास को द्रुत गति देने के लिए १५०० नये विश्वविद्यालयों की स्थापना करनी होगी। यह आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक विकास के लिए आवश्यक है। आज पश्चिम के राष्ट्रों के एक अरब लोग विकास में आगे हैं, क्योंकि वहां शिक्षा-तकनीकी एवं वैज्ञानिक जानकारी हमसे आगे हैं। इंगलैण्ड में १७५९ में २८ हजार विद्यार्थी थे जहां सभी स्कूलों में निम्न शिक्षा दी जाती थी :–

"In all schools emphasis was laid upon teaching students to be content with their native rank and show proper subordination to the upper class".

ऑक्सफॉर्ड विश्वविद्यालय १८३० में इंगलैड के सामन्तों एवं उच्च वर्ग के लिए था। जैसे हमारे यहां १९०२ से १९४३ तक नॉवल्स स्कूल में सामन्ती छात्रों के अलावा अन्य जातियों को प्रवेश वर्जित था। इससे विकास अवरूद्ध हुआ। अब दुनियां के २०० विश्वविद्यालयों में भारत के ४ विश्वविद्यालय श्रेष्ठ शिक्षा के लिए माने जाते हैं। आई०आई०टी०, आई०आई०एम०, जवाहरलाल विश्वविद्यालय एवं दिल्ली विश्वविद्यालय हैं। अमेरिका के आई०टी० क्षेत्र में हमारे ये तकनीकी ज्ञान अर्जित छात्र मेसाचूसेट्स इंसटीच्यूट ऑफ टेकनोलोजी (श्ध्ऊ) के समकक्ष माने जा रहे हैं और सिलिकन वैली में कार्यरत हैं। टाईम की सूचना के अनुसार विश्व में हारवर्ड विश्वविद्यालय प्रथम, केम्ब्रिज द्वितीय, ऑक्सफोर्ड तृतीय है। टॉप टेक्नीकल विश्वविद्यालयों में आई०आई०टी० का०, एम०आई०टी० के बाद तीसरा स्थान है। विश्व की श्रेष्ठ १०० साईन्स विश्वविद्यालयों में आई०आई०टी० ३३वें स्थान पर है अमेरिका एवं ब्रिटेन को छोड़कर विश्व के ५० टॉप विश्वविद्यालयों की क्रम संख्या में आई०आई०टी० १५वें

आई०आई०एम० १९वें एवं दिल्ली विश्वविद्यालय ५७वें स्थान पर है। इस प्रकार शिक्षा एवं अनुसंधान के माध्यम से विकास होता है। अमेरिका में हमारे ५० हजार, ब्रिटेन में ४० हजार, मध्य एशिया में २० हजार डॉक्टर एवं दो लाख इंजिनियर तथा ५ लाख तकनीकी लोग कार्यरत हैं और विदेशी मुद्रा का भण्डार भर रहे हैं।

शिक्षा द्वारा विकास के क्षेत्र में यूरोप में वृद्धों की संख्या बढ़ रही है। उन्हें विकास के लिए शिक्षित तकनीकी लोग चाहिये, हाल ही में बेलजियम, पोलैण्ड, स्वीडन एवं फ्रांस ने इंजिनियरों, डॉक्टरों की मांग की है। भारत में हर साल २ लाख इंजिनियर एवं ३० हजार डॉक्टर बन रहे हैं। इनका कार्यक्षेत्र विश्वव्यापी होगा। यूरोपीय संघ अपने राष्ट्रों के लोगों को पसंद कर रहे हैं पर उनको मिल नहीं रहे हैं। अत: भारत पर उनकी नजर सदा रहेगी। बहुराष्ट्रीय कंपनियां (MNC) भारतीय बाजार में आ रही हैं। भारत में संग वालमार्ट २००८ में प्रवेश कर रहा है, जिन्हें ५००० युवाओं की जरुरत होगी। एम०एन०सी०, एम०बी०ए० की जगह ग्रेजुएट को लेगी, जैसे पेप्सी कोला-इंडिया ने प्रारम्भ किया है।

विश्व में भारत घंरेलू उत्पाद में (GDP) चौथे स्थान पर है, ४८० खरब रूपये का घरेलू उत्पाद है। यह बढ़ेगा क्योंकि उद्योगों में उत्पाद १०-१२% वृद्धि दर कर रहे हैं। इसमें शिक्षा का योग है, अमेरिका विश्व में सकल घरेलू उत्पाद में प्रथम (१२४६ खरब डालर), चीन द्वितीय (४६ खरब डालर) जापान तृतीय (४५ खरब डालर) और भारत चौथा (१० खरब डालर है)। शिक्षा में भारत ६५% साक्षरता में है। आशा की जाती है कि २०५० में भारत सकल घरेलू उत्पाद में अमेरिका से ऊपर निकल जायेगा। भारत की अर्थव्यवस्था को ''फ्लाईंग इकोनॉमी'' नाम दिया जा रहा है। इसका कारण शिक्षा, लॉवर कॉस्ट– हायर ग्रोथ यानि कम खर्च में अधिक उत्पादन है और उत्पाद की गुणवत्ता उत्तम होने के कारण विश्व बाजार प्राप्त होगा। चीन हमारी तरह शिक्षा द्वारा ही आगे बढ़ रहा है। अंग्रेजी शिक्षा हमारा सबल पक्ष है, जो १८३५ में चालू हुई थी। सर्वे २०७ के अनुसार जी-७ राष्ट्रों, अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, कनाड़ा, फ्रांस, इटली, जापान से भारत और चीन बौद्धिक क्षमताओं के कारण आगे बढ़ जायेंगे (यंग यूरोपीयन एट्रेक्विनेस सर्वे २००७)।

अमेरिका के संग आणविक समझौते के सफल होने पर हमें न्यूकिलियर पावर प्लांट लगाने में न्यूकिलियर एनर्जी– बिजली जो अभी ४% पैदा कर रहे हैं, यह २०५० तक ५०% होगी, जिसकी विकास में आधारभूत आवश्यकता है।

हमारे समाज में – भारतीय समाज में मध्यम वर्ग वह है जो २-१० लाख वार्षिक अर्जन करता है। यही वर्ग शिक्षा पर जोर देता है। इनकी संख्या अब ५ करोड़ है और २०२५ में इनकी संख्या ५९ करोड़ हो जायेगी तथा २९ करोड़ भारतीय गरीबी की रेखा से ऊपर उठ जायेंगे। ऐसा मैकेन्सी ग्लोबल इंस्टीट्यूट का सर्वे घोषणा करता है। भारतीय जनतंत्र में इस शिक्षित मध्यम वर्ग की मुख्य भागीदारी एवं जिम्मेवारी होगी। भारत में शिक्षा, यातायात, स्वास्थ्य एवं मोबाईल, निवेश कर मुख्य केन्द्र विकास में योगदान देंगे। शिक्षा द्वारा ही सूचना के अधिकार (RTI) का उपयोग होगा, जिससे भ्रष्टाचार प्राय: समाप्त हो जायेगा और "Electoral will vote the rogues out" चुनाव में भ्रष्ट बाहर हो जायेंगे, ऐसा अगले १८ वर्षों में शिक्षा द्वारा संभव होगा। हमारी वृद्धि दर ७.३% से ऊपर बनी रहेगी।

शिक्षा के अलावा नारी की भागीदारी भारतीय समाज में हर क्षेत्र में बढ़ने लगी है।यह विकास की प्रक्रिया को गतिमान बनायेगी।

विश्व व्यापार संघ की पेचिदिगियों को समझने के लिए तीक्ष्ण मस्तिष्क शिक्षा द्वारा ही संभव है ताकि आर्थिक विकास में अमीर राष्ट्र हमें गुमराह न कर दे। इस पर हमारी शिक्षण संस्थाओं में खुली बहस होनी चाहिये। सही जानकारी होनी चाहिये। विकासशील राष्ट्र जीवन यापन के स्तर पर है और अपना एक तिहाई जनता का पेट भरने, तन ढकने की दिशा में प्रयासरत है।

चिकित्सा शिक्षा द्वारा आर्थिक विकास की संभावना यथार्थ में परिवर्तित हो रही है। भारत में सरकारी एवं निजि स्वास्थ्य सेवाओं में लगभग साढ़े छ: लाख डॉक्टर संलग्न है। माना कि एक हजार छ: सौ छ्यासठ (१६६६) व्यक्तियों के पीछे भारत में एक डॉक्टर है, परन्तु अमेरिका यूरोप में ज्यादा डॉक्टर होते हुए भी भारत से इलाज दस गुणा महंगा है। भारत में हार्ट-हृदय का इलाज तुरन्त हो सकता है, अमेरिका में ३८५ व्यक्तियों पर एक डॉक्टर है, एम्स के ४०% डॉक्टर अमेरिका जा रहे हैं, वहां बस रहे हैं। इस प्रकार चिकित्सा, पर्यटन, ईलाज कराने से भारत को २.५% अरब डालर यानि १०० अरब रुपयों की आय होने की २०१५ तक संभावना है, जो

इन्फरमेशन टेक्नोलॉजी कम्प्यूटर उद्योग से अधिक होगी। एम्स विश्व में श्रेष्ठता के क्षेत्र में बैंकॉक के बाद दूसरे स्थान का अस्पताल है। बीकानेर में भी निजी क्षेत्र में स्वास्थ्य सेवायें मिलने लगी हैं।

अमेरिका में भारतीय शिक्षा का सम्मान हो रहा है। शशि थरूर लिखते हैं : IITians dominate what Americans call the "honour roll", Indian software Guru Nehru's establishment of IIts have produced many of the finest minds in America's "Silicon Valley" and "Fortune - 1000 Corporation", in new-age industries software IT and Business Process Outsourcing (BPO) is the result of scientific education". विज्ञान शिक्षा ने भारत का सूचना प्रोद्योगिकी, आई०टी० बिजनेश प्रोसेस आउट सोरसिंग की नये युग की इंडस्ट्रीज में सम्मानजनक स्थान अमेरिका में दिलाया है। भारत विश्व की सर्वोत्तम ''परफोरमिंग इकोनोमी'' है। आई०आई०टी० से शिक्षा अर्जन करने वाला अमेरिका में वही आदर भाव Reverance पाता है, जो अमेरिका के एम०आई०टी० (MIT) या कालटेक (Caltech) का पढ़ा लिखा नौजवान पाता है।

अत: हमें साईन्स और टेक्नोलॉजी पर सकल घरेलू उत्पाद (GDP) को एक प्रतिशत से बढ़ाकर अब दो प्रतिशत व्यय करना होगा। Indian may be a "Brain Bank" to the world, India is seen as a global managerial power apart from a global supplier of software, genericdrugs and auto components, ऐसा स्वामीनाथन अय्यर ने अमेरिका से लिखा है। यह पत्रकार की सोच है। भारत की जनसंख्या का सात प्रतिशत यानि ७.७ करोड़ १८-२४ वर्ष के ५४ लाख युवक-युवतियां उच्च शिक्षा में प्रवेश पाते हैं, जबकि एशिया के अन्य देशों में १४ प्रतिशत कॉलेज शिक्षा में प्रवेश लेतें हैं। हमें उच्च शिक्षा में प्रवेश बढ़ाने के लिए वर्तमान में ३५० विश्वविद्यालयों को बढ़ाकर १५०० करना होगा, ताकि भविष्य में शैक्षणिक-तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता को पूरा किया जा सकें। वर्तमान में १०-१५ प्रतिशत छात्र उच्च शिक्षा प्राप्त कर धन्धे में लग पा रहे हैं। ऐसा नेशनल नॉलेज कमिशन का मत है। इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट, अहमदाबाद (IIM) को एक करोड़ का वेतन दिया जा रहा है। The job is totally performance based and meritocratic in nature. अब परिणाम पर आधारित वेतन दिया जाता है।

शिक्षा की क्षमता के कारण सात लाख भारतीय बिजनेस प्रोसेसिंग आऊट सोर्सिंग (BPO) में कार्यरत हैं, जो १७ अरब डालर भारतीय अर्थव्यवस्था को दे रहे हैं। शशि थरूर अमेरिका से यह अध्ययन कर कहते हैं कि "The skills we are able to market for the foreign employers, can be used for India."

शिक्षा का निजीकरण होता जा रहा है। इस प्रतिस्पर्धा के कारण शिक्षा श्रेष्ठ भी और महंगी भी हो रही है और भारत में उच्च शिक्षा की मांग बढ़ रही है। रेडियोलोजी में एम०डी० की डिग्री प्राप्त करने के लिए ८० लाख से एक करोड़ रुपये में एक सीट आरक्शन होती है। हर साल ४ से ५ लाख ट्यूशन फीस अलग से भरनी पड़ती है। सीतालक्ष्मी पत्रकार खोज कर बताती है कि ''ओरथोपिडिक ८० लाख, पिडियाट्रिक्स ६०-८० लाख, गाइनी, मेडिसिन, सर्जरी ५०-६० लाख रुपये में सीटे भारत में बिक रही हैं, क्योंकि शिक्षित डॉक्टरों की मांग विश्वव्यापी है। विकास के इस ज्ञान क्रांति (Knowledge Revolution) युग में सुशिक्षित चीफ एक्जीक्युटिव ऑफिसर (CEO), मंत्री से ज्यादा प्रभावी, विकास की दृष्टि से होता है। मुकेश अंबानी २४.५१ करोड़ रुपये वार्षिक वेतन पाकर देश में प्रथम स्थान पर है। कलानिधि मारन २३.२६ करोड़ वेतन लेकर द्वितीय स्थान पर है, जबकि अनिल अंबानी का २.४२ करोड़ वेतन प्राप्त कर १००वें में भी स्थान नहीं है। अब शिक्षण संस्थायें निजी क्षेत्र में बढ़ेंगी।

मानव जाति के विकास का इतिहास भाषा से प्रारंभ होता है, न कि चट्टानों की कंदराओं के मन्दिर या पैरामिड की विशाल बनावट से। यह भाषा भारत ने दी। प्रो० मेक्सूलर १८८२ में केम्ब्रिज विश्वविद्यालय इंगलैण्ड में अपने पत्र का शीर्षक : ''भारत हमें क्या शिक्षा दे सकता है?'' प्रो० मूलर को उद्धृत करता हूं : "Education of human Race : Ancient literature opens to us a chapter in what has been called the "Education of human race, to which we can find no parallel any where else" शिक्षा के क्षेत्र में इतिहास, मानव इतिहास, विश्व इतिहास भारत ने प्राचीन ने वैदिक साहित्य शिक्षा में प्रारंभ किया। अब २१वीं सदी में भी गतिमान है। शिक्षण संस्थायें जहां भारत ही नहीं, मानव जाति के विकास का प्रशिक्षण दिया जाता है।

गंगाशहर, बीकानेर (राज०)

■

सागरमल जैन बीजावत

जीवन के परिवेश में परिवर्तन और शिक्षा

परिवर्तन संसार का नियम है परन्तु आज जो परिवर्तन संसार में हमारे जीवन-क्रम में हुआ है वह अभूतपूर्व है तथा उस परिवर्तन की गति अति, अति तेज अकल्पनीय है। निकट भूत के जीवन से आज का जीवन बदल गया है और इतना बदल गया है मानो कल के भूत से आज के वर्तमान का कोई संबंध ही नहीं है। वैज्ञानिक आविष्कारों ने सब कुछ तो बदल दिया है। पिछले ५०-६० साल से सो रहा व्यक्ति आज जग जाय और देखे तो उसे अपने चारों ओर का वातावरण अजीब सा लगेगा, उसे देख वह अवाक् और स्तब्ध रह जायेगा। उसे दिखेंगे–

१. कानों पर मोबाईल लगाए, स्कूटर, मोटर साइकल, कार में जाते हुए लोग। गाड़ी के चलने के साथ उनकी बातचीत भी चल रही होगी।

२. उन लोगों के मन में काम जो उन्हें करना है उसकी निरन्तर उधेड़बुन चलती होगी। वे बेतहाशा भागते होंगे। दो मिनट रुककर कुछ बात कर लेने का समय भी उनके पास नहीं होगा। चेहरे पर तनाव की छाया स्पष्ट दीखती होगी।

३. सड़क के दोनों ओर नाना प्रकार के प्रलोभनों को इंगित करते हुए होर्डिग्स की भरमार होगी। कहीं सेल का बोर्ड होगा

वाले साइन बोर्ड। सड़क के द
की जमीन पर भी विज्ञापन वे

४. उन नवयुवकों का
कुछ नया-सा होगा। कुल मि
अग्रिमताएं भी बदल चुकी
खाना-भोजन, वस्त्र और मका
वाला खर्च बढ़ा नहीं है परन्तु
जिनका व्यय हमारी मौलिक
शिक्षा डोनेशन (चंदा या उत्त
नाम वाले, अंग्रेजी माध्यम श
कम्प्यूटर, प्रिंटर्स, होडिंग क
रिर्सोटस में प्रतिवर्ष घूमने जा
कहीं अन्त नहीं है।

५. तकनीकी विकास से
परिवेश में क्या परिवर्तन आये
है। तकनीकी सुविधाओं ने ह
भगवान ने हाथ दिये हैं तो हाथ
कमाऊंगा, यह सिद्धांत आज
आज पोस्ट आफिस काम न हे
स्टोर में बदले जाने की बात
के लिए किसी समय एक मात्र
खाली जा रही हैं। उनमें व
कण्डक्टरों का क्या होगा? वि
काम करना जरुरी था। कहते
काम करो। आज हफ्ते के ५
ही रहे गये हैं। कार्यालय में ज
अपना पूरा काम घर से ही क
काम इसी प्रकार घटता रहा
आगामी समय में शिक्षा कैसी
करते हुए कहा गया था–

''सा विद्या या विमुक्तये
हो गया है। शिक्षा मनुष्य क
व्यक्तित्त्व का विकास करे
''अर्थकरींच विद्या'' विद्या हमें
बनाये इस बात को लक्ष्य
Profesional Education की
एजूकेशन आज आदमी को उ

Specialisation के युग में (जो कि आज अवश्यक वन गयी है) आधी जिन्दगी तो वैसे ही बीत जाती है।

आज का सवसे वड़ा खतरा है मनुष्य की संवेदना का समाप्त हो जाना। वैज्ञानिक और तकनीकी विकास ने आज मनुष्य को एकाकी-सा वना दिया है। सामाजिक विघटन, पारिवारिक विघटन ने हमें एक दूसरे से विल्कुल अलग-सा कर दिया। उन्मुक्त वासनाओं के कारण मर्यादायें विनष्ट होती जा रही हैं। मर्यादाओं का इस प्रकार नष्ट होना क्या सामाजिक ताने-बाने को विच्छिन्न ही नहीं,तोड़ मरोड़ कर नष्ट नहीं कर देगा? क्या हम एक अति की ओर नहीं वढ़ रहे हैं। क्या मर्यादायें निरी व्यर्थ हो गई हैं? और यह भी स्पष्ट दिखता है कि मर्यादाओं को आडंवर, दीन, दकियानुसी विचार, पुराण पंथी मानने वाले भी वहुत हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रारम्भिक वर्षो में लोग ''धार्मिक शिक्षण'' क्यों कैसे कैसा और किस प्रकार का हो इस पर विचार करते थे। आज तो धर्म और नैतिकता का कोई नाम भी लेना नहीं चाहता है। हम अपनी संस्कृति को भुलाते जा रहे हैं। अंतराष्ट्रीयकरण हो रहा है। विदेशी कंपनियों का स्वतंत्र रूप से या भारतीय कंपनियों के साथ मिल-जुलकर अरवों-खरवों रुपये की पूंजी लगाकर इतने वड़े-वड़े उद्योग धंधे लगाना कि जिसकी वह कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। आज सहज हो रहा है कि हमने व्यापार के सभी क्षेत्रों में अपने दरवाजे खोले ही नहीं उन्हें तोड़कर कहीं कूड़े में फेंक दिये हैं। संसार की इस परिस्थिति में हमारी शिक्षा कैसी हो? यह आज नहीं तो कल अवश्य ही विचारणीय प्रश्न वनकर आयेगा। देश के धनपतियों का साग, भाजी, किराना जैसे छोटे गिने जाने वाले व्यवसायों में कूद पड़ना, अरवों-खरवों की पूंजी लगाकर ऐसे सामान्य व्यवसाय करना और परिणाम स्वरूप सैकडों हजारों छोटे व्यावसइयों का व्यवसाय छीनकर उन्हें वेकार वना देना। भीषण विभीषिका है यह तो। इन सवके मूल में जायें तो इनका मुख्य कारण है मुद्रा की अनाप-सनाप वृद्धि। अर्थ के कारण यह समस्या इतनी वड़ी समस्या वन जायेगी, यह तो किसी ने जाना भी नहीं था। पैसे की रेलम-छेलम ने, नव लक्षाधीशों ने सारी सामाजिक व्यवस्था को ही अस्त-व्यस्त कर दिया। संभवत: इसके मूल में भी कहीं– जीवन स्तर ऊँचा उठाने का सिद्धांत ही रहा होगा। पहले ग्रामीण और शहरी दो ही आर्थिक सामाजिक भेद थे। इस भेद को भी मिटाने के लिए श्री विनोवा भावे एवं गांधी ने ग्राम स्वावलंवन की वात कही थी। आज तो यह भेद इतना वढ़ गया है कि हर छोटे-छोटे ग्राम वस्ती में यह भेद नजर आने लग गया है। बम्वई देहली के मुकावले में मद्रास कलकत्ता गांव हैं और मद्रास कलकत्ता के मुकाबले में अहमदाबाद कानपुर गांव हैं। किसी समय वर्धा कितना उत्तम शहर जाना जाता था। आज वह किसी छोटे गांव से भी महत्वहीन हो गया है। इन और ऐसी कई समस्याओं के लिए हमें अपनी शिक्षा पद्धति को संयोजित एवं सार्थक बनाना होगा। इसके लिए कुछ विचार निम्ननुासार हैं:

१. निजी शिक्षा संस्थायें बन्द हों – शासकीय शिक्षा संस्थाओं का ठीक प्रबन्धन न होने और शिक्षा स्तर सुधारने की दृष्टि से हमने निजी शालाओं की छूट दी। परिणाम स्वरूप सारे ही निजी स्कूल अंग्रेजी माध्यम से होकर शिक्षा प्रवेश में डोनेशन का रिवाज आया। एक दूसरे से आगे निकलने की होड़ में अवांछित स्पर्द्धा उदित हुई। व्यवसायीकरण हुआ और शिक्षा की दुकाने यत्र-तत्र-सर्वत्र दिखाने लगी। निजी युनिवर्सिटियों की, व्यावसायिक कॉलेजों की भरमार हो गई है। हर क्षेत्र में प्रवंधन का राग अलापा जा रहा है जो स्वामी और सेवक के बीच की कड़ी बनकर केवल उत्पीड़न को ही बढ़ाता है। वालकों में वर्ग भेद बड़े छोटों का विवाद फिर मुखर होने की पूर्व भूमिका है।

२. व्यावसायिक शिक्षा : पुस्तकीय ज्ञान के अतिरिक्त व्यावसायिक शिक्षा भी आज जरुरी हो गई है। आखिर पेट भरने के लिए आदमी को कुछ तो हुनर जानना जरुरी है। इससे वह स्वावलंवी होगा और आर्थिक दृष्टि से चिन्ता मुक्त।

३. चिन्तन, बुद्धि, रचनात्मक प्रतिभा आदि मानवीय क्षमताओं में निखार लाने के लिए साहित्य और कला का शिक्षण भी किसी स्तर तक जरुरी है।

४. विज्ञान और टेक्नोलोजी के विकास से वैश्वीकरण जितनी तीव्रगति से बढ़ता जा रहा है उससे ऐसा लगता है कि आज नहीं तो कल अवश्य ही सारा संसार एक हो जायेगा। देशों की सीमाएं समाप्त होकर विश्व पूरा ही एक देश वन जायेगा। लोगों में अन्तर्राष्ट्रीय नौकरियों के लिए आज जो दौड़ देखी जा रही है वह एक दिन इस सपने को अवश्य पूरा करेगी। ऐसी स्थिति में सारे संसार की भाषा, मुद्रा, व्यापार, उद्योग एवं शासन प्रवन्ध आदि सव में एकात्मकता आ जायेगी। कल के उस विश्व के लिए हमें तैयारी तो आज से ही करना पड़ेगी। इसीलिए भाषा शिक्षण प्रारंभिक वर्षों में (कक्षा १-२ एवं ३ तक) क्षेत्रीय भाषा का हो। कक्षा ४ से ७ तक मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा के साथ राष्ट्र भाषा हिन्दी का शिक्षण भी हो तथा उससे आगे चलकर हाई स्कूल कक्षा १० तक मातृभाषा, राष्ट्रभाषा के साथ अंतर्राष्ट्रीय भाषा अंग्रेजी के अध्यापन की नीति भी हो। नवोदय विद्यालयों ने इस विषय में जो भ्रान्तियें थी वे सब दूर कर दी हैं। कुछ रही भी होंगी तो वे कुछ वर्षो में ही निरस्त हो जायेंगी।

५. यह सब तो लौकिक शिक्षा के बातें हुई हैं परन्तु जब समस्त संसार के एक राष्ट्र की कल्पना हो तो छात्रों में कुछ और भी गुण प्राप्त करने की कराने की, तैयारी होना चाहिये। एक राष्ट्र बनने पर हमें बंधुता की, समानता की, समता की आवश्यकता होगी। और इससे आगे बढ़कर जाति, भाषा, लिंग, परंपरा आदि के भेदों का भुलाकर सांस्कृतिक गौरव और सभ्यता के पृथकता वाले लक्षणों से हटकर, सज्जनता, सहानुभूति, निम्नवर्ग, को ऊपर उठाने की भावना आदि को प्रबल बनाने की आवश्यकता रहेगी। कुल मिलाकर व्यक्तित्व को ऊंचा उठाने के साथ चारित्रिक गुणों को सिखाने की भी जरुरत होगी। धार्मिक शिक्षण-चरित्र शिक्षा इसे किसी भी नाम से पुकारा जाय परन्तु ऐसी शिक्षा भी जरुरी हो जायेगी। इस पर अधिक विचार करने का काम शिक्षाविदों का है– वे इस पर ध्यान देवें।

सहायक आयुक्त, के० वि संगठन (निवृत्त)
अहमदाबाद

■

गायत्री कल्याण कांकरिया
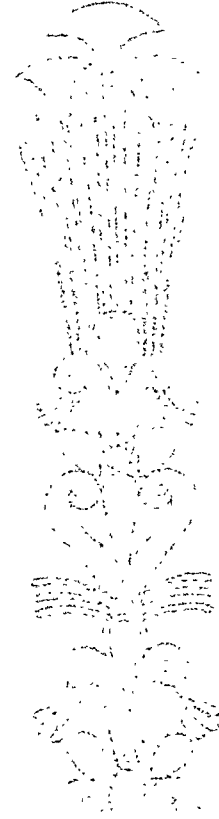
नारी शक्ति के बढ़ते चरण

''विहग सुन्दर, सुमन सुन्दर, मानव तुम सबसे सुन्दरतम'' कविवर पंत की यह शब्दावली मन को झंकृत करती है और भावना के समुद्र में हिलौरे लेते हुए यह प्रकाशित करती है कि सृष्टि की श्रेष्ठतम रचना मानव तुम स्वतंत्र हो, तुम अपने पुरुषार्थ से अपना उर्ध्वारोहण भी कर सकते हो–

स्वयं बनो तुम अपने दीपक तो पावो भवपार।

मानव की प्रत्येक प्रेरणा किसीं भौतिक जरुरत से उत्पन्न होती है तथापि इस बात पर अखंड विश्वास है कि मानव में कोई उर्ध्वगामी शक्ति है जो अनंत है ''बनती संवेदना अभिव्यक्त होकर कला''। हर अणु की संवेदना से स्पन्दित सृष्टि'' खुल जाती है जब अर्न्तदृष्टि तब बनता वह स्व का दर्पण''। सर्वोत्तम मनुष्य वही है जो अवसरों की बाट न जोहकर अवसर को अपना दास बना लेता है। अपने व्यक्तित्व को पहचान कर किया गया कर्म ही सफलता हासिल कर सकता है। प्रत्येक स्व का एक मूल्य होता है जो मूल्य नहीं दे सकता, वह स्वत्व को नहीं पा सकता। वास्तव में नारी में ही नर समाया है, पुत्रीभाव, प्रियाभाव और मातृभाव नारी की विवशता है। जो विग्रह (शरीर) विधाता की ओर से उसे मिला है, चैतन्य है। जहां वहां शक्ति है, भक्ति है जहां वहां आनन्द है। नारी शक्ति करुणा, प्रेम, क्षमा से पूर्णत: आच्छादित होती है। देह पर शासन भले ही न हो पर हृदय पर नारी का ही साम्राज्य होता है।

जैसे ही हम भाषा में किसी सत्य को डालते हैं वह तिरछा हो जाता है। भाषा को बाहर निकालते ही वह शुद्ध हो जाता है और शून्य में ले जाते ही वह पूर्ण हो जाता है। कहा गया है ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमंते तत्र देवता''। एक ही चीज गलत है, मनुष्य का टुकड़ों में बंट जाना और एक ही सहज सत्य है कि आदमी का जुड़ जाना, परम तत्व को पाना, मानव का मानव के प्रति विश्वस्त होना क्योंकि जीवन सहने से बनता है, कहने से नहीं।

जीवन में जितना ऊपर जाना हो उतना ही जीवन के साथ श्रम करना जरूरी है लेकिन यह श्रम तभी होगा जब सबसे पहले यह आकांक्षा, यह प्यास, यह अभीप्सा पैदा हो जाय कि जीवन में कुछ होना है, कुछ पाना है, कुछ खोजना है। स्व ही वास्तविक शास्त्र है और स्व ही वास्तविक गुरु। नारी की इच्छा शक्ति से ही यह सृष्टि बनी है और ''सृष्टि को चलाने में नारी शक्ति का योगदान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है, अतुलनीय है। बच्चा मां की कोख में ही पनपता है उसकी जीवनगति सिर्फ मां पर ही आधारित होती है। मां की ममता, धैर्य, संकल्प, आत्मविश्वास, विचारों की दृढ़ता व आचरण ही प्रेरणा स्रोत बनते हैं– सर्वांगीण विकास के लिए।''

आज इस भौतिक युग में विज्ञान की उन्नति से नये-नये आविष्कारों द्वारा विभिन्न सुविधाएं प्राप्त हैं और नारी जाति ने अपनी पूर्ण शक्ति से बांह पसारी है कि आकाश को भी अपनी बांहों में समेटने को लालायित है। खेलकूद, मनोरंजन का जीवन के विकास में प्रयोजन है और आज नारी शक्ति कहीं भी किसी भी मायने में किसी से कम नहीं है। आज हर दिशा में हरएक क्षेत्र में नारी का बोलबाला है। इतिहास साक्षी है कि मानव में नर को ६४ कला और नारी को बहत्तर कलाओं का ज्ञान मिला था और आज अपनी सूझबूझ से, अपने पराक्रम से हर मोड़पर नारी ने प्रत्येक सपने को साकार करने में अपनी शक्ति की योग्यता को उजागर किया है। किसी भी प्रतिस्पर्धा में वह पीछे नहीं हैं, हर पायदान पर उच्चतम स्थान पाने की क्षमता नारी शक्ति में है चाहे पारिवारिक हो, सामाजिक हो, व्यावसायिक हो या राजकीय। अनगिनत व्यक्तित्व इससे जुड़े हैं, कितनों का नाम गिनाये ? विष्णु की शक्ति स्वरूपा कहीं पालनहारी (महालक्ष्मी) ब्रह्मा की शक्तिस्वरूपा (महा सरस्वती) ज्ञान दर्शन चारित्र को संवारने वाली और शिव की शक्ति स्वरूपा (महाकाली) दुर्गा, चंडीरूप धर कर अपनी बाधाओं से लड़नेवाली, सबको शांति समाधान देनेवाली मनमोहिनी नारी की शक्ति ही है– इस कलियुग में भी स्त्री शक्ति को योगमाया और आदिशक्ति के रूप में प्रतिष्ठापित करने में सक्षम है।

दर्शन और विज्ञान का यह शाश्वत सिद्धांत है जो सत है वह सदाकाल सत ही रहता है। प्रज्ञा ने ही परमात्मा की तलाश की है और अपनी अनुभूति के बल पर उसे प्रकाशित व परिभाषित भी किया है या यूं कहें नारी वह दीप नहीं जो हल्के से पवन झकोरे से बुझ जाये बल्कि वह सूरज है, स्वयं ऐसी ज्योति है जो आंधी से भी न बुझ पाये। चहुंदिशा फैली है, नारी शक्ति। जिस तरह न में आ और र में ई की मात्रा से नर से नारी रूपान्तरित हुई और विशिष्ट बन गई,बस उसी तरह अपने को संतुलित रखकर मध्य मार्ग पर स्थिर रहकर अपने कर्तव्य व फर्ज को निभाते हुए अपनी मर्यादा को, अपने विग्रह को समझ कर, जी कर अन्त: चन्द्रिका से चन्द्रित होकर संसार में शीतलता, शांति, आनन्द व समाधान की दिव्य दृष्टि से वर्षा करे, एकाकार बनी रहे।

औरंगबाद (महाराष्ट्र)

■

शरदचन्द्र पाठक

शिक्षा : दशा और दिशा

स्वाधीनता के उपरान्त तत्काल भारत में जिस शिक्षा प्रणाली को अपनाया गया वह पूर्णत: अंग्रेजों द्वारा निर्मित थी और उन्हीं के हितों को ध्यान में रखते हुए बनायी गयी थी। भारत के जागरूक और प्रबुद्ध नेताओं ने इस कमी को ध्यान में भी रखा था। यही कारण है कि स्वतंत्रता के पश्चात् अनेक आयोगों का गठन हुआ और उनकी सिफारिशों को यथासम्भव लागू करने की चेष्टा भी हुई। हमारी शिक्षा पर अव्यावहारिक अथवा बहुत कुछ सैद्धान्तिक होने का आरोप भी लगाया जाता रहा। छात्रों के असंतोष तथा उनकी अनुशासनहीनता के लिए भी हम प्राय: शिक्षा प्रणाली को दोषी कहकर अपने को सारी जिम्मेदारियों से मुक्त कर लिया करते थे, अस्सी के दशक की शिक्षा में अनेक परिवर्तन घटित हुए। परिणामत: शिक्षा की अवधारणा और स्वरूप में बुनियादी परिवर्तन हुए। अव्यावहारिक का आरोप अब बहुत कुछ समाप्त हो गया है। पिछले कुछ वर्षों में आर्थिक विकास के कारण देश को तकनीकी क्षेत्र में नयी प्रतिभा की आवश्यकता का अनुभव हुआ। कम्प्यूटर के आगमन से तो एक प्रकार की क्रान्ति ही घटित हो गई, आज रोजगार के अवसर भी पहले की अपेक्षा कई गुना अधिक हो गए हैं। उद्योग और प्रबन्धन के क्षेत्रों में कुशल और प्रशिक्षित व्यक्तियों की मांग इतनी बढ़ गई है कि भारतीय ही नहीं विदेशी कंपनियाँ भी प्रशिक्षण पूरा होने से पूर्व ही योग्य और प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को अपने संस्थान के लिए चुन लेती हैं। ऐसे योग्य छात्रों को मिलनेवाला आर्थिक पुरस्कार भी आकर्षक होता जा रहा है। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि हमारी शिक्षा प्रणाली पूर्णत: वैज्ञानिक या दोषहीन हो गयी है। कहा जाता है कि आज का युग भूमंडलीकरण का युग है। उपभोक्ता संस्कृति ने शिक्षा को भी बाजार की वस्तु बना दिया है। वह एक सामग्री बनकर खरीदी और बेची जा रही है। भारतीयता का लोप हो रहा है। और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पश्चिम का अनुकरण किया जा रहा है। अनुकरण बुरा नहीं है किन्तु अन्धानुकरण घातक है।

अंग्रेजी बोलना शिक्षित होने का प्रमाण बन गया है। दूर दर्शन के हिन्दी चैनल खिचड़ी भाषा परोसकर एक नई भाषा को जन्म दे रहे हैं। हमारी अपनी भाषा और संस्कृति की स्वच्छता और विकास के लिए यह प्रवृति कितनी कल्याणकारी अथवा हानिकारक है, यह विचारणीय विषय बनता जा रहा है।

जायसी के पद्मावत में हीरामन तोते ने कहा था–

पण्डित होई सोहाट न चढ़ा। गया बिकाय भूलिगा पढ़ा।

हमें अपने आप से यह प्रश्न करना होगा कि आज 'पण्डित' क्या 'हाट' चढ़ गया है?

किसी समय व्यक्तित्व विकास को शिक्षा का उद्देश्य माना जाता था। आज उसी शिक्षा को सफल माना जाता है, जो नौकरी की गारन्टी दे सके। ऐसा भी नहीं है कि यह धारणा सर्वथा नवीन है। 'अर्थ करी च विद्या' के सिद्धान्त का उल्लेख हमारे पूर्वजों ने भी किया था। उसके भी पहले कहा गया था– सा विद्या या विमुक्तये,

वर्तमान उपयोगितावादी और भौतिकवादी युग में मोक्ष को शिक्षा का उद्देश्य सिद्ध करना असम्भव नहीं तो अव्यावहारिक अवश्य है। परन्तु यदि हम आध्यात्मिक मुक्ति की बात छोड़ दें तो क्या आप महसूस नहीं करते कि आज जाति, धर्म, भाषा की संकीर्णता से मुक्त होने की आवश्यकता है। कहने के लिए विज्ञान और तकनीक ने संसार को ग्राम में परिणत कर दिया है किन्तु जाति, धर्म, राष्ट्र के नाम पर आज भी संघर्ष हो रहे हैं और उसमें मनुष्य की बलि दी जा रही है। कबीर ने इसलिए पुस्तकीय ज्ञान को व्यर्थ घोषित किया था। आज सूचना तंत्र बहुत अधिक विकसित हो गया है। क्या उसी अनुपात में मनुष्य का हृदय भी विशाल एवं उदार हो सका है? भारत ने विश्व को

'वसुधैव' कुटुम्बकम् और तेन त्यक्तेन भुंजीथा' का सन्देश दिया था। परन्तु आज हम अपने पड़ोसी को भी सहन करने में असमर्थ हो रहे हैं। शिक्षा का एक उद्देश्य मानव निर्माण भी होना चाहिये। एक ऐसे मनुष्य का निर्माण जिसमें क्षमा, दया, मैत्री, करुणा, सहानुभूति आदि गुण विकसित हों, उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति यदि स्वार्थी, लोभी, अभिमानी और क्रूर हो तो अशिक्षित रहना ही मानवता के लिए कल्याणकारी होगा।

मानव निर्माण में शिक्षा की भूमिका को कैसे उपयोगी वनाया जाये, यह भी आज का एक विचारणीय प्रश्न है। चिन्ता का विपय है कि आज शिक्षा का बड़ी तेजी से उद्योगीकरण हो रहा है। हमारे देश में ऐसे शिक्षण संस्थान स्थापित हो रहे हैं जो प्रतिवर्ष लाखों रुपये शुल्क (Fees) के रूप में वसूल कर रहे हैं। ऐसी शिक्षा मनुष्य को वित्तोपार्जक अर्हता प्रदान करती है किन्तु उसमें मानवीय मूल्यों के प्रति सम्मान का भाव नहीं जगा पाती। समाचार पत्रों में प्राय: ऐसे समाचार पढ़ने को मिल जाते हैं कि पुत्र विदेश अथवा देश में ही किसी दूसरे नगर में वड़े पद पर है और माता या पिता अकेलेपन के कारण अवसाद ग्रस्त होकर आत्महत्या कर रहे हैं। आज शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य यही रह गया है कि हम अधिक से अधिक धन कमाने योग्य वन सकें। हमें यह स्मरण रखना होगा कि अर्थ स्वयं में साधन है, साध्य नहीं। अत: शिक्षा की भूमिका उन मूल्यों के रक्षण और पोपण में भी महत्वूर्ण है जो हमारे संवन्धों में आत्मीयता का अमृत प्रवाहित करता है। शिक्षा यदि हमारा सही मार्ग दर्शन नहीं कर सकी तो एक दिन हम गोस्वामी जी के समान यही अनुभव करेंगे–

डसित ही गई वीति निसा सव कवहुं न नाथ नींद भरि सोयो।

मैं मानता हूँ कि आज की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है, शिक्षा को औद्योगिकरण की लौह-शृंखला से मुक्त करना। वाजारवाद वहुत-सी दूसरी वस्तुओं के समान पश्चिम से आया है। और अपनी मानसिक ग्रंथि के कारण हम हर क्षेत्र में उसे ही अनुकरणीय मानते हैं। अज्ञेय ने सही कहा है–

अच्छी कुंठा रहित इकाई, सांचे ढले समाज से।
अच्छा अपना ठाट फकीरी मंगनी के सुखसाज से।

पूर्व प्राचार्य, श्री जैन विद्यालय, कोलकाता

■

अर्जुनलाल नरेला
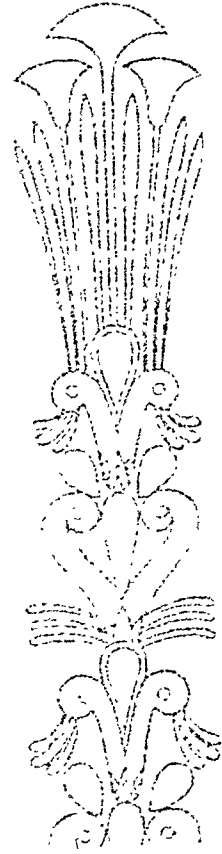
पहले हम आर्यावर्त्तीय, फिर भारतीय, फिर हिन्दुस्तानी और फिर इंडियन

भारतीय गरीब पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष जबलपुर निवासी स्टेनली लुईस ने सुप्रीम कोर्ट में एक याचिका दायर कर प्रार्थना की है कि देश को भारत इंडिया नहीं अपितु हिन्दुस्तान शब्द से संबोधित करते तथा लिखने के आदेश दिए जायें। सुप्रीम कोर्ट ने याचिका विचारार्थ स्वीकार कर ली है। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता अशोक शुक्ला ने बताया कि कश्मीर से कन्याकुमारी तक यह देश हिन्दुस्तान के नाम से जाना जाता है, जो कि कालांतर से है किंतु अंग्रेजों ने इसे भारत, इंडिया कर दिया।

भा.ग.पा. के अध्यक्ष स्वयं विदेशी मूल के लगते हैं और उनकी पार्टी गरीबों की पार्टी हो सकती है, परंतु वे स्वयं और भारतीय मूल के उनके वकील श्री शुक्ला भी, मस्तिष्क से गरीब ही लगते हैं। याद रहे हिन्दू और हिन्दुस्तान दोनों ही की आयु करीब १०००-१२०० साल से अधिक नहीं है। यदि किसी भी इतिहासज्ञ को मालूम हो तो अवश्य प्रकाश डालकर अनुगृहित करें। यदि सु. कोर्ट ने याचिकाकर्ता की बात मान ली या भा.ग.पा. के सदस्यों ने हिन्दुस्तान विषय पर ही बोलना जारी रखा या गर्व से कहो, हम हिन्दू हैं, बोलने वालों ने भी इनकी हाँ में हाँ मिलाना शुरू की तो फिर कोई मैकाले, हम भारतवासियों को पुन: कहेगा कि हिन्दू और हिन्दुस्तान शब्द तो केवल उत्तर भारत के लिए प्रयुक्त होता था और हिन्दी भाषा या खड़ी बोली तो केवल उत्तर भारत की भाषा थी और हिन्दू भारत के मूल निवासी नहीं है। ये तो कहीं बाहर से आए और सिंधु से हिन्दू हो गये और मध्य भारत व दक्षिण का क्षेत्र हिन्दुस्तान की परिभाषा में नहीं आता है। फिर शुक्लाजी की बात कि कश्मीर से कन्याकुमारी तक हिन्दुस्तान की सीमा है, कौन मानेगा? जहां तक इंडिया शब्द का सवाल है, कहा जा सकता है कि यह शब्द अंग्रेजों की देन है। परंतु भारत तो बहुत पुराना है, जिसका करोड़ों साल का इतिहास है। ऋषभदेव, जैनियों के प्रथम तीर्थंकर और हिन्दुओं के आठवें अवतार के पुत्र का नाम भरत था जो लाखों वर्ष पूर्व हुए हैं। राजा दुष्यंत के पुत्र का नाम भी भरत था। मर्यादा पुरूषोत्तम राम के भाई का नाम भी भरत था और योगेश्वर कृष्ण ने भी, अर्जुन को भारत शब्द से संबोधित किया था अर्थात् भारत शब्द का इतिहास अतिप्राचीन है और भारत से पूर्व इसे आर्यावर्त कहा जाता था।

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के आठवें समुल्लास में मनुस्मृति के रचियता महर्षि मनु को उद्धृत करते हुए आर्यावर्त्त की अवधि लिखते हुए कहा है कि उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विंध्याचल, पूर्व और पश्चिम में समुद्र तथा सरस्वती पश्चिम में अटक नदी, पूर्व में हृषद्वती जो नेपाल के पूर्व भाग पहाड़ से निकलकर बंगाल के, आसाम के पूर्व और ब्रह्मा के पश्चिम ओर होकर दक्षिण के समुद्र में मिली है, जिसको ब्रह्मपुत्रा कहते हैं और जो उत्तर के पहाड़ों से निकल के दक्षिण के समुद्र की खाड़ी में अटक में मिली है। हिमालय की मध्य रेखा से दक्षिण और पहाड़ों के भीतर और रामेश्वर पर्यन्त विंध्याचल के भीतर जितने देश हैं, उन सबको आर्यावर्त्त इसलिये कहते हैं कि यह देश विद्वानों ने बसाया है और आर्यजनों के निवास करने से आर्यावर्त्त कहलाता है। सम्पूर्ण विश्व में सबसे पहले मानव की सृष्टि तिब्बत और हिमालय क्षेत्र में हुई। यहीं से मानव भारत में हरिद्वार के रास्ते आया और बसता बढ़ता चला गया। इसीलिए कहते हैं कि भारत ही, आर्यो का कालांतर में हिन्दुओं का मूल देश था, है और रहेगा। आर्य बाहर से नहीं आये और ना ही द्रविड़ों पर हमला किया। आर्य और द्रविड़ गुणवाचक हैं, जातिवाचक नहीं। ऋषि दयानन्द कहते थे और लिख भी गये हैं कि जितने भूगोल में देश हैं वे सब इसी देश की प्रशंसा करते और आशा रखते हैं कि पारसमणि पत्थर सुना जाता है वह बात तो झूठी है, परंतु आर्यावर्त्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिसको लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूने के साथ ही सुवर्ण अर्थात मालदार हो जाते हैं और सृष्टि से लेकर महाभारत काल तक आर्यो यानि सज्जन पुरूषों का सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य था।

गौरी, गजनी, चंगेज, नादिरशाह एवं मुगलों व अंग्रेजों ने भारत को दिल भरकर लूटा, तोड़ा, फोड़ा, जलाया और माता-वहनों को विवश किया, जौहर को अंजाम देने के लिए। किस विदेशी की हिम्मत थी जो भारत को पराजित कर सके। इतिहास साक्षी है कि तक्षशिला के मोफी ने पांच हजार योद्धाओं को साथ लेकर सिकन्दर को सहायता दी और पोरस को हराया यानि हम ही अपनी हार के कारण हैं। दूसरी विजय मुसलमानों की है, जिन्हें बुलाने वाले भी हम ही हैं और अंग्रेजी की विजय का तीसरा इतिहास यह है कि कालीकट के राजा ने उन्हें टिकाया और मुसलमान वादशाहों ने तो उन्हें व्यापार करने, जमीन खरीदने, फौज रखने और सिक्का चलाने का मौका दिया, उनका क्या विगड़ा और हम भारतीयों ने ही अंग्रेजी फौज में नौकरी की और अपने आपको पराजित करते रहे और आजादी के साठ साल की अवधि में हमने ही अपनी संस्कृति और मानवता की हत्या कर दी। जो काम मुगल और अंग्रेज नहीं कर सके वह काम अपने ही चुने हुए हिन्दू प्रतिनिधियों ने कर दिखाया। एक तलवार से एक गाय कटती थी, तो हमने यांत्रिक कत्ल कारखाने खुलवाकर एक वटन दवाने से हजारों गायें कटवाना शुरू कर दीं। अतिक्रमण, रिश्वत और भ्रष्ट आचरण से आदमी शर्माता था और अव खुले आम मंगतों भिखारियों की तरह मुंह से ऐसे मांग रहे हैं जैसे अवैध वसूली करना उसके डाकू पूर्वजों द्वारा दिया गया जन्म सिद्ध अधिकार है। हमारी राजनैतिक और सामाजिक पार्टियां या राष्ट्रीय संगठन आज भी फूट रोग से ग्रस्त हैं। भूमण्डलीकरण के विकसित और वैज्ञानिक युग में आज भी हम देशकाल परिस्थिति के अनुकूल अपनी विश्वव्यापी नीति या यूं कहूं, मानवीय दृष्टि नहीं पैदा कर पा रहे हैं और ना ही सरकार सवूत दे पा रही है कि वह शासन कर रही है या राम भरोसे गाड़ी चला रही है। जव हमारे ही अपने नहीं हैं तो पराया हमारा क्यों होगा? या यूं कहें कि विदेशी मिट्टी, शक्कर के भाव विक रही है और हमारी अमूल्य वस्तु को न तो हम प्रचारित कर रहे हैं और ना ही कोई पूछ रहा है। जैसे विदेशियों ने वौद्धिक प्रदूषण फैलाया। वेदों के खिलाफ विष उगला, हमारे ग्रंथों में मिलावट की और आज भी वनवासी और गरीव क्षेत्रों में धर्म परिवर्तन कर रहे हैं और उनका समर्थन भी हमारी तथाकथित धर्मनिरपेक्ष सरकारें कर रही हैं, जवकि अव उनके पवित्र ग्रंथ वाईविल को हांगकांग की जनता अपवित्र घोषित करने की घोषणा कर रही है। महर्षि दयानंद ने सत्यार्थ प्रकाश के १३वें अध्याय में वाईवल के कुछ अंशों को उद्धृत करते हुए, उन्हें बुद्धि, तर्क, विवेक और सत्य की कसौटी पर खरा नहीं उतरने का सिद्ध किया है और १४वें अध्याय में पवित्र कुरान और अन्य मुस्लिम ग्रंथों की समीक्षा की है। उनका उद्देश्य मानव मात्र को सत्य वताकर, सत्य के अधीन सबको एकता के सूत्र में, सबको मानवता के आत्मीय सूत्र में बांधना है। जो जो दयानंद की उपेक्षा कर रहे हैं वे मानवता के, विश्व शांति के और विशेषकर भारत माता के पैरो में कुल्हाड़ी मार रहे हैं।

आज हम भारतीयों को, हमारी राजनैतिक पार्टियों और सामाजिक पार्टियों के भारत के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप के अनुकूल, विश्वगुरू धर्म प्रधान भारत के वैदिक स्वरूप के अनुकूल अपना अस्तित्व कायम करना चाहिए। जब हम विश्वगुरु थे, हैं या रहेंगे तो विश्व में क्या हम हिन्दू, मुसलमान या ईसाई बनकर मित्र रहेंगे? हमें तो मनुर्भव का सच्चा वैदिक, सत्य सनातन संदेश देना है और सम्पूर्ण विश्व में फैली अपवित्रता को अवैज्ञानिक, अप्राकृतिक और अधार्मिक ग्रंथों को पवित्रता की ओर अग्रसर करना है। उनकी गुड़ाई और सर्जरी करनी है बिना सर्जरी के विना संघर्ष के पाप का, आतंक का भंडा नहीं फूटेगा।

नीमच (म.प्र.)

■

जतनलाल रामपुरिया, एडवोकेट

नर-लोक से किन्नर-लोक तक

दैनिक जीवन में कुछ बातें बड़े सहज रूप से सामने आती हैं – इतने सहज रूप से कि उस पर ध्यान नहीं जाता। What is the life that full of care, we have not time to stand and state - नवमी कक्षा के मेरे पाठ्यक्रम की एक कविता की इन प्रारंभिक पंक्तियों में चित्रित, यंत्र युग की व्यस्तता में व्यस्त जीवन की विवशता भी बहुत बार चीजों को अनदेखा, अनसुना करने का कारण बनती है। बाद में घटी घटनाएँ अथवा समय का अन्तराल उनकी गंभीरता का बोध कराता है, ठीक वैसे ही जैसे कहीं चोट लगने के एक-दो दिन बाद उनकी पीड़ा का अनुभव होता है। कभी-कभी, भाग्योदय की वेला में, हमारे पास समय होता है to stand and stare। मनन चिंतन के लिए अवकाश के ऐसे क्षणों में भी वे बातें बालसखा-सी बिना पूछे अचानक आकर गले में बाहें डाले कुछ फुसफुसाती-सी अपना अर्थ बतलाती हैं। अवचेतन मन से चेतन मन में स्थानांतरित होकर वे फिर अनवरत विचारों को झकझोरती रहती हैं। मन में उनकी व्याख्या करने की, उनकी संबद्धता खोजने की विकलता होती है, परन्तु दूसरे छोर पर वे उतने ही तीखेपन से व्याख्यातीत-सी होने का आभास देती रहती हैं।

अपने कुछ ऐसे ही अनुभवों के बारे में मैं बहुत दिनों से लिखने का सोच रहा था, पर वही कठिनाई मुझे घेरे रही, जिसका उल्लेख मैंने ऊपर किया है। जो भावगत रहा उसे शब्दगत करने का सिरा जैसे मैं पकड़ नहीं पा रहा था। आज अचानक दो माह पूर्व का-९ जुलाई २००५ का The Telegraph समाचार पत्र हाथ में आया। सम्पादकीय के नीचे SCRIPTS में Stephen Harold Spender के इस उद्धरण को मैंने पढ़ा–

But reading is not idleness... it is passive, receptive side of civilization without which the active and creative world be meaningless. It is immortal spirit of the dead realised within the bodies of the living.

इसे पढ़कर मुझे अपनी किशोरावस्था और स्कूल के दिन याद आए। दशवीं कक्षा तक सुजानगढ़ (राजस्थान) में पढ़ा था। वार्षिक परीक्षा के बाद दो महीने का ग्रीष्मावकाश होता। 'Idleness' की ही मन:स्थिति के साथ उन छुट्टियों में मैंने प्रेमचंद का पूरा साहित्य, जयशंकर प्रसाद का 'कंकाल' और 'चंद्रगुप्त मौर्य', क.मा. मुंशी का 'जय सोमनाथ', आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की 'बाणभट्ट की आत्मकथा' एवं सेक्सटन ब्लेक सीरीज के कुछ जासूसी उपन्यास पढ़े। साथ ही टॉलस्टाय, चेखव और मैक्सिम गोर्की की कुछ कहानियाँ भी। सन् १९५५ में कलकत्ता आया। सन् २००५ के इस मई महीने के साथ पूरे हुए इन पचास वर्षों में, पढ़ने का शौक होते हुए भी, जो पढ़ सका वह केवल इतना-सा ही है – काव्य कृतियों में प्रसाद की 'आँसू' और 'कामायनी', मैथिलीशरण गुप्त की 'साकेत', कन्हैयालालजी सेठिया की 'निष्पत्ति' और 'हेमाणी', आचार्य महाप्रज्ञ की 'ऋषभायण' और गद्य साहित्य में आचार्य महाप्रज्ञ का 'चित्त और मन', शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय का 'गृहदाह', टॉल्स्टाय का 'अन्ना कारेनिना', देवकीनंदन खत्री का 'मृत्यु किरण' व 'रक्त मंडल' और सर आर्थर कोनन डोयल का पूरा कथा-साहित्य। इनके अतिरिक्त गांधी वाङ्मय और पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कुछ मनन योग्य सामग्री पर भी यदाकदा दृष्टि पड़ी। बस यही।

Idleness के मनोभावों या मनोरंजन की दृष्टि से पढ़ी गिनती की कुछ पुस्तकें विचारों को वह पुष्टता प्रदान नहीं करतीं जो क्रमबद्ध और लक्ष्यप्रेरित अध्ययन से प्राप्त-होती है, पर स्टीफेन हेरोल्ड स्पेन्डर के उक्त उद्धरण ने, अब तक जो थोड़ा-बहुत मैंने पढ़ा था उसके संचित प्रभाव (cumulative effect) को मेरे मस्तिष्क में जैसे एक साथ ही जीवित कर दिया और जिस संदर्भ में मैंने इन पंक्तियों को लिखना प्रारम्भ किया था, उसे किंचित विस्तार देने के लिए विवश भी।

It is immortal spirit of the dead realised within the bodies of the living – इस पंक्ति के भावों ने पन्द्रह वर्ष की अवस्था में पढ़ी, हिन्दी की प्रतिनिधि पुस्तकों में एक, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की उक्त कृति 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को

पुन: एक वार मेरे सामने खोल दिया। इस पुस्तक के प्रकाशन की विचित्र पृष्ठभूमि अकस्मात मेरी स्मृति में उभरी। हिन्दी साहित्य को आचार्य द्विवेदी जी को इसके पीछे एक विदेशी महिला की आस्था, निष्ठा और लग. । है, यह कुछ अनहोनी के घटने जैसा लगता है। पुस्तक के कथामुख (भूमिका) और उपसंहार-अभ्यास में जितना कुछ दृश्य है, उससे कहीं अधिक अदृश्य है। इन पंक्तियों का सम्बन्ध इन दो प्रकरणों से ही है, मुख्य कथावृत्त से नहीं। उनमें जो दृश्य है, पहले उसे सार रूप में रखता हूँ।

मिस कैथगईन आस्ट्रिया के एक सम्भ्रांत ईसाई परिवार की महिला थीं। अपने देश में ही उन्होंने संस्कृत और हिन्दी का बहुत अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। भारतीय विद्याओं के प्रति असीम अनुराग के वशीभूत, अड़सठ वर्ष की आयु में वे भारत आईं और आठ वर्षों तक यहाँ के ऐतिहासिक स्थानों का अथक भाव से भ्रमण करती रहीं। आचार्य हजारीप्रसाद जी उन्हें दीदी कहा करते थे जो उनके अंचल में दादी का एकार्थक है। उस वृद्धा का भी उन पर पौत्र के समान ही स्नेह था। अपनी कष्ट-साध्य यात्राओं के वाद जव वे आचार्य जी के उधर से निकलती तव अपनी पाली हुई विल्ली के अलावा उनके पास जगह-जगह से इकट्ठी की हुई वहुत-सी पुरातन चीजें होतीं। उनका इतिहास वताते समय उनका चेहरा श्रद्धा से गद्‌गद् हो जाता उनकी छोटी-छोटी नीली आँखें भावों के उद्रेकवश गीली हो जातीं। उनकी वालसुलभ निर्मलता भोलेपन की सीमा को छूती थी। उसका लाभ उठा कर कुछ लोग उनके वहुमूल्य संग्रह में से कुछ चीजें दवा लेते। उन्हें उसका पता भी नहीं चलता।

भारत और भारतीय संस्कृति के साथ उनका गहन लगाव, किसी पूर्व जन्म के संस्कारों से अनुवन्धित-सा लगता था। जव वे ध्यानस्थ होती तो उनका वलीकुंचित मुखमंडल वहुत ही आकर्षक लगता और वे साक्षात सरस्वती-सी जान पड़ती। समाधि के उपरान्त उनकी वातों में अनूठी दिव्यता होती।

अंतिम वार वे राजगृह से लौटीं। द्विवेदी जी से मिलीं और वोलीं ''देख, इस वार शोण नद के दोनों किनारों की पैदल यात्रा कर आई हूँ। थकी हुई हूँ। तुम कल आना।'' दूसरे दिन आचार्य जी जव उनके स्थान पर पहुँचे, तव नौकर ने वतलाया कि उस रात वे दो वजे तक चुपचाप वैठी रहीं और फिर एकाएक अपनी टेवल पर आकर लिखने लगीं। रात भर लिखती रहीं। लिखने में इतनी तन्मय रहीं की दूसरे दिन आठ वजे तक लालटेन वुझाए विना ही लिखती रहीं। फिर टेवल पर ही सिर रख कर सो गई और अपराह्न तीन वजे तक सोई रहीं। अव वे स्नान कर के चाय पीने जा रही थीं। आचार्य जी को देखकर वहुत प्रसन्न हुई और वोली 'शोण-यात्रा में मिली सामग्री का हिन्दी रूपान्तर मैंने कर लिया है।... आनन्द से इसका अंग्रेजी में उथला करा ले... और कल पांच वजे की गाड़ी से कलकत्ते जाकर टाइप करा ला। परसों मुझे इसकी कापियाँ मिल जानी चाहिए।'

आचार्य जी ने सकुचाते हुए पूछा, ''दीदी, कोई पाण्डुलिपि मिली है क्या?''

दीदी ने डाँटते हुए कहा, ''एक बार पढ़कर तो देख। ... तू वड़ा आलसी है। देख रे, बड़े दु:ख की बात बता रही हूँ। ... स्त्रियाँ चाहें भी तो आलस्यहीन होकर कहाँ काम कर सकती है?''... तू... वाद में पछतायेगा। पुरुष होकर इतना आलसी होना ठीक नहीं। तू समझता है, यूरोप की स्त्रियाँ सव कुछ कर सकती हैं? गलत बात है। हम भी पराधीन हैं। समाज की पराधीनता जरूर कम है, पर प्रकृति की पराधीनता तो हटाई नहीं जा सकती। आज देखती हूँ कि जीवन के ६८ वर्ष व्यर्थ ही वीत गए।''

दीदी की आँखें गीली हो गईं। उनका मुख कुछ और कहने के लिए व्याकुल था, पर बात निकल नहीं रही थी। न जाने किस अतीत में उनका चित्त धीरे-धीरे डूव गया। जव ध्यान भंग हुआ, तो उनकी आँखों से पानी की धारा वह रही थी और वे उसे पोंछने का प्रयत्न भी नहीं कर रही थीं। आचार्य जी ने अनुभव किया कि दीदी किसी वीती हुई घटना का ताना-वाना सुलझा रही हैं।

आचार्य जी ने कागजों को पढ़ा। शीर्षक के स्थान पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा था 'अथ बाणभट्ट की आत्मकथा लिख्यते'। पढ़ने के वाद आचार्य जी को लगा कि दीर्घ काल के वाद संस्कृत साहित्य में एक अनूठी चीज प्राप्त हुई है। आचार्य जी को कलकत्ता में एक सप्ताह लग गया। इस वीच दीदी विना पता-ठिकाना दिये काशीवास करने चली गईं। दो साल तक वह कथा यूँ ही पड़ी रही। एक दिन अचानक मुगलसराय स्टेशन पर गाड़ी वदलते हुए आचार्य जी को वे फिर मिल गईं। आचार्य जी को देख कर जरा भी प्रसन्न नहीं हुई। केवल कुली को डाँटकर कहती रही ''संभाल के ले चल, तू वड़ा आलसी है।'' आचार्य जी ने उन्हें कहा, 'दीदी वह आत्मकथा मेरे ही पास पड़ी है।' दीदी बड़े गुस्से में थीं। रुकी नहीं। गाड़ी में वैठकर उन्होंने एक कार्ड फेंककर कहा, 'मैं देश जा रही हूं। ले, मेरा पता है। ले भला।'

पुस्तक के प्रकाशन के वीच आचार्य जी को आस्ट्रिया से दीदी का पत्र मिला। वह उपसंहार में संकलित है। इस पत्र से कथा का रहस्य और भी घना होता है। साथ ही उसमें लक्षित दृश्य के ऊपर अदृश्य की अवांछित छाया मन में टीस-सी पैदा करती है। उस छाया की, उस अदृश्य की अनुभूति आपको भी हो, इस दृष्टि से उस पत्र को अंशत: नीचे उद्धृत कर रहा हूँ। मगर उद्देश्य केवल उतना ही नहीं। पत्र का कलेवर जितना छोटा है, कथ्य उतना ही गम्भीर और वहुमूल्य है। अतीत के अतल गह्वर से *अवतरण* लेती कोई दिव्यात्मा जैसे वतला रही है कि किस तरह जगत में सव एक ही ध्रूव पर स्थित हैं। ऊँचा जीवन-दर्शन

लिए यह एक पत्र एक अभिनव, अनूठी अन्त:सृष्टि का बोध कराता है। अदृश्य में से झाँकते उसके इस लावण्य को भी निहारना आप न भूलें।

''छ: वर्षों से आस्ट्रिया के दक्षिणी भाग में निराशा और पस्तहिम्मती की जिन्दगी बिता रही हूँ। तुमने युद्ध के घिनौने समाचार पढ़े होंगे, लेकिन उसके असली निर्घृण क्रूर रूप को तुम लोगों ने नहीं देखा। देखते तो मेरी ही तरह तुम लोग भी मनुष्य-जाति की जययात्रा के प्रति शंकालु हो जाते। ... तूने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' छपवा दी, यह अच्छा ही किया। पुस्तक रूप में न सही, पत्रिका रूप में छपी कथा को देख सकी हूँ, यही क्या कम है। अब मेरे दिन गिने-चुने ही रह गए हैं।... मैं अब फिर लोगों के बीच नहीं आ सकूँगी। मैं सचमुच संन्यास ले रही हूँ। मैंने अपने निर्जन वास का स्थान चुन लिया है। यह मेरा अन्तिम पत्र है। 'आत्मकथा' के बारे में तूने एक बड़ी गलती की है। तूने उसे अपने 'कथामुख' में इस प्रकार प्रदर्शित किया है मानो वह 'आटो-बाँयोग्राफी' हो। ले भला! तूने संस्कृत पढ़ी है ऐसी ही मेरी धारणा थी, पर यह क्या अनर्थ कर दिया तूने? बाणभट्ट की आत्मा शोण नद के प्रत्येक बालुका-कण में वर्तमान है। छि:, कैसा निर्वोध है तू, उस आत्मा की आवाज तुझे नहीं सुनाई देती? ... तुझे इतना प्रमाद नहीं शोभता।

उस भाग्यहीन बिल्ली ने बच्चों की एक पल्टन खड़ी कर दी है। ... मैं कहाँ तक सम्हालूँ। जीवन में एक बार जो चूक हो जाती है वह हो ही जाती है। इस बिल्ली का पोसना भी एक भूल ही थी। तुमसे मेरी एक शिकायत बराबर रही है। तू बात नहीं समझता। भोले, 'बाणभट्ट' केवल भारत में ही नहीं होते। इस नर-लोक से किन्नर-लोक तक एक ही रागात्मक हृदय व्याप्त है। तूने अपनी दीदी को कभी समझने की चेष्टा भी की! प्रमाद, आलस्य और क्षिप्रकारिता – तीन दोषों से बच। अब रोज-रोज तेरी दीदी इन बातों को समझाने नहीं आएगी। जीवन की एक भूल – एक प्रमाद – एक असंमजस न जाने कब तक दग्ध करता रहता है। मेरा आशीर्वाद है कि तू इन बातों से बचा रहे। दीदी का स्नेह। – के''

इसे पढ़ कर आचार्यजी के मन में जो प्रतिक्रिया हुई उसका भी उल्लेख यहाँ आवश्यक है – ''मुझे याद आया कि दीदी उस दिन (राजगृह से लौटने के दिन) बहुत भाव-विह्वल थीं। उन्होंने (राजगृह में मिले) एक शृगाल की कथा सुनानी चाही थी। उनका विश्वास था कि (वह) शृगाल बुद्धदेव का समसामयिक था। क्या बाणभट्ट का कोई समसामयिक जन्तु भी उन्हें मिल गया था? शोण नद के अनन्त वालुका-कणों में से न जाने किस कण ने बाणभट्ट की आत्मा की यह मर्मभेदी पुकार दीदी को सुना दी थी। हाय, उस वृद्ध हृदय में कितना परिताप संचित है! अस्त्रियवर्ष की यवनकुमारी देवपुत्र-नन्दिनी क्या आस्ट्रिया-देशवासिनी दीदी ही हैं। उनके इस वाक्य का क्या अर्थ है कि 'बाणभट्ट केवल भारत में ही नहीं होते। आस्ट्रिया में जिस नवीन 'बाणभट्ट' का आविर्भाव हुआ था वह कौन था। हाय, दीदी ने क्या हम लोगों के अज्ञात अपने उसी कवि प्रेमी की आँखों से अपने को देखने का प्रयत्न किया था!... दीदी के सिवा और कौन है जो इस रहस्य को समझा दे? मेरा मन उस 'बाणभट्ट' का सन्धान पाने को व्याकुल है। मैंने क्यों नहीं दीदी से पहले ही पूछ लिया। मुझे कुछ तो समझना चाहिए था। लेकिन 'जीवन में जो भूल एक बार हो जाती है वह हो ही जाती है!'

अब दीदी के पत्र पर पुन: ध्यान दें। Immortal spirit of the dead जिसे आस्ट्रिया की उस वृद्धा ने अपने अंदर realise किया था, उनका पत्र उस realisation की अभिव्यक्ति है। दृश्य और स्पृश्य के इस छोटे-से जगत के पार किन्नर-लोक तक फैले एक ही रागात्मक हृदय के साथ तादात्म्य दीदी को युद्ध की विभीषिका के बीच शोण नद के प्रत्येक बालुका-कण में बाणभट्ट की आत्मा के अस्तित्व की अनुभूति देता है। वही तादात्म्य आस्ट्रिया में भी उनके बाणभट्ट से 'साक्षात्कार' का साक्षी बनता है। सूक्ष्म जगत में दूरी का बन्धन नहीं। बाणभट्ट जन्में और मर गए, यह केवल स्थूल पर टिकी अपारदर्शी आँखों का सत्य है, वहाँ का नहीं। आलस्य, प्रमाद और क्षिप्रकारिता से मुक्त दीदी की आत्मा देह के भीतर भी विदेह में रमती थी। वह अन्तर्जगत की उस रागात्मक लय से अनुबन्धित थी जो अद्वैत रूप में सर्वत्र व्याप्त है और इसलिए शोण नदी की लहरों ने उन्हें वह सब कह दिया जो वे हमें नहीं बतलाती और इसीलिए उसके तट पर बिछे रजकणों ने अक्षर बन कर उनके लिए अतीत के वे पृष्ठ खोल दिए जिन्हें हम नहीं पढ़ पाते।

आस्ट्रिया की वह वृद्धा, जिसे मैंने कभी देखा नहीं, पाँच दशकों से अनजाने रूप में मेरे मन में छाई रही हैं। 'भोले! बाणभट्ट केवल भारत में नहीं होते' इस एक वाक्य में उन्होंने एक महाग्रन्थ की ही रचना कर दी। महाग्रन्थ या महापुरुष, ये किसी को भी सम्पूर्ण जीवनचर्या नहीं सिखाते। यह दायित्व वे कभी लेते ही नहीं। वे केवल हमारी अन्तश्चेतना को जागृत करते हैं और हमें सूत्र देते हैं, उस रागात्मक हृदय के साथ आत्मानुभूति का, जो नर-लोक से किन्नर-लोक तक व्याप्त है। 'बाणभट्ट केवल भारत में ही नहीं होते' — यह कथन वैसा अपनी वृद्धावस्था को भूल कर, सत्य की खोज में भटकती, हर व्यक्ति में बाणभट्ट को देखती, एक जन्तु की आँखों में बुद्ध के संदेश को पढ़ती उस आस्ट्रियन महिला ने मुझे उन अच्छाइयों को, जिनसे प्रकृति ने जड़ और चेतन सबको समान रूप से अलंकृत किया है, देखने की दृष्टि दी, जिनके पास से मैं उस कथन को याद रखे बिना यों ही निकल जाता। सर आर्थर कोनन डोयल के कथा-साहित्य को

पढ़ते समय उस कथन की गहनता का मुझे और भी तीव्रता से अनुभव हुआ और मुझे लगा कि हितोपदेश की बातें केवल नीतिग्रंथों में ही नहीं, जासूसी कहानियों में भी पढ़ी जा सकती हैं। प्रकाश की किरणें परावर्तित होती हैं ताकि कहीं से कुछ उजाला अंधकार में झाँकता रहे। मन के ब्रह्मांड में भी सद्विचारों के तारे टिम-टिम करते हैं और इसलिए, अन्तरिक्ष की तरह, अन्तर का भी एक-न-एक कोना सदा आलोकित रहता है – सर डोयल की कहानियाँ मुझे यह कहती-सी प्रतीत हुई। अपनी उस अनुभूति को भी आज व्यक्त करता हूँ।

सर आर्थर कोनर डोयल विश्व के सर्वाधिक पढ़े जाने वाले लेखकों में से एक हैं। लगभग सभी देशों की प्रमुख भाषाओं में उनकी रचनाओं का अनुवाद हुआ है। गहन षडयंत्रों की पृष्ठभूमि पर बुना सशस्त कथानक, रोमांचक परिस्थितियाँ, अविरल प्रवाह, बाँध लेने वाली भाषा, चुस्त संवाद और अमलिन अभिव्यक्ति - इन सबके सम्मिलित स्वरों ने उनके साहित्य को वह ऊँचाई दी है जहाँ पहुँचकर लेखनी तूलिका बनती है और लेखन एक जीवंत चित्र-कृति की आकृति लेता है। अपराध जगत की जटिल गुत्थियाँ उनकी कथाओं के विषय हैं और उन्हें सुलझाने में मन और मस्तिष्क की अतल गहराइयों तक उलझे शरलॉक होम्स नाम के गुप्तचर उन कथाओं के नायक। सर डोयल के उपन्यासों और कहानियों में एक ओर हिंसा और प्रतिहिंसा, घात और प्रतिघात व प्रहार और प्रतिशोध के दुर्दान्त चक्रव्यूह हैं तो दूसरी ओर अपराधों के प्रति निर्लिप्त और उदासीन बने रहकर उन्हें देखते रहने की प्रवृत्ति के साथ समझौता न कर पाने की शरलॉक होम्स की विवशता है।

भय और आतंक, उत्पीड़न और अत्याचार एवं कपट और क्रूरता की शतरंज बिछाए माफिया वृत्ति के जीवित मोहरे और उन्हें मात देने के लिए कटिबद्ध अपने प्राण हथेली में लिए उनके पीछे लगे शरलॉक होम्स! फिर भी हजारों पृष्ठों के साहित्य में दो-चार स्थलों को छोड़ कर कथा-नायक होम्स द्वारा न कहीं हथियारों का उपयोग हुआ है, न ही कहीं हाथों का। अपराध और जुड़े घटनाक्रम पर वे अपने घर में बैठे विभिन्न कोणों से चिन्तन करते हैं, सुरागों को जांचते-परखते हैं और art of deduction की अपनी अदभुत क्षमता के बल पर उन सूत्रों तक पहुँचते हैं जो अपराधी के मन्तव्य और उसकी प्रणाली को स्पष्ट करते हैं। अन्ततः जब वे अपराधी को कानून के सुपुर्द करते हैं, या कुछ कथाओं में जब वह मरता है तो जैसे अपने कर्मों का ही फल भोग रहा होता है। होम्स के मन में अपराधी के प्रति कोई द्रोह, दुर्भाव नहीं होता इसलिए एक प्रतिद्वन्द्वी द्वारा पराजित किए जाने का भाव अपराधी को पीड़ा नहीं देता। उसे अपने दुष्कर्मों का, अपने पापों का बोध होता है या फिर आदमी द्वारा बनाई गई दोषपूर्ण और नकारात्मक व्यवस्था का वह पक्ष सामने आता है जो उसे अपराध करने के लिए विवश करता है।

चार उपन्यास और छप्पन कहानियों में, अधिकांश जिनमें बहुत लम्बी हैं, न कहीं श्लीलता का उल्लंघन है न अपराधी के प्रति हिंसक भावों का उद्रेक। अपराधों की पृष्ठभूमि पर भी ऐसा साफ-सुथरा सृजन कैसे संभव हुआ? कर्म-नियति के स्वत:स्फूर्त और स्वचालित अनुशासन के अधीन, दुष्कर्म स्वयं ही कर्ता को सजा देते हैं – दर्शन-ग्रन्थों का यह सार जासूसी कहानियों में कैसे प्रवाहित हुआ? शरलॉक होम्स के साहसिक और संकटपूर्ण कारनामों को पढ़ते समय मुझे बार-बार ऐसा लगता रहा कि उसके रचनाकार सर आर्थर कोनन डोयल भी भाव-जगत की उसी प्रकम्पन-शृंखला से बंधे थे, बाणभट्ट से दीदी तक जिसका संचरण था और उन सब तक है जो नर-लोक से किन्नर-लोक तक एक ही रागात्मक संवेदना का अनुभव करते हैं और उस रागात्मकता में, दीदी की तरह, राग-मुक्त होने की ध्वनि सुनते हैं। जिस तरह बाणभट्ट केवल भारत में ही नहीं होते, उसी तरह हितोपदेश भी केवल ज्ञान-ग्रन्थों में ही सीमित नहीं हैं। वह सियार जो दीदी को बुद्ध का समसामयिक लगा था, उनके संदेश को सर डोयल की लेखनी में भी डाल देता है!

कहीं पढ़ा था – 'उस मक्खी का भाग्य कोई कैसे बदले जो गन्दगी पर ही बैठती है'। मधु से परिचय ही उसका भाग्य बदल सकता है। 'बाणभट्ट केवल भारत में ही नहीं होते' – इसका कथ्य उसके पंखों को फूलों की ओर उड़ना सिखाता है और उसे पराग की पहचान देता है। दीदी की यह बात हमें बतलाती है कि जड़ और चेतन का समन्वित रूप ही पूर्ण सत्य है, पर उसे देख पाने की क्षमता चक्षुओं में नहीं, हमारे निरामय मनोभावों में है और उन क्षणों में है जब हमें अवकाश होता है to stand and stare, जब हमे अवकाश होता है to stand and pick up all that is good around us, जब हमें अवकाश होता है to stand and see a lovely garden in a single rose और जब हमें अवकाश होता है to stand and realise the immortal spirit of the dead within us.

अतीत की अमृत ऊर्जा के स्पन्दनों की अनुभूति हमें वहाँ ले चलती है जहाँ सत्य है, शिव है, सुन्दर है, जिन्हें दीदी शोण नदी के बालुका कणों से लेकर आस्ट्रिया तक बाणभट्ट के रूप में खोजा करती थीं और देख भी लेती थीं।

■

डा० (श्रीमती) कुसुम चतुर्वेदी

शिक्षक की नैतिक जवाबदेही

उपभोक्ता संस्कृति के सर्वग्रासी संक्रमण के इस युग में जहाँ सम्पत्ति और सत्ता का समग्रीकरण, संस्कृति का विकृतिकरण, राजनीति का अपराधीकरण तथा सम्बन्धों के बाजारीकरण के कारण सम्पूर्ण मानव प्रजाति का विश्वव्यापी व्याकरण विशृंखलित होता चला जा रहा है वहाँ शिक्षा का परिदृश्य कैसे पृथक तथा असंपृक्त हो सकता है? किन्तु यह कदापि विस्मरण योग्य नहीं कि शिक्षा बाल व्यक्तित्व में एक विशेष प्रकार की आत्मीयता एवं आस्था के संचरण का साधन है। अन्य शब्दों में व्यक्तित्व की सतत पुनर्रचना, व्यक्तित्व को गढ़ने की अविराम रूपरेखा जिसमें अनथक प्रयत्न एवं संयम की आवश्यकता होती है, शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है तथा इस सम्भावना–सिद्धि में प्रमुख अभिकर्त्ता के रूप में शिक्षक की जवाबदेही असंदिग्ध है।

जवावदेही का संप्रत्यय वस्तुत: नीतिशास्त्रीय और नैतिक है जो स्वयम् में 'नयनात्रीतिरुच्यते' तथा 'कर्त्तव्यमेवं न कर्त्तव्यमित्यात्मको यो धर्म: सानीति:' एवं 'श्रेय' जैसे प्रमुख प्रतिपाद्यों को समाहित किये हुए हैं। इस दृष्टि से जवावदेही को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है : **नैतिक दृष्टि से अपने शिक्षार्थी समुदाय के प्रति, उस संगठन के प्रति जिसमें सेवा**

शिक्षक की जवाबदेही
विचारणीय हैं – प्रथम -
जवाबदेही लुप्तप्राय है, ऐसी
आशा कहाँ तक उचित है
चक्राकार प्रक्रिया है जिसके
एक घटक नहीं है, इस प्रक्रि
उच्च प्रशासन, सामुदायिक
व्यवस्थापक, अभिभावक ए
और परोक्ष जवाबदेही कम
महत्वपूर्ण घटकों के अतिरि
पाठ्यक्रम निर्माण, पाठ्यपु
निर्धारण एवं उत्तीर्ण होने के
शिक्षक की भूमिका के प्रति अ
परिणामों पर अध्यापकीय उप
पक्ष भी जवाबदेही को निषेध
तृतीय– टैक्नोलॉजी के बढ़
भूमिका विवादों के घेरे में है
यह है कि टैक्नोलॉजी साधन
संवाद में सहायक हो सकती
सकती। पुन: ज्ञान एक अ
अन्त:क्रिया का महत्त्व होता
महान विचारक ने डिस्टेन्स
स्वीकार किया कि **'यह क**
स्थान नहीं ले सकती जिस
ज्ञान और योग्यताएँ हासिल

स्पष्ट है कि टैक्नोलॉजी
यह शिक्षक की स्थानापन्न नहीं
लिये जवाबदेही एक अनस्तित्
है इसलिये यथास्थितवाद का
में हाथ धोने की मानसिकता
के प्रति अनास्थाभाव का द्योतक
के वशीभूत शिक्षक शिक्षक
व्यावसायिक कर्मचारी मात्र
ट्यूशन, मात्र अपने अधिकार
प्रदर्शन के प्रति आसक्ति के
कुछ भी नहीं रह जाता, परिणा
की जिस थाती को लेकर स्कू
स्वेच्छाचारिता की आसुरी सम

अत: आवश्यकता है आत्मावलोकन, आत्मचिन्तन और आत्मविश्लेषण की। अध्यापकीय सेवा के इस परिधान के तकाजे के अधीन इस तथ्य को हृदयंगम करने की कि अध्यापक का मूल अर्थ केवल ले जाने वाला नहीं है, अधि लगा है उसमें, जिसका अर्थ है किसी विशेष जगह ले जाने वाला, किसी अधिष्ठान तक पहुँचाने वाला, एक निश्चित लक्ष्य तक ले जाने वाला और ले ही जाने वाला नहीं उसे सम्पन्न करने वाला, प्रतिष्ठित करने वाला, तदर्थ आवश्यकता है अध्यापक स्वयम् सम्पन्न हो, स्वयम् प्रतिष्ठित हो तभी नैतिक जवाबदेही की सम्भावना की सिद्धि सम्भव है। इस दृष्टि से शिक्षक की विशेष रूप से शिक्षार्थी के प्रति प्रमुखतया तीन नैतिक प्रतिबद्धताएँ है:

वैचारिक निष्ठा :

तदर्थ शिक्षक को मात्र ज्ञान का संप्रेषक होना ही पर्याप्त नहीं है वरन् उसका प्रज्ञावान होना आवश्यक है। वह जो कुछ शिक्षार्थी को देना चाहता है उसे उस विषय का पूर्ण निष्णात, पूर्ण ज्ञाता होना चाहिये, किन्तु प्रज्ञावान केवल बुद्धिमान व्यक्ति नहीं है। प्रज्ञावान व्यक्ति वह है जो वस्तुओं, व्यक्तियों और घटनाओं आदि के तथ्यों को उचित रूप में अध्ययन कर उनकी व्याख्या करने में सक्षम हो, जो अपने शिष्य के गूढ़ से गूढ़, जटिल से जटिल प्रश्नों का अत्यन्त धैर्य के साथ विधिवत समाधान प्रस्तुत करने में सक्षम हो, वह जिस विषय का भी संस्पर्श करे उसे पराकाष्ठा तक पहुँचाने की सामर्थ्य उसमें हो। आशय यह कि शिक्षक के व्यक्तित्व में ज्ञान का गाम्भीर्य इतना सशक्त होना चाहिये कि विद्यार्थी श्रद्धावनत होने के के लिये विवश हो जाये। गीता के आठयें अध्याय में एक साथ अनेक प्रश्नों की बौछार और गीता के शिक्षक श्रीकृष्ण द्वारा अत्यन्त धैर्य के साथ दिये गये उत्तर उनकी ज्ञान-गरिमा की प्रतिष्ठा के परिचायक हैं। ये उत्तर वस्तुत: शिक्षक की जवावदेही के उस नैतिक पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं कि जिसके पास देने को है, वह देने के लिये विवश है, इस दृष्टि से शिक्षक-शिक्षार्थी सम्बन्ध माँ और बालक के सम्बन्ध के समकक्ष हैं जिसे गोपीनाथ कविराज ने महाभाव की संज्ञा से संज्ञापित किया है। यह सम्बन्ध वस्तुत: त्याग के स्तर का नहीं वरन् प्रेम के स्तर का है, क्योंकि त्याग में तो द्वैत है, प्रेम में अद्वैत होता है।

इस प्रकार प्रेमाधारित वैचारिक निष्ठा ही नैतिक जवावदेही का पर्याय हो सकती है और यह मात्र अध्यापन की औपचारिकता से संभव नहीं होगा, स्वयम गहराई में जाना होगा, अपने शिक्षार्थी को 'गहरे पानी पैठ' की हद तक लेकर जाना होगा, ऐसी लगन और गहराई में जाने की साध जो पैदा कर सके, वही अध्यापक है। ऐसे अध्यापक ही भगवान बुद्ध की भाँति आत्मदीपोभव का संदेश दे सकते हैं।

भाव निष्ठा :

इयान पियर्सन जैसे लोग वह घोषणा कर रहे हैं कि भविष्य टैक्नोलॉजी के हाथ में है, दूसरी ओर आत्म हत्याओं की संख्या में वृद्धि, अध्यात्म की शरण में जाकर भावनात्मक और मानसिक समस्याओं से निजात पाने की प्रवृति, प्रबन्धन में इमोशनल एवं स्प्रिच्युल कोन्शियेन्स जैसी अवधारणाओं का पढ़ाया जाना, शिक्षा एवं प्रबन्धन तक के पाठ्यक्रम में पतंजलि योगदर्शन के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्षों के अध्ययन की अनुशंसा, साइबर दुकानों के समानान्तर योग, नेचुरोपेथी, ताई ची और रेकी जैसे उपक्रम, आध्यात्मिक संगीत और कैसेट के एक पृथक बाजार का निर्माण – टैक्नोलॉजी के समानान्तर ये समस्त प्रावधान इस तथ्य के द्योतक हैं कि आदमी की प्राथमिकता डिजिटल क्रान्ति नहीं है। नई टैक्नोलॉजी से व्युत्पन्न सुखबोध प्रत्येक रोग का इलाज नहीं है, आदमी की बुनियादी जरुरत भावनात्मक है।

गाँधी जी कहा करते थे कि शिक्षा का अर्थ मात्र अक्षर ज्ञान नहीं है, अक्षर ज्ञान से आशय मनुष्यत्व से भी नहीं है, मनुष्य का मनुष्यत्व सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया, क्षमा, शौर्य आदि उच्च भावनाओं के साथ एक-रूप होने में है। शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में भावनाओं की शुद्धि और उनका विकास शरीर के पोषण के ही साथ संयुक्त होना चाहिये। भाव संशुद्धि और विकास की दृष्टि से शिक्षा के दायित्व के रूप में शिक्षा के मूल घटक परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका है क्योंकि कुटुम्ब में ही समाज सेवा का बीज निहित है। पुन: इस दायित्व का निर्वहन शिक्षा की जवावदेही है, किन्तु प्रथम दृष्टया अत्यधिक आकर्षित प्रतीत होने वाली ''ऑन लाइन डायग्नोसिस'' और ''डिस्टेन्स लर्निंग'' जैसी शैक्षिक अवधारणाओं से यह सम्भव नहीं है, क्योंकि शिक्षा सम्बन्धी ये अवधारणाएँ जीवन को देखने की मौलिक दृष्टि प्रदान करने में नितान्त असमर्थ है। इनके दुष्प्रभाव ने शिक्षा में रुग्ण और विक्षिप्त व्यक्तित्व को जन्म दिया है, जो हृदयहीन और भाव शून्य है, जिसके पास मनुष्यता नहीं, करुणा नहीं, प्रेम का कोई झरना नहीं, प्राणों की कोई ऊर्जा नहीं, जो मात्र हिसाव लगाने वाली कम्प्यूटर मशीन के समान जीवन का वोझा उठाने में अपना अभ्युदय और नि:श्रेयस स्वीकार कर स्वयम् को धन्य समझता है। इस दृष्टि से अपने विद्यार्थियों के प्रति शिक्षक की भावनात्मक प्रतिवद्धता का विशेष महत्व है, तदर्थ आवश्यकता है :

शिक्षक द्वारा अपने पूर्वाग्रहों, आशाओं, आशंकाओं को आरोपित करने के स्थान पर शिक्षार्थी को समझने की, उसकी भावनाओं को समझने की। प्रभुत्व प्राप्त करने की जटिल तथा भयंकर वासना के अधीन दुराग्रह पूर्वक आत्मतुष्टीकरण हेतु

अपने छात्र-छात्राओं का उपयोग करनेवाला और इसी को गुरु सेवा का पर्याय माननेवाला शिक्षक, शिक्षक होने योग्य नहीं वरन् उसका तो संवेदनात्मक स्तर पर छात्र के प्रति अनन्य प्रेम होना चाहिये। गीता अध्याय दस में शिक्षक श्रीकृष्ण के शिक्षार्थी के प्रति अतिशय प्रेम के समान, जिसकी पराकाष्ठा की घोषणा **''पाण्डवानाम् धनंजय''** के कथन में दृष्टव्य है, जिसके लिये विनोबा कहते हैं कि इससे अधिक प्रेम का पागलपन और प्रेमोन्मत्तता कहाँ होगी? ग्यारहवाँ अध्याय इसी प्रीति का प्रसाद रूप है। यह निश्चित है जहाँ प्रेम होगा वहाँ अहिंसा, धैर्य, करुणा, क्षमा आदि की भावनायें स्वमेव प्रतिष्ठित हो जायेगी। हमारी शिक्षा की भारतीय संकल्पना परस्पर परायणता **''बौधयन्त: परस्परं''** की भावना पर आधारित है। हमारी प्राचीन परम्परा तो **''तेजस्विनावधीतमस्तु''** की परम्परा है जिसमें शिक्षक शिक्षार्थी के अध्ययन के स्थान पर हम दोनों (शिक्षक और शिक्षार्थी) का अध्ययन तेजस्वी बने, ऐसी कामना की गई है। शिक्षा की यह विधायक धारणा शिक्षक के अहं और प्रभुत्व की भावना को नियंत्रित कर स्वस्थ परम्परा का पोषण करती है। शिक्षक द्वारा अनुगमित इस प्रकार की सहयोगात्मक अभिवृत्ति छात्र में आस्था का संचार कर उसकी असीम सम्भाव्यताओं को उजागर करती है, ऐसे शिक्षक के प्रति ही छात्र सहज समर्पित हो अर्जुन के समान कह सकता है–

नष्टोमोह: स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत
स्थितोऽस्मि गत संदेह: करिष्ये वचनम् तव ।। १८/७३

व्यवहार निष्ठा :

विनोवा **''शिक्षा प्रचार''** में कहते हैं कि **''गीता में प्राय: ज्ञान और विज्ञान** दो शब्द साथ-साथ आते हैं। ज्ञान का अर्थ है आत्मज्ञान जो बुद्धिगत है, वह जब इन्द्रियों में उतरता है, जीवन में पग जाता है तो विज्ञान बन जाता है। विज्ञान का अर्थ है पगा हुआ ज्ञान, परनिष्ठित ज्ञान। ..... विवेक की सहायता से ज्ञान विज्ञान बनता है। जब तक पूरा विवेक जाग्रत न हो ज्ञानानुरूप जीना सम्भव नहीं होगा। जब तक ज्ञान आचरण में नहीं उतरता उसे विज्ञान का रूप नहीं मिलेगा।''

भारत में प्राचीन काल से अर्वाचीन काल तक आचार्यों की परम्परा चली आयी है। संस्कृत का ''आचार्य'' शब्द स्वयम् बोलता है – आचिरति आचारम् कारयति – जो स्वयम् आचरण करता है और दूसरों से कराता है वह है आचार्य। इस संकल्पना के अधीन हमारे यहाँ अध्यापक स्वयम् में एक संस्था था, किसी संस्था के अधीन नहीं था। उस अध्यापक का कार्य मात्र वेतन प्राप्त करना नहीं था वरन् उसके समक्ष तो शिक्षार्थी सहित सामाजिक चित्त शुद्धि के आयोजन एवं उत्तरोत्तर उन्नयन का सर्वाधिक महत् दायित्व था। आज के शिक्षक को ऐसी ही शान्तिमय क्रान्ति का अग्रदूत बनकर **''पथीकृत विचक्षण:''** बन शिक्षार्थी के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करने होंगे। श्री माँ का अभिमत है :

''यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारा बच्चा आदर करे तो स्वयम् अपने प्रति आदर भाव रखो तथा सम्मान के उपयुक्त बनो। कभी स्वेच्छाचारी, अत्याचारी, असहिष्णु और क्रोधित मत होओ। बच्चे को शिक्षा देने की योग्यता प्राप्त करने के लिये प्रथम कर्त्तव्य है अपने आप को शिक्षा देना, अपने विषय में सचेतन होना और अपने ऊपर प्रभुत्व स्थापित करना जिससे हम बच्चे के सामने कोई बुरा उदाहरण पेश न करें। एकमात्र उदाहरण ही शिक्षा फलदायी बनती है।'' बापू ने भी एक बार छात्र-छात्राओं को सम्बोधित करते हुए कहा था कि ''आचार्य तथा अध्यापकगण पुस्तकों के पृष्ठों से चरित्र नहीं सिखा सकते। चरित्र निर्माण तो उनके जीवन से सीखा जाता है।''

वस्तुत: शिक्षक के विचार और कार्य संयुक्त होकर विद्यार्थी के मन में सहयोग, सहिष्णुता, त्याग, प्रेम आदि भावनाओं का पोषण करने में सक्षम होंगे। आज शिक्षक के पार्ट पर मन, वचन और कर्म की एकतानता एवं गत्यात्मकता का अभाव शिक्षा की सबसे बड़ी त्रासदी है। नैतिक जवावदेही की अपेक्षा यह है कि अध्यापक का व्यक्तित्व व्याधात्मक न हो, सिद्धांत और व्यवहार में दोहरी नीति का अनुगमन न हो। ज्ञान के तत्काल संक्रमण हेतु शिक्षा में इस प्रकार की स्थिति ठोस और उत्तम प्रभाव की वाहिका सिद्ध होगी। अनुकरणीय व्यक्तित्व के रूप में नैतिक जवावदेही से विभूषित इस प्रकार के शिक्षक का अर्थ होता है – कक्षा में भयरहित शान्ति और अनुशासन का वातावरण, छात्रों में आनन्ददायी स्फूर्ति की विद्यमानता, शिक्षक के प्रति सहज किन्तु सशक्त आदर भाव का अविरल प्रवाह।

अन्तत: शिक्षा उत्पाद नहीं है, निश्चित रूप से शिक्षा संस्कार है जो शिक्षार्थी को उसकी समग्र सम्भावनाओं से संयुक्त करता है और जिसकी सिद्धि शिक्षक की नैतिक जवावदेही की सुदृढ़ पीठिका पर आधारित है।

■

प्रकाश मानव

आधुनिक युग मे जैन पत्रकारिता एवं उसका योगदान

भारत में २९जनवरी १७८० को हिक्की गजट एवं द वंगाल एसियाटिक गजट के प्रकाशन के साथ ही पत्रकारिता युग का सूत्रपात हाआ। १७८५ में मद्रास कोरियर, १७९५ में मद्रास गजट एवं १८१८ में वंगाल गजट प्रारंभ हुआ। ३०मई १८२६ को उदन्त मार्तण्ड अखवार ने पत्रकारिता के क्षेत्र में विशेष स्थान तय किया। १८३८ में टाईम्स ऑफ इण्डिया के पश्चात् पत्रकारिता के क्षेत्र में एक लम्वी शृंखला स्थापित हुई और इसी शृंखला ने देश की आजादी में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया तभी तो अकवर इलाहावादी ने कहा था 'खिंचो न कमानो को, न तलवार निकालो जव तोप मुकाविल हो तो अखवार निकालो, अर्थात वंदूक की गोलियों से दो चार आदमी मरते हैं किंतु अखवार की एक खवर से हजारों लाखों की भावनाएं आहत होती हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में ज्यों-ज्यों वाढ़ आती गई त्यों-त्यों पत्रकारिता लोकतंत्र के सजग प्रहरी के रूप में मुखर होती गयी। देश के अभ्युत्थान के लिए निर्धनता, भूखमरी और विषमता से संघर्ष करना ही पत्रकारिता का धर्म, कर्म और मर्म है। समाचार पत्र संसार की वड़ी ताकत है, उन पर सवसे वड़ी जिम्मेदारी लोकतंत्र के निर्वहन की है, इसी कारण इसे प्रजातंत्र के चौथे स्तंभ के रूप में माना जाता है। पत्रकारिता के संदर्भ में कहा जाता है कि सूली का पथ ही सीखा है, सुविधा सदा बचाता आया, मैं बलिपथ का अंगारा हूं, जीवन ज्वाला जलाता आया।

पत्रकारिता को लोकतंत्र का मुखर प्रहरी बनाने में अहिंसा, सत्य एवं समानता को लेकर एक विचारधारा प्रस्फुटित हुई, इस विचारधारा को जैन सिद्धांतों के अनुगामी विभिन्न साधु भगवंतों एवं जैन श्रावकों ने पल्लवित किया और यही विचार धारा आगे चलकर जैन पत्रकारिता के रूप में विख्यात हुई। जैन धर्म की अहिंसा के आधार पर पत्रकारिता के सिद्धांतों को जनसामान्य के सामने लाने का प्रयास समय-समय पर विभिन्न विद्वानों ने किया इसमें मुनि कांतिसागर से लेकर अगरचंद नाहटा एवं बाबू लाभचंद छजलानी से लेकर राजेन्द्र माथुर तक के विद्वान पत्रकारों का अविस्मरणीय योगदान है।

जैन धर्म प्राणी मात्र के कल्याण की कामना करता है। जैन पत्रकारिता का यही उद्देश्य है कि जहां तक हो सके पत्रकारिता के माध्यम से अहिंसा के विचारों को प्रतिपादित करना ताकि कम से कम हिंसा हो। 'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामय:' की सुन्दर भावना इस सिद्धांत में प्रकट होती है। कटुता का कलह संसार में विषमता का वातावरण घोलता है इसको हिंसा से नहीं मिटाया जा सकता। अहिंसा के द्वारा ही एक मात्र शांति स्थापित की जा सकती है और यही अहिंसा प्राणी-मात्र पर दया की भावना से अभिभूत हो उसे निर्भरता का पाठ पढ़ाती है।

महात्मा गांधी ने जीवदया की भावना को जैन धर्म के घेरे से निकालकर प्राणीमात्र के धर्म से जोड़ दिया। सत्याग्रह में हमेशा उन्होंने जीवदया पर जोर दिया। यही कारण था कि हजारों क्रांतिकारी आंदोलन होने के बाद भी देश को आजादी नहीं मिल सकी, वहीं सत्याग्रह के प्रयोग से आजादी का पथ प्रशस्त हुआ।

जैन पत्रकारिता शाकाहार की भावना को भी उद्घोषित करती है। विभिन्न वैज्ञानिक सिद्धांतों से हजारों वर्ष पूर्व जैन तीर्थंकरों ने शाकाहार की महिमा जैन ग्रंथों में लिखी।

जैन पत्रकारिता में शाकाहार की भावना को विशेष वल दिया है। जैन विश्वभारती विश्व विद्यालय लाडनू एवं कोलकाता विश्वविद्यालय में जैन दर्शन पर आधारित पत्रकारिता में कहा है कि शाकाहार का सम्वंध व्यक्ति के विचार से जुड़ा है। पत्रकारिता में शुचिता को वनाए रखने के लिए शाकाहार अत्यंत आवश्यक है।

अर्थात 'जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन' की भावना का प्रभाव पत्रकारिता में अवश्य पड़ता है। शाकाहार व्यक्ति को आत्मिक-शांति के साथ सात्विक विचार प्रदान करता है वहीं साथ ही पत्रकार शाकाहार के माध्यम से विश्वशांति में अपना अनूठा योगदान देता है।

आज की पत्रकारिता ग्लेमर एवं चटपटी खवरों से भरी रहती है। अधिकांश अखवार हिंसात्मक समाचारों को प्रमुखता

देते हैं, वहीं जैन पत्रकारिता हिंसा को नकारती है, अहिंसा के सिद्धांतों को बढ़ावा देती है। कहा जाता है कि अखबार में छपे हुए विचार जन-जन के विचार होते हैं अत: पत्रकारिता में अहिंसा से ओतप्रोत विचारों को ही स्थान मिलना चाहिए ताकि समाज का वातावरण समरसता से युक्त होकर जनकल्याणकारी बने।

बदलते हुए परिदृश्‍य में पत्रकारिता ने एक व्यावसायिक स्थान ले लिया। आज पत्रकारिता एक मिशन न होकर व्यवसाय बन गया। ऐसे में पत्रकार एवं सम्पादक के मन में भी परिग्रह की वृत्ति पैदा हुई। जबकि पत्रकारिता में अपरिग्रह को विशेष महत्व मिलना चाहिए। पत्रकार एवं साधु समान होते हैं। जैन पत्रकारिता अपरिग्रह की भावना पर विशेष बल देती है ताकि समाज का दर्पण उससे प्रभावित न हो। परिग्रह की विशेषता होती है कि उससे मोह उत्पन्न होता है एवं जहां से पत्रकारों को कुछ प्राप्त हुआ वे उसका विशेष ध्यान करने लगते हैं ऐसे में निष्पक्ष पत्रकारिता संभव नहीं है। अपरिग्रहवृत्ति ही निष्पक्ष पत्रकारिता का दायित्व निर्वहन कर सकती है।

आजादी के पूर्व के अखबारों के सम्पादक एवं पत्रकार अपरिग्रही होकर अपने कर्तव्य के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित थे, उन्हें अंग्रेज शासकों का प्रलोभन नहीं डिगा सका। अपरिग्रह ही आज के युग की प्रथम आवश्यकता है। जैन पत्रकारिता ने जैन सिद्धांतों के महत्वपूर्ण सूत्र अपरिग्रह को अपनाकर एक विशेष आयाम तय किए जिसके आधार पर आगामी पीढ़ियां एक स्वस्थ पत्रकारिता को बढ़ावा दे सकेगी।

जैन पत्रकारिता में 'जियो और जीने दो' की संस्कृति को विशेष महत्व दिया गया है। आज के युग में विषमता का वातावरण तेजी से बढ़ता जा रहा है। परस्पर ईर्ष्या से पूरी दुनिया त्रस्त है। पड़ोसी-पड़ोसी को सुखी नहीं देखना चाहता, पाश्चात्य सभ्यता के वशीभूत होकर टी.वी. संस्कृति ने मानव मात्र को बहुत दूर कर दिया है। आज हर व्यक्ति चाहता है कि 'घर का टी.वी. चले पड़ोसी की जान जले'। उक्त भावना सम्पूर्ण विश्‍व को नफरत की आग में धकेल देगी। ऐसी स्थिति में जियो और जीने दो की संस्कृति ही मानवमात्र का कल्याण कर सकती है जिसमें हम सम्पूर्ण विश्‍व के मंगल की कामना करें, हमारा विकास उसके साथ ही सभी प्राणियों का भी विकास हो। उक्त भावना ही जैन पत्रकारिता को पत्रकारिता के अन्य विधाओं से पृथक कर एक विशिष्ट स्थान पर पहुंचाती है।

जैन पत्रकारिता में शिक्षा को विशेष महत्व दिया है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति स्वयं की एवं समाज की उन्नति कर सकता है। समाज की उन्नति से ही राष्ट्र का कल्याण संभव है। यही कारण है कि जैन पत्रकारिता में जैन गुरूकुलों, शिक्षा संस्थानों की स्थापना पर जोर दिया गया।

'सा विद्या या विमुक्तये' विद्या वही है जो मुक्ति प्रदान कर सके अर्थात विद्या से ही अविद्या का नाश होता है। वैदिक ऋषियों ने 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' का उद्घोष कर दर्शाया कि शिक्षा ही मनुष्य को जीवन के अज्ञानरूपी अंधकार से बाहर निकाल सकती है। शिक्षा की प्रासंगिकता भूत-भविष्य और वर्तमान में बराबर बनी रहती है। जैन पत्रकारिता ने शिक्षा की प्रबल विधा को अपने में सम्मिलित कर ज्ञान का एक अभिनव अध्याय जोड़ा इससे जहां जैन पत्रकारिता को चार चांद लगे वहीं शिक्षा के माध्यम से जैन पत्रकारिता एक क्रांतिकारी कदम उठा सकी।

जैन पत्रकारिता में चरित्र को सर्वाधिक बल दिया गया है। एक चरित्रवान व्यक्ति ही राष्ट्र का निर्माण कर सकता है। समाज को आधार प्रदान कर सकता है। वर्तमान में चारित्रिक पतन के दौर में चरित्र बल के द्वारा समाज का पुन:-पुन: उद्धार जैन पत्रकारिता के माध्यम से ही संभव दिखाई देता है।

धन गया कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया थोड़ा गया, चरित्र गया सब कुछ गया, वाली आस्कर वाइल्ड की उक्त सूक्ति सार्थक सिद्ध होती है। चरित्र समाज का मेरुदण्ड है इसका सुदृढ़ होना अत्यन्त आवश्यक है। जैन पत्रकारिता में विभिन्न मनीषियों ने इसका समावेश कर जैन पत्रकारिता को एक आदर्श रूप दिया।

सफलता वहीं मिलती है जहां सकारात्मक सोच हो। नकारात्मक सोच वाले व्यक्ति प्राय: जीवन में असफल होते हैं। जैन पत्रकारिता ने हमेशा सकारात्मक सोच को बढ़ावा दिया इसमें नकारात्मक विचारों के लिए कोई स्थान नहीं है। निराश एवं हताश व्यक्ति जीवन में रोने के अतिरिक्त और कोई कार्य नहीं कर सकते।

पाश्चात्य कवि शेली की उक्त पंक्तियां इस सिद्धांत पर सार्थक सिद्ध होती है– आज पतझड़ है तो कल बसंत जरूर आएगा। सकारात्मक सोच आशावाद पर टिकी हुई है। श्रेष्ठि कवि जयशंकर प्रसाद ने ठीक ही कहा था आशा पर ही आकाश टिका है, अर्थात् आशावाद जैन पत्रकारिता का महत्वपूर्ण सूत्र है और इसी आशावाद से ही सकारात्मक सोच का विकास होता है। यही सकारात्मक चिंतन मनुष्य को मनुष्य से जोड़ते हुए विश्व कल्याण की कामना करता है।

प्रधान सम्पादक, नई विधा, नीमच

■

वनेचन्द मालू

भगवान का इंटरव्यू

एक दिन कोई काम नहीं था।
पर मन में कुछ आराम नहीं था।
ज्यों-ज्यों लोगों की सोच रहा था।
त्यों-त्यों एक सोच दबोच रहा था।

सब कुछ अस्त-व्यस्त सा है।
कोई नहीं निश्चिंत मस्त सा है।
तरक्की बहुत की है सबने।
फिर भी अधूरे हैं सबके सपने।
फिर बहुत की क्या परिभाषा?
यह अधूरेपन की क्या भाषा?

सन्तोष कहीं तो करना होगा।
नहीं तो असंतुष्ट ही मरना होगा?

बस यही सोचकर आराम नहीं था।
मन को बिल्कुल विश्राम नहीं था।

सोचा जब भगवान जग संचालक है,
वह नहीं कोई निरीह बालक है।
फिर सबका मन क्यों नहीं भरता है?
क्यों कोई असंतुष्ट मरता है?

जब मन नहीं माना तो पूछा उससे।
पत्रकार हूं ना-डर गया मुझसे।
बोला-मेरा इंटरव्यू लोगे?
इच्छा तो है यदि दोगे।

बोले अनन्त समय है, पूछो तुम।
पर क्यों लगते हो इतने गुमसुम।
पूछा-आदमी के बारे में क्या विचार है?
बोले नासमझ है, पगले से आचार है।

बचपन से जल्दी ऊब जाते हैं।
बड़े होकर फिर बचपन चाहते हैं।
धन कमाने के लिए शांति और स्वास्थ्य खोते हैं।
न दिन में चैन, न रात में सोते हैं।
न जाने क्या-क्या करने के सपने संजोते हैं।
पर आखिर खोया स्वास्थ्य पाने को वही धन खोते हैं।
और अकसर जिन्दगी में रोते ही रोते हैं।

भविष्य की चिन्ता में वर्तमान भूलते हैं।
जीवन ऐसा हो जाता है कि त्रिशंकु से झूलते हैं।
न वर्तमान में सुख न वर्तमान में शांति।
भविष्य की बात तो भविष्य देवी ही जानती।

जन्म के बाद भूल जाते हैं,
कि मृत्यु अवश्यंभावी है।
सबके मन में चिरकाल तक
जीने की लालसा हावी है।
इस तरह रहते हैं जैसे कभी नहीं मरेंगे।
और मरणासन्न हो जीवन में कुछ
नहीं किए का अफसोस करेंगे।

तभी भगवान ने हाथ में मेरा हाथ लिया।
मानो ऐसा करके उन्होंने कुछ इंगित किया।
मैंने सविनय कहा – भगवन!
हम बच्चों को कुछ शिक्षा दो,
ताकि प्रसन्न हो जाए मन।

मुस्कुरा कर बोले-
नहीं विवश कर सकते दूजों को
कि वे तुमको प्यार करें,
पर ऐसा कर दिखलाओ निज को
कि दूजे तुमको प्यार करें।

मूल्यवान नहीं जीवन में
कितना क्या-क्या पाया।
मूल्यवान है जीवन में–
कितनों को गले लगाया,
कितनों को अपना बनाया।

अपनी दूजों से तुलना,
करने की आदत छोड़ो।
तुम स्वकर्मों से जाने जाओगे,
सद्कर्मों से नाता जोड़ो।

धनवान नहीं है वह,
जो भण्डारों का मालिक होता।
धनवान वही है जो,
इच्छाओं को सीमित रखता।

प्रियजनों को घायल करते,
समय नहीं लगता कुछ भी।
पर किये घावों को भरने में,
वर्षों लगते कभी-कभी।

क्षमा-भाव रखकर तुम सबको,
क्षमा-दान देना सीखो।
दूजे क्षमा करें न करें,
पर तुम तो क्षमा करना सीखो।

धन सब कुछ पा सकता होगा,
पर खुशी क्रय नहीं कर सकता।
बन सकता है भवन विशाल,
पर घर पैसों से नहीं बनता।

मैं सुनता रहा ध्यान से सब कुछ,
हो प्रतिपल प्रतिक्षण आनन्द विभोर।
निज समय दे रहे हैं इतना,
की कृतज्ञता ज्ञापित सविनय कर जोड़।

सोच ही रहा था मिला है मौका तो–
प्रभु से क्या-क्या पूछूं और।
कि इतने में डांट पड़ी पत्नी की
दिया जोर से मुझे झकझोर।
बोली कब से बड़बड़ा रहे हो,
नींद कर रहे मेरी भंग।

ओ हो - कितने सुन्दर क्षण थे वे मेरे,
मैं था और केवल प्रभु थे संग।
उसकी नींद हुई न हुई,
पर मेरा सपना हो गया भंग।
मेरा सपना हो गया भंग।

कोलकाता

■

डॉ. सम्पतकुमार जैन

होम्योपैथिक चिकित्सा सर्वसुलभ व अहानिकारक है

होम्योपैथी के प्रति मेरे रुझान का सबसे बड़ा कारण यह भी रहा कि जैन दर्शन के प्रति मेरे मन में सदा से दृढ़ श्रद्धान रहा है। मेरा मानना है कि स्थूल शरीर पर जो रोग लक्षण प्रकट होते हैं वे भीतरी विकारों का ही परिणाम हैं। हमारा शरीर पंचभूतों से वना है – आनन्दमय कोश, विज्ञानमय कोश, मनोमय कोश, प्राणमय कोश तथा अन्नमय कोश। जव इन कोशों में किसी प्रकार की विकृति उत्पन्न हो जाती है तो लक्षणों द्वारा ही वह परिलक्षित होती है। रोग और कुछ नहीं, व्यक्ति के कर्मफल के द्योतक हैं और हर व्यक्ति को कर्मफल तो भोगना ही पड़ता है। चाहे वे कर्म इस जन्म में किये हों या पूर्व जन्म के संचयित हों। परन्तु सूक्ष्मीकृत होम्योपैथिक औषधियाँ असामान्य हुई जीवन उर्जा को, जो उसके कोशों से परिलक्षित हो रही हैं, उसको इस प्रकार से शान्त एवं सहजता से संयमित कर देती है कि कर्मफल भी पूरा हो जाय और रोग लक्षण भी चले जायें।

विना आत्म-चिन्तन किये जीवन के वारे में और उसके संरक्षण और प्रतिरक्षण के वारे में कैसे सोचा जा सकता है? शरीर में जव तक आत्मा मौजूद है तभी तक चिकित्सा की वात सोची जा सकती है, अगर शरीर में से आत्मा ही निकल गई तो फिर क्या कोई दवा या पद्धति शरीर को फिर से जीवित कर सकती है?

इस समय कई प्रकार की चिकित्सा पद्धतियाँ देश में चल रही हैं – (१) विरोधी विधान याने एन्टीपैथी, (२) सम विधान याने आइसोपैथी, (३) असमान विधान याने एलोपैथी, (४) सद्‌दृश्य विधान याने होम्योपैथी। इनके अलावा प्राकृतिक चिकित्सा, एक्यूप्रेशर, एक्यूपंचर आदि भी कई पद्धतियाँ इस समय चलन में हैं।

हमें स्मरण रखना चाहिये कि एलोपैथी रोगी की नहीं, रोग की चिकित्सा करती है। एलोपैथी का लक्ष्य शरीर के भीतर बैठे आत्मा याने सूक्ष्म पुरुष की चिकित्सा न होकर शरीर के विभिन्न अंगों, जैव रासायनिक संगठनों, प्रक्रियाओं की चिकित्सा करना है। एलोपैथी एक ही समय में आइसोपैथी, हैट्रोपैथी, एन्टीपैथी आदि सभी सिद्धान्तों का प्रयोग कर सकती है क्योंकि उसमें मानव शरीर के भौतिक व रसायनिक संगठनों द्वारा अध्ययन किया जाता है। पर होम्योपैथी में रोग के आधार पर कोई दवा नहीं दी जाती। रोग एक होने पर भी, लक्षण सादृश्य होने पर भी प्रत्येक रोगी को औषधि उसके व्यक्तित्त्व अर्थात् व्यक्तिकरण के आधार पर दी जाती है। तभी रोग का पूर्ण रूप से निष्कासन होकर रोगी शरीर व मन से प्रसन्न एवं स्वस्थ बन सकता है। एलोपैथी में रोग निरसन नहीं होता, उसे वलात् दवा दिया जाता है इसलिए कालान्तर में वह विभिन्न रूप धारण कर, किसी भी अंग को, कई वार तो पहिले से ज्यादा महत्वपूर्ण अंग को आक्रांत कर वैठता है और असाध्य-सा वन सकता है।

होम्योपैथी की यह भी मान्यता है कि तरुण रोग आते तेजी से और कभी-कभी विकराल रूप भी धारण कर जाते हैं, पर अपना भोगकाल समाप्त हो जाने के वाद रोगी को स्वस्थ बनाकर विदा हो जाते हैं या उनके भोगकाल के समय कोई वाधा डाली गई तो वे जान-लेवा भी सावित हो जाते हैं। यदि उनके मार्ग में कोई वाधा नहीं डाली गई तो वे शरीर में कोई स्थायी विकृति भी पैदा नहीं करते। हाँ, जव उनको एलोपैथी जैसी तेज जहरीली दवाओं द्वारा दवा देने का प्रयत्न किया जाता है तो रोग दव जाने से तरुण रोग जीर्ण रूप भी धारण कर सकता है और उसको दवाने के लिये यदि विषाक्त दवायें प्रयोग में लाई गई तो उनके दुष्परिणाम रोग निरसन के वाद भी रोगी को भोगने ही पड़ते हैं।

जैसे आयुर्वेद ने माना है कि शरीर में वात-पित्त-कफ में जो एक समरसता है, वह जव असन्तुलित हो जाती है तो ही रोग

पैदा हो पाता है। वैसे ही होम्योपैथी में भी माना गया है कि जीण रोग तभी प्रकट होते हैं जब सोरा, साइकोसिस, सिफलिस मनुष्य शरीर को अपना घर बना लेते हैं। इनके कारण रोग शरीर में गहरा पैठकर शरीर के महत्वपूर्ण अंगों को आक्रांत कर मानव को स्थायी बीमार बना देता है और हम जानते हैं कि सोरा मन की कलुषित अवस्था का द्योतक है तो गनोरिया व सिफलिस संसर्गजनित दोष हैं। मन कलुषित होकर जब कोई स्त्री व पुरुष ऐसे स्त्री या पुरुष से संसर्ग कर बैठते हैं तो पहले से ही गनोरिया या सिफलिस से ग्रसित है तो स्वस्थ व्यक्ति को भी यह रोग जकड़ लेता है और जब इस रोग से शीघ्र मुक्ति पाने के लिए तेज जहरीली दवाओं का वह सेवन करता है तो रोग लक्षण दबकर वह जहर भीतर पहुँचकर मानव को कई असाध्य बीमारियों का घर बना डालता है। इस दुष्कर्म का फल उसको ही नहीं उसकी कई पीढ़ियों तक को भोगना पड़ता है।

पूर्व जन्म में किये गये दुष्कर्मों का प्रभाव तो फिर भी इस जन्म में कर्मफल भोग कर शीघ्र शान्त हो जाता है पर जब व्यक्ति के साथ इस जन्म में किये पाप भी जुड़ जाते हैं तो स्थिति ज्यादा गम्भीर बन जाती है। जब ये दोष शरीर में गहराई तक प्रवेश कर जाते हैं तो होम्योपैथी की मियाज्मेटिक दवाएँ उन कर्मफलों को हल्का करने में रोगी की बहुत मदद करती हैं। यह कार्य अन्य किसी पैथी से नहीं हो पाता। एलोपैथी तो रोग की जटिलता को और बढ़ा ही सकती है। क्योंकि उन्हें शरीर व मन पर उभर रहे लक्षणों को दबाने के लिये निरन्तर ऐसी दवाएँ अधिकाधिक मात्रा में खिलानी पड़ जाती हैं जिनके जहरीले प्रभाव के कारण स्थिति सुलझती नहीं, उलझती ही चली जाती है और अन्त में वे कह उठते हैं, अब हमारे पास रोगी को ठीक करने के लिये कोई दवा नहीं बची, अब तो उसे इसी हालत में जीने की आदत डालनी होगी।

इसलिये होम्योपैथी हमें यही सिखाती है कि यदि हम जीवन में सुख व शान्ति से जीना चाहते हैं तो अपने विचारों को शुद्ध व निर्मल बनाये रखने के अलावा कोई चारा नहीं है। जितना हम अपने को बाह्य सुखों से विलग कर, अपने आप में स्थिर होने का प्रयत्न करेंगे, क्रोध, मान, माया, लोभ पर अंकुश रखेंगे उतनी ही शारीरिक व मानसिक शान्ति हासिल कर हम निरोगी जीवन हासिल कर पायेंगे। होम्योपैथी ही आज सबसे ज्यादा सुलभ, कारगर, सस्ती व ऐसी अहानिकारक पद्धति है, जिसका कोई मुकाबला नहीं। इसको अध्ययन कर आत्मसात करना भी ज्यादा कठिन नहीं है बशर्ते हम रोज एक घंटा इसका नियमित स्वाध्याय करें। हम क्वालिफाइड डॉक्टर न भी हो पायें पर इतना तो ज्ञान व अनुभव हमें सहज मिल सकता है कि हमें अपनी छोटी-मोटी बीमारियों के लिये व परिवार तथा इष्ट मित्रों की बीमारियों के लिये व्यर्थ डॉक्टरों के दरवाजे न खटखटाना पड़े। डॉ. एस. के. दूबे ने मात्र एलेन्स-की-नोट पर अपनी मास्टरी हासिल कर होम्योपैथी की जादुई शक्ति को सबके सामने सिद्ध करके बता दिया कि आज उनके पढ़ाये छात्र जहाँ-जहाँ भी गये उन्होंने होम्योपैथी का परचम सब दूर फहरा दिया। यदि किसी में भी समर्पण भाव व निष्ठा हो तो फिर कठिन कुछ भी नहीं।

जयपुर

■

बनेचन्द मालू

पशु बनाम आदमी

एक दिन एक चिड़िया को देखा।
उसकी दिनचर्या का लिया लेखा।
पौ फटते ही उठती है।
चूं चूं चीं चीं चहकती है।
सोचा इतनी क्यों बोलती है।
समझ में आया मुख में राम नाम की मिश्री घोलती है।
सूर्योदय के बाद उड़ती है, फुदकती है।
आनंदित है, मन में मस्ती है।
कभी तिनका लाती है, कभी दाना।
तिनकों से घोंसला बनाती है, दानों से खाना।
खुद खाती है, बच्चों को खिलाती है।
इस तरह अपना जीवन चलाती है।
रात होते ही सो जाती है।
गहरी नींद, कोई आवाज नहीं।
कितनी शान्ति, कोई तनाव नहीं।
फिर–
एक आदमी को देखा
उसकी दिनचर्या का भी लिया लेखा।
कभी उठता है जल्दी, तो कभी देर से।
कभी दिखता है खुश, तो कभी शिकवे ढेर से।
कभी तो करता है, भगवान को याद,
कभी लगी रहती है, भागम-भाग।
काम पर जाता है।
कभी समय पर, तो कभी हो जाती है देरी।
लौटता है तो कभी प्रसन्नता, कभी चिन्ता रहती है घेरी।
घर आने का निश्चित समय नहीं।
कभी मीटिंग तो, कभी काम खत्म नहीं।
इस तरह के वातावरण में खुशी के क्षण कम, तनाव ज्यादा।
आते ही घर वालों को काट खाने को आमादा।
देखते हैं प्राय: दिनचर्या रहती है अस्त-व्यस्त।

घर हो जाता है कलह से सन्तप्त और त्रस्त।
बाहर भी किसी से झमेला किसी से झगड़ा।
कभी यहां, कभी वहां करता ही रहता है रगड़ा।
न शान्ति से रहता है, न शान्ति से खाता है।
इसी तरह उसका जीवन बीत जाता है।
सोचा –
आदमी बनाने से क्या फायदा ?
इससे तो पक्षी अच्छे हैं जो जीने का जानते हैं कायदा।
जन्म से पहले भगवान से अवश्य किया होगा वायदा,
कि आदमी बना के भेज रहे हैं, देवता बनके आऊंगा।
सबको जीने की राह दिखाऊंगा।
धरती को स्वर्ग बनाऊंगा।
उनको क्या पता था कि जाते ही भूल जाएगा वायदा।
अफसोस कर रहे होंगे आदमी की जात ही बनाने से क्या फायदा ?
हुआ यही, आसन डोला, नीचे देखा और लिया जायजा।
अरे ! इसने तो धरती का वातावरण ही दूषित कर दिया।
पापों और दुष्कर्मों ही दुष्कर्मो से भर दिया।
कहीं हिंसा, कहीं डाका, कहीं दुराचार।
कहीं लूट, कहीं चोरी, कहीं अत्याचार।
कहीं झगड़ा, कहीं धोखा, कहीं छल।
जुल्मों, अपराधों की नदियां बह रही हैं कलकल।
मैंने तो बनाया था इसे विवेकशील और प्रबुद्ध।
पर करता रहता है यह विध्वंसक युद्ध।
चिन्तन किया–
क्या कोई अन्य प्राणी भी ऐसा करता है ?
क्यों मानव अपने विनाश से भी नहीं डरता है ?
सोचा-व्यर्थ ही दी इसे इतनी सोच और बुद्धि।
आगे से आदम जात को ही रखेंगे पशुओं की तरह निर्बुद्धि।
तभी धरती की फिर से होगी विशुद्धि।
तभी धरती की फिर से होगी विशुद्धि।

कोलकाता

■

हिम्मतसिंह डूंगरवाल

शिक्षा के सामाजिक तथा नैतिक सरोकार

भगवान महावीर ने कहा था कि 'शूद्र को भी धर्म करने का, शास्त्र पढ़ने का उतना ही अधिकार है जितना कि एक ब्राह्मण तथा क्षत्रिय को। धर्मसाधना में जाति की कोई महत्ता नहीं है। स्त्री को भी धर्मसाधना का पूर्ण अधिकार है। नारी महज साधिका ही नहीं, अरिहन्त भी बन सकती है।

यह देखना एक दिलचस्प तथा स्फूर्तिदायक अनुभव है कि शताब्दियों पहले भगवान महावीर शिक्षा, जीवन तथा धर्म के सामाजिक एवं नैतिक सरोकार से भली-भांति परिचित थे। उन्होंने अपने इन संदेशों को अपने आचरण द्वारा जन-जन तक पहुँचाने का जीवन-पर्यन्त कार्य किया। दुख की बात है कि हमारे समाज एवं नियामक संस्थानों ने सामाजिक चेतना से रहित और नैतिकता बोध से परे एक ऐसे शिक्षातंत्र का विकास किया, जिसमें शिक्षा का उद्देश्य महज आर्थिक सरोकारों तक सिमट गया। भारत की बहुसंख्यक आबादी आज भी शिक्षा के सूरज की वास्तविक रोशनी हासिल करनें में असफल है, जब कि देश में एक वर्ग ऐसा भी है जो आसानी से समृद्धत्तम देशों की शिक्षा हासिल कर सकता है। इन विरोधाभासों के पीछे उस तार्किक दृष्टि और विराट् सपने का अभाव है, जिसमें 'बहुजन हिताय' का लक्ष्य हासिल होता है।

वस्तुत: भारत में शिक्षा-परिदृश्य की असमानता चकित करने वाली है तथा ऐतिहासिक क्रम में भी हम उसे बहुत अधिक बदलता हुआ नहीं पाते। आजादी के पहले भी देश में अनेक ऐसे परिवार थे, जिनके बच्चे इंग्लैण्ड के महंगे स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करते थे। दूसरी तरफ, देश के सुदूर अंचलों में लाखों बच्चे शिक्षा का सपना देख सकने की स्थिति में नहीं थे। आज जब दुनिया के देशों में निकटता और परस्पर आवाजाही बढ़ी है तो भारत का धनाढ्य वर्ग पश्चिम के पसंदीदा मुल्क में अपने बच्चे को शिक्षा दिलाता है। जब कि हम चिंतित रहते हैं कि देश के हर बच्चे को स्कूल की परिधि में लाने के लिए क्या उपक्रम करें ?

भारतीय समाज में देशज संदर्भो की अपनी विशिष्टताएँ हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के साथ इन देशज संदर्भों को समझे बिना शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं किया जा सकता है। भारतीय सन्दर्भ में विशेष रूप से समाज की जाति आधारित संरचना, स्त्रियों की उपेक्षित स्थिति एवं निर्धनतम असंगठित क्षेत्र है। व्यापक तथा गुणवत्ता युक्त शैक्षिक संदर्भो के लिए इन संदर्भों पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। भगवान महावीर की दृष्टि भी समाज के इन्हीं उपेक्षित वर्गों की तरफ गयी थी।

मैं जिस संस्था का संचालक हूँ, वह सुदूर आदिवासी अंचल में अवस्थित है। स्वतन्त्रता सेनानी मेवाड़ मालवीय पं. उदय जैन द्वारा स्थापित जवाहर विद्यापीठ, कानोड़ (युग दृष्टा क्रान्तिकारी विचारों के धनी आचार्य १००८ श्री जवाहर लालजी महाराज की पुण्य स्मृति में स्थापित) में उपेक्षित, पीड़ित और वंचित विद्यार्थियों के लिए विशेष सुविधाएं उपलब्ध करायी जा रही हैं। मैं भगवान महावीर के बताएँ रास्ते पर अपने जीवन के सरोकारों को विकसित कर सकूं तो यह मेरे जीवन की सार्थकता होगी। अन्तराष्ट्रीय अनुसंधान संस्थानों के आंकड़े बताते हैं कि दुनिया में सबसे ज्यादा बाल-मंदिर तथा सबसे ज्यादा स्कूल से वंचित विद्यार्थी भारत में ही है। हम सभी को इन भयावह स्थितियों के मद्देनजर भविष्य की नीतियों का निर्धारण करना चाहिए।

सामाजिक सरोकारों का गहरा रिश्ता नैतिक सरोकारों से है। दुख की बात है कि हमारे समाज में नैतिकता की दुहाई केवल अनुष्ठानों में देने का चलन-सा हो गया है जिसे हमें अपने आचरणों में परिलक्षित करना होगा। सुबह से शाम तक जो जीवन गुजारा जाता है, उसमें नैतिकता वाचालता के रूप मे तो उपस्थित रहती है परन्तु कर्म क्षेत्र में इसका अभाव मिलता है। हम अपना काम ईमानदारी से करें, सत्य तथा न्याय के प्रति हमारी प्रतिबद्धता हमारे कर्मो में परिलक्षित हो, इसके लिए हमें विशेष रूप से प्रयत्नशील होने की आवश्यकता है।

जिन व्यक्तियों ने समाज को सुन्दर बनाने का संकल्प लिया, उन्होंने संकटपूर्ण क्षणों में भी अपने आत्मविश्वास को अड़िग रखा। मनीषियों, चिन्तकों तथा धर्मनिष्ठ आत्माओं की जीवन दृष्टि शिक्षा के मूल्यों में सम्मिलित हों तो एक ऐसे निर्भय समाज की प्राप्ति सहज ही सम्भव है, जहाँ *लोकतान्त्रिक प्रकिया* में मनुष्यता प्राप्ति सहज है। शिक्षा यदि सामाजिक तथा नैतिक सरोकारों से रहित हो तो वह उत्पादन प्रक्रिया का माध्यम तो बन सकती है परन्तु व्यक्तित्व विकास का उपादान कभी नहीं हो सकती। शिक्षाविदों, नीति निर्मताओं तथा समाज को इस दिशा में प्रयत्नशील होना ही होगा।

संचालक, जवाहर विद्यापीठ, कनोड़

■

सरस्वती की गोद में बसी मरु संस्कृति

भारत सृष्टि का आदि राष्ट्र है। राष्ट्र शब्द की अवधारणा मातृरूप में सर्वप्रथम भारत के लिए ही हुई है। भारत की संस्कृति का आधार धर्म रहा है। वेद प्रतिपादित सत्य और सनातन शाश्वत जीवन मूल्यों से अभिप्रेरित इस दिव्य वसुन्धरा के पुत्रों ने अपनी जीवन शक्ति प्रकृति से प्राप्त की है। सौभाग्य से सरस्वती महानदी के रूप में आर्यावर्त को आधारभूत संजीवनी-शक्ति युग-युग में प्राप्त रही। पुण्यशालिनी सरस्वती नदी के तटों पर मानव संस्कृति का प्रथम प्रस्फुटन हुआ। यह प्रस्फुटन विश्व और मानव इतिहास का स्वर्ण विहान था। बीकानेर क्षेत्र परम सौभाग्यशाली है कि यह सरस्वती नदी की गोद में स्थित है। नवीन खोजों में वेदकालीन दाशराज्ञ युद्ध के विजेता राजा सुदास की राजधानी और भगवान ऋषभदेव की राजधानी कालीबंगा (वर्तमान हनुमानगढ़ जिले) में प्रमाणित मानी जा रही है। कालीबंगा सरस्वती और दृषद्वती नदियों के मध्य स्थित है। यही क्षेत्र प्राचीन चिरंतन और अर्वाचीन सभी संतप्त के मन से विख्यात रहा है। इस प्रकार मरुभूमि का समग्र बीकानेर क्षेत्र सरस्वती की क्रीड़ा-स्थली रहा है।

सरस्वती के लुप्त होने के स्थान को विनशन कहते हैं। विनशन पर महाभारत काल में बलभद्र जी ने सरस्वती में स्नान किया था। मरुस्थल में विनशन किस जगह स्थित अभी खोज हो रही है। इस प्रकार मरुस्थल क्रीड़ास्थली के साथ ही विलुप्त होने की स्थली भी है के पुनः प्रवाह की योजना अब प्रारंभ हो चुकी है।

ऋग्वेद और सरस्वती – वैसे तो समस्त नैतिक सरस्वती का उल्लेख मिलता है किन्तु सरस्वती की सबसे प्रिय और प्रशंसित नदी थी। ऋग्वेद में इसे नदीतमे और सिन्धु मातर: कहा गया है। सरस्वती ३ अधिष्ठाता देवता है। वेद में उषा के बाद सरस्वती माधुर्य है। इसे नदी और देवी दोनों रूपों में वर्णित है। इसे शत्रुनाशिनी और रक्षा करने वाली माना दिव्य और पार्थिव अन्नों को देने वाली है। यह यज्ञ दिलाती है। यहां दूध और घृत की बहुलता थी और था। यह सप्त-स्वसा अर्थात सात बहिनों (सहायक कही गई है। सरस्वती का जल रत्नों को धारण करने यहां के निवासी मित्र-भाव से रहने वाले हैं। यह 'नदीतं है। इसके प्रवाह क्षेत्र में ७ प्रकार की धातुएं पाई इसकी प्रशस्ति में कहा गया है -

अम्बितमे नदीतमे देवीतमे सरस्वती
अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तितम्ब नमस्कृधि ।ऋ:२/४

लुप्त सरस्वती – कालान्तर में यह महानदी लुप्त अंतिम बार महाभारत में भगवान श्रीकृष्ण के अग्रज द्वारा सरस्वती की यात्रा का उल्लेख प्राप्त होता है। में गंगा-यमुना-सरस्वती छाई हुई है। किन्तु सरस्वती के तटवर्ती क्षेत्रों में आर्य बसते थे। दर्शन हुए। यह भारतीय मान्यता विश्व स्वीकार्य नहीं हो पा रही का पश्चिमी विद्वानों का सिद्धा वेद, मनुस्मृति, श्रीमद् भागव पाई जाने वाली सरस्वती क के लिए बाबा साहब आपटे और इस कार्य के लिए वै दिल्ली की रचना की गई दिया गया।

सरस्वती शोध -

जिले के सिरमौर क्षेत्र से चार छोटी-छोटी नदियां निकलती हैं। ये वर्षा पर आधारित हैं। इनमें से एक का नाम है। **सुरसती,** अन्य हैं – मार्कण्डा, डांगरी व घग्घर।

घग्घर नदी हरियाणा की वर्षा आधारित सबसे बड़ी नदी है। यह भी शिवालिक से निकलती है। १७५ कि.मी. की यात्रा करके घग्घर रसूला नामक स्थान पर सरस्वती से संगम करती है। आगे इसके प्रवाह को हकरा और नारा भी कहा जाता है। वर्तमान में यह जल शून्य है किन्तु इसका सूखा-प्रवाह-मार्ग इस पूरे क्षेत्र में साफ-साफ दिखाई देता है। विद्वानों का मत है कि यही जल शून्य दिखने वाली घग्घर नदी अतीत की सरस्वती नदी रही होगी। आज भी वर्षा में घग्घर बहती है।

विद्वानों का मत है कि हिमालय के ऊपर उठने के क्रम ने सरस्वती की जीवन रेखा को बाधित किया। उत्तर महाभारत काल में इसमें जलाभाव होने लगा। पुराणकाल में वह ऋतु आधारित लघुरूपधारिणी पूज्य नदी बन गई। धीरे-धीरे वह इतिहास के पृष्ठों में सिमट गई।

भू-उपग्रह अध्ययन - पुरानदी मार्ग के सहीस्वरूप को स्थापित करने में भू उपग्रह छायाचित्रों द्वारा किया गया अध्ययन बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। इसरो के जोधपुर केन्द्र ने अन्त:सलिला सरस्वती का प्रवाह मार्ग ज्ञात करके उसका वैज्ञानिक स्वरूप चित्र भारत के प्रधानमंत्री और राजस्थान के मुख्यमंत्री को भेंट किया। इस प्रयास से पश्चिमी राजस्थान की जल समस्या के समाधान को नवीन दिशा प्राप्त हुई। इसरो द्वारा प्रकाशित इन मानचित्रों के अध्ययनपूर्वक अधिकारी विद्वानों ने प्रवाह क्षेत्र में १०लाख नलकूप स्थापित होने की संभावना प्रकट की है। इस दिशा में योजनाबद्ध कार्य जारी है जिसे गति देने से मरुस्थल फिर से हराभरा हो जाएगा।

इसरो के इन चित्रों का रणनीतिक भी अद्‌भुत महत्व है किन्तु यहां हम इसकी चर्चा नहीं करेंगे। यहां हम इस पुरानदी मार्ग के मीठे जल की चर्चा करेंगे। राजस्थान के हनुमानगढ़, श्रीगंगानगर, बीकानेर, बाड़मेर और जैसलमेर जिलों में सरस्वती नदी के दो से ढाई लाख वर्ष पुराने पुरा मार्ग मिले हैं। इन पुरामार्गो के कुओं में मीठा जल मिलता है जब कि मार्ग से दूर होते ही कुओं का पानी खारा मिलता है। सरस्वती के पुरा मार्ग में जगह-जगह झीलों और रणों का निर्माण हुआ। इनमें से एक भारत प्रसिद्ध कपिल सरोवर (जिला बीकानेर) है। ईसा से ३००० वर्ष पूर्व लूणकरनसर और डीडवाना की झीलों में मीठा पानी सागर की भांति लहराता था।

सरस्वती नदी ने मैदानों में अपार मिट्टी बिछाई। आज भी यह मिट्टी खेती का आधार है।

पुरातत्व – सरस्वती नदी के प्रवाह मार्ग में खूब पुरातात्विक उत्खनन हुए हैं। इन खुदाइयों में ४० से २० हजार वर्ष पुरानी मानव सभ्यता का पता लगा है। अब तक २६०० स्थानों पर खुदाई हो चुकी है जिनमें १९२१ में रावी तट पर हड़प्पा और १९३३ में सिन्धु तट पर मोहेनजोदड़ो महत्वपूर्ण हैं किन्तु सरस्वती-हृषद्वती के मध्य स्थित कालीबंगा (जिला हनुमानगढ़) अनुपमेय है। बीकानेर संभाग का कालीबंगा सरस्वती सभ्यता का महान केन्द्र है।

मरु संस्कृति – हमारा वर्तमान बीकानेर संभाग (पुरानी बीकानेर रियासत) सरस्वती सभ्यता की हृदयस्थली है। हम इस सभ्यता के सही उत्तराधिकारी हैं। वैदिक संस्कृत काल–राजस्थानी में हळ, खळळ आदि में पाया जाता है। शिव और नांदिया, थूईवाली गौ, गेहूं, जौ, मटर, मतीरा, तिल और खजूर आज भी यहां हैं। ऊंट, घोड़े, खच्चर, हाथी और बिल्ली आज भी हैं। बन्दर, खरगोश, कमेड़ी, तोता आज भी पाले जाते हैं। मिट्टी के वर्तन, धातु और मूर्तियों में ४४०० वर्षो (कालीबंगा की अनुमानित आयु) से एकरूपता विद्यमान है। वैदिक दर्शन और तत्कालीन सामाजिक रीति-रिवाज की आज भी प्रभावी उपस्थिति है।

अनुपम देन – सरस्वती समाज ने विश्व मानवता को – खेती, पशुपालन, नगरीय सभ्यता, वास्तुकला, आभूषण कला और उच्च कोटि की सामाजिक-धार्मिक परम्पराओं का उपहार दिया है। हमें इसके उत्तराधिकारी होने पर गर्व है।

ब्रह्मपुरी चौक, बीकानेर (राज.)

■

जानकी नारायण श्रीमाली

सरस्वती की गोद में बसी मरु संस्कृति

भारत सृष्टि का आदि राष्ट्र है। राष्ट्र शब्द की अवधारणा मातृरूप में सर्वप्रथम भारत के लिए ही हुई है। भारत की संस्कृति का आधार धर्म रहा है। वेद प्रतिपादित सत्य और सनातन शाश्वत जीवन मूल्यों से अभिप्रेरित इस दिव्य वसुन्धरा के पुत्रों ने अपनी जीवन शक्ति प्रकृति से प्राप्त की है। सौभाग्य से सरस्वती महानदी के रूप में आर्यावर्त को आधारभूत संजीवनी-शक्ति युग-युग में प्राप्त रही। पुण्यशालिनी सरस्वती नदी के तटों पर मानव संस्कृति का प्रथम प्रस्फुटन हुआ। यह प्रस्फुटन विश्व और मानव इतिहास का स्वर्ण विहान था। बीकानेर क्षेत्र परम सौभाग्यशाली है कि यह सरस्वती नदी की गोद में स्थित है। नवीन खोजों में वेदकालीन सुप्रसिद्ध दशराज्ञ युद्ध के विजेता राजा सुदास की राजधानी और भगवान ऋषभदेव की राजधानी कालीबंगा (वर्तमान हनुमानगढ़ जिले) में प्रमाणित मानी जा रही है। कालीबंगा सरस्वती और दृषद्वती नदियों के मध्यस्थित है। यही क्षेत्र प्राचीन चित्रांगल और अर्वाचीन लखी जंगल के नाम से विख्यात रहा है। इस प्रकार मरुभूमि का लाडला बीकानेर क्षेत्र सरस्वती की क्रीड़ा-स्थली रहा है।

सरस्वती के लुप्त होने के स्थान को विनशन कहते हैं। विनशन पर महाभारत काल में बलभद्र जी ने सरस्वती में स्नान किया था। मरुस्थल में विनशन किस जगह स्थित था – इसकी अभी खोज हो रही है। इस प्रकार मरुस्थल सरस्वती की क्रीड़ास्थली के साथ ही विलुप्त होने की स्थली भी है। सरस्वती के पुन: प्रवाह की योजना अब प्रारंभ हो चुकी है।

ऋग्वेद और सरस्वती – वैसे तो समस्त नैतिक साहित्य में सरस्वती का उल्लेख मिलता है किन्तु सरस्वती ऋग्वैदिक युग की सबसे प्रिय और प्रशंसित नदी थी। ऋग्वेद में इसे अंबीतमें, नदीतमे और सिन्धु मातर: कहा गया है। सरस्वती ३२ मंत्रों की अधिष्ठाता देवता है। वेद में उषा के बाद सरस्वती मंत्रों का माधुर्य है। इसे नदी और देवी दोनों रूपों में वर्णित किया गया है। इसे शत्रुनाशिनी और रक्षा करने वाली माना गया है। यह दिव्य और पार्थिव अन्नों को देने वाली है। यह यज्ञ से वर्षा दिलाती है। यहां दूध और घृत की बहुलता थी और खूब पशुधन था। यह सप्त-स्वसा अर्थात सात बहिनों (सहायक नदियों) वाली कही गई है। सरस्वती का जल रत्नों को धारण करने वाला है। यहां के निवासी मित्र-भाव से रहने वाले हैं। यह 'नदीनां शुचि:' है। इसके प्रवाह क्षेत्र में ७ प्रकार की धातुएं पाई जाती थीं। इसकी प्रशस्ति में कहा गया है -

अम्बितमे नदीतमे देवीतमे सरस्वती
अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तितम्ब नमरस्कृधि । ऋ:२/४१/१६

लुप्त सरस्वती – कालान्तर में यह महानदी लुप्त हो गई। अंतिम बार महाभारत में भगवान श्रीकृष्ण के अग्रज बलदेव जी द्वारा सरस्वती की यात्रा का उल्लेख प्राप्त होता है। जनजीवन में गंगा-यमुना-सरस्वती छाई हुई है। किन्तु वह लुप्त है। सरस्वती के तटवर्ती क्षेत्रों में आर्य बसते थे। वहीं पर वेदों के दर्शन हुए। यह भारतीय मान्यता सरस्वती के लुप्त हो जाने से विश्व स्वीकार्य नहीं हो पा रही थी। इस कारण आर्य आक्रमण का पश्चिमी विद्वानों का सिद्धान्त विश्व मान्य हो रहा था। अत: वेद, मनुस्मृति, श्रीमद् भागवत, महाभारत और सभी पुराणों में पाई जाने वाली सरस्वती को धरती पर भी प्रत्यक्ष प्राप्त करने के लिए बाबा साहब आपटे स्मारक समिति नागपुर ने कमर कसी और इस कार्य के लिए वैदिक सरस्वती नदी शोध प्रकल्प, नई दिल्ली की रचना की गई। बाद में इसका कार्यालय जोधपुर कर दिया गया।

सरस्वती शोध - सरस्वती नदी का उद्गम हिमालय पर्वत की शिवालिक पर्वत श्रेणियों में माना जाता है। ये पर्वत श्रेणियां ८ से ५० कि.मी. चौड़ी और १००० मीटर ऊंची है। ये पंजाब से लेकर सिक्किम तक फैली हुई है। इन्हीं पहाड़ियों में अम्बाला

जिले के सिरमौर क्षेत्र से चार छोटी-छोटी नदियां निकलती हैं। ये वर्षा पर आधारित हैं। इनमें से एक का नाम है। **सुरसती,** अन्य हैं – मार्कण्डा, डांगरी व घग्घर।

घग्घर नदी हरियाणा की वर्षा आधारित सबसे बड़ी नदी है। यह भी शिवालिक से निकलती है। १७५ कि.मी. की यात्रा करके घग्घर रसूला नामक स्थान पर सरस्वती से संगम करती है। आगे इसके प्रवाह को हकरा और नारा भी कहा जाता है। वर्तमान में यह जल शून्य है किन्तु इसका सूखा-प्रवाह-मार्ग इस पूरे क्षेत्र में साफ-साफ दिखाई देता है। विद्वानों का मत है कि यही जल शून्य दिखने वाली घग्घर नदी अतीत की सरस्वती नदी रही होगी। आज भी वर्षा में घग्घर बहती है।

विद्वानों का मत है कि हिमालय के ऊपर उठने के क्रम ने सरस्वती की जीवन रेखा को बाधित किया। उत्तर महाभारत काल में इसमें जलाभाव होने लगा। पुराणकाल में वह ऋतु आधारित लघुरूपधारिणी पूज्य नदी बन गई। धीरे-धीरे वह इतिहास के पृष्ठों में सिमट गई।

भू-उपग्रह अध्ययन - पुरानदी मार्ग के सहीस्वरूप को स्थापित करने में भू उपग्रह छायाचित्रों द्वारा किया गया अध्ययन बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। इसरो के जोधपुर केन्द्र ने अन्त:सलिला सरस्वती का प्रवाह मार्ग ज्ञात करके उसका वैज्ञानिक स्वरूप चित्र भारत के प्रधानमंत्री और राजस्थान के मुख्यमंत्री को भेंट किया। इस प्रयास से पश्चिमी राजस्थान की जल समस्या के समाधान को नवीन दिशा प्राप्त हुई। इसरो द्वारा प्रकाशित इन मानचित्रों के अध्ययनपूर्वक अधिकारी विद्वानों ने प्रवाह क्षेत्र में १०लाख नलकूप स्थापित होने की संभावना प्रकट की है। इस दिशा में योजनाबद्ध कार्य जारी है जिसे गति देने से मरुस्थल फिर से हराभरा हो जाएगा।

इसरो के इन चित्रों का रणनीतिक भी अद्भुत महत्व है किन्तु यहां हम इसकी चर्चा नहीं करेंगे। यहां हम इस पुरानदी मार्ग के मीठे जल की चर्चा करेंगे। राजस्थान के हनुमानगढ़, श्रीगंगानगर, बीकानेर, बाड़मेर और जैसलमेर जिलों में सरस्वती नदी के दो से ढाई लाख वर्ष पुराने पुरा मार्ग मिले हैं। इन पुरामार्गो के कुओं में मीठा जल मिलता है जब कि मार्ग से दूर होते ही कुओं का पानी खारा मिलता है। सरस्वती के पुरा मार्ग में जगह-जगह झीलों और रणों का निर्माण हुआ। इनमें से एक भारत प्रसिद्ध कपिल सरोवर (जिला बीकानेर) है। ईसा से ३००० वर्ष पूर्व लूणकरनसर और डीडवाना की झीलों में मीठा पानी सागर की भांति लहराता था।

सरस्वती नदी ने मैदानों में अपार मिट्टी बिछाई। आज भी यह मिट्टी खेती का आधार है।

पुरातत्व – सरस्वती नदी के प्रवाह मार्ग में खूब पुरातात्विक उत्खनन हुए हैं। इन खुदाइयों में ४० से २० हजार वर्ष पुरानी मानव सभ्यता का पता लगा है। अब तक २६०० स्थानों पर खुदाई हो चुकी है जिनमें १९२१ में रावी तट पर हड़प्पा और १९३३ में सिन्धु तट पर मोहेनजोदड़ो महत्वपूर्ण हैं किन्तु सरस्वती-हषद्वती के मध्य स्थित कालीबंगा (जिला हनुमानगढ़) अनुपमेय है। बीकानेर संभाग का कालीबंगा सरस्वती सभ्यता का महान केन्द्र है।

मरु संस्कृति – हमारा वर्तमान बीकानेर संभाग (पुरानी बीकानेर रियासत) सरस्वती सभ्यता की हृदयस्थली है। हम इस सभ्यता के सही उत्तराधिकारी हैं। वैदिक संस्कृत काल–राजस्थानी में हळ, खळळ आदि में पाया जाता है। शिव और नांदिया, थूईवाली गौ, गेहूं, जौ, मटर, मतीरा, तिल और खजूर आज भी यहां हैं। ऊंट, घोड़े, खच्चर, हाथी और बिल्ली आज भी हैं। बन्दर, खरगोश, कमेड़ी, तोता आज भी पाले जाते हैं। मिट्टी के वर्तन, धातु और मूर्तियों में ४४०० वर्षों (कालीबंगा की अनुमानित आयु) से एकरूपता विद्यमान है। वैदिक दर्शन और तत्कालीन सामाजिक रीति-रिवाज की आज भी प्रभावी उपस्थिति है।

अनुपम देन – सरस्वती समाज ने विश्व मानवता को – खेती, पशुपालन, नगरीय सभ्यता, वास्तुकला, आभूषण कला और उच्च कोटि की सामाजिक-धार्मिक परम्पराओं का उपहार दिया है। हमें इसके उत्तराधिकारी होने पर गर्व है।

ब्रह्मपुरी चौक, बीकानेर (राज.)

■

पूर्व कर्नल डॉ दलपतसिंह बया 'श्रेयस'

तम्हा विणयमेसेज्जा...

विनय –

विनय की चर्चा छिड़ते ही हमारे मन-मस्तिष्क में एक ऐसे व्यक्ति की छवि उभरती है जो अत्यंत शिष्ट, विनम्र, मितभाषी व मृदुभाषी हो तथा अपने गुरुजनों के प्रति सर्वतोभावेन समर्पित हो। 'उत्तराध्ययनसूत्र', भगवान महावीर की अंतिम देशना, जिसे उन्होंने स्वेच्छा से अपने किसी भी शिष्य की पृच्छा के विना ही व्याकृत किया था, का प्रथम अध्याय है 'विनय-श्रुत', जिसमें उन्होंनें विनय की महत्ता को प्रतिपादित किया है। इससे स्पष्ट प्रतिभासित होता है कि वे साधक के लिये 'विनय' को अन्य सभी गुणों की अपेक्षा उच्चतर स्थान पर रखते हैं। यद्यपि इस अध्याय में कहीं भी विनय को परिभाषित नहीं किया गया है फिर भी इसमें विनयी शिष्य के इतने लक्षणों का वर्णन किया गया है कि विनय की परिभाषा स्वत: उभरकर सामने आ जाती है।

विनय की महत्ता को सभी स्वीकार करते हैं। जब यह कहा जाता है कि 'विद्या ददाति विनयम्'। तो विद्या, ज्ञान और विनय का अंतरंग संबंध स्पष्ट होता ही है, यह भी स्पष्ट होता है कि जो विद्या व्यक्तित्व में विनय का विकास न करे, वह व्यर्थ ही है।

यूँ तो विनय का महत्त्व जीवन के सभी पड़ावों पर समान रूप से पड़ता ही है, विद्यार्थी जीवन में इसका विशेष महत्त्व है क्योंकि जब तक शिष्य अपने विनय-गुण से गुरु को प्रसन्न नहीं कर सके उसके द्वारा उससे संपूर्ण वांछित ज्ञान को प्राप्त कर पाना संदिग्ध ही रहता है। धर्म-साधना के क्षेत्र में भी सफलता और विफलता के बीच की सीमा-रेखा गुरु-शिष्य संबंधों में विनय से होकर ही गुजरती है। संभवतया इसी को लक्ष्य करके भगवान महावीर ने भी शिष्य-गुणों में विनय को सर्वोपरि स्थान दिया है।

विनयी शिष्य के लक्षण –

विनय एक आंतरिक गुण है जिसकी बाह्य अभिव्यक्ति ही व्यवहार में दिखाई देती है। विनय का आंतरिक गुण इतने सूक्ष्म भावनात्मक स्तर पर होता है कि इसे शब्दों की परिधि में बांधना कदाचित संभव न हो सके अत: उत्तराध्ययनसूत्र में भी इसका वर्णन अभिव्यक्त व्यावहारिक गुणों के माध्यम से ही किया गया है। यह तो स्पष्ट ही है कि अविनय विनय का विलोम-प्रतिलोम है अत: विनयी के गुणों का वर्णन करते हुए शास्त्रकार – आर्य सुधर्मा ने अविनयी के दुर्गुणों की भी यह कहकर सहायता ली है कि विनयी शिष्य में इन विनय के व्यावहारिक गुणों के सद्‌भाव के साथ-साथ इन दुर्गुणों का अभाव भी अपेक्षित है।

विनयी शिष्य के व्यक्तित्व में सरलता, अहंकारशून्यता, विनम्रता, निर्दोषिता व अनाग्रहिता गुणों के समावेश के साथ-साथ कठोरता, दंभ, उग्रता, वाचालता, विद्रोह व आक्रामकता आदि दुर्गुणों का अभाव भी होना चाहिये।

विनयी शिष्य के लक्षणों को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं कि जो शिष्य गुरु के सान्निध्य में रहकर, उनकी भाव-भंगिमाओं व संकेतों से उनके मनोगत भावों को समझकर उनकी आज्ञा का पालन करता है, वह विनीत कहलाता है। इसके विपरीत जो शिष्य गुरु के सान्निध्य में नहीं रहता है, उनकी परवाह नहीं करता है, उनकी आज्ञा का उल्लंघन करता है तथा आम तौर पर उनके विपरीत आचरण करता है वह अविनीत कहलाता है।

विनयी शिष्य के लिये कुछ आचरणीय गुणों का उल्लेख करते हुए आर्य सुधर्मा कहते हैं कि वह गुरु के पास प्रशांत भाव से रहे, वाचाल न बने, अर्थपूर्ण ज्ञान ग्रहण करे, निरर्थक बातों में समय नष्ट न करे, क्रोध न करे, क्षमा को धारण करे, आवेश में न आए तथा कभी भी गुरु के विपरीत आचरण न करे। विनयी शिष्य विना पूछे कुछ न बोले तथा पूछे जाने पर भी असत्य न बोले एवं वह गुरु की प्रिय तथा अप्रिय दोनों ही शिक्षाओं को समान भाव से धारण करे। अध्ययनकाल में वह आवश्यक रुप से अध्ययन करे तत्पश्चात् एकांत में जाकर ध्यान (पढ़े हुवे ज्ञान पर मनन व चिंतन) करे। गुरु के प्रति विनय-विनम्रता का आग्रह

है कि वह उनके बराबर न बैठे, उनसे सटकर न बैठे, उनसे कभी भी अपने आसन पर बैठे हुवे बात न करे, गुरु को कुछ पूछना हो तो अपने स्थान से ही न पूछकर उनके समीप जाकर विनम्रतापूर्वक पूछे तथा गुरु के बुलाने पर वह अपने आसन या शय्या पर से बैठे हुवे या लेटे हुवे ही उत्तर न दे अपितु विनम्र भाव से उनके पास जाकर नतशिर होकर उनकी आज्ञा को ग्रहण करे व उसका तत्परता से पालन करे।

विनय से लाभ तथा अविनय से हानि –

शास्त्रकार आर्य सुधर्मा इस विषय पर अपने स्वानुभूत विचारों को स्पष्टता से अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं कि विनयी व गुरु के मनोनुकूल चलने वाला शिष्य क्रोधी व दुराश्रय गुरु को भी प्रसन्न कर लेता है जबकि अविनीत, आज्ञा में न रहने वाला दुष्ट शिष्य मृदुस्वभाव वाले गुरु को भी क्रुद्ध कर देता है।

शिष्य के विनय-भाव से प्रसन्न होकर संबुद्ध पूज्य आचार्य उसे विपुल अर्थगंभीर श्रुत-ज्ञान प्रदान करते हैं जिससे उस शिष्य के सब संशय मिट जाते हैं तथा वह जन-जन में विश्रुत शास्त्रज्ञ के रूप में सम्मानित होता है, देव, गंधर्व व मनुष्यों से पूजित होता है तथा अंतत: शाश्वत सिद्ध होता है अथवा अल्प कर्मवाला महान् ऋद्धि-संपन्न देव होता है।

अविनय के दुष्परिणाम की चर्चा करते हुवे वे कहते हैं कि अविनयी, दुराचारी शिष्य उस शूकर के समान मृगवत् अज्ञ है जो चावल की भूसी को छोड़कर विष्टा खाता है। गुरु के प्रतिकूल आचरण करने वाला दु:शील वाचाल शिष्य सब जगह से उसी प्रकार से अपमानित करके निकाल दिया जाता है जिस प्रकार एक सड़े कान वाली कुतिया सब जगह से दुत्कारकर निकाल दी जाती है। अत: दु:शील से होने वाली अशोभन स्थिति को समझकार उसे अपनेआप को विनय में स्थित करना चाहिये।

विनय दासता नहीं –

आचार्या श्रीचंदनाजी के अनुसार – यहां यह बात समझ लेनी आवश्यक है कि विनय से आर्य सुधर्मा का अभिप्राय दासता या दीनता नहीं है, गुरु की गुलामी नहीं है, स्वार्थसिद्धि के लिये कोई दुरंगी चाल नहीं है, कोई सामाजिक व्यवस्थामात्र नहीं है अथवा वह कोई आरोपित औपचारिकता भी नहीं है। विनय तो गुणी गुरुजनों के प्रति शिष्यों के सहज प्रमोदभाव की विनम्र अभिव्यक्ति है जो गुरु-शिष्य के बीच एक मानस-सेतु का कार्य करता है, जिसके माध्यम से गुरु शिष्य को अपने ज्ञान से लाभान्वित करते हैं।

विणय-मूलओ धम्मो –

जैन वांग्मय में विनय को विनम्रता से भिन्न अर्थ में आचार के अर्थ में भी प्रयुक्त किया गया है। 'विणए दुविहे पण्णत्ते – आगार विणए य अणगारविणए य' में यह इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। उस अर्थ में जैन-धर्म को विनयमूलक अर्थात् चारित्रधारित माना गया है। इसमें चारित्र को प्रधानता देते हुए सम्यक्चारित्र के अभाव में मुक्ति की प्राप्ति असंभव मानी गई है। तप युक्त सम्यक्चारित्र से ही 'संवर' और 'निर्जरा' द्वारा मोक्ष प्राप्ति संभव है, यह निर्विवाद है। सम्यक्चारित्र के अभाव में तो 'आस्रव', 'बंध' व तज्जनित भव-भ्रमण ही हो सकता है, मुक्ति नही।

तम्हा विणयमेसेज्जा –

'यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि जब तक गुरु शिष्य के व्यवहार से प्रसन्न न हो तथा उसकी पात्रता के बारे में आश्वस्त न हो, गुरु की दृष्टि में यदि वह अप्रामाणिक, अनैतिक व दुराचारी है तो चाहते हुए भी वे शिष्य को अपना वह सब ज्ञान व आशीर्वाद नहीं दे सकेंगे जो वे दे सकते हैं। अत: शिष्य द्वारा अपने विनयसंपन्न आचरण से गुरु की प्रसन्नता अर्जित करना गुरु से ज्ञान-प्राप्ति की पहली शर्त है। गुरु के महत्व को स्वीकार करके शिष्य को गुरु के प्रति सर्वात्मना समर्पण करना चाहिये।'

आर्य सुधर्मा के शब्दों में इसलिये (शिष्य को) विनय का आचरण करना चाहिये जिससे कि शील की प्राप्ति हो। ऐसा विनयी मोक्षार्थी शिष्य विद्वान गुरु को पुत्रवत् प्रिय होता है तथा अपने गुणों के कारण वह कहीं से भी निकाला नहीं जाता है (अपितु सर्वत्र सम्मानित होता है)। यथा –

'तम्हा विणयमेसेज्जा, सीलं पडिलभे जओ।
बुद्ध-पुत्त नियागट्ठि, न निक्कसिज्जइ कण्हुई।।'

– उत्तराध्ययनसूत्र, १/७

E-26, भूपालपुरा,
उदयपुर-३१३००१ (राज.)

■

शान्तिलाल जारोली

कषाय समीक्षण

युग पुरुष, समता विभूति, समीक्षण ध्यान योगी स्वर्गीय आचार्य श्री नानेश ने अपनी अनुभूतियों के आधार पर कहा कि कर्म वंध का मुख्य कारण है राग द्वेष। राग द्वेष रूपी वृत्तियों का संशोधन करने के लिए कषायों की समीक्षा जरूरी है। आज वैज्ञानिक भी इस वात को स्वीकार करते हैं कि वृत्तियों का उद्‌गम स्थल अन्त:स्रावी ग्रन्थि तंत्र है। जैसा अन्त:स्रावी ग्रन्थियों का स्राव होता है वैसा भाव। जैसा भाव – वैसा स्वभाव। स्वभाव को परिष्कृत करने के लिए मनोवृत्तियों एवं कषायों का समीक्षण करना नितान्त आवश्यक है। कषाय की वृत्तियों के कारण ही व्यक्ति कई प्रकार के पाप कर लेता है जैसे हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, परिग्रह आदि। उत्तराध्ययन सूत्र में कहा गया है कि 'कषाय अग्गिणों वृता सुमशील तवो जल' कषाय को अग्नि कहा है उसे बुझाने के लिए श्रुत, शील और तप, यह जल है।

कषाय के लिये कहा 'कष्यति इति कषाय' अर्थात् जो आत्मा को हर पल कलुषित करे, उन्हें कषाय कहते हैं। कषाय चार प्रकार से पैदा होते है :–

१. आत्म प्रतिष्ठित (अपनी भूल से होने वाले)
२. परभव प्रतिष्ठित (दूसरों के निमित्त से होने वाले)
३. तदुभव प्रतिष्ठित (अपनी व दूसरों के निमित्त या दोनों के निमित्त)
४. अप्रतिष्ठित (विना निमित्त होने वाले)

कषाय चार प्रकार के है **क्रोध, मान, माया और लोभ**। इनके सोलह भेद वताए गए है, जो निम्न प्रकार है :

क्र. कषाय	अनंतानुवंधी	अप्रत्याख्यानी	प्रत्याख्यानी	संज्वलन
१. क्रोध	पर्वत की दरारवत्	सूखे तालाव की तराड़वत	वालू रेत की लकीरवत	पानी की लकीरवत
१. मान	पत्थर के स्तंभवत	हड्डी के स्तंभवत	लकड़ी के स्तंभवत	तृण के स्तंभवत
३. माया	वांस की जड़वत	मेढ़े की सींगवत	गौमूत्रिकावत	वांस के छिलकेवत
४. लोभ	किरमची रंगवत	गाड़ी के पहिये के कीट के समान	काजलवत	हल्दी के रंग के समान

अनंतानुवंधी कषाय से नर्क, अप्रत्याख्यानी से तिर्यंच, प्रत्याख्यानी से मनुष्य तथा संज्ज्वलन कषाय से देवगति का बंध हो होता है।

कषायों पर नियंत्रण – समीक्षण ध्यान साधना द्वारा प्रत्येक कषाय पर नियंत्रण कर सकते हैं। क्रोध, मान, माया और लोभ के कषायों पर नियंत्रण निम्न प्रकार से किया जा सकता है –

क्रोध – क्रोध की वृत्ति प्रमुख कषाय है जो प्रत्येक मनुष्य में कम अथवा ज्यादा अवश्य पाया जाता है। क्रोध एक ज्वालामुखी है जो अनंत-अनंत जन्मों तक विस्फोट के रूप में अभिव्यक्त होता है। जैन आगमों में कहा गया है **'कुंद्दो.... सच्चं सीलं विणयं हणेज्ज'** अर्थात् क्रोधान्ध **व्यक्ति सत्य,** शील और विनय का विनाश कर डालता है।

मनोविज्ञान के अनुसार क्रोध एक प्रकार का संक्रामक कीटाणु है जो अपने को ही नहीं आस-पास के वातावरण को भी रूग्ण कर देता है। शरीर स्वास्थ्य की भाषा में अंतस्रावी ग्रंथियों के स्रावों का असंतुलन क्रोध को जन्म देता है। क्रोध आने का जो केन्द्र है वह है हमारा मस्तिष्क। सारी प्रवृतियों का संचालन मस्तिष्क के द्वारा होता है। अच्छी या बुरी सारी भावधारा मस्तिष्क में पैदा हो रही है, क्रोध करना यह भाव भी मस्तिष्क से आ रहा है। दूसरें शब्दों में क्रोध का उद्दीपन भी होता है और नियमन भी होता है।

क्रोध का कारण : इच्छा के विरुद्ध कार्य होना, स्वार्थ की पूर्ति न होना, शरीर में पित्त कफ की प्रधानता, मांसाहार भोजन, मानसिक असंतुलन, सहिष्णुता का अभाव, आग्रह का आधिक्य, एड्रिनल की अधिकता, प्रतिकूल परिस्थितियां आदि। व्यक्ति क्रोध करके दूसरों का नुकसान करे या न करे लेकिन स्वयं का कितना बड़ा नुकसान वह कर लेता है यह पता लगता है जब स्वयं के द्वारा किये गये क्रोध के दुष्परिणाम को अक्रोध की अवस्था में, क्रोध शांत होने पर देखता है। क्रोधी व्यक्ति स्वयं जलता है और आसपास के क्षेत्र को जलाकर राख कर देता है।

क्रोध से हानियां –

१. **शारीरिक** – श्वास तीव्र, पेप्टीक अल्सर, हदय रोग, उच्च रक्त चाप, सिर दर्द, माइग्रेन दर्द, कोलस्ट्राल वढ़ जाना, पाचन तंत्र मंद, नाड़ी व ग्रंथि तंत्र का असंतुलन।

२. **मानसिक** – मन अशांत, मन की चंचलता बढ़ जाना, मानसिक शक्तियों का, स्मृति, कल्पना, चिन्तन आदि का ह्रास।

३. **भावनात्मक एवं आध्यात्मिक** – निषेधात्मक भाव, सृजनात्मक क्षमता में कमी तथा अशुभ कर्मो का बंधन, चैतनिक विकास का रुक जाना तथा आत्मिक शक्ति का कमजोर होना।

क्रोध मुक्ति का एक साधन है – समीक्षण ध्यान साधना। समीक्षण ध्यान एक रूपान्तरण की प्रक्रिया है जिससे मस्तिष्क में जब अल्फा तरंग का अनुभव होता है तव व्यक्ति का मन संतुलित हो जाता है। क्रोध की तीव्रता को नियंत्रित करने के लिए मन की मनोवृत्तियों का समीक्षण बड़ा उपयोगी है। साधक चिंतन करें कि क्रोध क्यों उत्पन्न होता है? क्रोध की अवस्था में क्या क्षतियां होती है अत: समीक्षण विधि से क्रोध का विश्लेषण करते रहना चाहिए। समीक्षण ध्यान एवं समतामय आचरण के बल पर साधक अपनी साधना के अनुरूप क्रोध के दृष्टा के रुप में 'कोह दंसी' होगा। जब क्रोध को देखने की क्षमता जागृत हो जायेगी तब वह क्रोध रूप कार्य की जो समर्थ कारण सामग्री होती है उसका भी समीक्षण कर लेगा।

मान – क्रोध समीक्षण की पहली सीढ़ी पर जब साधक का पांव जम जाय तब वह दूसरी सीढ़ी पर उतरने का उपक्रम करेगा। जब क्रोध समीक्षण की सम्पूर्ति होती है तब मान समीक्षण का पूर्व प्रारम्भिक क्षण यही **'जे कोहो दंसी से माण दंसी'** की सूक्ति का साधना-पथ है।

मान आत्मा की विकृत वृति है। सहज स्वाभाविक चैतन्य वृति को विभाव रूप विकृत वनाने वाले कर्म स्कन्ध जव अहंकार के रूप में परिणत होते हैं तव कर्म स्कन्धों को मान संज्ञा से अभिहित किया जाता है। मान आत्मा के स्वाभाविक गुण नम्रता को कुण्ठित कर देता है। सत्तागत मान के स्कन्ध उदयगत होते हैं, उस समय उनका प्रभाव मन को प्रभावित करता है। बाहर कोई आधार न मिलने पर पुरुष अपने आप को अभिमानी की अवस्था में अनुभव करता है। इसमें अपने आपको अधिक मान लेने के कारण आगे के विकास का द्वार अवरुद्ध हो जाता है। ऐसी वृति के बनने पर मानस-तंत्र से भी वृतियां जो विकासोन्मुख थीं, वे ह्रासोन्मुख हो जाती हैं जिससे जीवन पर घातक असर होता है। मान-वृति एक मीठा जहर है क्योंकि यह हमारे शरीर और आत्मा को कलुषित करता है तथा हमें पता भी नहीं चलता क्योंकि मान को अक्सर स्वाभिमान का चोला पहनाकर रखते हैं। कहा है क्रोध विच्छू के डंक के समान है तो मान सांप के काटने के समान ज्यादा खतरनाक है।

अहंकार के प्रकार – अहंकार अनेक प्रकार का होता है जैसे रूपमद, जातिमद, कुलमद, ऐश्वर्यमद, वलमद, पद का मद, प्रतिष्ठा का मद और यहां तक कि ज्ञानियों को ज्ञान का और तपस्यियों को तप का भी मद हो जाता है। अत: समीक्षण ध्यान-साधना द्वारा का इन मदों से वचना चाहिए।

समीक्षण दृष्टि ऐसी आंतरिक दृष्टि है कि जिससे बाहरी तत्वों के अवलोकन के साथ-साथ आंतरिक तत्वों का भी अवलोकन हो रहा है। भीतर के भी अन्य तत्वों के अतिरिक्त आत्मा का स्वाभाविक विकास, वैभाविक गुण जो अभिमान की संज्ञा से अभिहित किया जाता है, भलीभांति दीखने लगता है साथ ही इनसे होने वाले आध्यात्मिक और मानसिक दुसाध्य रोग भी

विदित हो जाते हैं पर यह सभी संभव है जबकि विशिष्ट दृष्टि का सत्कार सम्मानपूर्वक जिज्ञासापूर्वक श्रद्धान्वित होकर दीर्घ दिन तक, अनवरत अभ्यास किया जाए। इस तरह मान पर नियंत्रण संभव हो सकता है।

माया – माया आंतरिक जीवन का कुटील रूप है जो चेतना को छलना के जाल में आवद्ध करता रहता है। माया या छल कपट जिसकी वास्तविक सत्ता न हो किन्तु प्रतीति होती हो उसी को माया कहते हैं। मोह अथवा भ्रम की उत्पत्ति माया का कार्य है। माया एक आभास है, माया परमात्मा को भ्रांति उत्पन्न करने वाली एक शक्ति है। मन और इन्द्रियां इसके रूप हैं। माया की शक्ति से ही जगत वास्तविक प्रतीत होता है। असंभव को संभव करना माया का विचित्र स्वभाव है किन्तु ज्ञान के उदय होने पर माया अदृश्य हो जाती है। माया एक प्रकार का जादू है। जव तक आप मायावी को जान लेते हैं तो आपका आश्चर्य समाप्त हो जाता है और उसके कार्य असत्य हो जाते हैं। आत्म-ज्ञान से माया अदृश्य हो जाती है। जगत् के मोह जाल में वांध रखने वाली माया ही है। माया सत्य को ढक देती है और असत्य को सत्य-सा प्रकट कर देती है। यह दुख को सुख और अनात्मा को आत्मा प्रदर्शित कर देती है, जिस प्रकार अंधेरे में पड़ी रस्सी को भ्रमवश सर्प समझ लेते है, वैसा ही कार्य माया का है।

माया ऐसा शल्य है जो आत्मा को व्रतधारी नहीं वनने देता है क्योंकि वृति का निशल्य होना अनिवार्य है। माया इस लोक में तो अपयश देती है परन्तु परलोक में भी दुर्गति देती है। यदि माया कषाय को नष्ट करना है तो वह ऋजुता और सरलता के भाव अपनाने से ही नष्ट हो सकती है।

'धर्मविसए वि सुहमा, माया होइ अणत्थाय' अर्थात् धर्म के विषय में की हुई सूक्ष्म माया भी अनर्थ का कारण वनती है।

अत: बुद्धिमान पुरुषों को चाहिए कि माया के स्वरूप का भलीभांति अवलोकन कर वाहरी प्रसाधनों में अपनी अमूल्य शक्ति का अपव्यय न करें किन्तु वाहरी प्रसाधनों के लिए समीक्षण का दृष्टि पूर्वक चिंतन करें कि इस चैतन्य देव ने वाहरी प्रसाधनों में कितनी जिंदगियां विताइं हैं। वाहरी प्रसाधन का आनंद वास्तविक नहीं है। जव तक माया का समीक्षण ध्यान नहीं होगा तव तक जीवन की छवि उभर नहीं पायेगी। अत: समताभाव की मूर्च्छा को समताभाव से विलग करने पर यथा समीक्षण दृष्टि से चिंतन कर माया पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

लोभ :– लोभो सव्वविणासणो – अर्थात् लोभ सभी सद्गुणों का नाश कर देता है। **'इच्छालोभिते मुतिग्गस्स पलिमथूं'** अर्थात् लोभ मुक्ति पथ का अवरोधक है।

प्रत्येक भव्य आत्मा में परमात्मा वनने की शक्ति है और परमात्म-मार्ग में वढ़ने का प्रयास भी करती है कुछ वाधक तत्व ऐसे हैं जो उसे अपनी क्षमतानुसार आगे वढ़ने नहीं देते। वाधक तत्वों में लोभ कषाय प्रमुख रूप से वाधक है। यह अध:पतन कराने वाला लोभ अग्नि के समान है। अग्नि में ज्यों-ज्यों ईंधन डाला जाता है त्यों-त्यों अग्नि बढ़ती चली जाती है वैसे ही लोभ को शांत करते हैं। जैसे-जैसे जड़ वस्तु का संचय किया जाता है वैसे-वैसे लोभ वढ़ता ही चला जाता है। मनुष्य को यदि चार कोस के लम्वे चौड़े दो कुएं स्वर्ण, हीरे, मोती से भरे हुए भी मिल जाएं तो भी तीसरे कुएं की इच्छा करेगा। उदर को कव्र की मिट्टी के सिवाय कोई भी भरने में समर्थ नहीं है लोभी व्यक्ति धनोपार्जन का कोई तरीका क्यों न हो उसे अपनाने में संकोच नहीं करता है। लोभी मनुष्य माता-पिता, पुत्र, भाई, स्वामी और मित्र के साथ भी विद्रोह कर वैठता है। अदालत में झूठी गवाही देता है, गरीवों की धरोहर दवा लेता है। दुनियां का नीच से नीच कार्य भी कर लेता है। अत: लोभ को पाप के वाप की संज्ञा दी गई है।

क्रोध प्रीति का नाश करता है, मान विनय का नाश करता है, माया मित्रता का नाश करती है और लोभ सभी सद्गुणों का नाश करता है। क्रोध, मान, माया, कषाय तो एक-एक गुण हैं और लोभ सभी पापों की आधारशिला है। आत्मिक-विकास की चाह रखने वाले इस भव, पर भव में सुख के अभिलाषी व्यक्ति को लोभ कषाय से सदैव वचते रहना चाहिए। भगवान महावीर ने ढाई हजार साल पहले जो वातें कही थी वे आज भी प्रासंगिक हैं। गरीव से ज्यादा अमीर के मन में लोभवृति है। गरीव सौ रुपया चाहेगा तो अमीर लाख रुपये के संग्रह का लोभ करेगा। अपनी जरुरत से अधिक चाह करना ही लोभ है।

अत: समीक्षण ध्यान द्वारा लोभ पर नियंत्रण पा सकते हैं। साधक आत्म-शुद्धि हेतु साधना मे तन्मय रहे तो लोभ को भी समीक्षण प्रक्रिया से तितर-वितर करके नष्ट करने लगते हैं।

अत: निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि समीक्षण ध्यान द्वारा अपने जीवन की हर क्रिया का समीक्षण कर कषायों से मुक्त तथा शान्तिपूर्ण जीवन जी सकते हैं। तनावों से मुक्त हो सकते हैं। कषायों का गहराई से समीक्षण ध्यान कर हम वहिरात्मा से अन्तरात्मा और अन्तरात्मा से परमात्मा वन सकते हैं।

समस्त प्राणियों को एवं विशेषत: मानव जाति के तनावग्रस्त मस्तिष्क को जव कभी शांति मिलने का प्रसंग आयेगा एवं इस लोक तथा परलोक को भव्य एवं दिव्य वनाने का समय उपलव्ध होगा। तव वह इसी समीक्षण ध्यान एवं समीक्षण दृष्टि के माध्यम से ही आयेगा। यह निर्विवाद और त्रिकालावाधित सत्य है, ऐसा कहा जाए तो भी अतिशयोक्ति नहीं है।

■

अशोक चण्डालिया

भारत की प्राचीन समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा

बहुआयामी, विविधामयी समृद्ध मानवकल्याणकारी परम्पराओं को अपने विराट हृदय-सागर में समेटे हुए भारतवर्ष की परम वैभवशाली सांस्कृतिक परम्पराओं का सम्पूर्ण विश्व में अपना वैशिष्ट्य एवं अद्वितीय स्थान है। हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं की विशालता का ही परिणाम है कि अनेकों सम्प्रदायों एवं विभिन्न संस्कृतियों को अपनानेवाले हजारों-हजारों लोग प्राचीनकाल से ही हमारे देश में सिर्फ शासन करने के उद्देश्यों से ही नहीं आये, अपितु अपनी-अपनी संस्कृतियों का प्रचार एवं इन्हें भारतवर्ष में स्थापित करने के इरादे लेकर भी आये थे। भारतवर्ष में आने के बाद वे यहाँ की मिट्टी, जलवायु के साथ ही सांस्कृतिक परम्पराओं से इतने प्रभावित हुए कि उन्हें अपनाने हेतु वाध्य हो गये। ऐसी मिशाल संसार में अन्यत्र कहीं भी दृष्टिगत नहीं होती है।

भारतवर्ष की संस्कृति की महानता है कि वह प्राणीमात्र को अपनत्व प्रदान करती है, अपने में आत्मसात् कर लेती है, ममत्व प्रदान करती है। यहाँ के लोग प्राणियों को ही नहीं प्रकृति को भी सम्पूर्ण आदर देते हुए नदियों की माता के रूप में पूजा करते हैं, पहाड़ों की वंदना करते हैं, यहाँ तक कि पत्थरों में भी अपनी श्रद्धाभक्ति के वल पर चमत्कार उत्पन्न करने में भी सफल रहे हैं। इन्हीं अकल्पनीय विशिष्टताओं के वशीभूत होकर देवता भी स्वर्ग छोड़ कर इस पावन धरा पर जन्म लेते रहे हैं। यहाँ अवतरित होने का लोभ संवरण नहीं कर सके हैं।

भारत की सभ्यता एवं संस्कृति उस युग में अपनी विकास यात्रा के चरमोत्कर्ष पर थी जब इस सृष्टि में अन्यत्र असभ्यता का बोलबाला था। एक सम्पूर्ण, सुव्यवस्थित समाज की रचना एवं सम्पूर्ण मानव की विकासगाथा भारत की धरती एवं संस्कृति के आंगन में उस काल में भी प्रफुल्लित-पल्लवित थी जब संसार के अन्य महाद्वीपों में जीव के विकास की प्रक्रिया प्रारंभिक चरण में अवस्थित थी।

हमारी समृद्ध प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं की महानताओं के हजारों-हजार उदाहरण मानव इतिहास में भरे पड़े हैं। इस देवभूमि पर हजारों तपस्वी, साधक, ऋषि मुनियों ने जन्म लेकर अपने मानव कल्याणकारी उपदेशों से सम्पूर्ण विश्व का मार्गदर्शन किया है तो दूसरी ओर महादानी, पराक्रमी, शूरवीरों ने भी यहीं जन्म लिया है। एक ओर जहाँ वशिष्ठ, विश्वामित्र, बाल्मिकी, शृंगी, याज्ञवल्क्य, वेदव्यास, अगस्त्य जैसे तपस्वी हुए हैं तो दूसरी ओर जनक, भागीरथ, विक्रमादित्य, अशोक, अर्जुन जैसे महाप्रतापी भी यहीं पर पैदा हुए। इस पावनधरा की प्रतिष्ठा की पराकाष्ठा देखिये जहाँ स्वयं ईश्वर नरनारायण का स्वरूप लेकर राम, कृष्ण, महावीर और बुद्ध के रूप में इस सृष्टि के प्राणीमात्र का उद्धार करने जन्म लेते हैं। ऐसी पावन धरती को कोटिश: नमन्।

भारत की संस्कृति में पूरे विश्व को उद्वेग, आवेश को योग से, क्रोध को करुणा से, हिंसा को अहिंसा से एवं लालच को त्याग से जीतने की राह दिखाई है। हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं की विशालता एवं विशिष्टता का ही परिणाम है कि सम्पूर्ण एशिया महाद्वीप में समस्त सम्प्रदायों मतावलम्बियों में हमारे त्योहारों, उत्सवों, रहन-सहन, पहनावे को अपने-अपने तरीकों से प्राचीनकाल से आजतक अपनाते आ रहे हैं। आज के भीषण संघर्षशील युग में परमाणु अस्त्र-शस्त्रों से प्राणीमात्र एवं इस सृष्टि की रक्षा करने का ब्रह्मास्त्र 'अहिंसा परमो धर्म' भी भारतवर्ष की धरा पर अवतरित महावीर ने दिया, पंचशील का मार्ग भी महात्मा बुद्ध ने दिखाया। कई देशों में आज भी रामलीला का मंचन हो रहा है तो दूसरी ओर विकास की अंधी दौड़ में अपने जीवनमूल्यों के ह्रास से पस्त पश्चिमी जगत के लोग 'गीता' से अपने जीवन को संवारने में अपने को धन्य मान रहे हैं। भारत की सांस्कृतिक परम्पराओं का ही चमत्कार है जहाँ दो गंगा-जमुनी विचारधाराएँ साथ-साथ मानव को जीवन के रहस्य

समझाती हैं। एक ओर कर्मयोग की परम्परा है तो दूसरी ओर भक्तियोग की धारा।

इस पावनधरा की सांस्कृतिक परिपक्वता का ही कमाल है जहाँ मातृभूमि की रक्षा हेतु प्रताप घास की रोटियों पर निर्वहन करते हैं, लक्ष्मीवाई, सावरकर, भगतसिंह, शिवाजी इस धरा के स्वाभिमान की रक्षा हेतु प्राणों की आहुतियाँ देते हैं। हमारी संस्कृति की ही विशेपता है जहाँ पर विश्वविजेता सिकन्दर को परास्त कर उसे क्षमादान भी दिया जाता है। 'क्षमा वीरस्य भूषणम्' का मंत्र दिया।

वर्तमान युग महत्वकांक्षाओं एवं स्पर्धाओं से भरा युग है। चहुं ओर एक होड़ की दौड़ दृष्टिगत हो रही है। विकसित देश अपने संसाधनों के जरिये पूरे विश्व में अपना पूरा वर्चस्व कायम करने को आतुर हैं। तरह-तरह के आयुधों एवं प्रतिबंधों से विश्व के देशों की भयभीत करते हैं लेकिन भारतवर्ष की उर्वरा संस्कृति का ही परिणाम है इस देश में पैदा हुए मानव रत्नों ने हर तकनीक का भारतीय संस्करण तैयार कर अपने को श्रेष्ठ सावित कर दिया है। अव तो विकसित देश घवरा कर आउटसोर्सिंग का रोना रो रहे हैं। भारत की सांस्कृतिक परम्परा में पले, बढ़े सपूत पूरे संसार में अपनी छाप छोड़ रहे हैं। अपनी कौशलता का लोहा मनवा रहे हैं।

भारतीय सांस्कृतिक परम्पराओं में ही समन्वय, संवाद, सहयोग, मानवता, दया, करुणा, स्नेह, आत्मीयता, सम्मान, सत्कार जैसे अमूल्य गुण पाये जाते हैं, संसार में अन्यत्र नहीं। विकसित देशों ने अपरोक्ष रूप से हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं को दूषित करने हेतु विभिन्न माध्यमों के जरिये एक भारी अभियान चला रखा है इनमें इलेक्ट्रानिक मिडिया अहम है। विभिन्न सेटेलाइटों के जरिये कई दूषित कार्यक्रमों का प्रसारण कर हमारी सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक परम्पराओं, सामाजिक मर्यादाओं एवं हमारे रहन-सहन के शालीन तौर-तरीकों को दूषित कर हमारी युवा पीढ़ी को हमारी परम्पराओं से विलग करने पर तुले हुए हैं। एक वार फिर हम सवकी महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है कि प्राचीन काल से अव तक हमारी अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर को हमारे पूर्वजों ने सुरक्षित रखा है हमें भी उसी परम्परा को कायम रखते हुए इसकी रक्षा करनी होगी अन्यथा दूषित संस्कृति के भटकाव से हमारी भावी पीढ़ी तो अंधकार के गर्त में जायेगी ही साथ ही हमारी पुरातन, सनातन संस्कृति जो वर्षों से अक्षुण्ण रही है, वह अपना असली स्वरूप कहीं खो नहीं दे। आज हमें इसकी चिंता कर हमारे युवाओं को यह सीख देनी होगी कि हमें इस बात का गर्व होना चाहिये कि हमने कर्ण, विक्रमादित्य जैसे दानियों, कौटिल्य जैसे अर्थशास्त्री, मनु जैसे समाजसंरचक, मीरा, कबीर, सूर, तुलसीदास जैसे भक्तिवान उपदेशकों, मर्यादापुरुषोत्तम राम, कर्मयोगी कृष्ण, अशोक, अर्जुन, प्रताप जैसे शूरवीरों, भगवान महावीर, बुद्ध जैसे महामानवों की धरती पर जन्म दिया है। हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं की ही देन है कि हमारे देश में हजारों जातियों, धर्मो, सम्प्रदायों के लोग आज भी पूरी आत्मीयता, वंधुत्व, सहिष्णुता एवं परस्पर सहयोग कर शांति से निवास करते हैं। यह सव समृद्ध भारतीय प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं की देन है। हमारी सांस्कृतिक परम्पराएँ एक माला का स्वरूप है जिसमें विभिन्न सम्प्रदाय एक मोती की तरह पिरोये गये हैं।

हमारी प्राचीन एवं समृद्ध सांस्कृतिक परम्पराओं के कारण भारतवर्ष पहले भी विश्वगुरु था और हम सव यह संकल्प करें कि भविष्य में फिर भारत विश्वगुरु के पद पर आसीन हो।

भारत की वीरांगनाएँ अपनी परम्परा एवं मर्यादाओं की रक्षा हेतु जौहर करती हैं तो दूसरी ओर प्रकृति की रक्षा हेतु पेड़ों को वचाने अपनी जान न्यौछावर कर देती हैं ऐसी महान सांस्कृतिक परम्पराओं की धरती को नमन्।

कपासन, जिला : चित्तौड़गढ़ (राज.)

■

नंद चतुर्वेदी

शिक्षा : लोक और अभिजन की तकरार

लोककथाएँ कविताओं से ज्यादा स्वादिष्ट होती हैं। इन कथाओं में शब्द की अभिधा शक्ति अपनी अबाध रंगत से खुलती है और सीधे-सीधे वार करती है। लोक कथाओं ने अभिजनों की संस्थाओं, व्यवस्थाओं और अभिरुचियों की जम कर खिल्ली उड़ाई है और समानान्तर आलोचना-विमर्श तैयार किया है। लोक साहित्य में यह तनाव इतना ज्यादा खुला और व्यक्त है तब भी साहित्य के 'शालीन पंडितों' और 'समीक्षकों' ने इस तरफ नहीं देखा है और न इस 'निम्न कोटि के साहित्य' को सामाजिक संरचना के आधारभूत सबूतों की तरह शामिल किया है। इसलिए यह तकरार नजर नहीं आती। जहाँ कहीं नजर आती है वहाँ काव्य-शास्त्र को विनोद और रस की मंजूषा मानने वाले इसे 'शाश्वत साहित्य' से पृथक कर देते हैं।

यह बात ध्यान देने जैसी है कि लोक-कथाओं में सम्पूर्ण जीवन और उसकी परम्परा पर निडर होकर रोशनी डाली गयी है। जहाँ जो सौन्दर्य-विहीन है, जिन्दगी का विनाश करने वाला या संतुलन को नष्ट करने वाला है वहाँ उसका उपहास है, कोई-न-कोई घमंड तोड़ने वाली वक्रोक्ति या अन्योक्ति-कथन है, कोई चतुराई भरा संवाद या श्लोक है, आकाशवाणी या अभिशाप है। गहन दार्शनिक विषयों पर शास्त्रार्थ है या सनातन प्रश्नाकुलता।

लोक-साहित्य का मिजाज एक निर्द्वन्द्व आलोचक की तरह है जो यह मानता है कि कहीं भी और किसी के अन्त:पुर में झाँकना-ताकना गैरवाजिब नहीं है। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और किसी भी किस्म की गैर-बराबरी के सीमान्तों पर निगहबानी करना और वहाँ खड़े परम नैतिक और धर्म-प्रवीण थानेदारों के अहंकार की धज्जियाँ उड़ाना उसकी प्राथमिकता में शामिल है।

अपनी स्थापना के समर्थन में मैं आपको केवल दो लोककथायें लिख देता हूँ जो अपने समय के महापंडितों का मान-मर्दन करने के प्रसंग में है। शिक्षा के दुर्लभ अधिकार को पाकर मदांध कुलीन जितने इतराये-बौराये फिरते हैं उनका नशा उतारने के लिए पूरा गाँव-समुदाय मिलकर शास्त्रार्थ का खेल रचता है और केवल भय के मनोविज्ञान से इतराये काशी-प्रशिक्षित पंडित का नूर उतार देता है। कथा में यह ईर्ष्या दंश उस शिक्षा-व्यवस्था को लेकर भी है जिसके चलते सिर्फ अभिजन या कि कुलीन ही शिक्षित होते हैं और अधिकांश दवे-कुचले लोग हाशिए पर वैठ अपने-अपने परम्परागत नीरस व्यवसाय से जिन्दगी चलाते-चलाते मर जाते हैं। अवसर न मिलने और सामाजिक गैर-बराबरी की तकलीफों, प्रतिहिंसा के तनावों को सहते हुए वे इन कथाओं के जरिए उन पोथी-पंडितों की हेकड़ी उतार देते हैं जो शास्त्रों के नीरस ज्ञान और आडम्बर ढोते-ढोते बूढ़े बैल हो जाते हैं।

चलिए, अभिजात्य और शिक्षा के दंभ को एक अनोखे जनतांत्रिक अंदाज से तोड़ने वाली इस लोक कथा को पढ़ें। युवक आदित्य प्रकाश अपने नगर ब्रह्मपुर लौट आया था। उसने काशी के पंडितों से शिक्षा ग्रहण की थी जिसका उसे गर्व भी था और गौरव भी। अब जैसे अमेरिका या यूरोप के किसी देश से लौटा कुलीन किसी-न-किसी बहाने, बात करते-करते वहाँ के ऐश्वर्य के वर्णन से परितृप्त होता नजर आता है, आदित्य भी किसी न किसी प्रसंग पर इतरा कर काशी की अद्वितीयता के वर्णन में रम जाता है। वह साथियों को अपनी योग्यताओं, वाक्-पटुता और शास्त्रार्थों के वृत्तान्त बताते यह कहना नहीं भूलता कि उसने विश्व प्रसिद्ध पुस्तकों को इतनी बार छुआ, देखा और पढ़ा है कि उनकी आकृतियों से उनका नाम बता सकता है।

ब्रह्मपुर के जन-पद में यह प्रसिद्धि फैली हुई थी कि आदित्य प्रकाश आकृति से पुस्तक पहचान जाते हैं। इस प्रसिद्धि ने अहंकार और आत्मश्लाघा के शिखर छू लिए थे। पास के प्रीतिपुर वाले इन दर्पोक्तियों से थक गये थे। उन्होंने निश्चय किया कि वे काशी के युवा पंडित को मात देंगे। प्रीतिपुर की तरफ से यह कहला दिया गया कि यदि उनकी पुस्तक को पं. आदित्य

प्रकाश चीन्ह लेते हैं तो वे ब्रह्मपुर नगर के बीचोंबीच आदित्य के बावा पं. ललित नारायण की मूर्ति स्थापित करेंगे। हारने पर प्रीतपुर की पाठशाला में आदित्य पाँच वर्ष तक पढ़ायेंगे। दोनों पक्ष सहमत हो गये।

निश्चित हुए दिन एक विशाल गाड़ी पर 'तिलकाष्ठमहषिवन्धनम्' नामक महाग्रंथ रेशमी वस्त्र से सजाकर रखा गया। इस विशाल गाड़ी को तीन बैलों की जोड़ियों से खींचा जा रहा था। इधर से शास्त्रार्थ के लिए तैयार किये गये रवीन्द्र भारती गाड़ी के आगे चल रहे थे। पीछे चल रहे प्रसन्नचित्त गाँव वाले जय बोलते जा रहे थे।

उधर आदित्य अपने जनपद में प्रसिद्धि विस्तार के लिए अत्यन्त उत्साहित थे। जिस तरफ से ग्रंथ लेकर गाँव वाले आ रहे थे उधर वे बार-बार देखते, कुछ क़दम चल कर जाते और लौट आते। कुछ दिन चढ़ने पर उन्होंने दूर धूल उड़ती देखी और जय-जयकार सुनी। थोड़ी देर में उन्हें गाड़ी और जन-समूह दिखाई दिया। कुछ अचंभे के साथ उन्होंने तीन जोड़ी बैलों से खींची जाने वाली गाड़ी देखी। उन्हें कुछ-कुछ ऐसा लगा कि उसमें जैसे कोई ग्रंथ रखा हो। आदित्य एक क्षण को भय-कम्पित हुए लेकिन फिर साहस के साथ सभास्थल पर पहुँच गए।

दोनों ओर के दर्शक प्रतिस्पर्धा का आनन्द लेने के लिए उत्सुक थे। महाग्रंथ की गाड़ी नियत स्थान पर खड़ी थी। प्रीतिपुर के पंडित रवीन्द्र भारती और काशी के स्नातक आदित्य नारायण के बीच औपचारिक अभिवादनादि के बाद रवीन्द्र भारती ने विनम्रतापूर्वक आदित्य नारायण से गाड़ी पर रखे महाग्रंथ का नाम बताने को कहा।

आदित्य नारायण दरअसल मन-ही-मन हार चुके थे। गाड़ी पर रखे विशाल ग्रंथ को, जिसे तीन पुष्ट बैलों की जोड़ी खींच कर ला रही थी, दूर से देख कर ही आदित्य भय और अवसाद से घिर गये थे। वे उस महाग्रंथ का नाम नहीं बता सके, जिसका कोई नाम था ही नहीं। वह तो प्रीतिपुर वालों ने काशी से आये इस स्नातक (ब्राह्मण) की हेकड़ी खत्म करने के लिए अपनी प्रत्युत्पन्नमति (कुशाग्र बुद्धि) से तिल के डंखलों को सजा कर भैंस के जेवड़ों से बाँध (तिलकाष्ठ-महषिवंधनम्) दिया था।

इस तथ्य को मैं दुहरा दूँ कि जीवन के विभिन्न पक्षों की निगहबानी करने के लिए लोक ने कोई अटल सिद्धान्त या सूत्र न बनाये हों लेकिन अपने हितों की निगरानी करने की दक्षता उसने निरन्तर दिखाई है। शिक्षा के बारे में लोक की यह जागरुकता विलक्षण है। किस मुद्दे पर लोक ने अभिजन से तकरार नहीं की है? लेकिन प्राथमिकता लोकमंगल की, विस्तार की, बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय की है। इधर शिक्षा की बात करें तो शास्त्र-ज्ञान के विरुद्ध दुनिया के काम आने वाली सुमति के पक्ष में लोक-कविता ने जबरदस्त दस्तक दी है। कबीर ने उबाऊ 'पोथी ज्ञान' के बरकस दुनिया का 'आँखों देखा' ज्ञान शिरोधार्य किया है और संकीर्ण संस्कृत-कूप-जल के बजाए बहते भाषानीर से अपनी कविता का समर्पण। लोक ने पंडिताऊ दुरभिमान का मौका मिलते ही प्रतिवाद किया और 'भोले भावों' की रचना करने वाली जन-शिक्षा का समर्थन। विश्वविद्यालयों के 'तकनीकी ज्ञान' की खिल्ली उड़ाती यह लोक-कथा की विदग्ध आलोचनात्मक दृष्टि के गहरे बोध की जानकारी देगी।

ये श्रीधर शास्त्री हैं, कुलीन ब्राह्मण और काशी के शिक्षित-स्नातक। कई शास्त्रार्थों के विजेता। काशी-निवास करते हैं और शास्त्र अनुमोदित मार्ग पर चलते हैं। इस समय श्वसुर-घर जा रहे हैं। कोई गाड़ी, घोड़ा, पालकी या रथ श्रीधर के पास नहीं है। कई बीहड़ जंगलों को पार करते जाना पड़ेगा शास्त्रीजी को। बहरहाल, अब तक तो कोई कष्ट नहीं आया था लेकिन अब एकदम सामने मृत गधा पड़ा है, शायद, मरे हुए दिन-दो-दिन हुए हों। शरीर फूल गया है, दुर्गंध के कारण साँस लेना कठिन है। चारों तरफ घेर कर बैठे गिद्ध और कौवे लाश को लेकर भयानक उपद्रव कर रहे हैं।

क्या करें श्रीधर शास्त्री?

क्या कहता है शास्त्र? शास्त्र कहता है शव का दाह-कर्म करो। श्रीधर शास्त्र के निर्देश का पालन करेंगे। वे गधे को उठाकर सम्मानपूर्वक श्मशान तक ले जाने की कोशिश में लग गये। लाख कोशिश करने पर भी भारी गधा टस-से मस न हुआ। शास्त्री इस प्रयत्न में थक गये। अब क्या कहता है शास्त्र?

कहता है कि शरीर में सबसे महत्त्वपूर्ण सिर है। उसका दाह कर्म कर दो। लेकिन गधे का सिर कहाँ है? इस असमंजस में उन्होंने मृत गधे की गरदन काटने का निश्चय किया। तेज धार वाले किसी शस्त्र के न मिलने के कारण गरदन काटने का काम भी नहीं हो सका। श्रीधर चिंता में पड़ गये। सहसा ही जैसे बिजली कौंधी हो उन्हें शास्त्र-वचन याद आया कि आँख ही रोशनी का केन्द्र है इसलिए सिर न हो तो आँख से भी काम चल सकता है। किसी तरह किसी भी क्रूरता से मरे हुए गधे की आँख निकाल कर श्रीधर शास्त्री ने दाह संस्कार किया। अब उन्हें यह चिंता सताने लगी कि वे 'भद्र' नहीं हुए हैं। यानी उन्होंने न तो सिर का मुंडन कराया है न मूँछे, दाढ़ी मुँडवाई हैं।

किसी तरह वे गाँव के एक नाई को ढूँढ़ सके जिसके भोथरे उस्तरे से उन्होंने अपने सिर के बाल मुँडवाए और मूँछें, दाढ़ी साफ करवाईं। मार्ग की पवित्र नदियों के घाटों पर वे गधे की आत्मा की शान्ति-प्रार्थना करते रहे जो बिचारा जीवन भर दूसरों के लिए बोझ ढोने-उठाने के लिए अभिशप्त रहा। जो हो, गधे की आत्मा को शान्ति मिली या नहीं यह विवादित है किन्तु श्रीधर की आत्मा को अवश्य शान्ति मिलती रही।

यों दो-तीन दिन की यात्रा करते थके-हारे 'भद्र' (लोक शब्द 'भद्दर)' हुए श्रीधर शास्त्री किसी एक सुबह ससुराल के गाँव के सीमान्त पर नजर आए। तभी शौचादि के लिए आई उनकी साली ने उन्हें देखा-पहचाना। जीजाजी के आने की खुश-खबरी सुनाने के लिए वह फुर्तीली युवती अपनी माँ और जीजी के पास पहुँची। जो वर्णन उसने किया उसमें जीजाजी के 'भद्र' होने का भी था। जाहिर है कि श्रीधर शास्त्री की सास और पत्नी को उनके किसी निकट प्रियजन की मृत्यु के कोई पूर्व समाचार न होने से केवल अंदाज लगाना ही संभव था। तब भी उन्होंने जामाता के आने से पूर्व रोना-धोना और दारुण शोक प्रदर्शन शुरू कर दिया। परम्परानुसार आसपास की स्त्रियाँ भी आ गईं जिन्हें कोई बात मालूम नहीं थी और न मालूम करने की इच्छा।

इधर जामाता श्रीधर शास्त्री ससुराल पहुँच गये। वे थोड़े चकित होकर अपने बैठने के लिए उच्च स्थान ढूँढ़ने लगे। जामाता के स्वागत के लिए जो शास्त्रोक्त वर्णन उन्होंने पढ़ा था उसमें लिखा था 'उच्च स्थानेषु पूज्येषु' यानी पूज्य के लिए उच्च स्थान आवश्यक है। उन्हें जल्दी ही घास की ऊँची गंजी नजर आ गयी। वे उसी ऊँचे और पूज्य स्थान पर जा चढ़े और तब तक बैठे रहे जब तक उचित स्थान की व्यवस्था नहीं कर दी गई।

रात हो चली थी। गाँवों में सूर्यास्त के बाद रात जल्दी आ जाती है। श्रीधर शास्त्री जल्दी ही शयनकक्ष में पहुँच गये। उनके पहुँचने के बाद उनकी रूपवती पत्नी शीलभद्रा वहाँ पहुँची। रूप की उस दीप-शिक्षा को देखते ही श्रीधर शास्त्री मन-ही-मन वह सुप्रसिद्ध उक्ति दुहराने लगे 'रूपवती भार्या शत्रु' यानि रूपवान भार्या दुश्मन होती है। तब वे क्या करें? कुरूप बनाने के क्रम में उन्हें उसे एक आँख वाली कर देने का उपाय सूझा। लेकिन 'एकाक्षी कुल नाशनी' यानी एक आँख वाली वंश डुबो देगी–यह शास्त्र-वचन याद आया। इधर शीलभद्रा को पति के कलुषित भाव समझने में देर न लगी। वह क्रुद्धसिंहनी की तरह छलाँग लगा कर श्रीधर को अकेला छोड़कर चली गई और लौट कर 'एकाक्षी' और कुरूप होने के लिए कभी नहीं लौटी।

दुर्भाग्य से हमारी शिक्षा अभिजात्य वर्ग की जिस खुशामद करने वाली परम्परा से जुड़ी है वह उन जीवन-मूल्यों से भी जुड़ी है जिसमें संशय करना, बोलना, मूल्यों का प्रतिसंसार रचना मना है। लेकिन आप लोक-साहित्य को बोलते, तकरार करते, लोक-व्यवहार के सुरुचिपूर्ण मूल्यों के पक्ष में खड़े होने की निर्भीकता को देखेंगे तो दंग रह जायेंगे।

अहिंसापुरी, उदयपुर

■

बाबूलाल माली 'विषपायी'

पर्दा-घूंघट : एक विवेचन

राष्ट्रपति पद की भावी उम्मीदवार श्रीमती प्रतिभा पाटिल ने पर्दे के संबंध में क्या बोल दिया जैसे बर्र के छत्ते में हाथ डाल दिया हो। राजपूतों की रानी-महारानियाँ सख्त पर्दे में रहती थीं। उनके इस पर्दे में रहने का कारण उन्होंने एक जाति विशेष का नाम लिया। मुझे लगा वे कोई बुद्धिजीवी महिला नहीं हैं। वे अधकचरी राजनीतिज्ञ हैं। राजनेताओं की तरह बयान था, अतएव स्वाभाविक था कि इस बयान पर आरोप प्रत्यारोप लगने ही थे और लगे भी हैं। प्रथमे ग्राक्षे मक्षिकापात....।

पर्दा प्रथा ठीक-ठीक कब प्रारम्भ हुई, यह शोध का विषय है। परन्तु मानव का आदि अवस्था में जब वह गुफाओं में रहता और कच्चा माँस खाता था, फल फूल खाता था, तब कपड़े का आविष्कार नहीं हुआ। आदम और हव्वा की तरह स्वतंत्र विचरते थे। धीरे-धीरे विकास हुआ। मनुष्य कबीलों में रहने लगा। इतिहास के अनुसार पूर्व में 'मातृसत्तात्मक' (मेटरनल) राज्य था जिसमें स्त्री का निर्णय प्रमुख होता था। स्त्री ही सारी व्यवस्था संभालती थी फिर स्थिति में परिवर्तन हुआ और तमाम शक्ति स्त्री से पुरुष ने ले ली, जिसे 'पितृ सत्तात्मक' युग कहा जाता है, जो आज भी चल ही रहा है।

पितृ सत्तात्मक युग में स्त्री पुरुष की गुलाम हो गयी। जब धर्मों का उदय व विकास हुआ उन्होंने समाज रचना में स्त्री की भूमिका को गौण कर उसे घर की जिम्मेदारी और वंश विकास की जिम्मेदारी से लाद दिया। सनातन धर्म में स्त्री के संपूर्ण जीवन पर पहरा लगा दिया। बाल्य-अवस्था में माता-पिता की देख-रेख, शादी होने पर पति की देख-रेख, विधवा होने पर पुत्र की देख-रेख या सास-ससुर की देख-रेख में शरण दी गई। उसमें जेवरों की भूख जगाई गई। कान और नाक फोड़ कर गहने पहनाये गये। उसके हाथ, पाँव और कमर भी बाँध दिये गये। उसको कम उम्र में ही शादी के बंधन में बाँधा गया। वह गोदान की तरह दहेज, दान की वस्तु बना दी गई। इस्लाम में भी कमोवेश यही स्थिति है। वहाँ तो तलाक-तलाक-तलाक बोलने मात्र से स्त्री बेसहारा हो जाती है। वहाँ तो हिन्दुओं के बजाय पर्दा और भी सख्त है। इस्लाम में औरत को इतने सख्त पर्दे में क्यों रखा गया? इस्लाम धर्म का उदय रेगिस्तान में हुआ। आज भले ही अरब मुल्कों में चमचमाती सड़कें, फाईव स्टार होटलें, स्टेडियम, एअरकंडीशन बिल्डिंग हैं परन्तु सिर्फ १०० वर्ष तक वे बहुओं की तरह रहते थे। रेगिस्तान में जब 'रेत के अंधड़' चला करते थे। उस उड़ती हुई बालूरेत से शरीर को बचाने के लिए लबादा पहनना जरुरी था एवं अरब मुल्कों के निवासियों (औरत मर्द) दोनों ने लबादे पहने जो परंपरा आज भी चल रही है।

सामाजिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो पुरुष ने अपने शारीरिक बल की श्रेष्ठता के आधार पर स्त्री को अपनी अमूल्य संपत्ति, धन मान लिया। उसकी हिफाजत करना अपना दायित्व मान लिया और एक आत्मा व शरीर की बजाय संपत्ति हो गई। उसके दिल, दिमाग, भावना और विचार पर पुरुष ने कब्जा जमा लिया। यह कब्जा अधिकार, अंकुश कोई सौ पाँच सौ साल का नहीं होकर हजारों साल का है। औरत के दिमाग से ही यह निकल गया या निकाल दिया गया कि उसकी कोई स्वतंत्र अस्मिता/हस्ती है। वह तो पुरुष इच्छाओं की मात्र कठपुतली है। जिसने भी तनिक विरोध किया तो उसको लाँछित/प्रताड़ित करके आत्महत्या के लिए मजबूर किया गया। अतएव जब वह एक पूँजी/धन/मनी के रूप में पूर्णत: परिवर्तित हो गयी तो उसकी हिफाजत/सुरक्षा भी जरूरी हो गई। सबसे पहले उसे घर में ही कैद किया गया फिर उस पर ड्रेस कोड लागू किये गये ताकि उस संपत्ति को कोई चुरा न ले, लूट न ले। उसका चेहरा भी ढ़का गया और इसे स्त्री की लज्जा/शालीनता/सभ्यता से जोड़ा गया।

जब खैबर और बोलन के दर्रों से लूटेरे आने लगे तब पूरे देश में शासक राजपूत ही थे। लूटेरों का उद्देश्य इस सोने की चिड़िया को लूटना था। इस सोने की चिड़िया में भौतिक हीरे

जवाहरात के साथ औरत भी थी। उसकी रक्षा के लिए उसे अलग महल में रखा गया। हिजड़े सुरक्षा अधिकारी रखे गये। यह पूरे प्रयास किये गये कि उसकी सूरत विदेशी लूटेरे देख न लें। पुरुष समाज ने भी इसकी सुरक्षा में प्राण गंवाना नैतिक धर्म समझा। राजपूत महिलाओं को दुश्मनों/लुटेरों के हाथ आने के बजाय 'जौहर' का पाठ पढ़ाया गया। समझ में नहीं आता कि जौहर, हराकिरी/आत्महत्या की अपेक्षा यह शिक्षा क्यों नहीं दी गई कि वे दुश्मन का हथियारों से सामने करे, विजयी होती है तो लूटेरों से लूटा हुआ धन भी वापस ले सकती है, उन्हें गुलाम बना सकती है, अन्यथा अपनी अस्मिता की रक्षा करते हुए युद्ध के दौरान मैदान में आत्मोत्सर्ग कर ही सकती है।

अतएव निष्पक्ष दृष्टि से देखें तो श्रीमती प्रतिभा पाटिल का कथन सत्य है। वे जिन्हें मुसलमान कह रही हैं, वे मुसलमान नहीं लूटेरे और डाकू थे जो खैबर और बोलन के दर्रे से आते। धन संपत्ति लूट कर ऊँट घोड़ों पर लादकर वापस चले जाते थे। यहाँ के अच्छे विद्वान, कारीगरों को भी जबरदस्ती ले जाते थे। अतएव जो राजा महाराजा राज कर रहे थे, वे सब राजपूत ही थे उनका अपनी रानियों को महलों की चाहरदीवारी में पर्दे के अन्दर रखना जरुरी था।

श्रीमती पाटिल ने जो बात कही उसके अनर्थ न करें। इस पूरे प्रसंग को यू देखें कि एक तरफ डाकू/लूटेरे/लालची हैं, दूसरी तरफ भौतिक संपत्ति और स्त्री है जो मानव समाज में संपत्ति से बढ़कर स्थान रखती है – उसे वे डाकू लूटेरे/लालची लूटना चाह रहे हैं। राजे रजवाड़े के जमाने में किसी की भी बहू बेटी खूबसूरत दिखाई दी तो उसे वे भी अपने कारिंदों के माध्यम से उठवा लेते थे। अतएव आम आदमी भी बहू बेटी को घर के अंदर रखता था, बाहर जाने पर पर्दे में जाना पड़ता था। २१वीं शताब्दी में काफी कुछ परिवर्तन हुआ है और ३० प्रतिशत पुरुष के मुकाबले आ गई है। बेड़ियों से आजादी ४०-५० प्रतिशत मिली है। अभी संपूर्ण आजादी के लिए रास्ता लम्बा है।

वैसे स्वयंवर युग में पर्दा प्रथा नहीं रही होगी।

मंदसौर (म.प्र.)

■

लोक कल्याण ही श्रेष्ठ यज्ञ

नारदजी ने व्यासजी से कहा था कि ''भगवन् महाभारत में आपने भक्ति की कमी रक्खी, इसलिए आपको शांति नहीं मिल रही है। अब आप कोई ऐसा ग्रंथ निर्माण कीजिए, जिससे मनुष्यों में भक्ति का प्रसार हो। इसके फलस्वरूप आपको शांति मिलेगी। इसी पर व्यास भगवान ने श्रीमद्भागवत का सृजन किया।

पर भगवद्गीता भी तो महाभारत का ही अंग है और गीता भक्तिमार्ग से शून्य नहीं है। इसलिए यह कहना कि महाभारत में भक्ति को स्थान नहीं है, सर्वथा सही नहीं कहा जा सकता।

भागवत धर्म के अंतर्गत कर्मयोग और भक्ति दोनों का ही समावेश है, जो भगवद्गीता का विशेष रहा है।

पर गीता की भक्ति श्रीमद्भागवत की भक्ति से भिन्न है। गीता की भक्ति में भावावेश नहीं है। गीता की भक्ति तर्क और बुद्धि के आधार पर अवस्थित है।

वैसे तो गीता के हर अध्याय में कर्मयोग के साथ-साथ श्रीकृष्ण भगवान भक्ति पर भार देते ही रहे हैं। पर बारहवें अध्याय का नामकरण ही भक्तियोग किया है। इसलिए इस अध्याय में नामकरण ही भक्तियोग किया है। इसलिए इस अध्याय में भक्ति की विशेष चर्चा है।

भक्ति के संबंध में अर्जुन के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रारंभ में ही भगवान ने अर्जुन को बता दिया कि जो अक्षर, अनिर्देश्य, अव्यक्त, अचिंत्य, कूटथल, अचल और ध्रुव सत्ता को पूजा करते हैं, जो सर्वत्र सम बुद्धि रखते हैं, इंद्रियों का निग्रह करते हैं, वे सर्वभूतों के हित की कामना करनेवाले मुझ ईश्वर को ही प्राप्त होते हैं। पर साथ ही अर्जुन को यह भी बता दिया कि देह-धारियों के लिए अव्यक्त ईश्वर की यह उपासना कठिन है, यह कहकर श्रीकृष्ण ने सगुण उपासना को अपेक्षाकृत अधिक सुलभ बताकर इसी पर भार दे दिया और साथ ही इस मार्ग की विस्तारपूर्वक चर्चा भी की।

उन्होंने कहा– ''जो सारे कर्म मुझमें अर्पण करते हैं, मेरा ही ध्यान करते हैं, मेरी ही अनन्य भाव से उपासना करते हैं, उनका मैं संसार-सागर से शीघ्र उद्धार कर देता हूँ। इसलिए हे अर्जुन तू अपना मन मुझ पर ही लगा। अपनी बुद्धि का निवास भी मेरे ही भीतर कर। ऐसा करने से तेरा निवास भी मेरे भीतर ही स्थित हो जायेगा। जो प्राणी मात्र से मैत्री करता है, दयावान, जिसमें 'मैं और मेरा' ऐसी वासना विलीन हो गयी है, सुख और दु:ख से जो अतीत है, क्षमावान है, सदा सन्तुष्ट है, जो यत्नवान है, दृढ़-निश्चयवाला है, मन और बुद्धि को मुझमें संपूर्णतया अर्पण करता है, वह मेरा भक्त है और वह मुझे अत्यन्त प्रिय है। जिससे न लोग क्षुब्ध होते हैं, न वह लोगों से क्षुब्ध होता है, हर्ष और क्रोध से जो अतीत है, न भयभीत है, जिसने इच्छा का त्याग कर दिया है, शुद्ध है, चतुर है, कामना रहित है, व्यथा से रहित है, जिसने संकल्पों का त्याग कर दिया है, जो न तो किसी वस्तु से प्रेम करता है और न द्वेष करता है, न चिंता करता है, और न इच्छा करता है, शुभ-अशुभ में जो समान है, मित्र और शत्रु से समान भाव से जो व्यवहार करता है, मान और अपमान में भी जो समान है, ठंडी-गर्मी, सुख-दु:ख से विचलित नहीं होता, किसी वस्तु में आसक्ति नहीं है, निंदा-स्तुति में समान है, अधिक नहीं बोलता, जो भी मिल जाये उसी से संतुष्ट है, बुद्धि जिसकी स्थिर है, वह मेरा भक्त है और वही मुझे प्रिय है। इस तरह विस्तारपूर्वक भक्त के छत्तीस लक्षण गीताचार्य ने बतलाये हैं। रास-क्रीड़ा की या तो नाम-स्मरण की कोई महिमा नहीं गायी।

कर्मयोगी के लक्षणों की ऊपर चर्चा हो चुकी है। भक्त के लक्षणों की भी चर्चा हो चुकी। कर्मयोगी और स्थितप्रज्ञ और गुणातीत के लक्षण भी इन्हीं से मिलते-जुलते हैं। इन दो में भेद क्या? भक्ति को गीताचार्य ने एक ऐसे ऊँचे स्तर पर रख दिया है कि उसका रास-क्रिया से मेल नहीं खाता। वास्तविक स्थिति तो यह है कि न तो कर्मयोगी के लिए ही और न भक्तियोग के योगी के लिए ही संसार सागर से पार करना कोई सस्ता सौदा

है। दोनों को ही इंद्रिय-संयम करके इच्छा, द्वेष इत्यादि का त्याग करके अपने- आपको ईश्वर को समर्पण करना पड़ता है।

घृत, तिल और जो की सामग्रियों के एक बड़े संग्रह को नाना भाँति के वेद-मंत्रों के जटाधन और स्वरसहित पाठ के साथ यदि कोई अग्नि में होम कर यह समझता है कि मैंने एक बड़ा भारी यज्ञ करके आपके लिए स्वर्ग का द्वार खोल दिया है, तो वह धोखा खाता है। इन सामग्रियों को जला देना न तो यज्ञ है, न कर्मयोग ही है। वास्तव में मनुष्य जीवन ही यज्ञ है। यही एक प्रज्वलित अग्नि है। अच्छे कर्मों को लोक-कल्याण के लिए करना यही अग्नि में होम करना है।

कर्मयोग की विवेचना तो ऊपर हो चुकी है, कर्मयोगी के लक्षण भी बताये जा चुके हैं। उक्त नियमावलि के बंधनों सहित और उच्च हेतु को सामने देखकर जो कर्म किया जाता है वही कर्मयोग है और उसे करने वाला कर्मयोगी है। इस प्रकार के कर्म करनेवाला ईश्वर की ही पूजा करता है, क्योंकि ऐसे कर्म यज्ञ है। यह भगवान है। इसलिए कर्म भी ईश्वर है। और ऐसे कर्मयोगी अपने कर्मों से ईश्वर की ही पूजा करते हैं।

इस तरह भक्ति-मार्ग का पथिक जो यह समझता है कि अंत समय मे अजामिल की तरह नारायण नाम के उच्चारण मात्र से या तो नित्य राम-नाम की एक हजार माला फेर देने मात्र से अंत समय में बैकुंठ से विष्णु के पार्षद आकर यमदूतों को भगाकर नामोच्चारक मृतक को विमान में बैठाकर सीधे बैकुठ ले जायेंगे, वह भी धोखा ही खाता है। ''नर से साथ सूआ हर बोलै, राम प्रताप न जाणै''। बैकुण्ठ का मार्ग इतना सहल नहीं है। 'सूली ऊपर सेज पिया की' इस सूली पर सोना यही एक भक्ति है। पर ''यदग्रे विषयमिव परिणामे अमृतोपमम्'' जो प्रारंभ में विष, पर अंत में अमृत है वह ही मुमुक्षु का मार्ग है। कर्मयोगी और भक्त दोनों का एक ही मार्ग है। मंसूर को जब सूली पर चढ़ाया जा रहा था। तब सूली के तख्ते पर से पुकारकर उसने कहा, ''इश्कबाजो, यह स्वर्ग की सीढ़ी है। जिसको स्वर्ग चलना हो वह मेरे साथ आ जाये,'' भगवान का मार्ग यह भोगमार्ग कदापि नहीं है। चाहे वह कर्मयोग का पथिक हो, चाहे भक्ति मार्ग का। इस दैवी रास्ते में विकट घाटियाँ हैं, ''भ्रांति की पहाड़ी नदियाँ बिच अहंकार की लाट वड़ा विकट यमघाट''। इन दोनों मार्गों के पथिक को भोगों का त्याग करना पड़ता है, पर अंत में तो यही मार्ग ''अमृतोपमम्' है।

''यं लब्धता चापरं लाभं मन्यते नधिकंतत:' इस लाभ से बढ़कर दूसरा कोई लाभ नहीं है। ''यस्मिन् स्थितोन दु:खेन गुरुरणापिं वचाल्यते'' इसमें स्थित होने के बाद बड़े से बड़ा दु:ख भी मनुष्य को विचलित नहीं करता।

ऐसे लक्ष्य पर जिसे पहुँचना है, उसके लिए कर्मयोग और भक्ति दोनों ही उपरोक्त नियमों-सहित सस्ते सौदे हैं।

बारहवें अध्याय में भक्त और उसके लक्षणों का वर्णन है। पर गीता का यह अध्याय वास्तव में अपवाद नहीं है। गीता के हर अध्याय में कर्मयोग और भक्ति दोनों की ही बार-बार स्तुति की गयी है और इनका अनुमोदन आता रहता है। ''राग, भय और क्रोध से रहित होकर मुझमें मन लगाकर जो मेरा आश्रय लेकर ज्ञान से पवित्र हो गये हैं, ऐसे लोग मुझे ही पाते हैं।'' फिर कहते हैं, ''जो मुझे सब यज्ञ और तपों का भोक्ता और सब लोकों का स्वामी और सुहृद समझता है उसे शांति मिलती है।'' ''जो मुझे सब भूतों मे स्थिर समझकर मेरी ही पूजा करता है वह किसी भी हालत में हो, उसका निवास-स्थान मैं ही बन जाता हूँ।'' इसलिए हर समय मेरा स्मरण कर और कर्म कर।'' ध्यान रहे, 'स्मरण कर' और 'कर्म कर'।

''जो अनन्य भाव से मेरी उपासना करते हैं ऐसे योगियों के योग क्षेम की देखभाल मैं ही करता हूँ।'' ''जो बराबर मेरा कीर्तन करते रहते हैं, मेरे सामने नमन करते हैं, वे मेरी ही पूजा करते है।'' ''जो करता है, जो खाता है, जो देता है, जो तप करता है, वे सब मुझे ही अर्पण कर।''

दसवें अध्याय में भक्ति को दृढ करने के लिए भगवान अपनी विभूतियों का वर्णन करते हैं। ग्यारहवें में विश्वरूप का दर्शन कराते हैं, आगे चलकर फिर कहते हैं– ''एकाग्र होकर भक्ति द्वारा जो मेरी सेवा करता है वह तीनों गुणों का पार करके स्वयं ब्रह्म-स्वरूप हो जाता है।''

इस तरह सारी गीता में कर्मयोग और भक्ति दोनों का निंरतर आदेश और अनुमोदन जारी रहता है। कुछ श्लोक कर्मयोग की स्तुति के आते हैं, तो उसके पश्चात् शीघ्र ही भक्ति की प्रशंसा भी आ जाती है। इस तरह कर्म और भक्ति दोनों का सारी गीता में संमिश्रण है।

बीच-बीच में अर्जुन अपने समाधान के लिए शंका उठाता रहता है और श्रीकृष्ण उत्तर देते चले जाते हैं।

अर्जुन का विषाद तो समाप्त हो गया, पर बीच-बीच में अपने मन को संपूर्ण संतोष देने के लिए वह प्रश्न भी करता रहता है। जब काफी समाधान हो चुका, तब अंतिम समाधान के लिए प्रश्न करता है– ''हे कृष्ण, मुझे संन्यास का पूरा तत्व समझाइए और त्याग का तत्व भी पूरा बताइए।'' जब कृष्ण

उत्तर में कहते हैं, ''अर्जुन, जो कर्म कामना और स्वार्थ के लिए किये जाते हैं, उनका त्याग ही संन्यास है और कर्म के फलों में अनासक्त रहना इसी का नाम त्याग है।'' कुछ आचार्यो ने कहा है कि सभी कर्मो को पाप समझकर उनका त्याग कर देना चाहिये। पर दूसरे आचार्यो ने यह छोड़ने की चीजें नहीं है। इस पर मेरा निश्चित मत जो है, वह भी सुन। वह यह है कि यज्ञ, दान, तप कभी त्यागना नहीं क्योंकि यह मनुष्य को पावन करनेवाला है।

''देहधारी के लिए कर्म का सर्वथा त्याग असंभव है, इसलिए जिन्होंने कर्म-फल की आस छोड़ दी है उन्हें ही त्यागी कहना चाहिये। जिसने अहंभाव त्याग दिया है, जिसकी बुद्धि कर्मो में आसक्त नहीं है, वह यदि किसी का हनन भी करता है, तो वह मारने का दोषों से मुक्त है। जो मनुष्य अपना नित्य कर्म नहीं छोड़ता, वह अपने कर्तव्य कर्म द्वारा ही सिद्धि प्राप्त कर लेता है।

''जिस ईश्वर से भूत प्राणी उत्पन्न हुए हैं, और जिससे यह सारा संसार व्याप्त है, उसकी अपने कर्म द्वारा उपासना करने से ही सिद्धि मिलती है। कर्तव्य कर्म यदि दोष युक्त भी लगे तो उसे त्यागना नहीं चाहिये, क्योंकि जैसे धूम्र में अग्नि छिपी रहती है, उसी तरह शुभ कर्म भी कभी-कभी दोषों से आच्छादित दीखते हैं। पर अनासक्त होकर, मन को जीतकर, कामना छोड़कर कर्म दोष से आच्छादित लगते हो, तो भी कर्तव्य कर्म के पालन से विमुख नहीं होना चाहिये, क्योंकि कर्म करने से ही सिद्धि मिलती है। जो ब्रह्म में लीन है वह न तो इच्छा करता है न चिंता करता है, सब प्राणियों को सम दृष्टि से देखता है, वह असल में मेरी ही भक्ति करता है। जो तमाम कर्म करता हुआ भी मेरे आश्रय में रहता है उसे ही शाश्वत शांति मिलती है।''

भगवान और अुर्जन में काफी प्रश्नोत्तर हो चुके थे। अर्जुन का समाधान भी हो रहा था, तो भी बीच-बीच में अर्जुन प्रश्न करता ही जाता था। अर्जुन नर का अवतार था। भगवान नारायण के अवतार थे। अब इस प्रश्नोत्तरी का अंत करने के लिए नारायण के अवतार श्रीकृष्ण ने नर के अवतार अर्जुन को कहा, ''अर्जुन, सुन मेरा ध्यान कर, इसी से तेरी कठिनाइयाँ निर्मूल हो जायेंगी, पर यदि अहंकार के वश में आकर मेरा परामर्श तूं नहीं सुनेगा तो तेरा नाश हो जायेगा। यदि तूं अहंकार के वश में आकर यह समझता है कि मैं युद्ध नहीं करूँगा, अर्थात् अपना कर्तव्य कर्म नहीं करूँगा तो तेरा यह निर्णय मिथ्या है, क्योंकि तेरी प्रकृति ही तुझे खींचकर कर्मो की ओर ले जायेगी।

''मनुष्य अपने स्वभाव में बँधा हु
तू न भी चाहेगा, तो भी कर्म तो कर
हृदय में बैठा तमाम भूत प्राणियों को
अहंकार को छोड़कर भगवान की श
होकर अपना कर्तव्य कर्म करता जा।
भक्ति कर मुझे ही नमन कर। फिर त
जायेगा। इसको मेरी प्रतिज्ञा समझ। इ
करके अब तू मेरी शरण में आ जा। मैं
छोड़।' श्रीकृष्ण के इतना कहने के ब
गया। उसकी जबान को ताला लग ग
गांठ टूट गयी। ज्ञान का प्रकाश हो
''क्यों अर्जुन, अब तेरा, संदेह गया य
''हे अच्युत, मेरा संदेह मिट गया। अ
वैसे ही अपने कर्तव्य कर्म में लगूँगा

कर्मयोगी के अथवा भक्त के लक्ष
से पता चलेगा कि इन दोनों के सब
समुद्र का पानी चाहे बंगाल की खाड़ी
महासागर से अथवा तो पश्चिम के स
ही समान लवण-जल है। उसी तरह
पड़ी हैं और जान बूझकर व्यासजी ने
सारे उपदेश एक ही समान हैं।

गीता का स्वाध्याय हितकर है,
अध्याय के स्थित प्रज्ञ के लक्षणों का
अध्याय के भक्तों के लक्षणों को पढ़ें अ
के गुणातीतों का आचरण या सोलहवें अ
का लक्षण पढ़ें तो, वह सब के सब ए

श्रीकृष्ण गीता के द्वारा न केवल अ
समाज को उपदेश देते हैं। पर वे उपदेश
किसी को पिला नहीं सकते। मुमुक्षु को स
ही परिश्रम करना पड़ता है। यदि वह स्व
करे तो गीता या अन्य किसी भी शास्त्र

इन सब कड़े प्रतिबन्धों से जो कर्म
एक समान है, साधक को निराश नह
भीतर बैठा है, पुकारने मात्र की आ
दुर्लभ नहीं है। पर मुमुक्षत्व चाहिये। अ
का मार्ग दुर्लभ है। भक्त साधकों के लि

''राम कहै सुग्रीव सों लंका
आसलियाँ अलगी धणी, उद्य

संक्षेप में गीता का सार यह है। अपने कर्तव्य कर्म को कभी न छोड़। लगन से अपने स्वधर्म का आचरण करता जा। शुभ हेतु से सब प्राणियों की सेवा के लिए ही कर्मकर। फल के पीछे मत छोड़। इंद्रियों के भोगों से विरक्त हो। मन और बुद्धि पर निग्रह रख। भगवान में भरोसा रख। जो कर्म करे, वह उसी को अर्पण कर अहर्निश उस प्रभु का स्मरण कर। ईश्वर में और तुममें कोई भेद नहीं है, क्योंकि तुम्हारे में और अन्य भूतों में सब वही एक सत्ता व्यापक होकर स्थित है। इसी तरह तुम भी सभी में स्थित हो। इसलिए जो ब्रह्म है वह ही तुम हो। तुम भी ब्रह्म हो। द्वंद्वों से मुक्त रहो, सुख-दु:ख व मान-अपमान को समान समझो। चिंता छोड़ दो। उसका ध्यान अर्थात् सब प्राणियों में जो वह स्थित है उसी ईश्वर का ध्यान करो। इसका तात्पर्य यह है कि सब प्राणियों का ध्यान अर्थात् उनके हित के लिए ही कर्म करो।

''आदम़ खुदा नहीं, पर आदम खुदा से जुदा नहीं''– यह विश्व यही विराट् स्वरूप है। यही विश्व दर्शन है, ईश्वर-दर्शन भी यह ही है। तू भी वही है– ''तत्वमसि।'' जनक इत्यादि राज करते हुए, कर्म करते हुए भी अनासक्त रहे। धर्म, व्याध और तुलाधार भी कर्मों में अनासक्त थे। उन्हीं का अनुकरण करो। भगवान अपनी रचित सृष्टि और संसार के झंझटों में रमते हुए भी कमल जैसे जल में अलिप्त रहता है वैसे ही अलिप्त रहते हैं। तुम भी वैसा ही आचरण करो।

इतना कहने के पश्चात् भी अंत में जो तुम्हारी इच्छा हो सो करो।

इस पर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा, ''मैं स्वस्थ हूँ। अब आप जो कहोगे वही करूँगा।'' यह गीता का सार है।

हरेक अध्याय में विचरण करते हुए हम यह देखेंगे कि जो उपरोक्त सार बताया है उसी की सारी गीता में पुनरावृत्ति है। समुद्र का सारा जल, उसकी तरंगे, उसकी बूँदे एक ही प्रभु की सत्ता का चित्र है। एक ही शक्ति विश्व में व्याप्त है। द्वैत को कोई स्थान नहीं।

'अहं ब्रह्मास्मि' या 'तत्त्वमसि' का भी अर्थ यही है।

व्यासजी की कृपा से संजय को महाभारत युद्ध देखने के लिए दिव्य-दृष्टि और सुनने के लिए दिव्य श्रवण शक्ति मिल भी गयी थी। इसलिए वह दूर बैठा-बैठा भी युद्ध की सारी क्रियाएँ देखता रहता था, और वहाँ जो कुछ होता था उसे सुनता भी रहता था। यह सब देख और सुनकर सारा विवरण धृतराष्ट्र को सुनाता रहता था। उसने जब कृष्ण अर्जुन के इस अद्भुत वार्तालाप को अपनी दिव्य श्रवण शक्ति से सुना, तो वह विह्वल हो उठा और धृतराष्ट्र से कहने लगा, ''राजन, इस अद्भुत पुण्य संवाद को सुनकर मैं गद्‌गद् हो रहा हूँ और उसे याद करके और भगवान के अद्भुत स्वरूप को स्मरण करके मुझे महान विस्मय हो रहा है, और बार-बार हर्ष हो रहा है, हे राजन् मेरा निश्चय सुनो– जहँ कर्मयोगी योगेश्वर कृष्ण के रूप में कोई भी कर्मयोगी है, जहाँ अर्जुन के रूप में लगन वाला परिश्रमी कोई भी उद्योगी साधक है वहाँ निश्चय ही श्री है, विभूति है, विजय है और आनंद है। यह मेरा निश्चित मत जान लो।''

'कृष्ण बंदे जगत कुरुम्'
घनश्यामदास बिड़ला से साभार

■

BHAVANI SHANKAR SINGH

Then and Now

Eighty years ago when the entire nation was reeling under the colonial rule and a large section of people was fighting hard for the freedom, some of the people with ever-widening thought and creative endeavour set fresh parameters by organising a 'sabha' with a view of imparting education and all possible help to the middle-class and under-privileged younger generation. It was the time when illiteracy, superstition, prejudice and narrow-thinking reigned the society. Education was not available to all. Following the Jain philosophy of 'Right knowledge', Right path, Right character, some of the energetic and enthusiast people with right attitude came forward and broke new ground. Those people truely believed in the words and spirit of selfless service to mankind as preached by Jain religion. So, they started the benevolent works through 'S. S. Jain Sabha' not to make news, nor to gain popularity or to obtain political mileage but such men silently made a positive impact on the society. Eighty years is, undoubtedly, a long time and to carry on the spirit of benevolence, compassion and service is really a Himalayan task but the Sabha has successfully accomplished this task. For this, the credit must go to those who stood out in the crowd. They were people who established new trends, opened stable minds by activating the latent imagination of the people. They were the real leaders, the harbringers of change and growth. Their very first step was to set up 'Shree Jain Vidyalaya' in the heart of the megacity, Calcutta. From the very beginning, 'Shree Jain Vidyalaya, Kolkata' has been providing quality education to the pupils of all classes, castes and religions without causing unnecessary burden to the guardians. The school is popularly known not only for its outstanding teaching but for maintaining discipline and for the all-round development of the pupils also. A good number of alumni, very successful and famous in their respective fields in India and abroad, are the first-hand examples to substantiate the extra-ordinary achievement of the school. Today, the indiscriminate use of mediocore methods in the realm of excellence has lowered the level of education and the process of building of characters. Yet, Shree Jain Vidyalaya under the able guidance of S.S. Jain Sabha has earned very good name and fame and is still setting a benchmark for another generation of creative minds.

Over the last eight decades, there was been a deterioration in morality, ethics, judgement, assessment of what is right or wrong, good and bad and fine and ordinary. The chaos we see around us, the object lack of respect for integrity, the mockery of excellence – each has plunged our society into an absymal state in which negatives dominate. In such adverse circumstances, the generous deeds of S.S. Jain Sabha need to be admired and appreciated.

Encouraged by the success of Shree Jain Vidyalaya, Brabourne Road, Calcutta, the Sabha set up another school at Howrah, separately for boys and girls in the same building and in very short span of time, the school became a huge success and is still doing a fantastic job. Similar is the fact with Shree Jain Hospital and Research Centre, Howrah. In a very brief period, this hosptital, equipped with the latest facilities and techniques, has become the only hope for the poor patients. The hospital has been regularly organising camps for providing artificial limbs, eye-operation and plastic surgery. An another school upto secondary level has been started at Jagatdal. Two years ago, the Sabha entered the vast world of higher education and technical education by founding Tara Devi Harakh Chand Kankaria Jain College at Cossipore. Two streams, Microbiology and Computer Science (B.Sc.-Hons) affiliated under Calcutta University are attracting good numbers of students.

Besides these, the Society has been actively involved in various activities concerning the rural developments in the state of West Bengal.

As the Jain religion teaches all the human beings to go on and not to be stale (charaveti), the Jain Sabha is following this noble teaching and is still pursuing the charitable works. The Sabhs has various future plans for the promising talents. One Dental College with Hostel facility, Nursing School/College with Hospital facilities, Degree College of Commerce alongwith technical and vocational courses and an English Medium School with Hospital facilities are some of projects in pipeline. Observing the determination and devotion of the officials of the Sabha, these projects are sure to blossom into successful institutions in the near future.

So, Shree S. S. Jain Sabha deserves all the praise from every hook and corner for its indomitable spirit, incredible achievement and unparallel attitude for the upliftment of the have-nots of the society. I hope and believe that the Sabha will prove to be a torch-bearer for spreading education among the masses of the society. The Sabha's never-ending efforts for the welfare of the general mankind must be a continous process. Hats off to the Sabha and its bonafide officials for doing outstanding deeds.

Asst. Teacher, Shree Jain Vidyalaya, Kolkata

■

बनेचन्द मालू

जीवन का सफर

(आत्मा और मन का संवाद)

जन्म स्थान से श्मशान तक का
छोटा सा सफर।
इसे भी तय करने में न जाने,
आदमी को कितने लगाने पड़ते हैं चक्कर।

मैं तो जन्मते ही बोला
चलो छोटा सा रास्ता है कर लें जल्दी से पार।
जवाब मिला बस अभी?
अभी तो आये ही हो,
अभी तो कुछ देखा ही नही है संसार।

मैने कहा-संसार?
मैं तो जाने के लिए आया हूँ।
थोड़ी सी साधना करूं और हो जाऊँ पार।
क्योंकि संसार तो है एकदम असार।

बोला धत्तेरे की।
किसने भर दिया यह विचार?
बिना देखे कैसे जानोगे?
खुद देख लो तो मेरी बात मानोगे।

बोला-बड़ा मधुर होता है बचपन।
भोला-भाला, छलकपट रहित मन।
आसपास की घटनाओं में बेखबर।
हंसते-खेलते पता नहीं कब
बीत जाएगा यह सफर।

मैनें पूछा- फिर?
बोला बचपन में ही मत हो जाओ थिर।
आगे चलो।
यह किशोरावस्था है।
कितनी सुन्दर व्यवस्था है।
घर की जिम्मेदारी से मुक्त।
हरदम खेलने-कूदने को उन्मुक्त,
खाओ पीओ और मौज करो।
ऐसी जिन्दगी से क्यों डरो?
मैनें पूछा-आगे?
बोला-क्या जल्दी है
क्यों जाते हो भागे?
अभी तो नशीली जवानी आई है,
हर घड़ी रंगीली रसीली बातें सुहाई है।
आगे की मत सोचो
वह सब करते रहो जो मन भाए।
जवानी में तो होता ही ऐसा है,
कोई मस्ती में नाचे,
तो कोई रोमांटिक गाना गाये।
पता नहीं लगता-समय कैसे बीत जाये।

मैने कहा-अच्छा! तो उसके बाद?
बोला-धीरज रखो।
अभी तो आयेगा जीवन का असली स्वाद।
अब तक पूरी घर गृहस्थी बस जायेगी।
बेटियां ब्याह कर चली जायेंगी,
बेटे ब्याहेंगे बहुएं आयेंगी,
पोते होंगे पोतियां होंगी,
दोहिते होंगे, दोहितियां होंगी।
पूरी फौज इकट्ठी हो जायेगी।
भरे पूरे परिवार में पता ही नहीं चलेगा।
प्रौढ़ावस्था कब गुजर जायेगी।

वहुत सुन्दर आगे अव?
आगे अव?
आगे अव तुम वृद्ध हो गये हो,
तुम्हें वुजुर्ग कहेंगे सव
हर वात में तुमसे सलाह लेंगे।
घर में तुम सव से वड़े होंगे,
सव तुमको मान देंगे।
हर वात में तुमको आगे रखेंगे।
सव तुम्हारे सारे जीवन के,
अनुभवों का मीठा फल चखेंगे।
क्या ही गर्व की वात होगी,
जव सारे समाज में तुम्हारी,
चोटी पर ख्यात होगी।
मैंने कहा-अरे वाह!
जीवन ऐसा सुन्दर है?
तव तो आनन्द का समुन्दर है।
तव तो जी करता है जिये ही जाएं।
जाने की जल्दी क्यों मचायें।

वोला-हां-हां ।
तभी तो कहता हूं इतनी जल्दी क्या है?
जो आनन्द यहां है वो और कहां है?
मैं भरमा गया-
मन की वातों में आ गया।
वड़े तरीके से दिखाये गये।
सब्ज वागों में लुभा गया।
सारी झिझक निकाल कर,
हो गया खड़ा कस कर कमर।
चल पड़ा तय करने,
जीवन के लम्वे सफर की डगर।
यह रास्ता ही ऐसा है,
एक वार चल पड़ा तो भटक गया, भरमा गया
इससे मुझे उसने आगाह भी नहीं किया।
भटकने से वचने का कोई गुरुमंत्र भी नहीं दिया।

हुआ यह-
वचपन में ही आसपास के वातावरणों को देख
मन एकदम कुण्ठा से भर गया।
किशोरावस्था में ड्रग एंव नशे का मजा तो लिया,
पर नतीजा देखकर एकदम डर गया।
जवानी में भोग विलास में तो रहा लिप्त जरुर,
पर खो वैठा जीवन का सही दिशा दर्शन,
और गंवा वैठा गरुर।
प्रौढ़ावस्था में परिवार तो पूरा बस गया पर,
रात दिन गृहक्लेश, ईर्ष्या, द्वेष का
नाग गहरा डंस गया।

वृद्धावस्था भी आ गई-
अलवत्ता अपने समय से पहले ही आई।
हालत यह हुई-
कानों से कम सुने और
आंखों से मुश्किल से दे दिखाई।
दांतों ने कब की अपनी राह ली,
कमर झुक गई,
सहारे के लिए हाथों में लाठी आई।
मुझ से सलाह मांगनी तो दूर,
कभी किसी की गलती पर टोक दूं
तो सुनना पड़े-
ऐसे ही बकता है,
बुद्धि जो सठियाई।

बुजुर्गीयत की इज्जत तो दूर,
मेरी घर में हाजिरी भी किसी को नही सुहाई।
भगवान का नाम कभी सीखा तो नहीं था,
पर ऐसी दुर्दशा में पता नहीं कहाँ से आ गया,
बोला-भगवान!
हाथ जोड़कर तुम्हारी देता हूं दुहाई।
अव जल्दी बुलाओ।
जन्म स्थान से श्मशान तक का,
छोटा सा सफर,
अव और लम्वा मत वनाओ।
अव और लम्वा मत वनाओ।

कोलकाता

■

विपिन जारोली

एक कालजयी स्तोत्र : भक्तामर स्तोत्र

चरम तीर्थंकर श्रमण भगवन्त महावीर स्वामी की अविछिन्न श्रमण-परम्परा में महामुनि मानतुंगाचार्य विरचित 'भक्तामर स्तोत्र' अपरनाम 'आदिनाथ स्तोत्र' एक महाप्रभावक एवं कालजयी स्तोत्र है। वसन्त तिलका (मधु माधवी) छन्द में निबद्ध क्लासिकल (उच्च स्तरीय शास्त्रीय) अलंकृत शैली में संस्कृत भाषा में रचित कई दृष्टियों से सर्वोपरि इस मनोमुग्धहारी स्तोत्र में परिष्कृत भाषा सौष्ठव, सहजगम्य छन्द प्रयोग, साहित्यिक सौन्दर्य, निर्दोष काव्य-कला, उपयुक्त छन्द, अर्थ, अलंकारों की छवि दर्शनीय है तथा इसमें अथ से इति एक भक्तिरस की अमीय धारा प्रवाहित है।

''भक्तामर स्तोत्र'' आह्लादक, भक्तिरसोत्पादक, वीतरागदशा प्रदायक स्तुति ''तमसो मा ज्योतिर्गमय'' की एक अनूठी, अनुपम, अद्वितीय काव्य कृति है। इसका प्रत्येक श्लोक ''सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम्'' की छटा समेटे हुए हैं। श्लोकों में प्रयुक्त उपमा, उपमेय, उत्प्रेक्षा, रूपक, अर्थान्तरन्यास, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों की पावन सुर-सरिता श्रद्धालुओं को परमात्म तत्व की अवगाहना कराती है।

आध्यात्मिक दृष्टि से इस स्तोत्र में जहां एक ओर भक्ति, काव्य, दर्शन तथा जैन धर्म तत्व के सिद्धान्तों एवं आत्मा और कर्म के सनातन संग्राम का स्वरूप, चिन्तन तथा विवेचन है, वहां दूसरी ओर लौकिक दृष्टि से विपदा, आपदा, भय, कष्ट पीड़ा परीक्षा प्रतियोगिता, उत्पीड़न, चुनौती आदि त्रासों से मुक्ति क कल्याणकारी सुख, संम्पदा, संतोष, शान्तिदायक स्वरूप, चित्र और विवेचन भी स्पष्टत: दृष्टिगोचर होता है।

'भक्तामर स्तोत्र' के सम्बन्ध में संस्कृत-साहित्य वे विश्रुत विद्वान डॉ० ए० बी० कीथ का कथन है' ''यह स्तो पारमात्मिक दृष्टि से आत्म-कल्याणार्थ सृजित है और इसक प्रत्येक श्लोक आध्यात्मिक और देव काव्य के अन्तर्गत आत है। इसका प्रत्येक पद, पंक्ति और शब्द सहज, सरल, सरस एव सुगम है। पढ़ने तथा श्रवण मात्र से इसके यथार्थ भावों का बोध होता है। अर्थ की श्रेष्ठता बोधक उज्ज्वल पदों का नियोजन होने से प्रसादगुण निहित है। एक वस्तु के गुण अन्य वस्तुओं के गुण के नियोजित होने के कारण इसमें समाधि गुण है। परस्पर गुम्फित शब्द रचना होने से इसमें श्लेष गुण समाहित है। छोटे बड़े समासों-संधियों के प्रयोग तथा कोमल कान्त पदावली शब्दावली के होने से यह ओजगुण समन्वित है। यहां तक वि ''टवर्ग' के कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं होने से यह स्तोत्र माधुर गुण से सराबोर है।''

ऐसे आध्यात्मिक काव्य, कला, भाषा, भक्ति, प्रसाद माधुर्य, ओज भावों आदि गुणों /विशेषताओं से सुसम्पन्न सहज सरल, सरस, सहज, कोमलकान्त शब्दावली-पदावली अदि से प्रवहमान स्तोत्र का प्रारम्भ ''भक्तामर'' शब्द से होने से श्रद्धुलाओं ने इसे ''भक्तामर स्तोत्र'' से अभिहित किया है, जो कि सर्वत्र प्रचलित है। स्तोत्र के द्वितीय श्लोक में चतुर्थ चरण के अन्त में ''प्रथमं जिनेन्द्रम्'' के उल्लेख से स्पष्ट है कि यह स्तोत्र प्रथम जिनेन्द्र तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की भक्ति पूर्ण स्तुति में विरचित कालजयी स्तोत्र है।

''भक्तामर स्तोत्र'' एक कालजयी स्तोत्र इसलिए है कि जब से इसकी रचना हुई है तब से लेकर आज तक जैन धर्म दर्शन की सब ही सम्प्रदायों, उप सम्प्रदायों में समानरूप से तथा जैनेतर विद्वानों-श्रद्धालुओं द्वारा अबाध गति से पढ़ा तथा पाठ किया जाता रहा है और भविष्य में अनन्तकाल तक इसी प्रकार पढ़ा तथा पाठ किया जाता रहेगा।

इस स्तोत्र में कुल ४८ (अड़तालीस) श्लोक निबद्ध हैं कुछ विद्वान, श्रद्धालु तथा संत इसे ४४ (चवालीस) तथा कुछ ५२ (बावन) श्लोकी इस स्तोत्र को मानते हैं। ४९ (उनचास) से लेकर ५२ (बावन) श्लोकों का जहां तक सम्बन्ध है, ये ४ श्लोक मेरे संग्रह में ५ (पांच) प्रकार के हैं। इससे लगता है कि संभवत: किन्हीं स्तुतिकारों ने अपनी-अपनी भक्ति के आवेग में इन्हें रचकर इस स्तोत्र में सम्मिलित कर लिये हों, जो भी हो।

यह विवाद का विषय नहीं है कि स्तोत्र में श्लोकों की संख्या कितनी है और कितनी होनी चाहिये, यह विषय तो श्रद्धा, भक्ति और स्तुति का है, संख्या का नहीं।

भक्ति रसात्मक विश्व स्तोत्र साहित्य में ''भक्तामर स्तोत्र'' का विशिष्ट स्थान है और इसका प्रत्येक पद सिद्धि दायक मंत्र है। ऐसे अनुपम, अनूठे, लोकोत्तर एवं कृति के कृतिकार श्री मानतुंगाचार्य के जीवन व समय के सम्बनथ में ऐतिहासिक कोई प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। जैन धर्म-दर्शन के ज्ञाता, इतिहासकार डा ज्योति प्रसाद जैन, लखनऊ तथा तीर्थकर मासिक पत्रिका के सम्पादक परम विद्वान डॉ० नेमिचन्द जैन, इन्दौर के अनुसार ''जैन परम्परा में करीव वारह मानतुंग नाम के संत हुए हैं। इनमें से ''भक्तामर स्तोत्र'' के रचनाकार कौन से मानतुंग है, कहा नहीं जा सकता। कृतिकार समय के प्रवाह में वह जाता है, विलीन हो जाता है, उसकी कृति अपनी अनुपमता, श्रेष्ठता अद्‌भुतता, गुणवत्ता, महात्म्य आदि विशेषताओं के कारण काल को जीत लेती है, कालजयी वन जाती है। इन्हीं विशेषताओं के कारण ''भक्तामर स्तोत्र'' एक काजलयी कृति-रचना है।

इस स्तोत्र के आविर्भाव के सम्वन्ध में मतैक्य नहीं हैं। कुछ विद्वान इसका आविर्भाव वाराणसी के राजा हर्षदेव के समय में, तो कुछ विद्वान उज्जैन के राजा भोजदेव के समय मे होना मानते हैं, किन्तु लोक प्रचलित धारणा तथा मान्यता के अनुसार कहा व सुना जाता है कि मालव अंचल (मध्य प्रदेश) की शस्य श्यामला ऐतिहासिक धारा नगरी के महान् प्रतापी शासक साहित्य, संस्कृति एवं कला के उन्नायक राजा भोजदेव परमार (विक्रम की सातवीं सदी) ने अपने मंत्री जैन धर्मावलम्वी श्री मतिसागर से एक दिन वात ही वात में कहा कि ''हमारी राजसभा मे कई व्राह्मणधर्मी विद्वानों द्वारा अद्‌भुत चमत्कार प्रदर्शित किये गये हैं। यथा कलिकुलगुरु कालिदास द्वारा कालिका की उपासना-आराधना से अपने कटे हुए हाथ पैरों को जोड़ना, कवि माघ द्वारा सूर्योपासना से अपना कुष्ठ रोग दूर करना, कवि भारवि द्वारा अम्विका की भक्ति से अपना जलोदर रोग दूर करना आदि। क्या तुम्हारे जैन धर्म में भी कोई संत, विद्वान या सुकवि हैं जो ऐसे अद्‌भुत चमत्कार प्रदर्शन की क्षमता रखता है?''

संयोग ऐसा वना कि कुछ ही दिनों वाद ग्रामानुग्राम धर्मोद्योत करते हुए महामुनि श्री मानतुंगाचार्य का धारा नगरी में पदार्पण हुआ, मंत्री श्री मतिसागर ने आचार्यश्री के पदार्पण के समाचार राजा से कहे। साथ ही यह संकेत भी किया कि आचार्यश्री एक महाप्रभावक संत हैं, आप उन्हें राज्यसभा में आमंत्रित कीजिए। वे कोई न कोई अद्‌भुत चमत्कार कर आपको अवश्य ही सन्तुष्ट करेंगे। राजा ने अपने को भेजकर आचार्यश्री को राजसभा में आकर कोई दिखलाने का संदेश भिजवाया, किन्तु सांसारिक क्रिया-विषयों से विरक्त, वीतराग मार्ग के पथिक आचार्यश्री संत-समाचारी में किसी प्रकार का चमत्कार प्रदर्शित निषेध होने से राजसभा में उपस्थित होने से इन्कार क राजा ने इसे राजाज्ञा का उल्लंघन मान कुपित हो अ आदेश दिया कि आचार्यश्री को वन्दी वनाकर रा उपस्थित किया जाय। आदेशानुसार आचार्यश्री को रा उपस्थित किया गाय। वहां उन्हें आपाद कंठ दृढ़ लौह श् से वेष्ठित कर तलघर में डाल दिया और वहां जितने उपलब्ध थे जड़ दिये। ऐसी विषम परिस्थिति में अ अकस्मात आये उपसर्ग को देख आचार्य श्री निरपेक्ष अपने आराध्य भगवान ऋषभदेव की स्तुति में लीन हु का प्रवाह ऐसा प्रवहमान हुआ कि इधर से स्तुति में श्लोक की रचना करते गये और इधर एक-एक ता गया। स्तुति में आचार्यश्री के अंतर से ज्यों ही ''आप शृंखला वेष्ठितांगा'' श्लोक प्रस्फुटित हुआ कि शृंखलाएं कच्चे सूत (धागे) की तरह टूट कर विखर स्तुति में स्तोत्र पूर्णकर वे राजसभा में उपस्थित हो ग

इस चमत्कार पूर्ण घटना से राजा, दरवारी (तथा नगरवासी वहुत ही प्रभावित हुए। जैन धर्म क प्रभावना हुई और वहां उपस्थित सभी ने आचार्य श्री भक्ति पूर्व नमन किया। उनकी जय-जयकार की और स्वीकार किया। इससे स्पष्ट है कि भक्तामर स्तोत्र ए प्रभावी, चमत्कारी, महिमावन्त एवं मंगलकारी स्तोत्र स्तोत्र के माध्यम से भक्त, भक्ति एवं समर्पण के स चढ़कर स्तोत्रकार (रचयिता) की तरह ही अपने आ साथ घनिष्ट एकात्मकता की अनुभूति करता हुआ परम अनन्त शक्तियों का पारस स्पर्श पाकर जैसे स्वयं के अनन्त शक्ति का उद्‌भव तथा प्रस्फुटन की अनुभूति क है।

ऐसे अद्वितीय, अनूठे, अद्‌भुत एवं भक्तिरस से स्तोत्र से जैन धर्मावलम्वियों के अतिरिक्त कई जैनेत्तर संस्कृत भाषाविद पंडित भी प्रभावित हैं। मैक्समूलर वेवर, हरमन जैकोवी, विण्टर नित्स शालोट, क्राउ पाश्चात्य प्राच्यविदों विद्वानों तथा भारतीय विद्वानों भारतीय विद्वानों-मनीषियों में सर्वश्री पं० दुर्गाप्रसाद काशीनाथ शर्मा, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा वल

उपाध्याय, भोला शंकर व्यास, गिरधर शर्मा ''नवरत्न'', पं. काशीनाथ त्रिवेदी, पं० गिरधारीलाल शास्त्री, डॉ० शंकरदयाल शर्मा, मोतीलाल मेनारिया, डॉ० भगवतीलाल व्यास आदि ने इस स्तोत्र की श्रेष्ठता से मुग्ध प्रभावित हो मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। इतना ही नहीं हर्मन जैकोबी ने जर्मन भाषा में, क्राउसे महाशय और अशोक कुमार सक्सेना ने आंग्ल भाषा में, पं० गिरधर शर्मा नवरत्न' ने समश्लोकी हिन्दी भाषा में, पं० गिरधारीलाल शास्त्री ने राजस्थानी की विभाषा मेवाड़ अंचल में बोली जाने वाली भाषा मेवाड़ी में, पं० देवदत्त ओझा ने लघु छन्द दोहा में तथा हेमराज पाण्डेय, पं० बालकृष्ण शर्मा, पं० बालमुकुन्द जोशी, ओम प्रकाश कश्यप आदि कई विभिन्न भाषा-भाषी विद्वानों, पंडितों, कवियों, अनुवादकों साहित्यानुरागी श्रद्धालुओं ने इस स्तोत्र का विविध भाषा, छन्दों, राग-रागिनियों में पद्यानुवाद कर अपने आपको गौरवान्वित किया है। कई विभिन्न भाषा-भाषी विद्वानों ने इस स्तोत्र पर टीकाएं, इसके प्रभाव से सम्बन्धित कथा-कहानियां, वार्ताएँ लिखीं। कई श्रद्धालु-भक्तों ने इसके आधार पर अपने आराध्य की स्तुति स्तवना में विभिन्न स्तोत्रों की तथा कुछ कवियों ने इसके पदों को लेकर पाद पूर्ति स्तोत्रों की रचनाएं की। कुछ विद्वानों ने इसके श्लोकों में प्रयुक्त शव्दों के उच्चारण से उत्पन ध्वनि तरंगों को रेखांकित कर यंत्रों की तथा अक्षरों का अक्षरों से तारतम्य विठाकर ऋद्धियों, मंत्रों, बीजाक्षरों की सर्जनाएं की। कुछ पंडितों, क्रिया काण्डी/क्रियाकर्मियों ने स्तोत्र का पाठ करते समय वातावरण शुद्ध और चित्त/मन एकाग्र रहे, इस दृष्टि से पूजा-अर्चना के विधि-विधान निर्मित किये, इसके अतिरिक्त कई श्रद्धालुओं ने अपनी-अपनी दृष्टि से अपनी-अपनी भाषा में इस स्तोत्र के अनुवाद किये, व्याख्याएं तथा विवेचनाएं लिखी। कई श्रद्धालुओं ने इसे स्वर, लय, तालवद्ध कर गाया और कैसेट्स तैयार किये। कई भक्त कलाकारों ने इसके श्लोकों के भावों को कल्पना में संजोकर इसे चित्रित किया, सचित्र संस्करण प्रकाशित किये और विडियों कैसेट्स तथा सी०डी० बनाये।

भक्तामर स्तोत्र की सर्व प्रियता, मान्यता एवं महात्म्य का जहां तक सम्वन्ध है, यहां यह उल्लेख करना अप्रासंगिक व अतिशयोक्ति पूर्ण न होगा कि जैन धर्म में अनेकानेक स्तोत्रों में विविध आकार-प्रकार में यदि किसी स्तोत्र के सर्वाधिक संस्करण लाखों लाख प्रतियों में प्रकाशित हैं तो वे एक मात्र ''भक्तामर स्तोत्र'' के ही हैं।

इस आलेख को समाप्त करूं इसके पूर्व में पाठकों का ध्यान एक ऐसी उपलब्धि की ओर आकर्षित करना चाहूँगा कि इस स्तोत्र के विभिन्न भाषाओं में हुए १३१ (एक सौ इकतीस) अनुवाद हमें अव तक उपलब्ध हुए हैं जिनमें से १२४ (एकसौ चौबीस) अनुवादों का एक वृहद् संकलन (ग्रंथ) लगभग ११५० (एक हजार एक सौ पचास) पृष्ठों में ''भक्तामर भारती'' नाम से प्रकाशित हो चुका है जिसका प्रकाशन श्री खेमराज जैन चैरिटेवल ट्रस्ट सागर से हुआ है और संकलन-सम्पादन स्व० पं० कमलकुमार जैन शास्त्री ''कुमुद'' खुरई (जिला-सागर म०प्र०) और इस आलेख के लेखक (विपिन जारोली, कानोड़) ने किया है। इस ग्रंथ का द्वितीय संस्करण भी प्रकाशित हो चुका है।

राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अकादमी की मासिक पत्रिका ''जागती जोत'' के यशस्वी सम्पादक साहित्यकार डॉ० भगवतीलाल व्यास के आलेख : -

''भक्ति एवं काव्य का अनूठा संगम भक्तामर भारती'' के अनुसार ''भक्तामर भारती में सर्वाधिक चौरानवे अनुवाद हिन्दी में हैं। मराठी में नौ, गुजराती में आठ, राजस्थानी में व उर्दू में दो-दो, वंगाली, अवधी, तमिल, कन्नड़, अंग्रेजी तथा मेवाड़ी में एक-एक अनुवाद प्रकाशित है। इस ग्रंथ के सम्पादकों को यह श्रेय जाता है कि छत्तीस ऐसे पद्यानुवाद हैं जो कि अप्रकाशित हैं, उन्हें शोधकर इस संकलन में सम्मिलित कर प्रकाशित किये हैं।''

''भक्तामर भारती'' के सम्पादक द्वय की चयन दृष्टि की श्लाघा इस दृष्टि से भी की जानी चहिये कि पहली वार किसी कृति के इतने सारे पद्यानुपाठ पाठकों एवं श्रद्धालुओं को उपलब्ध करवाए गए हैं। इस संकलन में सवसे पुराना पद्यानुवाद श्री हेमराज पाण्डेय द्वारा किया गया है, जिसका काल १६७० ई० है। ''भक्तामर भारती'' में संकलित इतने सारे पद्यानुवादों का होना इस वात का द्योतक है कि मूल कृति (भक्तामर स्तोत्र) अपने आप में कितनी उत्कृष्ट एवं लोकप्रिय है। ऐसे युनिवर्सल एप्रोच वाले ग्रंथों का प्रणयन कभी-कभी ही हो पाता है। इस संकलन / ग्रंथ से आम पाठकों, श्रद्धालुओं, साहित्य मर्मज्ञों तथा शोधार्थियों को वड़ी सुविधा हो गई है।

नि:सन्देह ''भक्तामर भारती'' अपने आप में अद्वितीय एवं अनूठा ग्रंथ है और भक्तामर स्तोत्र भक्ति रसात्मक साहित्य में एक काजलयी स्तोत्र है।

दीवाकर दीप, गांधी चौक, कानोड़

■

डॉ. वसुधरा मिश्र

हिन्दी पत्रकारिता : कल और आज

महात्मा गांधी ने कहा था कि समाचार पत्र का पहला उद्देश्य जनता की इच्छाओं, विचारों को समझना और उन्हें व्यक्त करना है। दूसरा उद्देश्य जनता में वांछनीय भावनाओं को जाग्रत करना है। तीसरा उद्देश्य सार्वजनिक दोषों को निर्भयता पूर्वक प्रकट करना है। (महात्मा गांधी १८०८ ई०)।

समाचार पत्र समाज की नब्ज को पकड़ते हैं, उसकी जाँच करते हैं, दैनिक जीवन से लेकर विश्व तक की गतिविधियों, राष्ट्र की उन्नति-अवनति, विभिन्न ज्वलंत समस्याओं की खबर रखते हैं। 'दी प्रेस एण्ड अमेरीका' में समाचार पत्रों की सात विशेषताएँ वर्णित हैं-समाचार पत्र सप्ताह में कम से कम एक बार प्रकाशित हों, हस्तलिखित पत्रों से भिन्न रूप में प्रेस मशीन द्वारा मुद्रण हो, मूल्य ऐसा रखा जाय जो सभी के लिए सुलभ हो, साक्षर व्यक्तियों की रूचि के अनुकूल हो, नियत समय पर प्रकाशित हो, प्रकाशन में स्थायित्व हो। इस प्रकार समाचार पत्र सभी वर्ग के व्यक्तियों के लिए उनका शिक्षक, आदर्श उदाहरण और परामर्शदाता है।

जनहित के लिए लिखने के कारण समाचार पत्र अपने साहस, दूरदर्शिता तथा लोकहित के कारण लोकप्रिय हो जाते हैं। स्वतंत्र होने के बाद भारतवासियों पर दुगुने दायित्व का बोझ आ पड़ा। 'आज' में इस विषय में एक खबर प्रकाशित की थी जिसमें लिखा गया कि अंग्रेज भारत त्यागकर अवश्य जा रहे हैं किन्तु हमें दुर्बल और अशक्त बनाकर जा रहे हैं। हमारे सामने कई सामाजिक, शैक्षिक, सांप्रदायिक समस्याएं मुँह बाये खड़ी हैं, उन्हें दूर करना हमारी तत्काल आवश्यकता है। हमारे समाचारपत्रों, पत्रकारों ने इस क्षेत्र में संकल्प बद्ध होकर देश हित के लिए अपनी महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाई। संविधान का निर्माण, राष्ट्रध्वज, राष्ट्रचिह्न, राष्ट्रभाषा का निर्धारण, गांधी दर्शन, पंचशील योजना, लोकतांत्रिक चुनाव, राज्यों का पुनर्गठन, सुरक्षा व्यवस्था, जमींदारी प्रथा का उन्मूलन, पिछड़े क्षेत्रों का विकास, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, शिक्षा का प्रसार, स्वास्थ्य सम्बन्धी नए निर्णय आदि विषयों को क्रियान्वित किया गया। १९४८ से १९७४ तक के समाचार पत्रों ने साम्राज्यवादी, व्यक्तिवादी और शोषण-परक मूल्यों और आदर्शों के लिए लड़ाई भी लड़ी।

आज जैसी समृद्ध भारतीय पत्रकारिता का प्रारंभ 'उदन्त मार्तण्ड' के प्रकाशन (३० मई १८२६) ई० में हुआ। इसके बाद बंगदूत (१८२९), सुधाकर (१८५०) बुद्धि प्रकाश (१८५२), मजहरूल सरूर (१८५२) कवि वचन सुधा (१८६७), हरिश्चन्द्र मैगजीन (१८७३), बाल बोधिनी पत्रिका (१८७८), हिन्दी प्रदीप (१८७७) भारत मित्र (१८७८) सार सुधानिधि (१८७९), उचितवक्ता (१८८०), भारत जीवन (१८८४) आदि समाचार पत्र निकाले गए। १९वीं सदी के अंत में तथा २०वीं सदी के चौथे पांचवे दशक में हिन्दुस्तान, आर्यावर्त, नवभारत टाइम्स, राजस्थान पत्रिका आदि समाचार पत्र निकाले गए। १९७२ में भारत में ११ हजार ९२६ समाचार पत्र थे, जिनमें से हिन्दी में ३०९३ समाचार पत्र प्रकाशित होते थे। अब संख्या दुगुनी हो गई है। वैसे १८८५ से १९१९ तक की अवधि भारतीय पत्रकारिता का जागरण काल माना जाता है। "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" इस नारे को प्रेस ने ही जन-जन तक पहुंचाया। हिन्दी पत्रिकारिता के प्रति अंग्रेजों का व्यवहार क्रूरता पूर्ण रहा। दरअसल भारतीय पत्रकारिता का इतिहास आजादी के आन्दोलन का ही इतिहास है। समाचार पत्र निकालने का अर्थ उस वक्त आजादी की लड़ाई लड़ना ही था। यह भारतीय पत्रकारिता का क्रांतिकाल माना जाता है। आजादी के बाद भारतीय पत्रकारिता ने प्रगति के नए आयाम स्थापित किये तथा पत्रकारों ने अपनी समर्पित सेवा-भावना से जन-चेतना जगाने का कार्य किया है।

पत्रकारिता का आजादी से पूर्व तथा बाद में राष्ट्रीय इतिहास पर व्यापक असर दिखाई पड़ता है। इसकी बानगी

'उचितवक्ता' में छपे मन्तव्य से जानी जा सकती है। ७ अगस्त १८८० ई० को 'हितं मनोहारि च दुर्लभ वच:' के साथ 'उचितवक्ता' का प्रकाशन हुआ। १२ मई १८८३ के अंक में संपादकों से कहा गया कि "देशीय संपादको। सावधान!! कहीं जेल का नाम सुनकर 'किं कर्न्तव्यविमूढ़ मत हो जाना, यदि धर्म की रक्षा करते हुए गवर्नमेण्ट को सत्परामर्श देते हुए जेल जाना पड़े तो क्या चिन्ता है। इंसमें मानहानि नहीं होती। हाकिमों के जिन अन्यायपूर्ण आचरणों से गवर्नमेण्ट पर सर्वसाधारण की अश्रद्धा हो सकती है, उनका यथार्थ प्रतिवाद करने में जेल तो क्या दीपांतरित भी होना पड़े तो क्या बड़ी बात है? क्या इस सामान्य विभीषिका से हम लोग अपना कर्तव्य छोड़ बैठे?" यह भारतीय पत्रकारिता के प्रारंभिक दौर की निष्ठा को इंगित करती है कि उस जमाने की पत्रकारिता आदर्शों और जीवन मूल्यों पर आधारिता रही है। हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास विश्व पत्रकारिता में भी स्वाभिमानपरक, आदर्शों और मूल्यों पर आधारित रहा है, आम लोगों को शिक्षित एवं जागृत करने, राष्ट्रीय स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीय निर्माण के हर मोड़ में पत्रकारिता राष्ट्रीय जीवन की पथ प्रदर्शक रही है। उनकी प्रजा की परिस्थितियों का सही परिचय देना चाहता हूँ ताकि शासक जनता को अधिक से अधिक सुविधा देने का अवसर पा सकें और जनता उन उपायों से अवगत हो सकें जिनके द्वारा शासकों से सुरक्षा पाई जा सके और अपनी उचित मांगे पूरी कराई जा सकें। कमोवेश पत्रकारिता के इसी आदर्श की आज भी जरुरत है। हालांकि वैश्वीकरण और आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा के युग मं पत्रकारिता पर भी बाजारवाद हावी होने लगा है।

पत्रकार और कई समाचार पत्र सत्ता के पीट्टू बनकर काम कर रहे हैं। स्वच्छ पत्रकारिता के साथ-साथ पीत पत्रकारिता भी घुस गई है। हिन्दी पत्रकारिता की जन्मस्थली कोलकाता में भी पत्रकारिता प्रलोभन का शिकार है। पत्रकार अर्थसत्ता के सामने हाथ फैलाए हुए हैं। कई समाचार पत्रों की स्थिति भी कमोवेश ऐसी है। जो पत्रकार भूखे रहकर, जेल जाकर तथा दण्डित होकर भी अपने पत्रकारिता धर्म की पालना करना गर्व समझते थे, अब वही पत्रकार विना मूल्यों की पत्रकारिता करते हैं और कोड़ियों में उनको खरीदा जा सकता है। हिन्दी पत्रकारिता के उद्गम से विकास की अब तक की यात्रा में यह विसंगति राष्ट्रीय पत्रकारिता में कलंक के रूप में जहां-तहां दिखाई देती है। पूरे देश पर इसका असर व्याप्त है।

प्रारंभिक काल की हिन्दी पत्रकारिता ने राष्ट्रीय जीवन में चेतना के वीज बोने, राष्ट्रीय निष्ठा जगाने, राष्ट्रीय क्रांति का स्वरूप निर्धारित करने, स्वतंत्रता का स्वर मुखरित करने, जैसे महत्वपूर्ण कार्य किए। स्वातन्त्रोत्तर काल (१९४८-१९७४) के बाद हिन्दी पत्रकारिता नवयुग में प्रवेश कर गई। इसके बाद २१वीं सदी की पत्रकारिता व्यापक और समृद्ध रूप में सामने आई है। आजादी के वाद देश कृषि, औद्योगिक और तकनीकी विकास, सुरक्षा समेत विभिन्न क्षेत्रों में आत्मनिर्भर हुआ। कृषि क्रान्ति ने अन्न-वस्त्र की समस्या से निजात दिलाई। पत्रकारिता हर क्षेत्र में राष्ट्रीय विकास के कर्णधारों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर साथ-साथ रही। अब हिन्दी पत्रकारिता राष्ट्रीय समस्याओं और जीवन मूल्यों में आई गिरावट से लोहा ले रही है। देश में भ्रष्टाचार, आतंकवाद, मूल्यवृद्धि, मुनाफाखोरी, विदेशी घुसपैठ और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के षडयंत्र के खिलाफ हिन्दी पत्रकारिता सजगता से काम कर रही है। भारत को विश्व शक्ति के रूप में उभारने तथा राष्ट्रीय समग्रता को विकसित करने में हिन्दी पत्रकारिता की भूमिका बढ़ी है। आज देश में अखवारों की आवाज उतनी ही बुलन्द है जितनी संसद में किए गए निर्णयों का असर होता है।

हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास में (१८८५-१९१९) तक पत्रकारिता चेतना का स्वर्णिम काल रहा। इस काल में हिन्दी पत्रों ने ऐसा सिंहनाद किया कि राष्ट्रीय भक्तों का ज्वार आ गया। हिन्दोस्थान सर्वहितैषी, हिन्दी बंगवासी, साहित्य सुधानिधि, स्वराज्य, नृसिंह प्रभा, प्रभृति समाचार पत्रों ने ऐसा जागरण मंत्र फूंका कि अंग्रेजी शासकों की चूलें हिल गईं। १८८५ में हिन्दोस्थान का प्रकाशक कालाकाँकर के राजा रामपाल सिंह ने किया। पंडित मदन मोहन मालवीय, अमृतलाल चक्रवर्ती, प्रताप नारायण मिश्र, शशिभूषण चटर्जी, गोपाल राम गहमरी, वालमुकुन्द गुप्त जैसे दिग्गज हिन्दी समाचार पत्रों के संपादक थे। इन समाचार पत्रों ने देशवासियों को अपने सांस्कृतिक मूल्यों और स्वदेश के प्रति जागरूक वनाया। पूना से प्रकाशित 'हिन्द केसरी' इलाहावाद से 'स्वराज्य' ने स्वतंत्रता आन्दोलन को गति दी। इन समाचार पत्र के सम्पादकों को अंग्रेजी शासकों का कोप-भाजन वनना पड़ा। वहीं हिन्दी पत्र स्वतंत्रता आन्दोलन के अगुवा सिद्ध हुए। राष्ट्रीय चेतना के अभ्युदय से आजादी का मार्ग प्रशस्त हुआ। वहीं हिन्दी पत्रकारिता स्वतंत्रता आन्दोलन की स्वर्ण गाथा वन गई। हिन्दी के समर्पित पत्रकारों का जीवन-इतिहास वताता है कि उनकी लेखनी से अंग्रेजों को भारत छोड़ना पड़ा। इसके वाद की पत्रकारिता व्यक्ति, समाज, राष्ट्र के नव-निर्माण के प्रति संकल्पित हो गई। १९४८ से १९७५ तक की स्वातंत्रोत्तर पत्रकारिता ने राष्ट्रीय निर्माण का कार्य किया। आज

डॉ. वसुधरा मिश्र

हिन्दी पत्रकारिता : कल और आज

महात्मा गांधी ने कहा था कि समाचार पत्र का पहला उद्देश्य जनता की इच्छाओं, विचारों को समझना और उन्हें व्यक्त करना है। दूसरा उद्देश्य जनता में वांछनीय भावनाओं को जाग्रत करना है। तीसरा उद्देश्य सार्वजनिक दोषों को निर्भयता पूर्वक प्रकट करना है। (महात्मा गांधी १८०८ ई०)।

समाचार पत्र समाज की नव्ज को पकड़ते हैं, उसकी जाँच करते हैं, दैनिक जीवन से लेकर विश्व तक की गतिविधियों, राष्ट्र की उन्नति-अवनति, विभिन्न ज्वलंत समस्याओं की खबर रखते हैं। 'दी प्रेस एण्ड अमेरीका' में समाचार पत्रों की सात विशेषताएँ वर्णित हैं-समाचार पत्र सप्ताह में कम से कम एक वार प्रकाशित हों, हस्तलिखित पत्रों से भिन्न रूप में प्रेस मशीन द्वारा मुद्रण हो, मूल्य ऐसा रखा जाय जो सभी के लिए सुलभ हो, साक्षर व्यक्तियों की रूचि के अनुकूल हो, नियत समय पर प्रकाशित हो, प्रकाशन में स्थायित्व हो। इस प्रकार समाचार पत्र सभी वर्ग के व्यक्तियों के लिए उनका शिक्षक, आदर्श उदाहरण और परामर्शदाता है।

जनहित के लिए लिखने के कारण समाचार पत्र अपने साहस, दूरदर्शिता तथा लोकहित के कारण लोकप्रिय हो जाते हैं। स्वतंत्र होने के वाद भारतवासियों पर दुगुने दायित्व का वोझ आ पड़ा। 'आज' में इस विषय में एक खवर प्रकाशित की थी जिसमें लिखा गया कि अंग्रेज भारत त्यागकर अवश्य जा रहे हैं किन्तु हमें दुर्वल और अशक्त बनाकर जा रहे हैं। हमारे सामने कई सामाजिक, शैक्षिक, सांप्रदायिक समस्याएं मुँह बाये खड़ी हैं, उन्हें दूर करना हमारी तत्काल आवश्यकता है। हमारे समाचारपत्रों, पत्रकारों ने इस क्षेत्र में संकल्प बद्ध होकर देश हित के लिए अपनी महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाई। संविधान का निर्माण, राष्ट्रध्वज, राष्ट्रचिह्न, राष्ट्रभाषा का निर्धारण, गांधी दर्शन, पंचशील योजना, लोकतांत्रिक चुनाव, राज्यों का पुनर्गठन, सुरक्षा व्यवस्था, जमींदारी प्रथा का उन्मूलन, पिछड़े क्षेत्रों का विकास, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, शिक्षा का प्रसार, स्वास्थ्य सम्बन्धी नए निर्णय आदि विषयों को क्रियान्वित किया गया। १९४८ से १९७४ तक के समाचार पत्रों ने साम्राज्यवादी, व्यक्तिवादी और शोषण-परक मूल्यों और आदर्शों के लिए लड़ाई भी लड़ी।

आज जैसी समृद्ध भारतीय पत्रकारिता का प्रारंभ 'उदन्त मार्तण्ड' के प्रकाशन (३० मई १८२६) ई० में हुआ। इसके बाद बंगदूत (१८२९), सुधाकर (१८५०) बुद्धि प्रकाश (१८५२), मजहरूल सरूर (१८५२) कवि वचन सुधा (१८६७), हरिश्चन्द्र मैगजीन (१८७३), वाल बोधिनी पत्रिका (१८७८), हिन्दी प्रदीप (१८७७) भारत मित्र (१८७८) सार सुधानिधि (१८७९), उचितवक्ता (१८८०), भारत जीवन (१८८४) आदि समाचार पत्र निकाले गए। १९वीं सदी के अंत में तथा २०वीं सदी के चौथे पांचवे दशक में हिन्दुस्तान, आर्यावर्त, नवभारत टाइम्स, राजस्थान पत्रिका आदि समाचार पत्र निकाले गए। १९७२ में भारत में ११ हजार ९२६ समाचार पत्र थे, जिनमें से हिन्दी में ३०९३ समाचार पत्र प्रकाशित होते थे। अव संख्या दुगुनी हो गई है। वैसे १८८५ से १९१९ तक की अवधि भारतीय पत्रकारिता का जागरण काल माना जाता है। ''स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है'' इस नारे को प्रेस ने ही जन-जन तक पहुंचाया। हिन्दी पत्रिकारिता के प्रति अंग्रेजों का व्यवहार क्रूरता पूर्ण रहा। दरअसल भारतीय पत्रकारिता का इतिहास आजादी के आन्दोलन का ही इतिहास है। समाचार पत्र निकालने का अर्थ उस वक्त आजादी की लड़ाई लड़ना ही था। यह भारतीय पत्रकारिता का क्रांतिकाल माना जाता है। आजादी के वाद भारतीय पत्रकारिता ने प्रगति के नए आयाम स्थापित किये तथा पत्रकारों ने अपनी समर्पित सेवा-भावना से जन-चेतना जगाने का कार्य किया है।

पत्रकारिता का आजादी से पूर्व तथा वाद में राष्ट्रीय इतिहास पर व्यापक असर दिखाई पड़ता है। इसकी वानगी

'उचितवक्ता' में छपे मन्तव्य से जानी जा सकती है। ७ अगस्त १८८० ई० को 'हितं मनोहारि च दुर्लभ वच:' के साथ 'उचितवक्ता' का प्रकाशन हुआ। १२ मई १८८३ के अंक में संपादकों से कहा गया कि "देशीय संपादको। सावधान!! कहीं जेल का नाम सुनकर 'किं कर्न्तव्यविमूढ़ मत हो जाना, यदि धर्म की रक्षा करते हुए गवर्नमेण्ट को सत्परामर्श देते हुए जेल जाना पड़े तो क्या चिन्ता है। इंसमें मानहानि नहीं होती। हाकिमों के जिन अन्यायपूर्ण आचरणों से गवर्नमेण्ट पर सर्वसाधारण की अश्रद्धा हो सकती है, उनका यथार्थ प्रतिवाद करने में जेल तो क्या दीपांतरित भी होना पड़े तो क्या बड़ी बात है? क्या इस सामान्य विभीषिका से हम लोग अपना कर्तव्य छोड़ बैठे?" यह भारतीय पत्रकारिता के प्रारंभिक दौर की निष्ठा को इंगित करती है कि उस जमाने की पत्रकारिता आदर्शो और जीवन मूल्यों पर आधारिता रही है। हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास विश्व पत्रकारिता में भी स्वाभिमानपरक, आदर्शों और मूल्यों पर आधारित रहा है, आम लोगों को शिक्षित एवं जागृत करने, राष्ट्रीय स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीय निर्माण के हर मोड़ में पत्रकारिता राष्ट्रीय जीवन की पथ प्रदर्शक रही है। उनकी प्रजा की परिस्थितियों का सही परिचय देना चाहता हूँ ताकि शासक जनता को अधिक से अधिक सुविधा देने का अवसर पा सकें और जनता उन उपायों से अवगत हो सकें जिनके द्वारा शासकों से सुरक्षा पाई जा सके और अपनी उचित मांगे पूरी कराई जा सकें। कमोवेश पत्रकारिता के इसी आदर्श की आज भी जरुरत है। हालांकि वैश्वीकरण और आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा के युग मे पत्रकारिता पर भी बाजारवाद हावी होने लगा है।

पत्रकार और कई समाचार पत्र सत्ता के पीट्ठू बनकर काम कर रहे हैं। स्वच्छ पत्रकारिता के साथ-साथ पीत पत्रकारिता भी घुस गई है। हिन्दी पत्रकारिता की जन्मस्थली कोलकाता में भी पत्रकारिता प्रलोभन का शिकार है। पत्रकार अर्थसत्ता के सामने हाथ फैलाए हुए हैं। कई समाचार पत्रों की स्थिति भी कमोवेश ऐसी है। जो पत्रकार भूखे रहकर, जेल जाकर तथा दण्डित होकर भी अपने पत्रकारिता धर्म की पालना करना गर्व समझते थे, अव वही पत्रकार बिना मूल्यों की पत्रकारिता करते हैं और कोड़ियों में उनको खरीदा जा सकता है। हिन्दी पत्रकारिता के उद्‌गम से विकास की अब तक की यात्रा में यह विसंगति राष्ट्रीय पत्रकारिता में कलंक के रूप में जहां-तहां दिखाई देती है। पूरे देश पर इसका असर व्याप्त है।

प्रारंभिक काल की हिन्दी पत्रकारिता ने राष्ट्रीय जीवन में चेतना के बीज बोने, राष्ट्रीय निष्ठा जगाने, राष्ट्रीय क्रांति का स्वरूप निर्धारित करने, स्वतंत्रता का स्वर मुखरित करने, जैसे महत्वपूर्ण कार्य किए। स्वातन्त्रोत्तर काल (१९४८-१९७४) के बाद हिन्दी पत्रकारिता नवयुग में प्रवेश कर गई। इसके बाद २१वीं सदी की पत्रकारिता व्यापक और समृद्ध रूप में सामने आई है। आजादी के बाद देश कृषि, औद्योगिक और तकनीकी विकास, सुरक्षा समेत विभिन्न क्षेत्रों में आत्मनिर्भर हुआ। कृषि क्रान्ति ने अन्न-वस्त्र की समस्या से निजात दिलाई। पत्रकारिता हर क्षेत्र में राष्ट्रीय विकास के कर्णधारों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर साथ-साथ रही। अब हिन्दी पत्रकारिता राष्ट्रीय समस्याओं और जीवन मूल्यों में आई गिरावट से लोहा ले रही है। देश में भ्रष्टाचार, आतंकवाद, मूल्यवृद्धि, मुनाफाखोरी, विदेशी घुसपैठ और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के षडयंत्र के खिलाफ हिन्दी पत्रकारिता सजगता से काम कर रही है। भारत को विश्व शक्ति के रूप में उभारने तथा राष्ट्रीय समग्रता को विकसित करने में हिन्दी पत्रकारिता की भूमिका बढ़ी है। आज देश में अखबारों की आवाज उतनी ही बुलन्द है जितनी संसद में किए गए निर्णयों का असर होता है।

हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास में (१८८५-१९१९) तक पत्रकारिता चेतना का स्वर्णिम काल रहा। इस काल में हिन्दी पत्रों ने ऐसा सिंहनाद किया कि राष्ट्रीय भक्तों का ज्वार आ गया। हिन्दोस्थान सर्वहितैषी, हिन्दी बंगवासी, साहित्य सुधानिधि, स्वराज्य, नृसिंह प्रभा, प्रभृति समाचार पत्रों ने ऐसा जागरण मंत्र फूंका कि अंग्रेजी शासकों की चूलें हिल गई। १८८५ में हिन्दोस्थान का प्रकाशक कालाकाँकर के राजा रामपाल सिंह ने किया। पंडित मदन मोहन मालवीय, अमृतलाल चक्रवर्ती, प्रताप नारायण मिश्र, शशिभूषण चटर्जी, गोपाल राम गहमरी, बालमुकुन्द गुप्त जैसे दिग्गज हिन्दी समाचार पत्रों के संपादक थे। इन समाचार पत्रों ने देशवासियों को अपने सांस्कृतिक मूल्यों और स्वदेश के प्रति जागरूक बनाया। पूना से प्रकाशित 'हिन्द केसरी' इलाहाबाद से 'स्वराज्य' ने स्वतंत्रता आन्दोलन को गति दी। इन समाचार पत्र के सम्पादकों को अंग्रेजी शासकों का कोप-भाजन बनना पड़ा। वहीं हिन्दी पत्र स्वतंत्रता आन्दोलन के अगुवा सिद्ध हुए। राष्ट्रीय चेतना के अभ्युदय से आजादी का मार्ग प्रशस्त हुआ। वहीं हिन्दी पत्रकारिता स्वतंत्रता आन्दोलन की स्वर्ण गाथा बन गई। हिन्दी के समर्पित पत्रकारों का जीवन-इतिहास बताता है कि उनकी लेखनी से अंग्रेजों को भारत छोड़ना पड़ा। इसके बाद की पत्रकारिता व्यक्ति, समाज, राष्ट्र के नव-निर्माण के प्रति संकल्पित हो गई। १९४८ से १९७५ तक की स्वातंत्रोत्तर पत्रकारिता ने राष्ट्रीय निर्माण का कार्य किया। आज

हिन्दी पत्रकारिता त्वरित संचार साधनों और आधुनिकतम मुद्रण संयंत्रों के कारण ही नहीं वल्कि पत्रकारिता का कलेवर समग्रता का है, जिसमें राष्ट्रीय जीवन के सभी पहलुओं को समेटा गया है। साहित्यिक, सांस्कृतिक अभिरूचि का विकास, हिन्दी भाषा के परिष्कार, लेखकीय शिल्प उत्कर्ष के साथ विषयों के प्रति अभिरुचि पैदा कर पत्रकारों ने राष्ट्रीय चेतना में एकाग्रता पैदा की है। आज हिन्दी पत्रकारिता की पताका लिए देशभर में राजस्थान पत्रिका के संस्करण निकाले जा रहे हैं। हिन्दुस्तान, नवभारत टाइम्स, जागरण, आज, पंजाव केसरी, नई दुनिया, विश्वामित्र, भास्कर, महका भारत, नवभारत, दैनिक ज्योति, अमर उजाला, सन्मार्ग, देशवन्धु, प्रभात खवर, जैसे अनेक समाचार पत्र राष्ट्र-सेवा में पत्रकारीय कर्म में जुटे हुए हैं। २१वीं सदी हिन्दी पत्रकारिता का स्वर्णिम काल माना जाता है। आजादी के आन्दोलन में जुटी पत्रकारों की पूर्व पीढ़ी ने हिन्दी पत्रकारिता को राष्ट्रीय-निष्ठा का आदर्श दिया है। इस आदर्श को देश की युवा पत्रकार पीढ़ी ने आत्मसात कर रखा है।

हिन्दी पत्रकारिता ने साहित्यिक, शैक्षणिक, धार्मिक, कृषि, स्वास्थ्य, विज्ञान, उद्योग, फिल्म पत्रकारिता, महिला, खेल एवं वाल पत्रकारिता जैसे नए विषय निकाल कर इन विषयों पर विशेषज्ञ पत्रकारिता की जा रही है। दैनिक समाचार पत्रों के अलावा इन विषयों पर देशभर में हजारों पत्र-पत्रिकाएं निकाली जा रही हैं। हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास भविष्य में देश देने वाला तथा पत्रकारिता के आदर्शों और मूल्यों से ओत-प्रोत है। इस ऐतिहासिक वैभव ने २१वीं सदी की पत्रकारिता को भी दिशा दी है। पत्रकारिता जीवन मूल्यों के विकास के लिए पत्रकारिता जगत के पूर्वज आज भी नई पीढ़ी के लिए रोशनी बने हुए हैं। सैकड़ों ख्यातनामा पूर्वज पत्रकार है, जिन्होंने हिन्दी पत्रकारिता को विश्व-पटल पर साख दिलाने के लिए तपस्या की है। पत्रकारों को संस्कारिता किया है। पत्रकारों की नैतिकता के लिए खुद ने आदर्श पत्रकार का जीवन जीया है।

पत्रकारों की वुजुर्ग पीढ़ी के वनाए स्तम्भ पर ही आज की हिन्दी पत्रकारिता सुहावने भवन के रूप में खड़ी है। इस राष्ट्रीय निर्माण की अखिल धारा को सतत रूप से आगे वढ़ाकर आदर्श पत्रकारिता धर्म से २१वीं सदी में पत्रकारिता के स्वर्णिम युग की उम्मीदें पूरे राष्ट्र को है। क्या २१वीं सदी की पत्रकारिता व्यवसायोन्मुखी होने से पत्रकारिता के मूल्य पीछे छूटते जा रहे हैं? यह सवाल वर्तमान पत्रकारिता का अहम सवाल वन गया है। हिन्दी पत्रकारिता के स्वर्णिम इतिहास को चांदी के टुकड़ों में आज खरीदा जा सकता है? पत्रकार का व्यवसायी होना सच में पत्रकारीय मूल्यों को चोट पहुंचाना है। पत्रकार का दायित्व वोध भोथरा हो गया है। पत्रकारिता उद्देश्यपरक होती जा रही है, इसमें पीत पत्रकारिता, राजनीतिक चाटुकारिता जैसी-बुराइयाँ आ रही हैं। सेक्स, हत्या, डकैती, भ्रष्टाचार, वलात्कार, नग्नता और छीछले विचारों ने भी नए युग की पत्रकारिता में स्थान वनाया है। प्रसार संख्या वढ़ाने के इन तरीकों से पत्रकारिता की छवि धूमिल भी हुई है, पत्रकार जनता में मानसिक उद्वेलन कर अखवार वेचते हैं। यह इस समय की वुराई है। पक्षपात और राजनीतिक चाटुकारिता पत्रकारों में वढ़ती जा रही है। २१वीं सदी में अंग्रेजी पत्रकारिता हिन्दी पर हावी हो रही है। इसका कारण हिन्दी पत्रकारिता में वढ़ती वुराई तथा पत्रकारों में जीजिविषा का अभाव है। पत्रकारों में पाठकों के प्रति दायित्व वोध घटता जा रहा है। पत्रकारों के संकीर्ण सरोकारों से हिन्दी पत्रकारिता कुंठित हो रही है। हिन्दी पत्रकारिता की जन्मस्थली कोलकाता में तो हिन्दी पत्रकारों की जो स्थिति है उसमें किसी भी स्वाभिमानी पत्रकार को चोट पहुंचनी स्वाभाविक है। हम अपने हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास को यहां लज्जित कर रहे हैं, हिन्दी पत्रकारों में अपने वैभवशाली इतिहास को स्वर्णिम ही वनाए रखने तथा हिन्दी पत्रकारिता के माध्यम से देश एवं मानवता की सेवा करने की अगर ललक है तो स्वस्थ चिन्तन से पत्रकार की गरिमा खुद में फिर से जगानी होगी तभी पूर्वजों की विरासत और भावी हिन्दी पत्रकारिता को आगे ले जाया जा सकेगा।

निदेशक, आई० एम०ए० वीकानेर

■

डॉ० विजय कुमार
अध्यापक, पार्श्वनाथ विद्यापीठ

महात्मा गांधी का शिक्षा-दर्शन

प्रत्येक व्यक्ति, समाज या सम्प्रदाय का अपना जीवन दर्शन होता है, जीवन दर्शन से तात्पर्य है जीवन से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं व उलझनों के विषय में किसी निष्कर्ष पर पहुँचना तथा उसके अनुसार जीवन-यापन करना। जब वही व्यक्ति या समाज अपने जीवन-दर्शन के अनुरूप अपने भावी समाज को ढ़ालना चाहता है और अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जिस प्रक्रिया को अपनाता है, वही उसका शिक्षा-दर्शन होता है।

शिक्षा का विषय सम्पूर्ण मानव जीवन है, क्योंकि शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है और उसका सम्बन्ध मानव के सम्पूर्ण जीवन से होता है। जीवन को समुन्नत बनाने के लिए शिक्षा और दर्शन दोनों की आवश्यकता होती है। समाज और व्यक्ति की उन्नति तब होती है जब सिद्धान्त व्यवहार में उतरता है। लेकिन समस्या उठ खड़ी होती है कि सिद्धान्त को व्यवहार में कैसे उतारा जाए? यह काम शिक्षा के द्वारा होता है, गाँधी ने भी समाज को समुन्नत करने के लिए एक शिक्षा-पद्धति प्रदान की जिसे बुनियादी शिक्षा के नाम से जाना जाता है।

गाँधी का जीवन अपने आप में एक नवयुगीन दर्शन है। गाँधी किसी हाड़-माँस के पुतले का नाम नहीं बल्कि एक चिन्तन, एक दृष्टि का नाम है जिसने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। वे एक कुशल राजनीतिज्ञ, समाजसुधारक और आचारशास्त्री थे। वे वर्तमान के उन विद्वानों में से नहीं थे जिन्होंने नई विचारधाराओं को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया, बल्कि उनका सम्पूर्ण जीवन ही उनके चिन्तन का मूर्त रूप था। यद्यपि गाँधीजी ने कोई नवीन तत्वज्ञान प्रणीली नहीं दी जैसा कि यथार्थवाद, विज्ञानवाद आदि, बल्कि पुराने तत्वों को नया अर्थ देकर व्यावहारिक स्तर पर एक नये जीवन मार्ग (Way of Life) को प्रशस्त किया।

गाँधी द्वारा भारतीय सामाजिक इतिहास में दिए गए अवदान को भुलाया नहीं जा सकता है। भारतीय जीवन दर्शन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसमें गाँधी ने अपना चिन्तन प्रस्तुत न किया हो। प्रस्तुत पत्र में हम गांधी द्वारा भारतीय शिक्षा-व्यवस्था में किए गए अवदान को प्रस्तुत करेंगे।

शैक्षिक विचार : बुनियादी शिक्षा

गांधी ने जो शिक्ष-व्यवस्था समाज को प्रदान की उसे हम बुनियादी शिक्षा के नाम से जानते हैं। सामान्य एवं राजनीतिक उत्थान के लिए गांधी शिक्षा का नवसंस्कार चाहते थे, यही कारण है कि उन्होंने बुनियादी शिक्षा को प्रस्तुत किया। उनका मानना था कि जिस प्रकार किसी इमारत के निर्माण में नींव की मजबूती अपेक्षित है, उसी प्रकार राष्ट्र की भविष्य रचना के लिए बच्चों का शैक्षिक स्तर का सुदृढ़ होना आवश्यक है। गांधी ने साक्षरता या लिखने-पढ़ने को शिक्षा नहीं माना। उन्होंने कहा कि साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है और न ही शिक्षा का प्रारम्भ। यह तो एक साधन है, जिसके द्वारा स्त्री-पुरुष को शिक्षित किया जाता है। वस्तुत: शिक्षा तो वह है जो बालक और मनुष्य के शरीर मन और आत्मा में निहित सर्वोत्तम को बाहर प्रकट करे। दूसरी भाषा में हम कह सकते हैं कि सच्ची शिक्षा वह है जो बालकों की आत्मिक, बौद्धिक और शारीरिक क्षमताओं को उनके बाहर प्रकट करे और उत्तेजित करे।

शिक्षा और जीवन एक दूसरे के पर्याय हैं। दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है, तभी तो गांधी ने कहा कि शिक्षा वही जो जीवनपयोगी हो। जो शिक्षा जीवन में काम न आए वह शिक्षा व्यर्थ है। गांधी ने वर्तमान में प्रचलित शिक्षा को संकीर्ण और वास्तविकताओं से कोसों दूर बताया और कहा कि आधुनिक शिक्षा व्यक्ति और समाज दोनों की ही आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ है। उन्होंने कहा कि व्यक्ति को ऐसी शिक्षा देनी चाहिये जो उसकी भौतिक एवं आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। यही कारण है कि गांधी ने शिक्षा को हस्तकौशल से जोड़ने पर बल दिया। किसी हस्तकर्म के साथ शिक्षण को जोड़ देने से विद्यार्थी शरीर से समर्थ, बुद्धि से सजग और आत्मविश्वास से परिपूर्ण होता है। आदर्श शिक्षा-पद्धति को

परिभाषित करते हुए गाँधी ने कहा है- "मैं मानता हूँ कि कोई भी पद्धति जो शैक्षणिक दृष्टि से सही हो और जो अच्छी तरह से चलाई जाए, आर्थिक दृष्टि से भी उपयोगी सिद्ध होगी। उदाहरण के लिए हम अपने बच्चों को मिट्टी के खिलौने बनाने भी सिखा सकते हैं, जो बाद में तोड़ कर फेंक दिए जाते हैं। इससे भी उनकी बुद्धि का विकास होता है, लेकिन इसमें नैतिक सिद्धान्त की उपेक्षा होती है कि मनुष्य के श्रम, साधन तथा सामग्री का अपव्यय कदापि नहीं होना चाहिये। उनका अनुत्पादक उपयोग कभी नहीं करना चाहिये। अपने जीवन के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग होना चाहिये, इस सिद्धान्त के पालन का आग्रह नागरिकता के गुण का विकास करने वाली सर्वोत्तम शिक्षा, साथ ही इससे बुनियादी तालीम स्वावलम्वी भी बनाती है।"[१]

बुनियादी शिक्षा का उद्देश्य

बुनियादी शिक्षा के उद्देश्य को बताते हुए गांधी ने कहा है कि 'बुनियादी शिक्षा की मंशा यह है कि गांव के बच्चों को सुधार-संवार कर उन्हें गांव का आदर्श बाशिन्दा बनाया जाए, इसकी योजना खासकर उन्हीं को ध्यान में रखकर की गई है। इस योजना की भी असल प्रेरणा गांव से मिली है। जो कांग्रेसजन स्वराज की इमारत को बिल्कुल उसकी नीवं या बुनियाद से चुनना चाहते हैं, वे देश के बच्चों की उपेक्षा कर ही नहीं सकते। प्रथमतः प्राथमिक शिक्षा में गांवों में बसने वाली हिन्दुस्तान की जरुरतों और गांवों का जरा भी विचार नहीं किया गया है और वैसे देखा जाए तो उसमें शहरों का भी कोई विचार नहीं हुआ है।[२] नगर और गाँव दोनों के लिए बुनियादी शिक्षा की तालिम आवश्यक है– बुनियादी तालीम हिन्दुस्तान के तमाम बच्चों को, फिर वे गांव के रहने वाले हों या शहरों के, हिन्दुस्तान के सभी श्रेष्ठ और स्थायी तत्त्वों के साथ जोड़ देती है। यह तालीम बालक के मन एवं शरीर दोनों का विकास करती है, बालक को अपने वतन के साथ जोड़े रखती है, उसे अपने और देश के भविष्य का गौरवपूर्ण चित्र दिखाती है और उस चित्र में देखते हुए भविष्य के हिन्दुस्तान का निर्माण करने में बालक या बालिका अपने स्कूल जाने के दिन से ही हाथ बटाने लगे, इसका इन्तजाम करती है।[३]

गांधी कार्य के द्वारा शिक्षण पर विशेष जोर देते थे। उनका मानना था कि 'मस्तिष्क सच्ची शिक्षा के लिए शारीरिक अवयवों का समुचित उपयोग आवश्यक है। शारीरिक शक्ति एवं कर्मेन्द्रियों के बुद्धिपूर्वक उपयोग से सुन्दर से सुन्दर और शीघ्र से शीघ्र मानसिक विकास संभव हो सकता है।[४] किसी हस्तकर्म से शिक्षण को जोड़ देने से विद्यार्थी शरीर से समर्थ, बुद्धि से सजग और आत्मविश्वास से परिपूर्ण होता है। फिर हस्तकर्म से विद्यार्थी कुछ आय भी अर्जित करता है जिससे शिक्षा शुल्क में भी आंशिक स्वावलम्बन हो पाता है।

शिक्षा-दर्शन का प्रयोजन स्पष्ट करते हुए गाँधी ने कहा है– हमारे जैसे गरीब देश में हाथ की तालीम जारी रखने से दो हेतु सिद्ध होंगे। उससे हमारे बालकों की शिक्षा का खर्च निकल आएगा और वे ऐसा धंधा सीख लेंगे जिसका अगर वे चाहे तो उत्तर-जीवन में अपनी जीविका के लिए उपयोग कर सकेंगे तथा आत्मनिर्भर बन सकेंगे। राष्ट्र को कोई चीज इतना कमजोर नहीं बनाएगी, जितनी यह बात कि श्रम का तिरस्कार करना सीखें।[५] साथ ही गांधी यह भी कहते हैं कि मैं उच्च शिक्षा का दुश्मन नहीं हूँ। मेरी योजना में तो अधिक से अधिक सुन्दर से सुन्दर पुस्तकालय, प्रयोगशालाएँ और शोध संस्थान रहेंगे। उनसे जो ज्ञान मिलेगा वह जनता की संपत्ति होगी और जनता को उसका लाभ मिलेगा।[६] वस्तुतः मैं उच्च शिक्षा में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाकर उसे राष्ट्रीय आकांक्षाओं और आवश्यकताओं से जोड़ना चाहता हूँ।[७] मैं यह मानता हूँ कि शिक्षा की इस पद्धति से व्यक्ति का सबसे अधिक मानसिक एवं अध्यात्मिक विकास हो सकता है।[८]

बालकों को किसी न किसी जीविका के लिए अवश्य ही प्रशिक्षित करना चाहिये। उसी को ध्यान में रखकर उसके शरीर, मस्तिष्क, हृदय आदि की शक्तियों का भी विकास करना चाहिये। इस प्रकार वह अपने व्यवसाय में दक्षता प्राप्त कर लेगा।[९]

बुनियादी शिक्षा में नागरिकता पर विशेष बल दिया गया है। इस शिक्षा के माध्यम से भावी नागरिकों में आत्मसम्मान, मर्यादा एवं दक्षता के भाव भरने की व्यवस्था की गई है। बालक अपने को राष्ट्र का एक प्रमुख अंग समझकर राष्ट्र निर्माण की दिशा में कार्य करे। बुनियादी शिक्षा व्यवस्था एक वर्गहीन शिक्षा-व्यवस्था है जिसमें नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास की क्षमता का विकास होता है। इसका पाठ्यक्रम ऐसा है जिससे व्यक्ति के मानसिक, शारीरिक व आत्मिक विकास की ओर पूर्ण ध्यान दिया जा सके। शिक्षा द्वारा बालकों में कर्तव्यपरायणता के भाव विकसित करने पर बल दिया जाता है।

पाठ्यक्रम की रूपरेखा :

गांधी ने बुनियादी शिक्षा-व्यवस्था की संरचना सामाजिक परिस्थितियें के अनुरूप की है। बुनियादी शिल्प–इसके अन्तर्गत कृषि, कताई-बुनाई, लकड़ी का कार्य, मिट्टी का कार्य, बागवानी एवं स्थानीय एवं भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप कोई भी शिल्प रखा गया है। बालक इसमें से किसी एक शिल्प का चयन

कर सकता है। शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिये जिससे बालक में विचार-विमर्श करने, विषयों को सुव्यवस्थित रूप से समझने, बोलने एवं लिखने की क्षमता विकसित हो सके। नाप-तौल एवं मात्रा के ज्ञान से छात्रों में तर्क-शक्ति का विकास होता है। अत: गणित की शिक्षा का सम्बन्ध भी हस्तशिल्प के साथ होना चाहिये।

इसके अन्तर्गत इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र से सम्बन्धित प्रमुख घटनाओं के अध्ययन पर भी बल दिया गया है जिसका उद्देश्य बालकों में भौगोलिक वातावरण के लगाव, मातृभूमि के प्रति प्रेम का भाव एवं नागरिक कर्तव्यों के बोध से बालकों में मानवीय गुणों का विकास होगा।

गाँधी ने प्रकृति अध्ययन, वनस्पतिशास्त्र, जीवविज्ञान, रसायनशास्त्र, शरीर विज्ञान, स्वास्थ्यविज्ञान, नक्षत्र विज्ञान एवं महान वैज्ञानिकों एवं अन्वेषकों की कथाएँ आदि को भी बुनियादी शिक्षा में सम्मिलित किया है। इन विषयों का उद्देश्य प्रकृति को समझना, अवलोकन तथा प्रयोग की क्षमता का विकास एवं प्राकृतिक घटनाओं के सिद्धान्तों को समझना है। इसके अतिरिक्त कला, संगीत, गृहविज्ञान, शारीरिक शिक्षा आदि की शिक्षा पर भी गांधी ने बल दिया है।

गांधी के अनुसार सच्ची शिक्षा बालक के मस्तिष्क, आत्मा और शरीर की शक्तियों का समुचित ढंग से विकास करती है। बालक के व्यक्तित्व का शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास इस प्रकार होना चाहिये कि उसके व्यक्तित्व का सामंजस्यपूर्ण विकास हो सके। गांधी शरीर मस्तिष्क और आत्मा तीनों में सामंजस्यपूर्ण विकास की बातें करते हैं। उनके अनुसार शारीरकि प्रशिक्षण के बिना मानसिक प्रशिक्षण व्यर्थ है।

पूरी शिक्षा स्वावलम्वी होनी चाहिये। इसमें आखिरी दर्जे तक हाथ का पूरा-पूरा उपयोग होना चाहिये। यानी विद्यार्थी अपने हाथों से कोई न कोई उद्योग धंधा करे।

सारी तालीम विद्यार्थियों को उनकी प्रान्तीय भाषा में दी जानी चाहिये, जिससे उनमें विचार-विमर्श करने, विषयों को सुव्यवस्थित रूप से समझने, बोलने एवं लिखने की क्षमता विकसित हो सके।

बुनियादी शिक्षा में साम्प्रदायिक, धार्मिक शिक्षा के लिए कोई जगह नहीं है। लेकिन नैतिक तालीम से कोई समझौता नहीं होगा। यह तालीम बच्चे लें या बड़े, औरत ले या मर्द, विद्यार्थियों के घरों में पहुँचेगी।

बुनियादी तालीम चूँकि लाखों करोड़ों विद्यार्थी ग्रहण करेंगे तथा अपने को हिन्दुस्तान का नागरिक समझेंगे, इसलिए उन्हें एक अन्तर प्रान्तीय भाषा नागरी या उर्दू भाषा का ज्ञान होना चाहिये, क्योंकि दोनों भाषाएँ हिन्दुस्तानी लिखी जाने वाली हो सकती हैं। इसलिए दोनों लिपियाँ अच्छी तरह से लिखनी आनी चाहिये।[१०]

विद्यार्थी जीवन :

गांधी ने समाज के प्रति विद्यार्थियों के कुछ कर्तव्य निर्धारित किये हैं जो इस प्रकार हैं–

१. किसी भी दलवन्दी या राजनीति से दूर रहना,

२. हड़ताल में सामिल नहीं होना चाहिये।

३. सेवा की खातिर शास्त्रीय तरीके से सूत कातना चाहिये।

४. अपने ओढ़ने-पहनने के लिए सर्वदा खादी का प्रयोग करना चाहिये।

५. वन्दे! मातरम् बोलने या राष्ट्रीय झण्डे को फहराने के लिए किसी पर दबाव नहीं देना चाहिये।

६. तिरंगे झण्डे को जीवन में उतार कर साम्प्रदायिकता को जीवन में घर न करने दें।

७. दु:खी पड़ोसियों की सेवा के लिए हमेशा तत्पर रहना।

८. विद्यार्थी जो कुछ भी नया सीखे उसे समाज के लोगों को बताये।

९. अपने जीवन को निर्मल और संयमी बनायें। कोई भी कार्य लुक-छिप कर न करें, जो भी करें, निर्मल मन से खुल्लम-खुल्ला करें।

१० अपने साथ पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं के प्रति सोहार्दपूर्ण व्यवहार रखें।

सारांश रूप में देखा जाए तो गांधी की सम्पूर्ण शिक्षा का मूलाधार सत्य और अहिंसा है जिसके आधार पर आत्म-विकास करना है। उन्होंने जीवन के सभी क्षेत्रों में आग्रहरहित होकर सत्य के संधान के लिए अध्ययन, शोध एवं प्रयोग की आवश्यकता पर बल दिया। यही कारण है कि गांधी का सम्पूर्ण जीवन आदर्शों का प्रयोग रहा। गांधी ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि विद्यार्थी देश के प्रति अपने कर्तव्य को समझे। अपने आचरण में पवित्रता लाएं। अनुशासन में रहें। चाहे जैसी भी परिस्थिति हो झूठ न बोलें। किसी बात को छिपाएँ नहीं, अपने अध्यापकों तथा बड़ों पर भरोसा करके उन्हें हर एक बात सच-सच बतलाएं, किसी के प्रति दुर्भावना न रखें। किसी के पीठ पीछे उसकी बुराई न करें। सबसे बड़ी बात यह है कि वे स्वयं अपने प्रति सच्चे बने रहें।[११]

इसके साथ ही गांधी ने जन-शिक्षा, प्रौढ़-शिक्षा, स्त्री-शिक्षा, धर्म-शिक्षा पर अपने विचार व्यक्त किये हैं, जन-शिक्षा ही ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति और समाज दोनों का ही विकास संभव है। उनका मानना था कि ग्रामीण एवं शहरी दोनों के बीच समायोजन होना चाहिये। ग्रामवासियों को लिखना-पढ़ना ही नहीं सिखावें वरन् उन्हें उचित व्यवहार करने एवं स्वतंत्र विचार रखने की शिक्षा देनी चाहिये जिससे उनमें अपनी क्षमता को जानने और समझने का अवसर मिले।

जहाँ तक प्रौढ़-शिक्षा की बात है कि गांधी उसके पक्षधर रहे हैं। उनकी दृष्टि में प्रौढ़ शिक्षा साधारण शिक्षा नहीं है जैसा कि लोग उसके बारे में सोचते हैं, बल्कि प्रौढ़ शिक्षा अभिभावकों की शिक्षा है जिससे वे अपने बच्चों के निर्माण में पर्याप्त भूमिका निभा सकें। प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से गांधी निरक्षरता को दूर कर भारतीय नागरिक को सुखी देखना चाहते थे। यही कारण है कि गांधी ने प्रौढ़-शिक्ष के पाठ्यक्रम में उद्योग, व्यवसाय, सफाई, स्वास्थ्य, समाजकल्याण के साथ-साथ बौद्धिक, सामाजिक विकास, भावात्मक एकीकरण एवं संस्कृति से सम्बन्ध रखने वाली क्रियाओं को भी महत्व दिया है।

गांधी ने स्त्री को ईश्वर की श्रेष्ठ रचना माना है। उन्होंने कहा कि स्त्रियों को आधुनिक शृंगारिकता का परित्याग करके प्राचीन आदर्शों को स्थापित करना चाहिये। उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होना होगा। जिसे हम घर की दासी समझते हैं वस्तुत: वह हमारी अर्धांगिनी है। उसे भी शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार है। आवश्यकता है उनकी आन्तरिक शक्ति को जागरूक करने की। स्त्री जब अपनी आन्तरिक शक्ति को पहचान जायेंगी तब उन्हें कोई झुका नहीं सकेगा। स्त्री शिक्षा के अन्तर्गत गांधी ने घरेलू ज्ञान के साथ-साथ बालकों की शिक्षा एवं सेवाभाव को प्राथमिकता दी है।

गांधी ने यह माना है कि धर्म-शिक्षा के द्वारा साम्प्रदायिकता का अन्त हो सकता है। क्योंकि धर्म हमें रूढ़िवादिता एवं अन्धविश्वास नहीं वरन् प्रेम, न्याय आदि सिखाता है। उन्होंने स्पष्ट तौर पर यह एलान किया है कि यदि भारत को अपना आध्यात्मिक दिवालियापन घोषित नहीं करना है तो उसे नवयुवकों के लिए भौतिक शिक्षा या सांसारिक शिक्षा के समान धार्मिक शिक्षा को भी आवश्यक करना होगा।

सन्दर्भ :

१. *हरिजन, ६-४-१९४०*
२. *रचनात्मक कार्यक्रम, पृ०-८*
३. *रचनात्मक कार्यक्रम, पृ०-८*
४. *हरिजन, ८-५-१९३७*
५. *हरिजन, ८-५-१९३७*
५. *यंग इंडिया १-९-१९२१*
६. *हरिजन, ९-७-१९३८*
७. *हरिजन, ३१-१२-१९३८*
८. *हरिजन, ३१-७-१९३७*
९. *हरिजन, १८-९-१९३७*
१०. *हरिजन, ११-१२-१९४७*
११. *महात्मा गांधी का संदेश, सम्पा०-यू०एस०मोहन राव, प्रै० वि० सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय भारत सरकार, २-१०-१९६९, पृ०-१६*

■

डा० शारदा सिंह
जनरल फेलो (आई० सी०पी०आर०)

जैन शिक्षा-पद्धति

विद्या मनुष्य को विनयशील बनाती है। विनय से वह योग्य बनता है, योग्यता से धन अर्जित होता है व धर्म की प्राप्ति होती है और इसी विद्या, बुद्धि और विवेक के आधार पर मनुष्य संसार के अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ एक विलक्षण प्राणी माना जाता है। शिक्षा ही उसके बुद्धि और विवेक का विकास करती है।

भारतीय संस्कृति में तीन प्रकार की परम्पराएं देखने को मिलती हैं– ब्राह्मण, जैन और बौद्ध। यहाँ यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि प्राचीन भारतीय शिक्षा-पद्धति का एकाग्र रूप से अध्ययन करने की दृष्टि से जैन शिक्षा-पद्धति का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। भारत में श्रमण और ब्राह्मण शिक्षा-पद्धतियों का समानान्तर विकास हुआ है। श्रमण परम्परा के अन्तर्गत ही जैन और बाद में बौद्ध शिक्षा-पद्धति विकसित हुई।

शिक्षण पद्धति का प्रयोग जैन जगत् में तत्वज्ञान के लिए किया गया है। तत्वज्ञान का विवेचन जहाँ जिस रूप में किया गया है, वहाँ उसी के अनुरूप शिक्षण-पद्धति का प्रयोग किया गया है। कठिन और सरल विवेचन के लिए अलग-अलग विधियों का विवरण मिलता है। इसी प्रकार संक्षिप्त और विस्तृत विवेचन के लिए भी भिन्न-भिन्न विधियों का आश्रय लिया गया है।

शिक्षा का सम्पूर्ण विषय सम्यक्-दर्शन, सम्यक्-ज्ञान और सम्यक् चारित्र के अन्तर्गत समाविष्ट हो जाता है। इन्हीं तीनों के सम्मिलित रूप को मोक्ष प्राप्ति का मार्ग कहा गया है। वस्तु के यथार्थ स्वरूप को सम्यक्-ज्ञान वस्तु के वास्तविक स्वरूप को समझकर दृढ़ निष्ठापूर्वक आत्मसात करना सम्यक्-दर्शन तथा व्यावहारिक रूप से उसे जीवन में उतारना सम्यक्-चारित्र है। 'तत्त्वार्थसूत्र' में इन्हें प्राप्त करने की दो विधियाँ बतलायी हैं– (१) निसर्ग-विधि (२) अधिगम-विधि।

(१) निसर्ग-विधि[१]– निसर्ग का अर्थ है –स्वभाव, प्रज्ञावान व्यक्ति को किसी गुरु अथवा शिक्षक द्वारा शिक्षा प्राप्त करने की आवश्कता नहीं रहती। जीवन के विकास क्रम में वह स्वत: ही ज्ञान के विभिन्न विषयों को सीखता रहता है तथा तत्वों का सम्यक् बोध स्वत: प्राप्त करता रहता है। उनका जीवन ही उनकी प्रयोगशाला बन जाती है। सम्यक्-ज्ञान और सम्यक्-बोध की उपलब्धियों को वे जीवन की प्रयोगशाला में उतार कर सम्यक्-चारित्र को उपलब्ध करते हैं, यही निसर्ग-विधि है।

(२) अधिगम-विधि[२]– अधिगम का अर्थ है पदार्थ का ज्ञान। दूसरों के उपदेशपूर्वक पदार्थों का जो ज्ञान होता है, वह अधिगमज कहलाता है। इस विधि के द्वारा प्रतिभावान तथा अल्प प्रतिभा युक्त सभी प्रकार के व्यक्ति तत्वज्ञान प्राप्त करते हैं। यही तत्वज्ञान सम्यक्-दर्शन का कारण बनता है।

अधिगम और निसर्ग-विधि में अन्तर है तो इतना कि निसर्ग-विधि में प्रज्ञा का स्फुरण स्वत: होता है तथा अधिगम-विधि में गुरु का होना अनिवार्य है। अर्थात् गुरु के उपदेश से जीव और जगत रूपी तत्वों का ज्ञान प्राप्त करना अधिगम-विधि है। इसके निम्नांकित भेद हैं– (क) निक्षेप-विधि (ख) प्रमाण-विधि (ग) नय-विधि (घ) स्वाध्याय-विधि (ङ) अनुयोगद्वार विधि।

(क) निक्षेप विधि- लोक व्यवहार में अथवा शास्त्र में जितने शब्द होते हैं, वे वहाँ किस अर्थ में प्रयोग किये गये है– इसका ज्ञान होना निक्षेप विधि है। एक ही शब्द के विभिन्न प्रसंगों में भिन्न-भिन्न अर्थ हो सकते हैं। इन अर्थों का ज्ञान निक्षेप-विधि द्वारा किया जाता है। अर्थात् अनिश्चितता की स्थिति से निकलकर निश्चितता में पहुँचना निक्षेप विधि है। जैन मान्यतानुसार प्रत्येक शब्द के कम से कम चार अर्थ निकलते हैं। वे ही चार अर्थ उस शब्द के अर्थ सामान्य के चार विभाग हैं।[३] ये विभाग ही निक्षेप या न्यास कहलाते हैं। निक्षेप-विधि के चार विभाग निम्नलिखित हैं – (१) नाम (२) स्थापना (३) द्रव्य (४) भाव।

(१) **नाम निक्षेप**– लौकिक व्यवहार चलाने के लिए किसी वस्तु का कोई नाम रख देना निक्षेप कहलाता है। नाम सार्थक या निरर्थक अथवा मूल अर्थ से सापेक्ष या निरपेक्ष दोनों प्रकार का हो सकता है। किन्तु जो नामकरण सिर्फ संकेत मात्र होता है, जिसमें जाति, गुण, द्रव्य, क्रिया आदि की अपेक्षा नहीं होती है, वही 'नाम निक्षेप' है। अथवा जो अर्थ व्युत्पत्ति सिद्ध न हो अर्थात् व्युत्पत्ति की अपेक्षा किये विना संकेत मात्र के लिये किसी व्यक्ति या वस्तु का नामकरण करना नाम निक्षेप विधि है।

(२) **स्थापना निक्षेप**– वास्तविक वस्तु की प्रतिकृति, मूर्ति, चित्र आदि बनाकर अथवा विना आकार बनाये ही किसी वस्तु में उसकी स्थापना करके मूल वस्तु का ज्ञान कराना स्थापना निक्षेप-विधि है। इसके भी दो भेद हैं– सद्भावना स्थापना तथा असद्भावना स्थापना। सद्भावना स्थापना के अनुसार कोई प्रतिकृति बनाकर जो ज्ञान कराया जाता है, उसे सद्भावना स्थापना विधि कहते हैं तथा असद्भावना स्थापना में वस्तु की यथार्थ प्रतिकृति नहीं बनायी जाती बल्कि किसी भी आकार की वस्तु में मूल वस्तु की स्थापना कर दी जाती है।

(३) **द्रव्य निक्षेप**– पूर्व और उत्तर अर्थात् भूत एवं बाद की स्थिति को ध्यान में रखते हुए वस्तु का ज्ञान कराना द्रव्य निक्षेप विधि कहलाता है।

(४) **भाव निक्षेप**– वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखकर वस्तु-स्वरूप का ज्ञान कराना भाव-निक्षेप विधि है।

(ख) **प्रमाण-विधि**– संशय आदि से रहित वस्तु का पूर्ण रूप से ज्ञान कराना प्रमाण-विधि है।[४] इसके अन्तर्गत ज्ञेय वस्तु के विषय में सम्पूर्ण जानकारी दी जाती है। जैनाचार्यो ने प्रमाण का विस्तृत विवेचन किया है। सर्वार्थसिद्धि के अनुसार "जो अच्छी तरह मान करता है जिसके द्वारा अच्छी तरह मान किया जाता है यह प्रमितिमात्र प्रमाण है।[५] कषायपाहुड के अनुसार "जिसके द्वारा पदार्थ माना जाए, उसे प्रमाण कहते हैं।" प्रमाण के द्वारा ही पूर्ण और प्रामाणिक ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार सम्यक् ज्ञान ही प्रमाण है। इस प्रमाण ज्ञान को चार भागों में विभक्त किया गया है– (१) प्रत्यक्ष (२) अनुमान (३) आगम और (४) उपमान। इसमें से दो मति और श्रुत परोक्ष ज्ञान हैं तथा अन्य तीन अवधि, मन: पर्याय और केवल प्रत्यक्ष ज्ञान हैं।

सामान्यतया प्रत्यक्ष में हम इन्द्रिय उपलब्धों को देखते हैं इसकी स्मृति भी हमें स्पष्ट दिखायी देती है। अन्य दर्शनों में प्रत्यक्ष और परोक्ष की जो व्याख्या मिलती है उससे पृथक जैन दर्शन में प्रत्यक्ष को व्याख्यायित किया गया है। जैन मान्यतानुसार प्रत्यक्ष ज्ञान हमें इन्द्रिय और मन की सहायता के विना केवल आत्मा की योग्यता से ही प्राप्त होता है और इसके विपरीत जो ज्ञान इन्द्रिय और मन की सहायता से प्राप्त होता है वह परोक्ष है।

अनुमान तर्कशास्त्र का प्राण है। यद्यपि अनुमान प्रत्यक्षमूलक होता है, तो भी उसका अपना वैशिष्ट्य है। अनुमान के द्वारा ही हम संसार का अधिकतर व्यवहार चला रहे हैं। अनुमान के आधार पर ही तर्कशास्त्र का विशाल भवन खड़ा हुआ है। कार्य-कारण या हेतु-हेतुमान के सिद्धान्त से अनुमान प्रमाण का प्रादुर्भाव होता है, जहाँ कार्य-कारण भाव न भी हो वहां अविनाभाव सम्बन्ध को देखकर अनुमान ज्ञान होता हुआ देखा जाता है। अनुमान के भी दो भेद हैं– स्वार्थानुमान और परार्थानुमान। अनुमानकर्त्ता जब अपने अनुभूति से स्वयं ही किसी तथ्य का हेतु द्वारा ज्ञान प्राप्त करता है तो वह स्वार्थानुमान कहलाता है। और जब वचन प्रयोग द्वारा किसी अन्य को वही तथ्य समझाता है तो उसका वह वचन प्रयोग परार्थानुमान कहलाता है। स्वार्थानुमान ज्ञानात्मक है तो परार्थानुमान वचनात्मक।

(३) **आगम प्रमाण**– सम्यक् श्रुत का ज्ञान आगम प्रमाण है अथवा आप्त या प्रामाणिक पुरुषों के शब्दों द्वारा वस्तुओं का जो ज्ञान होता है उसे आगम प्रमाण कहते हैं। क्योंकि वास्तव में वह ज्ञान आगम प्रमाण है जो श्रोता या पाठक को आप्त की मौखिक या लिखित वाणी से होता है।[७] यहाँ आप्त पुरुष से तात्पर्य है जो वस्तुओं के उनके यथार्थ रूप में जैसा जानता है वैसा ही कहता है, वह आप्त पुरुष है।[८]

(४) **उपमान**– सदृश्यता के आधार पर वस्तु को ग्रहण करना उपमान है। अर्थात् यदि किसी ने किसी अमुक वस्तु के बारे में कोई वाक्य सुन रखा हो और उसी प्रकार की वस्तु अचानक उसके सामने आ जाये तो पूर्व में सुने गये वाक्य का तुरन्त स्मरण हो जाता है। वह समझ जाता है कि वह वही अमुक वस्तु है, यह उपमान है। उपमा दो प्रकार की होती है– साधर्म्योपनीत और वैधर्म्योपनीत।[९]

प्रमाणों का यह वर्गीकरण तर्कानुसारी होने पर भी आगमिक है। किन्तु पश्चात्वर्ती तार्किक आचार्यो ने प्रमाणों का वर्गीकरण अन्य प्रकार से किया है। उनके अनुसार प्रमाण दो प्रकार का है प्रत्यक्ष और परोक्ष।[१०] प्रत्यक्ष प्रमाण के भी दो भेद सांव्यावहारिक प्रत्यक्ष और पारमार्थिक प्रत्यक्ष[११] तथा परोक्ष प्रमाण के पांच भेद बताए गए हैं– १. स्मृति २. प्रत्यभिज्ञान ३. तर्क ४. अनुमान ५. आगम।

यहाँ स्मरण रखना चाहिये कि इस वर्गीकरण में भी पूर्वोक्त वर्गीकरण से कोई मौलिक या वस्तुगत पार्थक्य नहीं है। इसमें उपमान प्रमाण को पृथक स्थान न देकर, प्रत्यभिज्ञान में सम्मिलित कर लिया गया है। स्मरण, प्रत्यभिज्ञान तथा तर्क उस वर्गीकरण के अनुसार सांव्यावहारिक प्रत्यक्ष के अन्तर्गत है।

(ग) नय-विधि– किसी भी विषय का सापेक्ष निरूपण करने वाला विचार नय कहलाता है। नय दो प्रकार के हैं– १. द्रव्यार्थिक नय २. पर्यायार्थिक नय। इसमें से प्रथम नय के तीन तथा द्वितीय के चार अर्थात् कुल मिलाकर सात भेद होते है–

१. नैगम नय– अनिष्पन्न अर्थ में संकल्पमात्र को ग्रहण करने वाला नय नैगम नय है।[१२] जो नय अतीत, अनागत और वर्तमान को विकल्प रूप से साधता है वह नैगम नय है।[१३]

२. संग्रह नय– सामान्य अथवा अभेद को ग्रहण करने वाली दृष्टि संग्रहनय है।

३. व्यवहार नय – संग्रह नय के द्वारा गृहीत अर्थ का विधिपूर्वक अवहरण या भेद करना व्यवहार नय है।

४. ऋजु नय – भूत और भावी को छोड़कर वर्तमान पर्याय मात्र को ग्रहण करने को ऋजु नय कहते हैं।

५. शब्द नय – शब्द प्रयोगों में आने वाले दोषों को दूर करके तदनुसार अर्थ भेद की कल्पना करना शब्द नय है।

६. समभिरूढ़ नय – शब्द भेद के अनुसार अर्थभेद की कल्पना करना समभिरूढ़ नय है। सर्वार्थसिद्धि में इसकी व्याख्या इस प्रकार की गयी है– "नाना अर्थो का समाभिरोहण करने वाला होने से यह समभिरूढ़ नय कहलाता है।

७. एवंभूत नय– यह नय सूक्ष्मतम शाब्दिक विचार हमारे सामने प्रस्तुत करता है। अर्थात् जिस शब्द का जो अर्थ होता है, उसके होने से ही उस शब्द का प्रयोग करना एवंभूत नय है।

(घ) स्वाध्याय-विधि – जैनाचार्यो द्वारा विशिष्ट ज्ञान प्राप्ति के लिए स्वाध्याय-विधि का उपयोग किया जाता था। स्वाध्याय से ही व्यक्ति की अन्तर्निहित शक्तियां पूर्ण रूप से विकसित होकर सामने आती हैं। तत्त्वार्थसूत्र में स्वाध्याय के लिए पाँच तरीके बताए गए हैं– १. वाचना २. पृच्छना, ३. अनुप्रेक्षा, ४. आम्नाय ५. धर्मोपदेश।

१. वाचना– निर्दोष ग्रन्थ तथा उसके अर्थ का उपदेश अथवा दोनों ही उसके पात्र को प्रदान करना वाचना है।[१४] इसके भी चार भेद हैं- नन्दा, भद्रा, जया और सौम्या।

२. पृच्छना– संशय का उच्छेद अर्थात् निराकरण करने के उद्देश्य से प्रस्तुत विषय के सन्दर्भ में प्रश्न करना पृच्छना है।[१५]

३. अनुप्रेक्षा–विकारों की निर्जरा के लिए अस्थि-मज्जानुगत अर्थात् उसे पूर्ण रूप से आत्मसात् करते हुए श्रुत ज्ञान का परिशीलन करना अनुप्रेक्षा कहलाता है।

४. आम्नाय–शुद्धिपूर्वक पाठ को बार-बार दोहराना आम्नाय है।[१६]

५. धर्मोपदेश– देववन्दना के साथ मंगलपाठ पूर्वक धर्म उपदेश करना धर्मकथा है।[१७] इसके भी आक्षेपिणी, विक्षेपिणी आदि भेद हैं।

अनुयोगद्वार-विधि– पं० सुखलाल संघवी के अनुसार अनुयोग का अर्थ होता है यात्रा या विवरण और द्वार अर्थात् प्रश्न। प्रश्न ही वस्तु में प्रवेश करने के अर्थात् विचारक द्वारा उसकी तह तक पहुँचने के द्वार हैं। अर्थात् आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत व्यक्ति किसी तत्त्व के सम्बन्ध में तत्सम्बन्धी अनेक प्रश्नों के द्वारा अपने ज्ञान भण्डार को और समद्ध करता है, बढ़ाता है। इसके लिए वह निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान, सत्, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव अल्प-बहुतत्व आदि चौदह प्रश्नों के द्वारा सम्यक् दर्शन प्राप्त करता है।

उपर्युक्त विधियों के अतिरिक्त "आदि पुराण" में शिक्षा पद्धति के अन्य भेद भी वर्णित हैं – १. पाठ विधि, २. प्रश्नोत्तर विधि ३. शास्त्रार्थ विधि ४. श्रवण विधि ५. पद विधि, ६. उपक्रम विधि, ७. पंचांग विधि इत्यादि। ऊपर वर्णित इन शिक्षण विधियों का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है–

१. पाठ-विधि – गुरु या शिक्षक शिष्यों को पाठ-विधि द्वारा अंक और अक्षर ज्ञान की शिक्षा देते हैं। इस विधि का प्रारंभ आदि तीर्थकर ऋषभ देव से प्रारंभ होता है। इसी विधि के द्वारा उन्होंने अपनी कन्याओं ब्राह्मी और सुन्दरी को शिक्षा दी थी। इस पद्धति में गुरु द्वारा लिखे गये या दिये गये पाठ को शिष्य बार-बार लिखकर कंठस्थ करता है। सामान्यत: इस विधि का प्रयोग जैन पुराणों के समस्त पात्रों के अध्यापन में किया गया है। इस विधि में मूलत: तीन शिक्षा तत्त्व परिगणित हैं– १. उच्चारण की स्पष्टता, २. लेखन कला का अभ्यास ३. तर्कात्मक संख्या प्रणाली विधि।

२. प्रश्नोत्तर-विधि– प्रश्नोत्तर विधि का प्रयोग जैन वाङ्मय में कई जगह किया गया है। जैसा कि प्रश्नोत्तर विधि

के नाम से स्पष्ट है कि इसमें शिष्य अथवा जिज्ञासु प्रश्न करता है और ज्ञानी गुरूजन उन प्रश्नों का उचित उत्तर देकर शिष्य का मार्गदर्शन करते हैं। इस प्रश्नोत्तर विधि के माध्यम से गूढ़ और दुरुह विषय को भी सरलतापूर्वक समझाया जाता था जिससे विषयों को आत्मसात् करने में शिष्य को सरलता होती थी। इस विधि का प्रयोग प्रौढ़ और प्रतिभाशाली छात्रों के लिए किया जाता था।

३. शास्त्रार्थ विधि– शास्त्रार्थ विधि प्राचीन शिक्षा पद्धति की एक प्रमुख विधि है। इस विधि में पूर्व और उत्तर पक्ष की स्थापनापूर्वक विषयों की जानकारी प्राप्त की जाती है। एक ही तथ्य की उपलब्धि विभिन्न प्रकार के तर्कों, विकल्पों और बौद्धिक प्रयोगों द्वारा की जाती है। उस काल में शास्त्रार्थ का मौखिक और लिखित दोनों रूप प्रचलित था। आदि पुराण में उल्लेख है कि प्राचीन काल में शास्त्रार्थ मंत्रियों के बीच आप्ततत्त्व की जानकारी के लिए किया जाता था। स्वपक्ष की सिद्धि और परपक्ष में दोष निकलाना ही शास्त्रार्थ विधि का उद्देश्य है। इस विधि की निम्नलिखित विशेषताएं हैं– (क) 'ननु- शब्द द्वारा शंका उत्पन्न करना। (ख) 'न च' या 'इति चेन्न' द्वारा शंका का निराकरण करना। (ग) यत्चेदं 'यथेकं' द्वारा पक्ष का निराकरण करना। (घ) अनवस्था, चक्रक, प्रसंग साधन आदि दोषों का उद्भावना या प्रस्तुत करना (ङ) 'एव' 'आह' 'अत्र' 'यस्तु' आदि संकेताशों द्वारा कथनों और उद्धरणों को उपस्थित कर समालोचन करना। (च) विकल्पों को उठाकर प्रतिपक्षी का समाधान करते हुए स्वपक्ष के सिद्धि के लिए आक्षेपिणी विक्षेपिणी' जैसे कथाओं का प्रयोग करना। (छ) 'तदुक्तं' 'नादि' जैसे शब्दों का किसी वस्तु या कथन पर बल देने के लिए प्रयोग करना।[१८]

४. उपक्रम-विधि[१९]–जिसके द्वारा श्रोता शास्त्र को उपक्रम्यते अर्थात् समीप करता है उसे उपक्रम कहते हैं। अर्थात् उद्दिष्ट पदार्थ को श्रोताओं की बुद्धि में बैठा देना, उन्हें अच्छी तरह समझा देना उपक्रम है। इसे उपोद्घात भी कहते हैं।

जिन मनुष्यों ने किसी, शास्त्र के नाम, आनुपूर्वि प्रमाण, वक्तव्यता और अर्थाधिकार[२०] नहीं जाने हैं वे उस शास्त्र के पठन-पाठन आदि क्रिया फल के लिये प्रवृत्ति नहीं करते हैं। अत: विषयों के पाठ और उसके स्पष्टीकरण के लिए श्रीभगवद्गुणधराचार्य प्रणीत कषायपाहुड़ की चूर्णि में श्री यतिविषभाचार्य ने इस विधि में ऊपर वर्णित पांच विषयों का परिज्ञान होना आवश्यक माना है।

५. श्रवण-विधि– इस विधि के अनुसार किसी भी तथ्य को सुनकर या उसका श्रवण करके उसे ग्रहण करना श्रवण विधि है। विशेषावश्यक भाष्य[२१] में श्रवण में सात विधियों का उल्लेख किया गया है– क. गुरु द्वारा कही गयी बातों को चुपचाप सुनना, ख. उसे बिना विरोध स्वीकार करना, ग. उसे अच्छा मानते हुए उसका अनुकरण करना, घ. उस विषय में अपनी जिज्ञासा व्यक्त करना ड. उसकी मीमांसा करना, च. उस विषय का पूर्ण रूप से पारायण करना, छ. गुरु की भांति स्वयं उस विषय को अभिव्यक्त करना।

६. पंचांग-विधि– पंचांग विधि के द्वारा वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय और उपदेश जिसका ऊपर वर्णन किया जा चुका है किसी विषय को समझा जाता था।

७. पद-विधि–'पद्यन्ते ज्ञायन्तेऽनेनेति पदं' अर्थात् जिसके द्वारा (अर्थ) जाना जाता है वह पद है।[२२] नामिक, नैपातिक, औपसर्गिक, आख्यानिक और मिश्र नामक इसके पांच भेद है। पदविधि द्वारा शब्दों का वर्गीकरण करके उसके अर्थ की निश्चित अवधारणा प्रकट की जाती है तथा इसके द्वारा शब्दों के नैसर्गिक शक्ति का बोध किया जाता है।

८. प्ररूपणा-विधि – वाच्य-वाचक, प्रतिपाद्य-प्रतिपादक एवं विषय-विषयी भाव की दृष्टि से शब्दों का आख्यान करना प्ररूपणा विधि है। गुरु शिष्य को 'किं' 'कस्य' 'केन' 'क्व' 'कियत्' 'कालं' एवं 'कति विधं' इन छ: प्रश्नों द्वारा निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति और विधान का साधन करते हुए अध्यापन करना प्ररूपणा विधि है।

इसके अतिरिक्त भी पदार्थविधि, संगोष्ठि, विधि, व्याख्या विधि आदि शिक्षा की पद्धतियों का प्रयोग प्राचीन काल में गुरुओं, आचार्यों द्वारा किया जाता था। जिसका उद्देश्य गूढ़ से गूढ़ विषय को सरल और सुबोध बनाकर छात्रों के सामने इस रूप में प्रस्तुत करना था कि विषय को आत्मसात् करने में शिष्य को कठिनाई न हो, यही कारण था कि प्राचीन काल मे गुरु की छत्रछाया में ही रहकर बौद्धिक, मानसिक, शारीरिक, आध्यात्मिक विकास किया जाता था। क्योंकि गुरु के सानिध्य में रहकर शिष्य केवल शिक्षा ही प्राप्त नहीं करता था अपितु उसका जीवन संस्कार, व्यवहार, कर्तव्य-बोध आदि से पूर्ण परिष्कृत हो जाता था।

संदर्भ सूची

१. तत्त्वार्थ, सूत्र, विवेचन सुखलाल संघवी, १/३
२. अधिगमोऽर्थाविवोध:। यत्परोपदेशपूर्व जीवाद्यधिगमनिमित्तं तदुत्तरम्। सर्वार्थसिद्धि १/३/१२
३. जैनसिद्धान्त दीपिका, ९/५
४. सम्यक्ज्ञानं प्रमाणं..। प्रमाण-परीक्षा, पृ० १
५. सर्वार्थसिद्धि, १/१०, ९८/२
६. कषायपाहुड, १/१/१, २७, ३७, ६
७. न्यायदीपिका, ३/७३/११२
८. अभिधेयं वस्तु यथावस्थितम् योग जानीते, यथाज्ञानं चाभिद्यते स आप्त:। वही ४/४
९. अनुयोगद्वार ४५८
१०. तत्त्वार्थ सूत्र, १/१०/१२ विवेचनकर्ता पं० फूलचन्द सिद्धान्त शास्त्री
११. जैन न्याय तर्कसंग्रह (यशोविजय), प्रमाण खण्ड।
१२. सर्वार्थसिद्धि, १/३३/१४१/२
१३. कार्तिकेयानुप्रेक्षा, पृष्ठ २७१
१४. सर्वार्थसिद्धि ९/२५/४४३/४
१५. सवार्थसिद्धि ९/२५/४४३/४
१६. सवार्थसिद्धि ९/२५/४४३/५
१७. तत्त्वार्थसूत्र ७/८७
१८. जैन वाङ्मय में शिक्षा के तत्त्व, पृ० १२०, डा० निशानन्द शर्मा, प्रकाशक–प्राकृत, जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान वैशाली (बिहार) १९८८
१९. कषायपाहुड (जयधवला) १/९/११/७
२०. जयधवला सहितं कषायपाहुड, चूर्णि, भाग-१, पृ० ११, द्वितीय
२१. विशेषावश्यक भाष्य, संपादक – डा० नथमल टांटिया, पृ० १६८-१६९
२२. न्यायविन्दु टीका १/७/१४०/१

■

डॉ० इंदरराज बैद

बाँका राजस्थान

बाँकी पगड़ी, बाँकी मूछें, बाँकी जिसकी शान है,
बाँके जिसके युद्ध बाँकुरे, बाँका राजस्थान है।
जिसकी गोदी का हर वालक ज्वालामुखी सरीखा है,
जिसकी हर नारी ने चलना अंगारों पर सीखा है।
जिसके पानी के आगे दुनिया का पानी फीका है।
ऐसा गौरवधाम हिंद का अपना वंश स्थान है।
अपना वंशस्थान तभी तो बाँका राजस्थान है।।
खड़ी अभी तक उसी शान से दुर्गों की प्राचीर यहाँ,
टूटी कितनी वार हारकर जुल्मों की शमशीर यहाँ,
लेकिन अब तक रही सुनहरी ही इसकी तस्वीर यहाँ,
भारत भर का वल विक्रम चिर विजयी इसकी आन है,
विजयी इसकी आन तभी तो बाँका राजस्थान है।।
यह पद्‌मिनियों की भूमि यहाँ का इतिहास निराला है,
फूलों की है सेज आज तो कल जौहर की ज्वाला है,
सुधा समझकर मीराँ हँस पी जाती विष का प्याला है,
सीस काट देती क्षत्राणी ऐसा यहाँ विधान है,
ऐसा यहाँ विधान तभी तो बाँधा राजस्थान है।।
वलिदानों के फूल खिले हैं इसकी लोहित माटी में,
खेल चुके हैं युद्ध बाँकुरे होली हल्दीघाटी में,
अनन्य यहाँ के वीर वलि को जीने की परिपाटी में
जीने-मरने का कुछ इसका न्यारा ही उनमान है,
न्यारा ही उनमान तभी तो बाँका राजस्थान है।।
धरा प्रतापी सिंहों की यह लाखों भामाशाहों की,
दानी-वलिदानों वेटों की पन्ना-सी माताओं की,
वसुंधरा है पावन भावी भारत की आशाओं की,
सीधे सच्चे शब्दों में यह नन्हा हिन्दुस्तान है,
नन्हा हिन्दुस्तान तभी तो बाँका राजस्थान है।।
अणुशक्ति की नूतन गंगा जहाँ हृदय में थी उतरी,
राजधरित्री पोकरणी वह सदा रहेगी गर्व भरी,
मारवाड़, अजमेर, उदयपुर, विश्व रम्य जयपुर नगरी
रोमांचक भूखंड देश की इनके कौन समान है,
इनके कौन समान तभी तो बाँका राजस्थान है।।

चेन्नई

■

आचार्य ज्ञान मुनि

बाहर के आकार : बताते विचार

हरेक मनुष्य के पास तीन प्रकार के योग होते हैं– मन, वचन और काया। इन योगों का कार्य मुख्यत: सोचना, बोलना और करना है। ये तीनों योग उसकी आत्मा को भीतर से बाहर तक जोड़ने का काम करते हैं। मन से जो भी चिन्तन किया जाता है, उसका असर वचन, काया में आए बिना नहीं रहता। इसलिए मनस्विदों ने मन को नियंत्रित करने एवं वश में करने की बात कही है। मन के नियंत्रित होने पर वचन और काया तो स्वत: ही नियंत्रित हो जाते हैं। जैन शास्त्रों में भी मन को नियंत्रित करने की बात महत्वपूर्ण रूप से प्रतिपादित की गई है। मन भीतर में है जो कि आत्मा से सीधा संस्पर्शित है। यह मन दो प्रकार का बतलाया है– द्रव्यमन और भावमन। द्रव्यमन तो पुद्गलात्मक होता है, भावमन विचारात्मक होता है। विचार स्फुलिंग एक तरह से आत्मा के ही पर्याय हैं। भीतर से उठने वाले ये स्फुलिंग, इन्सान को बाहर-भीतर प्रभावित करते हैं। जिस प्रकार घड़े के भीतर यदि पानी ठंडा हो तो बाहर ठंडापन लगेगा और यदि पानी के स्थान पर जलती हुई लकड़ी हो तो बाहर भी गर्माहट आए बिना नहीं रहेगी। इसलिए शास्त्रकारों ने कहा है– ''जहां अंतोतहा बाहिं'' इन्सान जैसा अन्दर में होता है वैसा ही बाहर भी आने लगता है। इसलिए बाहर को ठीक करने के लिए भीतर को ठीक करना आवश्यक है।

जो विचार व्यक्ति के भीतर में चल रहे हैं उसका शरीर पर किसी न किसी रूप में असर आए बिना नहीं रहता। भले कोई कितना ही विचारों को छिपाने का प्रयास या कोशिश करे फिर भी उसकी इन्द्रियों पर वे भाव उभर ही जाते हैं। बशर्ते कि सामने वाला इन्सान यदि बुद्धिमान हो तो स्पष्ट अनुमान लगा लेता है कि इसमें भीतर में क्या विचार चल रहे हैं।

यदि इन्सान को भीतर में क्रोध आ रहा है तो उसे वह कितना भी दबाने का प्रयास करे तो भी वह चेहरे पर किसी न किसी रूप में आ ही जाता है।

इसके लिए कषायों की परिभाषाएं सविस्तार जानना अपेक्षित है। इसके साथ ही गुरु गम से ज्ञान समझना जरुरी है। दवाएं कितनी भी हो पर डाक्टरी परामर्श, निर्देश आवश्यक है। वही स्थिति गुरु की है। पुस्तकीय ज्ञान कितना ही क्यों न हो तथापि उसे सही ढंग से समझने के लिए योग्य गुरु की आवश्यकता रहती है।

बाहर से भीतर के विचारों को समझने के लिए कई नीतिकारों ने भी कहा है–

आकारैइंगितैर्गत्या, चेष्टया भाषणेन च।
नैत्रवक्त्र विकारेण, लक्ष्यतेन्तर्गतं मन:।।

इन्सान के बाहरी आकार, इंगित, संकेत, चेष्टा एवं बोलना तथा आँखों एवं चेहरे की क्रियाएँ संकेत से उसके भीतर के विचारों को समझा जा सकता है।

उत्तराध्ययन सूत्र के माध्यम से भगवान महावीर ने गुरु के प्रति शिष्य के विनय को स्पष्ट करते हुए कहा है–

आणानिद्दस करे, गुरुण मुनवाए कारए।
इंगियागार संपन्ने, से विणिएत्ति वुच्चई।।

आज्ञा और निर्देश के अनुसार चलने वाला, गुरु के पास रहने वाला, इंगित और आकार से सम्पन्न साधक विनीत कहलाता है। बाहर के आँख, मुख और हाथ के ईशारे से समझने वाला विनीत शिष्य कहलाता है और कई बार बिना बाहरी हाथ, पैर, आँख आदि हिलाए गुरु के मन में उठने वाले विचारों को समझ जाता है, वह पूर्ण समर्पित विनीत शिष्य होता है। यह तभी संभव है जब गुरु शिष्य के मन में परस्पर पूरी तरह तदाकारता हो। जिस प्रकार माँ का बेटे के प्रति होता है। बेटा दस हजार कि० मी० दूर है, वहाँ भी अगर उसका ऐक्सीडेंट हो जाता है तो माँ का मन यहाँ उचट जाता है। वह बच्चे पर आये संकट को भांप जाती है। यह भीतर के इंगित/एक्शन हैं।

वासिलिएव एवं कामिनिएव ने इस संदर्भ में कई प्रयोग किये हैं। एक वैज्ञानिक कुछ चूहों को लेकर समुद्र की गहराइयों में गया। जहाँ पर वायु तरंगे/ध्वनि तरंगें भी नहीं पहुँच सके। ऊपर एक वैज्ञानिक उन चूहों की माँ के सिर पर इलेक्ट्रोड

(Electrode) मशीन फिट करके बैठ गया। जिस-जिस समय पर नीचे वाले वैज्ञानिकों ने चूहों को मारा, ठीक उसी समय पर चुहिया माँ का दिल हिला ओर मशीन से उसके संकेत रूप ग्राफ्स बनते चले गए। जो कि चुहिया के भीतरी संकेतों को स्पष्ट कर रहे थे।

स्वर विज्ञान से भी बाहरी स्थिति को समझा जा सकता है। चन्द्रस्वर में नाक से श्वांस बाएं चलेगा। ऐसा कहा जाता है कि चन्द्रस्वर चल रहा हो तो सभी कामों, बाहर जाने आदि में सफलता का संकेत देता है। सूर्यस्वर के चलते विद्या-विवाद, विघ्न, अशान्ति आदि कार्यों के जीतने में सहयोग मिल सकता है। रात्रि में चन्द्रस्वर और दिन में सूर्यस्वर सही माना जाता है। चन्द्रस्वर में पूर्व उत्तर दिशा में जाना वर्जित है। सूर्यस्वर में दक्षिण पश्चिम में जाना वर्जित है। यदि कृष्ण पक्ष चल रहा हो तो सोम, बुध बृहस्पति को दिन में चन्द्रस्वर और मंगल, शनि को रात में भी सूर्य स्वर सही माना जाता है। ये दोनों स्वर साथ चलते हो तो कोई भी अच्छा काम करना मना किया है। ऐसा भी बतलाया जाता है कि यदि स्वर के अनुसार दिन नहीं है और काम करना जरूरी है तो जिस तरफ का सुर चल रहा है, उस तरफ से पैर से साढ़े तीन कदम चलो। चन्द्र स्वर में बाएं से सूर्यस्वर में दाएं से साढ़े तीन कदम पैर वैसे ही चलने पर भी सही हो सकता है। यद्यपि अच्छा या बुरा निश्चय में तो आदमी के शुभाशुभ कर्म के उदय पर निर्भर है फिर भी इन संकेतों का अपनी जगह महत्वपूर्ण स्थान है। स्वर विज्ञान की तरह बाहरी आकार के रूप में रेखाएं भी है जो उसकी भीतरी स्थिति को स्पष्ट करती है। जैन शास्त्रों में बताया गया है कि तीर्थकरों के शरीर पर १०८ उत्तम लक्षण होते हैं। शंख, कमल, गदा, स्वस्तिक कलश आदि जो उनके तीर्थकरत्व को स्पष्ट करते हैं। पैर में पद्म रेख होती है।

एक बार भगवान महावीर कहीं जा रहे थे। उनके नंगे पैर मिट्टी में पड़ने से मिट्टी में पद्म रेख अंकित हो गई थी। उत्पल नाम के नेमितिक ने अनुमान लगाया कि यहाँ से जाने वाला निश्चित ही कोई महासमृद्धिशाली चक्रवर्ती होगा। मैं जाऊँ और उनसे कुछ न कुछ दक्षिणा प्राप्त करूँ। किन्तु जब वह आगे बढ़ा तो वहाँ एकदम अकिंचन भगवान महावीर को ध्यान करते हुए पाया। उसे देखकर विचार आया कि यह क्या बात हुई। ऐसी पद्म रेखा और फिर यह भिखारी हो नहीं सकता। लगता है शास्त्र झूठे हैं। नैमितिक खिन्न होकर अपने शास्त्र नदी में बहाने की तैयारी करने लगा। इतने में प्रभु की वन्दना करने के लिए इन्द्र आया। उसने उत्पल को समझाया कि तुम्हारे शास्त्र गलत नहीं है। यह तो चक्रवर्तियों के भी स्वामी हैं और स्वर्ग के ६४ इन्द्रों के वन्दनीय हैं इनकी समृद्धि का क्या कहना, तब उत्पल को समझ में आया। इन्द्र ने उसे सन्तुष्ट किया। इसी प्रकार ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती के पद्मरेख का भी वर्णन आता है। जिसे देखकर एक ब्राह्मण ने अनुमान लगा लिया था कि यह व्यक्ति भविष्य में निश्चय ही चक्रवर्ती बनेगा। इसलिए उसने अपनी कन्या की उसके साथ शादी कर दी। इस प्रकार रेखाएं भी भीतरी जीवन को कुछ अंशों में स्पष्ट करती है। लेकिन रेखा विज्ञान भी सही हो तब ना। लोग तो मस्तिष्क की रेखाओं को देखकर ही बहुत कुछ समझ जाते हैं। हर रेखा मस्तिष्क की उसके २० वर्ष के उम्र की प्रतीक बतलाते हैं। जितनी रेखाएं मस्तिष्क पर उभरेगी उतने २०-२० वर्ष जुड़ जाते हैं। मस्तिष्क रेखाओं के बारे में कहते हैं कि जिसके एकदम सीधी रेखाएं हो उसे तत्पर बुद्धिवाला और ईमानदार समझा जाता है। अधूरी रेखा वाले को अस्थिर, चापलूस समझा जाता है। छोटी-छोटी रेखाएं व्यापार आदि में असफलता की प्रतीक हैं। रेखा में आने वाला क्रास दुखदायी मृत्यु का सूचक है। प्लस निशान मिलनसार का सूचक है। एक में से एक रेखा का निकलना साहसहीन, ढुल-मुल नीति का परिचायक है और रेखा ऊँची-नीची चलती हो वह उस व्यक्ति की समृद्धिशालिता की परिचायक है। इसी प्रकार हाथ में भी जीवन रेखा, भाग्य रेखा, मस्तिष्क रेखा, हृदय रेखा आदि होती है। रेखा विज्ञान बहुत विस्तृत एवं गंभीर है। जिसको स्पष्ट एवं प्रामाणिक रूप में जानना आज के युग में बहुत मुश्किल है।

मृत्यु निकट है या दूर इस बात की जानकारी भी व्यक्ति के बाहरी चिह्नों से की जा सकती है। स्थानांग सूत्र के पांचवें ठाणे में कौन आत्मा, शरीर के किस अंग से निकलकर कहाँ जाती है। यह बतलाया है। नाक, कान, आँख मस्तिष्क आदि ग्रीवागर्दन के ऊपर से जिसका प्राण निकलता है उसके लिए देवलोक गमन बतलाया है। गर्दन के नीचे छाती, पीठ, नाक से श्वांस निकलने पर मनुष्य गति में जाना बतलाया है। नाभि के नीचे घुटने तक में से किसी भी अंग से श्वांस निकलने पर तिर्यंच गति में जाना बतलाया है। घुटने में पैर आदि से प्राण निकल जाय तो नरकगति में जाता है। जो आत्म-प्रदेश शरीर के सारे अंगों से निकलते हैं तब उसका मोक्ष होना बतलाया गया है। इसकी जानकारी अनुभवी व्यक्ति बाहरी श्वांस को देखकर लगा सकता है।

कुछ लोग शरीर के बाहरी चिह्नों को देखकर उसकी मृत्यु का अन्दाज भी लगाते हैं। स्वयं को स्वयं की भौंहे, नाक का अग्रभाग जिह्वा का अग्रभाग दिखलाई न दे तो दो दिन में मृत्यु होने का संकेत मिलता है। स्नान करने के बाद सारा शरीर भीगा और यदि मुंह पहले सूख जाय तो १५ दिन में उसकी मृत्यु

वतलाई गई है। कानों की कूपर पतली हो जाय, नाक की डंडी टेढी हो जाय, आँख सफेद हो जाय, नासिका लाल, कपाल काला हो जाय, मुख के वाल खिरने लगे, होठ सफेद हो जाय तो ३ दिन में मृत्यु की संभावना वतलाई है। भोजन पानी स्वाद न लगे। नाक के श्लेष्म की गंध दूध जैसी हो, छाती की दाहिनी ओर धड़कन वढ़ जाय। हाथ पैर के तलवे लाल हो जांय। नाखून काले पड़ जायें। शरीर की गंध शव जैसी हो जाय, नाड़ी सुस्त हो जाय, क्रोध वढ़ जाय, विनम्रता या मूर्च्छा बढ़ जाये। छाती पीली, जंघा श्वेत, गला नीला या लाल दिखाई दे। नाक पर सल पड़ जाए। हाथ-पैर ठंडे हो जाय और मस्तक गर्म रहे तो मृत्यु होना एकदम निकट बतलाया है।

शरीर के अंगों का स्वाभाविक वर्ण बदल जाय। मांस, वसा आदि नर्म अंग कड़े हो जाय। अचल अंग चल और चल अंग अचल हो जाय। आंखें घूम जाय, मस्तिष्क लटक जाय, जोड़ ढीले पड़ जाय, आँखें या जीभ भीतर घूम जाय तो भी मृत्यु को निकट जानो। आधा शरीर गर्म और आधा शरीर ठंडा पड़ जाय तो सात दिन में मृत्यु की संभावना कही गई है। इस प्रकार अनुभवियों ने अपने-अपने ढंग से मृत्यु की निकटता का बोध वाहरी अंगों से किया है। वैसे सिद्धान्तवादियों ने देवताओं के लिए भी वतलाया है कि च्यवन मरने से ६ महिने पहले देवताओं की फूलमाला मुर्झा जाती है जो उनकी मृत्यु को बतलाती है। कालिया कसाई के लिए भी वतलाया गया कि वह सातवीं नरक में जाने वाला था। जाने से पहले उसे घोर वेदना हो रही थी। उसके बेटे सुलभ ने उसके दाह ज्वर को शान्त करने के लिए वावना चन्दन का लेप करवाया। फिर भी कुछ नहीं हुआ। तब अभय कुमार के कहने पर उस पर अशुचि का लेप किया। गर्म-गर्म शीशा पिलवाया। कर्ण भेद आवाजें सुनवाई जो उसे प्यारी लगने लगी। इसका कारण स्पष्ट करते हुए अभय कुमार ने कहा कि यह ७वीं नरक में जाने वाला जीव है। अत: वहाँ जो चीजें अच्छी लगने वाली है वे अभी से अच्छी लगने लगी है। शास्त्रकार भी कहते हैं कि जिस गति में जो जानेवाला है, उस सम्वन्धी आनुपूर्वी का उदय यहीं पर होने लग जाता है। जाने से पहले गति के अनुरूप ही उसकी विचार-धारा भी बन जाती है। जो उसकी होने वाली गति का संकेत देती है।

कई बार पुराने व्यक्ति छींकने, खांसने, उवासी लेने से भी सम्वन्धित फलाफल का विचार करने लगते हैं। उनका मानना है कि जो छींक, सर्दी, जुखाम या किसी बीमारी के कारण न आकर अगर सहज में आई है इसके पीछे भी कोई कारण है क्योंकि विना कारण कोई काम नहीं होता। इसलिए छींक भी वहुत कुछ स्पष्ट करती वतलाती है। अनुभवी लोग यों कहते पाए जाते हैं।

छींक पीठ की कुशल उच्चारे, बायी छींक कारज सब सादे।
सम्मुख छींक लड़ाई भाखे, छींक दाहिनि द्रव्य विनाशे।''
ऊपरी छींक सदा जय कारी, नीची छींक महाभयकारी।
अपनी छींक महादु:ख दाई, ऐसे छींक विचारों भाई।

यह छींकों का स्पष्टीकरण अपने ढंग का दिया गया है। वैसे यह कोई जरूरी नहीं कि ऐसा ही हो।

एक बार हमें बंबई से विहार का संकेत मिला। आचार्य प्रवर ने चातुर्मास की घोषणा हमारे लिए रतलाम की कर दी। इतने में एक भाई ने छींक कर दी। हमने कहा- अब देखो क्या होता है। छींक तो हो गई। काम चलता रहा। बालकेश्वर से घाटकोपर तक रतलाम के लिए विहार हो गया। लेकिन पता नहीं क्या हुआ कि आचार्य प्रवर ने अचानक वापस बुलाया। हम लोग घाटकोपर से सीधे २२ कि०मी० करीब चलकर पुन: बालकश्वेर पहुंचे। आचार्य प्रवर से बुलाने का कारण पूछा वे बोले– तुम्हें अभी भेजने की लिए मेरी अन्तर आत्मा नहीं मानती। यहाँ भी तुम्हारी आवश्यकता है। मैंने कहा– ठीक है आपने ही खोला है चातुर्मास और आप बदल लीजिये और वह चातुर्मास बदल दिया गया। चातुर्मास, गुरुदेव के साथ घाटकोपर ही हुआ। कभी-कभी काकतालीय दृष्टि से समझें या सच। छींक का परिणाम ऐसा भी देखने को मिलता है।

कई बार आदमी ज्योतिष रेखाशास्त्र आदि में उलझ जाता है और अपने विलपावर (Will power) को कमजोर कर देता है। जवकि इन सबसे ऊपर आत्मा का विलपावर स्ट्रोंग (Strong) होना ही सफलता का परिचायक है।

कई लोग शकुन के चक्कर में भी रहते हैं कि घर से निकले तब शकुन देखकर निकला जाय। कहीं बिल्ली रास्ता तो नहीं काट रही है। ऐसी कई धारणाएं लोगों के दिमागों में घूमती रहती हैं। कहते हैं शकुनी चिड़ियाँ छ: माह पहले भूकम्प वाले स्थान को छोड़कर चली जाती है। जिस बात को वैज्ञानिक कभी-कभी तो एक दिन पहले भी नहीं जान पाते। हमने भी दिल्ली में कुछ सेकेण्ड का चला भयंकर भूकम्प से हिलते मकानों का अनुभव किया था। शकुन विचार सही है या नहीं, यह स्वतन्त्र रूप से समीक्षा का विषय है। भड्डरी द्वारा प्रचलित शकुन पर लोगों का भारी विश्वास देखा जाता है। जैसा कि कहा गया है–

गौन समे जो अपशकुन, ते आवत सुखदाय।
गौन समे जो शुभ शकुन, फर पैठत दु:खदाय।।
शकुन शुभाशुभ जानि निकट, हो हितो निकट कल।
दूर सो दूर बखान, कहे भड्डरी सहदेवल।।

अर्थात् अंगार, शंख, लकड़ियाँ, रस्सी, कर्दमा, खल, कपास, तुष, हड्डी, केश, यवधान्य, कूड़ा-करकट, तृण, छाछ,

अर्गला, बिन ऋतु की वर्षा, प्रतिकूल वायु आदि के रहते यात्रा के लिए प्रस्थान शुभ नहीं माना जाता है।

ऐसा भी बतलाया जाता है कि यात्रा करते समय जल से भरा घड़ा लिये कोई सौभाग्यवती स्त्री मिल जाय। गाय बछड़े को दूध पिलाती मिल जाय तो अच्छे शकुन समझे जाते हैं। यदि यात्रा चल रही हो और रास्ते में बार-बार लो॰ ड़ी दिखाई दे। बांयी ओर से दायी ओर हिरण आता दिखे तो ये सभी लक्षण कार्य में सिद्धि देने वाले होते हैं। सोम और शनि को पूर्व दिशा में मंगल बुध को उत्तर दिशा में बृहस्पति को दक्षिण दिशा में यात्रा करने का मना किया जाता है। यात्रा करते समय कुत्ता कान फड़फड़ा दे या धरती पर लौटता दिखे तो भी अशुभ कारक माना गया है। यदि राह में नेवला मिल जाय, बांयी तरफ पक्षी चुगा लेते दिख जाय तो कार्य सिद्धि के परिचायक माने गए हैं। दस व्यक्तियों का यात्रा में साथ होना भी विघ्न का संकेत देता है। बिल्लियों का युद्ध यात्रा में प्रतिबंधक है। गधा बांया और सर्प दायीं दिशा में यात्रा में मिले तो उचित ठहराया जाता है। इस प्रकार विभिन्न प्रकार से शकुन-अपशकुन का विचार भड्डरी शास्त्र के माध्यम से मिलता है।

अवन्ति देश में तुम्बवन नामक नगर के धनगिरि नामक सद्गृहस्थ ने अपनी सगर्भा पत्नी को छोड़कर आर्य सिंहगिरी के पास दीक्षा ले ली थी। यह घटना वीर निर्वाण के ४९६ वर्ष बाद की बतलाते हैं। वे जब विचरण करते हुए पुन: तुम्बवन पधारे और भिक्षा के लिए जाने लगे तो कहते हें कि उनके आचार्य श्री ने बाहरी शकुन लक्षणों का विचार करके अपने शिष्यों को यहाँ तक कहा था कि आज भिक्षा में जो भी सचित अचित मिल जाय उसे ले आना और वे गए। इधर उनकी संसारपक्षीय पत्नी ने बच्चे को जन्म दिया था, वह रोता ही रहता था। छ: महिने तक खूब रोया। इधर महाराज को अपने घर आया देखकर उस महिला ने वह बच्चा महाराज के पात्र में बहरा दिया। उसका रोना बन्द हो गया। महाराज धनगिरी बच्चे को आचार्य महाराज के पास लाए। उसके पालन-पोषण की व्यवस्था संघ ने की। भविष्य में वही बच्चा व्रजस्वामी के नाम से महान प्रभावक आचार्य हुए। इस घटना से स्पष्ट होता है कि शकुन तो माने जाते हैं पर शकुन की सच्चाई को नापना जरूरी है।

वीर निर्वाण के ६०० वर्ष बाद भयंकर दुष्काल पड़ा था, लोग मर रहे थे। उस समय व्रजस्वामी ने अपने शिष्य व्रजसेन से कहा था कि जिस दिन एक सेठ एक लाख स्वर्ण मुद्रा में एक मुट्ठी चावल खरीदकर विष खाकर मरने की तैयारी करता पाया जाय, वही दुष्काल का अन्तिम दिन होगा। हुआ भी यों ही। जिनदत्त सेठ, उनकी पत्नी ईश्वरी ओर उनके चार बच्चे नागेन्द्र, निवृत्ति, चन्द्र और विद्याधर भूख से परेशान ऐसा ही करने जा रहे थे वज्रसेन मुनि ने देखकर रोका और दूसरे दिन से ही सुकाल की स्थिति बन गई।

अंग फड़कना भी बाहरी आकार है। इसमें भी भविष्य के संकेत मिलते हैं। स्त्री का बायाँ और पुरुष का दायाँ अंग फड़कना सही माना गया है। कहते हैं मस्तिष्क के फड़कने से जमीन की प्राप्ति होती है। ललाट प्रदेश के स्फुरण से स्थान और सफलता की प्राप्ति होती है। आँख की भौहे और नासिक के मध्य भाग में फड़कने से आत्मीय व्यक्ति के मिलने की संभावना बतलाई गई है। नाक और आँखों के मध्य में स्फुरण होने पर मुसीबत में सहायता, धन आदि के प्राप्ति का संकेत होता है। आँखों के अन्तिम भाग में या कंठ के नीचे फड़कन हो रही है तो भी धन लाभ संकेत है। दाहिनी आँख के नीचे फड़क रहा है तो शत्रु बाधा से पीड़ित रह सकते हैं। कान का फड़कना अच्छी बात सुनने का संकेत है। होंठ, कंधा गले में स्फुरण होने पर मुख, प्रसन्नता, संतोष सुविधाएँ आने की स्थिति में भुजा के स्फुरण होने पर प्रियवस्तु मिलने वाली है। हाथ के स्पंदन से सम्पति, पराक्रम की प्राप्ति होती है। रीढ़ का फड़कना पराजय का प्रतीक है। अत: उस समय महत्वपूर्ण काम नहीं किया जाय। कमर का स्फुरण भारी कामों में सफलता का सूचक है।

इस प्रकार अंगों के स्फुरण से भी अच्छे बुरे संकेत का अन्दाज लोगों द्वारा लगाया जाता है। वर्तमान में वैज्ञानिक में बाहरी वस्तुओं पर ही विशेष रूप से आधारित रहने वाला इन्सान इन सबका अनुभूतिपरक प्रामाणिक ज्ञान नहीं कर पा सकने के कारण भी वह इन सब अवस्थाओं के ज्ञान से वंचित रह गया है। अन्यथा भड्डरी के ज्ञान से तो अनेक महत्वपूर्ण अवस्थाओं का ज्ञान किया जाता रहा है।

भड्डरी कौन हुई और यह ज्ञान कैसे क्या प्रचारित हुआ इसके पीछे भी एक रोचक तथ्य है।

घाघ नामक ज्योतिषी राजस्थान में जन्मे थे। परन्तु विद्वता के अनुरूप यहाँ पूरा सम्मान नहीं मिल पाया। तब वे वहाँ से निकलकर मध्यप्रदेश में धारानगरी चले गए। राजा भोज ने उन्हें उपयुक्त समझकर राज ज्योतिषी बना दिया। इस पर स्थानीय लोगों को ईर्ष्या भी हुई पर इससे क्या हो। राजा माने जो राणी और भरे पाणी। ज्योतिषी घाघ बड़े ठाठ-बाट के साथ रह रहे थे। उस वक्त एक घटना घटती है। जो उनके जीवन में एक विशिष्ट परिवर्तन लाने वाली बनी। राज्य में एक वर्ष अकाल के लक्षण दिखलाई देने लगे। दूर-दूर तक पानी होने की संभावना ही नजर नहीं आ रही थी। यह देख राजा भोज विचार में पड़ गए, तुरन्त सारे ज्योतिषियों को एकत्रित किया और पूछा कि इस वर्ष पानी

का योग है भी या नहीं। घाघ को छोड़कर सारे ज्योतिषियों ने ज्योतिष के पन्ने देखकर बतलाया कि तीन वर्ष तक इस प्रान्त में पानी का योग नहीं है। राजा भोज बहुत निराश हुए, उन्होंने घाघ से भी पूछा। अब तक घाघ चुपचाप बैठे थे। उन्हें अपनी ज्योतिष की गणना के अनुसार वर्षा का योग दिखलाई दे रहा था। पर जब सारे ज्योतिषी मना कर रहे थे तब वे भी विचार में पड़ गए और एक बार फिर अपना ज्योतिष मिलाने लगे। उन्होंने कहा ज्योतिष के अनुसार तो योग है। पर जब सब मना कर रहे थे तो अपनी बात को पुष्ट करने के लिए वर्षा से सम्बन्धित पशु-पक्षियों की चाल भी देख लेना चाहिये। यही सब सोचकर घाघ ज्योतिषी ने राजा को कहा– राजन, इस प्रश्न का जवाब कल दूंगा। राजा मान गए- उन्होंने एक दिन का समय दे दिया।

घाघ जंगल में गए। वहाँ पर उन्होंने एक गधे को देखा। जिसके कान लटके हुए थे। वे कुछ और आगे बढ़े तो देखा चिंटियों के दल के दल मुंह में अन्न के दाने लिए बिलों के भीतर भाग रहे हैं। चिड़िया धूल-मिट्टी में स्नान कर रही है। वह सब उन्हें आसन्न निकट में ही वर्षा होने का संकेत दे रहे थे और आगे बढ़ने पर देखा कि आकाश में चीलों का एक समूह वृताकार-गोलाकार ऊपर उठता हुआ जा रहा था। यह सब वर्षा के योग की सूचना दे रहे थे। घाघ और आगे बढ़े। उन्हें एक नाला दिखाई दिया। जिसके इस पार एक महत्तर-हरिजन की लड़की अपने पशु चरा रही थी और दूसरी पार उसके पिता सुअरों को चरा रहे थे। लड़की ने पुकारा बापा बापा! जल्दी लौट आ, आज रात को बड़े जोर से पानी आने वाला है। उसके बाद नाले में पानी भर जाने पर सुअर नाला पार नहीं कर पाएंगे। तब उसके बापा ने पूछा, यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ?

लड़की बोली बापा! नाले में टिटहरी ने अंडे दे रखे हैं। वह घबराई हुई है और जोरों से आवाज करती हुई अंडों को उठाकर दूसरी जगह सुरक्षित स्थान पर रख रही है। इससे स्पष्ट हो रहा है कि वर्षा जल्दी ही आज रात तक आ जाने वाली है। लड़की का नाम था भड्डुरी! उसके इस विश्लेषण को सुनकर घाघ ज्योतिषी अवाक् रह गए। उन्हें वर्षा आने का पक्का विश्वास हो गया और वे तुरन्त धारा नगरी लौटे। राजसभा में राजा एवं उपस्थित सारे ज्योतिषियों के सामने घोषणा की कि वर्षा निश्चित रूप से होगी। आने वाले आठ पहर याने चौबीस घंटे में मूसलाधार वर्षा होने की संभावना है। सूर्य को प्रचण्डता के साथ तपते हुए देखकर किसी को इस बात पर विश्वास नहीं हो रहा था। तब तक बादल की एक टुकड़ी भी नजर नहीं आ रही थी। लोगों ने पूछा इसका क्या प्रमाण है। ज्योतिषी घाघ ने कहा घाघा का वचन ही प्रमाण है। आगे आने वाले २४ घंटे का इन्तजार किया जाय। सभा विसर्जित हो गई। सभी अगले पल का इन्तजार करने लगे। घाघ भी अपने शयन कक्ष में बादलों की ओर दृष्टि गड़ाए सो गए। रात्रि की प्रथम पहर बीत जाने तक आकाश एकदम साफ था। लेकिन रात्रि की १० बजे बाद बादल की एक टुकड़ी दिखलाई दी और कुछ ही देर में रिमझिम रिमझिम वर्षा होने लगी। कुछ और समय बीत जाने के बाद तो घनघोर बादल छा गए, बिजलियाँ चमकने लगी। बादल गर्जने लगे और मूसलाधार वर्षा हुई। मानो जल-थल एकाकार हो गया। सभी लोग घाघ के वाक्य से आश्चर्य चकित थे। सबेरा होते-होते तो घाघ के मकान के सामने भारी भीड़ एकत्रित हो गई। सभी घाघ की जय-जयकार कर रहे थे। सभी को घाघ की वाणी पर अचूक विश्वास हो गया था। राजा भोज ने घाघ की ज्योतिषी की सर्वोच्च उपाधि से विभूषित किया। अब तो ईर्ष्यालु भी घाघ का लोहा मान गए।

ज्योतिषी घाघ को लगा कि महत्तर की लड़की भड्डुरी यद्यपि निम्न कुलोत्पन्न है फिर भी बाहर के संकेतों से होने वाली घटनाओं का उसे अद्भुत ज्ञान है। जानकारी करने पर पता चला उसे शकुन-अपशकुन आदि अनेक बातों का भी जबर्दस्त ज्ञान है। घाघ ने सोचा- कीचड़ में भी कमल खिला है और पत्थरों में हीरा मिल रहा है उसे उठा लेना चाहिये। क्यों न भड्डुरी से शादी ही कर ली जाए। शकुन आदि देखने में उसका भारी सहयोग मिलेगा। घाघ ने भड्डुरी की मांग उसके पिता से की। पहले तो उन्होंने मना कर दिया। परन्तु बार-बार मांग करने पर उन्होंने अपनी पंचायत बुलाकर यह बात रखी। तब पंचायत में लोगों ने घाघ से कहा कि भड्डुरी से शादी करने पर तुम्हें ब्राह्मण समाज से निकाल दे, यही नहीं राजा, राज ज्योतिष का पद वापस ले ले तो भी तो आप भड्डुरी को नहीं त्याग सकोगे। घाघ ने यह बात मंजूर की तब भड्डुरी का विवाह उसके साथ कर दिया गया। उन दोनों से मिलकर जो सन्तान पैदा हुई, वह डाकोत कहलाई। कहा जाता है कि आज डाकोत जाति के लोग घाघ भड्डुरी की ही सन्तान हैं।

इसके साथ ही शरीर के बाहरी आकार भी भीतरी संकेतों को स्पष्ट करने वाले बनते चले जाते हैं। जिस प्रकार वाणी दुनियाँ को समझाने में काम आती है उसी प्रकार शरीर के एक्शन भी लोगों को उसकी मानसिकता समझाने वाले बनते हैं। जिसे आज भी भाषा में बॉडी लेग्वेंज के रूप में माना जाता है। इन्सान की बॉडी-शरीर भी एक भाषा का काम करती है।

सन् १८७२ में एलबर्ट ने बतलाया कि व्यक्ति के बोलने का प्रभाव ७ प्रतिशत पड़ता है। २८ प्रतिशत लहजे का और

५५ प्रतिशत भाव उसके संकेतों का होता है। चार्ली चेपलीन ने भी इस वात को विस्तृत समझाया। सन् १९६० में ज्यूलियस ने इसे और आगे वढ़ाकर संकेतों के अर्थ को व्यवस्थित रूप से प्रतिष्ठापित किया।

जैनागमों में बॉडी लेग्वेंज को अपने ढ़ंग से अच्छे तरीके से समझाया है। यही नहीं जैन शास्त्रों में मन के एक्शन को भी समझाया है। जैसे किसी व्यक्ति को धीरे से कहा जाय कि यह काम तुम्हें करना है और यही वात तेज शव्दों में कहा जाय कि यह काम तुम्हें ही करना है तो सामने वाले के समझने में भारी फर्क आ जाता है। रेडियो से टी०वी० देखने में व्यक्ति को ज्यादा अच्छा समझ में आता है क्योंकि उसमें आवाज और लहजे के साथ ही एक्शन भी साफ नजर आते हैं। णमोत्थुणं में वायां घुटना खड़ा करवाया जाता है जो विनम्रता का प्रतीक है और गौतम स्वामी आदि जव प्रश्न पूछते थे, तव ऐसे ही वैठते थे। परन्तु जव श्रमण प्रतिक्रमण का पाठ किया जाता है दांया घुटना खड़ा करवाया जाता है। यह वीरता का परिचायक है। अर्थात् लिये हुए व्रतों को दृढ़ता के साथ पालन करने का सूचक है। यही स्थिति व्यावहारिक जीवन में भी वतलाते हैं कि जव बन्दूक चलाई जाती है तो राइट का घुटना आगे खड़ा किया जाता है। जिससे सीना तन जाता है। तभी वह सधे हुए हाथों से गोली चलाता है। अति विशिष्ट व्यक्ति के कक्ष में जव कोई व्यक्ति जाता है। जिसके मन में सामने वाले व्यक्ति के प्रति पूरा सम्मान हो तो कक्ष में वह प्रवेश करेगा तो उसका स्वत: ही वांया पैर पहले प्रवेश करेगा। यदि सम्मान की भावना कम हो तो फिर दायां पैर पहले जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति कुर्सी पर वैठा है। वह वैठा-वैठा ही पैर पर पैर को चढ़ा देता है तो ऊपर वाले पैर का अंगूठा जिस तरफ गया है समझना चाहिये उस व्यक्ति को वोलने का कार्य उधर की तरफ वैठे व्यक्तियों की तरफ है। जव वह पैर वदलता है तो जिधर पैर को चढ़ाया है अव वह उधर ही वात करना चाहता है। यह शरीर का संकेत है। चपरासी जव भी अफसर के पास जाता है, तो ज्यादातर वह उसके वांयी तरफ ही आकर खड़ा होता है। किसी अफसर से काम करवाना हो तो उसके सामने नहीं वैठें। उसकी दायें तरफ न वैठें। ऐसा वैठने पर हो सकता है काम न हो। क्योंकि सामने वैठने पर अफसर के मस्तिष्क में अदृश्य रूप में ऐसा लगता है कि यह उसका प्रतिस्पर्धी है। दांयी ओर वैठने पर भी यही स्थिति हैं। वांयी ओर वैठना विनय का सूचक है। वांयी तरफ वैठे व्यक्ति पर सामने वाले का साफ्ट कार्नर वन सकता है। क्योंकि वह विनय का परिचायक है। भीतरी ऊर्जा का वांयी ओर झुकाव होने से उधर प्रवाहित हो जाती है। जव दो तीन व्यक्ति खड़े वात कर रहे हों तो वोलने वाले के पैर पर अंगूठा जिधर है वह उस व्यक्ति से वात करने की इच्छा वाला वन जाता है।

सदियों से भारतीय संस्कृति में हाथ उठाकर हथेली सामने करते हुए आशीर्वाद देने की प्रक्रिया अपनाई जाती है। यह भीतरी निर्मलता, सादगी, सरलता का प्रतीक है। यही स्थिति व्यावहारिक जीवन में भी देखी जा सकती है। जव कोई व्यक्ति किसी का सम्मान करता है तो वह दोनों हाथ खोलकर हथेलियां उसके सामने घुमाता हुआ पधारो-सा वोलता है। यह सम्मान का परिचायक है। यदि भीतर में सामने वाले के प्रति सम्मान नहीं हो तो वह ऐसा एक्शन न करके अंगुली से इशारा करता हुआ वोलेगा। इधर आ, उधर आ। जिससे लग जायेगा कि सामने वाले के प्रति सम्मान की भावना नहीं है। कोई उग्रवादी समर्पित होता है तो वह भी दोनों हाथ ऊपर रखकर हथेलियां सामने कर देता है कि अव मै खाली हूँ। कोई खोट नहीं है। भीतर में यदि कोई व्यक्ति झूठ वोल रहा है या सच। तव सामनेवाले के हाथ का एक्शन देखिये। यदि वह दोनों हाथ थोड़ा ऊपर उठाकर ऐसा करता है कि सच मानिये। मैं जो भी कर रहा हूँ वह सच कर रहा हूँ। यदि सामने वाला ऐसा न करके दाढ़ी पर हाथ फिराएगा या कान या फिर सिर पर खुजली करने लगता है या नाक के नीचे एक अंगुली घुमाता है आदि करे तो साफ है कि वह झूठ वोल रहा है, क्योंकि यह सव सोचने के आकार हैं। सच वोलने वाले को सोचना नहीं पड़ता। वह साफ है। विकल्प झूठ में ही उठते हैं।

सदियों से यह परम्परा है कि आदेश देने वाले ऋषि महर्षि श्रोताओं से कुछ ऊपर वैठते हैं। ऊपर से विचार-तरंगे नीचे की तरफ प्रवाहित होती है जो श्रोता को प्रभावित करती है। इसी प्रकार वॉडी लेग्वेंज में भी यह वतलाया जाता है कि सेल्समैन की कुर्सी ऊपर और खरीददार की नीचे हो तो सेल्समेन जो चीज जितने में वेचना चाहेगा ज्यादा संभावना होगी कि उसमें कोई मोल भाव नहीं होगा और वह उतने में ले ही लेगा। यदि वेचने वाले का आसन कुर्सी नीचे होगा और वह उतने में ले ही लेगा। यदि वेचने वाले का आसन कुर्सी नीचे है और खरीदने वाले की ऊपर है तो ज्यादातर संभावना यह है कि मोलभाव होगा और उसमें खरीदने वाले की इच्छा ज्यादा महत्वपूर्ण वनती चली जाएगी। क्योंकि ऊर्जा तरंगों का दवाव, ऊपर से नीचे की ओर आता है। इसलिए ज्यादातर दुकानों पर सेठ की गद्दी थोड़ी ऊपर होती है। लेने वाले को भले डनलप के गद्दे पर विठा देंगे पर उसका स्थान थोड़ा नीचे ही रहेगा ताकि देने वाले की ऊर्जा उस पर असर करे।

कोई आदमी नीची गर्दन करके बोलता है तो समझ लीजिये यह अपराधी है या लज्जावान है। हाथ मिलाते वक्त भी कोई मजबूती से पकड़ता है और कोई ढीला। जो ज्यादा मिलने वाला है, उसका हाथ कड़ा पकड़ लेते हैं जो कम मिलने वाला है, उसका ढ़ीला पकड़ लेते हैं। याने कि जिस व्यक्ति में आपका इन्ट्रेस्ट ज्यादा है उसका हाथ कसकर पकड़ लेते हैं। जिससे इन्ट्रेस्ट कम है उसे ढीला पकड़ेंगे।

सैनिक हमेशा हाथ मजबूती से पकड़ता है। उसका कारण अलग है। क्योंकि वह बतलाता है कि मैं इज्जत से, शरीर से चरित्र से, मजबूत हूँ। कई बार सामने वाले के प्रति ज्यादा उत्सुक व्यक्ति अपने दोनों हाथ आगे करता है और सामने वाले की उत्सुकता उसमें नहीं है तो वह औपचारिकता निभाने के लिए अपना एक हाथ ढीले तरीके से आगे बढ़ा देता है। जिसे वह व्यक्ति दोनों हाथों से दबाता है तो स्पष्ट है कि हाथों से दबाने वाला सामने वाले को कुछ कहना चाहता है, उससे कुछ काम करवाना चाहता है चापलूसी करके। कई बार आदमी किसी को अंगूठा दिखाकर हिलाता है तो उसे टकराने का संकेत देता है और यदि तना हुआ अंगूठा खड़ा रखता है तो वह उसके आत्मविश्वास का परिचायक है। कोई प्रवचन दे रहा है और आप कड़क से बैठे हैं तो लगेगा आप सुनने को इच्छुक हैं और यदि ढीले-ढाले बैठे हैं तो लगेगा कि आप सुनना नहीं चाहते हैं। यदि कोई किसी से निकटता से बात कर रहा है तो लगेगा कि वह आपका कोई अनन्य मित्र है, सम्बन्धी है। इस प्रकार शरीर, हाथ पैर, आँख कान के ईशारे ऐसे होते हें, जिससे व्यक्ति के मनोगत भाव समझे जा सकते हैं। कई बार केवल आँखें ही विभिन्न रूपों में व्यक्ति की मानसिकता का संकेत दे देती है कि वह आपके प्रति क्या रूख रखता है, घृणा, क्रोध, प्रेम आदि अनेक बातें केवल आंखें ही बता देती हैं। वैद्य नाड़ी के बदलते रूप को देखकर बीमारी का अनुमान लगा लेता है, यह भी एक स्वतन्त्र विषय है।

इसलिए साधु को विनय के लक्षण में ''इंगियागा संपन्ने'' इंगित और आकार में संपन्न होना बतलाया है। जब वह गुरु के इंगितों को समझने में दक्ष हो जाएगा तो वह अन्य व्यक्तियों के इंगितों को समझने में भी दक्ष हो जाएगा। ऐसा व्यक्ति संयम के साथ हित में प्रवृत्ति और अहित से निवृत्ति ले सकता है। शास्त्रों में हत्थ संजए, पाय संजए आदि विशेषण भी आए हैं। वे हाथ संयम, पैर संयम, इन्द्रिय संयम, वाक्-वचन संयम आदि का संकेत करते हैं। इसलिए कि तुम्हारे अंग-प्रत्यंग भी आस्रव कर्मबन्धन की ओर नहीं जाने चाहिये।

जैन शास्त्रों में बाहरी संकेतों का गहरा विश्लेषण मिलता है। यदि हम आज के स्वर विज्ञान, रेखा विज्ञान, शकुन विज्ञान, नाड़ी विज्ञान तथा शास्त्रीय धरातल की स्थिति को सामने रखते हुए क्षीर नीर विवेकिनी बुद्धि के अनुसार कार्य करते हैं तो लक्ष्यानुरूप सफलता प्राप्त कर सकते हैं। काया, वचन और मन के संकेतों को संयम के अनुरूप बनाने का प्रयास किया जाय तो अन्तरंग शक्ति का जागरण हो सकता है। बाहर से भी संयमी आचरण को मजबूती के साथ अपनाया जाता है तो धीरे-धीरे वह अन्तरंग को छूता चला जाता है। जब इंजन चाबी से नहीं चलता है तो बाहर से हैण्डल (Handle) घुमाकर चलाया जाता है। जब अन्दर का इंजन चालू हो जाय ता हेण्डल निकाल लिया जाता है। उसी प्रकार अन्तरंग स्थिति को उज्ज्वल बनाने के लिए बाहर से भी पूरी तरह से संयम बरतने वाला व्यक्ति पवित्रता को पा जाता है।

■

डॉ० प्रेमशंकर त्रिपाठी

अष्टछाप की कविता यानी भक्ति, काव्य एवं संगीत की त्रिवेणी

पुष्टिमार्ग के प्रतिष्ठाता महाप्रभु वल्लभाचार्य की भक्ति पद्धति को भक्तिकाल के जिन प्रमुख आठ कवियों ने अपनी काव्य प्रतिभा से परिपुष्ट किया था, उन्हें 'अष्टछाप' या 'अष्टसखा' के नाम से जाना जाता है। ये आठ कवि हैं : सूरदास, परमानंददास, कुंभनदस, कृष्णदास, नन्ददास, चतुर्भुजदास गोविन्द स्वामी और छीत स्वामी। इनमें से प्रथम चार श्रीमद् वल्लभाचार्य के तथा परवर्ती चार कवि गोस्वामी विट्ठलनाथजी के शिष्य थे।

कृष्णभक्ति शाखा के ये आठों कवि परमभक्त होने के साथ-साथ काव्य-मर्मज्ञ और सुमधुर गायक थे। ये सभी व्रज क्षेत्र के गोवर्द्धन पर्वत पर स्थित श्रीनाथजी के मन्दिर में कीर्तन सेवा करते हुए पद रचना किया करते थे। वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित कवियों की रचनाओं में भक्ति की जो धारा प्रवाहित हुई है, वह अपने अन्त:करण में वात्सल्य, सख्य, माधुर्य, दास्य आदि भावों को समेटे हुए हैं। उत्तर भारत में सगुण भक्ति को प्रतिष्ठित करने में इन कवियों का अवदान अविस्मरणीय है। लौकिक एवं अलौकिक दोनों दृष्टियों से इनकी रचनाएँ विशिष्ट हैं।

वल्लभाचार्यजी के शिष्य तथा कला-साहित्य, एवं संगीत मर्मज्ञ विट्ठलनाथजी ने इन ८ कवियों को अपनी प्रशंसा से विभूषित कर आशीर्वाद की छाप लगायी थी, यही कारण है कि ये रचनाकार 'अष्टछाप' के नाम से सुख्यात हुए। श्रीनाथजी की लीला में अंतरंग सखा के रूप में साथ रहने के कारण इन्हें 'अष्टसखा' भी कहा जाता है। सं० १६०२ में गोस्वामी विट्ठलनाथ ने 'अष्टछाप' की स्थापना की थी। कुछ विद्वानों की दृष्टि में 'अष्टछाप' की स्थापना सं० १६२२ (१५६५ ई०) में हुई थी। अष्टछाप के कवियों का रचनाकाल सं० १५५५ से सं० १६४२ तक स्वीकार किया जाता है।

अष्टछाप के संस्थापक गोसाई विट्ठलनाथ महाप्रभु वल्लभाचार्य के द्वितीय पुत्र थे, उनका जन्म पौष कृष्ण ९ सं० १५७२ शुक्रवार को काशी के निकट हुआ था। वल्लभाचार्य जी के देहावसान के उपरान्त उनके ज्येष्ठ पुत्र गोपीनाथजी आचार्य पद पर आसीन हुए परन्तु ८ वर्षो बाद उनके देहावसान के उपरान्त श्री विट्ठलनाथजी आचार्य पद पर सं० १५९५ प्रतिष्ठित हुए। उनके नेतृत्व में पुष्टिमार्गीय वैष्णव सम्प्रदाय को पर्याप्त यश की प्राप्ति हुई। सं० १६४२ वि० में विट्ठलनाथजी का गोलोकवास हुआ। गो० विट्ठलनाथजी ने अपने पिता के सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार हेतु उनके ग्रन्थों का अध्ययनकर भाव पूर्ण टीकाएँ लिखीं तथा कुछ स्वतंत्र ग्रन्थों की भी रचना की। उनके द्वारा रचित लगभग वारह ग्रंथ हैं। विट्ठलनाथजी के भक्तों की संख्या वहुत वड़ी थी। इन भक्तों में २५२ वैष्णव भक्तों को प्रसिद्धि प्राप्त हुई। सभी भक्त पुष्टिमार्ग के अनुयायी, कुशल गायक और प्रभावी रचनाकार थे। गोसाई विट्ठलनाथ ने इन भक्तों में सर्वश्रेष्ठ चार तथा अपने पिता के शिष्यों में चार रचनाकारों को मिलाकर ही 'अष्टछाप' की प्रतिष्ठा की थी। इन आठों कवियों की अनन्य भक्ति, संगीत साधना तथा काव्य निष्ठा केवल कृष्ण भक्ति शाखा की ही नहीं हिन्दी साहित्य की वहुमूल्य धरोहर है।

सूरदास : (१४७८ ई०-१५८२ ई०) भक्तिकाल की कृष्णभक्ति शाखा को अपने पदों से सर्वाधिक समृद्धि प्रदान करने वाले सूरदास का जन्म दिल्ली के निकट सीही ग्राम में एक निर्धन सारस्वत व्राह्मण परिवार में हुआ था। सूर के जन्म-मृत्यु संवंधी वर्ष को लेकर विद्वानों में मतभेद है। अधिकांश अध्येता उनका जन्म सं० १५३५ (१४७८ ई०) तथा मृत्यु सं० १६४० (१५८३ ई०) मानते हैं। वे जन्मांध थे या वाद में नेत्रहीन हुए, इस वात पर भी मतैक्य नहीं है– लेकिन इस वात पर सभी एकमत हैं कि अष्टछाप के कवियों में भक्ति और काव्य दोनों दृष्टियों से सूर का साहित्य सर्वोत्कृष्ट है।

वल्लभ सम्प्रदाय से सम्वद्ध होने के पूर्व सूरदास के पदों में दैन्य एवं विनयभाव की प्रधानता रही है– 'हौं सव पतितन कौ नायक' । 'हौं हरि सव पतितन कौ टीकौ'। वल्लभाचार्यजी की सत्प्रेरणा से वे दास्य, सख्य एवं माधुर्य भाव के पद लिखने लगे। वल्लभाचार्यजी ने श्री मद्भागवत की स्वरचित सुवोधिनी टीका की व्याख्या कर उन्हें कृष्ण-लीला से सुपरिचित कराया।

सूरदासजी ने इसे स्वीकार भी किया है- 'श्री वल्लभ गुरुत्व सुनायो लीलाभेद बतायो,' वल्लभाचार्य ने सूर से कहा- 'सूर ह्वैकै धिधियात काहे को हौ, कछु भगवद् लीला वरनन करू'।

सूर विरचित कृतियों की संख्या पच्चीस मानी जाती है जिनमें कुछ की प्रामाणिकता को लेकर सन्देह है। सूर-सागर, सूर-सारावली, साहित्य-लहरी आदि उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। उन्होंने लगभग सवा लाख पदों की रचना की थी, जिनमें केवल ५००० पद उपलब्ध हैं जो 'सूर सागर' में संकलित हैं, इन पदों की भाषा भंगिमा तथा भावाकुलता अनूठी है। भाव-पक्ष तथा कला-पक्ष दोनों दृष्टियों से उनकी रचनाएँ बेजोड़ हैं। सूर के पदों में भक्ति, वात्सल्य तथा वियोग श्रृंगार का सजीव मार्मिक एवं स्वाभाविक वर्णन हर किसी को मोह लेता है। इन्होंने वात्सल्य के पदों की रचना के कारण सर्वाधिक कीर्ति अर्जित की है। सूर के पद जन-जन के कंठ में विराजते हैं। 'जसोदा हरि पालने झुलावे' और 'शोभित कर नवनीत लिए' जैसे पदों में शिशु कृष्ण का भावपूर्ण वर्णन हो या 'मैया मैं नहिं माखन खायो' और 'मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायौ' का प्रभावी बाल वर्णन सूरदास का स्पर्श पाकर अद्वितीय बन गए हैं। भ्रमर गीत संबंधी पद सूर की नवीन उद्भावना, भावुकता तथा दार्शनिक गांभीर्य के द्योतक हैं। उनकी काव्यमर्मज्ञता तथा भक्ति निष्ठा की प्रशंसा में कई उक्तियाँ प्रचलित हैं। 'सूर सूर तुलसी शशि', 'सूर शशि तुलसी रवि', 'सूर कवित सुनि कौन कवि, जो नहिं सिर चालन करै' के अतिरिक्त निम्नलिखित दोहा जनमानस और विद्वन्मंडली में उनकी लोकप्रियता प्रमाणित करता है।

किधौं सूर को सर लाग्यो, किधौं सूर की पीर।
किंधौ सूर को पद सुन्यो, तन-मन धुनत शरीर।

सूरदास के देहावसान को आसन्न जानकर गोस्वामी विट्ठलनाथ ने भावाकुल होकर कहा था- 'पुष्टि मारग को जहाज जात है, सो जाकों कछू लेनो होय सो लेउ'

सूर विरचित एक पद :

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै।
जैसे उड़ि जहाज को पंछी, फिरि जहाज पर आवे।।
कमल नैन को छाँड़ि महातम, और देव को ध्यावे।
परम गंग को छाँड़ि पियासो, दुरमति कूप खनावै।।
जिहिं मधुकर अम्बुज रस चाख्यौ क्यों करील फल खावै।
'सूरदास' प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।

कुम्भनदास (१४६८ ई० - १५८२ ई०) गोवर्द्धन पर्वत के निकट 'जमनावती' ग्राम निवासी कुंभनदास मूलत: किसान थे। परासौली चंद्रसरोवर के निकट इनके खेत थे। वहीं से होकर ये श्रीनाथजी के मन्दिर में कीर्तन सेवा हेतु जाया करते थे। गोखा क्षत्रिय कुल में सं० १५२५ (१४६८ ई०) को जन्मे कुम्भनदास भगवद भक्त थे तथा गरीब होने के बावजूद अत्यंत स्वाभिमानी थे। १४९२ ई० में महाप्रभु वल्लभ ने सर्वप्रथम इन्हें दीक्षा दी थी। अष्टछाप के प्रथम चार कवियों में वल्लभाचार्यजी के ये प्रथम शिष्य थे। इनकी गायन कला से प्रसन्न होकर ही आचार्यजी ने इन्हें मन्दिर में कीर्तन की सेवा प्रदान की थी। इनके पद आम जनता में प्रेमपूर्वक गाए जाते थे। कहा जाता है कि इनके द्वारा रचित पद को किसी गायक के कंठ से सुनकर सम्राट अकबर इतने मुग्ध हुए कि उन्होंने इसके रचयिता को फतेहपुर सीकरी आने का निमंत्रण देकर उन्हीं से पद सुनने की इच्छा प्रगट की। सम्राट के बुलावे पर कुम्भनदास सीकरी तो गए परन्तु अनिच्छापूर्वक। उनका यह भाव तब प्रगट हुआ जब सम्राट ने उनसे गायन का अनुरोध किया। कुंभनदास ने अधोलिखित पद सुनाया-

भक्तन को कहा सीकरी सों काम।
आवत जात पन्हैया टूटी, बिसरी गयो हरि नाम।।
जाकें मुख देखे दुख लागे, ताको करन परी परनाम।
कुम्भनदास लाल गिरधर बिन यह सब झूठो धाम।।

अपने आराध्य के प्रति अगाध भक्ति के साथ-साथ यह पद रचनाकार की निस्पृहता, निर्भीकता का भी परिचायक है। यह पद साहित्यकार की तेजस्विता तथा स्वाभिमान के लिए आज भी गौरव के साथ दुहराया जाता है। कुंभनदास जी का निधन संवत १६३९ वि० (१५८२ ई०) के आसपास हुआ था। अष्टछाप के कवियों में सबसे लंबी आयु (११३ वर्ष) कुंभनदासजी ने ही प्राप्त की थी।

कुंभनदासजी द्वारा रचित पद :

जो पै चोप मिलन की होय।
तो क्यों रहे ताहि बिनु देखे लाख करौ जिन कोय।।
जो यह बिरह परस्पर व्यापै तौ कछु जीवन बनैं।
लो लाज कुल की मरजादा एकौ चित न गनैं।।
'कुंभनदास' प्रभु जा तन लागी, और न कछू सुहाय।
गिरिधर लाल तोहि बिनु देखे, छिन-छिन कलप बिहाय।

परमानन्ददास (१४९३ ई०- १५८३ ई०) अष्टपद के कवियों में विशिष्ट स्थान के अधिकारी परमानन्ददास कन्नौज निवासी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। एक निर्धन परिवार में सं० १५५०वि० (१४९३ ई०) को जन्मे परमानन्ददास का मन बचपन से ही भगवद्भक्ति मे रमता था। जनश्रुति है कि जन्म के दिन किसी सेठ ने इनके पिता को प्रचुर धन प्रदान किया था जिससे परिवार को परम आनन्द की प्राप्ति हुई थी, इसी कारण इनका नाम परमानन्ददास रखा गया।

परमानन्ददास कला एवं साहित्य के प्रेमी थी। वल्लभदासचार्य जी के सम्पर्क में आकर वे आजीवन श्रीनाथजी के मन्दिर में

सेवारत रहे। उन्होंने न विवाह किया और न ही वे धन उपार्जन हेतु सक्रिय हुए। इनकी भक्ति विषयक रचनाओं की प्रभविष्णुता से प्रभावित होकर कई विद्वान इन्हें अष्टछाप के कवियों में सूरदास एवं नन्ददास के उपरान्त परिगणित करते हैं। इनके पदों का संग्रह 'परमानन्द सागर' के नाम से प्रकाशित है जिसमें लगभग दो हजार पद संग्रहीत है। अन्य प्रमुख कृतियां हैं– 'दान-लीला', 'ध्रुव चरित्र' 'परमानन्ददासजी के पद'।

बाल-लीला, माधुरी लीला, वियोग शृंगार, मान, नखशिख वर्णन आदि का वर्णन करने में इन्हें विशेष सफलता प्राप्त हुई है। भाषा, भाव तथा अलंकार की दृष्टि से इनकी रचनाएँ विमुग्धकारी हैं। रचनाओं की गेयता पदों के सौन्दर्य को बढ़ा देती हैं। सं० १६४० वि० (१५८३ ई०) के लगभग इनका गोलोकवास हुआ था। कहा जाता है कि जन्माष्टमी के दिन आनन्दातिरेक में नृत्य करते हुए ही इनकी मृत्यु हुई थी।

परमानन्ददासजी का एक पद :

प्रीति तो नन्द नन्दन सों कीजै।
सम्पति विपति परे प्रतिपालै कृपा करै तो जीजै।।
परम उदार चतुर चिन्तामणि सेवा सुमिरन मानै।
चरन कमल की छाया राखे अंतरगति की जानै।।
बेद पुरान भागवत भाषै, कियो भक्त को भायो।
'परमानन्द' इन्द्र को वैभव विप्र सुदामा पायो।।

कृष्णदास (१४९५ ई० – १५८१ ई०)

महाप्रभु वल्लभाचार्य के शिष्यों में कृष्णदास की प्रसिद्धि कवि गायक की अपेक्षा व्यवस्थापक एवं दक्ष प्रबंधक की है। १३ वर्ष की उम्र मे अपने जन्म स्थान गुजरात से ब्रज में आए कृष्णदास जी का जीवन वल्लभाचार्यजी से दीक्षा लेने के उपरान्त कृष्णभक्ति की ओर उन्मुख हो गया था। गुजरात के राजनगर (अहमदाबाद) के चिलोतरा ग्राम में एक शूद्र परिवार में सं० १५२२ वि० (१४९५ ई०) में कृष्णदास का जन्म हुआ था। इनके पिता अनैतिक ढंग से धनोपार्जन करते थे। जिससे क्षुब्ध होकर कृष्णदास ने घर छोड़ दिया और वल्लभाचार्य की शरण में आ गए।

अपनी व्यावहारिक बुद्धि तथा प्रबंध कौशल से इन्होंने वल्लभाचार्य को प्रभावित किया फलत: आचार्यजी ने इन्हें श्रीनाथ मन्दिर का अधिकारी नियुक्त कर दिया। संभवत: इसी कारण इनका नाम कृष्णदास अधिकारी प्रचलित हो गया। श्रीनाथजी के मन्दिर को नवीन रूप प्रदान करने तथा उसे वैभव सम्पन्न करने में इनका विशिष्ट अवदान था। मन्दिर से बंगाली पुजारियों को अपदस्थ करने में भी इनकी युक्ति सफल रही थी। कहा जाता है कि इनका गुप्त संबंध गंगाबाई नामक स्त्री से था जिसके कारण विट्ठलाथजी से इनका मनमुटाव हुआ था।

कृष्णदास जी ने लगभग २५० पदों की रचना की है। गुजराती होने के बावजूद ब्रजभाषा में रचित पदों में राधाकृष्ण प्रेम वर्णन, शृंगार तथा रूप सौन्दर्य का सुन्दर अंकन है। इनकी रचनाओं में काव्य कौशल अपेक्षाकृत कम है। सं० १६३८ के आसपास (१५८१ ई०) इनकी मृत्यु कुएँ में गिरने से हुई थी।

कृष्णदास विरचित पद :

मेरौ तौ गिरिधर ही गुनगान।
यह मूरत खेलत नैनन में, यही हृदय में ध्यान।।
चरण रेनु चाहत मन मेरौ, यही दीजिए दान।
'कृष्णदास' को जीवन गिरिधर, मंगल रूप निधान।।

नन्ददास (१५३३ ई०- १५८३ ई०) : अष्टछाप आठ कवियों में वय की दृष्टि से नन्ददास सबसे छोटे हैं, परन्तु काव्य-साधना, भाषिक-छटा और बहुमुखी प्रतिमा के कारण इनका स्थान सूरदास को छोड़कर सर्वोच्च है। नन्ददास का जन्म सं० १५९० वि० (१५३३ई०) में सोरों के निकट रामपुर ग्राम में हुआ था। कुछ लोग इन्हें गोस्वामी तुलसीदास का भाई स्वीकार करते हैं। कहा जाता है कि गो० विट्ठलनाथ से शिष्य के रूप में दीक्षित होने के पूर्व नन्ददास घोर संसारी, लौकिक व्यक्ति थे। गुरु कृपा से वे भगवद्भक्त बने।

अद्भुत प्रतिभा सम्पन्न नंददासजी ने लगभग १५ ग्रंथों की रचना की है। इन ग्रन्थों में प्रमुख हैं– अनेकार्थ मंजरी, मान मंजरी, रस मंजरी, रूप मंजरी, विरह मंजरी, प्रेम बारह खड़ी, श्याम सगाई, सुदामा चरित ,भँवरगीत, रास पंचाध्यायी, सिद्धांत पंचाध्यायी, गोवर्द्धन लीला, नंददास पदावली। 'अनेकार्थ मंजरी' पर्याय कोश है। 'विरह मंजरी' में विरह का अत्यंत भावपूर्ण वर्णन किया गया है। 'रस मंजरी' में नायिका भेद विवेचन के साथ नारी चेष्टाओं का चित्रण है। यह रचना शृंगार की कोटि में आती है। 'भँवरगीत' में नंददास की गोपिकाओं की तार्किकता तथा विवेक दृष्टि पाठकों को विमुग्ध करती है। इस कृति के कारण नंददास को विशेष ख्यातिप्राप्त है। 'रास पंचाध्यायी' में कृष्ण की रासलीला से संबद्ध रचनाएँ है।

नंददास का रचना वैविध्य यह प्रमाणित करता है कि उन्होंने गंभीर शास्त्रानुशीलन किया था। भावपक्ष तथा कलापक्ष का उत्कर्ष उनकी काव्य-सामर्थ्य को प्रमाणित करता है। संभवत: इसीलिए नंददास के बारे में यह उक्ति प्रचलित है।

'और कवि गढ़िया, नंददास जड़िया'

परिमार्जित भाषा, संगीत मर्मज्ञता तथा काव्य सौष्ठव उन्हें उच्च कोटि का रचनाकार सिद्ध करती है। सं० १६४० (१५८३ ई०) को मानसी गंगा के तट पर इनका देहावसान हुआ था।

नंददास द्वारा रचित पद : (भँवर गीत)

कहन स्याम संदेस एक हौं तुम पै आयौ।
कहन समय एकांत कहूँ औसर नहिं पायौ।।
सोचत ही मन में रह्यौ, कब पाऊँ इक ठाऊँ।
कहि संदेस नँदलाल कौ, बहुरि मधुपूरि जाऊँ।।
सुनो ब्रज नागरी।।
सुनत स्याम कौ नाम, ग्राम घर की सुधि भूली।
भरि आनंद-रस हृदय प्रेम-बेली द्रुम फूली।
पुलिक रोम सब अँग भए, भरि आए जल नैन।
कंठ घुटे, गद्गद गिरा, बोले जात न बैन।।
विवस्था प्रेम की।।

गोविन्द स्वामी (१५०५ ई०-१५८५ ई०) : भरतपुर (राजस्थान) के आँतरी गाँव में सं० १५८५ वि० को एक सनाढ्य ब्राह्मण परिवार में जन्मे गोविन्द स्वामी आरम्भ से ही कीर्तन-भजन के अनुरागी थे। उन्होंने अपनी पत्नी और पुत्री को त्यागकर ब्रज मंडल में बसना स्वीकार किया। वे सुकवि तो थे ही प्रसिद्ध संगीतशास्त्री भी थे। कहा जाता है कि संगीत सम्राट तानसेन ने भी इनसे संगीत शिक्षा प्राप्त की थी। किसी भक्त द्वारा गोविन्द स्वामी रचित पद सुनकर विट्ठलनाथजी बहुत प्रभावित हुए और इन्हें दीक्षा देकर श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा में लगा दिया।

इनके पदों की संख्या लगभग ६०० है। २५२ पद 'गोविन्दस्वामी के पद' कृति में संकलित हैं। इन्होंने बाल लीला तथा राधाकृष्ण श्रृंगार के पद रचे हैं। सहज एवं मार्मिक अभिव्यक्ति तथा भाव गाम्भीर्य इनके पदों की खासियत है। इनका देहावसान गोवर्द्धन में सं० १६४२ वि० (१५८५ ई०) को हुआ था। काव्य की अपेक्षा गेयता की दृष्टि से इनके पद अधिक प्रभावशाली हैं।

गोविन्द स्वामी रचित बाल लीला का एक पद :

झूलो पालने बलि जाऊँ।
श्याम सुन्दर कमल लोचन, देखत अति सुख पाऊँ।।
अति उदार विलोकि, आनन पीवत नाहिं अघाऊँ।
चुटकी दै दै नचाऊँ, हरि कौ मुख चूमि-चूमि उर लाऊँ।।
रुचिर बाल-विनोद तिहारे निकट बैठि कै गाऊँ।
विविध भाँति खिलौना लै-लै 'गोविन्द' प्रभु को खिलाऊँ।।

छीत स्वामी (१५१५ ई०-१५८५ ई०) छीतस्वामी मथुरा के चतुर्वेदी ब्राह्मण थे और आरंभ में बड़ी उद्दंड प्रकृति के थे। इनके घर में पंडागिरी और जजमानी होती थी। कहा जाता है कि ये बीरबल के पुरोहित थे। इनका प्रचलित नाम छीतू चौबे था और ये मथुरा में लड़ाई-झगड़े तथा चिढ़ाने आदि के लिए कुख्यात थे। अपनी यौवनावस्था में इन्होंने विट्ठलनाथजी की परीक्षा लेने के लिए खोटा सिक्का, थोथा नारियल उन्हें भेट किया परन्तु गोस्वामीजी ने अपनी दिव्य शक्ति से उन्हें चमत्कृत कर दिया। छीतू चौबे को बड़ी ग्लानि हुई और वे विट्ठलनाथजी के शिष्य बन गए। गोस्वामीजी ने इन्हें दीक्षा दी और अष्टछाप में शामिल कर लिया।

इनके मन में ब्रज-भूमि के प्रति बड़ा आदर भाव था। इनकी रचनाएँ उत्कृष्ट काव्य का प्रमाण भले ही न हो, परन्तु वर्णन की सहजता एवं सरसता प्रभावित करती है। अपने आराध्य कृष्ण के प्रति इनकी अनन्य भक्ति हृदयस्पर्शी है। इनके द्वारा कीर्तन गायन हेतु रचे पदों की संख्या लगभग २०० है जो पदावली में संकलित हैं। गोवर्द्धन के निकट पूंछरी ग्राम में इनका देहांत सं० १६४२ वि० को हुआ था।

छीतस्वामी रचित आसक्ति का पद :

अरी हौं स्याम रूपी लुभानी।
मारग जाति मिले नंदनन्दन, तन की दसा भुलानी।।
मोर मुकुट सीस पर बाँकौ, बाँकी चितवनि सोहै।
अंग अंग भूषन बने सजनी, जो देखै सो मोहै।।
मो तन मुरिकै जब मुसिकानै, तब हौं छाकि रही।
'छीत स्वमी' गिरिधर की चितवनि, जाति न कछू कही।।

चतुर्भुजदास (१५३० ई०- १५८५ ई०) : अष्टछाप के प्रतिष्ठित कवि कुंभनदास के सबसे छोटे पुत्र चतुर्भुजदास का जन्म सं० १५८७ (१५३० ई०) को जमुनावती ग्राम में हुआ था। भजन-कीर्तन और भक्ति का संस्कार इन्हें पिता से विरासत में मिला था अत: इनका मन परिवार एवं गृहस्थी से विरत रहता था। कुंभनदासजी ने इन्हें संगीत की शिक्षा प्रदान कर पुष्टि सम्प्रदाय में दीक्षित कराया था। संगीत एवं कविता में इनकी विशेष रुचि थी। ये आजीवन श्रीनाथजी के मन्दिर में सेवारत थे। इनका देहावसान सं० १६४२ वि० (१५८५ ई०) को हुआ था। इनकी उपलब्ध कृतियाँ है– 'चतुर्भुज कीर्तन संग्रह', कीर्तनावली और दानलीला। रचनाओं में 'भक्ति और श्रृंगार की छटा यत्र-तत्र परिलक्षित होती है।

चतुर्भुजदास रचित पद :

जसोदा कहा कहो हौं बात।
तुम्हारे सुत के करतब मापै, कहत कहे नहिं जात।।
भाजन फोरि, ढोरि सब गोरस, लै माखन दधि खात।
ज़ो बरजौं तो आँखीं दिखावै, रंचहु नाहिं सकात।।
और अटपटी कहाँ लौं बरनौं, छुवत पानि सों गात,
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर के गुन हौं, कहति कहति सकुचात।।

अंतत: कह सकते हैं कि अष्टछाप के इन साधकों की रचनाएँ कृष्णलीला पर केन्द्रित होने के कारण विषय की दृष्टि

से भले ही सीमित प्रतीत होती हों, परन्तु संगीत की विविध राग-रागिनियों तथा कृष्ण भक्ति के विविध आयामों के स्पर्श के कारण इनकी महिमा असंदिग्ध है, कहने की आवश्यकता नहीं कि अष्टछाप के इन भक्त कवियों की संगीत सरिता में प्रवाहित भाव-धारा ने अपनी स्वतंत्र उद्‌भावना से जो राह बनाई, वह अप्रतिम है। यह सरिता वस्तुत: भक्ति भागीरथी और काव्य-कालिन्दी का ऐसा संगम है जिसमें स्नान कर काव्य रसिकों और भावुक भक्तों को युगों तक आनंद की प्राप्ति होती रहेगी। विशद अर्थ में अष्टछाप की कविता भक्ति काव्य एवं संगीत की पावन त्रिवेणी है।

बागुईआटी, कोलकाता

■

बनेचन्द मालू

आदमी नहीं था

किसी बेचारे का एक्सीडेंट हो गया।
कार तो भाग गई पर लोगों को भी नहीं आई दया।
खून से लथपथ पड़ा था सड़क पर।
कोई पास के अस्तपाल नहीं ले जा रहा था।
क्योंकि पुलिस का था डर।
सवालों का जवाब देना होगा।
कैसे हुआ, किसने देखा, कहना होगा।
बाद में थाना भी जाना होगा, कोर्ट में देनी होगी गवाही।
इस तरह घसीटा जाना पड़ेगा, क्यों लें ऐसी वाहवाही।
समय बीत गया, बेचारा ढेर हो गया।
किसी नवयुवती का सिंदूर, नन्हें बच्चों की आशा,
चिर निद्रा में सो गया।
घर में कोहराम मच गया, मातम छा गया।
हंसी-खुशी भरे जीवन को काल-चक्र खा गया।
आने जाने वाले सान्त्वना दे रहे थे।
पूछ-पूछ कर घटना का जायजा ले रहे थे।
एक औरत अफसोस जता रही थी,
कह रही थी व्यस्त सड़क थी भीड़ तो बहुत थी।
फिर पड़ा क्यों रहा, अस्पताल भी पास में वहीं था।
मैंने कहा भीड़ तो बहुत थी
अस्पताल भी पास में वहीं था,
पर भीड़ में कोई आदमी नहीं था।

५-बी, श्री निकेत, ११ अशोका रोड, अलीपुर,
कलकत्ता - ७०० ०२७

■

कायोत्सर्ग : ध्यान की पूर्णता

ध्यान में चित्त स्थिर, एकाग्र होता है।[१] मन के एकाग्र होने से चित्त का निरोध होता है।[२] चित्तवृत्ति का निरोध ही योग है।[३] योग की पराकाष्ठा समाधि है। समाधि की उपलब्धि संयम, तप व व्यवदान से होती है। संयम से आस्रव का निरोध होता है।[४] आस्रव के निरोध से नवीन कर्मों का बन्ध रुकता है।[५] तप से व्यवदान होता है। व्यवदान से साधक अक्रियता प्राप्त करता है। अक्रिय युत होकर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो जाता है। परम शान्ति को प्राप्त होकर सर्वदु:खों का अंत कर देता है।[६]

देह के आश्रय रहते कायोत्सर्ग, देहातीत होना सम्भव नहीं है। कायोत्सर्ग या देहातीत होने के लिए देह के आश्रय से ऊपर उठना होता है। जो तन, वचन और मन, इन तीनों की अक्रियता से ही सम्भव है। (जैसा कि कायोत्सर्ग के पाठ में कहा है।) कारण कि क्रिया, मन, वचन व काया से होती है। क्रिया कोई भी हो, वह हलचल, चंचलता तथा अस्थिरता उत्पन्न करती है। कायोत्सर्ग में काया, वचन व मन की क्रिया का निरोध कर इन्हें निश्चल व स्थिर किया जाता है जैसा कि कायोत्सर्ग करने के पाठ 'तस्स उत्तरी करणेणं' के अन्त में कहा गया है—

ताव कायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि

अर्थात् जब तक मैं कायोत्सर्ग करता हूँ तब तक काया को स्थिर, वचन से मौन और मन को ध्यानस्थ आत्मस्थ रखूँगा। अर्थात् काया, वचन तथा मन से कोई भी क्रिया नहीं करूँगा। जैसा कि ध्यानाध्ययन (ध्यान शतक) ग्रन्थ में, षट्खण्डागम की धवला टीका, पुस्तक १३ में तथा आदि पुराण में कहा है—

जं थिरमज्झवसाणं तं झाणं जं चलं तयं चित्तं।
तं होज्ज भावणा वा अणुपेहा वा अहव चिंता।।

—गाथा २, ध्यानाध्ययन, धवला टीका, पुस्तक १३, गाथा १२

स्थिरमध्यवसानं यत् तद् ध्यानं येच्चलाचलम्।
सानुप्रेक्षाथवा चिन्ता भावना चित्तमेव।।

—आदिपुराण, २१-९

अर्थ— जो स्थिर अध्यवसान (मन) है, वह ध्यान है। इसके विपरीत जो चंचल (अस्थिर) चित्त है, उसे भावना, अनुप्रेक्षा अथवा चिन्ता कहा जाता है। ये सब मन की प्रवृत्तियाँ या क्रियाएँ हैं अत: इन्हें ध्यान नहीं कहा जा सकता। अभिप्राय यह है कि जहाँ क्रिया व कर्तृत्व है वहाँ कायोत्सर्ग नहीं है।

ध्यान में काया, वचन और मन में प्रवृत्ति या क्रिया करने का निषेध 'द्रव्य संग्रह' में स्पष्ट शब्दों में किया है—

मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह किंवि जेण होइ थिरो।
अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव परं हवे ज्झाणं।।

—द्रव्य संग्रह, ५६

अर्थ— हे साधुओ! तुम काया से कुछ भी चेष्टा मत करो, वचन से भी कुछ मत कहो और मन से कुछ भी चिन्तन मत करो, जिससे आत्मा आत्मा ही में स्थिर होता हुआ रमण करे, यही परम ध्यान है।

ध्यान में किसी विशेष आसन, स्थान, समय आदि का महत्व नहीं है, महत्व मन-वचन काया के योगों के समाधान (स्वस्थता) का है, यथा—

सव्वासु वट्टमाणा मुणओ जं देस-काल-चेट्ठासु।
वरकेवलाइलाभं पत्ता बहुसो समियपावा।।

तो देस-काल-चेट्ठानियमो झाणस्स नत्थि समयंमि।
जोगाण समाहाणं जह होइ तहा (प) यइयव्वं।।

—ध्यान शतक, ४०-४१

अर्थ- मुनियों ने सभी देश (स्थान), काल और चेष्टा की अवस्था में अवस्थित रहते हुए अनेक प्रकार के पापों को नष्टकर सर्वोत्तम केवलज्ञान आदि को प्राप्त किया है, अत: ध्यान के लिए आगम में किसी विशेष देश, काल चेष्टा, आसन आदि के होने का नियम नहीं कहा है, किन्तु जिस प्रकार से भी योगों का मन, वचन काया का समाधान (स्वस्थता, स्थिरता, निर्विकारता) हो, उसी प्रकार का यत्न करना चाहिये।

अभिप्राय यह है कि कायोत्सर्ग में मन, वचन और काया की किसी भी प्रकार की हलचल, चंचलता, प्रवृत्ति या क्रिया से

रहित होना है। यहां तक कि शरीर में स्वत: होने वाली स्वाभाविक क्रियाओं उच्छ्वास-नि:श्वास, खाँसी, छींक, जम्भाई और डकार का आना, अधोवायु का निकलना, चक्कर आना, अंगों का कफ का, दृष्टि का स्वत: सूक्ष्म संचालन होना आदि को भी कायोत्सर्ग के पाठ में आगार के रूप में स्वीकार किया है। स्वयं की ओर से शरीर को किसी भी क्रिया करने की, हाथ-पैर हिलाने, आसन वदलने आदि की छूट भी (आगार) नहीं है। तव वचन व मन की क्रिया की छूट कैसे हो सकती है? नहीं हो सकती।

बौद्ध धर्म में प्रतिपादित 'विपश्यना-अनुपश्यना' ध्यान के प्रतिपादक मुख्य ग्रन्थ 'महासतिपट्ठानसुत्त' में वेदनानुपश्यना, चित्त अनुपश्यना, धर्म अनुपश्यना आदि प्रत्येक अनुपश्यना के साथ एक सूत्र दिया गया है। यथा–

''यावदेव ञाणमत्ताय पटिस्सतिमत्ताय अनिसित्तो च विहरति न च किञ्चि लोके उपादियति।''

(अनुपश्यना में) जब तक मात्र ज्ञान, मात्र दर्शन बना रहता है तब तक अनाश्रित होकर विहार करता है और लोक (शरीर और संसार) में कुछ भी ग्रहण नहीं करता है। भिक्षुओं! इस प्रकार भिक्षु अनुपश्यना में अनुपश्यी होकर विहार करता है।

इस प्रकार महासतिपट्ठानसुत्त में अनुपश्यी साधक के लिए किसी भी अनुपश्यना में लोक, शरीर और संसार के आश्रय ग्रहण करने तथा क्रिया करने का निषेध है, यहाँ तक कि वेदना, चित्त धर्म आदि अनुपश्यना में जो स्वत: हो रहा है उसका केवल ज्ञाता-द्रष्टा होता है, क्योंकि कोई भी क्रिया लोक का आश्रय लिए विना नहीं होती है अर्थात् देह, इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि लौकिक आश्रय लिए विना नहीं होती है और अनुपश्यना (विपश्यना) में लोक का किंचित भी आश्रय ग्रहण न करने का विधान है। 'महासतिपट्ठानसुत्त' में ध्यान-साधक के लिए सिर से पैर तक पूरे शरीर के प्रत्येक अंग-उपांग पर उत्पन्न होने वाली संवेदनाओं को देखने एवं उनके अनित्य होने का चिन्तन करने का भी विधान नहीं है। वे ध्यान से पूर्व की आत्म-निरीक्षण की अर्थात् स्वाध्याय की क्रियाएँ हैं। कारण कि संवेदनाओं को देखना और उनके अनित्य स्वभाव का चिन्तन मन-बुद्धि की क्रिया से ही सम्भव है, क्योंकि कोई भी क्रिया विना आश्रय के नहीं होती है। कायोत्सर्ग-व्युत्सर्ग में शरीर, संसार, कषाय और कर्म इन सबका व्युत्सर्ग आवश्यक है अर्थात् इनसे असंग होना, इनके आश्रय का त्याग करना आवश्यक बताया है।

पातंजल योग सूत्र में कहा है–

योगश्चित्तवृत्ति निरोध:।१-२

चित्त की वृत्तियों का निरोध होना योग है।

अभिप्राय यह है कि जहाँ 'करना' है वहाँ क्रिया है, जहाँ क्रिया है वहाँ कर्म है। अत: ध्यान-साधना में अपनी ओर से कुछ भी करने का निषेध है। ध्यान-साधना में करना 'होने' में वदल जाता है जिससे शरीर व चित्त आदि के स्तर पर जो भी घटनाएँ घटती हैं, संवेदनाएँ आदि प्रकट होती हैं वे साधक को मात्र दिखती हैं, उनका मात्र दर्शन-ज्ञान होता है, वह प्रयत्नपूर्वक 'देखता' नहीं है। जैसे हम रेल में यात्रा कर रहे होते हैं उस समय बाहर की वस्तुएँ दिखाई देती हैं, उन्हें देखने व जानने की क्रिया नहीं करनी पड़ती है। वे अपने-आप दिखती हैं उन्हें देखने के लिए प्रयत्न नहीं करना पड़ता। प्रयत्न में काया का आश्रय लेना पड़ता है। काया का आश्रय रहते कायोत्सर्ग कदापि सम्भव नहीं हैं।

पूर्व में कह आए हैं कि चित्त का निश्चल, स्थिर होना ध्यान है। चिन्तन, मनन, अनुप्रेक्षा, भावना, संकल्प, विकल्प आदि से चित्त सक्रिय अस्थिर रहता है, निश्चल नहीं होता है, अत: तव तक ध्यान नहीं होता। इन सबसे परे होने पर ही चित्त शान्त व स्थिर होता है। इसे ही समाधि कहा गया है। प्रकारान्तर से कहें तो निर्विकल्प स्वसंवेदन, चैतन्य रूप दर्शनोपयोग ध्यान है। दर्शन रूप होने से ध्यान को अनुपश्यना व विपश्यना कहा जाता है। अनुपश्यना-विपश्यना शब्द 'पश्य' क्रिया से बने हैं।' 'पश्य' शब्द दृश् (दर्शनि) धातु से बना है। अत: ध्यान दर्शनमय होता है। दर्शन निर्विकल्प, स्वसंवेदन रूप होता है। जैसा कि ध्यान का वर्णन करते हुए तत्त्वानुशासन में कहा है-५

तत्राऽऽत्मन्यासहाये यच्चिन्ताया: स्यान्निरोधनम्।
तद्ध्यानं तद्भावो वा स्वसंवित्तिमयश्च स:।।६५।।

अर्थ– किसी भी सहायता (आश्रय) से रहित आत्मा में जो चिन्ता का निरोध है, वह ध्यान है अथवा जो चिन्ता के अभाव व स्वसंवेदन रूप है, वह ध्यान है।

पाहुडदोहा में कहा है–

जिमि लोणु विजिज्जइ पाणियहं तिमि जइ चित्तु विलिज्ज।
समरसि हवइ जीवड़ा काइं समाहि करिज्ज।।

–पाहुडदोहा, १७६

जिस प्रकार नमक पानी में विलीन होकर समरस हो जाता है उसी प्रकार यदि चित्त आत्मा में विलीन होकर समरस हो जाये तो फिर जीव को समाधि में और क्या करना है? अर्थात् चित्त का बाह्य विषयों से विमुख हो, आत्म स्वरूप में लीन होना ही समाधि है, ध्यान है।

श्री जिनसेनाचार्य कहते हैं :

योगो ध्यानं समाधिश्च धीरोध: स्वान्त: निग्रह:।
अंत: संलीनता चेति तत्पर्याया: स्मृता बुधे:।।

२१-२२ आर्ष

अर्थ– योग, समाधि, बुद्धि-निरोध, स्वान्तनिग्रह, अन्तःसंलीनता ये ध्यान के पर्यायवाची हैं। योग अर्थात् चित्त का निरोध, समाधि-चित्त की स्थिरता, धी निरोग-बुद्धि से चिन्तनरहित होना, स्वान्तः निग्रह-अपने अन्तःस्थल में स्थिर होना, अन्तः संलीनता- अपने अन्तःकरण में संलीन होना ध्यान है अर्थात् मन, चित्त, बुद्धि और अहं का निरोध-निग्रह होना ध्यान है।

तत्त्वार्थ सूत्र के नवम अध्ययन में धर्म-ध्यान के भेदों में आए 'विचय' शब्द की व्याख्या करते हुए तत्त्वार्थवार्तिक और सर्वार्थसिद्धि टीकाओं में 'विचयो विवेको विचारणेत्यनर्थान्तरम्' कहा है अर्थात् विचय, विवेक और विचारणा, ये समानार्थक हैं। चिन्तन करने से ऐसा जान पड़ता है कि प्राचीन काल में विचारण शब्द का प्रयोग विचरण व आचरण-अनुभव करने के अर्थ में होता था। वर्तमान में भी विचरण शब्द का प्रयोग विहार करने के अर्थ में होता है। बौद्ध धर्म में ध्यान के प्रमुख ग्रन्थ महासतिपट्ठान में सर्वत्र अनुपश्यी (ध्यान-साधक) के साथ विहरति (अनुपस्सी विहरति) शब्द आता है, जहाँ पर विहार शब्द का अर्थ 'यथाभूत तथागत' है, अर्थात् 'यथार्थ' में जैसा हो रहा है उसे वैसा ही अनुभव करना है' इसी आशय से धर्म-ध्यान के चारों भेदों के साथ प्रयुक्त विचय शब्द का अर्थ-विचरण आचरण रूप अनुभव करना उपयुक्त लगता है। विचरण, चिन्तन आदि अर्थ ध्यान के लक्षण 'थिरमज्झ-वसाणं-स्थिर अध्यवसान' के बाधक होने से असंगत लगते हैं। अतः विचय का अर्थ है– 'यथाभूत तथागत' अर्थात् ध्यान में जैसा अनुभव के रूप में प्रकट हो रहा है उसे यथार्थ रूप में वैसा ही देखना, उसके प्रति राग-द्वेष न करना, उसका समर्थन व विरोध न करना, उससे असंग रहना। असंग रहना ही व्युत्सर्ग है। इसी अर्थ में धर्म-ध्यान के भेदों का विवेचन किया जा रहा है।

ध्यान की उपर्युक्त परिभाषा तथा व्याख्या के परिप्रेक्ष्य में धर्म-ध्यान के चार भेद आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय और संस्थानविचय में विचय शब्द का अर्थ विचार व चिन्तन करना उपयुक्त नहीं लगता है, कारण कि चिन्तन या विचारना में चित्त ऊहापोह व विकल्पयुक्त होता है, ज्ञानोपयोगमय होता है, निर्विकल्प व स्वसंवेदन रूप नहीं होता है। अतः यहाँ विचय शब्द का अर्थ विचार करना नहीं होकर विचरण करना, संवेदन व अनुभव करना अधिक उपयुक्त लगता है। यथा–

आज्ञाविचय– आज्ञा अर्थात् सत्य का श्रुतज्ञान का, अपने अनादि अविनाशी स्वभाव का, शरीर से.आत्मा की भिन्नता का जैसा स्वरूप प्रकट हो रहा है, वैसा ही अनुभव होना आज्ञाविचय है। यह शरीर व्युत्सर्ग कायोत्सर्ग है।

अपायविचय – राग, द्वेष मोह आदि त्याज्य अपाय, दोषों को, कषायों को जैसे वे प्रकट हो रहे हैं, उन्हें वैसा ही अनुभव करना, उनका समर्थन व विरोध न करना, असंगतापूर्वक अनुभव करना अपायविचय है। यह कषायव्युत्सर्ग है।

विपाकविचय – अपाय का, दोषों का, कर्मों का, कर्मों का विपाक-उदय का फल जैसा प्रकट हो रहा है उसे उसी रूप में समता व असंगतापूर्वक अनुभव करना विपाकविचय है, यह कर्म-व्युत्सर्ग है।

संस्थानविचय – संसार या लोक के स्वरूप का अर्थात् उत्पत्ति-स्थिति-भंग (विनाश) के चक्र रूप प्रवाह का असगंतापूर्वक अनुभव करना संस्थानविचय है, यह संसार व्युत्सर्ग है।

व्युत्सर्ग – अपने में देह की और देह में अपनी स्थापना करने से प्राणी को निज स्वरूप की विस्मृति हो जाती है। देह में अपनी स्थापना करने से 'मैं देह हूँ' रूप अहंभाव (देहाभिमान) उत्पन्न होता है। इसका परिणाम यह होता है कि देह की सत्यता (स्थायित्व) भासित होनें लगती है और अपने में देह की स्थापना करने से देह में ममता (आसक्ति) उत्पन्न हो जाती है, जिससे देह सुन्दर तथा सुखद लगने लगती है। इस प्रकार देह से अभेदभाव के सम्बन्ध से अहम् (मान) और भेदभाव के सम्बन्ध से 'मम' (माया) उत्पन्न होता है।

अहम् और मम भाव से कामना की उत्पत्ति होती है जिससे चित्त कुपित, क्षोभित (अशान्त) हो जाता है और कामना की पूर्ति में सुख का और अपूर्ति में दुःख का भास होने लगता है। सुख की दासता और दुःख के भय से प्राणी निज अविनाशी (अनन्त) स्वरूप से विमुख हो जाता है अर्थात् विभाव में आबद्ध और स्वभाव से च्युत हो जाता है। यद्यपि अविनाशी निज स्वरूप सदैव विद्यमान है, उससे देशकाल की दूरी नहीं है, फिर भी प्राणी उसे कठिन मानकर उससे निराश होने लगता है और देह दृश्यमान वस्तुएँ, जिनसे मानी हुई एकता है, वास्तविक नहीं, उनके प्रति आशान्वित, लालायित एवं प्रयत्नशील रहता है। यह प्राणी का घोर प्रमाद है।

प्राणी ने देहादि दृश्यमान वस्तुओं में सम्बन्ध कब और क्यों स्वीकार किया, इसका तो पता नहीं चलता है, परन्तु वस्तुओं से सम्बन्ध वर्तमान में ही विच्छिन्न होना सम्भव है। इससे यह सिद्ध होता है कि हमारे स्वीकार करने से ही देहादि वस्तुओं से सम्बन्ध हुआ है। अतः प्रत्येक सम्बन्ध स्वीकृति मात्र से उत्पन्न होता है और अस्वीकृति मात्र से उसका सम्बन्ध नाश हो जाता है। **ऐसी कोई स्वीकृति हैं ही नहीं जो अस्वीकृति से न मिट जाए। कोई भी स्वीकृतिजन्य सम्बन्ध ऐसा नहीं है कि अस्वीकृति के अतिरिक्त अन्य किसी अभ्यास, प्रयास से मिट जाय।** इस दृष्टि से देहादि से अनन्तकाल से सम्बन्ध चला आ रहा है, वर्तमान में उसका विच्छेद -व्युत्सर्ग हो सकता है।

देह व दृश्यमान वस्तुओं (शरीर संसार लोक से व्युत्सर्ग (सम्बन्ध विच्छेद) होते ही अहम् और मम का नाश हो जाता है। अहम् का नाश होते ही निरहंकार होने से अनन्त से एकता तथा अभिन्नता हो जाती है जिससे अविनाशी अनन्त तत्त्व अमरत्व की अनुभूति हो जाती है। मम का नाश होते ही सब विकारों का नाश होकर निर्विकार, वीतराग, शुद्ध चैतन्य (सच्चिदानन्द) स्वरूप का अनुभव हो जाता है। इस प्रकार ध्यान व व्युत्सर्ग से सब पापों (विकारों) का नाश होकर आत्मा विशुद्ध एवं सर्वशल्यों से मुक्त हो जाती है, अर्थात् ध्यान से ध्याता को ध्येय की उपलब्धि हो जाती है।

जिज्ञासा होती है कि क्या शरीर, इन्द्रिय, संसार वस्तु तथा इनकी सक्रियता के बिना भी जीवन है? यदि जीवन है तो वह जीवन कैसा है?

समाधान– यह सभी का अनुभव है कि शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि आदि की क्रियाओं, प्रवृत्तियों व विषयों का निरोध होने पर ही गहरी निद्रा आती है। उस समय इन सबकी स्मृति व सम्बन्ध नहीं रहता है। उस अवस्था में दु:ख का अनुभव नहीं होता है। परन्तु जगने पर व्यक्ति यह ही कहता है कि मैं बहुत सुख से सोया, यह नियम है कि स्मृति उसी की होती है, जिसकी अनुभूति होती है। गहरी निद्रा में किंचित भी दु:ख नहीं था, मात्र सुख ही था। इस अनुभूति से यह सिद्ध होता है कि शरीर, इन्द्रियाँ, मन, संसार वस्तु आदि के बिना भी, इनके न रहने पर भी दु:खरहित सुखपूर्वक जीवन का अनुभव सम्भव है। किन्तु यह जड़तापूर्ण स्थिति है, अत: इस अनुभव का आदर न करने से ही प्राणी शरीर, संसार, वस्तु, व्यक्ति आदि के वियोग से भयभीत होता है और इनकी दासता को बनाये रखता है। यदि जाग्रत अवस्था में भी गहरी निद्रा के विश्राम के समान स्थिति प्राप्त कर ली जाय तो यह स्पष्ट अनुभव हो जायेगा कि शरीर, संसार आदि की क्रिया के बिना भी जीवन है और उस जीवन में किसी प्रकार का अभाव, अशान्ति, पराधीनता, जड़ता, चिन्ता, भय तथा दु:ख नहीं है। अत: शरीर, संसार व भोग के सुख के बिना जीवन नहीं है– इस भ्रान्ति को त्यागकर शरीर, संसार, कषाय (भोग-प्रवृत्ति) व कर्म का व्युत्सर्ग-विसर्जन कर शान्ति, स्वाधीनता, चिन्मयता, निश्चिन्तता, निर्भयता, प्रसन्नता, अमरता की अनुभूति कर लेना साधक के लिए अनिवार्य है। यही सिद्ध, बुद्ध व मुक्त होना है।

''मैं देह हूँ'' – इस मान्यता के दृढ़ होते ही इन्द्रिय,मन, बुद्धि आदि में भी 'मैं' की मान्यता हो जाती है, जो समस्त दोषों की जननी है। कारण कि जब इन्द्रिय और मन का अपने विषयों से सम्बन्ध होता है तब शब्द, रूप, गन्ध, रस और स्पर्श से सम्बन्धित मनोज्ञ और अमनोज्ञ विषयों का ज्ञान होता है। इस ज्ञान के प्रभाव से मनोज्ञ विषयों के प्रति राग और अमनोज्ञ विषयों के प्रति द्वेष उत्पन्न होता है। रागोत्पत्ति से इन्द्रियाँ विषयों की ओर, मन इन्द्रियों की ओर, बुद्धि मन की ओर गति करने लगते हैं, इस प्रकार बुद्धि, मन, इन्द्रियाँ सबकी संसार या बाह्य की ओर गति होने लगती है, और हम बहिर्मुखी हो जाते हैं, तथा कामना ममता, अहंता में आबद्ध होकर सुख-दु:ख का भोग करने लगते हैं।

इस प्रकार इन्द्रिय दृष्टि से समस्त विषय सुन्दर, सुखद व सत्य (स्थायी, नित्य) प्रतीत होते हैं। इस इन्द्रिय-दृष्टि का प्रभाव मन पर होता है तब मन इन्द्रियों के अधीन होकर विषयों की ओर गतिशील होता है। परन्तु जब मन पर श्रुतज्ञान युक्त बुद्धि दृष्टि का प्रभाव होता है तब इन्द्रिय-दृष्टिजनित विषय सुन्दर, सुखद व सत्य है– यह प्रभाव मिटने लगता है। क्योंकि इन्द्रिय ज्ञान से जो वस्तु सत्य, स्थायी व सुन्दर मालूम होती है वह ही वस्तु श्रुतज्ञान से, विवेकवती, बुद्धि से नश्वर तथा विध्वंसनशील, जीर्ण-शीर्ण गलन रूप मालूम होती है। इस ज्ञान से विषय व वस्तु के प्रति विरति (वैराग्य-अरुचि) होती है और मन विषयों से विमुख होने लगता है। इन्द्रियाँ विषयों से विमुख हो स्वत: मन में विलीन हो जाती है। मन बुद्धि में विलीन हो जाता है फिर बुद्धि सम हो जाती है। उस समता में स्थित आत्मा सब मान्यताओं से अतीत हो जाता है जिससे सब प्रकार के प्रभावों की अर्थात् भोग, कामनाओं, वासनाओं आदि दोषों की निवृत्ति हो जाती है।

इन्द्रिय-दृष्टि से विषय-वस्तुओं में सत्यता प्रतीत होती है। उसका प्रभाव राग उत्पन्न करता है। राग भोग में प्रवृत्त करता है, किन्तु विवेक दृष्टि (श्रुतज्ञान) विषय-सुखों की क्षण-भंगुरता का ज्ञान कराती है, जिससे राग वैराग्य में और भोग योग (संयम) में रूपान्तरित हो जाता है वह इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि के द्रष्टा में विषय-सुखों से, सब मान्यताओं से अतीत होने– इनके रागजनित प्रभावों से मुक्त होने की क्षमता आ जाती है। जिससे शरीर व शरीर से सम्बन्धित गण, उपाधि आदि से व्युत्सर्ग हो जाता है। विषय सुखों के प्रभाव से मुक्त होने पर कषाय-विसर्जन (व्युत्सर्ग), कषाय-व्युत्सर्ग से कर्म-व्युत्सर्ग और कर्म-व्युत्सर्ग से संसार-व्युत्सर्ग स्वत: हो जाता है। आचारांग सूत्र की भाषा में कहें तो ''जे कोहदंसी से माणदंसी, जे माणदंसी से मायदंसी, जे मायदंसी से लोभदंसी, जे लोभदंसी से पेज्जदंसी, जे पेज्जदंसी से दोसदंसी, जे दोसदंसी से मोहदंसी, जे मोहदंसी से गब्भदंसी, जे गब्भदंसी से जम्मदंसी, जे जम्मदंसी से मारदंसी, जे मारदंसी से नरयदंसी, जे नरयदंसी से तिरियदंसी, जे तिरियदंसी से दुक्खदंसी से मेहावी अभिणिवट्टिज्जा कोहं च माणं च मायं च लोभं च पेज्जं च दोसं च मोहं च गब्भं च मारं च नरयं च तिरियं च दुक्खं च। एयं पासगस्स दंसणं उवरय-सत्थस्स पलियंतकरस्स आयाणं निसिद्धा सगडब्भि किमत्थि आवोही पासगस्स

न विज्जइ। णत्थि त्तिवेमि। (आचारांग, प्रथम श्रुतस्कन्ध, अध्ययन ३, उद्देशक ४ सूत्र)

अर्थात् जो क्रोध को देखता है वह मान को देखत है, जो मान को देखता है वह माया को देखता है, इस प्रकार क्रमशः माया से लोभ को, लोभ से राग को राग, से द्वेष को, द्वेष से मोह को, मोह से गर्भ को, गर्भ से जन्म को, जनम से मार को, मार से नरक को, नरक से तिर्यंच को, तिर्यंच से दु:ख को देखता है। इस प्रकार मेधावी क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, गर्भ, मार, नरक, तिर्यंच और दु:ख का दर्शन करता है। यह शस्त्र उपरत द्रष्टा का दर्शन है जो कर्म से उपरत करता है।

आशय यह है कि व्युत्सर्ग की कोई प्रक्रिया नहीं होती, परन्तु ध्यान की पात्रता प्राप्त करने के लिए जैन दर्शन में अणुव्रत महाव्रत का पालन, पातंजल योग में यम, नियम, आसन, प्राणायाम आदि, बौद्ध दर्शन में शील और जैन दर्शन में विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय आदि सद् प्रवृत्तियों का आचरण अपेक्षित है।

संदर्भ सूत्र :

१. ध्यान-शतक, गाथा-२

२. उत्तराध्ययन, अ० २९, सूत्र २५

३. पंतजलि योग, १-२

४. उत्तराध्ययन, अ० २९, सूत्र २७

५. उत्तराध्ययन, अ० २९ सूत्र २७

६. उत्तराध्ययन, अ० २९, सूत्र २९

■

संकलन : रिधकरण बोथरा

ॐ की साधना

साधौ सबद साधनौ कीजै
जेहि सबद ते प्रगट भये सब, सोई सबद गहि लीजै।।

उसी परम शब्द को पकड़ो ॐ को ही साधो। ॐ को ही जपो। ॐ की ही प्रतिध्वनि सुनो। ॐ में ही रस लो। ॐ में बड़ा आकर्षण है। 'रसो वै स:' वह रस रूप है। परमात्मा रस रूप है। 'ॐ' उसका वाचक है। उसमें डूबो। रोम-रोम से उसी का रस पियो।

'ॐ' ध्यान की मौलिक ध्वनि है। 'ॐ' का ध्यान हम चार चरणों में पूरा कर सकते हैं। इन चार चरणों का कुल समय पैंतालिस मिनट होना चाहिये। पहला, दूसरा और तीसरा चरण दस-दस मिनट का है और अन्तिम चरण पन्द्रह मिनट का।

'ॐ' ध्यान-योग के पहले चरण में ॐ का पाठ करो। उसका लम्बा उच्चारण करो यानि उसका जोर से रटन करो। दूसरे चरण में होठों को बन्द कर लो और भीतर उसका अनुगूंज करो। जैसे भौरें की गूंज होती है, वैसे ही ॐ की गूंज करो। तीसरे चरणा में मनोमन 'ॐ' का स्मरण करो। श्वास की धारा के साथ 'ॐ' को जोड़ लो। तल्लीनता इतनी होजाए कि श्वास ही 'ॐ' बन जाएं। चौथे चरण में बिल्कुल शान्त बैठ जाओ।

पहला चरण पाठ है, दूसरा चरण जाप है। तीसरा चरण अजपा है और चौथा चरण अनाहत है। चौथे चरण में पूरी तरह शान्त बैठना है, स्मृति से भी मुक्त होकर। इन शान्ति के क्षणों में ही अनाहत की सम्भावना दस्तक देगी।

'ॐ' परमात्मा का ही द्योतक है। इसलिए इसमें रचो। यह महामंत्र है। सारे मंत्रों का बीज है यह। हर मंत्र किसी न किसी रूप में इसी से जुड़ा है। इसलिए ॐ मंत्र योग की जड़ है।

एक पेड़ में पत्ते हजारों हो सकते हैं, पर जड़ तो एक ही होती है। जिसने जड़ को पकड़ लिया, उसने जड़ से जुड़ी हर सम्भावना को आत्म-सात् कर लिया।

'ॐ' कालातीत है, अर्थातीत है, व्याख्यातीत है। परमात्मा भी इसी में समाया हुआ है और यह परमात्मा में समाया हुआ है। ईसाइयों का आमीन 'ॐ' ही है। जैनों ने 'ॐ' में पंच परमेष्ठि का निवास माना है। हिन्दुओं ने ब्रह्मा, विष्णु और महेश का संगम माना है। परमात्मा में डूबने वाले 'ॐ' में डूबें। ॐ से ही अस्तित्व ध्वनित होता है। 'ॐ' से ही परमात्मा अस्तित्व में घटित होता है। 'ॐ' शान्ति' इसके आगे और कोई चरण नहीं है।

■

रिखवचन्द जैन
अध्यक्ष-अन्तर्राष्ट्रीय अहिंसा अकादमी

अहिंसा दिवस मनायें

अहिंसा मनुष्य की सहज प्रवृति है। साधारणतया मनुष्य हिंसक नहीं होता है। परन्तु कभी-कभी आदमी भी पशुवत व्यवहार करने लग जाता है। हिंसा का भूत सवार होने पर वह दैत्य की तरह मार-काट, क्रोध, द्वेष करने लगता है। पशु जगत तो हिंसा से ही जाना जाता है। पशुओं में दो जातियां होती है, हिंसक पशु जैसे शेर, भालू आदि और अहिंसक पशु जैसे गाय, भेड़, बकरी आदि। लेकिन मानव की सिर्फ एक ही जाति होती है वह है अहिंसक। उत्तेजना स्वरूप या दिमाग में विचारान्तर से वह हिंसक व्यवहार के दौर में आ जाता है। अहिंसक पशु भी इसी तरह उत्तेजना से कुछ समय के लिए हिंसक बन जाते हैं। अत: यह स्पष्ट है कि मानव जाति जन्म से, प्रकृति से, सहज प्रवृति से अहिंसक है, यानि कि अहिंसा उसका धर्म है।

संसार में जितने भी धर्म स्थापित हुए हैं, वे मनुष्य को मनुष्य बनाये रखने के लिए हुए हैं। चूंकि मनुष्य उत्तेजना के वेग में हिंसक रूप धारण कर सकता है इसलिए उसे उस वेग में जाने से रोकने के लिए, उसकी प्रवृति में प्रतिकूल बदलाव न आने पाये इसलिए उसे शिक्षा, प्रशिक्षण, नियम, सिद्धान्त परिचय, ज्ञान आदि दिये जाते हैं। इसी क्रिया को धर्म-बोध, कर्त्तव्य बोध कराना कहते हैं और सहज मानवीय गुण अहिंसा, सत्य, संयम, परस्पर सहयोग, प्रेम, करुणा, दया के आचरण को ही धर्म व्यवहार की संज्ञा दी गई है। कोई भी दुनिया का धर्म सहज मानवीय गुणों की जगह दानवीय गुणों को बढ़ावा देने या व्यक्ति को उस ओर प्रवृत्त करता है तो वह धर्म नहीं अधर्म है, पाप है, अवांछनीय है। आतंकवादी संगठन या उसका प्रशिक्षण केन्द्र जो मनुष्य को हैवान बनाकर हिंसक काम करवाना चाहता है उसे हम धर्म नहीं कह सकते हैं। लेकिन रक्षा व्यवस्था के लिए दिये जाने वाला ऐसा ही सैन्य प्रशिक्षण धर्मसंगत होगा। अगर सैन्य प्रशिक्षण का उद्देश्य हिंसा फैलाना है, आक्रमण करना है (रक्षा-प्रतिरक्षा की जगह) तो ऐसी क्रिया हिंसक कर्म ही गिनी जायेगी। हिन्दू, वैदिक, सनातन, जैन, बौद्ध, सिख, आर्य समाज, पारसी, यहूदी, ईसाई, कन्फूसियस, आदि विभिन्न धर्मो के सिद्धान्त उनकी व्याख्या मनुष्य को अहिंसक प्रवृत्तियों में स्थापित रखना ही है। पाशविक वृत्तियों, दानवीय कृत्यों और घृणित बातों जैसे क्रोध, अहंकार, मद, माया, मोह, लालच, कपट, झूठ, चोरी, व्यभिचार आदि से दूर रखने का काम ही धर्म है। बिना सत्य और अहिंसा के यह कार्य हो ही नहीं सकता है। किसी भी धर्म संस्थापक ने सत्य, अहिंसा के गुणों को छोड़ते हुए अपने धार्मिक नियम नहीं बनाये। बना भी नहीं सकते। अत: यह सत्य है कि अहिंसा ही सभी धर्मो का सार है, जड़ है और बाकी के धार्मिक नियम, क्रिया, आचरण, ज्ञान इन्हीं से उत्पन्न होते हैं।

आइये, मानव सभ्यता की भी बात कर लें। परस्पर सहयोग, आपसी प्रेम, संवेदना, करुणा, दया, आदि गुणों के मानवीय आचरण के समावेश को ही सभ्यता कहते हैं। क्या कोई मानव समूह अगर कुत्तों की तरह दिन-रात लड़ता है, झगड़ता है, दोष प्रतिदोष एवं कुकर्मो में व्यस्त है तो आप उसे जंगली, असभ्य कहेंगे या सभ्य कहेंगे। हिन्दू, चीनी, मिश्र, रोम, युनान, माया, आदि सभी मानव संस्कृतियां परस्पर प्रेम और सहयोग (परस्परोपग्रह जीवानाम) के बल पर ही विकसित हुई। भगवान ऋषभदेव ने आदि संस्कृति की स्थापना प्रेम व्यवहार (या उसे अहिंसा कहें) के आधार पर ही की। कबीलायी जीवन को व्यवस्थित कृषिमय, पशुपालन के साथ ग्राम्य जीवन में परिवर्तित किया। शिकार द्वारा भोजन प्राप्त करने की जगह खेती द्वारा भोजन व्यवस्था दी। इस तरह यह भी स्पष्ट हुआ कि जहाँ सभ्यता है वहाँ अहिंसा ही है, वहाँ अहिंसा ही सर्वोपरि विधि है, अहिंसा ही क्या करना चाहिये और क्या नहीं करना चाहिये कि निर्णायक शक्ति है।

इस तरह यह मालूम पड़ता है कि अहिंसा मनुष्य की सहज प्रवृत्ति है। प्रकृति से मनुष्य अहिंसक है। सभी धर्मों को

जड़ सभी धर्मों का सारतत्व, सभी संस्कृतियों का आधार, सभी विधि, विधाओं, नियम-कानूनों, नीति-अनीति भेद का केन्द्र विन्दू मूल्यांकन के लिए अहिंसा ही है। तभी तो महाभारत महाकाव्य के प्रस्तोता महाविभूति वेदव्यास ने काव्य के समापन में सर्वश्रेष्ठ मानवीय गुण अहिंसा को ''परमोधर्म'' की संज्ञा दी। अहिंसा परमोधर्म यानि कि इससे ऊपर और कोई सत्य नहीं, और कोई धर्म नहीं, इसके विना कोई धर्म सम्भव नहीं, कोई सभ्यता जन्मी नहीं। कोई जाति, क्षेत्र, संघ, समुदाय, देश, राष्ट्र विना अहिंसा के टिक नहीं सकते, रह नहीं सकते। समृद्धि की ओर तो बढ़ने की वात ही नहीं है। मनुष्य हर परिस्थिति में अहिंसा चाहता है, हिंसा को भगाना चाहता है, हिंसा से अहिंसा की तरफ जाना चाहता है। प्रभु महावीर ने कहा अहिंसा, संयम और तप ही मुक्ति का मार्ग है, यही धर्म है।

जिस तत्व अहिंसा को हर कोने में, हर देश-राष्ट्र में हरहाल ओर हर काल, हर धर्म और हर सभ्यता में मानव सिंचित करना चाहता है, वही मानवीय चाहना, वही प्रवृत्ति विश्व धर्म कही जा सकती है। अत: अहिंसा ही विश्वधर्म है, अहिंसा समूचे मानव जगत की चाहना है, अहिंसा ही विश्व शक्ति का मूल है, अहिंसा में ही विश्व की रक्षा की शक्ति छिपी हुई है। अहिंसा का गुण ही मानवता का भविष्य है, और अहिंसा ही उसे नई उपलब्धियों और समृद्धि की ओर ले जायेगी। आओ, हम अहिंसा की ओर चलें। हिंसा छोड़, अहिंसा अपनायें। हम अहिंसामय बनें। हम अहिंसा के पुजारी ही नहीं, हम अहिंसा द्वारा जीने की चाह का संकल्प लें, उस पर दृढ़ टिके रहने की शक्ति प्राप्त करें। चाहे कुछ भी हो हिंसा पर नहीं उतरेंगे, उस दैत्यवृत्ति से दूर-दूर रहेंगे, ताकि हम मानव-मानव ही वन रहें। सीधे शब्दों में आदमी के आदमी वने रहने का नाम ही अहिंसा है और जानवर या राक्षस कोई मूल से भी वनना नहीं चाहता, वनना नहीं चाहिये।

कैसे अपनायें अहिंसा?

यद्यपि अहिंसा सभी धर्मों का सार तत्व है, अधिकतर धर्मों और उनकी विभिन्न सम्प्रदायों में अहिंसा को परस्पर प्रेम, सहयोग, करुणा, दया आदि विभिन्न गुणों के रूप में अपरोक्ष तरीके से ही परोसा है। हिंसा को कभी-कभी किन्हीं परिस्थितियों में ''वीरता'' की संज्ञा दे दी जाती है। अहिंसा की जगह ''शक्ति'' की अपेक्षा भी की जाती है। अहिंसा को यदा-कदा कायरता समझ लिया जाता है। अहिंसा कायरता नहीं है। रक्षा और प्रतिरक्षा के लिए हथियारों का या शक्ति का प्रयोग अहिंसा वर्जित नहीं करती है। अहिंसा में प्राथमिकता हथियारों या शस्त्र जन्य शक्ति द्वारा फैसला करने या अपनी वात मनवाने की बजाय वात-चीत, समझ-बूझ से, डाइलाग से वार्तालाप या मध्यस्थता द्वारा मसले सुलझाने का है। निर्णय गोली की जगह बोली से हो। अहिंसा के विभिन्न आयाम हैं :

१. मनुष्य का मनुष्य द्वारा संहार न करना, मारना नहीं, कष्ट नहीं पहुँचाना, झगड़ना नही, द्वेष नहीं रखना आदि। आज राष्ट्रों के बीच युद्ध और गोलीबारी न हो, आतंकवादी हमले, बम, नहीं हो, साम्प्रदायिक मारकाट न हो। जाति, धर्म, क्षेत्र विचार-भेद को लेकर शस्त्र या हिंसक संघर्ष न हो। ऐसी ही अहिंसा की सर्वप्रथम एवं सबसे अधिक आवश्यकता है। दुनिया शस्त्र न बढ़ाये, न प्रयोग में आक्रमण के लिए आये, ऐसी ही अहिंसा की चाहत विश्वभर में है।

२. सिर्फ मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी, प्राणि-मात्र, हरएक जीव–छोटी सी चींटी से लेकर हाथी तक, अहिंसक एवं क्रूर हिंसक पशुओं शेर आदि तक को भी किसी तरह का कष्ट न पहुँचाना, अहिंसा के दायरे में सम्पूर्ण सर्वत्र प्राणी जगत को लाना है। जैसे हमें अपनी जान प्रिय है वैसे ही हरएक प्राणी को अपनी जान प्रिय है, मरना कोई नहीं चाहता। जियो और जीने दो। शाकाहार, सात्विक भोजन इसी पहलू को पोषित करते हैं।

३. अहिंसा की सोच और आगे वढ़ाती है और जीवो और जीने दो की जगह जियो और जीने दो में सहयोग करना। किसी को दु:खी देखकर कष्ट में देखकर, भूखा देखकर दु:ख बांटने और दूसरे के कष्ट को दूर करना भी अहिंसा का आयाम है। आपका राजसी भोजन भूखे पड़ोसी को हिंसा की तरफ प्रवृत कर सकता है। करुणा, दया, प्रेम, आपसी सहकार की अपेक्षा अहिंसामय व्यवहार में है।

४. परमात्मा महावीर ने अहिंसा की सूक्ष्मतम विश्लेषण एवं व्याख्या करते हुए वताया। भाव हिंसा, दिमाग में या सोच में हिंसक कृत्यों का संकल्प जागना भी हिंसा है। हिंसा वाणी (वचन) या कर्म के साथ-साथ भाव से भी, मन से भी होती है, बुरे भाव को यदि मनुष्य के उद्गम स्थान दिमाग पर ही रोक दिया जाये तो हिंसक क्रिया पर स्वत: रोक लग जायेगी। महावीर की अहिंसा में इतनी वारीकी का परहेज है। अहिंसा की वारीकियों के परिपालन में महावीर के धर्म में दीक्षित संयमी सन्तों का कोई मुकावला नहीं। वायु काय, जल काय, अग्निकाय आदि

सभी छोटे से छोटे जन्तु की यत्ना से रक्षा का दायित्व निभाना उनके अहिंसा व्रत का आवश्यक अंग है। मन, वचन, काया, कर्म से हिंसा करनी, नहीं, करवानी नहीं, करने वाले की संस्तुति या अनुमोदना भी नहीं करनी।

सम्राट अशोक के हृदय में अहिंसा के भाव कलिंग युद्ध में हुए हिंसा के तांडव कृत्य को देखकर हुआ और उन्होंने प्रायश्चित स्वरूप अहिंसा का सन्देश, भगवान बुद्ध की करुणा, अहिंसा, प्रेम का सन्देश विश्व भर में फैलाने के लिए अनेक प्रवुद्ध प्रज्ञावान लोगों के साथ अपने स्वयं के युवा पुत्र, पुत्रियों महेन्द्र एवं संघमित्रा को भी यही दायित्व दिया। फलस्वरूप बुद्ध द्वारा दी गई अहिंसा व्रत को दक्षिण पूर्व एशिया, चीन, जापान, कोरिया, पश्चिम एवं उत्तर के प्रदेशों तक मानव कल्याण हेतु पहुँचाया। यदि सम्राट अशोक के दिमाग में भाव हिंसा (जिसकी व्याख्या महावीर करते हैं) की उत्पत्ति कलिंग युद्ध पूर्व हो जाती तो युद्ध से देश को बचाया जा सकता था। आज भी अहिंसा के इस स्वरूप की सबसे ज्यादा आवश्यकता है। हुक्मरानों, उच्चस्थ राजनीतिज्ञों, सेना अधिकारियों, जनभावना को प्रशस्त करने वाले समाज, धर्म जाति के अगुवा लोगों को है। इनका दिमाग जब तक अहिंसक होगा, दुनिया में सशस्त्र वारदात, युद्ध आतंकी हमले नहीं हो सकते हैं। यू० एन० ओ० संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मनाये जाने वाले अहिंसा के दिवस का सबसे बड़ा पहलू यही है। असुरक्षा, भय, अशान्ति ऐसे लोगों की दिमागी अशान्ति एवं अहिंसक प्रवतियों से ही संभव है। यही एकमात्र परमाणु विभीषिका से बचने का उपाय है। जरुरत है ऐसे लोगों तक बुद्ध, महावीर और गाँधी के अहिंसा के सन्देश को पहुँचाना ही नहीं उनके मस्तिष्क पटल पर स्थापित करना भी है।

अहिंसा के नारे और जयघोषों से अधिक जरुरत हर एक व्यक्ति के जीवन में अहिंसामय व्यवहार अपनाना है। जीवन पद्धति और जीवन के हरएक पहलू खान-पान, रहन-सहन, मिलना-मिलाना, विचार, सम्पर्क सभी में हिंसा की जगह अहिंसक तरीके अपनाये। इसके लिए मूल्यपरक शिक्षा में अहिंसा के गुणों का समावेश शिक्षा के माध्यम से बच्चे-बच्चे में हो। घर-घर से अहिंसा का वास हो। महात्मा गाँधी ने महावीर एवं बुद्ध की अहिंसा को जीया है। उनका जीवन ही अहिंसा की किताब है। अहिंसा द्वारा गाँधी ने शक्तिशाली ब्रिटिश सरकार को हिलाकर रख दिया, भारत एवं अन्य ब्रिटिश सरकार के आधीन देशों को स्वतन्त्रता मिली। दुनियां में पहली बार एहसास हुआ कि आपसी झगड़े युद्ध की बजाय प्यार और अहिंसा से भी सुलझ सकते हैं। अहिंसा एवं उससे प्रस्तुत सहस्तित्व (Co-existance) के आधार पर दुनिया के मूल्कों में शान्ति रह सकती है। गाँधी जी की अहिंसा की नींव उनकी माता श्री की धार्मिक आस्था, उनके परिवार के संस्कार, विदेश जाने से पहले जैन सन्त के समक्ष शाकाहार, नशामुक्ति, व्यभिचार मुक्त जीवन का संकल्प, उनके मित्र मार्गदर्शक जैन श्रावक गृहस्थ चिन्तक राजचन्द्र महर्षि का संपर्क था। महावीर के सत्य-अहिंसा का प्रयोग और प्रचार जितना महात्मा गांधी द्वारा किया गया, उतना अन्य किसी के द्वारा नहीं। गाँधी को अहिंसा का पुजारी, अहिंसा की मूर्ति, अहिंसा स्तम्भ, अहिंसा का पुरोधा आदि प्रारूपों से लोग जानते हैं। इसलिए आज अहिंसा को व्यापक करने के लिए प्रचार-प्रसार एवं विश्वशान्ति के लिए और इसके सशक्त प्रयोग हेतु गाँधी से वेहतर और कोई माध्यम नहीं हो सकता।

हजारों वर्षो वाद दुनियाँ के नुमाइन्दे राष्ट्र संघ ने विश्व शान्ति एवं कल्याण हेतु अहिंसा को माध्यम बनाने के लिए महात्मा गांधी के जन्म दिन २ अक्टूबर को पूरी दुनिया में इसे ''अहिंसा दिवस'' के रूप में मान्यता दी है, मनाने का संकल्प किया है। महावीर-बुद्ध-गाँधी अहिंसा के पर्यायवाची शब्द हैं। जहाँ अहिंसा वहीं महावीर, वहीं जैन धर्म, वहीं अहिंसा धर्म, वहीं बुद्ध की करुणा।

इस अहिंसा दिवस के उद्घोषणा से भारत के नागरिकों में खुशी की लहर है। जैन धर्मावलम्वी एवं अहिंसा प्रिय जन तो उन्मुक्त हैं। भाव विभोर हैं। इससे भारत का, दुनियाँ के अहिंसा प्रिय लोगों की, जैन लोगों की, शान्ति चाहने वालों की जिम्मेवारी भी वढ़ गई है। अब हर वर्ष गाँधी जयन्ती पर जन-जन में, घर-घर में, प्रत्येक मोहल्ले में, हरएक गाँव शहर एवं समूचे राष्ट्र में, विश्व में अहिंसा के प्रेरणात्मक कार्यक्रम बनें। लोग हिंसा के विचार, हिंसा का रास्ता छोड़, अहिंसक बनें, अहिंसक जीवन शैली अपनायें। निशस्त्रीकरण, सहअस्तित्व, सहकार, प्रेम, करुणा, नशामुक्ति, व्याधि मुक्ति गरीबी, उन्मूलन, शाकाहार प्रोत्साहन जैसे विभिन्न आयामी कार्यक्रम बनें। जीवन बदले। दिशा बदले। युग बदले। युग की धारा बदले। अहिंसा, भय और असुरक्षा से निजात दिलाये।

जैन भाई-बहन, साधु-साध्वी, संघ, संस्थायें गांधी जी के जन्म दिन २ अक्टूबर को अपने धर्म के सबसे बड़े उत्सव के रूप में मनायें, स्वयं और अपने समीपस्थ लोगों को अहिंसा का पुट जीवन मे बढ़ायें। विश्वधर्म अहिंसा को जन-जन तक पहुँचाने का जिम्मा सम्राट अशोक के पुत्र-पुत्रियों ने जिस तरह

बुद्ध के सन्देश को सुदूर क्षेत्रों में पहुँचाने का निभाया था, उसी तरह महावीर की अहिंसा सन्देश वीर की सन्तानें संभालें। प्रभु उनको इसके लिए शक्ति दें।

भारत सरकार गाँधीवादी, संस्थायें, जैन समाज, अहिंसा प्रिय प्रज्ञावान लोग इस जिम्मेवारी में अग्रसर का रोल अदा करें, अहिंसा के विभिन्न पहलुओं पर लेख, चर्चायें, संवाद, नाटक, वाद-विवाद, नजरिया, टी०वी० कार्यक्रम २ अक्टूबर से पहले संकलित हो ताकि मीडिया चाहे अखवार, पत्र, पत्रिकाएं, रेडियो, टी०वी० हो अहिंसा के वारे में प्रचुर युक्ति संगत दिल-दिमाग को छूने वाली सामग्री उपलब्ध रहे। एकमात्र ऐसा प्रयास अहिंसा दिवस की सार्थकता सिद्ध कर सकते हैं पूरी दुनियाँ में।

मीडिया चाहे टी०वी०, रेडियो, पत्र-पत्रिकाओं में भी चाहिये २ अक्टूबर के दिन कार्यक्रमों में पठनीय सामग्री में अहिंसा को मुख्य थीम बनावें। पूरा होम वर्क, फील्ड वर्क, डेस्क वर्क, चिन्तन, लाइब्रेरी वर्क, सम्पर्क, खोज, शोध पूरा-पूरा करें, शक्ति, दूरदर्शिता से करें। आज अगर मीडिया इन पहलुओं को शक्ति के साथ उजागर करता है, तो जनमानस बदलेगा, दिल वदलेगा। दिल वदलेगा तो अहिंसा दिलों में जगह लेगी, हिंसा का निवारण होगा, शान्ति की स्थापना होगी। प्रज्ञावान, उच्चस्थ अधिकारी, शासनाध्यक्ष, सेनापति एवं रक्षा विश्लेषक, सन्त-महात्मा, चिन्तक-लेखक सवके विचार अहिंसा के विषय पर मीडिया जन-जन को परोसे, अहिंसा के पक्ष में जनाधार बनावे। प्रेम, अहिंसा, करुणा हर एक हृदय से झरे।

विश्व की हर एक राजनधानी में शासनाध्यक्ष अहिंसा दिवस पर राष्ट्रीय आयोजन करें। उससे हर एक नागरिक तक विचार प्रवाह होगा। उस दिन समस्त मीडिया अहिंसा के पक्षधरों को खंगाले। उनका सोच-विचार, दर्शन जन-जन तक पहुँचाये। यही एक तात्कालिक रास्ता है। अहिंसा के पक्षधरों एवं पुरोधों को चाहिये कि मीडिया संसार को इस बीड़े को उठाने के लिए प्रेरित करे, तैयार करे। उनसे इस प्रयास में सहकार करे। इस वर्ष के कार्यक्रमों की फिर समीक्षा करें और अगले वर्ष के कार्यक्रमों के लिए और उन्नत जमीन तैयार करें।

अहिंसा दिवस पर कार्यक्रमों के साथ-साथ वर्षभर सन्देश प्रवाहित रहे इसके लिए अहिंसा प्रचार संघ बने, प्रचारकों, के प्रशिक्षण की व्यवस्था वने, विभिन्न अहिंसा प्रचार संस्थानों का समन्वय सुनिश्चित हो। अहिंसा के सन्देश के प्रतीकात्मक अहिंसा द्वार, शान्ति स्तूप, शान्ति स्तम्भ दुनिया के हर एक शहर के प्रमुख भाग में बनाये जायें। वच्चों में अहिंसा के प्रति रूझान पैदा करने के लिए शिक्षा में प्रयुक्त पुस्तकें, पाठ्य सामग्री में अहिंसा के विषय पर प्रस्तुति हो।

अहिंसा संघ, इन्टरनेट पर जानकारी परक वेब साइट, उत्तर प्रत्युत्तर व्यवस्था करे तो बहुत अच्छा होगा। अहिंसा के वस्तु विषय पर सामग्री हिन्दी और भारतीय भाषाओं से भी अधिक अंग्रेजी, चाइनीज, फ्रेन्च, स्पेनीश, कोरियन, जापानी, उर्दू, अरविक, हिब्रु आदि सभी देशों की स्थानीय भाषाओं में आवश्यकता है। यह काम गिनाना आसान है, करना-करवाना, दुसाध्य एवं अति सघन साधनों के बिना नहीं होने वाला है। लेकिन अहिंसा के समर्पित लोग अगर सब मिलकर थोड़ा-थोड़ा बोझ भी संभालें तो यह चमत्कारी काम कोई कठिन नहीं। आइये, आगे आयें, अहिंसा के वढ़ावे के लिए वातावरण बनावें, विश्व में संयुक्त राष्ट्र संघ की इस पहल का स्वागत, सहकार करें। अहिंसा की विचारधारा विश्व में सशक्त बने, हिंसा का निवारण हो, मानव-मानव से भयमुक्त हो, हर एक के जीवन को खुशहाल बनाने के लिए अहिंसा एक माध्यम बने। अहिंसा प्रिय लोग, अहिंसा पुरोधा, प्रज्ञावान नागरिक अपनी जिम्मेवारी इस संदर्भ में समझे और निभावे, गाँधी जयनती, अहिंसा की जननी बने, अहिंसा हर एक की जीवन-यात्रा को प्रभावित ही न करे, सारी जीवनयात्रा ही हर एक नागरिक की अहिंसामय वन जाये। यही अहिंसा दिवस मनाना होगा, यही अहिंसा को मानना होगा, यही अहिंसा मानव को प्रलय की असुरक्षा से बचायेगी। अहिंसा हमारा भविष्य है, अहिंसा शान्ति और सुरक्षा की गारन्टी है।

■

दुलीचन्द जैन

आज के अशान्त युग में महावीर-वाणी की उपादेयता

आधुनिक युग में विज्ञान और तकनीकी ने आशातीत प्रगति की है। आज मनुष्य ने प्रकृति के साधनों पर विजय प्राप्त कर ली है। आवागमन के साधनों के विकास ने राष्ट्रों के बीच की दूरियों को कम कर दिया है। लेकिन क्या हम कह कहते हैं कि आज का मानव प्राचीन युग की तुलना में अधिक सुखी, आनन्दित एवं प्रसन्न है? शायद नहीं। इसका कारण यह है कि मनुष्य के मन और बुद्धि का तो विकास हुआ है पर उसके हृदय का विकास नहीं हो सका है। महाकवि रामधारीसिंह 'दिनकर' के शब्दों में –

"बुद्धि तृष्णा की दासी हुई, मृत्यु का सेवक है विज्ञान।
चेतता अब भी नहीं मनुष्य, विश्व का क्या होगा भगवान्?"

आज दुनिया के विकसित कहे जानेवाले राष्ट्र अनेक प्रकार के भीषण शक्तिशाली अस्त्र-शस्त्रों के उत्पादन में लगे हुए हैं। पिछले विश्वयुद्ध में जापान के हीरोशिमा और नागासाकी में जो बम गिरे थे, उनसे लाखों व्यक्ति हताहत हुए थे तथा वहाँ का जल और वायु विषाक्त हो गया था और अनेक बीमारियाँ फैल गई थीं। लेकिन आज उनसे बहुत अधिक शक्तिशाली अणु और परमाणु ही नहीं, इस प्रकार के रासायनिक बमों व आयुधों का निर्माण हो चुका है, जो कुछ ही समय में समस्त मानव-जाति के विनाश की सामर्थ्य रखते हैं। आर्थिक प्रतियोगिता की अंधी दौड़ तथा अनियंत्रित स्वतंत्रता ने मनुष्य का जीवन अशांत बना दिया है।

इस प्रकार की भीषण परिस्थिति में विश्व के चिंतक अब यह सोचने हेतु बाध्य हो रहे हैं कि इन कठिनाइयों से मानव के त्राण का क्या उपाय हो सकता है?

जैन आगम ग्रंथों में इन समस्याओं के समाधान का विशद विवेचन मिलता है। वहाँ पर हिंसा और अहिंसा की गंभीर व्यवस्था उपलब्ध है। अहिंसा जैनधर्म का प्राण है। अहिंसा का अर्थ मात्र इतना ही नहीं है कि किसी प्राणी की हिंसा न की जाय, इसका विधेयात्मक अर्थ है, विश्व के समस्त प्राणियों के प्रति प्रेम, बन्धुत्व एवं आत्मीयता की भावना का विकास किया जाय। यह भावना मात्र मनुष्य-जाति के प्रति ही नहीं, किन्तु समस्त प्राणी जगत के प्रति व्याप्त हो।

जैनधर्म की मान्यता है कि मनुष्य और प्रकृति में घनिष्ठ संबंध है तथा दोनों एक-दूसरे पर आश्रित हैं। सृष्टि के प्रत्येक जीव को जीने का अधिकार है– केवल मनुष्य-मात्र को ही नहीं, पशु-पक्षी, वनस्पति इत्यादि सभी को जीने का हक है। भगवान महावीर ने कहा–

"सव्वे पाणा पियाउया, सुहसाया, दुक्खपडिकूला।
अप्पियवहा पियजीविणो, जीविउकामा सव्वेसिं जीवियं पियं।।"

अर्थात् सभी प्राणियों को अपना जीवन प्रिय है, सुख अनुकूल है, दु:ख प्रतिकूल है। वध सबको अप्रिय है। सभी दीर्घ जीवन की कामना करते हैं।

–आचारांग सूत्र १/२/३/६३

यह समझकर किसी जीव को त्रास नहीं पहुँचाना चाहिये। ("न य वित्तासए पर।)"

–उत्तराध्ययन सूत्र २/२०

किसी जीव के प्रति वैर-विरोध भाव नहीं रखना चाहिये। ("ण विरुज्झेज्ज कोणई।")

–सूत्रकृतांग सूत्र १/१५/१३

सब जीवों की प्रति मैत्री भाव रखना चाहिये। ("मित्तिं भूएहिं कप्पए") – उत्तरा सूत्र ६/२

प्राणी-मात्र के प्रति प्रेम व आत्मीयता की भावना की विस्तृत व्याख्या आचारांग सूत्र के निम्न पदों में मिलती है–

"तुमंसि णाम सच्चेव (तं चेव) जं हंतव्वं हि मण्णसि।
तुमंसि णाम सच्चेव जं अज्जावेयत्वं ति मण्णसि।
तुमंसि णाम सच्चेव जं परियावेयववं ति मण्णसि।
तुमंसि णाम सच्चेव जं परिघेत्तव्वं ति मण्णसि।
तुमंसि णाम सच्चेव जं उद्दवेयव्वं ति मण्णसि।
अंजू चेच पडिबुद्धिजीवी। तम्हा ण हंता ण वि घायए।
अणुसंवेयणमप्पाणेणं जं हंतव्वं णाभिपत्थए।।"

–आचारांग सूत्र १, ५/५, १७०

अर्थात् हे पुरुष! जिसे तू मारने की इच्छा करता है, विचार कर वह तू ही है– तेरे जैसा ही सुख-दु:ख का अनुभव करने वाला प्राणी है, जिस पर तू हुकूमत करने की इच्छा करता है, विचारकर वह तेरे जैसा ही प्राणी है, जिसे परिताप-दु:ख देने योग्य समझता है, चिन्तन कर वह तेरे जैसा ही प्राणी है, जिसे तू वश में करने की इच्छा करता है, जरा सोच तेरे जैसा ही प्राणी है, जिसके तू प्राण लेने की इच्छा करता है, विचार कर वह तेरे जैसा ही प्राणी है।

सत्पुरुष इसी तरह विवेक रखता हुआ जीवन बिताता है। वह न स्वयं किसी का हनन करता है और न औरों द्वारा किसी का हनन करवाता है।

भगवान महावीर ने अहिंसा को धर्म के लक्षणों में सर्वप्रथम स्थान दिया। दशवैकालिक सूत्र में कहा गया है– धर्म उत्कृष्ट मंगल है। अहिंसा, संयम और तप उसके लक्षण हैं। जिसका मन सदा धर्म में रमता रहता है, उसे देवता भी नमस्कार करते हैं।

प्रत्येक जैन श्रावक को पाँच महाव्रतों– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह का आजीवन पूर्णतया पालन करना आवश्यक है। इन सब में अहिंसा का प्रथम स्थान है। सत्यादि दूसरे गुण अहिंसा के पोषक व रक्षक हैं।

विश्व में अशान्ति का पहला कारण हिंसा की भावना है, जिसके निराकरण के लिए अहिंसा की भावना को व्यवहार में लाना अति आवश्यक है। विश्व में अशांति का दूसरा बड़ा कारण है– मनुष्य का अपने आत्मत्त्व का विस्मरण। संसार में जितने भी तत्व हैं, उन्हें तीन भागों में विभक्त किया गया है– हेय, ज्ञेय, और उपादेय, तत्व कुल नौ हैं। इनमें जीव (आत्मतत्व) मुख्य है। जीव, अजीव व पुण्य का ज्ञेय, पाप, आश्रव व बंध को हेय तथा संवर, निर्जरा व बंध को उपादेय कहा है।

जीव (आत्मा) को कर्मो का कर्ता माना गया है। 'द्वादशांग अनुप्रेक्षा' में कहा है कि आत्मा उत्तम गुणों का आश्रय है, समग्र द्रव्यों में उत्तम द्रव्य है और सब तत्वों में परम तत्व है। आत्मा तीन प्रकार की है– बहिरात्मा, अंतरात्मा ओर परमात्मा।

आत्मा और शरीर पृथक-पृथक हैं। आत्मा अविनाशी तत्व है। शरीर विनाशी-विनष्ट होने वाला तत्व है। इसीलिए इसे पुद्गल कहा गया है। आत्मा को कैसे जाना जा सकता है? इसका उत्तर आचार्य कुंदकुंद ने 'समयसार की गाथा' २९६ में दिया है। वहाँ पर कहा गया है कि आत्मा को आत्मप्रज्ञा अर्थात् भेदविज्ञान रूप बुद्धि द्वारा ही जाना जा सकता है।

आत्मा के बारे में महावीर ने कहा-

''अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय-सुपट्ठिओ।''

–उत्तराध्ययन सूत्र २०/३

अर्थात् आत्मा ही सुख और दु:ख की उत्पन्न करने वाली और न करने वाली हैं। आत्मा ही सदाचार से मित्र और दुराचार से शत्रु है। अपनी आत्मा को जीतना ही सबसे कठिन कार्य है–

''जे सहस्सं सहस्साणं, संगामे दुज्जए जिणे।
एगं जिणेज्ज अप्पाणं, एस से परमो जओ।''

अर्थात् दुर्जय संग्राम में सहस्र-सहस्र शत्रुओं को जीतने की अपेक्षा एक अपनी आत्मा को जीतना परम जय है- महान् विजय है। जो अपनी आत्मा को जीत लेता है, वही सच्चा संग्राम विजेता है।

आत्मा पर विजय प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि चार कषायों पर विजय प्राप्त की जाय। आत्म-विजय का सुन्दर विश्लेषण निम्न सूत्र में उपलब्ध है–

''एगे जिए जिया पंच, पंच जिए जिया दस।
दसहा उ जिणित्ताणं, सव्वसत्तू जिणामहं।।''

–उत्तराध्ययन सूत्र २३/३६

अर्थात् एक को जीत लेने पर मैंने पाँच को जीत लिया, पाँच को जीत लेने से मैंने दस को जीत लिया और दसों को जीत लेने पर मैंने सभी शत्रुओं को जीत लिया है। मनुष्य को चार कषायों पर कैसे विजय प्राप्त करनी चाहिये–

''उवसमेण हणे कोहं, माणं मद्दवया जिणे।
मायं अज्जुवभावेणं, लोभं संतोषओ जिणे।।''

–दशवैकालिक सूत्र ८/३९

अर्थात् क्रोध को उपशम-शान्ति से (क्षमा से), मान को मार्दव-मृदुला से, माया को ऋजुभाव-सरलता से और लोभ को संतोष से जीतें।

इन कषायों के कारण सद्गुणों का विनाश होता है, यथा–

''कोहो पीइं पणोसेइ, माणो विणय नासणो।
माया मित्ताणि नासेइ, लोहो सव्व विणासणो।।''

अर्थात् क्रोध प्रीति को नष्ट करता है, मान विनय को नष्ट करता है, माया धूर्तता (जालसाजी) मैत्री को नष्ट करती है और लोभ सब कुछ नष्ट कर देता है।

भगवान महावीर ने कहा कि संसार के प्राणियों के लिए चार बातें बहुत दुर्लभ हैं–

''चत्तारि परमंगाणि, दुल्लहाणीह जंतुणो।
माणुसत्तं सुई सद्धा, संजमम्मि य वीरियं।।''

अर्थात् संसार के प्राणियों को चार परम अंग–उत्तम संयोग–अत्यंत दुर्लभ हैं–(१) मनुष्य-भव, (२) धर्म-श्रुति (धर्म का सुनना) धर्म में श्रद्धा और (४) संयम में (धर्म में) वीर्य पराक्रम।

"माणुसत्तामि आयाओ, जो धम्मं सोच्चासद्दहे।
तवस्सी वीरियं लद्धुं, संवुडे निद्धुणे रयं।।

–उत्तराध्ययन सूत्र ३/११

अर्थात् मनुष्य-जन्म पाकर जो धर्म को सुनता और उसमें श्रद्धा करता हुआ उसके अनुसार पुरुषार्थ आचरण करता है, वह तपस्वी आगामी कर्मों को रोकता हुआ संचित कर्म रूपी रज को धुन डालता है।

मनुष्य-जीवन के उत्थान का जो मार्ग है, उसे रत्न-त्रय (त्रि-रत्न) कहा गया है। तत्त्वार्थ सूत्र में कहा है–

"सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्ग:"

–तत्त्वार्थ सूत्र १/१

अर्थात् सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र– इन तीनों का समन्वित रूप (ये तीनों मिलकर) मोक्ष का साधन हैं।

पंचास्तिकाय सूत्र सं० १६० में कहा गया है– धर्मास्तिकाय आदि (छह द्रव्य) तथा तत्वार्थ आदि में श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है। अंगों और पूर्वो का ज्ञान सम्यक् ज्ञान है। तप में प्रत्ययशीलता सम्यक् चारित्र है। यह व्यवहार-आचार मोक्षमार्ग है।

सम्यग्दर्शन के विना ज्ञान नहीं होता। ज्ञान के विना चारित्र नहीं सधता। जीवन के उत्थान के लिए ज्ञान और क्रिया का समन्वय होना आवश्यक है। यह बात 'आचारांग निर्युक्ति' में बड़े ही सुन्दर ढंग से स्पष्ट की गई है–

"हयं नाणं किया हीणं, हया अण्णाणओ किया।
पासंतो पंगुलो दड्ढो, धावमाणो य अंधओ।।"

–आचारांग निर्युक्ति १०१

अर्थात् क्रियाहीन का ज्ञान व्यर्थ है और अज्ञानी की क्रिया व्यर्थ है। जैसे एक पंगु वन में लगी हुई आग को देखते हुए भी भागने में असमर्थ होने से जल मरता है और अंधा व्यक्ति दौड़ते हुए भी देखने में असमर्थ होने से जल मरता है।

भगवान महावीर की धर्म-क्रांति की मुख्य उपलब्धि है– उन्होंने ईश्वर की जगह कर्म को प्रतिष्ठा दी। उन्होंने भक्ति के स्थान पर सत्कर्म व सदाचार का सूत्र दिया। उन्होंने कहा–

"सुचिण्णा कम्मा सुचिण्णफला भवन्ति।
दुचिण्णा कम्मा दुचिण्णफला भवन्ति।।"

–औपपातिक सूत्र ७१

अर्थात् अच्छे कर्म अच्छे फल देनेवाले होते हैं और बुरे कर्म बुरे फल देने वाले होते हैं। मनुष्य अपने संचित कर्मों के अनुसार ही सुख-दुख प्राप्त करता है–

"जमिणं जगई पुढो जगा, कम्मेहिं लुप्पंति पाणिणो।
सयमेव कडेहिं गाहइ, नो तस्स मुच्चेज्जपुट्ठयं।।"

–सूत्रकृतांग सूत्र १, २/१४

अर्थात् इस जगत् में जो प्राणी हैं, वे अपने-अपने संचित कर्मों से ही संसार भ्रमण करते हैं और किये हुए कर्मों के अनुसार ही भिन्न-भिन्न योनियों में जन्म लेते हैं। फल भोगे बिना उपार्जित कर्मों से प्राणी का छुटकारा नहीं होता।

कर्म-बंध का मूल कारण राग-द्वेष की प्रवृतित है–

"रागो य दोसो वि य कम्मबीयं, कम्म च मोहप्पभवं वयंति।
कम्मं च जाई-मरणस्स मूलं, दुक्खं च जाई मरणं वयंति।।"

–उत्तराध्ययन सूत्र ३२:७

अर्थात् राग और द्वेष कर्म के बीज (मूल कारण) हैं। कर्म मोह से उत्पन्न होता है। वह जन्म-मरण का मूल है, जन्म-मरण को दु:ख का मूल कहा गया है। साधक के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने मन पर नियंत्रण करे। भगवान ने कहा–

"पहावंतं निगिण्हामि, सुयरस्सी-समाहियं।
न मे गच्छइ उम्मग्गं, मग्गं च पडिवज्जई।।"

–उत्तराध्ययन सूत्र २३/५६

अर्थात् भागते हुए दुष्ट अश्व को मैं ज्ञान-रूपी लगाम के द्वारा अच्छी तरह निगृहीत करता हूँ। इससे मेरा अश्व उन्मार्ग में – गलत रास्ते पर नहीं जाता। वह ठीक मार्ग को ग्रहण करता हुआ चलता है। मन के बारे में कहा गया है–

"मणो साहस्सिओ भीमो, दुट्ठसो परिधावई।
तं सम्मं तु निगिण्हामि, धम्मसिक्खाइ कन्थगं।।"

–उत्तराध्ययन सूत्र २३/५८

अर्थात् मन ही वह साहसिक (दु:साहसी), रौद्र (भयावह) और दुष्ट अश्व है, जो चारों ओर दौड़ता है। मैं उसे कन्थक उच्च जाति सम्पन्न, सुधरे हुए अश्व की भाँति धर्मशिक्षा द्वारा अच्छी तरह निगृहीत, नियंत्रित करता हूँ।

आज का मानव समझता है कि संसार के भौतिक साधनों द्वारा ही सुख मिल सकता है। अत: वह उनकी प्राप्ति व अभिवृद्धि में अपनी पूर्ण शक्ति लगा देता है। इच्छाओं को बढ़ाते जाना, उनकी पूर्ति के लिए उत्पादन के साधनों की वृद्धि करते जाना तथा उनके द्वारा इच्छाओं के तृप्त करते जाना यही भोगवादी मनुष्य का जीवन-क्रम है। भगवान महावीर ने कहा कि सभी भौतिक साधन मनुष्य को सुख देने में असमर्थ हैं–

"सव्वं जगं जइ तुहं, सव्वं वा वि धणं भवे।
सव्वं पि ते अपज्जत्तं, नेव ताणाय तं वे।।"

–उत्तराध्ययन सूत्र १४/३९

अर्थात् यह सारा जगत और यह सारा धन भी तुम्हारा हो जाय तो भी वे सब अपर्याप्त ही होंगे और न ही ये सब तुम्हारा रक्षण करने में ही समर्थ होंगे।

लेकिन इस विवेचन का यह अर्थ यह नही लेना चाहिये कि जैनधर्म के सिद्धान्त अव्यावहारिक तथा आधुनिक जीवन से मेल नहीं खाते। यह एक अत्यंत भ्रांत धारणा है, जिसका निराकरण होना आवश्यक है।

भगवान महावीर ने धर्म-प्रचारार्थ चतुर्विध संघ की स्थापना की। श्रमण-श्रमणी, श्रावक और श्राविका। उन्होंने श्रमण-श्रमणियों के लिए पंच महाव्रतों का पालन करना अनिवार्य बतलाया तथा काफी कठिन चर्या का निर्धारण किया। इसका कारण था श्रमण-श्रमणियों को आत्म-साधना के कठिन मार्ग में जीवन व्यतीत करना था। वे किसी एक स्थान पर (चातुर्मास के काल के अतिरिक्त) नहीं रह सकते थे तथा पैदल विहार करते थे। अपने साथ में संयम-साधना के लिए आवश्यक उपकरणों के अतिरिक्त कुछ नहीं रख सकते थे।

लेकिन गृहस्थों के लिए उनके नियम अपेक्षाकृत सरल थे। श्रावक से उनकी अपेक्षा थी कि वह पाँच अणुव्रतों का पालन करे। प्राणी वध (हिंसा), असत्य, चोरी, अब्रह्मचर्य व अपरिमित करना (परिग्रह) इन पाँच पापों से सापवाद अपने सामर्थ्य के अनुसार विरत होना अणुव्रत है। इसी प्रकार उससे तीन गुण-व्रतों एवं चार शिक्षाव्रतों का पालन करने की अपेक्षा की जाती है। श्रावक का जीवन पूर्णत: सदाचारयुक्त होना चाहिये। वह प्रामाणिकता सच्चरित्रता से जीवन विताये यह अपेक्षित है। विशेषत: उसके लिए सात प्रकार के दुर्व्यसनों से विरत रहना आवश्यक है। ये व्यसन हैं–

''जूयं मज्जं मंसं वसा, पारद्धि चोर परयारं।
दुग्गइ-गमणस्सेदाणि, हेड भूणाणि पावाणि।।''

–वसुनन्दि श्रावकाचार, ५९

अर्थात् जुआ, मांस-भक्षण, वैश्यागमन, मद्यपान, शिकार, चोरी और परस्त्री सेवन-ये सात व्यसन हैं। मांसाहार से दर्प-उन्माद वढ़ता है। दर्प से मनुष्य में मद्यपान की अभिलाषा जगती है और तव जुआ खेलता है। इस प्रकार एक मांसाहार से ही मनुष्य उपर्युक्त अनेक दोषों को प्राप्त हो जाता है।

आज भारतवर्ष में लगभग एक करोड़ व्यक्ति जैन धर्म का पालन करते हैं। यह विश्व का सबसे बड़ा शाकाहारी संगठन है। प्राचीनकाल में अनेक राजा, महाराजा एवं व्यवसायियों ने इस धर्म का पालन किया तथा सफलतापूर्वक अपना जीवन विताया था और सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। मौर्यकाल, नन्दवंश एवं गुजरात तथा कलिंग के अनेक शासक महावीर के अनुयायी थे एवं उन्होंने अनेक युद्धों में भाग लिया था। महान यौद्धा चामुण्डराय १७ युद्धों में लड़े थे तथा विजेता वने थे।

इस प्रकार जैन धर्म कर्तव्य-पालन से विमुख रहने की शिक्षा नहीं देता। जैनधर्म कहता है कि अहिंसा शूरवीरों का धर्म है, कायरों का नहीं।

जैनधर्म पुरुषार्थवादी धर्म है। यह प्रत्येक क्षेत्र में विवेकपूर्वक कार्य करने का निर्देश देता है। जो विवेक पूर्वक कार्य करता है, वह कर्मबंध नहीं करता। दशवैकालिक सूत्र में कहा है–

''जयं चरे, जयं चिट्ठे, जयमासे, जयं सए।
जयं भुजुंतो भासंतो, पावकमं न बंधई।।''

–दशवैकालिक सूत्र ४/८

अर्थात् साधक विवेकपूर्वक चले, विवेकपूर्व खड़ा हो, विवेकपूर्वक सोये। इस प्रकार विवेकपूर्वक सब क्रियाओं को करता हुआ विवेकपूर्वक भोजन करता हुआ व संभाषण करता हुआ वह पाप कर्म का बंध नहीं करता।

भगवान महावीर के उपदेश मानव को मैत्रीपूर्ण, नैतिक एवं प्रामाणिक जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं। अहिंसा, समता, सरलता एवं अपरिग्रह के सिद्धांतों का पालन करने से व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन का शांतिपूर्ण ढंग से विकास हो सकता है तथा विश्व में शान्ति की स्थापना हो सकती है।

■

उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी म०

जपयोग की विलक्षण शक्ति

जप क्या है?

स्थूलदृष्टि से देखने पर यही मालूम होता है कि जप शब्दों का पुनरावर्तन है। किसी भी इष्टदेव, परमात्मा या वीतराग प्रभु के नाम का बार-बार स्मरण करना, या किसी मंत्र या विशिष्ट शब्द का बार-बार उच्चारण करना जप है। इसे जाप भी कहते हैं। पदस्थ ध्यान का यह एक विशिष्ट अंग है।

शब्दों के बार-बार उच्चारण से क्या लाभ?

प्रश्न होता है– शब्दों का उच्चारण तो संसार का प्रत्येक मानव करता है। पागल या विक्षिप्त है चित्त व्यक्ति भी एक ही बात (वाक्य) को बार-बार दोहराता है अथवा कई राजनीतिज्ञ या राजनेता भी अपने भाषण में कई लोग रात-रात भर हरे राम, हरे कृष्ण आदि की धुन लगाते हैं। अथवा कीर्तन करते-कराते हैं, क्या इनसे कोई लाभ होता है? क्या ये शब्दोच्चारण आध्यात्मिक लक्षण की पूर्ति करते हैं?

शब्द शक्ति का प्रभाव

इसका समाधान यह है कि वैसे प्रत्येक उच्चारण किया हुआ या मन में सोचा हुआ शब्द चौदह रज्जू प्रमाण (अखिल) लोक (ब्रह्माण्ड) में पहुँच जाता है। जैसे भी अच्छे या बुरे शब्दों का उच्चारण किया जाता है, या सामूहिक रूप से नारे लगाये जाते हैं, या बोले जाते हैं, उनकी लहरें बनती हैं, वे आकाश में व्याप्त अपने सजातीय विचारयुक्त शब्दों को एकत्रित करके लाती है। उनसे शब्दानुरूप अच्छा या बुरा वातावरण तैयार होता है। अच्छे शब्दों का चुनाव अच्छा प्रभाव पैदा करता है, और बुरे शब्द बुरा प्रभाव डालते हैं। अधिकांश लोग शब्द शक्ति को केवल जानकारी के आदान-प्रदान की वस्तु समझते हैं। वे लोग शब्द की विलक्षण शक्ति से अपरिचित हैं।

अच्छे-बुरे शब्दों का अचूक प्रभाव

वीतरागी या समतायोगी को छोड़कर शब्द का प्रायः सब लोगों के मन पर शीघ्र असर होता है। अच्छे-बुरे, प्रिय-अप्रिय शब्द के असर से प्रायः सभी लोग परिचित हैं।

महाभारत की कथा प्रसिद्ध है। दुर्योधन को द्रौपदी द्वारा कहे गए थोड़े से व्यंग भरे अपमानजनक शब्द ''अंधे के पुत्र अंधे ही होते हैं'' की प्रतिक्रिया इतनी गहरी हुई कि उसके कारण महाभारत के ऐतिहासिक युद्ध का सूत्रपात हुआ, जिसमें अठारह अक्षौहिणी सेना मारी गई।

स्वामी विवेकानंद के पास कुछ पंडित आए। वे कहने लगे- क्या पड़ा है- शब्दों में। जप के शब्दों का कोई प्रभाव या अप्रभाव नहीं होता। वे जड़ हैं। आत्मा पर उनका क्या असर हो सकता है? स्वामीजी कुछ देर तक मौन रहकर बोले– ''तुम मूर्ख हो, बैठ जाओ।'' इतना सुनते ही सब आगबबूला हो गए और उनके चेहरे क्रोध से लाल हो गए। उन्होंने कहा– ''आप इतने बड़े संन्यासी होकर गाली देते हैं। बोलने का बिल्कुल ध्यान नहीं है आपको?'' विवेकानंद ने मुस्कराते हुए कहा– ''अभी तो आप कहते थे, शब्दों का क्या प्रभाव होता है? और एक ''मूर्ख'' शब्द को सुनकर एकदम भड़क गए। हुआ न शब्दों का प्रभाव आप पर?'' वे सब पंडित स्वामी विवेकानन्द का लोहा मान गए।

जैन इतिहास में प्रसन्नचन्द्र राजर्षि की घटना प्रसिद्ध है। वे वन में प्रसन्न मुद्रा में पवित्र भावपूर्वक ध्यानस्थ खड़े थे। मगध नरेश श्रेणिक नृप भगवान महावीर के दर्शनार्थ जाने वाले थे। उनसे पहले दो सेवक आगे-आगे जा रहे थे। उनमें से एक ने उनकी प्रशंसा की, जबकि दूसरे ने उनकी निन्दा की और कहा– ''यह काहे का साधु है? यह जिन सामन्तों के हाथ में अपने छोटे-से बच्चे के लिए राज्यभार सौंप कर आया है, वे उस अबोध बालक को मारकर स्वयं राज्य हथियाने की योजना बना रहे हैं। इस साधु को अपने अबोध बच्चे पर बिल्कुल दया नहीं है।'' इस प्रकार के निन्दा भरे शब्द सुनते ही प्रसन्नचन्द्र राजर्षि अपने आपे में न रहे। वे मन ही मन शस्त्रास्त्र लेकर शत्रुओं से लड़ने का उपक्रम करने लगे।

श्रेणिक राजा द्वारा भगवान महावीर से पूछने पर उन्होंने सारी घटना का रहस्योद्घाटन करते हुए राजर्षि की पहले, दूसरे से बढ़ते-बढ़ते सातवें नरक गमन की अशुभ भावना बताई परन्तु कुछ ही देर बाद राजर्षि की भावधारा एकदम मुड़ी वे पश्चात्ताप

और तीव्रतम आत्मनिन्दा करते-करते सर्वोच्च देवलोक गमन की संभावना से जुड़ गए। फिर घोर पश्चात्ताप से घाती कर्मदलिकों को नष्ट करके केवलज्ञान को प्राप्त हुए और फिर सर्वकर्मों का क्षय करके सिद्ध बुद्ध मुक्त वन गए।

यह था शव्द का अमोघ प्रभाव।

मंत्र जप से अनेक लाभ

वैज्ञानिकों ने अनुभव किया है कि समवेत स्वर में उच्चारित मंत्र पृथ्वी के अयन मण्डल को घेरे हुए विशाल चुम्बकीय प्रवाह शूमेन्स रेजोनेन्स से टकराते हैं और लौटकर समग्र पृथ्वी के वायुमण्डल को प्रभावित करते हैं। शूमेन्स रेजोनेन्स के अन्तर्गत जो गति तरंगों की रहती है, वही गति मंत्रजाप करने वाले साधकों की तन्मयता एवं एकाग्रता की स्थिति में मस्तिष्क से रिकार्ड की जाने वाली अल्फा-तरंगों की (७ से १३ सायकल प्रति सेकेण्ड) होती है। व्यक्ति चेतना और समष्टि चेतना में कितना ठोस साम्य है, यह साक्षी वैज्ञानिक उपलब्धि देती है। इतना ही नहीं, मंत्रविज्ञानवेत्ता विभिन्न मंत्रों द्वारा शाप-वरदान, विविध रोगों से मुक्ति, अधि-व्याधि-उपाधि से छुटकारा, भूत प्रेतादिग्रस्तता-निवारण तथा मारण, मोहन, उच्चाटन, कृत्याघात आदि प्रयोगों का दावा करते हैं और कर भी दिखाते हैं।

संगीतगत शब्दों का विलक्षण प्रभाव

लय-तालवद्ध गायन तथा सामूहिक कीर्तन संगीत के रूप में शव्दशक्ति की दूसरी महत्वपूर्ण विधा है। इसका विधिपूर्वक सुनियोजन करने से प्रकृति में वांछित परिवर्तन एवं मन-वचन-काया को रोग मुक्त करना संभव है। संगीत से तनाव शैथिल्य हो जाता है। वह अनेकानेक मनोविकारों के उपचार की भी एक मनोवैज्ञानिक विधा है। संगीत के सुनियोजन से रोग-निवारण, भावात्मक अभ्युदय, स्फूर्तिवर्धन, वनस्पति-उन्नयन, गोदुग्ध-वर्धन तथा प्राणियों की कार्यक्षमता में विकास जैसे महत्वपूर्ण लाभ संभव हैं।

शव्द में विविध प्रकार की शक्ति

शव्द में मित्रता भी उत्पन्न करने की शक्ति है, शत्रुता भी। पाणिनी ने महाभाष्य में वताया है – ''एक: शव्द- सुष्ठु प्रयुक्त: स्वर्गे लोके च कामधुक भवति'' प्रयोग किया एक भी अच्छा शव्द स्वर्गलोक और इहलोक में कामदुहा धेनु के समान होता है। शोक-संवाद सुनते ही मनुष्य अर्धमूर्च्छित सा एवं विह्वल हो जाता है। उसकी नींद, भूख और प्यास मारी जाती है। तर्क, युक्ति, प्रमाण एवं शास्त्रोक्ति तथा अनुभूति के आधार पर प्रभावशाली वक्तव्य देते ही तुरन्त जनसमूह की विचारधारा वदल जाती है, वह विल्कुल आगा-पीछा विचार किए विना कुशल वक्ता के विचारों का अनुसरण करने को तैयार हो जाता है। ये तो शब्द के स्थूल प्रभाव की वातें हैं।

शब्दों का सूक्ष्म एवं अदृश्य प्रभाव

शव्द का अत्यन्त सूक्ष्म एंव अदृश्य प्रभाव भी होता है। मंत्र के शब्दों और संगीत के शब्दों द्वारा वर्तमान युग में कई अद्भुत परिणाम ज्ञात हुए है। मंत्रशक्ति और संगीत शक्ति दोनों ही शब्द की शक्ति है। पंच परमेष्ठी नमस्कार मंत्र गर्भित विभिन्न मंत्रों द्वारा आधि-व्याधि, उपाधि पीड़ा, विविध दु:साध्य रोग, चिन्ता आदि का निवारण किया जाता है। अन्य मंत्रों का भी प्रयोग विविध लौकिक एवं लोकोत्तर लाभ के लिए किया जाता है।

गायन द्वारा अनेक रोगों से मुक्ति संभव

आयुर्वेद के भेषजतंत्र में चार प्रकार के भेषज बतलाये गए हैं– पवनौकष, जलौकष, नौकष और शाब्दिक। इसमें अन्तिम भेषज से आशय है– मंत्रोच्चारण एवं लयबद्ध गायन, आयुर्वेद के प्रमुख ग्रन्थ चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता आदि में ज्वर, दमा, सन्निपात, मधुमेह, हृदय्रोग, राजयक्ष्मा, पीलिया, बुद्धिमन्दता आदि रोगों में मन्त्रों से उपचार का उल्लेख है। जबकि सामवेद में ऋषिप्रणीत ऋचाओं के गायन द्वारा अनेक रोगों से मुक्ति का उपाय बताया गया है।

मंत्र विज्ञानवेत्ताओं का कहना है – ह्रस्व उच्चारण से पाप नष्ट होता है, दीर्घ उच्चारण से धनवृद्धि होती है और प्लुत उच्चारण से होती है– ज्ञानवृद्धि। इनके अतिरिक्त अध्यात्म विज्ञानवेत्ता तीन प्रकार के उच्चारण और वताते हैं १. सूक्ष्म २. अति सूक्ष्म और ३. परम सूक्ष्म। ये तीनों प्रकार के उच्चारण मंत्र जप करने वाले साधक को ध्येय की अभीष्ट दिशा में योगदान करते हैं। एक ही ''ॐ'' शब्द को लें, इसका ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत उच्चारण करने से अभीष्ट लाभ होता है। किन्तु इसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म जप करने पर या 'सोऽहं'' आदि के रूप में अजपाजपन करने पर तो धीरे-धीरे ध्येय के साथ जपकर्ता का तादात्म्य वढ़ता जाता है। सामीप्य भी होता जाता है।

इस प्रकार मंत्रोच्चारण एवं संगीत प्रयोग से असाध्य से असाध्य समझे जाने वाले रोगों की चिकित्सा, मानसिक, वौद्धिक चिकित्सा का विधान पुरातन ग्रन्थों में है। शब्दतत्व में असाधारण जीवनदात्री क्षमता विद्यमान है। यह सिद्ध है।

मंत्र जप की ध्वनि जितनी सूक्ष्म, उतना ही अधिक शक्ति लाभ

एक चिन्तक ने वताया कि जैसे हम ''अर्हम्'' का उच्चारण नाभि से शुरू करके क्रमश: हृदय, तालु, विन्दु, और अर्धचन्द्र तक ऊपर ले जाते हैं, तो इस उच्चारण से क्या प्रतिक्रिया होती है? इस पर भी ध्यान दें। जव हमारा उच्चारण सूक्ष्म हो जाता है, तव ग्रन्थियों का भेदन होने लगता है। आज्ञाचक्र तक पहुँचते-पहुँचते हमारी ध्वनि यदि अतिसूक्ष्म-सूक्ष्मतम हो जाती है तो उन ग्रन्थियों का भी भेदन शुरू हो जाता

है, जो ग्रन्थियां सुलझती नहीं है, वे भी इन सूक्ष्म उच्चारणों से सुलझ जाती है।

निष्कर्ष यह है कि जब हमारा संकल्प सहित मंत्रजप स्थूलवाणी से होगा, तो इतना पावरफुल नहीं होगा, न ही हम यथेष्ट लाभ प्राप्त कर सकेंगे, हमारा जप तभी शक्तिशाली और लाभदायी होगा, जब हमारा संकल्पयुक्त जप सूक्ष्म वाणी से होगा।

भावना, शुद्ध उच्चारण और तरंगों से मंत्रजप शक्तिशाली एवं लाभदायी

मंत्र शक्तिशाली और अभीष्ट फलदायी तभी होता है, जब मंत्र के शब्दों के साथ भावना शुभ और उच्चारण शुद्ध होता है। उससे विभिन्न तरंगें पैदा होती जाती हैं। अत: मंत्रों की शब्दशक्ति के साथ तीन बातें जुड़ी हुई १. भावना, २. उच्चारण और ३. उच्चारण से उत्पन्न हुई शक्ति के साथ पैदा होने वाली तरंगें। किसी शब्द के उच्चारण से अल्फा तरंगे, किसी शब्द के उच्चारण से थेटा या बेटा तरंगें पैदा होती हैं। ॐ के भावनापूर्वक उच्चारण से अल्फ़ा तरंगे पैदा होती है, जो मस्तिष्क को प्रभावित एवं शिथिलीकरण करती हैं। ॐ, ह्रीं, श्रीं, क्लीं, ब्लूं, एं, अर्हम्, अ सि आ उ सा आदि जितने भी मंत्र या बीजाक्षर हैं, उनसे उत्पन्न तरंगे ग्रंथि संस्थान को प्रभावित करती हैं तथा अन्त:स्रावी ग्रन्थियों को संन्तुलित एवं व्यवस्थित करती है।

मंत्र जप के लिए शब्दों का चयन विवेकपूर्वक हो

जैनाचार्यों ने वाक्सूक्ष्मत्व, वाग्गुप्ति तथा भाषासमिति का ध्यान रखते हुए उन शब्दों का चयन किया है जो मंत्ररूप बन जाते हैं। उन्होंने कहा कि साधक को यतनापूर्वक उन शब्दों का चुनाव करना चाहिए, जिनसे बुरे विकल्प रुक जाएं, जो उसकी संयम यात्रा को विकासशील और स्व-पर कल्याणमय बनाएं एवं विघ्नबाधाओं से बचाएँ। जीवन में सुगन्ध भर जाए, दुर्गन्ध मिट जाए, जीवन मोक्ष के श्रेयस्कर पथ की ओर गति प्रगति करे, प्रेय के पथ से हटे, उसी प्रकार से संकल्प एवं स्वप्न हृदयभूमि में प्रादुर्भूत हों, जिनसे आत्म स्वरूप में या परमात्मभाव में रमण हो सके, परभावों और विभावों से दूर रहा जा सके। ''णमो अरिहंताणं'' आदि पंचपरमेष्ठी नमस्कार मंत्र तथा नमो नाणस्स, नमो दंसणस्स, नमो चरित्तस्स और नमो तवस्स'' आदि नवपद ऐसे शक्तिशाली शब्दों का संयोजन है। भावना और श्रद्धा के साथ उनके उच्चारण (जप) से आधि-व्याधि और उपाधि मिट कर अन्तरात्मा में समाधि प्राप्त हो सकती है।

शब्दशक्ति का चमत्कार

पहले बताया जा चुका है कि शब्द शक्ति के द्वारा विविध रोगों की चिकित्सा होती है। अब तो शब्द की सूक्ष्म तरंगों के द्वारा ऑपरेशन होते हैं, चीर-फाड़ होती है। ध्वनि की सूक्ष्म तरंगों के द्वारा अल्पसमय में हीरा काटा जाता है। शब्दों की सूक्ष्म ध्वनि से वस्त्रों की धुलाई होती है। मकान के बंद द्वार, फाटक भी आवाज से खुलते और पुन: आवाज से बंद हो जाते हैं। यह है शब्दशक्ति का चमत्कार। जप में शब्द शक्ति का ही चमत्कार है।

अश्राव्य शब्द के आघात का चमत्कार

एक क्रम, सरीखी गति से सतत किए जाने वाले सूक्ष्म, अश्राव्य शब्द के आघात का चमत्कार वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में देखा जा चुका है। इसी प्रकार प्रयोगकर्ताओं ने अनुभव करके बताया है कि एक टन भारी लोहे का गार्डर किसी छत के बीच में लटका कर उस पर सिर्फ ५ ग्राम वजन के कार्क का लगातार शब्दाघात एक क्रम व गति से कराया जाए तो कुछ ही समय के पश्चात् लोहे का गार्डर कांपने लगता है। पुलों पर से गुजरती सेना के लेफ्ट-राइट के ठीक क्रम से तालबद्ध पैर पड़ने से उत्पन्न हुई एकीभूत शक्ति के प्रहार से मजबूत से मजबूत पुल भी टूटकर मिट सकता है। इसलिए सेना को पैर मिलाकर पुल पर चलने से मना कर दिया जाता है। मंत्रजप के क्रमबद्ध उच्चारण से इसी प्रकार का तालक्रम उत्पन्न होता है। मंत्रगत शब्दों के लगातार आघात से शरीर के अंत:स्थानों में विशिष्ट प्रकार की हलचलें उत्पन्न होती हैं, जो आन्तरिक मूर्च्छना को दूर करती हैं एवं सुषुप्त आन्तरिक क्षमताओं को जागृत कर देती है।

जप के साथ योग शब्द जोड़ने के पीछे आशय

जप के साथ योग शब्द जोड़कर अध्यात्मनिष्ठों ने यह संकेत किया है कि जप उन्हीं शब्दों और मंत्रों का किया जाए, जो आध्यात्मिक विकास के प्रयोजन को सिद्ध करता हो, जिससे व्यक्ति में परमात्मा या मोक्ष रूप ध्येय की प्रति तन्मयता, एकाग्रता, तल्लीनता एवं दृढ़निष्ठा जगे, आंतरिक, सुषुप्त शक्तियां जगेता, जपयोग में मंत्रशक्ति के इसी आध्यात्मिक प्रभाव का उपयोग किया जाता है तथा आत्मा में निहित ज्ञान-दर्शन-चारित्र सुख (आनंद) आत्मबल आदि शक्तियों को अभिव्यक्त करने का पुरुषार्थ किया जाता है।

नामजप से मन को प्रशिक्षित करने हेतु चार भूमिकाएँ

नाम जप से मन को प्रशिक्षित करने हेतु मनोविज्ञान शास्त्र में चार स्तर बताए हैं, १. लर्निंग का अर्थ बार-बार स्मरण करना, दोहराना है। इस भूमिका में पुनरावृत्ति का आश्रय लिया जाता है। दूसरी परत हैं रिटेंसन अर्थात् प्रस्तुत जानकारी या कार्यप्रणाली को स्वभाव का अंग बना लेना। तीसरी भूमिका है-- रिकॉल, उसका अर्थ है – भूतकाल की उस संबंध में अच्छी बातों को पुन: स्मृतिपथ पर लाकर सजीव कर लेना, चौथी भूमिका है रिकाम्बिशन अर्थात् उसे मान्यता प्रदान कर देना, उसे

निष्ठा, आस्था एवं विश्वास में परिणत कर देना। जप साधना में इन्हीं सव प्रयोजनों को पूरा करना पड़ता है। व्यक्ति को समष्टि सत्ता से अथवा आत्मा को परमात्म-सत्ता से जोड़ने के लिए मन को वार-वार स्मरण दिलाना, उसे अपने स्वभाव में बुन लेना, उससे संवंधित आध्यात्मिक एवं मानसिक वौद्धिक लाभों को याद करके सजीव कर लेना तथा उस पर निष्ठा एवं आस्था में दृढ़ता लाना, ये ही तो जपयोग के मूल उद्देश्य हैं।

जपयोग का महत्व क्यों?

वास्तव में जपयोग अचेतन मन को जागृत करने की एक वैज्ञानिक विधि है। आत्मा के निजी गुणों के समुच्चय को प्राप्त करने के लिए परमात्मा से तादात्म्य जोड़ने का अद्भुत योग है। इससे न केवल साधक का मनोवल दृढ़ होता है, उसकी आस्था परिपक्व होती है, उसके विचारों में विवेकशीलता और समर्पण वृत्ति आती है, वुद्धि भी निर्मल एवं पवित्र वनती है। जप से मनुष्य भौतिक ऋद्धि-सिद्धियों का स्वामी वन जाता है, यह इतना महत्पूर्ण नहीं, उससे भी बढ़कर है, आध्यात्मिक समृद्धियों का स्वामी वनना। जपयोग एक ऐसा विधान है, जिससे मनुष्य प्रेरणा प्राप्त कर भव-वन्धनों से मुक्त होने की दिशा में तीव्रता से प्रयाण कर सकता है, साथ ही वह व्यक्तिगत जीवन में शांति, कषायों की उपशांति, वासनाओं से मुक्ति पाने का अधिकारी हो जाता है।

शरीर पर मैल चढ़ जाता है तो उसे धोने के लिए लोग स्नान करते हैं। इसी तरह मन पर भी वातावरण में नित्य उड़ती फिरने वाली दुष्प्रवृत्तियों की छाप पड़ती है, उस मलिनता को धोने के लिए जप ही सर्वश्रेष्ठ सुलभ एवं सरल उपाय है। नामजप से इष्ट का स्मरण, स्मरण से आह्वान, आह्वान से हृदय में स्थापना और स्थापना से उपलब्धि का क्रम चलना शास्त्रसम्मत भी है और विज्ञान-सम्मत भी अनभ्यस्त मन को जप द्वारा सही रास्ते पर लाकर उसे प्रशिक्षित एवं परमात्मा के साथ जुड़ने के लिए अभ्यस्त किया जाता है। परमात्म (शुद्ध आत्म) चेतना को जपकर्ता अपने मानस पटल पर जप द्वारा प्रतिष्ठित कर लेता है। जपयोग की प्रक्रिया से ऐसी चेतनशक्ति का प्रादुर्भाव हो जाता है, जो साधक के तन-मन-वुद्धि में विचित्र चैतन्य हलचलें पैदा कर देती है। जप के द्वारा अनवरत शब्दोच्चारण से वनी हुई लहरें (Vibrations) अनन्त अन्तरिक्ष में उठकर विशिष्ट विभूतियों, व्यक्तियों और परिस्थितियों को ही नहीं, समूचे वातावरण को प्रभावित कर देती है। सारे वातावरण में जप में उच्चरित शब्द गूँजने लगते हैं।

जपयोग से सवसे वड़ा प्रथम लाभ

जपयोग का सवसे वड़ा लाभ यह है कि इसकी प्रक्रिया दोहरी प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है– एक भीतर में, दूसरी वाहर में, जप के ध्वनि प्रवाह से शरीर में यत्र-तत्र सन्निहित अनेक चक्रों एवं उपत्यकाओं (नाड़ी संस्थानों) में एक विशिष्ट शक्ति संचार होता है। इस प्रकार के विशिष्ट शक्ति-स अनुभूति जपकर्ता अपने भीतर में करता है, जबकि प्रतिक्रिया यह होती है कि लगातार एक नियमित क्रम जाने वाले विशिष्ट मंत्र के जप से विशिष्ट प्रकार की ध निकलती है, जो समग्र अन्तरिक्ष में विशेष प्रकार क उत्पन्न करती है, वह तरंग स्पंदन प्राणिमात्र को अ वातावरण को प्रभावित करता है।

मंत्रजाप से दोहरी प्रतिक्रिया : विकार निवारण, प्रतिर

प्रत्येक चिकित्सक दो दिशाओं में रोगी पर चिकि करता है। एक ओर वह रोग के कीटाणुओं को हटाने देता है, तो दूसरी ओर रोग को रोकने हेतु प्रतिरोधात्म वढ़ाने की दवा देता है। क्योंकि जिस रोगी में प्रति शक्ति बढ़ाने की दवा देता है। क्योंकि जिस रोगी में प्रति शक्ति कम होती है, उसे दी जाने वाली दवाइयां लाभदायक नहीं होती। जिस शरीर में रोगों से लड़ने व होती है, वही दवाइयां ठीक काम करती हैं। इसीलिए ड चिकित्सक इन दोनों प्रक्रियाओं को साथ-साथ चलाता प्रकार मंत्रजप से भी दोहरी प्रतिक्रिया होती है– १. विकार मिटते हैं, २. आन्तरिक क्रोधादि रोगों से ल प्रतिरोधात्मक शक्ति विकसित होती है। मंत्र जाप से ऊ प्रबल हो जाती है, फलत: वाहर के आघात-प्रत्या समभावपूर्वक झेलने और ठेलने की प्रतिरोधात्मक श जाती है। मन पर काम, क्रोध, लोभ तथा राग-द्वेषादि वि प्रभाव प्राय: नहीं होता। मंत्रजाप से इस प्रकार की प्रति शक्ति के अभिवर्धन के लिए तथा मन को इस दिशा में करने के लिए शास्त्रीय शब्दों में संयम और तप से अ भावित करने के लिए मंत्रजाप के साथ तदनुरूप भ अनुप्रेक्षा का प्रयोग करना चाहिये। ऐसा होने पर वह वज्रपंजर या सुदृढ़ कवच होता जाता है, जिससे मंत्र ज पर वाहर के आघातों का कोई असर नहीं होता और न क्रोधादि विकार उसके मन को प्रभावित कर सकते

जपयोग में शब्दों के अनवरत पुनरावर्तन का लाभ

वार-वार रगड़ से गर्मी अथवा विजली पैदा होने के वार-वार संघर्षण से विजली (हाइड्रो इलैक्ट्रिक) पैद सिद्धांत से भौतिक विज्ञानवेत्ता भली भंति परिचित हैं। में अमुक मंत्र या शब्दों का वार-वार अनवरत उच्चा प्रकार का घर्षण पैदा करता है। जप से गतिशील होने व घर्षण प्रक्रिया से साधक अन्तर में निहित दिव्य शक्ति उत्तेजित और जागृत होते हैं, तथा आन्तरविद्युत (तेजस अथवा ऊर्जाशक्ति की वृद्धि होती है। श्वास के साथ भीतर शब्दों के आवागमन से तथा रक्ताभिसरण से गर्म

होती है, जो जपकर्ता के सूक्ष्म (तैजस्) शरीर को तेजस्वी, वर्चस्वी एवं ओजस्वी तथा आध्यात्मिक साधना के लिए कार्यक्षम बनाती है। साधक के जीवन की त्रियोग-प्रवृत्तियाँ उसी ऊर्जा (तैजस्) शक्ति के सहारे चलती है।

जपनीय शब्दों की पुनरावृत्ति के अभ्यास का चमत्कार

मनुष्य की मानसिक संरचना ऐसी है, जिसमे कोई भी बात गहराई तक जमाने के लिए उसकी लगातार पुनरावृत्ति का अभ्यास करना होता है। पुनरावृत्ति से मष्तिष्क एक विशेष ढ़ाँचे में ढ़लता जाता है। जिस क्रिया को बार-बार किया जाता है, वह आदत में शुमार हो जाती है। जो विषय बार-बार पढ़ा, सुना, बोला, लिखा या समझा जाता है, वह मस्तिष्क में अपना एक विशिष्ट स्थान जमा लेता है। किसी भी बात को गहराई से जमाने के लिए उसकी पुनरावृत्ति करना आवश्यक होता है।

एक ही रास्ते पर बार-बार पशुओं व मनुष्यों के चलने से पगडंडियां बनती हैं। इसी प्रकार मंत्र जप के द्वारा नियमित रूप से अनवरत मंत्रगत शब्दों की आवृत्ति करने से जपकर्ता के अन्तरंग में वह स्थान जमा लेता है। उस लगातार जप का ऐसा गहरा प्रभाव व्यक्ति के अन्तर पर पड़ जाता है कि उसकी स्मृति लक्ष्य से संबधित अपनी जगह मजबूती से पकड़ लेती है। चेतन मन में तो उसका स्मरण पक्का रहता ही है, अचेतन मन में भी उसका एक सुनिश्चित स्थान बन जाता है। फलत: बिना ही प्रयास के प्राय: निद्रा और स्वप्न में भी जप चलने लगता है। यह है जपयोग से पहला महत्वपूर्ण लाभ।

जपयोग से दूसरा लाभ : शब्द तरंगों का करिश्मा

जपयोग से दूसरा लाभ है – अन्तरिक्ष में प्रवाहित होने वाले दिव्य चैतन्य प्रवाह से अभीष्ट परिमाण में शक्ति खींचकर उससे लाभ उठाना। जैन दृष्टि से भी देखा जाए तो मंत्र के अधिष्ठायक देवी-देव जपकर्ता साधक को अभीष्ट लाभ पहुंचाते हैं। इसका अर्थ है– मंत्रजाप से उत्पन्न होने वाली सूक्ष्म तरंगें विश्वब्रह्मण्ड (चौदह रज्जूप्रमाण लोक) में प्रवाहित ऊर्जाप्रवाह को खींच लाती है। जिस प्रकार किसी सरोवर में ढेला फेंकने पर उसमें से लहरें उठती हैं और वे वहीं समाप्त न होकर धीरे-धीरे उस सरोवर के अन्तिम छोर तक जा पहुँचती हैं, उसी प्रकार मंत्रगत शब्दों के अनवरत जाप (पुनरावर्तन) से चुम्बकीय विचारतरंगे पैदा होती हैं, जो विश्व-ब्राह्मण्ड रूपी सरोवर का अंतिम छोर विश्व के गोलाकार होने के कारण, वही स्थान होता है, जहां से मंत्रगत ध्वनि तरंगों का संचरण प्रारंभ हुआ था। इस तरह मंत्रजप द्वारा पुनरावर्तन होने से पैदा होने वाली वाली ऊर्जा-तरंगे धीरे-धीरे बहती व बढ़ती चली जाती हैं और अन्त में एक पूरी परिक्रमा करके अपने मूल उद्गम स्थान जपकर्ता के पास लौट आती है।

किसका जप किया जाए?

अब प्रश्न होता हे कि जपयोग का साधक जप किसका करें? वैसे तो जप करने के लिए कई श्रेष्ठ मंत्र है, कई पद हैं, कई श्लोक और गाथाएं हैं। जैन धर्म में सर्वश्रेष्ठ महामंत्र पंचपरमेष्ठी नमस्कार मंत्र है। वैदिक धर्म में गायत्री मंत्र को सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। यह बात मंत्र का चयन करते समय अवश्य ध्यान में रखनी चाहिये।

मंत्रों में अर्थ का नहीं, ध्वनि विज्ञान का महत्व है

मंत्रों में उनके अर्थ का उतना महत्व नहीं होता, जितना कि ध्वनिविज्ञान का। अर्थ की दृष्टि से नवकार महामंत्र या गायत्री मंत्र सामान्य लगेगा, परन्तु सामर्थ्य की दृष्टि से अद्‌भुत और सर्वोपरि हैं ये, इसका कारण यह है कि मंत्र स्रष्टा वीतराग की दृष्टि में अर्थ का इतना महत्व नहीं रहा, जितना शब्दों का गुंथन महत्वपूर्ण रहा है। कितने ही बीजमंत्र ऐसे हैं, जिनका कोई विशिष्ट अर्थ नहीं निकलता, परन्तु वे सामर्थ्य की दृष्टि से विलक्षण है। "ह्री" "श्री" "क्ली" ब्लूँ,ऐं, हूं यं, फट् इत्यादि बीज मंत्रों का अर्थ समझने की माथापच्ची करने पर भी सफलता नहीं मिलती, क्योंकि उनका मंत्र के साथ सृजन यह बात ध्यान में रखकर किया गया है कि उनका उच्चारण किस स्तर का तथा कितनी सामर्थ्य का शक्तिकम्पन उत्पन्न करता है, एवं जपकर्ता, अभीष्ट प्रयोजन और समीपवर्ती वातावरण पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है?

जपकर्ता की योग्यता, जपविधि और सावधानी

बीजमंत्रों का तथा अन्य मंत्रों का जाप करने से पूर्व इन तथ्यों पर अवश्य ही ध्यान देना चाहिये। दूसरी बात यह है कि जप द्वारा किसी मंत्र को सिद्ध करने के लिए उसकी मंत्रस्रष्टा द्वारा बताई गई विधि पर पूरा ध्यान देना चाहिये। कई विशिष्ट मंत्रों की जप साधना करने के साथ मंत्रजपकर्ता की योग्यता का भी उल्लेख किया गया है कि मंत्रजपकर्ता भूमिशयन करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सत्यभाषण करे, असत्य व्यवहार न करे, मंत्रजाप के दौरान किसी से वाद-विवाद कलह, झगड़ा न करे, कषाय उपशान्त रखे, मंत्र के प्रति पूर्ण श्रद्धा-निष्ठा रखे, आदर के साथ निरन्तर नियमित रूप से जाप करे। एक बात जप करने वाले व्यक्ति को यह भी ध्यान में रखनी है कि जप करने का स्थान पवित्र, शुद्ध एवं स्वच्छ हो, वहां किसी प्रकार की गन्दगी न हो, जीवजन्तु कीड़े-मकोड़े मक्खी-मच्छर आदि का उपद्रव या कोलाहल न हो, जपस्थल के एकदम निकट या एकदम ऊपर शौचालय (लेट्रीन) या मूत्रालय न हो, हड्डी या चमड़े की कोई चीज वहाँ न रखी जाए। जप करने वाला व्यक्ति मद्य, मांस, व्यभिचार, हत्या, दंभ मारपीट, आगजनी, जूआ, चोरी आदि से विल्कुल दूर रहे तथा जप करने का स्थान, व्यक्ति, दिशा (पूर्व या उत्तर), माला समय, आसन, वस्त्र आदि जो निर्धारित किये हों वे ही मंत्र की सिद्दि तक रखे जाएं।

जप के साथ लक्ष्य के प्रति तन्मयता, भावना एंव तीव्रता हो

कई भक्तिपरायण व्यक्ति अपने इष्टदेव पंचपरमेष्ठी वीतराग जीवनमुक्त अरिहंत या निरंजन निराकार सिद्ध परमात्मा के जप को ही अभीष्ट मानते हैं। इष्ट देव का जाप करने से उनका सान्निध्य और सामीप्य प्राप्त होता है। ऐसे दिव्यात्मा भी कभी-कभी प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं और कार्यसिद्धि में सहायक होते हैं। परमात्मा या परमात्मपद की प्राप्ति ही मुमुक्षु साधक के जीवन का लक्ष्य होना चाहिये। ऐसे मुमुक्षु जपकर्ता को एकमात्र निरंजन निराकार परमात्मा के प्रति पूर्णश्रद्धा रखकर जप प्रारंभ करने से पूर्व उन्हें विधिपूर्वक वंदना-नमस्कार करना चाहिये। उस जपकर्ता, पुण्यात्मा में परमात्मा के प्रति तीव्र तन्मयता, तल्लीनता, एकाग्रता एवं पिपासा होनी चाहिये, ऐसे शुद्ध आत्मा से मिलन या तादात्म्य पिपासा जितनी तीव्र होगी, उसी अनुपात में मिलन की संभावना निकट आएगी। जाप जप या नामस्मरण जितनी समर्पणवृत्ति शरणागति एवं भक्ति, प्रीति के साथ किया जाएगा, उतनी ही शीघ्र सफलता मिलनी संभव है। इसीलिए भक्तिवाद के आचार्य ने कहा– ''जपात् सिद्धि: जपात् सिद्धि: जपात् सिद्धिर्न संशय:'' जप से सिद्धि होती है, जप से सिद्धि होती है, जप से अवश्य ही सिद्धि होती है, इसमें कोइ संशय नहीं है। अत: जपकर्ता में जप के फल के प्रति आशंका या संशय नहीं होना चाहिये।

जप का अन्तस्तल एवं महात्म्य

जप का महात्म्य बताते हुए कवि ने कहा है–

स्थिर मन से सारे जाप करो,
भव-भव का संचित ताप हरो।।ध्रुव।।
यह जाप शांति का दाता है, दुविधा को दूर भगाता है।
मानस का सब सन्ताप हरो।।स्थिर।।१ ।।
जप से सब काम सुधरते हैं, दिल में शुभ भाव उभरते हैं।
चेतन से सदा मिलाप करो।।स्थिर।।२ ।।
जब जप का दीपक जलता है, तब अन्तर का सुख फलता है।
करणी से अपने आप तरो।।स्थिर।।३ ।।
गर अन्तर का मन चंगा है, यह जाप पावनी गंगा है।
तरंगों से ''सुमेरू'' नाप करो।।स्थिर।।४।।

कवि ने जप का अन्त:स्तल खोल कर रख दिया है। जप के समय किसी प्रकार की दुविधा, दुश्चिन्ता, अशांति, बेचैनी, स्पृहा, फलाकांक्षा, लौकिक वांछा, ईर्ष्या, द्वेषभावना आदि नहीं हो तो जप शांति, शुभ भावनाओं, समर्पण वृत्ति, दृढ़श्रद्धा एवं सर्वतापहारी, मानस में तन्मयता, एकाग्रता और आराध्य के प्रति तल्लीनता लाने वाला है। जप से सम्यग्ज्ञान-दर्शन आत्मिक आनंद और आत्मशक्ति पर आए आवरण दूर होकर इनका जागरण हो जाता है। गंगा की तरंगों के समान जप से उद्भुत तरंगे दूर-दूर तक फैलकर वातावरण को शुद्ध बनाती है।

अजपाजप-स्वरूप और प्रक्रिया

प्राणायाम की ही एक विधा, जो विशुद्ध आध्यात्मिक है, जिसे अजपाजप ''सोऽहं साधना या'' हंसयोग कहा जाता है। विपश्यना ध्यान एवं प्रेक्षा ध्यान के साथ जप काफी सुसंगत है। किन्तु प्रेक्षा ध्यान एवं विपश्यना ध्यान में और इसमें थोड़ा सा अन्तर है। प्रेक्षा ध्यान या विपश्यना ध्यान में प्रारंभ में केवल श्वास के आवागमन को देखते रहने का अभ्यास है, परन्तु अजपाजप में पहले स्थिर शरीर और शांत चित्त होकर श्वास के आवागमन की क्रिया प्रारंभ की जाती है। सांस लेते समय ''सो'' और छोड़ते समय ''हम'' की ध्वनिश्रवण पर चित्त को एकाग्र किया जाता है।

इस अनायास जप साधना में ध्यान योग भी जुड़ा है। इसमें श्वास के आवागमन पर सतर्क होकर ध्यान रखना और चित्त को एकाग्र करना पड़ता है। इतना न बन पड़े तो वायु के भीतर प्रवेश के साथ ''सो'' और निकलने के साथ ''हम'' के श्रवण का तालमेल ही नहीं बैठता। इसलिए प्रत्येक श्वास की गतिविधि पर ध्यान रखना पड़ता है। इतना ध्यान जम जाए, तभी ध्वनिश्रवण का अगला कदम उठता है।

सोऽहं मंत्र का अर्थ और रहस्य

'सोऽहम्' मंत्र वेदान्त का है, परन्तु जैनधर्म के आध्यात्मिक आचार प्रधान आगम-आचारांग-सूत्र के प्रथम अध्ययन के प्रथम उद्देशक में आत्मा के अस्तित्व सूचक सूत्र में ''सोहं'' शब्द प्रयुक्त किया है। वह भी आत्मा का परमात्मा के साथ आत्मगुणों में आत्म स्वरूप में एकत्व का सूचक है। वेसे भी सोऽहं में ''सो'' का अर्थ वह और ''अहम्'' का अर्थ मैं है। यानी वह परमात्मा मैं (शुद्ध आत्मा) हूँ। तात्पर्य है मैं परमात्मा के गुणें के समकक्ष हूँ। जितने मूल गुण परमात्मा में हैं, वे ही मेरी शुद्ध आत्मा में है। वेदान्त तत्वज्ञान का मूलभूत आधार है, उसी प्रकार ''अप्पा सो परमप्पा'' इस जैनतत्वज्ञान के निश्चयदृष्टिपरक तत्वज्ञान का आधार है। तत्त्वमसि, शिवोऽहं, ''य: परमात्मा स एवाऽहम्'', सोऽहम्, सच्चिदानन्दोऽहम्, अयमात्मा ब्रह्म आदि सूत्रों में आत्मा और परमात्मा में समानता है। ''पंचदशी'' आदि ग्रन्थों में इसी अनुभूति का दर्शन एवं प्रयोग विस्तृत रूप से बताया गया है। वस्तुत: अद्वैतसाधना, अथवा आत्मोपम्य साधना अथवा ''एगे आया'' की साधना का अभ्यास भी इसी प्रयोग के साथ संगत हो जाता है।

गायत्री साधना की उच्च स्तरीय भूमिका में प्रवेश करते समय साधक को सोऽहम् जप की साधना का अभ्यास करना आवश्यक होता है। अन्य जपों में तो प्रयत्नपूर्वक अभ्यास करना

होता है, जबकि सोऽहम् का अजपाजप बिना किसी प्रयत्न के अनायास हो जाता है। इसीलिए इसे बिना जप किये जप – "अजपाजप" कहा जाता है। इसे योग की भाषा में अनाहत नाद भी कहते हैं।

सोऽहम् जप में आत्मबोध एवं तत्वबोध दोनों है

सोऽहम् जप-साधना में आत्मबोध और तत्वबोध दोनों का सम्मिश्रण है। मैं कौन हूँ, इस प्रश्न के उत्तर में कहा गया है स: = वह परमात्मा अहम् = मैं हूँ। इसे ब्रह्मदर्शन में आत्मदर्शन भी कह सकते हैं, यह आत्मा, परमात्मा की एकता-अद्वैत का ब्रह्मज्ञान है।

इस ब्रह्मज्ञान के उदित हो जाने पर आत्मज्ञान, सम्यग्ज्ञान, तत्वज्ञान, व्यवहार्य-सद्ज्ञान आदि सभी की शाखा-प्रशाखाएँ फूटने लगती हैं। इसलिए "सोऽ "हं" जप को अतीव उच्चकोटि का जपयोग माना गया है। जैनदृष्टि से जाप एक प्रकार का पदस्थ ध्यान का रूप है। जाप के इन सब रूपों के लाभ, महत्व स्वरूप तथा प्रक्रिया एवं विधि-विधान को समझकर जपयोग-साधना करने से व्यक्ति परम लक्ष्य–मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।

■
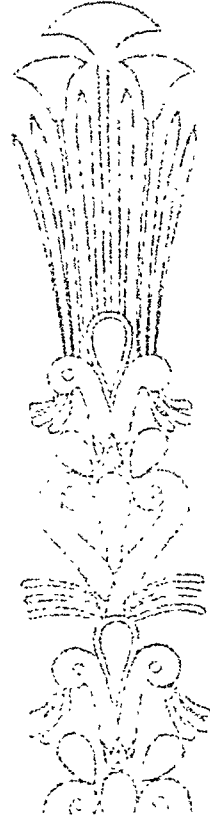
डॉ० छगनलाल शास्त्री, एम० ए० (त्रय) पी-एच०डी०
पूर्व प्रोफेसर मद्रास युनिवर्सिटी चेन्नई तथा प्राकृत रिसर्च इन्स्टीच्यूट वैशाली

यशस्तिलकचम्पू में ध्यान का विश्लेषण

सोमदेव सूरि ने यशस्तिलक चम्पू के आठवें आश्वास में ध्यान का विश्लेषण किया है। सोमदेव का संस्कृत साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है, उनका यशस्तिलक चम्पू वाणभट्ट की कादम्वरी की शैली पर लिखा गया एक महाकाव्य है, जो गद्य पद्य मिश्रित है।[१] इसकी रचना उन्होंने ईसवी सन् ९५९ में की। इसमें पहले से पाँचवें आश्वास तक उज्जयिनी के राजा यशोधर की जन्म जन्मान्तर के उपाख्यानों से पूर्ण कथा है। छठे से आठवें आश्वास में उन्होंने आचार्य सुदत्त के मुंह से कथा के एक प्रमुख पात्र राजा मारिदत्त को संवांधित कर जैन धर्म के सिद्धांत एवं साधना-पक्ष का निरूपण किया है।

उपासकाध्ययन

इन तीनों आश्वासों का नाम उन्होंने उपासकाध्ययन रखा है। उपासक के लिए साधना के अन्यान्य अंगों की तरह उन्होंने ध्यान को भी आवश्यक माना है। आठवें आश्वास के अन्तर्गत उन्होंने उनचालीसवें कल्प में ध्यानविधि, ध्याता एवं ध्येय का स्वरूप, ध्यान की दुर्लभता, ध्यान का काल और पातंजल योग आदि द्वारा अभिमत ध्यान प्रभृति योगांगों का समीक्षण उत्तम धर्म ध्यानी के पावन चरित्र इत्यादि विपयों का विश्लेपणात्मक विवेचन किया है।

ध्यान विधि

आचार्य सोमदेव ध्यान की विधि का निरूपण करते हुए लिखते हैं :-

''जो साधक परम ज्योति का ध्यान करना चाहता है, उसका शाश्वत स्थान अधिगत करना चाहता है, उसे चाहिये कि वह सावधानी से इस ध्यान विधि का अभ्यास करे, जिसका वर्णन किया जा रहा है।

साधक तत्व चिन्तन के अमृत सागर में अपना मन दृढ़तापूर्वक मग्न कर, बाहरी विषयों की व्याप्ति में उसे जड़ बनाकर अर्थात् जिस प्रकार किसी जड़ या निर्जीव वस्तु पर भौतिक भोग्य विषय कोई प्रभाव नहीं कर पाते, अपने को वैसी स्थिति में ढालकर दो आसन खड्गासन या वज्रासन में स्थित हो।

ध्यान रूपी अमृत का आस्वाद लेते हुए साधक उच्छवास और नि:श्वास को सूक्ष्म बना सब अंगों में प्राण वायु के हलन-चलन मूलक संचार का निरोध कर ग्रीवोत्कीर्ण उत्कीर्ण पाषाण की मूर्ति-सा बन ध्यान में स्थिर रहे।

जब ध्यानी साधक चक्षु, घ्राण, नेत्र, वाक् तथा स्पर्श इन पांच इन्द्रियों को आत्मोन्मुख बना लेता है, बाह्य विषयों से विरत हो जाता है, जब उसका चित्त आत्म-स्वरूप के चिन्तन में निमग्न हो जाता है, तब अन्तर्ज्योति आत्मज्योति उसमें प्रकाशित हो जाती है।''[२]

ध्यान की परिभाषा

ध्यान की परिभाषा करते हुए वे आगे लिखते हैं–''चित्त की एकाग्रता चित्त को एकमात्र ध्येय में व्याप्त करना ध्यान है। ध्यान का फल आन्तरिक उज्ज्वलता, निर्मलता एवं ऋद्धिमत्ता भोगने में अनुभूत करने में समर्थ आत्मा ध्याता है। आत्मा और आगम-ज्योति और श्रुत ध्येय है तथा देह-यातना, दैहिक संयम-इन्द्रिय समूह का नियन्त्रण ध्यान की विधि है ध्यान में विहित है, करणीय है।[३]

विघ्नों मे अविचलता :

श्रेयांसि बहुविघ्नानि श्रेयस्कर कार्यो मे तो अनेक विघ्न आते ही हैं। फिर साधना में तो विघ्न ही विघ्न हैं, क्योकि लोकमुखी प्रवाह से वह भिन्न है, आत्मजनीन है। आचार्य साधक को विघ्नों से न घवराने की प्रेरणा देते हुए लिखते हैं

''ध्यान साधक तैरश्च पशु-पक्षिकृत आमर देवकृत मार्त्य मनुष्यकृत, नाभस, आकाश से उत्पन्न वज्रपात आदि, भौम-भूमि से उत्पन्न भूकम्प आदि तथा अंगज अपने शरीर के अंगों से उत्पन्न पीड़ा, रोग आदि विघ्नों को दृढ़ता से सहन करे तथा वह अनुकूलता एवं प्रतिकूलता को लांघ जाय अर्थात् उनमें कोई भेद न समझे राग और द्वेप के भाव से ऊँचा उठ जाय।।[४]

इसे और स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं –

"विघ्नों के समय उन्हें सहने में असमर्थता दिखलाने से वे मिटते नहीं, और न दीनता दिखाने से मौत से ही बचा जा सकता है, इसलिए साधक उपसर्गों तथा विघ्नों के आने पर मन में जरा भी क्लेश न मानता हुआ, 'परब्रह्म परमात्मा का चिन्तन करें।[५]

ध्यान हेतु समुचित स्थान :

ध्यान के लिए स्थान आदि का निर्देश करते हुए आचार्य सोमदेव लिखते हैं–

"साधक आत्म-साक्षात्कार हेतु ध्यान के लिए ऐसे स्थान को स्वीकार करे, जहाँ उसकी इन्द्रियाँ व्यासङ्ग विशेष आसक्ति रूप चोर का विघ्न न पायें। अर्थात् ध्यान के लिए ऐसे स्थान का चुनाव किया जाना चाहिये, जहाँ ऐसे व्यक्ति और ऐसे पदार्थ न हों, जो मन में आसङ्ग आसक्ति, मोह उत्पन्न करें।"[६]

साधना के लिए शरीर की उपयोगिता मानते हुए वे लिखते है :

"यद्यपि इस शरीर के जन्म का कोई महत्व नहीं है, पर यह तप, साधना आदि के द्वारा संसार समुद्र को पार करने के लिए तुम्बिका की तरह सहायक है, इसलिए साधना में इसकी उपयोगिता मानते हुए इसकी रक्षा करनी चाहिये।"[७]

आचार्य केवल यौगिक विधि विधान की बाह्य प्रक्रिया मात्र को महत्व नहीं देते। वे लिखते हैं :–

"धैर्यहीन या कायर पुरुष के लिए जैसे कवच धारण करना वृथा है, धान्य रहित खेत की बाड़ करना निष्प्रयोज्य है, उसी प्रकार ध्यान शून्य ध्यान में जरा भी प्रवृत्त न होने वाले पुरुष के लिए तत्संबंधी विधि विधान व्यर्थ है।"[८]

सबीज निर्बीज ध्यान :

सबीज और निर्बीज ध्यान के विवेचन के सन्दर्भ में वे लिखते हैं :

"जैसे दीपक वायु रहित स्थान मे निश्चलता पूर्वक प्रकाशमान रहता है, वैसे ही साधक का मन जब वाह्य और आभ्यन्तरिक अज्ञान रूपी वायु से अचंचल रहता हुआ तत्वों के आलोकन-मनन में उल्लसित रहता है, तब उसका ध्यान सबीज (पृथकत्व वितर्क सविचार) ध्यान कहा जाता है।

सब साधक के चित्तरूपी निर्झर की प्रवृत्तियाँ – व्यापार निर्विचार – संक्रमण रहित (द्रव्य से पर्याय और पर्याय से द्रव्य आदि के परिशीलन रूप संक्रमण से शून्य) होती है, आत्मा अपने विशुद्ध स्वरूप में ही स्फुरित-आनन्दित रहती है, उसका वह ध्यान निर्बीज (एकत्व वितर्क अविचार) कहा जाता है।

चित्त अनन्त सामर्थ्यशील है, पारद के समान चंचल है। जैसे पारद अग्नि में मूर्च्छित, मारित एवं शुद्ध होकर सिद्ध हो जाता है, उसी प्रकार चित्त अध्यात्म तेज या अध्यात्म ज्ञान में प्रज्वलित होकर स्थिर एवं शुद्ध हो जाता है। जैसे उस सिद्ध किये हुए पारद से रसायन के क्षेत्र में क्या साधित नहीं होता अर्थात् उसमें अद्‌भुत वैशिष्ट्य आ जाता है, उसी प्रकार जिस योगी का ज्ञान सिद्ध और स्थिर हो गया, उसके लिए तीनों जगत् में क्या हुआ अर्थात् सब कुछ सध गया।

यदि यह मन रूपी हंस सर्वथा निर्मनस्क मनोव्यापार रहित हो जाय, चंचलता शून्य बन जाय, आत्म-स्वरूप में सर्वथा स्थिर हो जाय, तो वह सर्वदर्शी बोधरूपी हंस में परिवर्तित हो जाता है। सकल जगत रूपी मानसरोवर उसका अधिष्ठान बन जाता है।

साधक मानसिक दृष्टि से आत्मा आदि ध्येय वस्तु में, चैतसिक एकाग्रता साधने के रूप में क्रियाशील रहता है, हेय उपादेय आदि भावों को यथावत् जान लेता है और किसी भी तरह विभ्रान्त नहीं होता– तत्व एवं अतत्व में समान बुद्धि नहीं लाता।"[९]

ध्यान का महात्म्य :

आचार्य ध्यान का महात्म्य वर्णित करते हुए लिखते हैं –

"यद्यपि भूमि में रत्न उत्पन्न होते हैं, किन्तु सर्वत्र नहीं होते, उसी प्रकार ध्यान यद्यपि आत्मा में उद्‌भूत होता है, पर सभी आत्माओं में उत्पन्न नहीं होता।

मुनिवृन्द ध्यान (शुक्ल ध्यान) का उत्कृष्टसमय अन्तमुर्हूत बतलाते हैं, निश्चय ही इससे अधिक मन का स्थिर रहना दुर्धर है, जिस प्रकार वज्र क्षणभर में विशाल पर्वत को छिन्न-भिन्न कर डालता है, उसी प्रकार ध्यान आत्मा के मूल गुणों का घात करने वाले कर्म समूह को विदीर्ण कर डालता है।

समुद्र के पानी को यदि कोई सैंकड़ों कल्पों युगान्तरों तक भी चुल्लुओं से उलीचता जाय तो भी समुद्र खाली नहीं होता, परन्तु प्रलयकाल का प्रचण्ड वायु उसे अनेक बार अविलम्ब खाली करने की क्षमता लिए रहता है, उसी प्रकार आत्मा में मुहूर्त भर के लिए अद्‌भुत धर्मध्यान घातिकर्म समूह को अविलम्ब ध्वस्त कर डालता है। जैसे रूप में, मरुत-प्राणवायु (परकाय प्रवेश आदि) में, बाह्य वस्तुओं में मन को स्थिर करने से व्यक्ति अपना अभीप्सित पा लेता है, वैसे ही आत्मा द्वारा परमात्मा में चित्त को स्थिर करने से परमात्मपद प्राप्त हो जाता है।"[१०]

योग के सहायक हेतु

वे योग के सहायक हेतुओं का निम्नांकित रूप में वर्णन करते हैं -

"वैराग्य-आगत, अनागत, ऐन्द्रियिक भोगों में तृष्णा का अभाव, ज्ञान संपदा–वन्ध से छूटने एवं मोक्ष प्राप्त करने के उपाय, साधना-क्रम आदि का ज्ञान, असंग-आत्म-व्यतिरिक्त अनात्म-तत्व वाह्य पदार्थो में आसक्ति का अभाव, चित्त की स्थिरता तथा भूख प्यास आदि दैहिक, शोक, चिन्ता आदि मासिक दु:खों एवं अहंकार विजय– ये योग साधना में–ध्यान के सधने में कारण हैं।"[११]

वाधक हेतु

योग के वाधक कारणों का उन्होंने इस प्रकार निरूपण किया है –

"आधि-मासिक पीड़ा, कुत्सित मनोवृत्ति, व्याधि–शारीरिक रुग्णता विपर्यास-अयथार्थ में यथार्थ का आग्रह, प्रमाद– तत्व ज्ञान की प्राप्ति एवं सदनुष्ठान में अनुत्साह आलस्य–प्राप्त तत्त्व या ज्ञान तथ्य का अनुष्ठान करने में शिथिलता, विभ्रम, भ्रान्ति तत्व, अतत्व में समान बुद्धि अलाभ आत्म-अनात्ममूलक सद्वोध मन न होने से अभ्यास का फल प्राप्त न होना, संगिता तत्व ज्ञान होने के वावजूद भौतिक सुख के साधनों में प्रसन्नता दु:ख के साधनों में मन का स्थिर न हो पाना, अशान्त रहना ये योग में अन्तराय या विघ्न करने वाले हेतु हैं।[१२]

अन्तरायों से अनाहत, अव्याहत योगी को कर्तव्य निर्देश करते हुए आचार्य लिखते हैं :

"चाहे कोई योगी के शरीर में कांटे चुभोए, कोई उसकी देह पर चन्दन का लेप करे, दोनों स्थितियों में योगी रुष्ट और तुष्ट न होता हुआ पाषाण की तरह स्थिर भाव से ध्यान में लीन रहे।"[१३]

इतर यौगिक उपक्रमों का निरसन

आचार्य सोमदेव ध्यान का उक्त रूप में विश्लेषण करने के वाद अन्य यौगिक परम्पराओं का निरसन करते हुए लिखते हैं:

"ज्योति–ओंकार की आकृति का ध्यान, विधिपूर्वक ओंकार का जप, विन्दु – अंगुलियों का स्वीकृत योग विधि के अनुरूप विभिन्न अंगों में, अंगुष्ठ का कानों में, तर्जनी का नेत्र-प्रान्त में, मध्यमा का नासापुट में अनामिका का ऊपरी ओष्ठ में प्रान्त भाग में तथा कनिष्ठिका का नीचे के ओष्ठ प्रदेश में, स्थापन कर, अन्तर्दृष्टि से अवलोकन द्वारा पीत, श्वेत, अरुण श्याम आदि विविध वर्णो के विन्दु का दर्शन[१४] कला अर्द्धचन्द्राकृति पर मन का निरोध, नाद– अनाहत नाद आदि की अनुभूति कुंडली-कुंडलिनी का जागरण वायु-संचार, कुंभक पूरक, रेचक द्वारा प्राणायाम का अभ्यास, मुद्रा–हाथ व पैर तथा अन्याय अंगों का स्वीकृत योग-साधना के अनुरूप विभिन्न स्थितियों में अवस्थापन, मंडल–त्रिकोण, चतुष्कोण एवं वृत्ताकार आदि मंडल को उद्दिष्ट कर त्राटक-मूलक ध्यान निर्बीज कारण।

मरणकाल में वासना क्षय हेतु क्रिया विशेष, नाभि, नेत्र, ललाट, ब्रह्म, ग्रन्थि, आंत्रसमूह, तालू, आग्नेय तत्वमयी नासिका, रवि–दाहिनी, नाड़ी, चन्द्र–बाई नाड़ी, लूता तन्तु –मकड़ी का जाला, ज्ञाननेन्द्रिय तथा हृदयांकुर के आधार पर प्राणायाम विधि से विशेष प्रकार का अभ्यास, अन्तकाल में निर्बीजीकरण द्वारा मृत्य विजय एवं मोक्ष प्राप्ति का उपक्रम आश्चर्य है, योग के वास्तविक स्वरूप से अनभिज्ञ जनों के ये उपक्रम अपने तथा औरों के लिए वंचना के ही हेतु हैं।

यदि इन आचरणों–उपायों से कर्मों का क्षय हो जाय, तो इसके लिए तप, जप, आप्त-पूजा, दान एवं अध्ययन आदि की फिर आवश्यकता ही क्या रहे, फिर वे व्यर्थ ही हों।"[१५]

वे आगे लिखते हैं–

"बड़ा आश्चर्य है, जो अविचारशीलता के कारण रम्य प्रतीत होने वाले, क्षणभर के लिए देह की वेदना शान्त करने वाले ऐन्द्रियिक योगों के वशीभूत है, वह भी योगी कहा जाता है।

इन्द्रियों के भोगों की तृष्णा जिसके मन को जर्जर बनाती रहती है– सताती रहती है, वह विषयेप्सा वासना के निरोध से उत्पन्न होने वाले यौगिक तेज की कैसे इच्छा कर सकता है?

आत्मज्ञ कहा जाने वाला तथाकथित योगी, चिरकाल तक शारीरिक क्लेशमूलक योगकर्म प्राणायाम आदि के अभ्यास द्वारा यदि संचित कर्म क्षीण करने हेतु उद्यत रहता है तो उसे रोगी जैसा समझना चाहिये अर्थात् रोगी भी तो लंघन आदि द्वारा वात, पित्त, कफ की विषमता में उत्पन्न रोगों को नष्ट करने का प्रयत्न करता ही है।"[१६]

योग-साधना के साथ वांछित जीवन-वृत्ति

साधना के साथ अपेक्षित जीवन-वृत्ति पर प्रकाश डालते हुए वे लिखते हैं :

"शुद्ध ध्यान में जिसकी वुद्धि संलग्न होती है, उसे लाभ में, हानि में, वन में, घर में, मित्र में, शत्रु में, प्रिय में, अप्रिय में तथा सुख एवं दु:ख में एक सरीखा होना चाहिये।

उसे चाहिये कि वह सदा परव्रह्म परमात्मा की ओर दृष्टि रक्खे, श्रुत का अनुशीलन करे, धृति, मैत्री तथा दया का परिपालन करे।

सत्य-भाषण करे, वाणी पर नियंत्रण रक्खे।"[१७]

आचार्य सोमदेव ने अपने इस ग्रन्थ में ध्यान का जो विवेचन

किया है, वह जैन-परंपरा में चले आए एतत्संबंधी विचार-क्रम के अनुरूप है। ध्यान के सहयोगी हेतु, बाधक हेतु, साधक का आचार व्यवहार, वृत्ति संयोजना आदि पर उन्होंने सुन्दर प्रकाश डाला है, जो उनकी लेखनी का कौशल है।

आचार्य सोमदेव का वैशिष्ट्य

आचार्य सोमदेव निश्चय ही एक बहुत बड़े शब्द-शिल्पी थे। अपनी कृति 'यशस्तिलकचम्पू' में उन्होंने जो सरस, सुन्दर, लालित्यपूर्ण संस्कृत में अपना वर्ण्य विषय प्रस्तुत किया है, वह नि:सन्देह प्रशस्य है। उन्होंने शब्द संयोजना, भाव-सन्निवेशना एवं अभिव्यंजना का बहुत ही सुन्दर संगम अपनी इस रचना में चरितार्थ किया है।

आचार्य सोमदेव ने अपने महाकाव्य के काव्यात्मक, साहित्यिक संदर्भों में प्रतिभा नैपुण्य द्वारा बहुत ही सुन्दर अभिव्यक्ति दी है। योग जैसे आध्यात्मिक साधनामूलक तात्विक विषय पर भी उनकी लेखनी का चमत्कार दृष्टिगोचर होता है। उन्होंने ध्यान से संबद्ध उन सभी पक्षों का नपे तुले शब्दों में, मनोज्ञ एवं आकर्षक शैली में जो विवेचन किया है, उसमें पाठक को स्वात्मानुभव तथा साहित्यिक रसास्वादन दोनों ही उपात्त होते हैं।

भारत के संस्कृत के महान लेखकों में यह अद्भुत सामर्थ्य रहा है कि उन्होंने कला, दर्शन और विज्ञान जैसे भिन्न-भिन्न विधाओं से संयुक्त विषयों का जो तलस्पर्शी विवेचन किया है, वह उनकी सर्वग्राहिणी प्रज्ञा तथा अभिव्यक्ति प्रवणता का द्योतक है, जिससे सामान्य जनों द्वारा नीरस कहे जाने वाले विषय भी सरस बन जाते हैं।

योग का क्षेत्र, जिसका ध्यान मुख्य अंग है, बड़ा ही व्यापक है। उसका प्रारम्भ योग के प्रथम अंग पाँच यमों की आराधना से होता है। योग साधना में प्रविष्ट होने वाले व्यक्ति के लिए सबसे पहले यह आवश्यक है कि उसके जीवन में अहिंसा व्यापे। उसी का मतिफलन करुणा, दया और अनुकम्पा आदि में प्रकट होता है, जिनसे सम्यकत्व सुदृढ़ और समलंकृत बनाता है।

उसी प्रकार योगाभ्यास में आने वाले के मन, वाणी तथा व्यवहार में सत्य की प्रतिष्ठा हो, अर्थ लुब्धता उसके मन में जरा भी न रहे, पर द्रव्य को वह मिट्टी के ढेले के समान समझे, इन्द्रिय भोगों मे जरा भी गुमराह न बने, तृष्णा, लालसा तथा परिग्रह के मायाजाल से विमुक्त रहे, ऐसा किए बिना जो लोग कष्टकर, दुरुह मात्र, आसन एवं प्राणायाम आदि साधने में जुट जाते हैं, वे वाह्य प्रदर्शन में तो यत्किंचित चमत्कृति उत्पन्न कर सकते हैं, किन्तु उनसे अध्यात्म-योग जरा भी नहीं सधता।

हमारे देश में एक ऐसा समय रहा है, जब यम, नियम आदि की ओर विशेष ध्यान न देते हुए वाह्य चमत्कार एवं प्रदर्शन का भाव तथाकथित योगाभ्यासियों में बद्धमूल हुआ। 'देह दु:खं महाफलम्' के सिद्धान्त ने उनके जीवन में मुख्यता ले ली। यों हठयोग ही उनका साध्य बन गया। वे यह भूल गए कि हठयोग तो राजयोग – अध्यात्मयोग का केवल सहायक का साधन मात्र है। इसी तरह ध्यान योग के नाम से कतिपय ऐसे तान्त्रिक उपक्रम भी उद्भूत और प्रसृत हुए, जिनमें ऐहिक अभिसिद्धियों के अतिरिक्त अध्यात्मकोत्कर्ष के रूप में जरा भी फलवत्ता नहीं थी। आचार्य सोमदेव ने बड़े ही कड़े शब्दों में उनका खण्डन करते हुए योग साधकों को तद्विमुख होने को प्रेरित किया है।

यमों तथा नियमों के जीवन में सिद्ध हो जाने पर साधक में पवित्रता, निर्मलता और सात्विकता का संचार होता है। वह आत्मोन्मुख रहता हुआ, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार आदि का जो भी अभ्यास रहता है। तदर्थ दैहिक स्वस्थता या नीरोगता की जो अपेक्षा है, वह इन द्वारा प्राप्त होती जाए, ताकि योग की आगे की भूमिका में बाधा न आए।

आचार्य सोमदेव चाहते थे कि योगी केवल कहने भर को योगी न रह जाए, उसके व्यक्तित्व और आभामण्डल से यौगिकता– योग-साधना झलकनी चाहिये। यह तभी होता है, जहाँ आर्त्त तथा रौद्र ध्यान का परिवर्जन कर साधक शुक्ल ध्यान का लक्ष्य लिए धर्म ध्यान में संप्रवृत रहता हो।

आचार्य सोमदेव की योग मार्ग के नाम से ध्यान पर एक स्वतन्त्र कृत्ति उपलब्ध है। यह कलेवर में लघु होते हुए भी ध्यान विषयक विवेचन की प्रौढ काव्यात्मक शैली में रचित विलक्षण पुस्तक है, जिसमें उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, विभावना, विशेषोक्ति, समासोक्ति एवं अर्थान्तरन्यास आदि विविध अलंकारों के माध्यम से ध्यान का बड़ा ही विशद, मनोज्ञ तथा अन्त: स्पर्शी विश्लेषण हुआ है। शाब्दिक सुन्दरता के साथ-२ सग्रधरा जैसे लम्बे छन्द में यह रचित है।

इससे यह स्पष्ट है कि आचार्य सोमदेव ध्यान योग में विशेष अभिरुचिशील थे। यही कारण है कि उन्होंने यशस्तिलकचम्पू में प्रसंगोपात रूप में ध्यान का वर्णन किया है। इस वर्णन से यह प्रकट होता है कि उनकी यह मानसिकता थी कि ध्यान के इर्द-गिर्द सहायक साधनों के नाम से जुड़े हुए ये उपक्रम जो वास्तव में प्रत्यवाय–विघ्न रूप हैं, अपगत हो जाएं।

आचार्य सोमदेव द्वारा किया गया यह वर्णन ध्यान के क्षेत्र में आत्मोत्कर्ष को लक्षित कर अपेक्षित वैराग्य और अभ्यास को विशेष रूप से बल देने वाला है, क्योंकि इन्हीं से मनोजय, सिद्ध होता है। मन के विजित होने पर "योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:[१८] के अनुसार योग साधना में साधक सफलता प्राप्त करता जाता है।

टिप्पणी

१. गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते –साहित्य दर्पण ६.३३६

२. आदिध्यासु: परं ज्योतिरीप्सुस्तद्धाम शाश्वतम् ।
इमं ध्यानविधिं यत्नादभ्यस्तु समाहित:।।
तत्वचिन्तामृतामोम्भो द्यौ दृढमग्नतया मन:।
वहिर्व्याप्तौ जड़ं कृत्वा द्वयमासनमाचरेत्।।
सूक्ष्म प्राणयमायाम: सन्न सर्वाङ्गसंचर:।
ग्रोवोत्कीर्ण इवासीत ध्यानानन्द सुधां लिहन।।
यदेन्द्रि याणि पंञ्चापि स्वात्मस्थानि समासते।
तदा ज्योति: स्फुरत्यन्तश्चित्ते चित्तं निमज्जति।।
यशस्तिलकचम्पु ८.१५५.५८

३. चित्तस्यैकाग्रता ध्यानं ध्यातात्मा तत्फलप्रभु:।
ध्येयमात्मागमज्योति स्तद्विधिर्देहयातना।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१५९

४. तैरश्चमामरं मार्त्य नाभसं भौममङ्गजम्।
सहेत समधी: सर्वभन्तरायं, द्वयातिग:।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१६०

५. नाक्षमित्वमविध्नाय न क्लीवत्वममृत्यवे।
तस्मादक्लिश्यमानत्मा परं ब्रह्मैव चिन्तयेत।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१६१

६. यत्रायमिन्द्रियग्रामो वयासङ्गस्तेन विप्लवम्।
नाश्नुवीत तमद्देशं भजेताध्यात्म सिद्धये।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१६२

७. फल्गुजन्मापययं देहो यदलाबुफलायते।
संसार सागरोत्तारे रक्ष्यस्तस्मात्प्रयत्नत:।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१६३

८. नरेऽधीरे वृथा वर्मक्षेत्रेऽशस्ये वृत्तिर्वृथा,
यथा तथा वृथा सर्वो ध्यान शून्यस्य तद्विधि।
यशस्तिलक चम्पू ८.१६४

९. वहिरन्तस्तमोवातैरस्पन्दं दीपवन्मन:।
यत्तत्वालोकनोल्लासि तत्स्याद्धयानं सवीजकम्।।
निर्विचारावतारासु चेत: स्रोत: प्रवृत्तिषु।
आत्मन्येव स्फुरन्नात्मा भवेद्धयानम बीजकम्।।
चित्तेऽनन्त प्रभावेऽस्मिन प्रकृत्या रसवच्चले।
तत्तेजसि स्थिरे सिद्धे न किं सिद्धं जगत्त्रये।।
निर्मनस्के मनोहंसे पुंहंसे सर्वत: स्थिरे।
बोधहंसोऽखिलालोक्यसरोहंस: प्रजायते।।
यद्यप्यस्मिन्मन: क्षेत्रे क्रियां तां तां समादधत्।
कंचिद्वेदयते भावं तथाप्यत्र न विभ्रमेत।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१६५-६९

१०. भूमौ जन्मेति रत्नानां यथा सर्वत्र नोद्भव:।
तथात्मजमित ध्यानं सर्वत्राङ्गिनि नोद्भवेत्।।
तस्य कालं वदन्त्यन्तर्मुहूर्त मुनय: परम्।
अपरिस्पन्दमानं हि तत्परं दुर्धरं मन:।
तत्कालमपि तद्धयानं स्फुरदेकाग्रमात्मनि।
उच्चै: कर्मोच्चयं भिन्द्याद्वज्रं शैलमिव क्षणात्।।
कल्पैरप्यम्बुधि: शक्यरचुलु कैर्नोच्चुलुपितुम्।
कल्पान्तभू: पुनर्वातस्तं मुहु: शोषमानयेत्।।
रूपे मरुति चित्तेऽपि तथान्यत्र यथा विशन्।
लभेत कामितं तद्वदात्मना परमात्मनि।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१७२-१७६

११. वैराग्यं ज्ञानसंपत्तिरसङ्ग: स्थिरचित्तता।
ऊर्मिस्मय सहत्वं च पञ्च योगस्य हेतव:।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१७७

१२. आधि व्याधि विपर्यास प्रमादालस्यविभ्रमा:।
अलाभ: सङ्गितास्थैर्यमेते तस्यान्तरायका:।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१७८

१३. य: कष्टकैस्तुदत्यङ्गं यश्च लिम्पति चन्दनै:।
रोषतोषाविषिक्तात्मा तयोरासीत लोष्टवत्।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१७९

१४. पीत पृथ्वी-तत्व का, श्वेत जल-तत्व का, अरूण तेजस् तत्व का श्याम वायु-तत्व का पीतत्वादि रहित परिवेश मात्र आकाश, तत्व का ज्ञापक है।

१५. ज्योतिर्बिन्दु: कला नाद: कुण्डली वायुसंचर:।
मुद्रामण्डलचोद्यानि निजीकरणादिकम् ।।
नाभौ नेत्रे ललाटे च ब्रह्मग्रन्थौ च तालुनि।
अग्निमध्ये खौ चन्द्रे लूतातन्तौ हृदङ्कुरे।।
मृत्युंजय यदन्तेषु तत्त्वत्वं किल मुक्तये।
अहो मूढधियामेष नय: स्वपरवंचन:।।
कर्माण्यपि यदीमानि साध्यान्येवं विधैर्नय:।
अलं तपोजपाप्त्वेष्टिदानाध्ययन कर्मभि:।।
यशस्तिलक चम्पू ८.१८०-८३

१६. योऽविचारितरम्येषु क्षणं देहार्तिहारिषु।
इन्द्रियार्थेषु वश्यात्मा सोऽपि योगी किलोच्यते।।
यस्येन्द्रियार्थतृष्णाऽपि जर्जरीकुरुते मन:।
तन्निरोधभुवो धाम्न: स ईप्सति कथं नर:।।
आत्मज्ञ: संचितं दोषं यातनायोगकर्मभि:।
कालेन क्षपयन्नपि योगी रोगीव कल्पताम्।।
यशस्तिलकचम्पू ८.१८४-८६

१८. पातंजल योग सूत्र १,२

हेमन्त कुमार सिंगी

स्वाध्याय का महत्व

जैन धर्म में तप को अत्यधिक महत्व दिया गया है, यदि हम यह कहें कि जैन धर्म तप प्रधान धर्म हैं तो भी कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जैन साहित्य में तप पर विस्तार से विवेचन किया गया है। वहां तप को मूल रूप से दो भागों में बांटा गया है– (१) बाह्य तप और (२) आभ्यंतर तप। पुन: इन दोनों को छ:-छ: भागों में बांटा गया है। स्वाध्याय भी तप है और अभ्यंतर तप के अन्तर्गत आता है।

स्वाध्याय का अर्थ : वाचस्पत्यम् में स्वाध्याय शब्द की व्याख्या दो प्रकार से की है– १. स्व+अधि+ईण् जिसका तात्पर्य है कि स्व का अध्ययन करना। दूसरों शब्दों में स्वाध्याय आत्मानुभूति है, अपने अंदर झांककर अपने आपको देखना है। वह स्वयं अपना अध्ययन है। मेरी दृष्टि में अपने विचारों, वासनाओं व अनुभूतियों को जानने व समझने का प्रयत्न ही स्वाध्याय है। वस्तुत: वह अपनी आत्मा का अध्ययन ही है। आत्मा के दर्पण में अपने को देखना है। स्वाध्याय शब्द की दूसरी व्याख्या सू+आ+अधि+ईड़ इस रूप में भी की गई है। इस दृष्टि से स्वाध्याय की परिभाषा होती है "शोभनोऽध्याय: स्वाध्याय:" अर्थात् सत्-साहित्य का अध्ययन करना ही स्वाध्याय है। स्वाध्याय की इन दोनों परिभाषाओं के आधार पर एक बात जो उभर कर सामने आती है वह यह कि सभी प्रकार का पठन-पाठन स्वाध्याय नहीं है। आत्म विशुद्धि के लिये किया गया, अपनी स्वकीय वृत्तियों, भावनाओं व वासनाओं अथवा विचारों का अध्ययन या निरीक्षण तथा ऐसे सद्ग्रंथों का पठन-पाठन-जो हमारी चैतसिक विकृतियों को समझने और उन्हें दूर करने में सहायक हो, वे ही स्वाध्याय के अन्तर्गत आते हैं।

स्वयं के अन्तर्मन यानि स्वयं का स्वयं द्वारा अध्ययन ही स्वाध्याय कहलाता है। आत्मचिंतन, आत्मसमीक्षा भी स्वाध्याय का ही रूप है। सद्शास्त्रों का मर्यादापूर्वक अध्ययन करना, विधि सहित श्रेष्ठ पुस्तकों का अध्ययन करना ही स्वाध्याय है।

आवश्यक सूत्र में स्वाध्याय का अर्थ बतलाते हुए लिखा है "अध्ययने अध्याय: शोभनो अध्याय: स्वाध्याय:" सु– अर्थात श्रेष्ठ अध्ययन का नाम स्वाध्याय है। कहने का तात्पर्य है कि आत्म कल्याणकारी पठन-पाठन रूप श्रेष्ठ अध्ययन का नाम स्वाध्याय है। दूसरों अर्थों में जिसके पठन-पाठन से आत्मा की शुद्धि होती है, वही स्वाध्याय है। "स्वेन स्वस्य अध्ययनं स्वाध्याय:" अर्थात् स्वयं के द्वारा स्वयं का अध्ययन ही स्वाध्याय है।

सिद्धि का सफर तय करने के लिए स्वाध्याय स्यंदन है। इसमें बैठने वाला व्यक्ति कर्मशत्रुओं को आसानी से जीत सकता है। स्वाध्याय एक चिन्मय चिराग है, जो भवकानन में भटकने वाले व्यक्ति की राह को रोशन करता है। स्वाध्याय वह चाबी है जो सिद्धत्व के बंद दरवाजे को खोलती है। स्वाध्याय एक अनुपम सारथी है, जो सूर्यरथ के सारथि 'अरूण' की भांति मिथ्यात्व रूपी अज्ञतिमिर का हरण करती है।

गणधर गौतम ने भगवान महावीर से पूछा– "सज्झाइंण भंते, ज़ीवे कि जणयई-भंते!" स्वाध्याय की निष्पति क्या है। श्रमण भगवान महावीर ने फरमाया 'सज्झाइणं नाणावरणिज्जं कम्मं खेवई' स्वाध्याय करने से ज्ञानावरणीय कर्म क्षीण होता है। इसके अतिरिक्त सद्संस्कारों की प्राप्ति, ज्ञान व विनय की आराधना, मोक्ष की उपलब्धि, कुशल कर्मों का अर्जन, कांक्षा मोहनीय कर्म का विच्छेद, ये सारे लाभ प्राप्त होते हैं।

स्वाध्याय के प्रकार– *भगवान महावीर ने स्वाध्याय के पांच प्रकार बतलाये हैं-*

१. वाचना २. पृच्छना ३. परिवर्तना ४. अनुप्रेक्षा ५. धर्मकथा

- ❐ वाचना – सदगुरू की नेश्राय में अध्ययन करना।
- ❐ पृच्छना – सूत्र और उसके अर्थ पर चिन्तन मनन। अज्ञात विषय की जानकारी या ज्ञात विषय की विशेष जानकारी के लिए प्रश्न पूछना।

- परिवर्तना – परिचित विषय को स्थिर रखने के लिए बार-बार दोहराना।
- अनुप्रेक्षा – जिस सूत्र की वाचना ग्रहण की है उस सूत्र पर तात्विक दृष्टि से चिन्तन करना।
- धर्मकथा – स्थिरीकृत और चिंतित विषय का उपदेश करना।

यहां यह भी स्मरण रखना है कि स्वाध्याय के क्षेत्रों में इन पांचों अवस्था का एक क्रम है, इनमें प्रथम स्थान वाचना है। अध्ययन किये गये विषय के स्पष्ट बोध के लिए प्रश्नोत्तर के माध्यम से शंका निवारण करना इसका क्रम दूसरा है। क्योंकि जब तक अध्ययन नहीं होगा, तब तक शंका आदि नहीं होगी। अध्ययन किये गये विषय के स्थिरीकरण के लिए उसका पारायण आवश्यक है। इससे एक ओर स्मृति सुदृढ़ होती है तो दूसरी ओर क्रमश: अर्थ बोध में स्पष्टता का विकास होता है। इसके पश्चात् अनुप्रेक्षा या चिंतन का क्रम आता है। चिंतन के माध्यम से व्यक्ति पठित विषय को न केवल स्थिर करता है अपितु वह अर्थ बोध की गहराई में जाकर स्वत: की अनुभूति के स्तर पर उसे समझने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार चिंतन एवं मनन के द्वारा जब विषय स्पष्ट हो जाता है तब व्यक्ति को धर्मोपदेश या अध्ययन का अधिकार मिलता है।

स्वाध्याय के नियम : किसी भी कार्य को सही रूप से सम्पादित करने की प्रक्रिया होती है। अगर वह कार्य उसी प्रक्रिया के अन्तर्गत किया जाये तो वह हमें अधिक फल देने वाला होगा ठीक इसी प्रकार स्वाध्याय के भी कुछ नियम हैं। अगर इन नियमों को अपनाकर स्वाध्याय किया जाये तो वह निश्चित ही परम सिद्धि की प्राप्ति में सहायक है।

निरन्तरता : स्वाध्याय प्रतिदिन नियमानुसार किया जाना चाहिये स्वाध्याय में किसी प्रकार का निक्षेप नहीं होना चाहिये। निरन्तरता से हमारी स्मरण शक्ति प्रखर बनती है।

एकाग्रता : हमारा मन संसार के चक्रव्यूह में इधर-उधर भटकता रहता है जब तक हमारा मन चंचल बना रहेगा तब तक स्वाध्याय के परम आनंद की अनुभूति प्राप्त नहीं हो सकती अत: आवश्यक है कि स्वाध्याय एकाग्रतापूर्वक किया जाये।

सद्साहित्य का चयन : वर्तमान में बाजार में ऐसी पुस्तकें बहुतायत से उपलब्ध हो रही हैं जो मानसिक विकारों को जन्म देने वाली है अतएव हमें स्व-विवेक से सद्साहित्य का चुनाव करना चाहिये ताकि स्वाध्याय उचित ढंग से किया जा सके।

स्वाध्याय का स्थान : स्वाध्याय के लिए स्थान कैसा हो? यह प्रश्न स्वाभाविक है। स्वाध्याय के लिए स्थान कोलाहल रहित, स्वच्छ एवं एकान्त होना चाहिये।

स्वाध्याय का महत्व : भगवान महावीर ने गौतम की जिज्ञासा को शांत करते हुए स्वाध्याय के विषय में फरमाया कि स्वाध्याय से श्रुतज्ञान का लाभ प्राप्त होता है, मन की चंचलता समाप्त होती है और आत्मा आत्मभाव में स्थिर होती है। जैन साधना का लक्ष्य समभाव की उपलब्धि है और समभाव की उपलब्धि हेतु स्वाध्याय एवं सत्-साहित्य का अध्ययन आवश्यक है– सत्-साहित्य का स्वाध्याय मनुष्य का ऐसा मित्र है जो अनुकूल एवं प्रतिकूल दोनों परिस्थितियों में उसका साथ निभाता है और उसका मार्गदर्शन कर उसके मानसिक तनावों को समाप्त करता है। ऐसे साहित्य के स्वाध्याय से व्यक्ति को हमेशा आत्मसंतोष और आध्यात्मिक आनंद की अनुभूति होती है। मानसिक तनावों से मुक्ति मिलती है। यह मानसिक शांति का अमोघ उपाय है।

सत्-साहित्य के स्वाध्याय का महत्त्व अति प्राचीन काल से ही स्वीकृत रहा है। ओपनिषदिक् चिंतन में जब शिष्य अपनी शिक्षा पूर्ण करके गुरु के आश्रम से विदाई मांगता है तो उसे दी जानेवाली अंतिम शिक्षाओं में एक शिक्षा होती थी–''स्वाध्यायान् मा प्रमद:'' अर्थात् स्वाध्याय में प्रमाद मत करना। स्वाध्याय एक ऐसी वस्तु है जो गुरु की अनुपस्थिति में गुरु का कार्य करती है। स्वाध्याय से हम कोई न कोई मार्गदर्शन प्राप्त कर ही लेते हैं। महात्मा गाँधी कहा करते थे कि जब भी मैं किसी कठिनाई में होता हूँ, मेरे सामने कोई जटिल समस्या होती है, जिसका निदान मुझे स्पष्ट रूप से प्राप्त नहीं होता है तो मैं स्वाध्याय की गोद में चला जाता हूँ जहाँ पर मुझे कोई न कोई समाधान अवश्य मिल जाता है।

जैन परम्परा में जिसे मुक्ति कहा गया है वह वस्तुत: राग-द्वेष से मुक्ति है। मानसिक तनावों से मुक्ति है और ऐसी मुक्ति के लिये पूर्व कर्म संस्कारों का निर्जरण या क्षय आवश्यक माना गया है और इसके लिये स्वाध्याय को आवश्यक बताया गया है। उत्तराध्यन-सूत्र में स्वाध्याय को आंतरिक तप का एक प्रकार बताते हुए उसके पांचों अंगों की विस्तार से चर्चा की गई है। बृहदकल्पभाष्य में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि ''नवि अत्थि न वि अ होही, सज्झाय समं तपो कम्म'' अर्थात् स्वाध्याय के समान दूसरा तप का अतीत में कोई था न वर्तमान में कोई है और न भविष्य में कोई होगा। इस प्रकार जैन परम्परा में स्वाध्याय को आध्यात्मिक साधना के क्षेत्र में विशेष महत्त्व दिया गया है। उत्तराध्यन-सूत्र में कहा गया है कि स्वाध्याय से ज्ञान का प्रकाश होता है। जिससे समस्त दु:खों का क्षय हो जाता है। वस्तुत: स्वाध्याय ज्ञान प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण उपाय है, कहा भी है–

नाणस्स सव्वस्स पगासणाए
अन्नाण-मोहस्स विवज्जाणाए।
रागस्स दोसस्स य संखएणं
एगन्तसोक्खं समुवेई मोक्खं।।
तस्सेस मग्गो गुरू विद्वसेवा
विवज्जणा बालजणस्स दूरा।
सज्झाय-एगन्तनिसेवणा य
सुत्तऽत्थसंचिन्तणया धिई य।

अर्थात् संपूर्ण ज्ञान के प्रकाशन से अज्ञान और मोह के परिहार से राग-द्वेष के पूर्ण क्षय से जीव एकांत सुख रूप मोक्ष को प्राप्त करता है। गुरुजनों की, वृद्धों की सेवा करना, अज्ञानी लोगों के सम्पर्क से दूर रहना, सूत्र और अर्थ का चिंतन करना, स्वाध्याय करना और धैर्य रखना यह दु:खों से मुक्ति का उपाय है।

उत्तराध्ययन-सूत्र में कहा गया है कि ''सझाय वा निउतेणमं सव्वदुक्खविमोक्खणे'' अर्थात् स्वाध्याय करते रहने से समस्त दु:खों से मुक्ति मिलती है। स्वाध्याय के विषय में कहा गया है कि जैसे अंधे व्यक्ति के लिये करोड़ो दीपकों का प्रकाश भी व्यर्थ है किन्तु आंख वाले व्यक्ति के लिए एक भी दीपक का प्रकाश सार्थक होता है। इसी प्रकार जिसके अन्तर चक्षु खुल गये हो, जिसकी अन्तर यात्रा प्रारंभ हो गई है, ऐसे अध्यात्मिक साधक के लिये स्वल्प अध्ययन भी लाभप्रद होता है अन्यथा आत्म-विस्तृत व्यक्ति के लिये करोड़ों पदों का ज्ञान भी निरर्थक होता है। स्वाध्याय में अंतर चक्षु का खुलना-आत्मदृष्टा बनाना, स्वयं में झांकना पहली शर्त है। शास्त्र का पढ़ना या अध्ययन करना उसका दूसरा चरण है।

उत्तराध्ययन-सूत्र में यह प्रश्न उपस्थित किया गया कि स्वाध्याय से जीव को क्या लाभ है। इसके उत्तर में कहा गया कि स्वाध्याय से ज्ञानावरण कर्म का क्षय होता है। दूसरें शब्दों में आत्मा मिथ्या ज्ञान का आचरण दूर कर सम्यक ज्ञान का अर्जन करता है। इसी प्रकार स्थानांग-सूत्र में शास्त्रध्ययन के लाभ बताये गये हैं। इसमें कहा गया है कि सूत्र की वाचना के पांच लाभ है। १. वाचना से श्रुत का संग्रह होता है २. शास्त्राध्ययन अध्यापन की प्रवृति से शिष्य का हित होता है क्योंकि वह उसके ज्ञान प्राप्ति का महत्वपूर्ण साधन है। ३. शास्त्राध्ययन अध्यापन की प्रवृत्ति बनी रहने से ज्ञानावरणीय कर्मो का क्षय होता है। ४. अध्ययन की प्रवृत्ति के जीवित रहने से उसके विस्मृत होने की संभावना नहीं रहती। ५. जब श्रुत स्थिर रहता है तो उसकी अविछिन्न परम्परा चलती रहती है।

स्वाध्याय से श्रुत का संग्रह होता है, ज्ञान के प्रतिबंधक कर्मो की निर्जरा होती है। बुद्धि निर्मल होती है। संशय की निवृत्ति होती है, तप त्याग की वृद्धि होती है एवं अतिचारों की शुद्धि होती है। सद्गुणों के संरक्षक, संवर्धन और संशोधन के लिए स्वाध्याय आवश्यक है। अनुत्तरित प्रश्नों के उत्तर मिलने का अर्थ है शंका रहित होना, यही स्वाध्याय है। स्वाध्याय की परम्परा से संदेह का निवारण होता है। ज्ञान में विशेष से विशेषतर एवं विशेषतम उपलब्धि का अनुभव होता है।

स्वाध्याय का जैन परम्परा में कितना महत्व रहा है वह इसी बात से प्रकट होता है कि मुनि दिन के प्रथम प्रहर में स्वाध्याय करें, दूसरे प्रहर में ध्यान करें, तीसरे पहर में भिक्षाचर्या एवं दैहिक आवश्यकताओं की वृत्ति का कार्य करें। पुन: चतुर्थ प्रहर में स्वाध्याय करें। इसी प्रकार रात्रि प्रथम प्रहर में स्वाध्याय, दूसरे में ध्यान, तीसरे में निद्रा व चौथे में पुन: स्वाध्याय का निर्देश है। इस प्रकार मुनि प्रतिदिन चार प्रहर अर्थात् १२ घंटे स्वाध्याय में रत रहें। दूसरे शब्दों में साधक-जीवन का आधा भाग स्वाध्याय के लिये नियत है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जैन परम्परा में स्वाध्याय की महत्ता प्राचीन काल से ही सुस्थापित रही है क्योंकि यही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति के अज्ञान का निवारण संभव है।

सत्-साहित्य के पठन के रूप में स्वाध्याय की क्या उपयोगिता है? यह सुस्पष्ट है कि वस्तुत: सत् साहित्य का अध्ययन व्यक्ति के जीवन की दृष्टि को ही बदल देता है। ऐसे अनेक लोग हैं जिनकी सत्-साहित्य के अध्ययन से जीवन की दिशा ही बदल गई। स्वाध्याय एक ऐसा माध्यम है जो एकांत के क्षणों में हमें अकेलापन महसूस नहीं होने देता और एक सच्चे मित्र की भांति सदैव साथ रहता है और मार्गदर्शन करता है।

मन में सदैव मूल्यांकन चलता रहता है, स्वाध्याय के द्वारा सदैव हमको इसका परीक्षण करते रहना चाहिये। कुछ लिखते रहने की प्रवृत्ति भी स्वाध्याय से प्राप्त होती है जो सदैव ताजगी प्रदान करती है। वैयक्तिक भिन्नता से उत्पन्न समस्या का समाधान भी स्वाध्याय ही है। स्वाध्याय से कर्म क्षीण होते हैं, ज्ञान देने की क्षमता जागृत होती है। स्वाध्याय से सूत्र, अर्थ, सूत्रार्थ से संबंधित मिथ्या धारणाओं का अन्त होता है। स्मरण शक्ति तीव्र होती है। यथार्थत: स्वाध्याय वह योग है जिसमें ज्ञानयोग, कर्मयोग एवं भक्तियोग का समन्वय है एवं जिससे परमात्म-पद की प्राप्ति होती है।

—गोलछा चौक, बीकानेर (राज०)

■

डॉ० धर्मचन्द जैन, प्रोफेसर
संस्कृत-विभाग, जयनारायण व्यास
विश्वविद्यालय, जोधपुर

अर्द्धमागधी आगम-साहित्य में अस्तिकाय

अस्तिकाय

'अस्तिकाय' जैन दर्शन का विशिष्ट पारिभाषिक शब्द है, जो लोक या जगत् के स्वरूप का निर्धारण करता है। अस्तिकाय का निरूपण एवं विवेचन शौरसेनी, अर्द्धमागधी एवं संस्कृत भाषा में रचित आगम-ग्रन्थों, सूत्रों, टीकाओं एवं प्रकारण ग्रन्थों में विस्तार से समुपलब्ध है, किन्तु प्रस्तुत लेख में अर्द्धमागधी आगमों में निरूपित पंचास्तिकाय पर विचार करना ही समभिप्रेत है। अर्द्धमागधी भाषा में निवद्ध आगम श्वेताम्बर परम्परा का प्रतिनिधित्व करते हैं। दिगम्बर परम्परा इन्हें मान्य नहीं करती। उनके षट्खण्डागम, कसायपाहुड, समयसार, नियमसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकायसंग्रह आदि ग्रन्थ शौरसेनी प्राकृत भाषा में निवद्ध हैं। अर्द्धमागधी आगमों में मुख्यत: व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र, प्रज्ञापना सूत्र, जीवाजीवाभिगम सूत्र, समवायांग, स्थानांग, उत्तराध्ययन आदि आगमों में पंचास्तिकाय एवं षड् द्रव्यों का निरूपण सम्प्राप्त होता है। इसिभासियाइं ग्रन्थ भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है।[१]

अस्तिकाय पाँच हैं[२]- १. धर्मास्तिकाय २. अधर्मास्तिकाय ३. आकाशस्तिकाय ४. जीवास्तिकाय और ५. पुद्गलास्तिकाय। द्रव्य को ६ प्रकार का प्रतिपादित करते समय अद्धासमय (काल) को भी पंचास्तिकाय के साथ जोड़कर निरूपित किया जाता है।[३] अस्तिकाय एवं द्रव्य दो भिन्न शब्द हैं, अत: इनके अर्थ में भी कुछ भेद होना चाहिये। अस्तिकाय द्रव्य है, किन्तु मात्र अस्तिकाय नहीं है।

'अस्तिकाय' (अत्थिकाय) शब्द का विवेचन करते हुए आगम टीकाकार अभयदेव सूरि ने कहा है– **अस्तीत्ययं त्रिकालवचनो निपात:, अभूवन् भवन्ति भविष्यनित चेति भावना। अतोऽस्ति च ते प्रदेशानां कायाश्च राशय इति- अस्तिकाया:।** 'अस्ति' शब्द त्रिकाल का वाचक निपात है, अर्थात् 'अस्ति' से भूतकाल, वर्तमान एवं भविष्यत् तीनों में रहने वाले पदार्थों का ग्रहण हो जाता है। 'काय' शब्द राशि या समूह का वाचक है। जो कार्य अर्थात् राशि तीनों कालों में रहे वह अस्तिकाय है। अस्तिकाय की एक अन्य व्युत्पत्ति में अस्ति का अर्थ प्रदेश करते हुए प्रदेशों की राशि या प्रदेश समूह को अस्तिकाय कहा गया है- **अस्तिशब्देन प्रदेशप्रदेशा: क्वचिदुच्यन्ते, ततश्च तेषां वा काया: अस्तिकाया:।** इस अस्तिकाय के द्वारा सम्पूर्ण जगत् की व्याख्या हो जाती है। 'अस्तिकाय' को व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र के आधार पर स्पष्टरूपेण समझा जा सकता है। वहाँ पर तीर्थंकर महावीर से उनके प्रमुख शिष्य गौतम गणधर ने जो संवाद किया, वह इस प्रकार है[४]-

प्रश्न - भंते! क्या धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को 'धर्मास्तिकाय' कहा जा सकता है?

उत्तर - गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है। (अर्थात् धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता)

प्रश्न - भन्ते! क्या धर्मास्तिकाय के दो, तीन, चार, पाँच, छह, सात, आठ, नौ, दस, संख्यात और असंख्यात प्रदेशों को 'धर्मास्तिकाय' कहा जा सकता है?

उत्तर - गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

प्रश्न - भन्ते! एक प्रदेश न्यून धर्मास्तिकाय को क्या 'धर्मास्तिकाय' कहा जा सकता है?

उत्तर - गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

प्रश्न - भन्ते! किस कारण से ऐसा कहा जाता है?

उत्तर - गौतम! जिस प्रकार चक्र के खण्ड को चक्र नहीं

कहते, किन्तु सम्पूर्ण को चक्र कहते हैं, इसी प्रकार गौतम! धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है यावत् एक प्रदेश न्यून तक को भी धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न - भन्ते! फिर धर्मास्तिकाय किसे कहा जा सकता है?

उत्तर - गौतम! धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश हैं, जब वे कृत्सन, परिपूर्ण, निरवशेष एक के ग्रहण से सब ग्रहण हो जाएँ, तब गौतम! उसे धर्मास्तिकाय कहा जाता है।

धर्मास्तिकाय की भाँति व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र में अधर्मास्तिकाय, आकाशस्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय का भी अखण्ड स्वरूप में अस्तिकायत्व स्वीकार किया गया है। यह अवश्य है कि जहां धर्मास्तिकाय एवं अधर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश हैं वहां आकाशस्तिकाय, जीवस्तिकाय एवं पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेश हैं।[5] इसका तात्पर्य है कि जिस प्रकार धर्मास्तिकाय के अन्तर्गत निरवशेष असंख्यात प्रदेशों का ग्रहण होता है, उसी प्रकार अधर्मास्तिकाय आदि के भी अपने समस्त प्रदेशों का उस अस्तिकाय में ग्रहण होता है। एक प्रदेश भी न्यून होने पर उसे तत् तत् अस्तिकाय नहीं कहा जाता।

अस्तिकाय का द्रव्य से भेद

अस्तिकाय का द्रव्य से यही भेद है कि अस्तिकाय में जहाँ धर्मास्तिकाय आदि के अखण्ड निरवशेष स्वरूप का ग्रहण होता है, वहाँ धर्मद्रव्य आदि में उसके अंश का भी ग्रहण हो जाता है। परमार्थतः धर्मास्तिकाय अखण्ड द्रव्य है, उसके अंश नहीं होते हैं। अतः पुद्गलास्तिकाय कहलायेगा तथा टेबल, कुर्सी, पेन, पुस्तक, मकान आदि पुद्गल द्रव्य कहलायेंगे, पुद्गलास्तिकाय नहीं। टेबल आदि पुद्गल तो हैं, किन्तु पुद्गलास्तिकाय नहीं। क्योंकि इनमें समस्त पुद्गलों का ग्रहण नहीं होता है। अतः टेबल, कुर्सी आदि को पुद्गल द्रव्य कहना उपयुक्त है। इसी प्रकार जीवास्तिकाय में समस्त जीवों का ग्रहण हो जाता है, उसमें कोई भी जीव छूटता नहीं है, जबकि अलग-अलग, एक-एक जीव भी जीव द्रव्य कहे जा सकते हैं। यह अस्तिकाय एवं द्रव्य का सूक्ष्म भेद आगमों में सन्निहित है। काल को द्रव्य तो स्वीकार किया गया है, किन्तु उसका कोई अखण्ड स्वरूप नहीं है, उसमें प्रदेशों का प्रचय भी नहीं है, अतः वह अस्तिकाय नहीं है।

'द्रव्य' शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए कहा जाता है- **द्रवति तांस्तान् पर्यायान् गच्छति इति द्रव्यम्।** जो प्रतिक्षण विभिन्न पर्यायों को प्राप्त होता है, वह द्रव्य है। अस्तिकाय पाँच ही हैं, जबकि द्रव्य छह हैं। व्याख्याप्रज्ञप्ति के द्वितीय शतक में पाँचों अस्तिकाय का पाँच द्वारों से वर्णन किया गया है- द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से और गुण से।[6] द्रव्य से वर्णन करते हुए धर्मास्तिकाय को एक द्रव्य, अधर्मास्तिकाय को एक द्रव्य आकाशास्तिकाय को एक द्रव्य तथा जीवास्तिकाय एवं पुद्गलास्तिकाय को क्रमशः अनन्त जीवद्रव्य एवं अनन्त पुद्गल प्रतिपादित किया गया है। इसका तात्पर्य है कि 'अस्तिकाय' जहाँ तीनों कालों में रहने वाली अखण्ड प्रचयात्मक राशि का बोधक है, वहाँ द्रव्य शब्द के द्वारा उस अस्तिकाय के खण्डों का भी ग्रहण हो जाता है। इनमें धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय एवं अकाशास्तिकाय तो अखण्ड ही रहते हैं, उनके कल्पित खण्ड ही हो सकते हैं, वास्तविक नहीं, जबकि जीवास्तिकाय में अनन्त जीव द्रव्य और पुद्गलास्तिकाय में अनन्त पुद्गल द्रव्य अपने अस्तिकाय के खण्ड होकर भी अपने आप में स्वतन्त्र रूप से अस्तित्व में रहते हैं। नाम से वे सभी जीव जीवद्रव्य एवं सभी पुद्गल पुद्गलद्रव्य कहे जाते हैं।

अनुयोगद्वार सूत्र में द्रव्य नाम छह प्रकार का प्रतिपादित है- १. धर्मास्तिकाय २. अधर्मास्तिकाय ३. आकाशास्तिकाय ४. जीवास्तिकाय ५. पुद्गलास्तिकाय और ६. अद्धासमय (काल)[7]

पुद्गलास्तिकाय के एक प्रदेश अर्थात् परमाणु को कथंचित् द्रव्य, कथंचित् द्रव्यदेश कहा गया है। इसी प्रकार दो प्रदेशों को कथंचित् द्रव्य, कथंचित् द्रव्यदेश, कथंचित् अनेक द्रव्य और अनेक द्रव्यदेश कहा गया है। इसी प्रकार तीन, चार, पाँच यावत् असंख्यात एवं अनन्त प्रदेशों के संबंध में कथन करते हुए उन्हें एक द्रव्य एवं द्रव्यदेश, अनेक द्रव्य एवं अनेक द्रव्यदेश कहा गया है।[8]

पाँच अस्तिकायों में आकाश सबका आधार है। आकाश ही अन्य अस्तिकायों को स्थान देता है। आकाशस्तिकाय लोक एवं अलोक में व्याप्त है, जबकि अन्य चार अस्तिकाय लोकव्यापी हैं। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय से पूरा लोक स्पृष्ट है।[9]

द्रव्य का विभाजन आगामों में षड्द्रव्यों के अतिरिक्त जीव एवं अजीव के रूप में भी किया गया है, यथा-

कइविहा णं भंते! दव्वा पण्णत्ता?
गोयमा दुविहा दव्वा पण्णत्ता, तं जहा-जीवदव्वा य जीवदव्वा य।[१०]

भगवन्! द्रव्य कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं- जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य।

व्याख्याप्रज्ञप्ति में अजीव द्रव्यों को पुन: रूपी अजीव द्रव्य एवं अरूपी अजीव द्रव्य में विभक्त किया जाता है।

प्रज्ञापना सूत्र में अरूपी अजीव द्रव्य की १० पर्याय एवं रूपी अजीव द्रव्य की ४ पर्याय निरूपित हैं। अरूपी अजीव द्रव्य की १० पर्याय हैं[११]-१. धर्मास्तिकाय २. धर्मास्तिकाय के देश ३. धर्मास्तिकाय के प्रदेश, ४. अधर्मास्तिकाय ५. अधर्मास्तिकाय के देश ६. अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ७. आकाशास्तिकाय ८. आकाशस्तिकाय के देश ९. आकाशास्तिकाय के प्रदेश और १०. अद्धासमय। अरूपी से तात्पर्य है वर्ण, गंध, रस एवं स्पर्श से रहित। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय एवं काल द्रव्य वर्णादि से रहित होने के कारण अरूपी हैं। रूपी द्रव्य एक ही है- पुद्गलास्तिकाय। इसके चार पर्याय हैं- स्कन्ध, स्कन्धदेश, स्कन्ध प्रदेश और परमाणु पुद्गल। पुद्गल का स्वतन्त्र खण्ड स्कन्ध, उसका कल्पित अंश देश एवं उसका परमाणु जितना कल्पित अंश प्रदेश कहा जाता है। परमाणु पुद्गल स्वतंत्र है। देश एवं प्रदेश के धर्मास्तिकाय आदि अरूपी द्रव्यों में भी कल्पित अंश एवं परमाणु जितने कल्पित अंश ही वाच्य हैं।

रूपी अजीव द्रव्य की अनन्त पर्यायों का भी प्रतिपादन हुआ है। गौतम गणधर के प्रश्न के उत्तर में प्रज्ञापना सूत्र में भगवान महावीर ने स्पष्ट किया है- गौतम! परमाणु पुद्गल अनन्त हैं, द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त हैं, यावत् दशप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त हैं, संख्यात प्रदेशिक स्कन्ध अनन्त हैं, असंख्यात प्रदेशिक स्कन्ध अनन्त हैं, अनन्त प्रदेशिक स्कन्ध अनन्त हैं। इस कारण हे गौतम! ऐसा कहा जाता है कि रूपी अजीव पर्याय संख्यात और असंख्यात नहीं है, किन्तु अनन्त हैं।[१२]

जीवद्रव्य की भी अनन्त पर्याय स्वीकृत हैं। इसका कारण प्रतिपादित करते हुए कहा गया है- असंख्यात नैरयिक हैं, असंख्यात् असुरकुमार यावत् असंख्यात स्तनित कुमार हैं, असंख्यात पृथ्वीकायिक हैं, असंख्यात अपकायिक हैं, असंख्यात् तेजस्कायिक हैं, असंख्यात वायुकायिक हैं, अनन्त वनस्पतिकायिक हैं, असंख्यात द्वीन्द्रिय हैं, असंख्यात त्रीन्द्रिय है, असंख्यात् चतुरिन्द्रिय हैं, असंख्यात् पचेन्द्रिय तिर्यचयोनिक हैं, असंख्यात मनुष्य हैं, असंख्यात वाणव्यन्तर हैं, असंख्यात ज्योतिष्क देव हैं, असंख्यात वैमानिक देव हैं, अनन्त सिद्ध हैं। इस प्रकार हे गौतम! जीवपर्याय संख्यात और असंख्यात नहीं, किन्तु अनन्त हैं।[१३]

धर्मास्तिकाय गति परिणाम वाले जीव और पुद्गलों की गति में सहायक होता है। अधर्मास्तिकाय स्थिति परिणाम वाले जीव और पुद्गलों की स्थिति में सहकारी होता है। आकाशास्तिकाय अन्य सभी द्रव्यों/अस्तिकायों को स्थान/अवकाश देता है। जीवास्तिकाय चेतनागुण या उपयोगगुण वाला होता है। पुद्गलास्तिकाय वर्ण, गंध रस एवं स्पर्श वाला होता है। शब्द, बन्ध, सूक्ष्मता, स्थूलता, संस्थान भेद, अंधकार, छाया, आतप, उद्योत वाले द्रव्य भी पुद्गल होते हैं। काल वर्तना लक्षण वाला है।[१४]

इनमें धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय एवं पुद्गलास्तिकाय अजीवकाय हैं तथा धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय एवं जीवास्तिकाय अरूपीकाय हैं, क्योंकि इनमें वर्ण, गंध, रस एवं स्पर्श नहीं हैं। प्रदेश की अपेक्षा धर्म, अधर्म एवं एक जीव द्रव्य में असंख्यात प्रदेश माने गए हैं तथा आकाश में अनन्त प्रदेश कहे गए हैं। पुद्गल में संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेश हैं। पुद्गल परमाणु एक प्रदेशी होकर भी अनेक स्कन्ध रूप वहु प्रदेशों को ग्रहण करने की योग्यता रखता है। गुरुलघुत्व की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी, किन्तु धर्मास्तिकाय आदि शेष चार अगुरुलघु हैं।

षड्द्रव्यों में धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय द्रव्य की दृष्टि से तुल्य हैं तथा षड्द्रव्यों में सवसे अल्प हैं। उनसे जीवास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा अनन्तगुणे हैं, उनसे पुद्गलास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा अनन्तगुणे हैं। उनसे अद्धासमय द्रव्य की अपेक्षा अनन्तगुणे हैं।[१५]

संख्या का यह निर्देश इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि अस्तिकाय एवं द्रव्य में भिन्नता है। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय एवं आकाशास्तिकाय में द्रव्य एवं अस्तिकाय की दृष्टि से समानता हैं, क्योंकि वे अस्तिकाय की दृष्टि से भी एक-एक हैं तथा द्रव्य की दृष्टि से भी एक-एक हैं। जीवास्तिकाय को द्रष्ट की दृष्टि से धर्मास्तिकाय की अपेक्षा अनन्तगुणा कहा गया है। इसका तात्पर्य है कि प्रत्येक जीव एक भिन्न द्रव्य है इसलिए उन्हें अनन्तगुणा कहा गया है। पुद्गलास्तिकाय को तो द्रव्य की दृष्टि से जीव से भी अनन्तुणा

प्रतिपादित किया गया है। इसका कारण परमाणु को भी द्रव्य के रूप में समझना है।

उपर्युक्त विवेचन से यह फलित होता है कि जात्यपेक्षया तो द्रव्य छह ही हैं, किन्तु व्यक्त्यपेक्षया द्रव्य अनन्त हैं। प्रत्येक वस्तु अपने आपमें एक द्रव्य है। जो भी स्वतन्त्र अस्तित्ववान् वस्तु है वह द्रव्य है। इसीलिए द्रव्यापेक्षया जीव भी अनन्त हैं और पुद्गल भी अनन्त। काल को तो पुद्गल की अपेक्षा भी अनन्तगुणा स्वीकार किया गया है।

तात्पर्य यह है कि अस्तिकाय एवं द्रव्य का स्वरूप पृथक् है। अस्तिकाय तो द्रव्य है, किन्तु जो द्रव्य है वह अस्तिकाय हो, यह आवश्यक नहीं।

धर्मास्तिकाय आदि अमूर्त द्रव्य आकाश में एक साथ रहते हुए भी एक-दूसरे को बाधित या प्रतिहत नहीं करते। ये किसी न किसी रूप में एक-दूसरे के सहकारी बनते हैं। यथा- धर्मास्तिकाय से जीवों में आगमन, गमन, भाषा, उन्मेष, मनोयोग, वचनयोग और काययोग प्रवृत्त होते हैं। अधर्मास्तिकाय से जीवों में स्थित होना, बैठना मन की एकाग्रता आदि कार्य होते हैं। आकाशास्तिकाय जीव एवं अजीव द्रव्यों का भाजन या आश्रय है। एक या दो परमाणुओं से व्याप्त आकाशप्रदेश में सौ परमाणु भी समा सकते हैं तथा सौ परमाणुओं से व्याप्त आकाश प्रदेश में सौ करोड़ परमाणु भी समा सकते हैं। जीवास्तिकाय से जीवों में मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्यायज्ञान, केवलज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंग ज्ञान, चक्षु दर्शन, अचक्षु दर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन की अनन्त पर्यायों के उपयोग की प्राप्ति होती है। पुद्गलास्तिकाय से जीवों को औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस व कार्मण शरीर, श्रोत्रेन्द्रिय आदि इन्द्रियाँ, मनोयोग, वचनयोग, काययोग और श्वासोच्छ्वास को ग्रहण करने की प्रवृत्ति होती है।[१६]

भगवतीसूत्र के बीसवें शतक में धर्मास्तिकाय आदि के अनेक अभिवचन (पर्यायवाची शब्द) दिए गए हैं, जिनसे इनका विशिष्ट स्वरूप प्रकाश में आता है। उदाहरणार्थ धर्मास्तिकाय के अभिवचन हैं- धर्म या धर्मास्तिकाय, प्राणातिपात-विरमण यावत् परिग्रह-विरमण, क्रोध-विवेक यावत् मिथ्यादर्शनशल्य-विवेक, ईर्या समिति यावत् उच्चार-प्रस्त्रवण-खेल-जल्ल-सिघाण-परिष्ठापनिका समिति, मनोगुप्ति यावत् कायगुप्ति। धर्मास्तिकाय के ये अभिवचन उसे धर्म के निकट ले आते हैं। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के अधर्म, प्राणातिपात अविरमण यावत् परिग्रह-अविरमण, क्रोध-अविवेक यावत् मिथ्यादर्शनशल्य अविवेक आदि अभिवचन अधर्मास्तिकाय को अधर्म पाप के निकट ले जाते हैं। आकाशास्तिकाय के गगन, नभ, सम, विषम आदि अनेक अभिवचन हैं। जीवास्तिकाय के अभिवचनों में जीव, प्राण, भूत, सत्त्व, चेता, आत्मा आदि के साथ पुद्गल को भी लिया गया है, जो यह सिद्ध करता है कि पुद्गल शब्द का प्रयोग प्राचीन काल में जीव के लिए भी होता रहा है। पुद्गलास्तिकाय के अनेक अभिवचन हैं, यथा-पुद्गल, परमाणु-पुद्गल, द्विप्रदेशी यावत् संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी, अनन्त प्रदेशी आदि।[१७]

काल की द्रव्यता

पंचास्तिकाय के अतिरिक्त काल को द्रव्य मानने के संबंध में जैनाचार्यों में मतभेद रहा है। इस मतभेद का उल्लेख तत्वार्थसूत्रकार उमास्वाति ने 'कालश्चेत्येके' सूत्र के द्वारा किया है। आगम में भी दोनों प्रकार की मान्यता के बीज उपलब्ध होते हैं। उदाहरणार्थ भगवान महावीर से प्रश्न किया गया- किमिदं भंते! काले त्ति पवुच्चति? भगवन्! काल किसे कहा गया है? भगवान ने उत्तर दिया- जीवा चेव अजीवा चेव त्ति। अर्थात् जीव और अजीव कहा गया है। इसका तात्पर्य है कि काल जीव और अजीव की पर्याय ही है, भिन्न द्रव्य नहीं। यह कथन एक अपेक्षा से समीचीन है। 'लोकप्रकाश' नामक ग्रन्थ में उपाध्याय विनयविजय जी ने इस आगम वाक्य के आधार पर तर्क उपस्थित किया है कि वर्तना आदि पर्यायों को यदि द्रव्य माना गया तो अनवस्था दोष आ जायेगा। पर्यायरूप काल पृथक द्रव्य नहीं बन सकता है।[१८] आगम में क्योंकि 'अद्धासमय' के रूप में काल द्रव्य का विवेचन प्राप्त होता है, अत: लोकप्रकाश में एतदर्थ तर्क उपस्थापित करते हुए कहा है–

१. लोक में नानाविध ऋतुभेद प्राप्त होता है, उसके पीछे कोई कारण होना चाहिये और वह काल है।[१९]

२. आम्र आदि वृक्ष अन्य समस्त कारणों के उपस्थित होने पर भी फल से वंचित रहते हैं। वे नानाशक्ति से समन्वित कालद्रव्य की अपेक्षा रखते हैं।[२०]

३. वर्तमान, अतीत एवं भविष्य का नामकरण भी काल द्रव्य के विना संभव नहीं हो सकेगा तथा काल के विना पदार्थों को पृथक-पृथक नहीं जाना जा सकेगा।[२१]

४. क्षिप्र, चिर, युगपद्, मास, वर्ष, युग आदि शब्द भी काल की सिद्धि करते हैं।[२२]

५. काल को षष्ठ द्रव्य के रूप में आगम में भी निरूपित किया गया है, यथा- **कइ णं भंते! दव्वा? गोयमा। छ दव्वा पण्णत्ता, तं जहाधम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए,**

आगासत्थिकाए, पुग्गलत्थिकाए, जीवत्थिकाए, अद्धासमए य।[२३]

इस प्रकार आगम और युक्तियों से काल पृथक द्रव्य के रूप में सिद्ध है। वर्तना, परिणाम, क्रिया, परत्व और अपरत्व काल के उपकार हैं। द्रव्य का होना ही वर्तना, उसका विभिन्न पर्यायों में परिणमन, परिणाम, देशान्तर प्राप्ति आदि क्रिया, ज्येष्ठ होना परत्व तथा कनिष्ठ होना अपरत्व है। काल को परमार्थ और व्यवहार काल के रूप में दो प्रकार का प्रतिपादित किया जाता है।

जैन प्रतिपादन का वैशिष्ट्य

पंचास्तिकायात्मक या षड्द्रव्यात्मक जगत् का प्रतिपादन जैन आगम् वाङ्मय का महत्वपूर्ण प्रतिपादन है। जीव एवं पुद्गल अथवा जड़ एवं चेतन का अनुभव तो हमें होता ही है, किन्तु इनमें गति एवं स्थिति भी देखी जाती है। गति एवं स्थिति में सहायक उदासीन निमित्त के रूप में क्रमशः धर्मास्तिकाय एवं अधर्मास्तिकाय की स्वीकृति और उसका जीव एवं पुद्गल के कारण लोकव्यापित्व स्वीकार करना संगत ही प्रतीत होता है। इन सबके आश्रय हेतु आकाशास्तिकाय का प्रतिपादन अपरिहार्य था। आकाश को लोक तक सीमित न मानकर उसे अलोक में भी स्वीकार किया गया है, क्योंकि लोक के बाहर रिक्त स्थान आकाशस्वरूप ही हो सकता है। पंचास्तिकाय के साथ पर्याय परिणमन के हेतु रूप में काल को मान्यता देना भी जैन-परम्परा को आवश्यक प्रतीत हुआ। इसलिए षड् द्रव्यों की मान्यता साकार हो गई।

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि धर्मास्तिकाय एवं अधर्मास्तिकाय जैन दर्शन का अपना वैशिष्ट्य है। इनका अन्य किसी भारतीय दर्शन में निरूपण नहीं हुआ है। यद्यपि सांख्यदर्शन में मान्य प्रकृति के रजोगुण से धर्मद्रव्य का तथा तमोगुण से अधर्मद्रव्य का साम्य प्रतीत होता है, किन्तु जैन दर्शन में धर्मास्तिकाय एवं अधर्मास्तिकाय स्वतन्त्र द्रव्य हैं, जबकि सांख्य में ये प्रकृति के स्वरूप हैं। दूसरी बात यह है कि धर्म एवं अधर्म द्रव्य लोकव्यापी हैं और तीसरी बात यह है कि सत्त्वगुण, रजोगुण एवं तमोगुण मिलकर कार्य करते हैं, जबकि जैनदर्शन में ये दोनों स्वतंत्ररूपेण कार्य में सहायक बनते हैं।

आकाश को द्रव्य रूप में प्रायः सभी दर्शनों ने स्वीकार किया है, किन्तु आकाश के लोकाकाश और अलोकाकाश भेद जैनेतर दर्शनों में प्राप्त नहीं होते। न्याय, वैशेषिक, वेदान्त सांख्य, आदि दर्शनों में 'शब्द' को आकाश द्रव्य का गुण माना गया है 'शब्दगुणकमाकाशम्' जबकि जैनदर्शन में आकाश का गुण अवगाहन करना माना गया है। शब्द को तो पुद्गल द्रव्य में सम्मिलित किया गया है।

वैशेषिक दर्शन में पृथ्वी, अप्, तेजस् वायु, आकाश, काल, दिशा, आत्मा और मन को द्रव्य माना जाता है। इनमें से आकाश, काल एवं आत्मा को तो पृथक् द्रव्य के रूप में जैन दार्शनिकों ने भी अंगीकार किया है, किन्तु पृथ्वी, अप्, तेजस् एवं वायु की पृथक् द्रव्यता मानने का जैनदर्शनानुसार कोई औचित्य नहीं है, क्योंकि वे सजीव होने पर जीव द्रव्य में और निर्जीव होने पर पुद्गल द्रव्य में समाहित हो जाते हैं। दिशा कोई पृथक् द्रव्य नहीं है वह तो 'आकाश' की ही पर्याय है। मन को जैन दार्शनिकों ने पुद्गल में सम्मिलित किया है।

आगमों में पुद्गलास्तिकाय एवं जीवास्तिकाय का विस्तार से निरूपण मिलता है। पुद्गल द्रव्य में 'परमाणु' का विवेचन महत्वपूर्ण है। परमाणु पुद्गल की सबसे छोटी स्वतंत्र इकाई है। परमाणु का जैसा वर्णन आगमों में उपलब्ध होता है वह आश्चर्यजनक है। एक परमाणु दूसरे परमाणु से आकार में तुल्य होकर भी वर्ण, गंध रस एवं स्पर्श में भिन्न होता है। कोई काला, कोई नीला आदि वर्ण का होता है। कोई एक गुण काला, कोई द्विगुण काला आदि होने से भी उनमें भेद होता है।

परमाणु की अस्पृशद्गति अद्भुत है। इस गति के कारण परमाणु एक समय में लोक के एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँच सकता है।२४

जैन दर्शन के ग्रन्थों में आगे चलकर 'अस्तिकाय' के स्थान पर द्रव्य शब्द का ही प्रयोग हो गया तथा वस्तु या सत् की व्याख्या 'द्रव्यपर्यायात्मक' स्वरूप से की जाने लगी। किन्तु आगमों में अस्तिकाय एवं द्रव्य के स्वरूप में किंचित भेद रहा है।

संदर्भ

१. *चउव्हिहे लोए वियाहिते : दव्वतो लोए, खेत्तओ लोए, कालओ लोए, भावओ लोए। -इसिभासियाइं, ३१वाँ अध्ययन*

२. *गोयमा! पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा-धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोगलत्थिकाए। -व्याख्याप्रज्ञप्ति शतक २, उद्देशक १०, सूत्र १*

३. *से किं तं दव्वाणमे? दव्वणामे छव्विहे पण्णते, तंजहा-धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए,*

जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, अद्धासमए य। अनुयोगद्वार सूत्र, २१८

४. *द्रष्टव्य, व्याख्याप्रज्ञप्ति, शतक २, उद्देश्यक १०, सूत्र ७-८*

५. *णवरं पएसा अणंता भवियव्वा। -वही*

६. *वही, सूत्र २-६*

७. *अनुयोगद्वार सूत्र २१८*

८. *व्याख्याप्रज्ञप्ति, शतक, ८, उद्देशक १०, सूत्र २३-२४*

९. *स्थानांग सूत्र, स्थान ४, उद्देशक ३*

१०. *व्याख्याप्रज्ञप्ति, शतक २५, उद्देशक २*

११. *प्रज्ञापना सूत्र, पद ५, सूत्र ५००-५०३*

१२. *वही, सूत्र ५०४*

१३. *वही, सूत्र ४३८-४३९*

१४. *गइलक्खणो उ धम्मो, अहम्मो ठाणलक्खणो।*
भायणं सव्वदव्वाणं, नहं ओगाहलक्खणं।
वत्तणा लक्खणो कालो, जीवो उवओगलक्खणो।
नाणेण दंसणेण च सुहेण दुहेण य।।
सद्दंधयार उज्जोओ, पभा छायातवे इ वा।
वण्णरसगंधफासा, पुग्गलाणं तु लक्खणं।।-उत्तराध्ययन सूत्र २८.९-१२

१५. *प्रज्ञापना सूत्र, पद ३ सूत्र २७०*

१६. *व्याख्याप्रज्ञप्ति शतक १३, उद्देशक ४, सूत्र २४-२८*

१७. *व्याख्याप्रज्ञप्ति शतक २०, उद्देशक २, सूत्र ४-८*

१८. *अत्र द्रव्याभेदवर्ति-नवर्तनादिविवक्षया।*
कालोऽपि वर्तनाद्यात्मा जीवाजीवतयोदित:।
पर्यायाणां हि द्रव्यत्त्वेऽनवस्थापि प्रसज्यते।
पर्यायरूपस्तत्काल: पृथग् द्रव्यं न संभवेत।। - लोकप्रकाश, सर्ग २८, श्लोक १३ व १५

१९. *लोकप्रकाश २८.४७*

२०. *वही २८.४८*

२१. *वही २८.४९*

२२. *वही २८.५३*

२३. *लोकप्रकाश २८.५५ के पश्चात्*

२४. *व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र*

■

कंचन कांकरिया

धर्म का सही स्वरूप

उत्तराध्ययन सूत्र के आठवें 'कापिलीय' अध्ययन में एक जिज्ञासु ने पूछा कि –

अधुवे आसासयम्मि, संसारम्मि दुक्खपउराए।
किं णाम होज्ज तं कम्मयं, जेणाहं दुग्गइं ण गच्छेज्जा।।

अर्थात् इस अस्थिर, अशाश्वत और प्रचुर दु:खमय संसार में ऐसा कौन-सा कर्म है जिसके फलस्वरूप मैं दुर्गति में न जाऊँ? इस अध्ययन की १८ गाथाओं में बड़े ही सुन्दर ढंग से धर्म का स्वरूप समझाते हुए विशुद्ध प्रज्ञा वाले कपिल केवली ने कहा कि जो केवली प्ररूपित दया धर्म का पालन करते हैं, वे संसार सागर से तिर जाते हैं। इस धर्म का पालन करने वालों ने ही इस लोक-परलोक को सफल किया है और करेंगे।

कई जिज्ञासु प्रश्न करते हैं कि इस लोक और परलोक को सुखी बनाने के लिए पौषध प्रतिक्रमणादि कष्टकारी क्रियाएँ क्यों करें? भावों को शुद्ध कर लेंगे हमारी मुक्ति हो जायेगी। बंधुओं हर साधक माता मरुदेवी या भरत चक्रवर्ती जैसा नहीं बन सकता इसीलिए महामुनिश्वर भगवान महावीर ने सामायिक पौषध प्रतिक्रमणादि करने का उपदेश दिया है। प्रभु महावीर के बताये हुए सारे नियम राग द्वेष की प्रवृत्तियों को वश में करने के लिए ही हैं। जैन धर्म में साधना की जो पद्धतियाँ बतलाई गई हैं वे इतनी सुन्दर और बेजोड़ हैं कि उनके द्वारा हम शीघ्र ही अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। इन पवित्र क्रियाओं में जब तक मन जुड़ा रहेगा तब तक अपवित्र विचार मन में नहीं आएँगे, सावद्य भाषा नहीं बोली जायेगी तथा काया से भी छह काया के जीवों की रक्षा होगी। इसीलिए ज्ञानी महात्मा कहते हैं कि धार्मिक क्रियाओं को छा जाने दो जीवन के हर एक क्षण पर, एकमेक हो जाने दो शरीर की एक-एक क्रियाओं पर तो कषायों पर शालीन हो जायेगी।

धार्मिक क्रियाओं का महत्व समझ में आ जाये तो इसमें बहुत मन लगता है और एक अद्भुत अलौकिक आनंद की प्राप्ति होती है कि इन क्रियाओं के माध्यम से अनंतानंत जीवों को अभयदान प्रदान किया है जिसके फलस्वरूप कर्मों के पुंज के पुंज नष्ट हो रहे हैं। धार्मिक क्रियाओं का फल तत्काल दिखाई नहीं दे तो भी विश्वास क्रियाओं का फल तत्काल दिखाई नहीं दे तो भी विश्वास रखो उसका फल अवश्य मिलता है क्योंकि ये सर्वांगीण विकास की जड़ है। इनका स्वाध्याय आदि से सिंचन किया जाये तो इसकी शान्ति का दूसरा कोई फल तीन लोक में नहीं है।

तीर्थकरों को तीर्थकर बनाने वाली, गणधरों को गणधर बनाने वाली, आचार्यो को आचार्य बनाने वाली यह धर्म करणी ही है। अंत:करण से धार्मिक क्रियाओं को करने वाला इस लोक में भी आनंद और शांति में रमण करने के कारण सुखी होता है और परलोक में भी सुखी रहता है क्योंकि मोक्ष मार्ग पर चलने वाला रास्ते में भी कहीं विश्राम करता है तो उत्तम स्थान यानी वैमानिक में ही करता है। इसलिए हमें दया, संवर, सामायिक, पौषधादि करके हमें अपनी घड़ियों को सफल करना है। ■

डॉ० सुधा जैन
प्राध्यापक, पार्श्वनाथ विद्यापीठ

वर्तमान सन्दर्भ में महावीर की शिक्षाएँ

जिस विज्ञान के नवीन आविष्कारों को देखकर मानव प्रसन्न होता है और पूरे विश्व में अपना साम्राज्य फैलाना चाहता है, वह आविष्कार आज उसके लिए कितना कष्टदायक है, इस बात से वह अनभिज्ञ है। आज समाज में जो अशांत एवं दुःख वातावरण व्याप्त है उसके पीछे कारण नित हो रहे नवीन आविष्कार ही हैं। आज का विश्व अपनी क्रूर हिंसावृत्ति से स्वयं पीड़ित है और निरन्तर शांति, राहत, शुकुन प्राप्त करने के लिए प्रयास कर रहा है,

ऐसे समय में महावीर के बताये मार्ग पर चलना ही उसके लिए श्रेयष्कर होगा और वह हिंसा के क्रूर, संकीर्ण वातावरण से निकलकर शांति के निर्मल आकाश/गगन में निर्भय हो विचरण कर सकेगा। भगवान महावीर की ही शिक्षा में उसकी आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं नैतिक उन्नति निहित है। मनुष्य की आध्यात्मिक एवं भौतिक उन्नत्ति का सरस, सुगम्य और दृढ़ मार्ग एक ही है और वह है भगवान महावीर की अहिंसा, अचौर्य, अपरिग्रह तप एवं ब्रह्मचर्य। यही एक मात्र ऐसा मार्ग है जिस पर चलकर मानव अपनी सर्वतोमुखी उन्नति कर सकता है। एकेन्द्रिय जीवों से लेकर पंचेन्द्रिय जीवों के प्रति अहिंसा की बात जितनी सूक्ष्मता से जैन धर्म में प्रतिपादित है उतनी अन्यत्र नहीं। 'प्रश्नव्याकरणसूत्र' में अहिंसा के **सव्वभूयखेमंकरी** स्वभाव पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि वह अमृतरूपा, परब्रह्मस्वरूपा, सर्वव्यापिनी, क्षेमवती, क्षमामयी मंगलरूपा एवं सर्वभूत कल्याणकारिणी है। अहिंसा शरणदात्री है। 'उत्तराध्ययनसूत्र' में इसे दयारूपी कहा गया है। अहिंसा के निर्मल उद्देश्य से मनुष्य बिना किसी को कष्ट दिये अपनी उन्नति कर सकता है। अहिंसा कोरा उपदेश नहीं है, अपितु वह समस्त प्राणियों में चेतनता की अभिव्यक्ति है। यदि समस्त प्राणी एक-दूसरे के प्रति घातक स्थिति अपना लें तो सृष्टि ही नष्ट हो जायेगी। अहिंसा के आधार पर ही मानव समाज का अस्तित्व है। यदि कोई यह माने कि बिना हिंसा के हमारा जीवित रहना संभव नहीं है तो यह उसकी मिथ्या धारणा है। यह स्वीकार किया जा सकता है कि सूक्ष्म अहिंसा का पालन संभव नहीं है परन्तु स्थूल रूप से अहिंसा का पालन संभव है और आवश्यक भी। क्योंकि इसी से जनकल्याण संभव है। इस मार्ग की सत्यता को अनेकान्तवाद के द्वारा परखा जा सकता है। अनेकांत को परिभाषित करते हुए कहा गया है– **'एकवस्तुनि वस्तुत्व निष्पादक परस्पर विरुद्ध शक्तिद्वय प्रकाशनमनेकान्तः।** अनेकान्त जिस उद्देश्य की समझ (Understanding) पैदा करता है, स्याद्वाद उसी तत्व की अभिव्यक्ति (Expression) में सहायक है।

भगवान महावीर के अचौर्य और अपरिग्रह के उपदेश से ही संसार में क्लान्त प्राणियों का निस्तार हो सकेगा। साम्राज्यवाद और पूँजीवाद ने तो मनुष्य को बद से बदतर अर्थात् जानवरों से भी अधिक पतित, क्रूर, दरिद्र एवं नारकीय बना दिया है। मानव की इसी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप आज परिवर्तन की आवश्यकता है। यदि परिवर्तन नही होता है तो परिणाम की कल्पना से ही कम्पन शुरु हो जाता है। ऐसे समय में मानव को कोई त्राण दे सकता है तो वह है भगवान महावीर का अचौर्य एवं अपरिग्रह का सिद्धान्त। अन्यथा मानव का अस्तित्व ही संदेहास्पद हो जायेगा। भगवान महावीर के द्वारा महाव्रत और अणुव्रत के रूप में प्रतिपादित अपरिग्रह का सिद्धान्त सर्वव्यापक, सार्वकालिक एवं सार्वेशिक सत्य है। परिग्रह सर्वत्र दुःख का मूल माना गया है। इसलिए 'आचारांगसूत्र' में कहा गया है– **'परिग्गहाओ अप्पाणं अवसक्केज्जा'** अर्थात् परिग्रह से अपेन को दूर रखें, क्योंकि यह शांति एवं समता को भंग कर अशंति एवं विषमता उत्पन्न कर देता है। 'सूत्रकृतांगसूत्र' में वर्णित है कि अपरिग्रह व्रत से अर्थात् मूर्च्छा के अभाव से, आसक्ति के अभाव से व्यक्ति दुःखों से मुक्त होता है। 'ठाणं' में तो परिग्रह को नरक का द्वार तथा अपरिग्रह को मुक्ति का द्वार कहा गया है। आचार्य तुलसी ने **'ममत्वविसर्जनं अपरिग्रहः'** ममत्व के

विसर्जन को अपरिग्रह व्रत कहा है। इस व्रत को ग्रहण करने से जीवन में सादगी, मितव्ययिता और शांति का अवतरण होता है।

भगवान महावीर ने केवल भौतिक स्तर को ही ऊँचा करने का मार्ग नहीं बताया है, अपितु यह कहा है कि व्यक्ति का आभ्यंतरिक तप, स्वावलम्बन और स्व-पुरुषार्थ से बन्धन मुक्त होना भी है। प्रत्येक प्राणी स्वतंत्र है। कोई परतन्त्र नहीं है। सभी को अपनी उन्नति एवं मुक्ति का प्रयास स्वयं ही करना होगा। कोई किसी को मुक्त नहीं कर सकता है। अपने द्वारा किये गये कार्य का परिणाम स्वयं को ही भोगना होता है। मुक्ति प्राप्त करने के लिए शुद्ध भावना, ज्ञान, अहिंसा एवं सत्य ही पर्याप्त है, व्यर्थ का कायक्लेश करने से कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। उमास्वाति ने 'तत्त्वार्थसूत्र' में मोक्षमार्ग का निरूपण करते हुए कहा है– **सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणिमोक्षमार्गः।**

भगवान महावीर ने प्रत्येक जाति एवं वर्गों में समानता का उपदेश दिया है। उन्होंने कहा भी है कि उच्चवंश या कुल में जनम लेने से कोई बड़ा नहीं होता है, अपितु ऊँचे कर्मो से ही वह उच्च बनता है। किसी जाति या धर्म विशेष में जन्म लेने से मुक्ति नहीं होती है। प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्म से चाहे किसी भी धर्म का क्यों न हो मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। सभी प्राणियों में चेतना समान होती है। कोई भी जन्म से पतित या श्रेष्ठ नहीं हो सकता। हरिजन भी अपनी उन्नति उतनी ही कर सकता है जितना की एक राजा। 'उत्तराध्ययनसूत्र' में तो कहा भी गया है-

कम्मुणा बम्भणो होइ, कम्मुण होइ खत्तिओ।
वइस्से कम्मुणा होइ, सुद्धो हवइ कम्मुणा।।२५/३३

अर्थात् कर्म से ब्राह्मण होता है, कर्म से क्षत्रिय होता है, कर्म से वैश्य होता है और कर्म से ही शूद्र होता है। सभी समान एवं स्वतंत्र है। आज के मानव में समानता, स्वतंत्रता एवं विश्वबन्धुत्व कहाँ है? जैन दर्शन में यह पूर्ण रूप से स्वीकृत है। इन भावनाओं को जागृत करके ही मानव का कल्याण किया जा सकता है। जैन दर्शन के यथार्थवाद, अनेकान्तवाद, अपरिग्रहवाद, अहिंसा, अचौर्यव्रत आदि के द्वारा आध्यात्मिक उन्नति संभव है। आध्यात्मिक उन्नति के बाद भारत का ही नहीं सम्पूर्ण विश्व का कल्याण संभव है। संसार में जितने भी महापुरुष जन्म लेते हैं वे सभी प्राणी जगत का उद्धार करने के लिए संसार को अपना संदेश अवश्य देते हैं। 'स्थानांगसूत्र' (८/१११) में भगवान महावीर ने भी जन-जन के कल्याण के लिए आठ सन्देश दिये हैं- जो धर्मशास्त्र नहीं सुना उसे सुनो, जो सुना उसे याद रखो, नवीन कर्मो को रोको, पूर्वकृत कर्मो का नाश करो, जिसका कोई नहीं तुम उसके बनो, अशिक्षितों को शिक्षित करो, रोगियों की ग्लानि रहित होकर सेवा करो, निष्पक्ष होकर क्लेश मिटाओ।

महावीर ने षट्जीवनिकाय अर्थात् जीवों के छः वर्गो का उपदेश दिया है जो जीवों के प्रति दया या करुणा के भाव को दर्शाता है। आत्मौपत्य का उपदेश उन्होंने इसलिए दिया कि जिस प्रकार हमें दुःख अप्रिय है और हम केवल सुख चाहते हैं उसी प्रकार किसी भी जीव को दुःख प्रिय नहीं है, वे भी सुख की कामना करते हैं। अतः किसी को किसी प्रकार की पीड़ा या दुःख नहीं देना चाहिए। इसलिए अहिंसा का मार्ग उन्होंने सर्वोपरि बताया। जैन आचार में श्रमण एवं गृहस्थ दोनों के लिए अलग-अलग विधान किये गये हैं। श्रमण को पूर्ण आचार का तथा गृहस्थ को आंशिक आचार के पालन का विधान है। जितना आवश्यक हो उतना करें अन्यथा उसका त्याग कर दें।

प्राचीन भारत के धार्मिक इतिहास में भगवान महावीर प्रबल और सफल क्रान्तिकारी के रूप में उपस्थित होते हैं। उनकी धर्मक्रान्ति से भारतीय धर्मो के इतिहास का नवीन अध्याय प्रारम्भ होता है। वे तत्कालीन धर्मो का कायाकल्प करने वाले और उन्हें नवजीवन प्रदान करने वाले युग निर्माता महापुरुष हुए। विश्व में अहिंसा की प्रतिष्ठा का सर्वाधिक श्रेय इन्हीं महामानव महावीर को है। सचमुच भगवान महावीर मानव जाति के महान् त्राता के रूप में अवतरित हुए।

भगवान महावीर की अहिंसा प्रधान उपदेश-प्रणाली ने आचार और व्यवहार में अहिंसा की पुनः प्रतिष्ठा की। उन्होंने अपने संघ में नारी को भी पुरूष के समान अधिकार देकर स्त्री स्वातन्त्र्य की प्रतिष्ठा की और उसे महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया। तप और संयम का महत्व है, जाति की कोई महत्ता नहीं है, यह कहकर चाण्डाल पुत्र हरिकेशी को भी मुनि संघ में स्थान दिया और उसे ब्राह्मणों के यज्ञ वाड़े में भेजकर पूजनीय बना दिया।

युगपुरुष महात्मा गांधी ने जिन-जिन साधनों के सहारे विश्व को आश्चर्यचकित किया उनका मूल जैनधर्म में ही था। अहिंसा और सत्य का सिद्धान्त, अस्पृश्यता निवारण का सिद्धान्त, नारी जागरण, सामाजिक साम्य, ग्राम्यजनों का सुधार आदि कार्यों के लिए गांधी जी ने भगवान महावीर के सिद्धान्तों से प्रेरणा प्राप्त की थी। महात्मा गांधी की शिक्षाओं का उद्गम भगवान महावीर की शिक्षाओं में है। महावीर ने जिस-जिस क्षेत्र में प्रवेश किया उसमें सफलता प्राप्त की। उनका सबसे प्रधान कार्य था हिंसा का विरोध। उस दिशा में उन्हें जो सफलता मिली वह इसी बात से प्रकट होती है कि अब हिंसक यज्ञों की प्रथा प्रायः लुप्त-सी हो गई है। भगवान महावीर में उपदेश प्रदान करने की जैसी अनुपम कुशलता थी, वैसी ही अपने अनुयायियों की व्यवस्था करने की अद्वितीय क्षमता भी थी। भगवान के द्वारा अपने संघ की जैसी व्यवस्था की गई है, वैसी इतिहास के पन्नों

में अन्यत्र कहीं दृष्टिगोचर नहीं होती। अपने संघ में त्यागियों और गृहस्थों के पृथक-पृथक नियमों और उनके पारस्परिक सम्बन्ध के विधि-विधानों के द्वारा भगवान महावीर ने अपने संघ को ऐसा शृंखला बद्ध किया है जो कभी छिन्न-भिन्न नहीं हो सकता। संघ व्यवस्था की इस महान शक्ति के कारण ही जैन धर्म अनेक संकट-कालों में से गुजरने पर भी सुरक्षित और सुव्यवस्थित रह सका है।

इस तरह विचार में अनेकांत दर्शन, आचार में अहिंसा, समाज रचना के लिए अचौर्य और अपरिग्रह तथा इन सबके लिए सत्य की निष्ठा और जीवन शुद्धि के लिए ब्रह्मचर्य यानी इन्द्रिय विजय आदि धर्मतीर्थ का प्रवर्तन महावीर ने किया।

आई.टी.आई. मार्ग, करौदी, वाराणसी

■

दुर्गाप्रसाद जोशी

प्रणति समर्पित

'स्थानक वासी जैन सभा' में गुरु प्रेमामृत झरता है।
महावीर का मुक्ति मंत्र प्राणों में मस्ती भरता है।।
यह 'सेवा साधना' का आसव पीने वाले ही पीते हैं।
'श्वेताम्बर' सा जाग्रत जीवन जीने वाले ही जीते हैं।।

'विविध जैन विद्यालयों' ने, शिक्षा में अलख जगाई है।
'श्री हरखचन्द कांकरिया' ने इसमें बहु ख्याति पाई है।।
'दुग्गड़' सिंघवी अरु 'कोचर' ने 'करुणा खूब लुटाई है।
पाठ्य-पुस्तकें पा-पा कर, छात्रों ने कीर्ति गाई है।।

जिन:लोक के महाकाश में, ये सब दानी छाये।
'पंच महाव्रत' की ज्योति में, स्नान कराने आये।
बन 'अनन्त की अनुकम्पा' ये जिन शासन को लाये।
'स्थानकवासी जैन सभा को धन्य बनाने धाये।।

'श्री जैन हॉस्पिटल के स्थापन ने, पीड़ित को सरसाया है।
'करुणाकर की करुणा' ने मानव का मान बढ़ाया है।
विकलांगों की सेवाओं में, दया-भाव दरसाया है।
दृष्टि हीन के संबल बनकर, सम्यक् रूप दिखाया है।।

आध्यात्मिक उत्थान किया है, वीतराग वैराग्य धरा पर।
उपकारी बन 'जैन-सभा' ने कर्ज चढ़ाया जन्म जरा पर।।
कृतज्ञता के भाव-सुमन ये 'महावीर मय मन' को अर्पित।
सेवा-भावी दान-प्रदाता, तुम को मेरी, प्रणति समर्पित।।

नित्यानन्द निकेतन, निम्बाहेडा (राज)

■

डॉ० इंदरराज बैद

जैन धर्म में नारी

मानव समाज के दो महत्वपूर्ण अंग है नर और नारी। दोनों मिलकर मानवीय व्यक्तित्व को पूर्णांग बनाते हैं। नर के बिना नारी का और नारी के बिना नर का अस्तित्व अपूर्ण और निरर्थक है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। परिवार रूपी रथ के पहिए होते हैं स्त्री और पुरुष, दोनों ही समान, सुदृढ़ और गतिमान। दोनों ही सृष्टि की सुन्दर कलाकृतियाँ हैं, श्री, धी, शक्ति और चिति से संम्पन्न इन मानवीय चरित्रों को विकास के समस्त उपादान प्रकृति ने समान रूप से उपलब्ध कराये हैं। नयूनाधिक मात्रा में पौरुष और सौष्ठव दोनों को प्रदान किये गये हैं। दोनों में ही समान रागात्मकता है,संवेदना और करुणा है, उच्चाशयता और मानवीयता है। दैहिक विशेषताएँ भिन्न होने पर भी आत्मिक धरातल पर स्त्री और पुरुष में विभेद नहीं होता। चारों गतियों के प्राणियों के संबंध में स्पष्ट उद्घोष है **एगे आया** अर्थात् आत्मा एक है (समवायांग १/१) नर-नारी की समानता का यह स्वर सभी धर्मो में प्रतिध्वनित हुआ है। धर्म ही नहीं, संसार का प्रत्येक सभ्य और प्रवुद्ध समाज स्त्री पुरुष को बराबरी का स्तर देता है। धर्म तो आत्मिक विकास की समस्त सरणियाँ स्त्री-पुरुषों के लिए खोल देता है। उपासना यदि मार्ग है और मुक्ति यदि उसका फल है तो कोई भी धर्म उसकी प्राप्ति से न पुरुष को वंचित करता है, न नारी को। धर्म में पक्षपात और अन्याय नहीं होता।

जैन धर्म भारतवर्ष का अतिप्राचीन धर्म है। जैन शब्द के मूल में 'जिन' है, जिसका अर्थ है पंच इंद्रियों को जीतनेवाला और राग-द्वेष विजेता। जिन या जिनेन्द्र प्रवर्तित होने के कारण धर्म का जैन अभिधान प्रचलित हुआ। इस धर्म के अनुसार प्रत्येक आत्मा ईश्वर या परमात्मा स्वरूप होती है। परमात्मा आत्मा की सिद्धावस्था को कहते हैं। आत्मा जब कर्मों के आच्छादन को विदीर्ण करके अनावृत और निर्बध हो जाती है तो पूर्ण रूपेण परमात्मा बन जाती है। इसी परमात्मा स्वरूप को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक जीवात्मा जन्म-जन्म में अनेक प्रकार से साधना करती है। शनैः शनैः कर्मों का क्षय होने लगता है और ईश्वरत्व प्रकट हो जाता है। यह आत्मा कभी नारकीय गति में जाती है तो कभी तिर्यंच गति में, कभी देवता बनती है तो कभी मनुष्य। मानवीय रूप कभी पुरुष का भी हो सकता है और कभी स्त्री का भी। स्वयं को विमुक्त करने में नारीत्व वाधक नहीं होता। जैन धर्म कहता है कि यदि पुरुष साधना करते हुए मोक्ष जा सकता है तो स्त्री भी अधिकारिणी बन सकती है। असंख्य अणगारी और सागारी साधिकाएँ भवचक्र से विमुक्त होकर सिद्ध हुई हैं। और भविष्य में भी होती रहेंगी। तीर्थंकरत्व प्राप्त करने की पात्रता पुरुषों की तरह स्त्रियें में भी स्वीकार की गई है।

जैन धर्म में चौबीस तीर्थंकरों को परम संपूज्य माना गया है। धर्म-तीर्थ के प्रवर्तक को तीर्थंकर कहते हैं। रत्नत्रय अर्थात् सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र्य की अनुपालना करता हुआ कोई भी साधक अर्हत् अवस्था तक पहुँच सकता है और अपना आयुष्य कर्म पूरा करके सिद्धत्व पा लेता है। पर सभी सिद्ध आत्माएँ तीर्थंकर नहीं होती। केवल वे आत्माएँ ही तीर्थंकर पद प्राप्त करती हैं जो अर्हत् स्थिति में पहुँचने के वाद उपदेष्टा बनकर लोककल्याण के लिए प्रेरणा देती हैं, धर्म-शासन का सूत्रपात करती हैं और भवसिंधु से पार उतरने के लिए धर्म-तीर्थ की उपस्थापना करती हैं। जैन मान्यता के अनुसार वर्तमान कल्प में चौवीस तीर्थंकर हुए हैं। भगवान ऋषभदेव प्रथम और भगवान महावीर अंतिम तीर्थंकर हैं। बीच के वाईस तीर्थंकर सहस्त्रों वर्षो के अंतराल में हुए हैं। इन तीर्थकरों में एक महिमामयी नारी रत्न भी है, जो मल्लीनाथ के रूप में प्रतिष्ठित है। मिथिला के महाराजा कुंभ और महारानी प्रभावती की पुत्री राजकुमारी मल्ली का अपने पूर्व जन्मों के संपूर्ण कर्मो का अंत करके महाभिनिष्क्रमण करना और परम आराधनीय तीर्थंकर पद प्राप्त करना इसी वात का प्रमाण है कि नारी भी आध्यात्मिक साधना के सर्वोच्च शिखर का आरोहण कर सकती है। पुरुपार्थ पर केवल पुरुप का ही नहीं, स्त्री का भी समान अधिकार होता है।

जैन परंपरा में असंख्य नारियों ने कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्त किया है। प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव जो आदिनाथ के रूप में पूजे जाते हैं, की माता मरुदेवी सिद्धत्व को पानेवाली पहली सन्नारी थी। नाभिराय और मरुदेवी पावन दंपति थे, जिनकी दिव्य संतति थे ऋषभदेव। इनके दो पुत्र भरत और वाहुवली तथा दो पुत्रियाँ ब्राह्मी और सुन्दरी क्रमश: सुमंगला और सुनंदा की कुक्षी से उत्पन्न हुए थे। कहते हैं अक्षरों का प्रवर्तन ब्राह्मी ने किया था और अंकों का सुंदरी ने। इन दोनों बहिनों ने अपने भाई बाहुवली को प्रबोधन देकर अहंकार से छुटकारा दिलाया था जिससे वे मुक्ति का वरण कर सके। यथा:

आज्ञापयाति तातस्त्वां ज्येष्ठार्य भगवनिदम् ।
हस्ती स्कन्धा रूढानां केवलं न उपद्यते।।

अर्थात् हे ज्येष्ठ आर्य! भगवान का उपदेश है कि हाथी पर बैठे साधक को कैवल्य की प्राप्ति नही होती। बाहुवली ने मन में विचार किया कि वे अहंकार रूपी हाथी पर ही तो आरूढ़ हैं। क्षण भर में गर्व चूर-चूर हो गया और पश्चाताप के साथ निर्मल विनय भाव के उदित होते ही मुक्ति श्री ने जयमाला उनके गले में डाल दी। इस प्रकार ब्राह्मी और सुन्दरी ने केवल स्वयं का ही नहीं, अपने भाई का भी आत्मोद्धार कर दिया।

अस्तु, जैन धर्म में नारियों को सदैव सम्मान की दृष्टि से देखा गया है। उद्वोध न देकर पुरुषों को सुधारने और उन्हें सन्मार्ग की ओर प्रवृत्त करने वाली सन्नारियों के सैकड़ों दृष्टांत इतिहास में उजागर हुए हैं। एक ऐसा ही प्रेरक उदाहरण है सती राजीमती का। महाभारत काल में श्रीकृष्ण के चचेरे भाई थे अरिष्टनेमि। वे वसुदेव भ्राता शौरिपुर के राजा समुद्रविजय और महारानी शिवा देवी के पुत्र थे। उनका विवाह महाराज उग्रसेन की पुत्री राजुल के साथ निश्चित किया गया। अरिष्ट नेमि की वारात जव नगर के समीप पहुँचती तो पशु-पक्षियों का आर्त्तनाद सुनाई दिया। यह पता चलने पर कि वारात के सत्कार व भोज की व्यवस्था के लिए सामिष आहार हेतु पशु-पक्षियों का वध किया जायेगा। अरिष्टनेमि का हदय काँप उठा और वे दूल्हे के वेश को तत्क्षण उतारकर अरण्य की ओर प्रस्थान कर गये। विवाह-मंडप में सन्नाटा छा गया। वधू राजकुमारी राजुल को जव अरिष्ट नेमि के निष्क्रमण का पता चला, तो वे भी उनका अनुसरण करती हुई गिरनार पर्वत पर साधना के लिए चली गई। अरिष्ट नेमि के छोटे भाई ने भी साधना स्वीकार कर ली। उसका नाम था रथनेमि। एक वार वर्षा में भीगकर साधिका राजीमती एक कंदरा में जाकर अपने गीले वस्त्रों को एकांत में सुखा रही थी कि रथनेमि की दृष्टि उस पर पड़ गई। मोहित और कामांध रथ नेमि के अभद्र प्रस्ताव को सुनकर उसे प्रताड़ित करती हुई राजुल कहती है।

पक्खंदेजलियं जोइं धूमकेउं दुरासयं।
णेच्छंति वन्तयं भोत्तुं कुले जाया अगन्धणे।
धिरत्थु तेडजसो कामी जो तं जीविय कारणा।
वन्तं इच्छासि आवेउं सेयं ते मरणं भवे।

(उत्तराध्ययन २२/४२-४३)

अर्थात् अगंधन कुल का सर्प आग में जल कर मर जाना पसंद करेगा, पर वमन किये हुए विष को पीना कभी नहीं चाहेगा, हे कामी, तू वमन की हुई चीज को पीना चाहता है, इससे तो तेरा मर जाना ही अच्छा है। कितनी तीव्र व्यंजना थी। जिसे भ्राता अरिष्ट नेमि त्याग चुके थे। उसे भोगने की इच्छा करना की हुई उल्टी को निगलना ही तो था। रथनेमि की आँखें खुल गई। ऐसी ही फटकार तुलसीदास जी को रत्नावली ने भी लगाई थी। उत्तराध्ययन सूत्र, जिसमें तीर्थंकर महावीर के वचन संगृहीत हैं, यह प्रसंग उल्लिखित है। इसे यहाँ उद्धृत करने का ध्येय यह दर्शाना है कि जैन संस्कृति में नारी के शील और सतीत्व को बहुत महत्व दिया गया है।

सतीतत्व अर्थात् चारित्रिक शुद्धता में नारी की महीयता मानी जाती थी। जैन जगत में सती उन नारियों को कहा जाता है जो अपने शील की रक्षा, धर्म के पालन और संयम साधना में अडिग रहकर अपनी आत्मा का उद्धार करती है। जैन-इतिहास में सोलह सतियाँ नित्य वंदनीय मानी गई हैं। उनसे प्रार्थना की जाती है कि वे मानव जाति का मंगल करें। यथा :

ब्राह्मी चंदनबालिका भगवती राजीमती द्रौपदी।
कौशल्याच मृगावती च सुलसा सीता सुभद्रा शिवा।
कुन्ती शीलावती नलस्य दायिता चूला प्रभावत्यपि।
पद्मावत्यपि सुन्दरी दिनमुखेकुर्वन्तु नो मङ्गलम् ।।

जैन दृष्टि अनेकांतवादी और उदार रही है। ऐसे अनेक दृष्टांत मिलते हैं जहँ एक ही छत के नीचे रहनेवाले पति पत्नी, सास-बहू आदि परिजन धार्मिक दृष्टि से स्वयं को स्वतंत्र अनुभव करते थे। महावीर और बुद्ध समकालीन थे। एक ही परिवार में दोनों के अनुयायी प्रेम से रहते थे। कालांतर में यह व्यवस्था छिन्न-भिन्न अवश्य हो गई पर तत्कालीन धार्मिक सहजीवन से पता चलता है कि महिलाओं को अपने-अपने भावों के अनुरूप उपासना करने की स्वतंत्रता थी। इससे नारी के प्रति उदार दृष्टिकोण का पता चलता है। आधुनिक समय में भी कई जैन परिवारों में उपासना की स्वतंत्रता देखी जा सकती है।

जैन-परंपरा नारियों के समान अधिकारों के प्रति आरंभ से ही पार्यप्त जागरूक रही है। भगवान महावीर ने अपने अनुयायी समाज को चार भागों में बाँटा था—साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका। यह वर्गीकरण जो श्रमण संस्कृति की विशिष्ट देन है, समानता के आदर्श को संस्थागत रूप देता है। इन चारों वर्गो को तीर्थ की संज्ञा दी गई है। चारों तीर्थों को एक-दूसरे का सम्मान करने और उनके हित साधना में सचेष्ट रहने का विधान किया गया। वर्धमान महावीर के समय जैन संघ में लगभग चौदह हज़ार साधु या श्रमण और लगभग छत्तीस हजार साध्वियाँ या श्रमणियाँ थी। श्रावकों की संख्या लगभग एक लाख उनसठ हजार और श्राविकाओं की संख्या लगभग तीन लाख अठारह हजार थी। इससे पता चलता है कि धर्म के अनुपालन में महिलाओं का प्रभाव पुरूषों की अपेक्षा अधिक था। जैन धर्म में स्त्रियों की प्रशंसनीय भूमिका रही है। गृह स्वामिनी के रूप में तो वे आदरणीय थीं ही पर साध्वी जीवन अपनाने के बाद तो वे अधिक पूजनीया बन जाती थी। महावीर ने घोषित किया था कि प्रत्येक देहात्मा स्वतंत्र है और उसे मुक्त होकर परमात्मा बनने का अधिकार है। नारी होने के कारण उसे मुक्ति के मौलिक अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता, अतीत का यह उदार दृष्टिकोण आज भी आंशिक रूप में समाज में व्याप्त है।

धर्म का एक प्रमुख अंग है तपश्चरण। कहा भी गया है—'धम्मो मङ्गलमुकिट्ठम अहिंसा संजमोतवो'' वर्त्तमान काल में भी धर्म महिमामयी माताओं और बहिनों की तप-साधना के कारण जीवित और स्वस्थ है। इसे धर्म का पर्याय मानकर महिलाओं ने अपनाया है। प्रतिवर्ष आठ दिनों के उपवास की तपस्या, जिसे अट्ठाई कहते हैं, घर-घर में संपन्न की जाती है। छोटी अवस्था में ही जैन बालिकाएँ अपने कर्मों को तपाग्नि में भस्मीभूत करने की चेष्टा आरंभ कर देती है। तप इंद्रियों के विषयों पर अंकुश लगाने का दूसरा नाम है। आत्म-नियंत्रण का यह अद्भुत पराक्रम है। व्यावहारिक धरातल पर जैन धर्म ने अहिंसा के बाद जिस तत्व पर सर्वाधिक बल दिया, वह तपस्या ही है। यह संतोष और गौरव की बात है कि जैन बालिकाएँ और महिलाएँ तप के धर्म तत्व को जीवन में उतारने का बेजोड़ उत्साह और साहस दिखा रही हैं। धार्मिक परिप्रेक्ष्य में यह एक शुभ लक्षण है।

नारायण अपार्टमेन्ट, चेन्नई

■

शिक्षक दिवस

'शिक्षक' कब सामान्य व्यक्ति है, वह तो शिल्पकार होता है।
गीली मिट्टी को सँवारने वाला कुंभकार होता है।।

उसने ही श्रीराम गढ़े हैं, वह ही है श्रीकृष्ण निर्माता।
वह ही समर्थ रामदास है, छत्रपति सा शिवा प्रदाता।

दयानंद, विवेकानंद को उसका शिल्प सँवार देता है।।
वह साँचा होता है जिसमें, महामानव ढाले जाते हैं।
और राष्ट्र के नररत्नों के सुखद स्वप्न पाले जाते हैं।
छात्रों में मानव मूल्यों का वह ही प्रवेश द्वार होता है।।

उसके चिंतन पर, चरित्र पर सम्राटों के सिर झुकते हैं।
धर्म, समाज, राष्ट्र के उलझे प्रश्नों के उत्तर मिलते हैं।
श्रेष्ठ राष्ट्र-निर्माता होता, वह ऋषितुल्य विचार होता है।।

लेकिन उसके शिल्पकार को, जाने क्या हो गया इन दिनों।
उसका चिंतक और मनीषी जाने क्यों सो गया इन दिनों।
उसके गौरव पर, गरिमा पर आए दिन प्रहार होता है।।

वह व्यसनों का दास हो गया, और अर्थ ही लक्ष्य बनाया।
आचारों से शिक्षण देने का आचार्य नहीं रह पाया।
शिक्षक दूषित राजनीति का आए दिन शिकार होता है।।

छात्र कहाँ सम्मान करेंगे, उनसे यारी गाँठ रहा है।
अभिभावक आदर क्या देंगे, स्वार्थसिद्धि का दास रहा है।
शिक्षक 'शिक्षक-दिवस' मनाए, यह उल्टा व्यवहार होता है।।

'शिक्षक-दिवस' तभी सार्थक है, शिक्षक अपना मूल्य बढ़ाए।
जनमानस भी श्रद्धानत हो उसके प्रति आभार जताए।
शिक्षक श्रद्धापात्र जहाँ है, वहाँ राष्ट्र निखार होता है।।

सौजन्य : अखंड ज्योति

■

गौतम पारख

सेवा-संस्कार और हमारा दायित्व

उन्नत संस्कार जीवन की अमूल्य निधि होती है। जीवन-यात्रा में गर्भावस्था में वाल्यावस्था फिर यौवन और उसके पश्चात् वृद्धावस्था तक हर क्षण संस्कार हमारा मार्ग प्रशस्त करता है। विगत वर्षो में संस्कारों का जो अवमूल्यन हुआ है, वह चिन्तनीय है। अस्तु उसके परिशोधन में अब और विलम्ब किया गया तो भविष्य का प्रश्न स्वत: आ खड़ा होगा। जहां उन्नत संस्कार व्यक्ति को विपरीत परिस्थितियों में भी उसके आत्म-वल को सुदृढ़ता प्रदान कर कर्तव्य विमुख होने से बचाते हैं वही संस्कारों के प्रति दृढ़ता संबल प्रदान करते हैं। हम हताशा व निराशा के मकड़जाल को तोड़ते हुए नैतिकता की ओर अग्रसर होने की आत्मिक शक्ति को प्राप्त करते हैं। यह विडम्वना ही है कि आज जन सामान्य संस्कारों की बातों को बड़े सामान्य ढंग से लेते हैं और व्यक्तिगत जीवन में ही नहीं पारिवारिक, सामाजिक, व राष्ट्रीय जीवन क्षेत्र में भी सद्संस्कार की महत्ता को गंभीरता से नहीं ले पाते, यही चिंता का विषय है।

चिंतन की दिशा :

अच्छी वातें पढ़ने, वोलने तथा लिखने में तो अच्छी लगती हैं परन्तु उन्हें आचरण में लाना अत्यंत कठिन होता है। व्यसन मुक्त हुए विना और रचनात्मक चिंतन के अभाव में उत्तम संस्कारों की कल्पना करना भी आत्म-प्रवंचना है। जीवन मूल्यवान है, हम अपने जीवन का मूल्य समझें और उसे संस्कारवान वनायें। आत्म-वल के धनी वनें। हम स्वयं आत्म अवलोकन करें। अपने विकारों को जानें, पहचानें। विकार मुक्त हो दृढ़ प्रतिज्ञ वनें तभी हमारी छवि जनमानस में संस्कारवान सेवक के रूप में उभरेगी। हमारे प्रत्येक आचरण का प्रभाव हमारे बच्चों पर पड़ता है। सामाजिक व राष्ट्रीय संरचना की एक इकाई है परिवार, अत: परिवार समाज व राष्ट्र के चरित्र निर्माण में हमारी भी भूमिका होनी चाहिये। हम संस्कारवान समाज व राष्ट्र के निर्माण में तभी श्रेष्ठ सहभागी हो सकते हैं जब Charity begins at home के अर्थ को अपने स्वयं के जीवन में चरितार्थ करें। अपने समाज व राष्ट्र को सुस्कारों की ज्योति से प्रकाशवान करें। सर्वप्रथम हम अच्छी बातों व सुसंकल्पों को ग्रहण करना सीखें। इसके लिए भी यह आवश्यक है कि गुणी जनों व सदाचारी पुरुषों को अपना आदर्श मानें। उनके प्रति सम्मान भाव रखें। इस क्रम में मेरी भावना की ये पंक्तियां हमें यही बोध करा रही है-

गुणी जनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।।
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे।।

गुणवान लोगों को देखकर मेरे मन में उनके प्रति श्रद्धा एवं प्रेम का भाव उमड़े, उनकी यथाशक्ति सेवा करके सुख एवं आनन्द का अनुभव करूँ। अपने उपकारी के प्रति भी मेरे मन में कृतज्ञता का भाव रहे। कभी भी विद्रोह की भावना न बने। संयम और मर्यादा जीवन का सूत्र बने। सदैव दूसरों के सद्गुणों को ग्रहण करूँ तथा परदोष दर्शन से बचूं, यही मेरी अभिलाषा है।

प्रथम पाठशाला : माँ बच्चों की प्रथम पाठशाला है। माँ के ममत्व की शीतल छाया में उसका पोषण होता है। गर्भावस्था से शिशु का संस्कार व शिक्षा प्रारंभ होती है। महाभारत काल के वीर अभिमन्यु इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। वैज्ञानिकों ने भी गर्भावस्था में शिशु पर पड़ने वाले प्रभाव व संस्कारों की वातें स्वीकार की हैं। अत: गर्भवती महिलाओं को धार्मिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से विशेष हिदायतें दी जाती हैं। वचपन संस्कार भूमि है। वच्चों के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास में माँ के संपूर्ण व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ता है। चतुर मातायें एवं संस्कारवान परिवार वच्चों को शैशवस्था से ही संस्कार की शिक्षा देते हैं। बच्चों को संस्कारवान वनाने के लिए माताओं का उदरदायित्व दूसरों से अपेक्षाकृत अधिक है। वच्चों को संस्कारित करने में परिजनों में आचार-विचार-व्यवहार आदि का भी प्रभाव पड़ता है। परिवार में वड़ों के प्रति आदर भाव, दीन दुखियों के प्रति करुणा भाव, आतिथ्य सत्कार भाव तथा सवके प्रति स्नेह भाव वनाने का प्रयास हो। साथ ही परिवार में सवसे मैत्रीपूर्ण संवंध हो। सभी परस्पर मिलजुल कर रहें।

शिक्षा केन्द्र बच्चों की दूसरी पाठशाला है। बचपन के संस्कार ही आगे चलकर पुष्पित एवं पल्लवति होते हैं। एक मनोवैज्ञानिक का कहना है कि बच्चा ५ वर्ष की आयु में जो भविष्य में उसे बनना है वह बन जाता है। बाल मन में कोमल भावनाओं का सुहावना संसार होता है। यह जीवन की अनमोल अवस्था है। संस्कारों का बीजारोपण इसी अवस्था में किया जाना चाहिये।

कहा जाता है कि Well begin is half done अर्थात् अच्छी शुरुवात अच्छी सफलता का प्रतीक है। संस्कारों के क्रम में हमें ध्यान रखना होगा कि बालक परिवार का एक सम्मानित और प्यारा सदस्य है। उसके मानसिक संवेगों और शारीरिक विकास में हमारा उसे पूरा सकारात्मक सहयोग मिलना अति आवश्यक है। बाल्यावस्था से किशोरावस्था तक उसके विकास का पथ हमें प्रशस्त करना है। उसकी भावनाओं, विचारों तथा प्रयत्नों में सद्संस्कारों का समावेश करने से उसका व्यक्तित्व इसी अवस्था से निखरने लगेगा। संस्कारित परिवार में ही संस्कारवान बच्चों का सर्वांगीण विकास होता है। घर को मन्दिर कहा गया है। हम भी वैसी ही स्थिति अपने परिवार में बनायें जिससे घर मन्दिर और स्वर्ग लगे। जब देश की व्यवस्था एवं संचालन के सूत्र तथा सामाजिक व्यवस्था संस्कारवान लोगों के हाथों में होगी तो हम गर्व के साथ नया परिवर्तन देख सकेंगे।

व्यसन मुक्ति की ओर : व्यसनों से मुक्त जीवन का अनंद ही अनूठा है। जीवन सरल एवं सहज हो जाता है। सरल जीवन में ही प्राणी मात्र के साथ मैत्री भाव का अंकुर अंत:करण में प्रस्फुटित होता है, सेवा भावना बलवती होती है। यही संस्कारित व्यक्ति का परिचायक है। मेरी भावना की निम्न पंक्तियों में छिपा है यही भाव–

मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे,
दीन-दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्त्रोत बहे।
दुर्जन, क्रूर, कुमार्ग-रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्य भाव रक्खूं मैं उनपर, ऐसी परिणति हो जावे।।

अर्थात् निश्छल हृदय से ही करुणा का स्त्रोत नि:सृत होता है जिससे समस्त जगत के प्रति मैत्री एवं समता भाव का उद्भव होता है। जिससे पर पीड़ा की अनुभूति होती है और हम पर परोपकार के लिए प्रवृत होते हैं। अन्य जीवों को भी अपनी आत्मा के तुल्य समझना चाहिये। मन में अपकारी के प्रति भी दुर्भावना न हो यही साम्य भाव है।

संस्कार के प्रथम चरण में ही यदि हमने उपरोक्त तथ्यों को जीवन में आत्मसात् कर लिया तो व्यसन का अध्याय ही समाप्त हो जाता है। आजकल हम वैचारिक एवं चारित्रिक संक्रमण के काल से गुजर रहे हैं। आचार-विचार एवं कर्म के प्रदूषण से व्यक्ति विविध दुर्व्यसनों में उलझकर रह गया है। उसकी निर्माणकारी जीवन ऊर्जा भटक गई है।

उसकी फैशनपरस्ती कथित पाश्चात्य सभ्यता का अंधानुकरण, प्रचार माध्यमों द्वारा नशा व मांसाहार को प्रोत्साहन, होटल संस्कृति, गलत दोस्ती आदि ने पूरे संस्कार व नैतिक मूल्यों को ढ़क रखा है। चारों ओर व्यसन पीड़ित जन मानस दीख रहा है। ऐसी स्थिति में नैतिक/चारित्रिक मूल्यों को सुरक्षित बनाये रखना एक बड़ी चुनौती है। उसके लिए जीवन की प्रारंभिक आवश्यकता है दुर्व्यसनों को त्याग करने की। निम्न व्यसनों को जीवन से दूर करें -

१. जुआ सट्टा खेलने का त्याग। २. मांस-भक्षण का त्याग ३. मदिरापान, धूमपान का त्याग। ३. पर स्त्रीगमन का त्याग। ५. शिकार खेलने का त्याग। ६. चोरी करने का त्याग। ७. वैश्यागमन का त्याग।

जीवन में नैतिकता एवं सात्विकता के लिए व्यसन मुक्त होना पहली शर्त है। व्यसन मुक्ति ही संस्कार युक्त जीवन का पर्याय है। संस्कार जागरण एवं नये समाज के निर्माण के लिए व्यसन मुक्ति अनिवार्य है।

औरों के हित जो रोता है, औरों के हित जो हँसता ह /
उसका हर आँसू रामायण, प्रत्येक कर्म ही गीता है।

सेवा का पथ – संस्कार का एक पहलु व्यसन मुक्ति है तो दूसरा पहलु सेवा है। सेवा को ईश्वर तक पहुंचने का सबसे सरल मार्ग माना गया है। दीन-दुखी, पीड़ितों, अनाथों, विकलांगों एवं अभावग्रस्त लोगों की सेवा का शुभ संकल्प ही संस्कार की सच्ची कसौटी है। विशेषकर अपंग, अनाथ की सेवा तो ईश्वर सेवा के समान है। हमारे आस-पास कितने ही दु:ख अभाव व बीमारी से ग्रस्त हैं जिन्हें सेवा, सहारा व सहयोग की आवश्यकता होती है। विकलांगता से तात्पर्य है कि इंद्रियों की प्राप्ति तो है लेकिन इंद्रियों से जुड़े बल, प्राण या तो निष्क्रिय हो गये हैं या शिथिल हो गये हैं। मानव शरीर पाकर भी जो विकलांगता के शिकार हैं, अपंगता के अभिशाप से ग्रस्त हैं ऐसे लोगों को मानसिक संबल, शारीरिक सहयोग और आर्थिक सहायता मुहैया कराना ही मानवता की पूजा है। मानव सेवा वस्तुत: सेवा का श्रेष्ठतम पहलू है। यहाँ पर स्वामी विवेकानंद का वक्तव्य उद्धृत कर रहा हूँ-

''यदि अपने अंतस की बात सुनें तो सर्वप्रथम हमे अपने हृदय रूपी कमरे के दरवाजे एवं खिड़कियाँ खुली रखनी होगी। हमारे घर व बस्ती के पास कितने अभावग्रस्त व दु:खी लोग रहते हैं, उनकी यथासाध्य सेवा करनी होगी। जो पीड़ित हैं, उनके लिए औषधि व पथ्य प्रबंध तथा शरीर के द्वारा उनकी सेवा सुश्रूषा करनी होगी। जो अज्ञानी है, अंधकार में है उन्हें अपनी वाणी एवं कर्म के द्वारा समझाना होगा। यदि हम इस प्रकार अपने दु:खी भाई-बहनों की सेवा करें तो मन को अवश्य ही शांति मिलेगी।''

अभावग्रस्त, गरीब व विकलांग छात्र-छात्राओं के शिक्षा व पुनर्वास की व्यवस्था कर उन्हें दूसरों के समकक्ष बनाकर समाज में पहचान देना नि:संदेह प्रशंसनीय व अनुकरणीय है लेकिन उससे भी महत्वपूर्ण है उन्हें संस्कारित करना। जीवन में सादगी, सरलता, दया, करुणा, अहिंसा व सत्य की झलक दिखे वैसा उन्हें गढ़ना। व्यसनों से होने वाली हानियों का ज्ञान कराकर सात्विक जीवन जीने की कला भी उन्हें सीखा दें तो निश्चित रूप से महात्मा गाँधी के स्वप्नों के भारत के निर्माण में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका होगी। कुछ बालक-बालिकाओं के नेत्र-ज्योति नहीं होती, कुछ मूक बधिर व विकलांग होते हैं किन्तु उनका सरल हृदय व सहज भाव निश्चित रूप से सबको अभिभूत कर देता है।

भारत के विभिन्न महानगरों एवं नगरों के साथ-साथ हमारे नगर की संस्था अभिलाषा (नि:शक्तजनों का पुनर्वास व शिक्षण केन्द्र, मनोकामना (मंदबुद्धि बच्चों का शिक्षण केन्द्र) आस्था (मूक बधिर बच्चें का शिक्षण व पुनर्वास केन्द्र) तथा इसी तरह सेवा के अन्य मन्दिरों में जाकर हमें एक ओर सेवा का व्रत लेना चाहिये दूसरी ओर प्राप्त इंद्रियों को सदैव परोपकार में लगाने का संकल्प लेना चाहिये। इन सेवा संस्थानों में जाकर इन विकलांग बच्चों को देखकर एक बात की शिक्षा अवश्य लेनी चाहिये कि हमें प्रबल पुण्योदय से मानव तन प्राप्त हुआ है और पांचों इंद्रियां परिपूर्ण मिली हैं किन्तु उसका दुरूपयोग किया या इन इंद्रियों का उपयोग केवल रस लोलुपता, निंदा विकथा, विषय वासना, अन्याय अत्याचार के लिए किया तो आगामी जीवन में हम इंद्रियों से हीन हो जाएंगे या शिथिल इंद्रियाँ पाएंगे। अत: कहीं हम इंद्रियों के पराधीन न हो जाएं, ऐसा चिंतन सतत करना चाहिये।

इसी परिपेक्ष्य में उल्लेखनीय है कि कोलकाता जैसे महानगर में अत्यंत कम शुल्क में संस्कार युक्त शिक्षा की व्यवस्था करना किसी चुनौती एवं सेवा-साधना से कम नहीं है। लगभग ८० वर्ष पूर्व संस्थापित श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता शिक्षा, सेवा और साधना समन्वित इस बीज ने आज विशाल वट का रूप ले लिया है। प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक के सभी आयामों को स्पर्श करते हुए श्री जैन सभा कोलकाता ने अर्थाभाव पीड़ित बंगाल के ग्रामीण विद्यार्थियों को नि:शुल्क पाठ्यपुस्तक, ड्रेस एवं अन्य सुविधाएँ प्रदान कर उन्हें उच्चशिक्षित बनाते हुए प्रेरित एवं प्रोत्साहित किया जाता है। धन के अभाव में पढ़ाई से वंचित रहने वाले प्रतिभासंपन्न ग्रामीण विद्यार्थियों को खोजकर उनके पढ़ाई की समस्त व्यवस्था करना उनके शिक्षित होने में सहयोग करना किसी महायज्ञ से कम नहीं है।

चिकित्सा के क्षेत्र में भी शिवपुर हावड़ा में संचालित श्री जैन हास्पिटल एवं रिचर्स सेंटर असहाय अभावग्रस्त मरीजों के लिए वरदान साबित हो रहा है। न्यूनतम शुल्क में असाध्य रोगों के निदान, परीक्षण, परामर्श एवं चिकित्सा का महद् कार्य जन-जन के लिए प्रणम्य बन गया है। नेत्र शिविर, विकलांग शिविर, पोलियो एवं विभिन्न चिकित्सा शिविरों एवं ध्यान, योग एवं प्राणायाम शिविरों के माध्यम से जन-जीवन को बेहतर स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध कराने में सभा सबसे आगे है। सभा के अमृत महोत्सव के उपलक्ष्य में प्रकाशित अभिनंदन ग्रंथ हेतु मेरी अशेष शुभकामनाएँ एवं बधाइयाँ स्वीकार करें। ''सभा'' इसी तरह सेवा, सहयोग, सत्कार के पथ पर प्रशस्त होते हुए देश धर्म जाति के गौरव को बढ़ाये, यही शुभाभिलाषा है।

राजनांदगांव

■

डॉ. वसुमति डागा
रीडर एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष
बंगवासी कॉलेज, कोलकाता

आधुनिक जीवन में साधना की अनिवार्यता

साधना वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति किसी विशेष लक्ष्य या उद्देश्य की पूर्ति के लिये एक विशेष साधन, पद्धति, पंथ, माध्यम, उपाय आदि के द्वारा स्वयं को परिचालित करते हुये लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर होता है। साधना शब्द की व्युत्पत्ति सिध् धातु से हुई है (सिध् + णिच् + युच् + टाप = साधना) जिसका अर्थ है निष्पन्नता, किसी कार्य की पूर्ति, पूजा-अर्चा तथा संराधन या प्रसाधन। मनुष्य चिन्तनशील प्राणी है। उसका चिन्तन ही उसकी जीवन-यात्रा की दिशा को निर्धारित करता है। यह चिन्तन लौकिक अभ्युदय या पारलौकिक कल्याण का हो सकता है। इसे ही हमारे आचार्यो ने प्रेय और श्रेय की संज्ञा दी है। जीवन में चाहे प्रेय प्राप्ति की अभिलाषा हो या श्रेय प्राप्ति की, साधना की अनिवार्यता दोनों में ही है। यदि कोई व्यक्ति साधनारहित जीवन जीता है तो यह दयनीय स्थिति का ही सूचक है। ऐसे व्यक्ति की तुलना पशु से की जाती है। पशु और मनुष्य की कुछ सहजात वृत्तियां हैं, यथा - आहार, निद्रा, भय, मैथुन। जैसे-जैसे वह इन वृत्तियों से परे होता है वैसे-वैसे उसकी चेतना ऊर्ध्वमुखी होती है और मनुष्यता का विकास होता है। मनुष्य अन्य प्राणियों से इसीलिए श्रेष्ठ है कि उसके पास बुद्धि के साथ-साथ विवेक भी है। उसके लिये यह मनुष्य शरीर भोग का साधन भी हो सकता है और मोक्ष का साधन भी। यह उसकी अपनी विवेक शक्ति पर निर्भर करता है कि उसके जीवन की दिशा अभ्युदय की हो या निःश्रेयस की। कवि ने कहा है–

उच्च उड़ान नहीं भर सकते तुच्छ बाहरी चमकीले पर।
महत् कर्म के लिये चाहिये महत् प्रेरणा बल भी भीतर।।

वास्तविकता यही है कि उदात्तोन्मुखी यात्रा के लिये लक्ष्य भी उदात्त होना चाहिये। यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन में भौतिक सुखों के अभाव से व्यथित है तो यह स्थिति उसके लिये दु:खपूर्ण है और यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन में सत्य के अभाव से व्यथित है तो यह स्थिति उसके लिये दु:खपूर्ण है। परन्तु उक्त दोनों प्रकार के दुखों में गुणगत अन्तर है। प्रथम दु:ख द्रव्य, वस्तु, व्यक्ति, पदार्थ आदि के अभाव के कारण होने से जीवन-यात्रा को अपकर्ष की ओर ले जाने वाला है। द्वितीय दु:ख सत्य के अभाव में होने के कारण जीवन यात्रा को उत्कर्ष की ओर ले जानेवाला है। यही वह बिन्दु है जहाँ से वास्तविक साधना का आरम्भ होता है।

जहाँ तक जीवन में प्रेय प्राप्ति का उद्देश्य है तो यह सम्भव है कि व्यक्ति अपने पुरुषार्थ (साधना) से भौतिक सुखों को उपलब्ध कर सकता है, परन्तु ऐसा व्यक्ति एकांगी दृष्टि के कारण अथवा सम्यक दृष्टि के अभाव के कारण दुख रहित अवस्था को प्राप्त नहीं हो सकता। भौतिक सुखों का ऋणात्मक पक्ष किसी भी क्षण उसे कुण्ठा, संत्रास और विषाद से घेर सकता है। यह स्वाभाविक है कि राग-द्वेष, हर्ष-विषाद, सुख-दु:ख, सफलता-असफलता की अनुभूतियाँ उसकी जीवन-रेखा को आड़ा-तिरछा, ऊँचा-नीचा करती ही रहेंगी। जीवन के इसी परिदृश्य को देखकर भर्तृहरि ने कहा था -

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता
स्तपो न तप्तं वयमेव तप्ता:।
कालो न यातो वयमेव याता-
स्तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा।

अर्थात हम सांसारिक भोगों का उपभोग नहीं कर पाये अपितु उनको प्राप्त करने की दुश्चिन्ता से हम ही ग्रसे गये। हमने तप नहीं किया प्रत्युत् आध्यात्मिक आधिदैविक और आधिभौतिक त्रिविध ताप हमें ही सन्तप्त करते रहे। नाना, प्रकार के भोगों को भोगते हुए हम काल को नहीं काट पाये, हाँ, स्वयं ही काल कवलित हो गये। इस प्रकार तृष्णा बूढ़ी नहीं हुई बल्कि हम वृद्ध हो गये।

क्या कारण है कि धन और वैभव के अंबार के बीच भी मनुष्य भय, चिन्ता और असंतोष का जीवन जी रहा है, भौतिक विकास की ऊँचाइयों को उपलब्ध करते हुये भी परिवेश में हिंसा, द्वेष और अराजकता की वृद्धि हो रही है। हर तीसरे व्यक्ति को अपने मन के इलाज के लिए मनोचिकित्सक की शरण लेनी पड़ रही है, वैश्वीकरण के बावजूद व्यक्ति व्यक्ति के बीच की दूरियाँ बढ़ी हैं। वृद्ध माता-पिता को अपने जीवन निर्वाह के लिए कानून का दरवाजा खटखटाना पड़

रहा है, प्रतिस्पर्धा की अन्धी दौड़ में हमारे वच्चे रिश्तों की संवेदना से दूर होते जा रहे हैं। स्थितियाँ तो अब यह बन रही हैं कि भोगवृत्ति की उच्छृंखलता सामाजिक रिवाज में परिणत होती सी दिखाई पड़ रही है। कहीं भौतिक तरक्की की यह महत्वाकांक्षा उस व्यवस्था की ओर तो नहीं जा रही जिस व्यवस्था के लोगों के लिए भारत जैसे देश में पति-पत्नी का मृत्यु पर्यन्त एकसाथ रहना एक बड़ा आश्चर्य है।

उक्त भयावह स्थितियाँ हमें प्रेरित करती हैं कि हम अपनी शाश्वत मूल्यवान परम्पराओं से जीवन ऊर्जा ग्रहण करें ताकि एक स्वस्थ और संतुलित समाज व्यवस्था बनाई जा सके। समय-समय पर भारत भूमि पर अवतारों, तीर्थकरों, ऋषियों, मनीषियों, संतों ने आदर्शों को अपनी जीवनशैली से प्रत्यक्ष प्रस्तुत कर अपनी उज्ज्वल परम्परा को समृद्ध किया और मानवता को दिशा दी। सभी का सार तत्व था – त्याग और संयम।

भारतवर्ष के विविध धर्म और दर्शनों में त्याग और संयम का मुख्य स्थान रहा है। हमारे यहाँ की विविध साधना प्रणालियाँ त्याग और संयम जैसे उदात्त तत्त्वों के विकास हेतु ही हैं। चाहे जैन परम्परा हो या बौद्ध परम्परा, वेदान्त के प्रतिपादक आदिशंकराचार्य हों या योग दर्शन के ऋषि पातंजल, चाहे उपनिषद शिरोमणि भगवद् गीता हो या रामचरितमानस सभी ने त्याग और संयम की अनिवार्यता पर बल दिया है।

इस दृष्टि से यदि हम आदिशंकराचार्य की साधना पद्धति को देखें तो उनकी संपूर्ण साधना पद्धति को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है– (१) वहिरंग साधन, (२) अंतरंग साधन और (३) प्रत्यक्ष साधन। वहिरंग साधन के अन्तर्गत है–

आदौ नित्यानित्यवस्तुविवेक: परिगण्यते ।
इहामुत्रफलभोगविरागस्तदनन्तरम् ।।
शमादिषट्कसम्पत्तिर्मुमुक्षुत्वमिति स्फुटम् । (विवेक-चूड़ामणि १९)

पहला साधन नित्यानित्य-वस्तु-विवेक है, दूसरो लौकिक एवं पारलौकिक सुख-भोग में वैराग्य होना है, तीसरा शम, दम, उपरति, तितीक्षा, श्रद्धा, समाधान–ये छ: सम्पत्तियाँ हैं और चौथा मुमुक्षुता है।

'व्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या है' यह **'नित्यानित्य-वस्तु-विवेक'** कहलाता है।

दर्शन और श्रवण आदि के द्वारा देह से लेकर व्रह्मलोकपर्यन्त सम्पूर्ण अनित्य भोग्य पदार्थो में जो विराग है वही **'वैराग्य'** है।

वारम्वार दोष-दृष्टि करने से विषय-समूह से विरक्त होकर चित्त का अपने लक्ष्य में स्थिर हो जाना ही **'शम'** है।

कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय दोनों को उनके विषयों से खींचकर अपने-अपने गोलकों में स्थित करना **'दम'** कहलाता है। वृत्ति का वाह्य विषयों का आश्रय न लेना यही उत्तम **'उपरति'** है।

चिन्ता और शोक से रहित होकर विना कोई प्रतिकार किये सब प्रकार के कष्टों को सहन करना **'तितीक्षा'** कहलाती है।

शास्त्र और गुरुवाक्यों में सत्यत्व के प्रति आस्था को सज्जनों ने **'श्रद्धा'** कहा है, जो परम तत्त्व की प्राप्ति का हेतु बनती है।

अपनी वुद्धि को सब प्रकार शुद्ध ब्रह्म में सदा स्थिर रखने को **'समाधान'** कहा है। चित्त की इच्छापूर्ति का नाम समाधान नहीं है।

अहंकार से लेकर देहपर्यन्त जितने अज्ञान-कल्पित बन्धन हैं, उनको अपने स्वरूप के ज्ञान द्वारा त्यागने की इच्छा **'मुमुक्षुता'** है।

अंतरंग साधन के अन्तर्गत है– (१) श्रवण, (२) मनन, (३) निदिध्यासन।

श्रवण का अधिकारी वह व्यक्ति है जिस पर भगवद् कृपा हो, अथवा जो शरणागत हो अथवा जो विधाता की सृष्टि संरचना को विघ्न न पहुँचाते हुए अपने दायित्व का निर्वाह कर चुका हो या कर रहा हो। ऐसा व्यक्ति ही सत्य के श्रवण का अधिकारी है।

श्रवण किये हुए सत्य के जिज्ञासु साधक में स्वयंमेव **मनन** होता है।

श्रवण और मनन किये हुए सत्य को अपने हृदय में स्थापित करना तथा मिथ्या मान्यता को हटाना ही **निदिध्यासन** कहलाता है। अत: उनके अनुसार जिज्ञासु को चाहिये कि कल्याण प्राप्ति के लिये चिरकाल तक ब्रह्म चिन्तन करे। आदिशंकराचार्य ने निदिध्यान के १५ अंग बतलाये हैं–

यमो हि नियमस्त्यागो मौनं देशश्च कालत: ।
आसनं मूलबन्धश्च देहसाम्यं च दृक्स्थिति: ।।
प्राणसंयमनं चैव प्रत्याहारश्च धारणा ।
आत्मध्यानं समाधिश्च प्रोक्तान्यङ्गानि वै क्रमात् ।।
(अपरोक्षानुभूति १०२, १०३)

यम, नियम, त्याग, मौन, देश, काल, आसन, मूलवन्ध, देह की समता, नेत्रों की स्थिति, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि–ये क्रम से १५ अंग बतलाये गये हैं।

उन्होंने **प्रत्यक्ष साधन** के अन्तर्गत ४ महावाक्य बताये हैं–

१. प्रज्ञानं ब्रह्म (ऋग्वेद)
२. तत् त्वमसि (सामवेद)
३. अहं ब्रह्मास्मि (यजुर्वेद)
४. अयमात्मा ब्रह्म (अथर्ववेद)

ऋषि पातंजल प्रणीत **योगदर्शन** के अनुसार साधना प्रणाली को संक्षेप में हम इस प्रकार देख सकते हैं–

श्रीमद्भगवद्गीता का आरम्भ ही विषाद् ग्रस्त मानसिकता, किंकर्त्तव्यविमूढ़ता एवं नर्वस ब्रेकडाउन की स्थिति से उबरने के लिये होता है। सम्पूर्ण गीता संयम और त्याग के आदर्श को जीवन में उतारने की प्रेरणा देती है। गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं–

श्रद्धावाल्लभते ज्ञानं तत्पर: संयतेन्द्रिय: ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ।। (गीता ४/३९)

अर्थात् संयम, श्रद्धा और साधना की तत्परता द्वारा व्यक्ति शान्ति को पा सकता है। श्रीकृष्ण कहते हैं कि यह मन नि:संदेह चंचल है और कठिनता से वश में होने वाला है परन्तु अभ्यास (साधना) और वैराग्य से यह वश में होता है।

असंशय महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्यण च गृह्यते ।। (गीता ६/३५)

तप तितीक्षा प्रदान करता है। तप द्वारा ही धैर्य और सहनशक्ति जैसी वृत्तियों का विकास होता है।

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदु:खदा: ।
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ।। (गीता २/१४)

अर्थात् सर्दी-गर्मी और सुख-दु:ख को देने वाले इन्द्रिय और विषयों के संयोग तो उत्पत्ति-विनाशशील और अनित्य हैं इसलिए उनको तू सहन कर।

त्याग ही क्लेशरहित स्थिति का अर्थात् अखण्ड शान्ति का मूल आधार है। इस आदर्श को प्रतिष्ठित करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं–

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते ।
ध्यानात्कर्मफलत्यागत्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ।। (गीता १२/१२)

अत: निष्काम कर्म का उद्घोष करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ।। (गीता २/४७)

सम्पूर्ण गीता दिशाहीन मनुष्य को दिशा प्रदान करने का अमोघ शास्त्र है। साधन परायण होकर समता तथा त्याग के आदर्श को जीवन में उतार कर ही मनुष्य अखण्ड आनन्द, अखण्ड समता, अखण्ड शान्ति एवं जीवन के चरम उत्कर्ष को पा सकता है।

उक्त परिप्रेक्ष्य में जैन दर्शन को देखने पर हम पाते हैं कि उसमें अहिंसा, संयम और तप पर सर्वाधिक बल दिया गया है। यह दर्शन स्वसंवेदना का दर्शन है। इसमें कहीं भी पर के प्रति उत्तेजना नहीं है। व्यक्ति अहिंसा, संयम और तप रूप धर्म के द्वारा अपने विकारों और विभावों को हटाकर चेतना का चरम विकास कर सकता है। जैन धर्म में धर्म आराधन के लिये दैनिक जीवन में षट्कर्मों का विधान किया गया है।

१. सामायिक, २. २४ तीर्थकरों की स्तुति, ३. वंदना
४. प्रतिक्रमण ५ कायोत्सर्ग, ६. प्रत्याख्यान

जैन धर्म में सामायिक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सामायिक का अर्थ है समता। सम का अर्थ है श्रेष्ठ और अयन का अर्थ है आचरण करना। यानि आचरणों में श्रेष्ठ आचरण सामायिक है। विषम भावों से हटकर स्व स्वभाव में रमण करना समता है। सामायिक अपने आप में समत्व भाव की विशुद्ध साधना है जिसमें साधक की चित्तवृत्ति क्षीर समुद्र की तरह शांत रहती है और इसीलिए वह नवीन कर्मो का बंध नहीं करती। आत्मस्वरूप में स्थिर रहने के कारण जो कर्म शेष रहते हैं उनकी वह निर्जरा करती है। आचार्य हरिभद्र ने लिखा है कि सामायिक की विशुद्ध साधना से जीव घातीकर्म नष्ट कर केवलज्ञान

प्राप्त कर लेता है। सामायिक का साधक द्रव्य, काल, क्षेत्र, भाव की विशुद्धि के साथ मन-वचन-काया की शुद्धि से सामायिक ग्रहण करता है। ''परद्रव्यों से निवृत्त होकर साधक की ज्ञान चेतना जब आत्मस्वरूप में लीन होती है तभी सामायिक होती है।'' तीर्थंकर भगवान भी जब साधना मार्ग में प्रवेश करते हैं तो सर्वप्रथम सामायिक चारित्र स्वीकार करते हैं। बिना समत्व के संयम या तप के गुण टिक नहीं सकते। हिंसा आदि दोष सामायिक में सहज ही छोड़ दिये जाते हैं। अत: आत्मस्वरूप को पाने की यह मुख्य सीढ़ी कह सकते है। भगवती सूत्र में स्पष्ट कहा है–

आया खलु सामाइये,
आया सामाइयस्स अट्ठे ।

अर्थात् आत्मा ही सामायिक ही और आत्मस्वरूप की प्राप्ति ही सामायिक का प्रयोजन है। व्यवहार में जब तक, स्वाध्याय एवं ध्यान और सादे वेश-भूषा में शांत बैठकर साधना करना सामायिक है। राग-द्वेष को हटाना या अधिकारों को जीत लेना सामायिक का निश्चय पक्ष है।

२४ जिनेश्वरों की स्तुति हमारे मन को निर्मलता से संस्कारित करती है। जिनेश्वर भगवान के गुणों की स्मृति में मन पावन हो जाता है और चेतना में उदात्तोन्मुखता का बीजारोपण होता है।

वन्दना के द्वारा अहम् का विगलन होता है। विनम्रता आत्मशक्ति को प्रस्फुटित करती है।

प्रतिक्रमण तथा **प्रत्याख्यान** के पीछे बड़ी मनोवैज्ञानिक दृष्टि है। प्रतिक्रमण के द्वारा साधक अपनी दैनन्दिनचर्या का अवलोकन करता है, कृत त्रुटियों के प्रति सजग होकर प्रायश्चित करता है और भविष्य में ऐसी त्रुटियाँ न हों इसके लिए प्रत्याख्यान करता है अर्थात् संकल्पबद्ध होता है। इस प्रकार धीरे-धीरे वह अपना अन्तर निरीक्षण-परीक्षण करता हुआ धर्म को जीवन व्यवहार में उतारता चलता है।

कायोत्सर्ग तो ध्यान की वह उच्चतम स्थिति है जहाँ मनुष्य समाधि में स्थित हो जाता है। साधक स्थूल शरीर, पाँच ज्ञानेन्द्रियों, पाँच कर्मेन्द्रियों एवं अन्त:करण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) से परे होकर आत्मस्वरूप में स्थित हो जाता है। कायोत्सर्ग की प्रक्रिया में शरीर शिथिल, वाणी मौन, श्वास मन्द और मन निर्विचार हो जाता है। साधक उस अन्तर्जगत में पहुँच जाता है जहाँ ईर्ष्या, विषाद, शोक, भय आदि मानसिक दु:खों की बाधा तथा सर्दी-गर्मी आदि शारीरिक दु:खों का संवेदन नहीं रहता। कायोत्सर्ग की यही स्थिति थी जिसमें विषधर सर्प चण्डकौशिक परास्त हो गया। यह कायोत्सर्ग ही सत्याग्रह को प्रतिफलित करता है।

जैन धर्म की साधना प्रणाली में **तप** का महत्वपूर्ण स्थान है। तपस्या द्वारा साधक मन और इन्द्रियों को साधता है। तपस्या साधक में तितीक्षा भाव जगाती है, आवेगों पर विजय प्राप्त करने हेतु नियंत्रण शक्ति देती है। चैतन्यगुण सम्पन्न आत्मा से द्वेष, क्रोध, मान, मद, लोभ, दम्भ आदि के आवरण हट जाते हैं। इसी मैल को अलग करने के लिए शरीर रूपी बर्तन को तप की आँच से तपाया जाता है। यह आँच तेज न हो तो आत्मबलरूपी घृत नहीं निकल सकता। तप द्वारा धारणाशक्ति और संकल्पशक्ति बढ़ती है। मनुष्य बड़े-बड़े संकल्पों को पूर्ण कर सकता है।

तत्वार्थ सूत्र में **सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन** और **सम्यक् चारित्र** को साधक के लिये अनिवार्य बताया गया है। इसके पीछे गहरी मनोवैज्ञानिक दृष्टि है। मानवीय चेतना के तीन पहलू माने गये हैं– ज्ञान, भाव और संकल्प। चेतना के भावात्मक पक्ष को सही दिशा में नियोजित करने के लिये सम्यक् दर्शन, ज्ञानात्मक पक्ष को सही दिशा में नियोजित करने के लिये ज्ञान और संकल्पात्मक पक्ष को सही दिशा में नियोजित करने के लिए सम्यक् चारित्र का प्रावधान किया गया है। भगवान महावीर ने कहा है–

हयं नाणं कियाहीणं, हया अण्णाणओ किया ।
पासंतो पंगुलो दड्ढो, धावमाणो य अंधओ ।। (समणसुत्तं २१२)

अर्थात् क्रियाविहीन ज्ञान व्यर्थ है और अज्ञानियों की क्रिया व्यर्थ है। यह उसी तरह है जैसे पंगु व्यक्ति वन में लगी हुई आग को देख तो सकता है पर दौड़ नहीं सकता तथा अंधा व्यक्ति दौड़ तो सकता है पर देख नहीं सकता।

आन्तरिक साधना पर बल देते हुए भगवान महावीर ने कहा था–

न वि मुण्डिएण समणो, न ओंकारेण बंभणो ।
न मुणी रण्णवासेणं, कुसचीरेण न तावसो ।।
समयाए समणो होइ, बंभचेरेण बंभणो ।
नाणेण य मुणी होइ, तवेण होइ तावसो ।। (समणसुत्तं ३४०,३४१)

अर्थात् केवल सिर मुड़ाने से कोई श्रमण नहीं होता, ओम् का जप करने से कोई ब्राह्मण नहीं होता, अरण्य में रहने से कोई मुनि नहीं होता, कुश-चीवर धारण करने से कोई तपस्वी नहीं होता। व्यक्ति समता से श्रमण होता है, ब्रह्मचर्य से ब्राह्मण होता है, ज्ञान से मुनि होता है और तप से तपस्वी होता है।

उक्त विविध साधना प्रणालियों के विवेचन का उद्देश्य यही है कि आत्मप्रवंचना न करने वाले तथा स्वयं को धोखा न देने वाले व्यक्ति को असंदिग्ध होकर यह समझ लेना चाहिये कि जिस भौतिक सुख के लिए आज का मनुष्य समाज प्रयत्नशील है, वह सुख मिथ्या है, मानवीय गरिमा के योग्य नहीं है। धन जीवन का साधन था पर उसे सिद्धि मान लिया गया और इसी भ्रम से पूरा मनुष्य समाज ग्रसित हो गया है। हमने भौतिक उपलब्धियाँ कीं, सुख-साधनों का विस्तार किया, वैज्ञानिक सुविधाओं से स्थान की दूरियाँ कम कीं, दुनिया में हम एक दूसरे के निकट आये, अयोनिज सृजन क्लोन का आविष्कार किया, लेकिन हम एक बार अपने भीतर झाँके कि क्या हमें शान्ति है? क्या हम क्लेष रहित हैं? क्या हम निर्भय हैं? उत्तर अधिक

प्रतिशत में नकारात्मक ही रहेगा। वास्तविकता तो यही है कि यदि मनुष्य विज्ञान के द्वारा मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर ले तथा इच्छा मात्र से मनुष्य को जन्म देने की सिद्धियाँ आदि भी प्राप्त कर ले और अन्तिम सुख की सीमा भी छू ले तब भी जिस आनन्द की बात शास्त्र करता है उसमें और भौतिक सुख में गुणगत अन्तर है। हमने जीवन को भौतिकता की आँधी में बहने के लिये छोड़ दिया है। इसी धारा के प्रवाह में हम बह रहे हैं। इस धारा की विपरीत दिशा में चलने की प्रतिज्ञा करना ही एक भीष्म प्रतिज्ञा है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आज आत्मोत्थान के नाम पर आध्यात्मिकता का व्यावसायीकरण हो रहा है, स्प्रिचुअल इण्डस्ट्री पनप रही है। जो निजी स्वार्थों के लिए अध्यात्म के नाम पर भोली-भाली जनता को दिग्भ्रमित कर रही है। अस्तु भारतीय शाश्वत मूल्यों एवं पद्धतियों का अनुसरण विवेक सम्मत ढंग से करने की आवश्यकता है। बहुत पुण्य का उदय होता है या कहूँ कृपा होती है तभी कोई संयम और तप का रास्ता संकल्पबद्ध होकर ग्रहण करता है और उस पर चल पड़ता है। हमें उत्कर्ष पथ के आरोहण हेतु अपनी भ्रमित दिशा बदलनी होगी नहीं तो आने वाली पीढ़ी को घोरतम दु:ख में धकेलने के हम अक्षम्य अपराधी होंगे जहाँ से वापस लौटना मुश्किल होगा क्योंकि

दुर्लभ मानुष जनम है, देह न बारम्बार
तरुवर ज्यों पत्ता झरे बहुरि न लागे डार ।

■

S. R. Singhvi

The value of Education

In last two decade a great deal has changed in pattern of education. The most pervasive change has been the infusion of technology. Fortunately the Govt. has also realized that higher education and total literacy is the only way for development in all areas. In the fast changing world skill and know-how become out dated very fast.

The quality of human-resource of a nation is judged by literacy, skill and knowledge of the population living in. In other words the education is a must if nation aspires to achieve growth and development and more importantly sustain it.

With the rapid change in education a mere graduate degree like BA/B.Com. are not so important. The need of the time is specialization. In our day to day life we observe that a plumber or electrician earns more than a graduate. Thus, now it is essential that a student must decide early his objective about selection of courses and the areas he wishes to specialize. Skill and increased efficiency can be acquired by - host of courses, several instructional programs has been launched in last two decades such courses will instill confidence and at the same time increased reliability by employer. The advantage of these courses the students learns the same amount with less effort or time and to get a job is much easier.

A good education can give you many things -

1. First, with a good education you can build up your intelligence and become a lot smarter.
2. Second, with a good education you can get a better job and increase your compensation.
3. Third, with the money you earn from a good business the more good quality items you can purchase.
4. Fourth, a good education can build up your maturity level
5. Fifth, the money you earn from a good job can keep you from doing bad things from desperation.
6. Sixth, with the money you get from a job you can travel to other places.
7. Seventh, it can lower your level of ignorance.

■
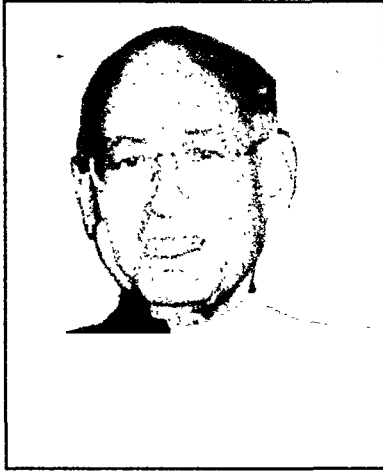
श्रद्धांजलि

अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

विश्वविश्रुत अन्तर्राष्ट्रीय संविधान विशेषज्ञ, ख्यातिप्राप्त विधिवेत्ता, लब्धप्रतिष्ठित सांसद, मानवीय अधिकारों के प्रवल पक्षधर, सुचिन्तित लेखक राष्ट्रभक्त, कवि, सम्पादक, वहुभाषाविद् और साहित्य मनीषी, पद्मविभूषण डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी देश-विदेश के अनेक विश्वविद्यालयों से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध वहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। उनकी क्रियाकलापों का फलक इतना विस्तृत है कि लघु कलेवर में समेटना कठिन ही नहीं दुर्लभ है।

देश-विदेश के अनेक विश्वविद्यालयों ने डॉ. सिंघवी को अपनी सर्वोच्च उपाधियों से अलंकृत कर अपने को गौरवान्वित महसूस करती और धन्य मानती है।

राजस्थान की मरुधरा मिट्टी जोधपुर के इस सपूत ने अपने क्रिया-कलापों, अपरिमित मेधा एवं विलक्षण विद्वता से देश-विदेश में अपनी जन्मभूमि एवं देश का नाम ही रौशन नहीं किया अपितु देश की साख एवं मान में चार चाँद भी लगा दिये।

साहित्य, संगीत एवं कला की अनेक संस्थाओं से गहन रूप से जुड़े श्री सिंघवी ने भारतीय विद्या भवन, जमनालाल वजाज एवं ज्ञानपीठ पुरस्कारों के प्रवर मंडल के अध्यक्ष रहते हुए जो कार्य सम्पादित किया है वह इन संस्थाओं के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। ब्रिटेन में उच्चायुक्त के पद पर रहते हुए उन्होंने भारत की अनेक कलाकृतियों एवं अमूल्य धरोहरों को पुन: भारत में लाने के असंभव कार्य को उन्होंने जिस तरह सम्भव वनाया वह उनकी दूरदर्शिता, गहन सूझ-बूझ एवं प्रखर पाण्डित्य का परिणाम है। इनके इन भगीरथ प्रयासों की सम्पूर्ण भारत ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है।

डॉ. सिंघवी उत्कृष्ट कवि, उच्च कोटि के निबन्धकार एवं प्रातिभ लेखक थे। उनकी अंग्रेजी एवं हिन्दी की कई रचनाएँ अत्यन्त लोकप्रिय हैं। उन्होंने सुप्रसिद्ध कथाकार एवं उपन्यास लेखक श्री जैनेन्द्र के त्यागपत्र का अंग्रेजी में अनुवाद कर सबको चमत्कृत कर दिया था।

डॉ. सिंघवी अपने अध्ययन समाप्ति के पश्चात् सैनफ्रैन्सिसको के कॉलेज में कानून के प्राध्यापक रहे थे, ऐसा उन्होंने मुझे दिल्ली प्रवास के समय अवगत कराया था। सन् १९५७-५८ में भारत आने पर काफी निराशा हुई थी। कई बार बातचीत में वे उसका उल्लेख भी करते थे। मैं उस समय दिल्ली में जैन प्रकाश का सम्पादक एवं श्री अखिल भारतवर्षीय स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेन्स का मैनेजर था। कॉन्फ्रेन्स के जनरल सेक्रेटरी श्री आनन्दराजजी सुराणा जो स्वयं जोधपुर के थे, के कारण भगतसिंह मार्केट एवं गोल मार्केट के पास जैन भवन में वे प्राय: आकर चर्चा किया करते थे। मैंने उन्हें अवसर की प्रतीक्षा की सलाह दी एवं यह अवसर भी शीघ्र उपस्थित हो गया। श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी द्वारा विद्या भवन नई दिल्ली में आयोजित एक सेमिनार में इन्होंने जो अभिभाषण दिया उससे सभी चकित हो गये एवं इनकी प्रतिभा का लोहा मान गये। तत्पश्चात् डॉ. सिंघवी ने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा एवं एक के बाद एक प्रगति के सौपानों पर आरोहण करते चले गये।

सितम्बर १९९८ में श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता के सात दशकीय समारोह में वे विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे थे। उनके कर-कमलों से तव मुझे भी सम्मानित होने का अवसर मिला था।

डॉ. सिंघवी की धर्मपत्नी श्रीमती कमला सिंघवी स्वयं एक प्रसिद्ध कहानीकार एवं प्रवुद्ध लेखिका है। उनके सुपुत्र डॉ. अभिषेक सिंघवी वरिष्ठ अधिवक्ता एवं कांग्रेस के प्रवक्ता हैं। उनकी पुत्री श्रीमती अभिलाषा सिंघवी प्रकृष्ठ वकील है। सम्प्रति मानव सेवा सन्निधि की प्रवन्ध न्यासी के रूप में मानव सेवा में संलग्न है। डॉ. सिंघवी के असामयिक स्वर्गारोहण से समग्र सभा परिवार अत्यन्त दु:खी है। स्वर्गस्थ आत्मा को सभा परिवार की हार्दिक श्रद्धांजलि एवं चिरशांति की शासनदेव से प्रार्थना। ■

श्रद्धांजलि

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी श्री दीपचंद नाहटा

चुरु जिले के अग्रणी कस्बे सरदारशहर के प्रमुख नाहटा परिवार में श्री दीपचंद नाहटा का जनम ११ नवम्बर १९२६ को हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा सरदारशहर में सम्पन्न हुई। तदुपरान्त आप महामना मालीवय जी और डॉ० राधाकृष्णन के भाषण सुनने व अध्ययन हेतु काशी हिन्दू विश्व विद्यालय के छात्र बने एवं वहां आपने आई० कॉम० की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद आपने कलकत्ता विश्व विद्यालय से बी० कॉम० की परीक्षा उत्तीर्ण की।

बचपन से ही आपका विश्वास महात्मा गांधी के आदर्शों में था। सन् १९४२ की बात है। महाराजा श्री गंगासिंहजी के शासनकाल में बीकानेर स्टेट में गांधी जयन्ती नहीं मनाने दी जाती थी। इसका विरोध प्रकट करने के लिए आपने और आपके कुछ मित्रों ने महाराजा श्री गंगासिंहजी की जयन्ती मनाने का विरोध किया। इससे क्षुब्ध होकर राज्य सरकार ने श्री दीपचन्द नाहटा एवं आपके मित्रों को छ: छ: बेंतें लगाकर विद्यालय से निष्कासित कर दिया। उनका शांत क्रान्ति में अटूट विश्वास था।

श्री नाहटा का विश्वास है कि गांधी दर्शन को अपनाये बिना आज की विषम परिस्थितियों में छुटकाना पाना कठिन है। प्रेम, शांति, सादगी, संयम, अहिंसा, करुणा सेवा, नैतिकता और साधनों की पवित्रता का नाम है– गांधी। गांधी आज के ही नहीं है कल के ही नहीं थे, वे आने वाले भविष्य के भी सर्वश्रेष्ठ आस्था केन्द्र हैं। यह नई सहस्राब्दी गांधी की ओर टकटकी लगाये हैं। गांधी ही उसके लिये एक मात्र त्राण स्थल है। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भी भाग लिया और आजीवन गांधीवादी विचार-धारा के प्रबल समर्थक रहे।

श्री नाहटा की रुचि साहित्य की विभिन्न क्षेत्रों में रही। साहित्यनुकार कविवर श्री कन्हैयालाल सेठिया, श्री सिद्धेश्वर प्रसादजी पूर्व राज्यपाल त्रिपुरा, पंडित श्री अक्षयचन्दजी शर्मा, डॉ० प्रभाकर श्रोत्रिय, श्री सन्हैयालालजी ओझा एवं श्री यशपाल जैन आदि अनेक बुद्धिजीवियों, लेखकों से आपका निरन्तर सम्पर्क बना रहा एवं उनका सान्निध्य भी आपको प्राप्त हुआ।

श्री नाहटा कई विशिष्ट 'व्यक्तियों के अभिनन्दन ग्रंथ समितियों के मंत्री रहे। आपके निर्देशन और नेतृत्त्व में कालजयी सेठ सोहनलाल दूगड़ स्मृति ग्रंथ और प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका स्मृति ग्रंथ का भव्य प्रकाशन संभव हुआ।

सामाजिक सेवा उद्देश्य से श्री नाहटा ने कुन्दनमल दीपचन्द नाहटा चेरिटेबुल ट्रस्ट की स्थापना की। इस ट्रस्ट के द्वारा गांधी विद्या मन्दिर के राजस्थान सरकर की स्कीम के अन्तर्गत श्रीमती मोहनीदेवी नाहटा (धर्मपत्नी दीपचन्द नाहटा) की स्मृति में छात्रावास का निर्माण किया गया। इस ट्रस्ट के द्वारा समय-समय पर नि:शुल्क नेत्र परीक्षण, चश्मा वितरण, हेपिटाईटिस बी के टीके भी उपलबध कराये गये एवं कई वर्षों से आज भी मित्र मन्दिर नामक संस्था के सौजन्य से नि:शुल्क होमियोपैथी चिकित्सा कोलकता में अनवरत जारी है।

श्री नाहटा दानवीर सेठ सोहनलाल दूगड़ स्मृति न्यास के ट्रस्टी हैं। जिसके अन्तर्गत फतेहपुर में सेठ सोहनलाल दूगड़ मेमोरियल बालिका विद्यालय चलाया जा रहा है तथा आपकी प्रेरणा, अनवरत प्रयास एवं अपूर्व लगन के कारण सोहन लाल दूगड़ मेमोरियल महाविद्यालय का कलकत्ता में निर्माण करने का प्रयत्न जारी है।

अपने शिक्षा काल के तुरन्त बाद ही आप चाय उत्पादन टी गार्डेन के अपने पुस्तैनी कार्य से जुड़े।

श्री नाहटा ने दो महत्वपूर्ण उपलब्धियों हासिल की– १. चाय उत्पादन संबंधी कई प्रयोग आपने अपने चाय बागान में किये, जिसकी सफलता को देखकर अन्य चाय बागानों ने उन पद्धतियों को अपनाया। २. आज से ४० वर्ष पूर्व असम में गेहूं की खेती नहीं के बराबर की जाती थी। वहां आपने स्वयं गेहूं का उत्पादन करना शुरू किया और उसमें अच्छी सफलता अर्जित की।

श्री नाहटा अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी सम्मेलन, श्री जैन सभा, राजस्थान परिषद, विचार मंच, महावीर सेवा सदन, पारिवारिकी, गांधी दर्शन समिति, मरुधारा, पूर्व मनो विकास केन्द्र मानव सेवा संघ, सेठ सोहनलाल दूगड़ स्मृति न्यास आदि संस्थाओं के अध्यक्ष, ट्रस्टी, संरक्षक, एवं कार्यकारिणी के सदस्य रहे हैं। इसके अलावा उन्होंने अनेक औद्योगिक संस्थानों के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष एवं कार्यकारिणी सदस्य के रूप में नये उद्योगपतियों को प्रोत्साहित किया एवं सादगी पूर्वक कार्य करने की प्रेरणा जीवन पर्यन्त देते रहे।

श्वेत खादी के परिधान से आवेष्ठित, सहज-स्थूल मितभाषी, मृदुभाषी, मिलनसार और विचार प्रखरता वाले श्री नाहटा एक सामाजिक कार्यकर्ता ही नहीं वल्कि सफल व्यापारी, प्रबुद्ध चिन्तक, प्रवुद्ध नागरिक एवं एक निस्पृह सामाजिक कार्यकर्ता थे।

श्री नाहटा श्री जैन चैरिटेबल हॉस्पिटल एवं रिसर्च सेन्टर, हावड़ा, श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा कोलकाता के मानव सेवी प्रकल्पों से निरन्तर जुड़े हुए थे एवं अनेक क्रिया कलापों में सक्रिय रूप से भाग लेते थे।

उनके असामयिक स्वर्गवास से कोलकाता के साहित्यिक सामाजिक एवं सेवा भावी संस्थानों की महती क्षति हुई है। श्री श्वेताम्वर स्थानकवासी जैन सभा परिवार दिवंगत आत्मा को हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

■
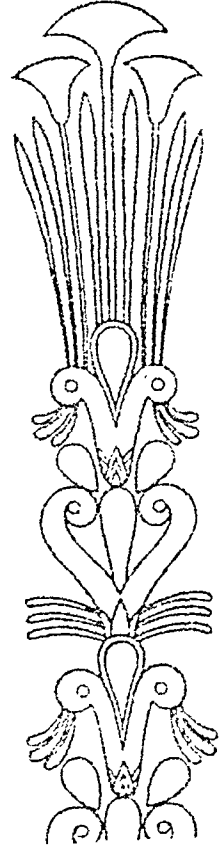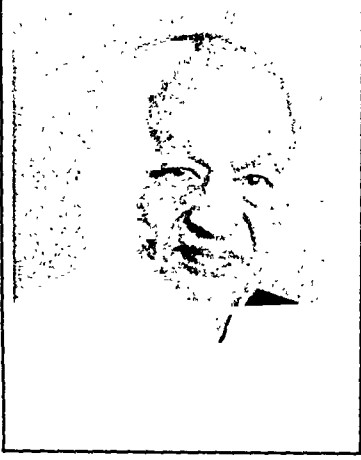
श्रद्धांजलि

सेवा, सहयोग एवं उदारता की प्रतिमूर्ति श्री श्रीचन्द नाहटा

सेवा, सहयोग एवं सहकारिता के त्रिवेणी संगम श्री श्रीचन्दजी नाहटा का जन्म ६ नवम्बर १९२८ को कोलकाता में पिताश्री श्री कुन्दनमलजी नाहटा के यहाँ श्रीमती चम्पादेवी नाहटा की कुक्षी से हुआ। कुन्दन की शुद्धता एवं चम्पा की महक से सुवासित इनके जीवन से न केवल पश्चिम बंगाल अपितु बिहार, आसाम, राजस्थान, गुजरात, पंजाब आदि प्रान्तों एवं राज्यों की अनेक धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं चिकित्सीय संस्थान पल्लवित, पुष्पित होकर चतुर्दिक यश: सुरभि प्रवाहित कर रहे हैं। उन्होंने अपनी करुणा, उदारता, कर्मठ सेवा भावना से काल के ललाट पर जो चिह्न अंकित किए हैं, वे कालजयी बनकर हमारी यादों में अमिट एवं अक्षुण्ण हैं।

आपका विवाह रतनगढ़ निवासी श्री भूरामलजी बैद एवं श्रीमती गणपतिदेवी की सुपुत्री रतनदेवी नाहटा के साथ सम्पन्न हुआ। श्रीमती रतनदेवी वस्तुत: एक दुर्लभ रत्न थीं और थीं श्री श्रीचन्दजी की प्रेरणा की अक्षय स्रोत। जिनकी कोख से २ पुत्र श्री महेन्द्र, श्री विजय नाहटा तथा दो पुत्रियाँ श्रीमती सम्पतदेवी दुगड़ एवं श्रीमती प्रेम चोरड़िया हुए। बड़े पुत्र श्री महेन्द्र, बड़े भ्राता श्री शुभकरणजी के गोद चले गये जिन्होंने सरदारशहर में दुर्लभ कलाकृतियों के संग्रह हेतु नाहटा म्युजियम की स्थापना की। श्री श्रीचन्दजी नाहटा का बाल्यकाल सरदारशहर में बिता किन्तु कर्मस्थल कोलकाता महानगर था। आप प्रारम्भ से ही अपने पैतृक व्यवसाय चाय से जुड़ गये। आप चाय बागानों के आधुनिकीकरण एवं विकास के लिये सतत प्रयत्नशील रहे। आपके अथक अध्यवसाय, दूरदृष्टि एवं सूझबूझ ने चाय उद्योग में एक क्रान्ति उत्पन्न की एवं विकास की नई ऊँचाइयाँ प्रदान की। आपके प्रयत्नों से ही देश में विपण्णन के साथ विदेशों में चाय का निर्यात किया जाने लगा। भारतीय चाय ने जो ख्याति अर्जित की है उसका अधिकांश श्रेय श्री श्रीचन्दजी नाहटा एवं इनके परिवार की प्रबन्धपटुता, कार्यदक्षता, सामायिक दूरदृष्टि एवं गहन रुचि को है।

श्री श्रीचन्दजी नाहटा का समग्र जीवन मानव सेवा एवं जनोपयोगी कार्यो के लिए समर्पित था। वे अपने निरभिमानी, सहज, सरल एवं सादगीपूर्ण व्यवहार से सबके प्रिय थे। आडम्बर, प्रदर्शन से सर्वथा दूर हँसमुख मिलनसार एवं मृदुभाषी श्री नाहटा स्नेहपूर्ण आत्मीयता से सम्पन्न थे। वे सबके साथ सहज ही घुलमिल जाते थे।

वे अनेक शैक्षणिक, धार्मिक, सामाजिक एवं चिकित्सीय सेवा-संस्थानों से अभिन्न रूप से सम्बद्ध थे। अनेक संस्थाओं के वे मानद् पदाधिकारी थे एवं उनकी छत्रछाया में अनेक संस्थान विकासोन्मुख थे जो उनकी कीर्ति के अक्षय भण्डार हैं। प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से अनेक संस्थाएँ उनके बहुमूल्य सेवाओं से लाभान्वित थी। श्री जैन हॉस्पीटल एवं रिसर्च सेन्टर, हावड़ा से उनके घनिष्ट सम्बन्ध थे। वे विगत कई वर्षों से इसकी प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष थे एवं उनके नेतृत्व में यह हॉस्पीटल प्रगति पथ पर आरुढ़ रहा है। वे अत्यन्त उदार थे। धार्मिक कठमुल्लापन तो उनको स्पर्श भी नहीं कर पाया था। श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता के वे परम हितैषी थे एवं अनेक गतिविधियों एवं क्रियाकलापों से वे सक्रिय रूप से जुड़े थे। उनके सुपुत्र श्री विजय नाहटा भी 'होनहार बिरवान के होत चिकने पात' की कहावत को चरितार्थ कर रहे हैं। वे प्रतिभाशाली, दूरदृष्टि सम्पन्न एवं कुशल व्यक्तित्व के धनी हैं। समाज को उनसे बड़ी आशाएँ हैं। वे अपने पिता के पदचिन्हों का अनुसरण कर अपने जीवन को सार्थक बनायेंगे, ऐसा विश्वास है। श्री श्रीचन्द नाहटा के असामयिक स्वर्गवास से जैन समाज की अपूरणीय क्षति हुई है। श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा परिवार की स्वर्गस्थ आत्मा को हार्दिक श्रद्धांजलि एवं पीड़ित परिवार को यह असह्नीय दु:ख सहन करने की शक्ति प्रदान करे, यही शासनदेव से प्रार्थना है।

■
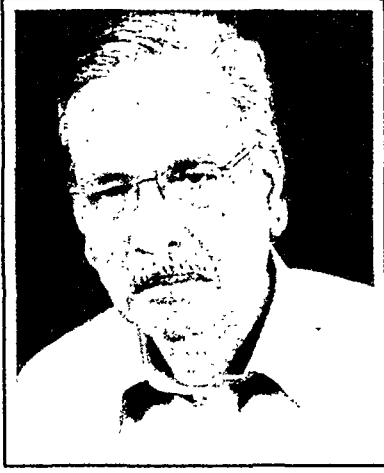
अभिनंदन

कमलवत, निर्लिप्त, निस्पृह श्री पदमचन्द नाहटा

अनेक शहादतों, बलिदानों के बाद सन् १९४७ में भारत को बहुप्रतिक्षित स्वतंत्रता की प्राप्ति हुई। संविधान निर्मात्री परिषद् का गठन हुआ एवं भारत का नया संविधान बना। संविधान के अनुसार सन् १९५२ में भारत में प्रथम चुनाव हुआ। इस समय चुनाव की जो स्थिति है, उस समय एकदम भिन्न थी। पैसे एवं बाहुबल का चुनाव से दूर तक लेना-देना नहीं था।

मद्रास में जिस मद्रासी महानुभाव सम्भवत: कुमारमंगलम् ने लोकसभा की सीट पर विजय प्राप्त की थी। उन्होंने अपना पूरा प्रचार साइकिल पर बैठ कर घर-घर जाकर किया था एवं बिना धन तथा बाहुबल के विरोधियों पर विजय प्राप्त की थी।

आजकल संस्थाओं के अध्यक्ष पद के लिये भी जबरदस्त प्रतिस्पर्धा होती है एवं मतदाताओं को लुभाने के अनेक प्रयत्न किये जाते हैं। खरतरगच्छ महासंघ के चुनाव में श्री पदमचन्द नाहटा अध्यक्ष निर्वाचित हुए, यह धनबल एवं बाहुबल पर कर्मठ सेवा भावना, सहिष्णुता, धार्मिक उदारता एवं दूरदर्शिता की विजय है। श्री पदमबाबू एक ऐसे कर्मठ सेवाभावी कार्यकर्त्ता हैं, कोई भी संस्था जिनको पाकर धन्य हो जाती है।

श्री पदमबाबू बहुआयामी व्यक्तित्त्व के धनी हैं। उनका व्यक्तित्व ऐसे कई तत्त्वों से मिलकर बना है जो सहज प्राप्य नहीं अपितु दुर्लभ है। श्री पदमबाबू का जन्म एक ऐसे परिवार में हुआ जो साहित्य, संस्कृति, पुरातत्त्व एवं शोध के लिए केवल भारत में ही नहीं अपितु विदेशों के विद्वानों, मनीषियों, चिन्तकों, पुरातत्वविदों एवं शोधार्थियों में विख्यात, आदरणीय एवं पूज्यनीय रहा है।

श्री अगरचन्द नाहटा एवं श्री भँवरलाल नाहटा इन दो नामों का जैन जगत सदैव ऋणी रहेगा। वे न केवल जैन दर्शन, साहित्य, संस्कृति, पुरातत्त्व के मान्य विद्वान थे अपितु अथक अध्यवसायी, कर्मठ एवं सहिष्णु भी थे। श्री पदमबाबू के पिताजी श्री भँवरलाल नाहटा बहुभाषाविद् थे एवं प्राचीन लिपियों के उद्भट ज्ञाता थे। इन लिपियों की जानकारी के लिए बड़े-बड़े पुरातत्त्वविद् एवं भाषाविद् श्री नाहटा से मिलने के लिये लालायित रहते थे।

हालांकि श्री पदमबाबू साहित्यकार, भाषाविद् एवं पुरातत्त्ववेत्ता नहीं हैं पर किसी वस्तु की तह में जाने एवं उसका सबकुछ जानने की जो प्रबल भावना उनमें है वह अन्यत्र दुर्लभ है। श्री पदम बाबू चित्रकार एवं कलाकार भी नहीं हैं किन्तु उनकी कला एवं चित्र के प्रति अभिरुचि एवं उसे नये रूप से प्रस्तुत करने की ऐसी प्रतिभा उनमें है जो उन्हें दूसरों से भिन्न रूप में प्रस्तुत करती है।

सहज, सौम्य, सरल एवं सादगीपूर्ण व्यवहार से सम्पन्न श्री पदम बाबू सहिष्णुता एवं धैर्य की साकार प्रतिमा दृष्टिगत होते हैं। उपनयन से झाँकते उनकी पारदर्शी आँखों एवं मुस्कान से अठखेलियाँ करता उनका चेहरा, परिपक्वता की निशानी खिचड़ी श्मश्रु और गौरवर्ण सबको सहज ही आकर्षित करता है। जो भी काम पदम बाबू अपने हाथ में लेते हैं उसे पूरा करके ही दम लेते हैं। धुन एवं संकल्प के ऐसे धनी पदम बाबू जिस किसी संस्था से जुड़ते हैं वे सदा-सदा के लिए उसके हो जाते हैं। अनेक संस्थाएँ विभिन्न रूपों में उन्हें पाकर अपने को धन्य मानती है। प्रदर्शन, पाखण्ड और विज्ञापन में उनका लेशमात्र भी विश्वास नहीं है। करना एवं करते रहना उनका सहज स्वभाव है। विनम्र, मृदु एवं मितभाषी पदमबाबू कहते-बोलते कम पर करते बहुत अधिक हैं। कथनी और करनी की एकरूपता उन्हें जन्मघुटी में प्राप्त विरासत है।

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा के विविध क्रियाकलापों से वे अभिन्न रूप से सम्बद्ध हैं। उनका संस्पर्श पाकर कोई भी चीज कुन्दन बनकर निखर उठती है। वे सबके आदरणीय और सब उनके लिये आदरणीय हैं। छोटे-बड़े सब समान हैं उनकी दृष्टि में। वे सबके हितैषी हैं एवं सब इनके हितैषी हैं, यह मणिकांचन संयोग अत्यन्त दुर्लभ है। चुनौतियों से जुझना और उस पर विजय प्राप्त करना कोई इनसे सीख सकता है।

अखिल भारतीय श्री जैन श्वेताम्बर खरतरगच्छ महासंघ का अध्यक्ष पद ऐसे सेवाभावी कर्मठ कार्यकर्त्ता अथक अध्यवसायी एवं संकल्प के धनी व्यक्ति को पाकर गौरवान्वित बनेगा।

अखिल भारतीय श्री जैन श्वेताम्बर खरतरगच्छ महासंघ के अध्यक्ष पद पर उनका निर्वाचन सामयिक एवं उनके व्यक्तित्व के अनुरूप है। श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता परिवार की ओर से राशि-राशि बधाई एवं हार्दिक अभिनन्दन। ■